॥ श्रीः ॥

बृहन्निघंटुरत्नाकरः ।

पंचमो भागः ।

पाठकज्ञातीय-माथुरश्रीकृष्णलालतनयदत्त-
रामेण संकलितः स्वकृतभाषाटीकाविभूषितः ।
लक्ष्मीवेंकटेश्वरमुद्रणालयस्थशास्त्रिभिः संस्कृतः
खंडितग्रंथ-भाषापूरणयोजनादिपूर्वकं
संशोधितश्च ।

स च
श्रीकृष्णदासात्मज-गंगाविष्णोः
अध्यक्ष "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" मुद्रणालये
मैनेजर पं० शिवदुलारे वाजपेयी इत्यनेन स्वाम्यर्थं
मुद्रयित्वा प्रकाशितः ।

संवत् १९८०, शके १८४५.

कल्याण-मुंबई.

अस्य ग्रन्थस्य सर्वेऽधिकारा यन्त्राधिकारिणा
स्वायत्तीकृताः सन्ति ।

मुंबई.

सूचना.

मैं अपने प्रियबांधव बृहन्निघंटुरत्नाकर ग्राहकोंके प्रति प्रार्थना करता हूं कि, आप लोग कृपा कर मेरे अपराधको क्षमा करेंगे. कारण कि, यह बृहन्निघंटुरत्नाकरका पंचम भाग बहुत जल्दी छापकर आप लोगोंके प्रति समर्पण करना चाहता था. पर अनेक विघ्नवश होनेके कारण वह मेरी आशा शीघ्र पूर्ण नहीं होसकी इसीसे आपको आज-तक वंचित करना पडा. अब यह पंचम भाग भगवानकी कृपासे शुद्धता और स्वच्छताके साथ छापकर तैयार किया गया है यह भाग पहिले चार भागोंसे बहुतही बृहत् हो गया है अर्थात् प्रथम तथा द्वितीय भागमें साठ २ फार्म हैं और तृतीय भागमें ७० फार्म हैं. एवं चतुर्थ भागमें ७३ फार्म हैं. इस पंचम भागमें तो १०९ फार्म हैं. यह बहुतही बडा होनेके कारण इसमें बहुत विषयोंका संग्रह हुआ है जिन विषयोंकी सूचीके फार्म ६ हो गये हैं सब मिलके ११५ फार्म हो गये हैं. इसमें अजीर्ण रोगसे उदररोगतक सर्व रोग कर्मविपाक, ज्योतिःशास्त्राभिप्राय, निदान, चिकित्सा, प्रत्येक रोगपर क्वाथ, कल्क, आसव, अरिष्ट, चूर्ण, मात्रा, रसायन आदि छोटी बडी सर्व-प्रकारकी दवासहित वर्णित हैं. बहुत लिखना आपलोगोंके आगे व्यर्थ है अब तो यह पुस्तक आपके हस्तगत है जो कुछ भला बुरा है वह प्रत्यक्ष है। इसके आगेका छठा भागभी छापना आरंभ हो गया है।

आपका अनुग्रहाकांक्षी—

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना,

कल्याण–मुंबई.

श्रीः ।

अथ बृहन्निघण्टुरत्नाकरपंचभागस्थविषयानुक्रमणिका ।

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
अजीर्ण.		शमन	.... ९
मन्दाग्निहर....	.... १	विरेचन	.... १०
पाराशर	.... "	सामान्ययत्न	.... "
कर्मविपाकसंग्रह	.... "	कोलास्थियोग	.... "
जठराग्निनिदान	.... २	क्षीर	.... "
विषूच्यादि निदान	.... "	विदारिकल्क	.... "
चतुर्विध अग्निके कार्य....	.... "	त्रिफलावलेह	.... ११
प्रकारांतर	.... "	अपामार्गादि योग	.... "
हिंग्वष्टकचूर्ण	.... ३	कदलीफलयोग	.... "
जीरकादि चूर्ण	.... "	अजीर्णके भेद	.... "
विडंगादि चूर्ण	.... ४	गुडाष्टक....	.... १२
वडवानल चूर्ण	.... "	पथ्यादि चूर्ण	.... "
वह्निनामक रस	.... "	बृहच्छंखवटी	.... "
कर्मविपाक	.... "	लघुक्रव्याद रस	.... १३
दूसरा प्रकार	.... ५	विदग्धाजीर्णलक्षण	.... १४
भस्मकनिदान	.... "	विदग्धाजीर्णकी चिकित्सा	.... "
भस्मकलक्षण	.... "	निद्रानियम	.... "
चिकित्साक्रम	.... ६	दिवा निद्रा	.... "
भस्मकचिकित्सा	.... "	विष्टब्धाजीर्ण लक्षण	.... १५
अजीर्णका निदान	.... "	विष्टब्धाजीर्णमें सामान्य उपचार....	"
आमाजीर्णलक्षण	.... ७	रसशेषाजीर्णलक्षण	.... "
वचादि वमन	.... "	रसशेषाजीर्णमें सामान्य उपचार....	"
लवंगादि क्वाथ	.... "	अजीर्ण	.... "
वैश्वानरक्षार	.... "	अजीर्णके सामान्य लक्षण	.... १६
सामुद्रादि चूर्ण	.... ८	अजीर्णके उपद्रव	.... "
हरीतक्यादि योग	.... ९	लवणभास्करचूर्ण	.... "

विषय.	पृष्ठ.
अग्निमुख चूर्ण	.... १७
वृद्धाग्निमुख चूर्ण	.... १८
यावशूकादि चूर्ण	.... १९
लघुचित्रकादि चूर्ण	.... ,,
शुंठ्यादि चूर्ण	.... ,,
कणाद्य चूर्ण	.... २०
कपित्थादि योग	.... ,,
ज्वालामुख चूर्ण	.... ,,
व्योषादि चूर्ण	.... ,,
शुण्ठ्यादि चूर्ण	.... २१
विश्वादि चूर्ण	.... ,,
चित्रकादि चूर्ण	.... ,,
बिडलवणादि चूर्ण	.... ,,
वडवानल चूर्ण	.... २२
पंचाग्निचूर्ण	.... ,,
विश्वभेषज चूर्ण	.... ,,
संजीवनीगुटी	.... ,,
धनंजय वटी	.... २३
शंखवटी	.... २४
लवंगामृतवटी	.... ,,
व्योषादि गुटी	.... २५
हरीतक्यादि वटी	.... ,,
अमृतहरीतकी	.... २६
चित्रकगुड	.... ,,
द्राक्षादि योग	.... २७
यवागू	.... ,,
क्रव्यादकल्क	.... ,,
क्षारयोग	.... २८
अग्निमुखरस	.... ,,
अजीर्णादिरस	.... २९

विषय.	पृष्ठ.
पाशुपतरस	.... २९
आदित्यरस	.... ३०
हुताशनरस	.... ३१
अजीर्णकंटकरस	.... ,,
रामबाणरस	.... ,,
दूसरा प्रकार	.... ३२
ज्वालानलरस	.... ,,
चिंतामणिरस	.... ३३
पंचमूल्यादि घृत	.... ,,
दशमूल्यादि घृत	.... ३४
धान्यादि घृत	.... ,,
अग्निघृत	.... ,,
शार्दूलकांजिक	.... ३५
विषूचिकादिकी संप्राप्ति निदान.	.... ३६
विषूचिकाक लक्षण	.... ,,
विलंबिका व अलसक इनकी चिकित्सा	,,
अलसककी निरुक्ति	.... ३७
अलसक व दंडालसक लक्षण	.... ,,
विलंबिका लक्षण	.... ,,
अजीर्णसे उत्पन्न हुए आमके कार्य.	३८
विषूची और अलसक इनके असाध्य लक्षण	.... ,,
जीर्णआहार लक्षण	.... ,,
विषूचिकाके उपद्रव	.... ३९
विषूचिकाचिकित्सा	.... ,,
लशुनाद्य चूर्ण	.... ,,
अपामार्गादि योग	.... ,,
बालमूत्रादि काढा	.... ,,
तक्रयोग	.... ४०
बिल्वादि काढा	.... ,,

विषय.	पृष्ठ.
यवापिष्टलेप	.... ४०
कुष्ठादि लेप	.... ,,
साधारणलेप	.... ,,
लवंगादि चूर्ण	.... ४१
पथ्यादि चूर्ण	.... ,,
शंखद्राव	.... ,,
दालचीनीतैल	.... ४२
चुक्रतैल	.... ,,
अर्कादि तैल	.... ,,
तक्र	.... ४३
पानी	.... ,,
विलंबिका व अलसिकाचिकित्सा.	,,
हस्तिकर्णयोग	.... ,,
निंबुरसयोग	.... ,,
करंजादि कषाय	.... ४४
उत्क्लेश लक्षण	.... ,,
कटुत्रयरस	.... ,,
व्योषादि अंजन	.... ,,
अपामार्गाद्यंजन	.... ,,
बिल्वादि अंजन	.... ४५
अजीर्णादिकों पर पथ्य	.... ,,
अपथ्य	.... ४६
दूसरा प्रकार	.... ४७
नित्योदितरस	.... ,,
अर्शकुठार	.... ,,
षडाननरस	.... ४८
पीयूषसिंधु	.... ,,
चक्रबन्धरस	.... ४९
पर्पटीरस	.... ,,
भल्लातकावलेह	.... ५०
कृमिरोगाधिकारः ।	
कृमिनिदान	.... ५१
बाह्यकृमिके नाम	.... ,,
कृमि रोगका कारण....	.... ,,
पुरीषकफरक्तजकृमिकारण	.... ,,
पेटमें कृमि हुएके लक्षण	.... ५२
कफकृमिका लक्षण	.... ,,
रक्तकृमिका लक्षण	.... ,,
पुरीषज कृमिका लक्षण	.... ५३
कृमिरोगचिकित्सा	.... ,,
पूडी	.... ५४
अन्न	.... ,,
कृमिलेप	.... ,,
यवागू	.... ,,
त्रिवृतादि कल्क	.... ५५
पलाशबीजरस व कल्क	.... ,,
स्वरस	.... ,,
तैल	.... ,,
विडंगादि तैल	.... ,,
धतूरपत्रतैल	.... ५६
दाडिमादि काढा	.... ,,
नियमनादि काढा	.... ,,
विडंगादि काढा	.... ,,
मुस्तादि काढा	.... ,,
खदिरादि काढा	.... ५७
रस	.... ,,
पारदादि योग	.... ,,
कृमिकुठाररस	.... ,,
कृमिमुद्गररस	.... ५८
विडंगादि चूर्ण	.... ,,

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
दूसरा प्रकार	.... ५८	पूर्वरूप	.... ६७
पारसिकयवानी चूर्ण....	.... "	पांडुरोगचिकित्सा	.... "
निंबादि चूर्ण	.... ५९	वातपांडुनिदान	.... "
त्रिफलाद्य घृत	.... "	मंडूराद्यारिष्ट	.... ६८
विडंगघृत	.... "	पित्तपांडुनिदान	.... "
सारनालयोग	.... ६०	आमलक्यवलेह	.... "
भल्लातकयोग	.... "	दुग्धयोग	.... ६९
पलाशबीजयोग	.... "	कफपांडुनिदान	.... "
किरमानी अजमायनका कल्क	"	दशमूलादि काढा	.... "
निशोतरादि योग	.... "	नागरादि योग	.... "
पिप्पल्याद्य चूर्ण	.... "	लोहभस्मयोग	.... ७०
आखुपर्ण्यादि चूर्ण	.... ६१	मधुमंडूर	.... "
निंबादि चूर्ण	.... "	मंडूरवटक	.... "
सुवर्चकादि चूर्ण	.... "	मंडूरलवण	.... ७१
जूंआ इत्यादिकों पर तैल	.... ६२	सन्निपातपांडुनिदान	.... "
विडंगादि तैल	.... "	पांडुका असाध्य लक्षण	.... "
कपिलाचूर्ण	.... "	असाध्य लक्षण	.... "
निंबादि रस	.... "	दूसरा प्रकार	.... ७२
हरीतकी चूर्ण	.... "	तीसरा प्रकार	.... "
सावित्रवटक	.... "	त्रिफलादि लेह	.... ७३
विशालादि धूप	.... ६३	फलत्रिकादि काढा	.... "
अष्टसुगंधधूप	.... "	पुनर्नवादि काढा	.... "
ककुभादि धूप	.... ६४	वासादि काढा	.... ७४
कृमिरोग पर पथ्य	.... "	दार्व्यादि वटक	.... "
अपथ्य	.... ६५	किरातादि मंडूर	.... "
दूसरा प्रकार	.... "	अभयादि मोदक	.... ७५
पांडुरोगकर्मविपाकः ।		पांडुरिरस	.... "
शिरोवेदनासाहित पांडुरोगहरण	६६	पुनर्नवादि वटक	.... "
पांडुरोगनिदान	.... "	लोहासव पांडुरोगादिकों पर	.... ७६
निदानपूर्वक संप्राप्ति	.... "	गोमूत्रलोह	.... ७७

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
गोमूत्रसिद्धमंडूर	.... ७७	कामलाकर्मविपाकः ।	
नवायसादि चूर्ण पांडुरोगादिकोंपर,	”	प्रतिमादान	.... ८९
दूसरा नवायसचूर्ण	.... ”	कामलानिदान	.... ९०
लोहादिचूर्ण जीर्णपांडुपर	... ७८	लक्षण	.... ”
शिलाजितादि योग	.... ”	कामलाचिकित्साक्रम	.... ”
मंडूरवज्रवटक	.... ”	नस्य व अंजन	.... ”
हंसमंडूर	.... ७९	जालिनीफलादि नस्य....	.... ९१
सिद्धमंडूर	.... ”	कुमारीकंदनस्य	.... ”
अमृतहरीतकी	.... ८०	कामला पर अन्न	.... ”
पंचकोलघृत	.... ”	कामला पर काढा	.... ”
साधारणयोग	.... ८१	पुनर्नवादि काढा	.... ”
देवदालीयोग	.... ”	त्रिफलादि काढा	.... ९२
गोमूत्रहरीतकीयोग	.... ”	गोदुग्धपान	.... ”
भूनिंबादि गुटी	.... ”	हरीतक्याद्यंजन	.... ”
मदेभसिंहसूत	.... ८२	खरविट्स्वरस	.... ”
त्रैलोक्यनाथरस	.... ”	गुडूचीकल्क	.... ”
उदयभास्कर	.... ८३	धान्यादि चूर्ण	.... ”
कामेश्वररस	.... ”	अयोरजादि चूर्ण	.... ९३
कालविध्वंसकरस	.... ८४	व्योषादि चूर्ण	.... ”
पांडारि	.... ८५	अयोरजादि योग	.... ”
पांडुसूदन	.... ”	अजन	.... ”
वंगेश्वर	.... ”	नस्य	.... ”
पांडुनिग्रहरस	.... ८६	लोहादि चूर्ण	.... ९४
अनिलरस	.... ”	एलादि चूर्ण	.... ”
लोहसुंदररस	.... ८७	हरिद्राचूर्ण	.... ”
चंदनादि तैल	.... ”	दार्व्यादि चूर्ण	.... ”
मृत्तिकाभक्षणज पांडुनिदान	.... ८८	घृत	.... ”
केशरादि काढा	.... ”	एरंडस्वरस	.... ९५
घृत	.... ”	कटुकीयोग	.... ”
		कुंभकामलानिदान	.... ”

विषय.	पृष्ठ.
कामलाका असाध्य लक्षण	९५
दूसरा प्रकार	.... ”
कुंभकामलाका असाध्य लक्षण	.... ९६
कुंभकामलाचिकित्साक्रम....	.... ”
शिलाजीतयोग	.... ”
मंडूर	.... ”
नस्यादि योग	.... ”
पांडुरोगमें कब हलीमक होता है	.... ९७
पानकीलक्षण	.... ”
हलीमकपरिभाषा	.... ”
अयोभस्मयोग	.... ”
सितादि लेह	.... ”
अमृतादि घृत	.... ९८
गुडूचीस्वरसयोग	.... ”
पांडुकामला कुंभकामला हलीमक इन पर पथ्य	.... ”
अपथ्य ...	.... ९९
पांडुरोगपर दंभ	.... ”
कामलापर दंभ	.... ”
रक्तपित्तिकर्मविपाकः ।	
ज्योतिःशास्त्राभिप्राय....	.... १००
दूसरा प्रकार	.... ”
ज्योतिःशास्त्रोक्तचिकित्सा	.... ”
रक्तपित्तनिदान	.... ”
पूर्वलक्षण	.... १०१
असाध्य लक्षण	.... ”
वातरक्तपित्तनिदान	.... ”
भोजन	.... १०२
रक्तपित्तशास्त्रार्थ	.... ”
रक्तपित्तादिक पर कामदेवघृत	.... १०३
दूर्वादि घृत	.... १०४
शतावर्यादि पेय	.... १०५
पैत्तिकरक्तपित्तनिदान	.... ”
त्रिफलादि काढा	.... ”
अतस्यादि काढा	.... ”
वासादि लेह	.... १०६
कफयुक्तरक्तपित्तनिदान	.... १०७
अभयाभक्षण	.... ”
आज्यपान	.... ”
ह्रीबेरादि जल	.... ”
मृद्वीकादि गुटी	.... १०८
पारावतादि यूष	.... ”
घृतसैंधवयोग	.... ”
पथ्य और जलपान....	.... ”
द्वंद्वजसन्निपातरक्तपित्तनिदान	.... ”
असाध्यरक्तपित्तलक्षण	.... १०९
असाध्यलक्षण	.... ”
रक्तपित्तके उपद्रव	.... ”
असाध्यलक्षण	.... ११०
वृषादि स्वरस	.... ”
मातुलिंग्यादि पेय	.... ”
उदुंबरादि योग	.... ”
अश्वत्थपत्रयोग	.... १११
चित्रकचूर्णयोग	.... ”
गंधकादि प्राशन	.... ”
दुग्धादि योग	.... ”
वासास्वरस	.... ”
लाक्षादि योग	.... ११२
मध्वादि पेय	.... ”

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
मधुकादि	.... ११२	चौथा प्रकार	.... १२२
ह्रीबेरादि काढा	.... "	वासाखंड	.... १२३
पद्मोत्पलादि काढा ...	.... ११३	उशीरासव रक्तपित्तादिकों पर	.... "
इक्ष्वादि काढा	.... "	वमन	.... १२४
चन्दनादि काढा	.... "	यष्ट्यादि वमन	.... "
उशीरादि काढा	.... "	आरग्वधादि रेचन	.... "
अमृतादि काढा	.... ११४	विरेचन	.... १२५
ह्रीबेरादि काढा	.... "	अपतर्पण	.... "
मुद्गादि काढा	.... "	दूसरा प्रकार	.... "
यष्ट्यादि काढा	.... "	पारावतशकृल्लेह	.... "
पलाशकल्क व काढा	.... "	केशरलेह	.... "
आटरूषादि काढा	.... ११५	खदिरादि लेह	.... "
वासादि काढा	.... "	उदुंबरादि लेह	.... "
उशीरादि चूर्ण	.... "	खंडकाद्यवलेह	.... १२६
मृद्वीकादि चूर्ण	.... "	रक्तपित्तकुठाररस	.... १२७
चंदनादि चूर्ण	.... ११६	वासासुत	.... १२८
पत्रकादि चूर्ण	.... "	बोलपर्पटीरस	.... "
कर्पूरादि चूर्ण	.... ११७	सुधानिधिरस	.... "
वासापुटपाक	.... "	आटरूषाद्यर्क	.... "
एलादिगुटी रक्तपित्तादिकों पर	.... "	शतावरीघृत	.... १२९
हरीतक्यादि चूर्ण	.... ११८	दूर्वादि तैल	.... "
मस्तकलेप	.... "	दूसरा प्रकार	.... "
कल्क व घृत	.... "	रक्तपित पर पथ्य	.... १३०
नस्य	.... "	रक्तपित्त पर अपथ्य	.... १३१
दूसरा प्रकार	.... ११९	**क्षयकर्मविपाकः।**	
आर्द्रकादि नस्य	.... "	कदलीदान	.... १३२
हरीतक्यादि नस्य	.... "	ब्रह्मचर्यादि योग	.... १३३
कूष्मांडकावलेह	.... "	ज्योतिःशास्त्राभिप्राय	.... "
दूसरा प्रकार	.... १२०	दूसरा प्रकार	.... "
तीसरा प्रकार	.... १२१	देवपूजादि	.... "

विषय.	पृष्ठ.
शास्त्रार्थ	.... १३४
गीतादि उपाय	.... "
राजयक्ष्माक्षयनिदान	.... "
अनुलोम व प्रतिलोम क्षयकी संप्राप्ति.	१३५
पूर्वरूप	.... १३६
क्षयका सामान्य त्रिरूप लक्षण	"
एकादशरूप षड्रूप और त्रिरूप क्षयोंका कारण	.... "
पुनः असाध्यलक्षण	.... १३७
साध्यलक्षण	.... "
असाध्यक्षण	.... १३८
क्षयरोगीको वर्ज्य पदार्थ	.... "
क्षयहारक पदार्थ	.... "
षडंगयूष	.... १३९
ज्वरदाहक्रिया	.... "
वर्वभक्षणके माहात्म्य	.... "
च्यवनप्राश्यावलेह	.... "
एलाद्यचूर्ण	.... १४१
अश्वगंधाचूर्ण	.... "
द्राक्षादि चूर्ण	.... १४२
कर्पूरादि चूर्ण	.... "
यवादि चूर्ण	.... १४३
त्रिकट्वादि चूर्ण	.... "
शंखपोटलीरस	.... "
शिलाजतुयोग	.... १४४
पिप्पल्यासव क्षयादिकों प	.... "
कृष्णाद्यवलेह	.... १४५
रास्नादि चूर्ण	.... "
अगस्त्यहरीतकी क्षयादिकोंपर	.... "
आटरूषादि कषाय	.... १४६
अश्वत्थवल्कलादि लोह	.... १४६
ककुभाद्य चूर्ण	.... १४७
अश्वगंधाद्य चूर्ण	.... "
तालीसाद्य चूर्ण	.... "
नवनीतयोग	.... "
सितोपलादि चूर्ण	.... १४८
तवराजादि चूर्ण	.... "
अडूसायोग	.... "
द्राक्षादि चूर्ण	.... "
स्वर्णमाक्षिकादि चूर्ण	.... १४९
शिलाजितादि चूर्ण	.... "
लाक्षाकूष्मांडरस	.... "
मार्कवादि चूर्ण	.... "
बलादि चूर्ण	.... १५०
जातीफलादि चूर्ण	.... "
शिवगुटी	.... १५१
लघुशिवगुटी	.... १५२
सूर्यप्रभागुटी	.... १५३
गुडूच्यादि मोदक	.... १५४
इक्ष्वादि मोदक	.... १५५
द्राक्षासव	.... १५६
खर्जूरासव	.... "
दशमूलासव	.... १५७
कुमारीपाक	.... १५८
धात्रीपाक	.... १५९
शेवंतीपाक	.... "
महाकनकसुंदररस	.... १६०
क्षयकेसरीरस	.... १६१
शंखेश्वररस	.... "
हररुद्ररस	.... १६१

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
नीलकंठरस	.... १६३	हेमगर्भपोटलीरस कफक्षयादिकों पर.	१८२
शंखगर्भपोटलीरस	.... ,,	दूसरा प्रकार	.... १८४
हेमगर्भरस	.... १६४	लोकनाथरस	.... ,,
नागेश्वररस	.... ,,	लघुलोकनाथरस	.... १८७
कालांतकरस	.... १६५	मृगांकपोटलीरस	.... १८८
चंद्रायतनरस	.... ,,	गोक्षुराद्य घृत	.... १८९
प्राणनाथरस	.... १६६	जीवंत्यादि घृत	.... १९०
सुवर्णपर्पटीरस	.... ,,	बलाद्य घृत	.... ,,
प्राणदापर्पटी	.... १६७	कोलाद्य घृत	.... १९१
कुमुदेश्वररस	.... १६८	कणाद्य घृत	.... ,,
पंचामृताख्यरस	.... ,,	पाराशर घृत	.... ,,
स्वयमग्निरस	.... १६९	जलाद्य घृत	.... १९२
राजमृगांक	.... १७०	वासाद्य घृत	.... ,,
दूसरा प्रकार	.... ,,	खर्जूरादिघृत	.... १९३
लोकेश्वर....	.... १७१	पिप्पल्याद्य घृत	.... ,,
नवरत्नराजमृगांक	.... ,,	दूसरा प्रकार	.... ,,
मृगांकरस	.... १७३	दशमूलाद्य घृत	.... ,,
कनकसिंदूर	.... ,,	तिलोंका तैल	.... ,,
हेमाभ्रकरससिंदूर	.... १७४	चंदनादि तैल	.... १९४
सुवर्णभूपति	.... ,,	लक्ष्मीविलासतैल	.... ,,
लक्ष्मीविलासरस	.... १७५	व्यवायजन्यशोष	.... १९५
शिलाजत्वादि लोह	.... १७६	व्यवायशोषिलक्षण	.... ,,
पंचामृतरस	.... ,,	व्यवायदोषचिकित्सा....	.... ,,
अमृतेश्वररस	.... ,,	शोकशोषिलक्षण	.... ,,
चिंतामणिरस	.... १७७	शोकशोषचिकित्सा	.... १९६
दूसरा त्रैलोक्यचिंतामणि	.... ,,	जराशोषलक्षण	.... ,,
वसंतकुसुमाकर	.... १७८	अध्वशोषलक्षण	.... ,,
लोकेश्वरपोटली	.... १७९	अध्वशोषचिकित्सा	.... १९७
लोहरसायन क्षयादिकों पर	.... १८०	व्यायामशोषलक्षण	.... ,,
रत्नगर्भपोटली	.... १८१	व्यायामशोषचिकित्सा	.... ,,

विषय.	पृष्ठ.
व्रणशोषलक्षण	.... १९७
व्रणशोष	.... १९८
रसवर्द्धन	.... "
रक्तवर्द्धन	.... "
मांसवर्द्धन	.... "
मेदवर्धन	.... "
दूसरा प्रकार	.... १९९
अस्थिवर्धन	.... "
शुक्रवृद्धि....	.... "
दूसरा प्रकार	.... "
ककडीका रस वांति पर	.... "
दूसरा प्रकार	.... २००
रक्तवांतिपर	.... "
उशीरादि चूर्ण	.... "
श्लेष्मापर	.... २०१
कुस्तुंबर्यादि चूर्ण	.... "
अरुचि पर	.... "
दाहपर	.... "
शोषपर	.... "
उरःक्षतक्षयनिदानम् ।	
उरःक्षतके पूर्वरूप	.... २०३
क्षतक्षीणके असाध्यलक्षण	.... "
असाध्यलक्षण	.... "
उरःक्षतक्षयाचिकित्साक्रम	.... "
चिकित्साक्रम	२०४
दशमूलादिकाढा	.... "
बलादि काढा	.... "
एलादि गुटिका	.... "
द्राक्षादि घृत	.... २०५
बलादि घृत	.... "
पथ्यादि घृत	.... २०५
गोक्षुराद्य घृत	.... २०६
अमृतप्राश्यावलेह	.... "
रसराज	.... २०७
क्षयरोगमें पथ्य	.... "
क्षय पर अपथ्य	.... २०९
कासकर्मविपाकः ।	
दूसरा प्रकार	.... "
तीसरा प्रकार	.... २१०
ज्योतिःशास्त्राभिप्राय....	.... "
कारण सम्प्राप्ति और निरुक्ति	.... "
संख्यारूपसंप्राप्ति	.... "
पूर्वरूप	.... २११
वातिक कासनिदान	.... "
कासाचिकित्सापरिभाषा	.... "
रुद्रपर्पटी	.... "
भूतांकुशरस	.... २१२
सठ्यादि लेह	.... "
भार्ग्यादि लेह	.... २१३
विश्वादि लेह	.... "
दशमूली घृत	.... "
कट्फलादि पेय वातकफकासों पर.	"
शुंठ्यादि चूर्ण	.... "
चित्रकादि लेह	.... २१४
शुंठ्यादि लेह वातकास पर	.... "
दशमूलकाकाढा	.... "
पंचमूलकाढा	.... २१५
कर्कटरस	.... "
शुंठ्यादि चूर्ण	.... "
पित्तकासनिदान	.... "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
सिंहास्यादि काढा	.... २१५	दंतीधूम	.... २२२
बलादि काढा	.... २१६	उरःक्षतकासनिदान	.... "
शठ्यादि काढा	.... "	क्षतकासलक्षण	.... "
शरादि काढा	.... "	क्षयकासनिदान	.... "
शठ्यादि काढा	.... "	क्षयकासलक्षण	.... २२३
त्वक्क्षीरलेह	.... "	साध्यासाध्यविचार	.... "
कंटकार्य्यादि काढा	.... "	चिकित्साप्रक्रिया	.... "
पिप्पल्यादि चूर्ण	.... २१७	इक्ष्वाद्यावलेह	.... २२४
मधुकादि चूर्ण	.... "	मंजिष्ठाद्य चूर्ण	.... "
अर्धावर्तितकाढा	.... "	क्षुद्रावलेह	.... "
मातुलिंगादि लेह	.... "	तारेश्वररस	.... २२५
खर्जूरादि लेह	.... "	सूर्यरस	.... "
द्राक्षामलकादि लेह	.... २१८	पिप्पल्यादि लेह	.... २२६
क्षीरामलकघृत	.... "	कुलित्थगुड	.... "
रस	.... "	बालाकूष्मांडावलेह	.... "
लोकेश्वररस	.... "	ककुभलेह	.... २२७
कफकासनिदान	.... "	पिप्पल्यादि घृत	.... "
कफकाससामान्यचिकित्सा	.... २१९	पिप्पल्यादि लेह	.... "
नवांगयूष	.... "	स्वयमग्निरस	.... २२८
पिप्पल्यादि काढा	.... "	सन्निपातकास	.... "
पित्तश्लेष्मकास	.... "	अमृतादि काढा	.... २२९
अवलेह	.... "	भार्ग्यादि काढा	.... "
बिभीतकधारण	.... २२०	स्वरसादि योग	.... "
भद्रमुस्तादि चूर्ण	.... "	मरीच्यादि चूर्ण	.... "
पथ्यादि चूर्ण	.... "	कुलित्थादि काढा	.... "
चित्रकादि चूर्ण	.... "	पुष्करादि काढा	.... २३०
शिलादि लेह	.... २२१	कुनट्यादि लेह	.... "
व्योषादि घृत	.... "	बर्हिपादादि और मरीचादि लेह	.... "
कटुत्रयादि चूर्ण	.... "	भार्ग्यादि चूर्ण	.... "
बालवद्धरस	.... "	घनादि गुटी	.... "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
निर्गुंडयादि घृत	.... २३१	जातिमूलादि धूम	.... २४०
धूमपान	.... ”	हरिद्राधूम	.... ”
वारुणीपत्रधूम	.... ”	बिभीतकावलेह	.... ”
हेमगर्भपोटली	.... २३२	कंटकार्यवलेह	.... ”
कासविधूननरस	.... २३३	अगस्तिहरीतक्यवलेह	.... २४१
ताम्रपर्पटी	.... ”	व्याघ्रादि घृत	.... ”
कंटकार्यादि चूर्ण	.... २३४	गुडूच्यादि घृत	.... २४२
लवंगादि चूर्ण	.... ”	त्र्यूषणादि घृत	.... ”
बिभीतकादि चूर्ण	.... ”	कंटकारी घृत	.... ”
पंचकोलादि चूर्ण	.... ”	दूसरा प्रकार	.... २४३
बदरीकल्क	.... ”	भार्गोत्तरवटी	.... ”
कर्पूरादि चूर्ण	.... २३५	अगंधखर्परपर्पटी	.... २४४
त्रिकटुकादि चूर्ण	.... ”	कासश्वासविधूननरस....	.... ”
देवदार्वादि चूर्ण	.... ”	गुरुपंचमूलीकाढा	.... ”
द्विक्षारादि	.... ”	वासादि काढा	.... २४५
ग्रंथिकादि	.... ”	सिंहीकषाय	.... ”
कटुत्रिकादि	.... २३६	वृषादि काढा	.... ”
हरीतक्यादि गुटी	.... ”	आर्द्रकावलेह	.... ”
त्रिजातादि	.... ”	व्याघ्रीहरीतक्यवलेह	.... ”
मरीच्यादि गुटी	.... ”	कासकंडनावलेह	.... २४६
लवंगादि गुटी	.... २३७	हेमगर्भपोटली	.... २४७
धनंजयवटी	.... ”	हेमगर्भ	.... ”
खदिरादि गुटी	.... ”	दूसरा प्रकार	.... २४८
व्योषादि गुटी	.... २३८	कासकेसरी	.... ”
पिप्पल्यादि गुटी	.... ”	रसेंद्रवटी	.... २४९
अर्कमूलादि धूम	.... ”	नीलकंठ रस	.... ”
मनःशिलादि धूम	.... २३९	लोकनाथपोटली	.... २५०
दूसरा प्रकार	.... ”	अमृतार्णवरस	.... ”
धत्तूरादि धूम	.... ”	अग्निरस	.... २५१
जातिपत्रादि धूम	.... ”	कासकर्त्तरी	.... ”

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
कफाग्निवटी	.... २५१	कटुकादि भस्म	.... २५९
कासपथ्य	.... २५२	कोलमज्जालेह	.... ,,
अपथ्य	.... ,,	हेममात्रा	.... ,,
हिक्काकर्मविपाकः ।		पिप्पल्यादि लोह	.... ,,
हिक्कानिदान	.... ,,	शंखचूलरस	.... २६०
संप्राप्ति	.... २५३	मेघडंबर रस	.... ,,
हिक्काके भेद	.... ,,	महाहिक्कानिदान	.... ,,
पूर्वरूप	.... ,,	कटुत्रिकलेह	.... ,,
सामान्यचिकित्सा	.... ,,	असाध्यहिक्कानिदान लक्षण	.... २६१
त्याज्यहिक्का	.... २५४	असाध्य लक्षण	.... ,,
अन्नजाहिक्कानिदान	.... ,,	यष्ठ्यादि चूर्ण	.... २६२
यूष	.... ,,	विश्वादि चूर्ण	.... ,,
कुलित्थादि काढा	.... २५५	रक्तचंदन योग	.... ,,
हरिद्रादि लेह	.... ,,	कृष्णाचूर्ण	.... ,,
अभयादि कल्क	.... ,,	शृंग्यादि चूर्ण	.... ,,
चंद्रसूरकाढा	.... ,,	भारंग्यादि चूर्ण	.... २६३
यमलाहिक्कानिदान	.... २५६	हिक्कानस्य	.... ,,
दशमूल यवागू	.... ,,	मधुकनस्य	.... ,,
हिंग्वादि यवागू	.... ,,	मक्षिकानस्य	.... ,,
क्षुद्रहिक्कानिदान	....,	शिलाजीतधूम	.... ,,
दशमूलीकाढा	.... ,,	श्वासावरोध	.... २६४
कुलित्थादि काढा	.... २५७	माषादि धूम	.... ,,
धान्यादि काढा	.... ,,	हिंग्वादि धूम	.... ,,
गंभीराहिक्कानिदान	.... ,,	हिक्कारोगमें पथ्य	.... ,,
पाटल्यादि योग	.... ,,	हिक्कारोगमें अपथ्य	.... २६५
दशमूली काढा	.... ,,	श्वासकर्मविपाकः ।	
छागदुग्धयोग	.... २५८	दूसरा प्रकार	.... २६६
मधुसौवर्चलयोग	.... ,,	तीसरा प्रकार	.... २६७
शिखीलेह	.... ,,	श्वासनिदान	.... ,,
पिप्पल्यादिलेह	.... ,,	प्राग्रूप	.... ,,

विषय.	पृष्ठ.
संप्राप्ति	.... २६७
सामान्यचिकित्सा	.... "
दूसरा प्रकार	.... २६८
महाश्वासलक्षण	.... "
शृंग्यादि चूर्ण	.... "
शुंठ्यादि	.... २६९
मर्कटीचूर्ण	.... "
शठ्यादि चूर्ण	.... "
गुडादि लेह	.... "
भारंग्यादि चूर्ण	.... २७०
ऊर्ध्वश्वासनिदान	.... "
श्वास नीचे न आनेका कारण	.... "
दुलहरीचूर्ण	.... "
शुंठ्यादिचूर्ण	.... २७१
शिलाद्यवलेह	.... "
विडंगादि चूर्ण	.... "
दाडिमादि चूर्ण	.... "
विडंगादिचूर्ण	.... "
आर्द्रकस्वरस	.... २७२
अक्षकवल	.... "
आटरूषरस	.... "
छिन्नश्वासनिदान	.... "
तमकश्वासके लक्षण....	.... २७३
प्रतमकनिदान	.... २७४
सठ्यादि चूर्ण	.... "
व्याघ्रीजीरकादि गुटिका	.... "
क्षुद्रावलेह	.... "
कंटकार्यवलेह श्वासकासों पर	.... २७५
क्षुद्रश्वासनिदान	.... २७६
असाध्य लक्षण	.... "

विषय.	पृष्ठ.
सामान्य उपचार	.... २७७
शृंगबेररस	.... "
बिभीतकावलेह	.... "
द्राक्षाद्यवलेह	.... "
दशमूलयवागू	.... "
दशमूलकाढा	.... २७८
रंभादि कुसुमपान	.... "
शृंग्यादि चूर्ण	.... "
शुंठ्यादि काढा	.... "
पंचमूलीयोग	.... २७९
कूष्मांडशिफाचूर्ण	.... "
हरिद्राद्यवलेह	.... "
भार्ङ्गीगुड	.... "
द्राक्षादि काढा	.... २८०
कुलित्थादि काढा	.... "
देवदार्व्यादि काढा	.... "
सिंह्यादि काढा	.... "
वासादि काढा	.... २८१
भारंग्यादि लेह	.... "
गुडाद्यवलेह	.... "
वासाद्यवलेह	.... "
सितादि चूर्ण	.... २८२
शिलाद्यवलेह	.... "
राजिकादि गुटी	.... "
सूर्यावर्तरस	.... "
अमृतार्णव रस	.... २८३
श्वासहेमाद्रि रस	.... "
उदयभास्कर	.... "
श्वासकालेश्वर	.... २८४
पारदादि गुटी	.... "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
लवंगादि गुटी	.... २८५	कटुकादि काढा	.... २९२
दूसरा प्रकार	.... ”	सन्निपातस्वरभेदनिदान	.... ”
त्रिकटुकवटा	.... ”	अजमोदादि चूर्ण	.... ”
फलत्रयगुटी	.... ”	फलत्रिक चूर्ण	.... ”
स्नुहीदुग्धयोग	.... ”	निदिग्धिकावलेह	.... ”
श्वासकुठार	.... २८६	क्षयकृत स्वरभेद और मेदजस्वरभेद निदान	.... २९३
दूसरा प्रकार	.... ”	असाध्य लक्षण	.... ”
मरीच्यादि गुटिका कासादिकों पर.	”	क्षयज व मेदज स्वरभंगचिकित्सा.	२९४
श्वासे पथ्य	.... २८७	जातीफलावलेह	.... ”
अपथ्य	.... ”	काकजंघादि धार्य	.... ”
दंभ	.... २८८	जातिदलादि लेह	.... ”
अथ स्वरभेदनिदानम् ।		गुडूच्यादि लेह	.... ”
चिकित्साप्रक्रिया	.... ”	बदरीकल्क	.... २९५
स्वरभेदसामान्यचिकित्सा	.... २८९	आरनालचूर्ण	.... ”
वातिकस्वरभेद निदान	.... ”	खदिरधार्य	.... ”
मरीचघृतपान	.... ”	गोरक्षवटी....	.... ”
घृतगुडोदन	.... ”	ब्राह्म्यादि चूर्ण	.... २९६
कासमर्दादि घृत	.... ”	वचादि चूर्ण	.... ”
व्याघ्रीघृत	.... २९०	दुग्धामलकपान	.... ”
पैत्तिकस्वरभेद निदान	.... ”	पथ्य	.... ”
सामान्यचिकित्सा	.... ”	स्वरभेद पर अपथ्य	.... २९७
जेष्ठीमध काढा	.... ”	**अरुचिकर्मविपाकः ।**	
पयःपान	.... ”	ज्योतिःशास्त्राभिप्राय तत्प्रतीकार....	”
शतावरीचूर्ण	.... ”	अरोचकनिदान	.... २९८
शुंठीघृत....	.... २९१	अरोचककारण	.... ”
पित्तस्वरभेद	.... ”	सामान्यशास्त्रार्थ	.... ”
कफस्वरभेद	.... ”	वचादि स्नेहपान	.... २९९
पिप्पलीयोग	.... ”	सामान्यचिकित्सा	.... ३००
आम्लवेतसादि चूर्ण....	.... ”	पित्तजन्य अरोचकनिदान	.... ”
गंडूष	.... २९२		

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
कफजन्यअरोचक निदान	.... ३००	पिप्पल्यादि चूर्ण	.... ३०९
गंडूष	.... ३०१	छत्रादि चूर्ण	.... ३१०
कवलग्राह....	.... "	अम्लिकादि पेय	.... "
विडंगचूर्ण	.... "	शुंठ्यादि चूर्ण	.... "
अम्लिकाकवल	.... "	त्र्यूषणादि वटी	.... "
कुष्ठादि कवल	.... "	अमृतप्रभावटी	.... "
नींबका पन्हा	.... ३०२	आकल्लकादि चूर्ण	.... ३११
मुखधावन	.... "	लवणार्द्रकयोग	.... "
दूसरा प्रकार	.... "	शृंगवेरादि लेह	.... "
तीसरा प्रकार	.... "	त्वङ्मुस्तादि चूर्ण	.... ३१२
शर्करादि भक्ष	.... ३०३	दाडिमरस	.... "
पानक	.... "	जीरकादि चूर्ण	.... "
तालीसादि चूर्ण	.... "	कपित्थादि चूर्ण	.... "
खांडवचूर्ण	.... ३०४	शुंठ्यादि गुटी	.... "
यवानीखांडवचूर्ण अरोचकादि पर.	"	अरुचि रोगमें पथ्य	.... ३१३
कारव्यादि गुटिका	.... ३०५	अरुचि पर अपथ्य	.... "
खंडार्द्रक योग	.... "	छर्दिरोगकर्मविपाकः ।	
राजिकादि शिखरिणी....	.... "	अन्यच्च	.... ३१४
आर्द्रक योग	.... ३०६	ज्योतिषशास्त्राभिप्राय....	.... "
ताम्राशिखरिणी	.... "	छर्दिनिदान संप्राप्ति व लक्षण	.... ३१५
आमलकादि चूर्ण	.... "	पूर्वरूप	.... "
कर्पूरादि चूर्ण	.... ३०७	वातछर्दिलक्षण	.... "
चव्यादि चूर्ण	.... "	सैंधवयोग	.... ३१६
आर्द्रकमातुलुंगावलेह....	.... "	लवणत्रययोग	.... "
जीरकादि घृत	.... ३०८	धान्याकयूष	.... "
सूतादि गुटिका	.... "	पित्तच्छार्दिलक्षण	.... "
लघुचुक्र संधान	.... "	तंदुलजलपान	.... "
केशरादि लेह	.... "	लाजादि यूष	.... ३१७
आर्द्रकदाडिमयोग	.... ३०९	पर्पटादि काढा	.... "
दाडिम चूर्ण	.... "	मक्षिकाविडवलेह	.... "

विषय.	पृष्ठ.
गुडूच्यादि काढा	.... ३१७
लाजसक्तुपान	.... ,,
कफछर्दिलक्षण	.... ३१८
सामान्यचिकित्सा	.... ,,
शालिभक्त	.... ,,
विडंगादि चूर्ण	.... ,,
जांबवादि योग	.... ,,
सन्निपातछर्दिलक्षण	.... ३१९
बिल्वादि काढा	.... ,,
कोलाद्यवलेह	.... ,,
सुरसापान	.... ,,
मनःशिलादि योग	.... ,,
अश्वत्थवल्कलादि योग	.... ३२०
लाजादि योगत्रय	.... ,,
धात्रीफलपान	.... ,,
मसूरसक्तु	.... ,,
एलाद्यचूर्ण	.... ३२१
पद्मकादि घृत	.... ,,
चंदनादि पान	.... ,,
उदीच्यजल	.... ,,
चंदनपान	.... ,,
मुद्गकाढा	.... ३२२
कोलमज्जा	.... ,,
बीजपूरादि पुटपाक	.... ,,
हरीतकी चूर्ण	.... ,,
जंब्वाम्रपल्लवरस	.... ३२३
हिंग्वादि पान	.... ,,
उग्रगंधादि योग	.... ,,
सामान्यचिकित्सा	.... ,,
जातीपत्रचूर्ण	.... ,,

विषय.	पृष्ठ.
असाध्यच्छर्दिलक्षण	.... ३२४
आगंतुकच्छर्दिलक्षण	.... ,,
असाध्यलक्षण	.... ,,
उपद्रव	.... ३२५
सामान्यचिकित्सा	.... ,,
आम्रास्थिकाढा	.... ,,
जंबूपल्लवादि काढा	.... ३२६
मयूरपक्षभस्मावलेह	.... ,,
गोण्याद्यभस्म योग	.... ,,
पटोलाद्य घृत	.... ,,
दधित्थरसादि लेह	.... ,,
रंभाकंदयोग	.... ३२७
करंजादि लेह	.... ,,
करंजबीजादि योग	.... ,,
शंखपुष्पीरसादि पान	.... ,,
जीरकादि धूप	.... ,,
वांतिहृद्रस	.... ,,
जातीरसपान	.... ३२८
यष्ट्यादि पान	.... ,,
गुडूच्यादि हिम	.... ,,
पारदादि चूर्ण	.... ,,
जीरकादि रस	.... ३२९
वमनामृत योग	.... ,,
छर्दिपथ्य	.... ,,
अपथ्य	.... ३३०
तृष्णाकर्मविपाकः ।	
शांति	.... ३३१
तृष्णानिदान	.... ,,
तृष्णार्दितका स्वरूप	.... ,,
तृष्णासंप्राप्ति	.... ,,

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
वातजतृष्णानिदान	.... ३३२	दूसरा प्रकार	.... ३३९
वाततृष्णाजय प्रकार....	.... ”	अवलेह	.... ”
दूसरा प्रकार	.... ”	ताम्रादि रस	.... ”
तेल	.... ३३३	श्रीखंड योग	.... ३४०
जल	.... ”	आमलक्यादि गुटिका तृष्णादिपर	”
पित्ततृष्णानिदान	.... ”	वटी	.... ”
पित्ततृष्णाचिकित्सा	.... ”	गुटी	.... ”
तंदुलोदकपान	.... ”	काश्मर्यादि काढा	.... ३४१
मधुकादि फांट	.... ३३४	जीरकादि चूर्ण	.... ”
कफतृष्णानिदान	.... ”	आम्रादि काढा	.... ”
कफतृष्णासामान्यचिकित्सा	.... ”	द्राक्षादि नस्य	.... ”
बिल्वादि काढा	.... ”	जीरकादि काढा	.... ”
कफतृष्णाप्रयोग	.... ३३५	कोष्ठादि योग	.... ३४२
क्षतजन्यतृषानिदान	.... ”	तप्तलोष्टादि योग	.... ”
क्षतजतृष्णाचिकित्सा	.... ”	मंदादि योग	.... ”
क्षयजतृष्णानिदान	.... ”	रसादि गुटी	.... ”
क्षयजतृष्णा	.... ३३६	रसादि चूर्ण	.... ३४३
आमजतृष्णानिदान	.... ”	लेप	.... ”
आमतृष्णा	.... ”	गुटी	.... ”
अन्नजातृष्णानिदान	.... ”	उपसर्गतृष्णासामान्यविधि	.... ”
अन्नजाचिकित्सा	.... ”	अभ्यंजन और स्नान	.... ३४४
उपद्रव व असाध्यलक्षण तृष्णा....	३३७	कसेर्वादि काढा	.... ”
जलपाननियम	.... ”	क्षौद्रादि गंडूष	.... ”
गंडूष	.... ”	लेप	.... ”
गंडूष	.... ३३८	दूसरा प्रकार	.... ३४५
लेप	.... ”	पानात्ययजतृष्णा	.... ”
चूर्ण	.... ”	तृष्णारोग पथ्य	.... ”
कुष्ठादि चूर्ण	.... ”	तृषारोग अपथ्य	.... ३४६
चूर्ण	.... ३३९	मूर्च्छाभ्रमनिद्रासंन्याससनिदानम् ।	
वटाद्यवलेह	.... ”	संप्राप्ति	.... ३४७

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
पूर्वरूप	.... ३४७	पथ्यादिघृत मदजन्यमूर्च्छा पर....	३५५
वातादि मूर्च्छालक्षण....	.... "	रस	.... "
पित्तमूर्च्छानिदान	.... ३४८	ताम्रादि चूर्ण	.... "
कफमूर्च्छा	.... "	शुंठ्यादि गुटी	.... "
संन्निपातमूर्च्छानिदान....	.... "	मूर्च्छारोगमें पथ्य	.... ३५६
रक्तमूर्च्छानिदान	.... "	मूर्च्छा अपथ्य	.... ३५८
विषमद्यमूर्च्छानिदान	.... ३४९	पानात्ययपरमदपानाजीर्णपान-विभ्रमनिदानम् ।	
रक्तादि मूर्च्छादियोंके लक्षण	"	मद्यका सेवन प्रकार	.... ३५७
मूर्च्छाभेदकारण विशेषकरके कहताहूं.	३५०	विधिसे मद्य पीनेके दूसरे गुण	३५८
संन्यासलक्षण	.... "	त्रिविधमदके लक्षण	.... ३५९
संन्यासकथन	.... "	मध्यममदके लक्षण	.... "
मूर्च्छा	.... ३५१	तृतीयमदके लक्षण	.... "
चिकित्साक्रम	.... "	चतुर्थमद लक्षण	.... "
दुरालभादि काढा	.... "	अविधिसे सेवित मद्यके अन्य विकार.	३६०
पंचमूलकाढा	.... "	अन्नके साथ मद्यपान करनेके विकार.	"
क्षुद्रादि काढा	.... ३५२	उन विकारोंको कहते हैं	.... "
द्राक्षादि काढा	.... "	वातादि संबंधमदात्ययलक्षण	.... ३६१
रक्तजादिका मूर्च्छा पर शास्त्रार्थ....	"	पित्तजन्यमदात्ययनिदान	.... "
कोलादि योग	.... "	कफमदात्यय निदान	.... "
त्रिफलादि योग	.... "	त्रिदोषमदात्यय निदान	.... "
दुरालभादि काढा	.... ३५३	परमदलक्षण	.... "
सामान्य	.... "	वातमदात्ययमें सौवर्चलादि	.... ३६२
आत्मगुप्तादि योग	.... "	सूक्तशृंग्यादि	.... "
नारिकेलादि योग	.... "	आम्लस्निग्धादि	.... "
प्रकारांतर	.... "	पित्तमदात्यय	.... "
मृणालाद्यवलेह	.... ३५४	क्षुद्रामलकादि पान	.... "
अंजन	.... "	सामान्य....	.... ३६३
दूसरा प्रकार	.... "	कफमदात्यय सामान्य	.... "
सामान्य उपचार अंजन	.... "	अष्टांगलवण	.... "
खिन्नामलकादि लेह	.... ३५५		

विषय.	पृष्ठ.
सुपारीके मद पर	.... ३६३
दूसरा प्रकार	.... "
कोद्रवधत्तूर	.... ३६४
जायफलके मद पर	.... "
दूसरा प्रकार	.... "
कज्जलीरस	.... "
सामान्य	.... "
पानाजीर्णके लक्षण	.... ३६५
पानविभ्रम लक्षण	.... "
असाध्य लक्षण	.... "
पानोपद्रव....	.... ३६६
मथिततैल	.... "
मद्योपशम	.... "
कृष्णादि पने	.... "
दुःस्पर्शादि योग	.... ३६७
चव्यादि चूर्ण	.... "
शतावरीपुनर्नवा घृत	.... "
माषघृत	.... "
सामान्यशास्त्रार्थ	.... ३६८
खर्जूरादि मंथ	.... "
मदात्ययपथ्य	.... "
मदात्यय अपथ्य	.... ३६९

दाहरोगकर्मविपाकः ।

विषय.	पृष्ठ.
ज्योतिःशास्त्राभिप्राय	.... ३६९
दाहनिदान	.... "
सामान्यचिकित्सा	.... ३७०
दूसरा प्रकार	.... "
रक्तजदाहलक्षण	.... "
रसादि गुटी	.... ३७१
चंद्रकलारस	.... ३७१
तृष्णानिरोधजदाहलक्षण	.... "
तृष्णानिरोधजदाह	.... "
यवादि मंथ	.... ३७२
मृतसंजीवनी गुटी	.... "
रक्तपूर्णकोष्ठजदाह	.... "
रक्तपूर्णकोष्ठजदाह	.... "
दूसरा प्रकार	.... ३७३
दशसारचूर्ण	.... "
धातुक्षयजन्य दाह	.... "
खर्जूरादि चूर्ण	.... "
धातुक्षयज दाह	.... ३७४
पित्तदाह	.... "
क्षतजदाह....	.... "
चंदनादि चूर्ण	.... "
रक्तजदाह पर	.... ३७५
चंदनादि काढा	.... "
योग	.... "
लाजादि काढा	.... "
कमलादि पान	.... ३७६
कोष्ठपूर्णरक्त दाह	.... "
दाहरोग तैल	.... "
तिलतैल	.... "
पुनर्नवादि तैल	.... "
तंदुलीयकमूलादि पान	.... ३७७
लेप	.... "
स्नान	.... "
दाहहरणकर्ता योग	.... "
धान्याहिम....	.... ३७९
घृत लेप	.... ”

विषय.	पृष्ठ.
निंबप्रवाल लेप	.... ३७९
अन्य उपय	.... "
बालआलिंगन	.... "
दूसरा चंद्रकलारस	.... ३८०
मर्माभिवातज	.... ३८१
असाध्य लक्षण	.... "
दाहरोगमें पथ्य	.... "
दाहरोगमें अपथ्य	.... ३८२
उन्मादरोगकर्मविपाकः ।	
उन्माद व भूतोन्माद निदान	३८३
उन्मादभेद व निदानके हेतु	"
संप्राप्तिकथन	.... "
उन्मादका रूप	.... ३८४
वातोन्मादलक्षण	.... "
पित्तोन्माद	.... "
कफोन्माद	.... ३८५
सन्निपातज उन्मादनिदान	"
दुःखोन्माद लक्षण	.... "
विषजउन्मादलक्षण	.... ३८६
असाध्यलक्षण	.... "
उन्मादशास्त्रार्थ	.... "
सामान्य उपचार	.... "
सामान्यचिकित्सा	.... ३८७
सामान्य उपचार	.... "
शास्त्रार्थ	.... "
लशुनादि घृत	.... ३८८
चंदनादि तैल	.... "
अंजन	.... ३८९
शिरीषादि नस्य ...	.... "
व्योषाद्यंजन	.... "
धूप	.... ३९०
पर्पटीरस	.... "
शिरीषाद्यंजन	.... "
ब्राह्मयादि रस	.... ३९१
ब्राह्मयादि कल्क	.... "
सितकुसुमबलादि योग	.... "
दशमूलादि योग	.... "
भूतोन्मादलक्षण	.... ३९२
देवजुष्टउन्मादलक्षण	.... "
असुरउन्माद	.... "
गंधर्वजुष्टउन्माद	.... "
यक्षग्रस्त उन्माद लक्षण	.... ३९३
पितृग्रहग्रस्त उन्माद लक्षण	.... "
सर्पग्रहग्रस्त उन्माद लक्षण	.... "
राक्षसजुष्ट उन्मादलक्षण	.... "
ब्रह्मराक्षस उन्माद लक्षण	.... ३९४
पिशाचजन्य उन्माद लक्षण	.... "
असाध्य लक्षण	.... "
देवादीनामावेशसमयः	.... ३९५
निशादि घृत	.... "
कल्याण घृत	.... ३९७
हिंग्वादि घृत	.... "
सारस्वत घृत	.... "
उन्मादगजकेसरी रस	.... "
विगतोन्माद लक्षण	.... ३९८
भूतोन्माद पर अंजन व नावन	.... "
भूतभैरव रस	.... "
भूतराव घृत	.... ३९९
धूप	.... "
भूतोन्मादचिकित्सा शास्त्रार्थ	.... ४००

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
महापैशाचिक घृत	.... ४०१	त्रिकत्रय लेह	.... ४१०
कल्याणक घृत	.... ”	कल्याण चूर्ण	.... ”
उन्मादपथ्य	.... ”	लेप व दाग	.... ”
उन्माद अपथ्य	.... ४०२	चंदनादि अवलेह	.... ४११
अपस्मारकर्मविपाकः ।		द्राक्षाद्यवलेह	.... ४१२
ज्योतिःशास्त्राभिप्राय	.... ४०२	शास्त्रार्थ	.... ४१३
अपस्मारनिदान	.... ४०३	पलंकषा तैल	.... ”
पूर्वरूप	.... ”	कठभ्यादि तैल	.... ”
वातजन्य अपस्मार	.... ”	शिग्रु तैल	.... ”
पैत्तिक अपस्मार	.... ”	अपस्मार पथ्य	.... ४१४
कफापस्मार	.... ”	अपस्मार अपथ्य	.... ”
सन्निपातापस्मार निदान	.... ४०४	वातव्याधिकर्मविपाकः ।	
असाध्य लक्षण	.... ”	वातरोगहर	.... ४१५
अपस्मारका कालनियम	.... ”	धनुर्वातहर	.... ”
मधुक घृत	.... ४०५	पक्षवातहर	.... ४१६
काशघृत	.... ”	रक्तवातहर	.... ”
कफापस्मार पर वचाद्य घृत	.... ”	रक्तवातपित्तहर	.... ”
मधुवचायोग	.... ”	वातपित्तहर	.... ”
मुस्तकमूल योग	.... ४०६	वातव्याधिनिदान	.... ४१७
कूष्मांडकादियोग	.... ”	वायुका पूर्वरूप	.... ४१८
भैरवरसायन	.... ”	रूपकथन	.... ”
स्मृतिसागर रस	.... ”	वातचिकित्सोपक्रम	.... ४१९
पानीयकल्याणघृत अपस्मारादिकों पर	.... ४०७	दूसरा प्रकार	.... ”
शंखपुष्पी घृत	.... ”	तीसरा प्रकार	.... ४२०
सैंधवादि घृत	.... ४०८	कोष्ठगत वातलक्षण	.... ”
ब्राह्मी घृत	.... ”	कोष्ठलक्षण	.... ”
कूष्मांड घृत	.... ”	आमाशयोक्त	.... ”
पंचगव्य घृत	.... ”	कोष्ठवातचिकित्सा क्रम	.... ”
अपस्मार नस्य	.... ”	चिकित्सा	.... ४२१
अंजन	.... ४०९	आमाशयगत लक्षण	.... ”

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
आमाशय लक्षण	.... ४२१	किरातादि कल्क	.... ४२९
आमाशयगतवातचिकित्सा	.... "	त्वक्शून्यता निदान	.... ४३०
आमाशयगतवात	.... "	चिकित्सा	.... "
षट्चरण योग	.... ४२२	रसगतवायुके लक्षण	.... "
तीन काढे	.... "	रक्तगतवायुके लक्षण	.... "
पक्वाशयवायु	.... "	मांसगत वायु	.... "
चिकित्सा	.... "	मेदाश्रित वातलक्षण	.... ४३१
हृदयवात	.... ४२३	अस्थिवातलक्षण	.... "
सर्वांगवात लक्षण	.... "	मज्जागत वातलक्षण	.... "
चिकित्सा	.... "	शुक्रगत वातलक्षण	.... "
अवशिष्टवात	.... ४२४	सप्तधातुगत वातचिकित्सा	.... "
कुरंटकादि काढा	.... "	मांसमेदोगत	.... "
महारास्नादि काढा	.... "	अस्थिमज्जागत	.... ४३२
दूसरा प्रकार	.... ४२५	केतकादि तैल	.... "
महाबलादि काढा	.... ४२६	शुक्रगत	.... "
पंचमूलादि योग	.... "	शिरागतवायु	.... "
वाजिगंधादि काढा	.... "	चिकित्सा	.... "
समीरदावानल	.... ४२७	स्नायुगत वातलक्षण	.... "
गुदास्थितवायुकार्य	.... "	चिकित्सा	.... "
चिकित्सा	.... "	संधिगतवातनिदान	.... ४३३
चिकित्सा	.... "	सामान्य चिकित्सा	.... "
श्रोत्रादिगत लक्षण	.... "	इंद्रवारुणि चूर्ण	.... "
चिकित्सा	.... "	पित्तकफाश्रित प्राण	.... "
जृंभा (जंभाई)	.... ४२८	पित्तकफाश्रित उदान....	.... "
चिकित्सा	.... "	पित्तकफाश्रित समान....	.... ४३४
जृंभाचिकित्सा	.... "	पित्तकफाश्रित अपान	.... "
प्रलापक	.... "	पित्तकफाश्रित व्यान	.... "
चिकित्सा	.... ४२९	चिकित्सा	.... "
रसाज्ञान निदान	.... "	आक्षेपके सामान्य लक्षण	.... "
चिकित्सा	.... "	आक्षेपके चार भेद	.... ४३५

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
केवल वातजाक्षेप	.... ४३५	गुग्गुल पक्षाघात पर	.... ४४३
सामान्य चिकित्सा	.... ”	रालतैल	.... ”
आक्षेपक चिकित्सा	.... ”	शुंठी चूर्ण....	.... ४४४
आक्षेपके भेद अपतंत्रक	.... ४३६	अर्दित निदान	.... ”
चिकित्सा	.... ४३७	वातार्दित	.... ४४५
हरीतक्यादि लेह	.... ”	चिकित्सा	.... ”
मरीचादि चूर्ण	.... ”	पित्तार्दित	.... ४४६
दंडापतानक	.... ”	कफार्दित	.... ”
अपतानक	.... ”	अर्दितसाध्यासाध्य	.... ४४७
असाध्यत्व	.... ४३८	दूसरा प्रकार	.... ”
चिकित्साप्रक्रिया	.... ”	लशुनाविधि	.... ”
धनुस्तंभलक्षण	.... ४३९	हनुग्रहनिदान	.... ४४८
दूसरा प्रकार	.... ”	चिकित्सा	.... ”
कुब्जलक्षण	.... ”	हनुग्रहचिकित्सा	.... ”
अंतरायामलक्षण	.... ”	रसोनवटक	.... ४४९
बाह्यायामलक्षण	.... ४४०	अभ्यंजन	.... ”
सामान्य	.... ”	प्रसारणीतैल वातकफजन्यवायुपर.	”
दूसरा प्रकार	.... ”	मन्यास्तंभ	.... ४५०
चिकित्सा	.... ”	चिकित्सा	.... ”
सर्ज तैल	.... ४४१	जिह्वास्तंभ	.... ”
एरंडादि काढा	.... ”	चिकित्सा	.... ४५१
पक्षवध	.... ”	दूसरा प्रकार	.... ”
सर्वांगरोग लक्षण	.... ”	कल्याणकावलेह	.... ”
माषादि काढा	.... ४४२	शिरोग्रह	.... ”
ग्रंथिकादि तैल	.... ”	चिकित्सा	.... ”
मायादि तैल	.... ”	गृध्रसीलक्षण	.... ४५२
माषादि सप्तक	.... ”	वातज गृध्रसीनिदान	.... ”
माष तैल	.... ४४३	वातश्लेष्मज गृध्रसीनिदान	.... ”
कपिकच्छ्वादि काढा	.... ”	गृध्रसीचिकित्सा	.... ”
		एरंडतैलयोग	.... ४५३

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
गृध्रसीहरतैल	.... ४५३	अवबाहुकलक्षण	.... ४६१
शिरावेध गृध्रसी पर	.... ,,	चिकित्सा	.... ,,
निंबकल्क	.... ४५४	माषतैल	.... ,,
गृध्रसीचिकित्सा	.... ,,	माषतैलादि मर्दन	.... ४६२
रास्नागुग्गुलु	.... ४५५	मूक मिम्मिण व गद्गदनिदान	.... ,,
रास्नाकाढा	.... ,,	सारस्वत घृत	.... ,,
पथ्यागुग्गुलु	.... ,,	तूनीलक्षण....	.... ४६३
एरंडतैलयोग	.... ४५६	प्रतूनीलक्षण	.... ,,
विश्वाचीलक्षण	.... ,,	इन दोनों पर चिकित्सा	.... ,,
चिकित्सा	.... ४५७	आध्मानलक्षण	.... ,,
माषतैल	.... ,,	चिकित्सा	.... ४६४
क्रोष्टुशीर्षलक्षण	.... ,,	नाराचचूर्ण	.... ,,
चिकित्सा	.... ,,	दारुषट्‌कलेप	.... ,,
सामान्यचिकित्सा	.... ,,	महानाराचरस	.... ,,
खंज व पंगुके लक्षण	.... ४५८	प्रत्याध्माननिदान	.... ४६५
चिकित्सा	.... ,,	चिकित्सा	.... ,,
कलायखंजलक्षण	.... ,,	वाताष्ठीलानिदान	.... ,,
चिकित्सा	.... ,,	प्रत्यष्ठीला....	.... ४६६
चिकित्साक्रम	.... ,,	हिंग्वादि चूर्ण	.... ,,
वातकंटकनिदान	.... ४५९	प्रत्यष्ठीलादि चिकित्सा	.... ,,
चिकित्सा	.... ,,	दूसरा प्रकार	.... ,,
पाददाहलक्षण	.... ,,	हिंग्वादि योग	.... ४६७
चिकित्सा	.... ,,	नादेयादि काढा	.... ,,
पाददाह पर लेप	.... ,,	विडंगासव....	.... ,,
पादहर्षलक्षण	.... ४६०	बस्तिवातलक्षण	.... ४६८
चिकित्सा	.... ,,	चिकित्सा	.... ,,
बाहुशोषनिदान	.... ,,	हरीतक्यादि चूर्ण	.... ,,
चिकित्सा	.... ,,	यवक्षारचूर्ण	.... ४६९
रसोनकल्क	.... ,,	कूष्मांडबीजयोग	.... ,,
बाहुशोषचिकित्सा	.... ४६१	आमलक्यादि योग	.... ,,

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
चंदनादि वर्ति	.... ४६९	अजमोदादि चूर्ण	.... ४७९
बस्तिगतवायुचिकित्साक्रम	.... "	कुष्ठादि चूर्ण	.... ४८०
कंपवायु	.... "	शुंठ्यादि चूर्ण	.... "
खल्लीके लक्षण	.... ४७०	रास्नादि चूर्ण	.... "
चिकित्सा	.... "	द्वात्रिंशकगुग्गुलु	.... "
स्थान नाम लक्षण वातव्याधिनिदान	"	योगराजगुग्गुलु वातादिरोगोंपर.	४८१
चिकित्सा	.... ४७१	षडशीतिगुग्गुलु	.... ४८२
लशुनसेवन	.... "	विश्वाद्य गुग्गुलु	.... ४८४
शुंठ्यादि काढा	.... "	दूसरा प्रकार	.... ४८५
दशमूलादि काढा	.... "	रास्नादि गुग्गुलु	.... "
कटिवात पर लड्डू	.... "	दूसरी योगराजगुटी	.... "
ऊरुस्तंभ पर सामान्यविशेषाचिकित्सा	.... ४७२	रसोनसंधान	.... ४८७
		भुजंगीगुटिका	.... ४८८
सामान्यसंज्ञा	.... "	दूसरा प्रकार	.... "
ऊर्ध्ववातलक्षण	.... ४७३	निर्गुंडयादि वटी	.... "
शुंठ्यादि चूर्ण	.... "	कणादि गुटी	.... ४८९
त्रिकशूललक्षण	.... "	अमरसुंदरवटी	.... "
चिकित्सा	.... "	अजमोदादि वटी	.... "
आभादित्रयोदशांगगुग्गुलु	.... "	लघुराजमृगांक	.... ४९०
रसोनाष्टक	.... ४७४	दूसरा एरंडपाक	.... "
व्रणायाम	.... ४७५	एरंडपाक	.... ४९१
कृच्छ्रसाध्यत्व	.... ४७६	रसोनपाक	.... ४९२
वातरोगका असाध्यत्व....	.... "	कुबेरपाक	.... ४९३
बत्तीसी काढा	.... ४७७	लशुनपाक	.... "
लघुरास्नादि काढा	.... "	लेप	.... ४९४
दूसरा प्रकार	.... ४७८	मर्दन व नस्य	.... ४९५
रास्नादि चूर्ण	.... "	स्वेदविधि	.... "
आभादि चूर्ण	.... "	पेंड बंधाना	.... "
रास्नादि चूर्ण	.... ४७९	स्वेद व लेप	.... "
शिग्रमूलादि चूर्ण	.... "	लेप व स्वेद	.... ४९६

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
शतपुष्पादि लेप	.... ४९६	त्रिगुणाख्य रस	.... ५०९
लेप	.... "	अर्केश्वर	.... "
वातहा पोटली	.... "	एकांगवीर	.... "
महाशाल्वणयोग	.... ४९७	वातरक्त पर रस	.... ५१०
कढी	.... "	तालकभस्म	.... "
स्वेदलेपाविधि	.... "	गंधकरसायन	.... ५११
लेप	.... ४९८	लघुविषगर्भतैल	.... "
दूसरा रसोनकल्क वातरोगके ऊपर.	"	दूसरा प्रकार	.... ५१२
रसोनकल्क वायु वा विषमज्वर		महाविषगर्भ तैल	.... "
ऊपर	४९९	प्रसारिणी तैल	.... ५१३
चौथा लहसनकल्क	.... "	नारायण तैल	.... ५१४
स्वच्छंदभैरवरस	.... "	दूसरा प्रकार	.... ५१५
समीरपन्नग	.... "	शतावरी तैल	.... ५१७
वातविध्वंसन	.... ५००	माषतैल	.... ५१८
वातराक्षस	.... "	चौथा विषगर्भ तैल	.... "
वातारिरस	.... ५०१	लघुनारायण तैल	.... ५२०
समीरगजकेसरी	.... ५०२	शतावरी नारायण तैल	.... "
मृतसंजीवनीरस	.... "	दूसरा शतावरी तैल	.... ५२१
वातारिरस	.... "	दशमूलादि तैल	.... "
वातगजांकुश	.... ५०३	तीसरा प्रसारिणी तैल....	.... ५२२
व्याधिगजकेसरी	.... "	चौथा प्रसारिणी तैल....	.... ५२४
सूर्यप्रभा गुटी	.... ५०४	पंचम प्रसारिणी तैल....	.... "
लघुवातविध्वंसमात्रा	.... ५०५	छठा विषगर्भ तैल	.... ५२५
वह्निकुमार	.... ५०६	सातवां विषगर्भ तैल....	.... ५२६
वातविध्वंस	.... "	दार्व्यादि तैल	.... "
दूसरा समीरपन्नग	.... ५०७	दशमूल तैल	.... "
वातारि रस	.... "	लघुमाषादि तैल	.... ५२७
दूसरा प्रकार	.... "	विजयभैरव तैल	.... "
रसेंद्रचिंतामणि	.... "	दूसरा प्रसारिणी तैल....	.... ५२८
कालकंटक रस	.... ५०८	व्याघ्र तैल	.... ५२९

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
महाबला तैल	.... ५३०	रक्ताधिक वातरक्त तथा पित्ताधिक वातरक्त	.... ५६०
दूसरा शतावरी तैल	.... ५३१	कफरक्त निदान	.... ”
तीसरा प्रकार	.... ”	अंगोंमें प्रसरणत्वकथन	.... ”
चौथा प्रकार	.... ५३२	वातरक्तके असाध्य लक्षण	.... ५६१
चंदनादि तैल	.... ५३३	वातरक्तके उपद्रव	.... ”
माषादि तैल	.... ४३४	साध्यासाध्यत्व	.... ”
महानारायण तैल	.... ५३५	वातरक्त पर सामान्य चिकित्सा	५६२
दूसरा प्रकार	.... ५३९	भोजन और रस	.... ५६३
जंबूकाद्य तैल	.... ५४२	यूष	.... ”
तीसरा माष तैल	.... ५४४	शाक	.... ”
रास्नापूतीकतैल	.... ५४५	वासादि क्वाथ	.... ५६४
बलातैल वातादिकों पर	.... ५४६	मंजिष्ठादि क्वाथ	.... ”
माषादि तैल ग्रीवास्तंभादिके ऊपर.	५४७	लघुमंजिष्ठादि क्वाथ	.... ”
सुगंध तैल	.... ५४८	पटोलादि क्वाथ	.... ५६५
एलादि तैल	.... ”	वासादि क्वाथ	.... ”
महालक्ष्मीनारायण तैल	.... ५४९	एरंडतैल योग	.... ”
रास्नाद्य घृत	.... ५५३	दार्व्यादि क्वाथ	.... ”
पंचतिक्त घृत	.... ”	वत्सादन्यादि क्वाथ	.... ”
वातरोग पर पथ्यापथ्य	.... ५५४	पित्ताधिक वातरक्त पर	.... ५६६
अपथ्य	.... ”	काकोल्यादि क्वाथ	.... ”
वातरोग पर पथ्य	.... ५५५	गुडूचीयोग	.... ”
अपथ्य	.... ५५६	गुडूच्यादि क्वाथ	.... ”
वातरक्तकर्मविपाकः ।		वृषादि क्वाथ	.... ५६७
वातरक्त का ज्योतिःशास्त्राभिप्राय.	५५७	त्रिवृतादि क्वाथ	.... ”
शमन	.... ५५८	पथ्यायोग तथा गुडूच्यादि क्वाथ....	”
वातरक्तनिदान	.... ”	वातरक्त पर काढा	.... ”
वातरक्तरोगकी संप्राप्ति	.... ”	वातरक्त पर पिंडादि क्वाथ	.... ”
वातरक्तमें अन्यदोषसंबंधी लक्षण.	५५९	मांजिष्ठादि क्वाथ	.... ५६८
पूर्वरूप	.... ”	द्वितीय मंजिष्ठादि क्वाथ	.... ”
वातरक्तमें अन्यसंसर्ग होनसे उपद्रव.	”		

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
खदिरकाथ	.... ५६८	सहस्रधौत घृत तथा राळयोग	.... ५७९
मंजिष्ठादि काढा	.... "	नवनीतमर्दन	.... "
अमृतादि कल्क	.... ५६९	सर्षपादि और वरुणादि लेप	.... "
लांगल्यादि चूर्ण	.... "	कनकादि लेप	.... "
मुंडयादि चूर्ण	.... ५७०	पंचामृतरस	.... ५८०
पद्मकाद्य तैल	.... "	हरतालभस्म	.... "
गुडूच्यादि तैल	.... "	कैशोरगुग्गुल	.... ५८२
मरीचादि तैल	.... "	महिषाख्य गुग्गुलु	.... "
बृहन्मरीच्यादि तैल	.... "	तालकेश्वर रस	.... "
पिंडतैल	.... ५७१	अमृतभल्लातकावलेह	.... ५८३
गुडूच्यादि तैल	.... ५७२	योगसारामृत	.... ५८५
पद्मकादि तैल	.... "	सर्वेश्वरस	.... "
गुडूच्यादि तैल	.... "	अर्केश्वर रस	.... ५८६
शताह्वादि तैल	.... ५७३	वातरक्तरोगमें पथ्य	.... "
वातरक्त तैल	.... "	अपथ्य	.... ५८७
पिंडतैल	.... "	**ऊरुस्तंभकर्मविपाकः ।**	
दशपाक बलातैल	.... "	ऊरुस्तंभके पूर्वरूप	.... ५८७
बलातैल	.... "	ऊरुस्तंभनिदान	.... ५८८
नागबलातैल	.... ५७४	ऊरुस्तंभके लक्षण	.... ५८९
आरनालतैल	.... "	ऊरुस्तंभके असाध्य लक्षण	.... "
बलादि घृत	.... "	ऊरुस्तंभकी सामान्य चिकित्सा	.... "
गुडूच्यादि घृत	.... "	अन्न	.... ५९०
अमृतादि घृत	.... ५७५	भल्लातकादि काथ	.... ५९१
शतावरीघृत	.... "	ग्रंथिकादि काथ	.... "
अमृतादिघृत	.... "	भल्लातकादि काथ	.... "
अमृतादि	.... "	पुनर्नवादि काथ	.... "
अश्वगंधपाक	.... ५७६	शेफालिकादि काथ	.... "
प्रपौंडरीकादि लेप	.... ५७८	वचादि काथ	.... ५९२
लेप और अभ्यंग	.... "	त्रिफलादि चूर्ण	.... "
शताह्वादि लेप	.... ५७९	दूसरा प्रकार	.... "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
वृद्धयादि तैल	.... ५९२	महौषधादि काथ	.... ६०१
त्रिफलाचूर्ण	.... ५९३	महारास्नादि काथ	.... ”
शिलाजतुयोग	.... ”	रास्नादि काथ	.... ६०२
ग्रंथिकादि कल्क	.... ”	रास्नाद्यादशकाढा	.... ”
पिप्पल्यादि कल्क	.... ”	रास्नासप्तक काथ	.... ”
पिप्पलीयोग	.... ”	शुंठ्यादि काथ	.... ”
ऊरुस्तंभ पर योग	.... ”	शठ्यादि काथ	.... ६०३
प्रकारांतर	.... ५९४	पिप्पल्यादि काथ	.... ”
ऊरुस्तंभ पर लेप	.... ”	दशमूलादि काढा	.... ”
कुष्ठादि तैल	.... ”	अजमोदादि चूर्ण	.... ”
सैंधवादि तैल	.... ”	पंचसमचूर्ण	.... ६०४
कटुतिक्त तैल	.... ५९५	पंचकोलचूर्ण	.... ”
त्रिफलादि गुग्गुलु	.... ”	त्रिफलादि चूर्ण	.... ”
गुंजागर्भ रसायन	.... ५९६	आरग्वधपत्र चूर्ण	.... ”
लशुन योग	.... ”	पुनर्नवादि चूर्ण	.... ६०५
ऊरुस्तंभरोग पथ्य	.... ५९७	त्रुट्यादि चूर्ण	.... ”
ऊरुस्तंभरोग पर अपथ्य	.... ”	अलंबुषादि चूर्ण	.... ”
आमवातकर्मविपाकः ।		भल्लातादि चूर्ण	.... ”
आमवात पर वैदिककर्म	.... ५९८	वैश्वानरचूर्ण	.... ”
ज्योतिश्शास्त्राभिप्राय....	.... ”	हिंग्वादि चूर्ण	.... ६०६
आमवातनिदान	.... ”	चित्रकादि	.... ”
आमवातके सामान्य लक्षण	.... ५९९	नागरचूर्ण	.... ”
अत्यंत बढे हुए आमवातके सामान्य लक्षण	.... ”	अजमोदादि गुटिका वा चूर्ण	.... ६०७
		सिंहनादगूगल	.... ”
आमवातके विशेष लक्षण		हरीतकीगूगल	.... ६०८
आमवातमें साध्यासाध्य विचार	६००	योगराजगूगल	.... ”
आमवातकी सामान्य चिकित्सा....	”	सिंहनादगूगल	.... ६०९
रास्नादि काथ	.... ”	अभयादि गुटी	.... ६१०
रास्नादि काथ	.... ”	एरंडादि गुटी	.... ”
रास्नादि काथ	.... ”	आमवातारि गुटिका	.... ”

विषय.	पृष्ठ.
एरंडयोग	.... ६११
एरंडयोग	.... "
हरीतकी योग	.... "
अहिंस्रादि योग	.... "
जल	.... ६१२
एरंडमूलयोग	.... "
रसोनयोग	.... "
पारदभस्मप्रयोग	.... "
आमवातविध्वंस रस	.... ६१३
आमवातारिरस	.... "
उदयभास्कर रस	.... "
शतपुष्पादि लेप	.... ६१४
रसोनाद्य तैल	.... "
रसोनासव	.... "
लशुनरस....	.... ६१५
रसोनासव....	.... "
बृहत्सैंधवादि तैल	.... ६१६
एरंडतैल....	.... ६१७
शुंठीघृत	.... "
शुंठीखंड	.... "
प्रकारांतर....	.... ६१८
मेथीपाक	.... "
सौभाग्यशुंठी	.... ६१९
शुंठ्यादि पुटपाक	.... ६२०
आमवातरोग पर पथ्य	.... "
आमवातरोग पर अपथ्य	.... "
शूलरोगकर्मविपाकः।	
अजीर्णशूलका कर्मविपाक	.... ६२१
प्लीहशूल	.... "
जठरशूल....	.... "
शमन	.... ६२१
अरुचिशूल	.... "
शमन	.... "
शमन	.... ६२२
कटिशूलका कर्मविपाक	.... "
कर्णशूल	.... "
शमन	.... "
हस्तशूल	.... ६२३
शमन	.... "
नेत्रशूल	.... "
शमन	.... "
शूलरोगमें कर्मविपाक....	.... "
शूलनिदान	.... ६२४
वातशूलकी चिकित्सा	.... ६२५
वातशूलमें यूप	.... "
दशमूलादि क्वाथ	.... "
विश्वादि काढा	.... "
बलादि काढा	.... ६२६
वातशूल पर कल्क	.... "
बीजपूरस्वरस	.... "
तुंबरुआदि चूर्ण	.... "
हरीतक्यादि चूर्ण	.... "
सौवर्चलाद्य चूर्ण	.... ६२७
उशीराद्य चूर्ण	.... "
श्वेतएरंडादि चूर्ण	.... "
मंदारमूलिकाद्य चूर्ण	.... "
यवान्यादि चूर्ण	.... "
करंजाद्य चूर्ण	.... "
गुडूच्यादि चूर्ण	.... ६२८
प्रकारांतर	.... "

विषय.	पृष्ठ.
उशीरादि चूर्ण	.... ६२८
सुवर्चलादि चूर्ण	.... "
प्रकारांतर....	.... "
एरंडमूलादि चूर्ण	.... ६२९
सौवर्चलादि गुटिका	.... "
बिल्वादि गुटिका	.... "
सोमाग्निमुखरस गुटी	.... "
मृगशृंगोद्भव भस्म	.... "
अग्निमुख रस	.... ६३०
उदयभास्कर रस	.... "
नाभिशूल पर लेप	.... ६३१
वातशूल पर लेप	.... "
मृत्तिकासेक	.... "
नाभिलेप	.... "
पैत्तिकशूलनिदान	.... ६३२
सामान्यचिकित्सा	.... "
नाभीके ऊपर पात्र धरना	.... ६३३
सामान्ययत्न	.... "
शतावर्यादि क्वाथ	.... "
बृहत्यादि क्वाथ	.... "
त्रिफलादि क्वाथ	.... "
त्रिफलादि क्वाथ	.... ६३४
त्रायमाणादि क्वाथ	.... "
शतावर्यादि रस	.... "
धान्यादि चूर्ण	.... "
धान्यादि स्वरस	.... "
कफजन्य शूलके लक्षण	.... "
कफशूलकी सामान्य चिकित्सा	.... ६३५
एरंडमूलादि क्वाथ	.... "
बीजपूररस	.... "

विषय.	पृष्ठ.
कटूफलादि चूर्ण	.... ६३५
बृहत्कट्फलादि चूर्ण	.... ६३६
पथ्यादि चूर्ण	.... "
मुस्तादि चूर्ण	.... "
लवणादि चूर्ण	.... "
सर्वांगसुंदर रस	.... ६३७
आमशूल	.... "
आमशूलकी सामान्य चिकित्सा	.... "
चित्रकादि क्वाथ	.... ६३८
त्रिफलादि चूर्ण	.... "
दीप्यादि चूर्ण	.... "
बिल्वमूलादि चूर्ण	.... "
दार्वादि लेप	.... "
आमशूल पर	.... "
हिंग्वादि योग	.... ६३९
कूष्मांडक्षार	.... "
द्वंद्वजशूल लक्षण	.... "
द्वंद्वजशूलकी सामान्य चिकित्सा	.... ६४०
द्वंद्वजशूल पर क्वाथ	.... "
पटोलादि क्वाथ	.... "
द्राक्षादि क्वाथ	.... "
एरंडमूलादि क्वाथ	.... "
लशुन कल्क	.... ६४१
सन्निपातशूलके लक्षण	.... "
त्रिदोषशूल चिकित्सा....	.... "
विदारि रस योग.	.... "
अक्षादि स्वरस	.... "
विश्वानर योग	.... ६४२
सर्वजशूल पर शास्त्रार्थ	.... "
शूले स्वरसः	.... "

विषय.	पृष्ठ.
बीजपूरादि स्वरस	.... ६४२
मातुलुंगस्वरस	.... ६४३
बृहत्यादि क्वाथ	.... ”
एलादि क्वाथ	.... ”
मातुलुंगादि क्वाथ	.... ”
अजमोदादि क्वाथ	.... ”
एरंडादि क्वाथ	.... ६४४
त्रिफलादि क्वाथ	.... ”
पथ्यादि क्वाथ	.... ”
शूलमात्र पर यवागू	.... ”
रेचनके वास्ते बत्ती	.... ६४५
अश्वीपुरीष रस योग	.... ”
विश्वजलादि क्वाथ	.... ”
कुबेरादि चूर्ण	.... ”
हिंग्वादि चूर्ण	.... ६४६
नाराचचूर्ण	.... ”
क्षार योग	.... ”
हिंग्वादि चूर्ण	.... ६४७
तुंबरूआदि चूर्ण	.... ”
पंचसमचूर्ण	.... ६४८
विश्वादि चूर्ण	.... ”
विश्वादि चूर्ण	.... ”
वचादि चूर्ण	.... ”
अजमोदादि चूर्ण	.... ”
वचादि चूर्ण	.... ६४९
यवान्यादि चूर्ण	.... ”
अजमोदादि चूर्ण	.... ”
रुचकादि चूर्ण	.... ”
हिंग्वादि चूर्ण	.... ६५०
शंखवटी	.... ”

विषय.	पृष्ठ.
गोमूत्रमंडूर	.... ६५१
सूर्यप्रभावटी	.... ”
शंखादि चूर्ण	.... ”
क्षारयोग....	.... ६५२
चित्रकादि वटक	.... ”
हरीतक्यादि वटी	.... ”
कुबेराक्षवटी	.... ६५३
अगस्तिवटी	.... ”
गरलादिवटी	.... ”
वचादि वटी	.... ६५४
कुबेराक्ष पाक	.... ”
सप्तविंशति गुग्गुलु	.... ”
लोहभस्म योग	.... ६५५
गंधक रसायन	.... ”
शूलकुठार रस	.... ”
अग्निकुमार रस	.... ६५६
क्षारताम्र रस	.... ”
सोमनाथी ताम्र	.... ”
गदमददहन	.... ६५७
शंखादि चूर्ण	.... ”
विद्याधराभ्रलोह	.... ६५८
पीडारि रस	.... ६५९
शुल्बसुंदर रस	.... ”
षण्मुख रस	.... ६६०
महाशूलहर रस	.... ”
त्रिनेत्र रस पक्तिशूलादिकों पर	”
गजकेसरी	.... ६६१
शूलगजकेसरी	.... ६६२
गजकेसरी	.... ”
पथ्यादि रस	.... ”

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
परिणामशूल निदान	.... ६६२	कृष्णाद्य लोह	.... ६७०
शूलके स्थान	.... ६६३	कृष्णादि लोह	.... ६७१
वातिकशूलके लक्षण....	.... "	शंबूकादि गुटिका	.... "
पैत्तिकशूलके लक्षण....	.... "	चतुःसमलोह	.... "
कफजन्य शूलके लक्षण	.... "	विडंगादि मोदक	.... ६७२
द्वंद्वजसन्निपातशूलके लक्षण	.... ६६४	तिलादि वटी	.... "
शूलके उपद्रव	.... "	खंडामलकरस	.... ६७३
शूलके असाध्य लक्षण	.... "	जीर्णशूल पर गुड	.... "
परिणामशूलकी सामान्यचिकित्सा.	"	योगांतर....	.... "
वातादिकों पर सामान्यचिकित्सा.	"	शंबूकभस्म योग	.... ६७४
त्रिफलादि काथ	.... ६६५	नाभि पर मदनादि लेप	.... "
वमन	.... "	रसादि लेप	.... "
परिणामशूल पर कल्क	... "	शतपुष्पादि लेप	.... "
शुंठीकल्क	.... "	कुबेराक्षयोग	.... ६७५
विरेचन	.... "	क्षारयोग	.... "
वमन	.... "	खंडपिप्पली	.... "
गुडादि चूर्ण	.... ६६६	मातुलुंगादि घृत	.... ६७६
सामुद्रादि चूर्ण	.... "	तैल	.... "
इंद्रवारुण्या चूर्ण	.... ६६७	अन्नद्रवशूल निदान	"
एरंडादि भस्म योग	.... "	अन्नद्रवशूलके लक्षण	.... "
पिप्पल्यादि योग	.... "	वमन-विरेचन	.... ६७७
त्रिपुरभैरवरस	.... "	सामान्य यत्न	.... "
शूलदावानलरस	.... ६६८	माषंडरी	.... "
परिणामशूल पर मंडूर	.... "	धात्रीलोह	.... "
तारमंडूर....	.... "	पायस	.... "
भीममंडूर	.... ६६९	अन्न	.... ६७८
लोहगुग्गुल	.... "	अन्न	.... "
नारिकेलक्षार	.... ६७०	अन्न	.... "
पथ्याद्य लोह	.... "	सामान्यचिकित्सा	.... "
लोहादि लेह	.... "	सामान्यचिकित्सा	.... "

विषय.	पृष्ठ.
भक्षण	.... ६७८
गुडमंडूर....	.... ६७९
शतावरीमंडूर	.... ”
शूलरोगमें पथ्य	.... ६८०
शूलरोगमें अपथ्य	.... ”

आनाहोदावर्त्तकर्मविपाकः ।

विषय.	पृष्ठ.
ज्योतिःशास्त्रका अभिप्राय	.... ६८१
उदावर्त्तनिदान	.... ”
वातनिरोधजन्य उदावर्त्त	.... ”
मल रोकनेका उदावर्त्त	.... ”
मूत्र रोकनेका उदावर्त्त	.... ६८२
जंभाई रोकनेका उदावर्त्त	.... ”
अश्रुपात रोकनेका उदावर्त्त	.... ”
छींक रोकनेका उदावर्त्त	.... ”
डकार रोकनेका उदावर्त्त	.... ”
वमन रोकनेका उदावर्त्त	.... ६८३
वीर्य रोकनेका उदावर्त्त	.... ”
भूँख रोकनेका उदावर्त्त	.... ”
प्यास रोकनेका उदावर्त्त	.... ”
श्वासोच्छ्वास रोकनेका उदावर्त्त	.... ”
निद्राविघातजन्य उदावर्त्त	.... ६८४
रूक्षादि कुपितवातज उदावर्त्त	.... ”
अधोवातजन्य उदावर्त्तकी चिकित्सा.	”
मलनिरोधज उदावर्त्तकी चिकित्सा.	”
मूत्रनिरोधज उदावर्त्तकी चिकित्सा.	६८५
जंभाईनिरोधज उदावर्त्तकी चिकित्सा.	”
बाष्पावरोधज व छींकके रोकनेके उदावर्त्तकी चिकित्सा	.... ”
जंभाईजनित उदावर्त्तकी चिकित्सा.	”
छींकजन्य उदावर्त्तकी चिकित्सा.	६८६
उद्गारछर्दिनिरोधज उदावर्त्तकी चिकित्सा	.... ६८६
उद्गार (डकार) जन्य उदावर्त्त पर.	”
छर्दिजन्य उदावर्त्त पर....	.... ”
क्षुधातृषोत्थ उदावर्त्त पर	.... ६८७
श्रमनिद्रोत्थ उदावर्त्त पर	.... ”
सामान्य चिकित्सा	.... ”
विधारादि लेप	.... ”
रसोनादि प्राश	.... ६८८
कदलीफल योग	.... ”
पंचमूलक्षीर	.... ”
सुवर्चलादि पेय	.... ”
धात्रीस्वरस	.... ”
वट्यादि यूष	.... ”
शामादि काथ	.... ६८९
नाराचचूर्ण	.... ”
दंत्यादिक वर्त्ति	.... ”
हिंग्वादि चूर्ण	.... ”
भद्रदार्वादि चूर्ण	.... ६९०
हरीतक्यादि घृत	.... ”
गुडाष्टक....	.... ”
शुष्कमूलादि घृत	.... ”
त्रिकटुकाद्या वर्ति	.... ६९१
मदनफलादिक फलवर्ति	.... ”
हिंग्वादि वर्ति	.... ”
उदावर्त्त पर पथ्य	.... ”
उदावर्त्त पर अपथ्य....	.... ”
आनाहरोग निदान	.... ६९२
आमजन्य आनाह	.... ”
पक्काशयज आनाह	.... ”

विषय	पृष्ठ.
उदावर्त्तके असाध्य लक्षण	.... ६९२
सामान्यविधि	.... ”
चिकित्सापरिभाषा	.... ६९३
आनाह	.... ”
हिंग्वादि चूर्ण	.... ”
फलचूर्ण	.... ”
तुंबुरूचूर्ण	.... ६९४
वचादि चूर्ण	.... ”
त्रिवृतादि गुटिका	.... ”
स्नुह्यादि वटी	.... ”
दारुषट्कादि लेप	.... ६९५
दारुषट्कादि योग	.... ”
स्थिरादि घृत	.... ”
उदावर्त्त पर पथ्य	.... ”
उदावर्त्त पर अपथ्य	.... ६९६
अथ गुल्मरोगकर्मविपाकः।	
गुल्मरोग निदान	.... ६९७
गुल्मरोगके स्थान	.... ”
गुल्मका रूप	.... ६९८
संप्राप्ति	.... ”
पूर्वरूप	.... ”
गुल्मके साधारण रूप	.... ”
वातगुल्मके लक्षण	.... ६९९
वातगुल्म पर साधारणक्रिया	.... ”
सामान्यचिकित्सा	.... ”
सामान्य उपचार	.... ७००
मातुलुंगादि योग	.... ”
शून्यादि योग	.... ”
केतकीक्षार योग	.... ”
वारुणीमंड योग	.... ”

विषय.	पृष्ठ.
वातगुल्म पर हबुषादि घृत	.... ७०१
चित्रकादि घृत	.... ”
हिंग्वादि घृत	.... ”
त्र्यूषणादि घृत	.... ७०२
तैल	.... ”
कुष्ठादि तैल	.... ”
विडंगादि कल्क	.... ”
गुग्गुल योग	.... ७०३
कुलत्थादि क्वाथ	.... ”
हिंग्वादि चूर्ण	.... ”
वातगुल्म पर विरेचन....	.... ”
शिखिवाडवरस	.... ”
पथ्य	.... ७०४
पित्तगुल्मके लक्षण	.... ”
द्राक्षादि चूर्ण	.... ”
पित्तगुल्म पर विरेचन	.... ”
पित्तगुल्म पर पथ्य	.... ७०५
द्राक्षादि घृत	.... ”
आमलक्यादि घृत	.... ”
त्रायमाणादि घृत	.... ”
कफगुल्मनिदान और लक्षण	.... ७०६
सामान्य चिकित्सा	.... ”
यवानी चूर्ण	.... ”
हिंग्वादि चूर्ण	.... ७०७
पंचकोलादि घृत	.... ”
कफगुल्म पर पथ्य	.... ७०८
तिलादि लेप और सेक	.... ”
सेक	.... ”
दशमूलादि तैल	.... ”
त्रिवृत्तादि घृत	.... ”

विषय.	पृष्ठ.
विद्याधर रस	.... ७०९
नाराच रस	.... "
द्वंद्वजगुल्म निदान और लक्षण.	"
द्राक्षादि कल्क	.... ७१०
सैंधवादि तैल	.... "
नाराच रस	.... "
करंजादि पुटपाक	.... "
सन्निपातगुल्म	.... ७११
सामान्य	.... "
वरुणादि क्वाथ	.... "
वरुणक्वाथ मध्यविद्रधि पर	.... "
वरुणादि क्वाथ	.... "
जयंत्यादि दो क्वाथ	.... ७१२
राजवृक्षादि पुटपाक	.... "
अभयादि योग	.... "
संप्राप्तिपूर्वक स्त्रीगुल्म	.... ७१३
दंत्यादि वटी	.... ७१४
पलाश घृत	.... "
शताह्वादि कल्क	.... "
तिलक्वाथ	.... "
भाङ्ग्यादि चूर्ण	.... "
तिलमूलादि चूर्ण	.... ७१५
मुंडयादि चूण	.... "
गुल्मके असाध्य लक्षण	.... "
दूसरा लक्षण	.... ७१६
तीसरा लक्षण	.... "
पुनर्नवादि कल्क	.... ७१७
चित्रकादि क्वाय	.... "
नादेयादि क्वाथ	.... "
पारदादि वटी	.... "

विषय.	पृष्ठ.
मूलिकादि धारण	.... ७१८
निंबादि वटी	.... "
सठ्यादि कांकायन वटी	.... "
यवान्यादि गुटिका	.... "
स्वर्जिका वटी	.... ७१९
प्रवालपंचामृत	.... "
हिंग्वादि घृत	.... ७२०
धात्रीघृत	.... "
षट्पलघृत	.... ७२१
दाधिक योग	.... "
स्नुहिक्षीराद्य घृत	.... "
अग्निमुख चूर्ण	.... ७२२
पिप्पल्यादि चूर्ण	.... "
हिंग्वादि चूर्ण	.... ७२३
चित्रकादि चूर्ण	.... "
त्रिफलादि चूर्ण	.... "
कुमारी योग	.... ७२४
नाराच चूर्ण	.... "
पूतिकादि चूर्ण	.... "
हस्तिकर्णादि चूर्ण	.... "
हिंग्वादि चूर्ण	.... ७२५
विद्याधर रस	.... "
वडवानल रस	.... ७२६
गुल्मोदरगजारातिरस	.... "
उद्दामाख्य रस	.... "
नाराच रस	.... ७२७
गुल्मकुठार रस	.... "
गुल्ममर्दभसिंह रस	.... "
वज्रक्षार	.... ७२८
गुल्मरोग पर क्षार	.... ७२९

विषय.	पृष्ठ.
बत्ती	.... ७२९
चविकासव	.... "
कुमारी आसव	.... ७३०
दंतिहरीतकी लेह	.... ७३१
चिंचाशंखवटी	.... ७३२
क्षारादि चूर्ण	.... "
सूर्यपुटसे शंखद्राव	.... "
द्वितीय शंखद्राव	.... ७३३
तीसरा शंखद्राव	.... "
क्षाराष्टक	.... ७३४
शरपुंखक्षार	.... "
गुल्मरोग पर पथ्य	.... "
गुल्मरोग पर अपथ्य....	.... ७३५
हृद्रोगकर्मविपाकः।	
ज्योतिःशास्त्रद्वारा निर्णय	.... ७३६
हृद्रोगनिदान	.... "
संप्राप्ति	.... "
वातजन्य हृदयरोग	.... "
पंचमूल क्वाथ	.... ७३७
पिप्पल्यादि चूर्ण	.... "
पुष्करादि कल्क	.... "
पुनर्नवादितैल	.... "
पित्तजन्य हृदयरोग निदान	.... "
सामान्य चिकित्सा	.... ७३८
द्राक्षादि चूर्ण	.... "
श्रीपर्ण्यादि रेचन और वमन	.... "
हारहूरादि चूर्ण	.... "
अर्जुनादि क्षीर	.... "
कसेरुकादि क्वाथ	.... ७३९
कफजहृद्रोग निदान	.... "
कफज हृद्रोगपर सामान्य चिकित्सा.	७३९
त्रिवृतादि चूर्ण	.... "
सूक्ष्मैलादि चूर्ण	.... "
सन्निपातज हृदयरोग निदान	.... ७४०
कृमिज हृद्रोग निदान....	.... "
हृदयरोगके उपद्रव	.... "
कृमिहृद्रोगकी सामान्य चिकित्सा.	७४१
गोमूत्रपान	.... "
दुग्धपान	.... "
पौष्करादि क्वाथ	.... "
दशमूलादि क्वाथ	.... "
एरंडादि क्वाथ	.... ७४२
बाह्लीकादि क्वाथ	.... "
नागरादि क्वाथ	.... "
नागबलादि दुग्धपान....	.... "
हिंगुपंचक चूर्ण	.... ७४३
पुष्कर चूर्ण	.... "
हरिणशृंग भस्म	.... "
हिंग्वादि चूर्ण	.... "
ककुभत्वक् चूर्ण	.... "
कटुक्यादि चूर्ण	.... ७४४
हरीतक्यादि चूर्ण	.... "
पाठादि चूर्ण	.... "
गोधूमादि चूर्ण	.... "
वल्लभ घृत	.... ७४५
यष्ट्यादि घृत	.... "
बलादि घृत	.... "
हृदयार्णव रस	.... "
रसायन	.... "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
हृद्रोग पर पथ्य	.... ७४६	सामान्य क्रम	.... ७५३
हृद्रोग पर अपथ्य	.... "	लोहभस्म योग	.... "
मूत्रकृच्छ्रकर्मविपाकः ।		रसपान	.... "
ज्योतिष	.... ७४७	पुरीषज मूत्रकृच्छ्र	.... "
मूत्रकृच्छ्र निदान	.... "	सामान्य चिकित्सा	.... ७५४
संप्राप्ति	.... ७४८	गोक्षुरकाथ	.... "
वातमूत्रकृच्छ्र निदान	.... "	आमलक्यादि काथ	.... "
वातमूत्रकृच्छ्र पर सामान्ययत्न....	"	एलाचूर्ण	.... "
काथ	.... "	खर्जूरादि चूर्ण	.... "
त्रिकंटकादि काथ	.... "	त्रिफलादि कल्क	.... ७५५
एलादि चूर्ण	.... ७४९	अश्मरीजन्य मूत्रकृच्छ्र	.... "
पित्तमूत्रकृच्छ्र	.... "	अश्मरीजन्य मूत्रकृच्छ्र	.... "
कुशकाशादि काथ	.... "	काथ	.... "
शतावरी काथ	.... "	एलादि काथ	.... "
एर्वारुबीजपान	.... ७५०	शुक्रज मूत्रकृच्छ्र	.... "
द्राक्षादि कल्क	.... "	सामान्य चिकित्सा	.... ७५६
नारिकेलजलपान	.... "	तृणपंचमूल घृत	.... "
रक्तनारिकेलजलपान	.... "	बलादि क्षीर	.... "
कफजन्य मूत्रकृच्छ्र निदान	.... "	पथरी और शर्कराका निदान	.... "
कफजन्य मूत्रकृच्छ्रकी सामान्य चिकित्सा	.... "	मूलपंचक योग	.... "
एलादि चूर्ण	.... ६५१	दाडिमादि रसपान	.... ७५७
सितदारुकादि चूर्ण	.... "	निदग्धिकारसपान	.... "
सन्निपातमूत्रकृच्छ्र निदान	.... "	यवक्षारपान	.... ७५८
बृहत्यादि काथ	.... "	यवक्षारपान	.... "
शतावर्यादि काथ	.... ७५२	पाषाणभेद काथ	.... "
दुग्ध योग	.... "	हरीतक्यादि काथ	.... "
यवक्षार	.... "	पाषाणभेदादि	.... "
गोकंटकादि लेह	.... "	गोक्षुरादि काथ	.... "
शल्यज मूत्रकृच्छ्र	.... ७५३	हरीतक्यादि काथ	.... ७५९
		यवादि काथ	.... "

विषय.	पृष्ठ.
कंटकादि घृत	७५९
शतावर्यादि घृत	”
त्रिकंटकादि गुग्गुलु	७६०
गोक्षुरादि लेप	”
किंशुकस्वेद	”
आखुविट्कल्क	”
त्रपुसादि बीजपूर रस	७६१
मंथादि योगत्रय	”
हरिद्रादि योग	”
भृष्टेक्षुरसपान	७६२
कुटज योग	”
लघुलोकेश्वर	”
चंद्रकला रस	”
बृहद्गोक्षुराद्य लेह	७६३
मूत्रकृच्छ्र पर पथ्य	७६५
मूत्रकृच्छ्र पर अपथ्य	७६६
मूत्राघातनिदानचिकित्सा ।	
मूत्राघातके १२ भेद	७६६
वातकुंडलिकाके लक्षण	७६७
अष्ठीलाके लक्षण	”
वातबस्तिके लक्षण	”
मूत्रातीतके लक्षण	७६८
मूत्रजठरके लक्षण	”
मूत्रोत्संगके लक्षण	”
मूत्रक्षयके लक्षण	”
मूत्रग्रंथिके लक्षण	७६९
मूत्रशुक्रके लक्षण	”
उष्णवातके लक्षण	”
मूत्रसादके लक्षण	”
विड्विघात लक्षण	७७०
मूत्राघातके असाध्य लक्षण	७७०
बस्तिकुंडलिकाके लक्षण	”
साध्यासाध्यत्वकथन	७७१
मूत्राघातकी सामान्य चिकित्सा.	”
गोक्षुरादिवटी	”
पयादि	७७२
ऐर्वारुबीजादि कल्क	”
सामान्य यत्न	”
वीरतर्वादि क्वाथ	७७३
सशूलमूत्राघात पर	”
त्रिफलादि क्वाथ	”
गोधावन्यादि क्वाथ	”
दशमूलादि क्वाथ	७७४
गोक्षुरादि क्वाथ	”
प्रकारांतर	”
वरुणादि क्वाथ	”
शतावर्यादि स्वरस	”
तिलक्षार योग	७७५
कर्पूरवर्ती	”
निदग्धिकास्वरस	”
शिलाजतु योग	”
कर्कटीबीजादि चूर्ण	”
भद्रादि चूर्ण	७७६
स्वगुप्तादि चूर्ण	”
उशीरादि चूर्ण	”
क्षौद्र य	७७७
धान्यकादि घृत	”
चित्रकाद्य घृत	”
मूत्राघात पर पथ्य	७७८
मूत्राघात पर अपथ्य	”

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
अश्मरीरोगकर्मविपाकः ।		गंधर्वादि कल्क	.... ७८६
शांति	.... ७७९	तिलादि क्षार	.... ”
ज्योतिःशास्त्रका मत....	.... ”	शिलाजतु योग	.... ”
अश्मरी (पथरी) निदान	.... ”	हिंग्वादि योग	.... ”
संप्राप्ति	.... ७८०	शृंगवेरादि कल्क	.... ”
अश्मरीका पूर्वरूप	.... ”	आनंदभैरवीवटी	.... ७८७
अश्मरीके सामान्य लक्षण	.... ”	मंजिष्ठादि चूर्ण	.... ”
वाताश्मरीके लक्षण	.... ”	त्रिकंटकादि चूर्ण	.... ”
अश्मरीकी सामान्य चिकित्सा	.... ७८१	केशर योग	.... ”
शुंठ्यादि चूर्ण	.... ”	पाषाणभेदी रस	.... ७८८
यवादि घृत	.... ”	तिलपुष्पक्षार योग	.... ”
वीरतर्वादि क्वाथ	.... ”	गोपालकर्कटीमूल योग	.... ”
अन्न	.... ”	अर्कपुष्पी कल्क	.... ”
वरुणमूल क्वाथ	.... ७८२	शतावरीमूलरस	.... ”
पित्ताश्मरी	.... ”	वरुणादि क्वाथ	.... ”
पाषाणभेदिक्वाथ	.... ”	क्वाथ	.... ७८९
कफकी पथरीका लक्षण	.... ”	शिग्रुमूल क्वाथ	.... ”
इसका बालकोंके होना	.... ”	तुषकषाय	.... ”
शिग्रुक्वाथ	.... ७८३	शुंठ्यादि क्वाथ	.... ”
शुक्राश्मरी निदान	.... ”	आकल्लकादि क्वाथ	.... ७९०
शुक्राश्मरीके कार्य	.... ”	पाषाणभेदादि क्वाथ	.... ”
शुक्राश्मरीकी सामान्य चिकित्सा.	”	कुलित्थ क्वाथ	.... ”
यवक्षार योग	.... ”	कूष्मांडस्वरस	.... ७९१
कुटज योग	.... ७८४	वरुणादि घृत	.... ”
शर्कराश्मरी निदान	.... ”	पाषाणभेद पाक	.... ”
शर्कराके असाध्य लक्षण	.... ”	वरुणादि गुड	.... ७९२
पाषाणभेदरस	.... ”	अश्मरी (पथरी) पर पथ्य	.... ७९३
त्रिविक्रम रस	.... ७८५	पथ्य	.... ”
रसभस्म योग	.... ”	अश्मरी पर अपथ्य	.... ७९४
लघुलोकेश्वर रस	.... ”		

विषय.	पृष्ठ.
प्रमेहरोगकर्मविपाकः ।	
सशूलप्रमेहका कर्मविपाक	७९४
वातप्रमेह कर्मविपाक	"
मधुमेहका कर्मविपाक....	७९५
प्रमेह निदान	"
कफादि प्रमेहोंकी संप्राप्ति	"
कफादिजन्य प्रमेहोंका साध्यासाध्यत्व	७९६
प्रमेहोंमें दोष और दूष्य तथा संख्या.	"
पूर्वरूप	"
प्रमेहके सामान्यलक्षण	"
प्रमेहके बीस भेद	७९७
कफजन्य उदकादि दश प्रमेह	"
पित्तप्रमेहके छः भेद....	७९८
क्षारादि प्रमेहोंके लक्षण	"
वातजन्यमेह	"
वसादि मेहोंके लक्षण	७९९
कफप्रमेहोंके उपद्रव	"
पित्तप्रमेहोंके उपद्रव	"
वातप्रमेहोंके उपद्रव	"
असाध्यलक्षण	"
स्त्रियोंके प्रमेह न होनेमें कारण	८००
प्रमेहके असाध्यलक्षण	"
मधुमेहोत्पत्ति और कारण	"
दो प्रकारके मधुमेहोंके कारण	"
आवरणके लक्षण	८०१
मधुमेहप्रवृत्तिनिमित्त	"
लोध्रादि काथ	"
कफजन्यमेहोंपर क्रमसे दश काथ.	"
शनैर्मेह	८०२
पिष्टप्रमेह....	८०२
सिकताप्रमेह	"
उदकप्रमेह	"
सांद्रप्रमेह	"
लालाप्रमेह	"
शुक्रमेह	८०३
शीतप्रमेह	"
इक्षुप्रमेह....	"
सुराप्रमेह....	"
पित्तप्रमेह पर चार काथ	"
पित्तकी छः प्रमेहोंपर क्रमसे छः काथ.	"
क्षारप्रमेह....	८०४
हारिद्रामेह	"
मांजिष्ठप्रमेह	"
शोणितप्रमेह	"
दुष्टरक्तज प्रमेह	"
नीलप्रमेह	"
सर्पिप्रमेह वातजन्य	८०५
छिन्नादि काथ	"
हस्तिमेह....	"
हस्तिमेह पर क्षार	"
वसामेह और हस्तिमेह पर काथ.	"
क्षौद्रमेह और सर्पिमेह पर काथ.	"
छितयियोग	८०६
वसामेह	"
कफपित्तप्रमेह पर	"
कफवातजन्य प्रमेह	"
पित्तवातज प्रमेह	"
त्रिफलादि काथ	८०७
त्रिफलादि काथ दूसरा	"

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
पलाशपुष्पक्वाथ	.... ८०७	शिलाजतुयोग	.... ८१६
प्रमेहनाशक योगत्रय....	.... "	स्वर्णमाक्षिकभस्मयोग	.... ८१७
विडंगादि क्वाथ	.... "	बहुमूत्रमेहका निदान....	.... "
प्रकारांतर	.... ८०८	दूसरा प्रकार	.... "
चणकयोग	.... "	त्रिफलादि योग	.... ८१८
योगचतुष्टय	.... "	देवदार्व्यरिष्ट	.... "
शाल्मादि कल्क	.... "	लोध्रासव....	.... ८१९
वंग तथा नागभस्म	.... ८०९	तालकेश्वर रस	.... "
द्विनिशादि हिम	.... "	वंगेश्वर रस	.... ८२०
गुडूची तथा धात्रीरसयोग	.... "	आनंदभैरव रस	.... "
अंकोल्यादि योग	.... "	प्रमेहबद्ध रस	.... "
भूधात्र्यादि योग	.... "	हरिशंकर रस	.... ८२१
कतकबीजयोग	.... "	मेघनाद रस	.... "
शाल्मलीस्वरस	.... "	निंबबीज कल्क	.... "
एलादि चूर्ण	.... ८१०	मेहारि रस	.... "
कर्कट्यादि चूर्ण	.... "	चंद्रोदय रस	.... "
त्रिफलाचूर्ण	.... "	वंगेश्वर रस	.... ८२२
गुग्गुल	.... "	मेहकुंजरकेसरी रस	.... "
गोक्षुरादिगुग्गुल	.... ८११	पंचलोहरसायन	.... ८२३
चंद्रकलावटी	.... "	महावंगेश्वर रस	.... "
चंद्रप्रभावटी	.... ८१२	वंगभस्म	.... ८२४
सिंहामृतघृत	.... ८१३	वसंतकुसुमाकर रस	.... "
हरिद्रादि तैल	.... "	जलजामृत रस	.... ८२५
सुपारीपाक	.... ८१४	प्रमेहकी उपेक्षासे प्रमेहपिटिकाओंका होना	.... "
असगंधपाक	.... "	पिटिकाके कारण	.... ८२६
शाल्मलीपाक	.... ८१५	दश पिटिकाओंके लक्षण	.... "
द्राक्षापाक....	.... "	असाध्य पिटिका	.... ८२७
अभ्रकयोग	.... ८१६	प्रमेहके साध्य लक्षण	.... "
नागभस्मयोग	.... "	पिटिकाके उपद्रव	.... "
गंधकयोग	.... "		

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
पिडिकाकी सामन्य चिकित्सा.	८२७	बब्बूलादि उद्वर्तन	.... ८३५
न्यग्रोधादि चूर्ण	.... ८२८	वासादि लेप	.... "
पिटिकाओं पर लेप	.... "	त्रिफलादि तैल	.... "
प्रमेह पर पथ्य	.... "	महासुगंधि तैल	.... ८३६
प्रमेहरोगमें अपथ्य	.... ८२९	वडवाग्नि रस	.... "
मेदोरोगनिदानचिकित्सा।		रसभस्म योग	.... ८३७
मेदरोग निदान	.... ८३०	त्रिमूर्ति रस	.... "
संप्राप्ति	.... "	मेद पर सामान्य उपचार	.... "
बढीहुई मेदके उपद्रव	.... "	मेदरोग पर पथ्य	.... "
मेद रहनेके स्थान	.... "	मेदरोग पर अपथ्य	.... ८३८
मेदरोगमें जठराग्नि प्रदीप्त होनेमें कारण	.... ८३१	उदररोगकर्मविपाकः।	
		शांति	.... ८३९
वढी मेद नाशका कारण होती है यह कथन	.... "	जलोदरका कर्मविपाक	.... "
		शांति	.... "
अत्यंत मेद बढनेका परिणाम	"	प्रकारांतर	.... "
स्थूल लक्षण	.... "	शांति	.... ८४०
उवटना	.... ८३२	प्लीहोदरकर्मविपाक	.... "
सामान्य योग	.... "	शांति	.... "
चव्यादि चूण	.... "	उदरनिदान	.... "
फलत्रिकादि चूर्ण	.... "	उदररोगकी संप्राप्ति	.... "
मेद पर सामान्य चिकित्सा	.... "	उदरोगोंका सामान्य लक्षण	.... ८४१
नवकगुग्गुलु	.... ८३३	उदरकी संख्या	.... "
मेद पर उपचार	.... "	वातोदरके लक्षण	.... "
तालपत्रका क्षार	.... "	वातोदरका सामान्य यत्न	.... ८४२
मोचरसादि लेप	.... "	तक्रपान	.... "
हरीतक्यादि उद्वर्तन	.... "	चूर्ण कषाय	.... "
उवटना	.... ८३४	शिलाजतुचूर्ण	.... "
क्वाथ	.... "	कुष्ठादि तैल	.... ८४३
त्र्यूषणाद्य लेह	.... "	समुद्रादि चूर्ण	.... "
उवटना	.... "	वातोदर पर घृत	.... "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
पित्तोदरके लक्षण	.... ८४३	विडंगादि चूर्ण	.... ८५१
पित्तोदरका सामान्य यत्न	.... ८४४	यवान्यादि चूर्ण	.... "
सातलादि घृत	.... "	वज्रक्षार	.... "
त्रिवृतादि घृत	.... "	क्षारादि योग	.... ८५२
कफोदरके लक्षण	.... "	क्षारभावितपिप्पली	.... "
कफोदरका यत्न	.... ८४५	अर्कपत्रक्षार	.... "
सन्निपातोदरका निदान	.... "	अग्निमुखलवण	.... "
सन्निपातोदर	.... ८४६	रोहितकघृत	.... ८५३
नागरादि तैल	.... "	चित्रकाद्य घृत	.... ८५४
दूष्योदरसंज्ञा	.... "	रक्तस्राव	.... "
शंखिनी घृत	.... "	शिरावेध	.... "
प्लीहोदर	.... ८४७	यकृतोदर	.... "
प्लीहोदर पर सामान्य यत्न	.... "	दोषसंबंध	.... "
शरपुंखामूल कल्क	.... "	यकृद्दाल्युदर	.... ८५५
तक्र	.... ८४८	पिप्पलीकल्क	.... "
रोहितादि कल्क	.... "	सामान्ययकृतोपचार	.... "
पिप्पल्यादि क्काथ	.... "	बद्धगुदोदर	.... "
शाल्मलीपुष्पपाक	.... "	हपुषादि चूर्ण	.... ८५६
लवणादि तक्र	.... "	बस्तिप्रकार	.... "
शुक्तिक्षार योग	.... "	उत्तरबस्ति	.... "
एरंडभस्म योग	.... ८४९	क्षतोदर	.... "
भल्लातकादि मोदक	.... "	वेधक्रिया तथा पाटनक्रिया	.... ८५७
लशुनादि	.... "	वेधस्थान	.... "
सौभांजनका योग	.... "	वेध करनेका प्रकार	.... "
रक्तस्राव और दाग	.... "	जल निकालनेमें नियम	.... "
प्लीहोदर पर शंखनाभि चूर्ण	.... ८५०	जल निकालने पर व्रण लेप.	.... ८५८
कुष्ठादि चूर्ण घृत	.... "	जलोदर लक्षण	.... "
लघुहिंग्वादि चूर्ण	.... "	छाछ	.... "
सिंध्वादि चूर्ण	.... "	जलोदरारि रस	.... ८५९
नागवटी	.... "	जलोदर पर रेचन	.... "

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
पेट फूलने पर यत्न....	.... ८५९	पटोलादि चूर्ण	.... ८६५
छः महीने तक नियम	.... "	उदर पर बिंदु घृत	.... "
अन्न	.... "	पंचमूल घृत	.... ८६६
साध्यासाध्य विचार	.... ८६०	नाराच घृत	.... "
असाध्य लक्षण	.... "	बिंदुघृत	.... ८६७
असाध्य लक्षण	.... "	त्रिवृतादि घृत	.... "
यत्न	.... ८६१	हिंग्वादि घृत	.... ८६८
रेचन	.... "	उदर पर वंगेश्वर रस	.... "
ज्योतिष्मतीतैल	.... "	त्रैलोक्यडंबर	.... "
गोमूत्र योग	.... "	रेचन	.... ८६९
उदर पर यत्नांतर	.... "	इच्छाभेदी रस	.... "
वर्द्धमानपीपल.	.... "	शोफोदर....	.... "
जलोदर पर योग	.... ८६२	हरीतक्यादि काथ ...	.... "
देवदार्व्यादि लेप	.... "	पुनर्नवादि योग	.... ८७०
प्रयोगांतर	.... ८६३	पुनर्नवादि काथ	.... "
चव्यादि काथ	.... "	शोथोदर चिकित्सा	.... "
देवद्रुमादि	.... "	माहिषमूत्रपान	.... "
नारायण चूर्ण	.... "	बिल्वादि काथ	.... ८७१
हपुषादि चूर्ण	.... ८६४	उदररोग पर पथ्य	.... "
उदररोग पर चूर्ण	.... ८६५	उदररोग पर अपथ्य....	.... ८७२

इति बृहन्निघंटुरत्नाकरपंचमभागस्थविषयानुक्रमणिका समाप्ता ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास
" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापाखाना,
कल्याण--मुंबई.

वैद्यकग्रंथाः ।

की. रु. आ.

अष्टांगहृदय-(वाग्भट) मूल मोटा अक्षर वाग्भटविरचित. ... ५-०

अमृतसागर-हिन्दीभाषामें-विना गुरु छोटे नगरमें दवाखाना करसके हैं । इसमें सर्व रोगोंका वर्णन और यत्न लिखे गये हैं । ग्लेज कागज ३-८

अर्कप्रकाश-(रावणकृत) भाषाटीकासमेत । इसमें-नानाप्रकारके यन्त्रोंसे औषधियोंका अर्क खींचना और गुणवर्णन भली प्रकार किया गया है, ग्लेज कागज १-८

तथा रफ कागज १-४

अनुपानदर्पण-भाषाटीका समेत । इसमें रस-धातु बनानेकी क्रिया और अनुपान देना तथा रोगोंपर औषधोंमें क्या २ अनुपान देना यह सब वर्णित है. १-०

अनुभूतयोगावली-चिकित्साग्रन्थ । अनुभव की हुई हरेक रोगकी उत्तम उत्तम औषधियां वर्णित हैं. ०-१२

अजीर्णतिमिरभास्कर-भाषामें-क्याखूब रामप्रसादकृत ... ०-६

अजीर्णमञ्जरी-भाषाटीकासहित । इसमें किन २ चीजोंका अजीर्ण किन २ चीजोंके सेवनसे दूर होताहै इत्यादि विषय भली प्रकार लिखे हैं ०-४

आयुर्वेदसुषेणसंहिता-भाषाटीकासहित। इसमें सामान्य औषधीवर्ग धान्यवर्ग, पयवर्ग इत्यादिकोंका गुण-दोष वर्णित है. ... १-४

आयुर्वेदचिन्तामणि-भाषाटीकासहित । पं० बलदेवप्रसाद मिश्र संगृहीत. २-८

आरोग्यशिक्षा-पं० मुरलीधरशर्मा राजवैद्यसंकलित (भाषामें)... ०-७

की. रु. आ.

आदिशास्त्र–भाषाटीकासहित । इस ग्रन्थमें कन्या और पुरुषका लक्षण कौन २ प्रकारसे विवाह करना और रोगोंकी दवा आदिका वर्णन भली प्रकार है ०–१०

इलाजुल गुरबा –नूतन. २–०

अंजननिदान–भाषाटीकासमेत । इसमें–सुगमतासे रोगोंका निदान लिखा है. ०–१०

कल्पपञ्चकप्रयोग–भाषाटीकासमेत। इस ग्रन्थमें चोपचीनीकल्प, रुद्रवन्तीकल्प, रोगदमनीयकल्प, शिवलिंगीकल्प, तथा पलाश-कल्पात्मकभी है. ०–३

करिकल्पलता–छन्दोबद्ध–हिन्दीभाषामें । केशवसिंहजी तल्लुकेदार रचित । इसमें–हाथियोंके शुभाशुभलक्षण व उनके रोगनाशक अनेक औषधियोंका बयान चित्रों सहित वर्णित है. ... १–१२

कामकुतूहल–भाषाटीकासमेत । इसमें–शरीरकी क्षीणतादिमें अपूर्व दवाइयोंका संग्रह है. ०–६

कुटमुद्गर–भाषाटीकासमेत. ०–३

गौरीकांचलिकातन्त्र–भाषाटीकासमेत । इसमें–तन्त्र, मन्त्र और दवाइयोंका संग्रह परमोपयोगी लिखेभये हैं. ०–८

पुस्तकें मिलनेका ठिकाना–

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना,

कल्याण–मुंबई.

॥ श्रीः ॥

बृहन्निघण्टुरत्नाकरः ।

अजीर्णाधिकारः ।

मन्दाग्निहर ।

मन्दोदराग्निर्भवति साति द्रव्येण वै यजेत् ।
प्राजापत्यत्रयं कृत्वा भोजयेत्स शतं द्विजान् ॥

अर्थ–जो पुरुष धनवान् होकर (बलि वैश्वदेवादि) यज्ञ नहीं करे उसके मंदाग्निका रोग होता है । इस पापके कारण इसका प्रायश्चित्त यह है कि वह तीन प्राजापत्य व्रत करे और सौ ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥

पाराशर ।

गोमांसभक्षको मन्दजठराग्निर्भवेन्नरः । प्राजापत्यं चरेत्कृच्छ्रमतिकृच्छ्रं तथैव च ॥ अग्निमन्त्रं जपेन्नित्यं श्रीसूक्तं च विचक्षणम् ॥

अर्थ–पाराशरसंहितामें लिखा है कि जो प्राणी पूर्व जन्ममें गोमांस भक्षण करता है उसके इस जन्ममें मंदाग्निका रोग होता है. इस पापके दूर करनेको कृच्छ्रातिकृच्छ्र प्राजापत्य व्रत करे और "अग्निरश्मि" इस मंत्रका तथा श्रीसूक्तका जप करे तो यह रोग नष्ट होवे ॥

कर्मविपाकसंग्रह ।

अकारणं गरं दत्त्वा प्रमारयाति यः पुनः । स मन्दाग्निर्भवेदेव मृतकल्पश्च जायते ॥ याते रुद्रेण सूक्तेन चरुं च जुहुयाद्घृतम् । अष्टोत्तरयुतं सम्यक् तत्पापस्यापनुत्तये ॥ तामग्निवर्णामिति च जपेत्सूक्तं सहस्रकम् । भोजयेद्ब्राह्मणान् सम्यक् चत्वारिंशत्सुखी भवेत् ॥

अर्थ–जो प्राणी पूर्वजन्ममें विना कारण दूसरेको विष (जहर) देकर मार डालता है वह इस जन्ममें मंदाग्निवाला होता है । उसका जीना मुर्देके समान है । उसको इसका प्रयश्चित्त यह करना चाहिये कि "याते रुद्र" इस सूक्तसे चरु और घृतका एक सौ आठ वार हवन करे तथा "तामग्निवर्णी" इस सूक्तका एक हजार जप करे । तथा ४० ब्राह्मणोंको भोजन करावे तो इस प्राणीका मंदाग्नि रोग दूर होवे ॥

जठराग्निनिदान।

मन्दस्तीक्ष्णोऽतिविषमः समश्चेति चतुर्विधः।
कफपित्तानिलाधिक्यात्तत्साम्याज्जाठरोऽनलः॥

अर्थ-मनुष्यके कफकी प्रकृतिसे मंदाग्नि, पित्तकी प्रकृतिसे तीक्ष्णाग्नि, वातकी प्रकृतिसे विषमाग्नि, तथा वात, पित्त, कफ इनके समान होनेसे समाग्नि होतीहै। ऐसे अग्नि चार प्रकारकी है-इसमें मन्दाग्निको दुर्जय होनेसे प्रथम कही और (जाठर) शब्द कहनेसे धातुकी अग्निका त्याग जानना॥

विषूच्यादिनिदान।

अजीर्णमामं विष्टब्धं विदग्धं च यदीरितम्।
विषूच्यलसकौ तस्माद्भवेच्चापि विलम्बिका॥

अर्थ-आम, विष्टब्ध और विदग्ध ये जो अजीर्ण कहे हैं उनसे विषूचिका (हैजा), अलस और विलंबिका पैदा होय हैं। इनमें चौथे रसशेष अजीर्णको विषूच्यादि उत्पादक नहीं लिखा है इसका कारण यह है कि उस रसाजीर्णको अपरिणाममात्रत्व करके विषूचिका आदिके आरंभत्व स्वभावादिकोंके कहनेसे आम, विदग्ध और विष्टब्ध इनसे क्रमपूर्वक विषूचिका, अलस, विलंबिका ये प्रगट होतीहैं ऐसे कार्तिककुंड आचारी कहता है सो असत्य है क्योंकि विदग्धाजीर्णको विलंबिकाका प्रगट करना असम्भव है क्योंकि उस विलंबिकाको आगे कफवातसे प्रगट होना कहेंगे और विदग्धभावको पित्तजन्यता है इससे यह मत मन्तव्य नहीं है। इसी कारण तीनों अजीर्ण मिलकर विषूचिका आदिको प्रगट करते हैं यह वकुल आचारीका मत है॥

चतुर्विध अग्निके कार्य।

विषमो वातजान्रोगांस्तीक्ष्णः पित्तनिमित्तजान्।
करोत्यग्निस्तथा मन्दो विकारान्कफसंभवान्॥

अर्थ-विषमामाग्नि वातजन्य ८० रोगोंमेंसे किसी रोगको प्रकट करे और सामान्य ज्वरातिसारादिकको प्रगट करे। तीक्ष्णाग्नि पित्तके ४० रोगोंमेंसे किसी रोगको प्रगट करे। उसी प्रकार मन्दाग्नि कफजन्य २० रोगोंमेंसे किसी रोगको पैदा करे और आलस्यादिकको उत्पन्न करे॥

प्रकारांतर।

समासमाग्नेराशिता मात्रा सम्यग्विपच्यते। स्वल्पापि नैव

मन्दाग्नेर्विषमाग्नेस्तु देहिनः ॥ कदाचित्पच्यते सम्यक्कदाचिन्न विपच्यते । मात्रातिमात्राप्यशिता सुखं यस्य विपच्यते ॥ तीक्ष्णाग्निरिति तं विद्यात्समाग्निः श्रेष्ठ उच्यते ।

अर्थ—समाग्निवाले पुरुषके यथोचित आहार भले प्रकार पाचन होता है और मन्दाग्निवाले पुरुषके थोडा भी आहार यथार्थ नहीं पचता और विषमाग्निवाले मनुष्यके कभी अच्छी तरहसे अन्न पचे और कभी नहीं पचे और बहुत भोजन कराभी जिसके सुखपूर्वक पच जावे उसको तीक्ष्ण अग्नि कहते हैं इन चारों प्रकारकी अग्निमें समाग्नि उत्तम है । तीक्ष्णाग्निके कहनेसे भस्मकका ग्रहण नहीं करना चाहिये क्योंकि अत्यंत तीक्ष्णाग्निको भस्मक कहते हैं उसके लक्षण चरकमें कहे हैं ॥

हिंग्वष्टकचूर्ण।

त्रिकटुकमजमोदा सैन्धवं जीरके द्वे समचरणधृतानामष्टमो हिङ्गुभागः । प्रथमकवलभुक्तं सर्पिषा चूर्णमेतज्जनयति जठराग्निं वातगुल्मं निहन्ति ॥

अर्थ—सोंठ, काली मिरच, छोटी पीपल, अजमोद (अजमायन), सेंधानिमक, सफेद जीरा, काला जीरा और हींग ये सब औषध समान भाग लेवे । इस चूर्णको भोजनके समय दालभात या खिचडीमें डाल घी मिलायके पहले इसका ग्रास (गस्सा) लेवे फिर यथेच्छ भोजन करे तो जठराग्नि प्रबल हो और वायगोला आदि अनेक रोग दूर हो । इसमें हींगको घीमें भूनके डालनी चाहिये ॥

जीरकादिचूर्ण।

जरणरुचकशुण्ठीपिप्पलीतीक्ष्णवेल्लं सलवणमजमोदाहिङ्गुपथ्येतिकर्षम् । पृथगथ पलमात्रा स्यात्त्रिवृच्चूर्णमेषां जननमुदरवह्नेः पाचनं रोचनं च ॥

अर्थ—जीरा, संचरनिमक, सोंठ, पीपल, काली मिरच, वायविडंग, सेंधानमक, अजमोद, हींग और हरड ये प्रत्येक औषधी एक २ तोला लेवें; तथा निसोथ ४ तोले लेवे। इन सबको कूटपीस चूर्ण करे । इसका सेवन करे तो जठराग्निको दीपन करे, पाचक और रुचिको उत्पन्न करता है ॥

---

१ सर्वत्र भक्षण करनेके चूर्ण आदिमें जहां २ अजमोद लिखा है उस जगह अजमायन लेना चाहिये क्योंकि अजमायन अंतःसमार्जक है अजमोद नहीं है ।

विडंगादिचूर्ण ।

विडङ्गभल्लातकचित्रकाभयाः सनागरास्तुल्यगुडेन सर्पिषा ।
निहन्ति ते मन्दहुताशनान्नरान् भवन्ति ते वाडवतुल्यवह्नयः ॥

अर्थ—वायविडंग, भिलावा, चीतेकी छाल, हरड और सोंठ इनका चूर्ण और इस चूर्णमें गुड और घी मिलायके खाय तो मंदाग्निका नाश होकर वाडवाग्निके समान प्रचंड अग्नि होवे ॥

वडवानलचूर्ण ।

सैंधवं पिप्पलीमूलं पिप्पली चव्यचित्रकम् । शुण्ठी हरीतकी चेति क्रमवृद्धानि चूर्णयेत् ॥ वडवानलनामैतच्चूर्णं स्यादग्निदीपनम् ॥

अर्थ—सेंधानिमक १ भाग, पीपरामूल २ भाग, पीपल छोटी ३ भाग, चव्य ४ भाग, चीतेकी छाल ५ भाग, सोंठ ६ भाग तथा जंगी हरड ७ भाग लेवे, सबका चूर्ण करे इसको (वडवानलचूर्ण) कहते हैं । इस चूर्णके सेवन करनेसे अग्नि प्रदीप्त होती है ॥

वह्निनामक रस ।

जातीजातं त्रिकर्षं मरिचमपि पलं चार्धकर्षप्रमाणं ।
गन्धं सूतं लवङ्गं विषमिदमखिलं चिञ्चिणीतस्यतोये ॥
पिष्ट्वा माषैकमात्रं वितरति दहनं वह्निमान्द्ये च सद्यो ।
रोगाञ्छूलानिलादीन् दहति कृतगुणो वह्निनामा रसोऽयम् ॥

अर्थ—जावित्री डेढ तोला, जायफल डेढ तोला, काली मिरच ४ तोले, गंधक, पारा, लौंग और वच्छनागविष प्रत्येक आधा २ तोला लेवे, सबको बारीक पीसके पकी इमलीके रसमें खरल करे, फिर इसकी उडदके समान गोली बनावे अनुपानके साथ सायंकाल और प्रातःकाल एक एक देवे तो अग्नि प्रदीप्त होवे तथा घोर शूल और वादी इत्यादि रोगोंको नष्ट करे, इस रसको (वह्निरस) कहते हैं॥

कर्मविपाक ।

अन्नहर्ता त्वजीर्णाग्नो भवेदस्य तु निष्कृतिः । उपवासत्रयं कुर्यात्प्राजापत्यमथापि वा ॥ जुहुयाच्चरुसर्पिर्भ्यामग्निरश्मीत्यृचामथ । अष्टोत्तरसहस्रं हि जुहुयाच्च जपेत्तथा ॥

अर्थ–जो प्राणी अन्नकी चोरी करता है उसके अजीर्ण रोग होता है । इस पाप-को दूर करनेको वह तीन उपवास (व्रत) करे, तथा तीन प्राजापत्य व्रत करे तथा " अग्निरश्मि " इस मंत्र करके भात और घीकी अष्टोत्तरसहस्र आहुती देवे तथा उसी मंत्रका नित्य जप किया करे तो मंदाग्नि रोग दूर होवे इसमें संदेह नहीं है ॥

दूसरा प्रकार ।

परान्नविघ्नकरणादजीर्णमपि जायते ।
लक्षहोमं प्रकुर्वीत प्रायश्चित्तं विधीयते ॥

अर्थ–जो प्राणी दूसरेके अन्नमें (पक्वान्न वा कच्चे अन्नमें) विघ्न करता है उसके अजीर्ण रोग होता है । उसको प्रायश्चित्तपूर्वक एक लक्ष होम करना चाहिये । इस प्रकार करनेसे अजीर्ण रोगकी शांति होती है ॥

भस्मकनिदान ।

नरे क्षीणकफे पित्तं कुपितं मारुतानुगम् । सोष्मणा पाचक-स्थाने बलमग्नेः प्रयच्छति ॥ तदलब्धबलो देहं रूक्षयेत्सानि-लोऽनलः । अभिभूय पचत्यन्नं तैक्ष्ण्यादाशु मुहुर्मुहुः ॥ पक्वान्नं सततो धातूञ्छोणितादीन्पचत्यपि । ततो दौर्बल्यमातङ्कं मृत्युं चोपानयेत्नरम् ॥ भुक्तेऽन्ने लभते शान्तिं जीर्णमात्रे प्रता-म्यति । तृट्कासदाहमोहाः स्युर्व्याधयोऽत्यग्निसंभवाः ॥

अर्थ–क्षीण कफवाले पुरुषके पित्त कुपित हो वायुसे मिलकर ऊष्माके साथ पाचकस्थानमें जायकर अग्निको बल देवे, तब जठराग्नि वातकी सहायता पाकर प्रबल होकर देहको रूखा कर दे और उसके जोरसे वारंवार अन्नको पचावे । अन्नको पचाय पीछे रुधिर आदि धातुओंको पचावे, रुधिर आदिके पचनेसे देहमें दुर्बलता-का रोग और मृत्युको मनुष्य प्राप्त होवे । जब अन्नको खाय तब तौ शांति हो जाय जब अन्न पचजाय तब मूर्च्छित होय । प्यास, खांसी, दाह, मोह (अर्थात् कुछ सुध न रहे) ये रोग अत्यंत अग्निसे होते हैं ॥

भस्मकलक्षण ।

कफे क्षीणे यदा पित्तं स्वस्थाने मारुतानुगम् । तीव्रं प्रवर्धये-द्वह्निं तदा तं भस्मकं वदेत् ॥ तृड्दाहश्वासमूर्छादीन्कृत्वैवात्य-

ग्निसंभवान् । पक्वान्नमाशु धात्वादीन्संक्षिप्तं नाशयेत्तनुम् ॥
क्षणाद्भुक्तं भवेद्भस्म स रोगो भस्मकः स्मृतः ॥

अर्थ-इस प्राणीका कफ क्षीण होवे तब पित्त वातके साथ अपने स्थानमें प्राप्त हो जठराग्निको अत्यंत बढावे उसको भस्मकरोग कहते हैं । यह तृषा, दाह, श्वास, मूर्च्छा आदि अति अग्निके रोगोंको करे है । यह अन्नको पचायके फिर रसरक्तादि धातुओंको पचाय देहको नष्ट करे । इस रोगमें भोजन करा हुआ पदार्थ क्षणमात्रमें पच जाता है इसीसे इसको भस्मकरोग कहा है ॥

चिकित्साक्रम ।

तं भस्मकं गुरुस्निग्धसान्द्रमण्डहिमस्थिरैः ।
अन्नपानैर्नयेच्छान्तिं पित्तघ्नैश्च विरेचनैः ॥

अर्थ-भस्मक रोगवालेको भारी और चिकने ऐसे अन्न तथा कठोर पदार्थ, मंड, हिम, तथा बहुत देरमें पचनेवाले अन्न और पान तथा पित्तनाशकारी यत्न इनसे दूर करे तथा पित्तनाशक जुलाब देवे ॥

भस्मकचिकित्सा ।

कफे पूर्वं जिते पित्तं मारुते चानलः समः ।
समधातोः पचत्यन्नं पुष्ट्यायुर्बलवर्धनः ॥

अर्थ-कफ पित्त और वायुको प्रथम जीतनेपर समानधातु मनुष्यकी अग्निके समान कर देती है इसीसे अन्न उत्तम प्रकारसे पचाकर आयुष्य पुष्टि और बलको बढानेवाली होती है ॥

अजीर्णका निदान ।

अत्यम्बुपानाद्विषमाशनाच्च संधारणात्स्वप्नविपर्ययाच्च ।
कालेपि सात्म्यं लघु चापि भुक्तमन्नं न पाकं भजते नरस्य ॥
ईर्ष्याभयक्रोधपरिक्षितेन लुब्धेन शुग्दैन्यनिपीडितेन ।
प्रद्वेषयुक्तेन च सेव्यमानमन्नं न सम्यक्परिपाकमेति ॥

अर्थ-बहुत जल पीनेसे, भोजनके समयको छोड पीछे भोजन करनेसे, मल-मूत्र आदि वेगोंके रोकनेसे, दिनमें सोनेसे, रातमें जागनेसे इन कारणोंसे भोजनके समय यदि लघु और हितकारी पदार्थ खाय तोभी अन्न अच्छी रीतिसे नहीं पचे ये देहके कारण कहे । अब अजीर्णके कारण जो मनसे सम्बंध रखते हैं उनको कहते हैं ।

ईर्ष्या कहिये पराऐश्वर्यको न देख सकना, डरना, क्रोध करना इन कारणोंसे तथा लोभ शोक दीनता इन कारणोंसे और मत्सरता करना इन कारणोंसे मनुष्यके भोजन करा हुआ अन्न भले प्रकार नहीं पचता है ॥

आमाजीर्णलक्षण ।

तत्रामे गुरुतोत्क्लेदः शोथो गण्डाक्षिकूटगः ।
उद्गारश्च यथाभुक्तमविदग्धं प्रवर्तते ॥

अर्थ–उन चारों अजीर्णोंमें प्रथम आमाजीर्णके लक्षण कहते हैं। पेट और अंग भारी होय, वमनका होना ऐसा प्रतीत हो, कपोल और नेत्रोंमें सूजन होवे और इसी अजीर्णके प्रभावसे जैसा मीठा आदि भोजन करा होय उसी प्रकारकी डकार आवे है ॥

वचादिवमन ।

वचालवणतोयेन वान्तिरामे प्रशस्यते । धान्यनागरसिद्धं वा तोयं दद्याद्विचक्षणः ॥ आमाजीर्णप्रशमनं शूलघ्नं बस्तिशोधनम् ॥

अर्थ–आमाजीर्ण पर वच और सेंधानिमक इनके चूर्णको गरम जलके साथ देवे । यह वमन करानेमें उत्तम है । फिर धनिया और सोंठ इनका काढा देवे तो आमाजीर्णका नाश होय तथा बस्तिका शोधन होवे ॥

लवंगादि क्काथ ।

लवङ्गपथ्ययोः क्काथः सैन्धवेनावधूलितः ।
पीतः प्रशमयत्युग्रमजीर्णं रेचयत्यपि ॥

अर्थ–लौंग और हरड इनका काढा सेंधानिमक डालके देवे तो आमाजीर्णका नाश करे तथा दस्त कराता है ॥

वैश्वानरक्षार ।

स्नुह्यर्कचित्रकैरण्डलवणं सपुनर्नवम् । तिलापामार्गकदलीपलाशं तिन्तिणी तथा ॥ गृहीत्वा ज्वालयेदेतत्प्रस्थं भस्माखिलं च तत् । जलाढके विपक्तव्यं यावत्पादावशेषितम् ॥ स प्रसन्नं विनिःश्राव्य लवणप्रस्थसंयुतम् । पक्वं निर्धूमकाठिनं सूक्ष्मं चूर्णं कृतं पुनः ॥ यवानीजीरकव्योषस्थूलजीरकहिङ्गुभिः । पृथगर्धपलैरेभिश्चूर्णितैस्तद्विमिश्रयेत् ॥ आर्द्रकस्वरसेनापि

भावयेच्छोषयेत्पुनः । शीतोदकेन तच्चूर्णं पिबेत्प्रातर्हि मात्रया ॥ तस्मिन् जीर्णेऽन्नमश्नीयाद्यूषैर्जाङ्गलजै रसैः । ईषदम्लैः सलवणैः सुखोष्णैर्वह्निदीपनैः ॥ एतेनाग्निं च वर्धेत बलमारोग्यमेव च । तत्रानुपानं शस्तं हि तक्रं वा भोजने हितम् ॥ मन्दाग्न्यर्शोविकारेषु वातश्लेष्मामयेषु च । सर्वाङ्गशोथरोगेषु शूलगुल्मोदरेषु च ॥ आमार्शःशर्करायां तु विण्मूत्रानिलरोगिषु ॥

अर्थ-थूहर, आक, चीतेकी छाल, अरंड, निमक, पुनर्नवा (सांठ), तिल, ओंगा, केला, पलास (ढाक) और इमलीकी छाल इन सबकी भस्म करके २५६ तोले लेवे। इसको १०२४ तोले जलमें डालके औटावे, जब चतुर्थांश काढा रहे तब उसको उतारके छान लेवे। इसमें ६४ तोले निमक मिलाके और फिर औटावे तो निर्धूम और कठोर ऐसा क्षार बनके तैयार होवे। उसको लेकर बारीक चूर्ण करे उसमें अजमायन, जीरा, सोंठ, काली मिरच, पीपल, मगरेला और हींग ये प्रत्येक दो तोले मिलायके अदरखके रसकी भावना देकर सुखायले। इसमेंसे प्रातःकालमें बलाबल विचार शीतल जलके साथ देवे। फिर जब औषध पचजावे तब जंगली जीवोंका मांसरस और यूष कुछ २ खट्टे और नमक मिलायके मंदोष्ण तथा अग्निके प्रदीप्त करनेवाले ऐसे पदार्थ देवे तो अग्नि, बल, आरोग्य इनकी वृद्धि करे। इस औषध पर पश्चात् छाछ पीवे अथवा भोजनके समय देवे। मंदाग्नि, बवासीर, वादी, कफ, सर्वांगकी सूजन, शूल, गोला, उदररोग, आम, अर्श, शर्करा और मल तथा मूत्रसंबंधी एवं वादीके रोग इनको दूर करे। यह वैश्वानर नामक क्षार परम चमत्कारी है ॥

सामुद्रादि चूर्ण ।

सामुद्रसौवर्चलसैन्धवानां क्षारो यवानां च तथाजमोदा । हरीतकीपिप्पलिशृङ्गवेरं हिङ्गुर्विडङ्गं च समानि कुर्यात् ॥ एतानि चूर्णानि घृतप्लुतानि भुञ्जीत ग्रासान्प्रथमं च पञ्च । अजीर्णवातं गुदगुल्मवातं वातप्रमेहं विषमं च वातम् ॥ विषूचिकाकामलपाण्डुरोगं श्वासं च कासं च हरेत्प्रयुक्तम् ॥

अर्थ-समुद्रनमक, संचरनोन, सेंधानोन, जवाखार, अजमायन, हरड, पीपल छोटी, सोंठ धाडकी, हींग और वायविडंग ये समान भाग लेवे। सबका चूर्ण करके घीमें सान लेवे। इसको भोजनके समय पहिले पांच ग्रास (पांच गस्सों) में

मिलायके खाय तो अजीर्ण, वादी, गुदाकी वादी, वायगोला, वातप्रमेह, विषमवात, विषूचिका, कामला, पांडुरोग, श्वास और खांसी इनका नाश करे ॥

हरीतक्यादि योग।

हरीतकी तथा शुण्ठी भक्ष्यमाणा गुडेन वा ।
सैन्धवेन युता वा स्यात्सातत्येनाग्निदीपनी ॥

अर्थ-हरड अथवा सोंठको गुडमें मिलायके अथवा सैंधेनमकके साथ नित्य नेमसे भक्षण करे तो अग्निको दीपन करे ॥

गुडादि चतुष्क आमाजीर्णादिके ऊपर ।

गुडेन शुण्ठीमथवोपकुल्यां पथ्यां तृतीयामथ दाडिमं वा ।
आमेष्वजीर्णेषु गुदामयेषु वर्चोविबन्धेषु च नित्यमद्यात् ॥

अर्थ-गुडके साथ सोंठ अथवा पीपल अथवा हरड अथवा अनारदाना खाय यह आमाजीर्ण, बवासीर, मलकी रुकावट इनपर परमोत्तम प्रयोग है ॥

आहारं पचति शिखी दोषानाहारवर्जितः पचति ।
दोषक्षये च धातून्धातुक्षेण्ये तथा प्राणान् ॥

अर्थ-जठराग्नि प्रथम आहारको पचाता है, जब आहार पचानेको नहीं रहे तब वातादि दोषोंको पचावे, जब दोष भी पच जाते हैं तब वही अग्नि धातुओंका पाचन करे, जब धातु भी पच जाते हैं तब इस प्राणीके प्राणोंका नाश करे है ॥

मुहुर्मुहुरजीर्णेऽपि भोज्यान्यस्योपहारयेत् ।
निरिन्धनोन्तरं लब्ध्वा यथैनं न विपादयेत् ॥

अर्थ-वारंवार अजीर्ण होनेपर भी वैद्यको उचित है कि इस प्राणीको थोडा बहुत भोजन कराता रहे इसका कारण यह है कि यदि जठराग्निको भोजन न मिलनेसे कदाचित् शांति होकर इस प्राणीको न मारडाले । जैसे अग्निमें जबतक ईंधन गेरे जाओगे तो बराबर अग्नि बनी रहेगी अन्यथा शांत हो जावेगी । इसी प्रकार इस जगह जानना परंतु यह आज्ञा मंदाग्निमें नहीं है भस्मकादिकमें है ॥

शमन।

अत्युद्धताग्निशान्त्यै माहिषदधिदुग्धसर्पींषि ।
संसेवेत यवागूं समधूच्छिष्टांससर्पिष्काम् ॥

अर्थ-अत्यंत बढी हुई अग्निको भैंसके दही, दूध और घी आदिके सेवनसे अथवा घी और मोम मिलायकर करी हुई कांजीका सेवन करनेसे शांति करे ॥

विरेचन।

असकृत्पित्तहरणं पायसं प्रतिभोजनम्।
श्यामात्रिवृद्विपक्कं च पयो दद्याद्विरेचनम्॥

अर्थ-वारंवार पित्तनाशकारी औषध देवे, पायस (खीर) का भोजन करावे काली और सपेद निसोथको गेरके औटा हुआ दूध दस्त करानेको देवे तो भस्मक रोग शांत होवे॥

सामान्ययत्न।

यत्किंचिन्मधुरं मेध्यं श्लेष्मलं गुरुभोजनम्।
सर्वं तदत्यग्निहितं भुक्त्वा प्रस्वपनं दिवा॥

अर्थ-यावन्मात्र मधुर (मीठी), कफकारी और भारी भोजन है वह सब बढी हुई अग्निवालेको हितकारी है तथा भस्मक रोगवालेको यथेष्ट दिनमें निद्रा लेना हितकारी है॥

कोलास्थियोग।

कोलास्थिमज्जकल्कस्तु पीतो वाप्युदकेन वै।
अचिराद्विनिहन्त्येनं प्रयोगो भस्मकं नृणाम्॥

अर्थ-बेरके भीतरकी मिंगीको बारीक पीसके पानीके साथ फक्की लेवे तो मनुष्योंके भस्मक रोगको शीघ्र दूर करे यह प्रयोग भस्मक रोगनाशक है॥

क्षीर।

नारीक्षीरेण संपिष्ट्वा पिबेदौदुम्बरत्वचम्।
ताभ्यां वा पायसं सिद्धं पिबेदत्यग्निशान्तये॥

अर्थ-स्त्रीके दूधमें गूलरकी छालको पीसके पीवे अथवा स्त्रीका दूध गूलरकी छाल इनसे बनाई हुई खीरको खाना अत्यंत अग्निका नाश करे॥

सिततण्डुलसितकमलं छागक्षीरेण पायसं सिद्धम्।
भुक्त्वा घृतेन पुरुषो द्वादश दिवसान्बुभुक्षितो न भवेत्॥

अर्थ-सपेद चावल, सपेद कमल और बकरीका दूध इनकी खीर कर घी मिलाय बारह दिनतक नित्य भोजन करे तो भस्मक रोग अवश्य दूर होवे॥

विदारीकल्क।

विदारीस्वरसं क्षीरे पचेदष्टगुणं घृतम्।

माहिषं जीवनीयेन कल्केनात्यग्निनाशनम् ॥

अर्थ–विदारिकंदका रस आठ भाग, दूध ११ भाग, भैंसका घी १ भाग, तथा जीवनीय (मुलहटी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक और ऋषभक इन) औषधोंका कल्क १ भाग मिलायके पचावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतारके सेवन करे तो भस्मक रोग दूर होवे ॥

त्रिफलावलेह।

त्रिफलामुस्तविडङ्गैः कणया सितया समैः ।
स्यात्खरमञ्जिरिबीजैर्लेहो भस्मकनाशनः ॥

अर्थ–त्रिफला, नागरमोथा, वायविडंग, पीपल, खांड और सपेद ओंगाके बीज इनको डालके अवलेह बनावे । इस अवलेहके सेवन करनेसे भस्मक रोग दूर होवे ॥

अपामार्गादि योग ।

अपामार्गस्य बीजानि पिष्ट्वा क्षीरेण साधयेत् ।
तत्पायसं महाघोरे भस्मके संप्रशस्यते ॥

अर्थ–ओंगाके बीजोंको पीसके दूधमें डालके खीर सिद्ध करे इसको महाघोर भस्मक रोगपर देना उत्तम कहा है ॥

कदलीफलयोग ।

कदलिफलसुपक्वं षट्पलं सुप्रभाते घृतसममभिनित्यं भक्षये-न्मण्डलं च । हराति सकलमग्नेस्तीव्रतां भस्मरोगमनुभवि-रिदमुक्तमग्निमान्द्यं करोति ॥

अर्थ–इकतालिस दिनपर्यंत प्रातःकाल २४ तोले पकी हुई केलेकी गहरोंको घीमें मिलायके खाय तो संपूर्ण अग्निकी तीव्रता तथा भस्मक रोग इनका नाश करे तथा अग्निमांद्य (मंदाग्नि) करे । यह मेरा अनुभव करा हुआ प्रयोग कहा है ॥

अजीर्णके भेद ।

आमं विदग्धं विष्टब्धं कफपित्तानिलैस्त्रिभिः । अजीर्णं केचि-दिच्छन्ति चतुर्थं रसशेषतः ॥ अजीर्णं पञ्चमं केचिन्निर्दोषं दिन-पाकि च । वदन्ति षष्ठं चाजीर्णं प्राकृतं प्रतिवासरम् ॥

अर्थ–मनुष्यके कफसे आम, पित्तसे विदग्ध, वातसे विष्टब्ध ऐसे तीन प्रकारका अजीर्ण रोग होता है और जो भोजन करा सो पक्व होय नहीं रस शेष रहे सो

रसशेषसे चतुर्थ अजीर्ण होय है, और रात्रिदिनमें जो आहार पचे और जिसमें अफरा हड फूटन कुछ न होय यह पांचवां अजीर्ण किसीके मतसे है और जो नित्य ही स्वाभाविक अजीर्ण रहै (विकृतिजन्य न होय) उसको छठा अजीर्ण कहते हैं। इस अजीर्णके पचानेके अर्थ (सुश्रुत) में वामपार्श्वशयनादिक उपाय कहे हैं सो करने चाहिये ॥

गुडाष्टक।

व्योषदन्तीत्रिवृच्चित्रं कृष्णामूलं विचूर्णितम् । तच्चूर्णं गुडसंमिश्रं भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ॥ एतद्गुडाष्टकं नाम बलवर्णाग्निवर्धनम् । शोथोदावर्तशूलघ्नं प्लीहपाण्ड्वामयापहम् ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, दंती, निसोथ, चित्रककी छाल और पीपलामूल इनके चूर्णको गुडमें मिलायके प्रातःकाल उठके नित्य भक्षण करे। इसको गुडाष्टक कहते हैं। यह बल देवे, अग्निको बढावे; तथा सूजन, उदावर्त्त, शूल, प्लीहा और पांडुरोग इनको नाश करे ॥

पथ्यादि चूर्ण।

पथ्यापिप्पलिसंयुक्तं चूर्णं सौवर्चलं पिबेत् । मस्तुनोष्णोदकेनाथ मत्वा दोषगतिं भिषक् ॥ चतुर्विधमजीर्णं च मन्दानलमथारुचिम् । आध्मानं वातगुल्मं च शूलं चाशु विनाशयेत् ॥

अर्थ-हरड और पीपलके साथ संचर निमकका चूर्ण अथवा दहीके जलके साथ संचर नमक अथवा गरम जलके साथ जैसी दोषोंकी गति होवे उसके अनुसार उनमेंसे एक वस्तुका सेवन करे तो चार प्रकारके अजीर्ण, मंदाग्नि, अरुचि, अफरा गोला और शूल इनको तत्काल दूर करे ॥

बृहच्छंखवटी।

स्नुगर्कचिञ्चापामार्गरम्भातिलपलाशजान् । क्षारांश्च भिषगो दद्यात्प्रत्येकं पलमात्रया ॥ लवणानि पृथक्पञ्च ग्राह्याणि पलमात्रया । सर्जिका च यवक्षारं टङ्कणं त्रितयं पलम् ॥ सर्वं त्रयोदशपलं सूक्ष्मं चूर्णं विधाय तु । निंबूफलरसे प्रस्थसंमिते तत्परिक्षिपेत् ॥ तत्र शङ्खस्य शकलं पलं वह्नौ प्रताप्य तु । वारान्निर्वापयेत्सप्त सर्वं द्रवति तद्यथा ॥ नागरं त्रिपलं ग्राह्यं मरीचं च पलद्वयम् । पिप्पली पलमाना स्यात्पलार्धं भ्रष्टहिङ्गुनः ॥ ग्रन्थिकं

चित्रकं चापि यवानीजीरकं तथा । जातीफलं लवङ्गं च पृथक्-षट्द्वयोन्मितम् ॥ रसो गन्धो विषं चापि टंकणं च मनःशिला । एतानि कर्षमात्राणि सर्वं संचूर्ण्य मिश्रयेत् ॥ शरावार्धेन चुक्रेण सन्नीय वटिकां चरेत् । माषप्रमाणा सा वैद्यैर्बृहच्छंखवटी स्मृता ॥ सर्वाजीर्णप्रशमनी सर्वशूलनिवारिणी । विषूच्यलसकादीनां सद्यो भवति नाशिनी ॥

अर्थ—थूहर, आक, इमली, ओंगा, केला, तिल और पलास (ढाक), इन सबके क्षार चार २ तोले लेवे, और नमक, सुहागा, सैंधा नमक, बिडनमक और संचर नमक ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे, सज्जीखार, जवाखार, सुहागा ये तीनों मिलाकर चार तोले, सब ५२ तोले हुए । सबका बारीक चूर्ण कर ६४ तोले नींबूके रसमें डालके फिर ४ तोले शंखके टुकडे अग्निमें तपायके उसमें डाले । इस प्रकार वारंवार तपाय २ के सात वार बुझानेसे उसमें मिल जावेगा । पश्चात् सोंठ १२ तोले, काली मिरच ८ तोले, पीपल छोटी ४ तोले, भुनी हुई हींग २ तोले, पीपरामूल, चीतेकी छाल, अजमायन, जीरा, जायफल, लौंग ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे; पारा, गंधक, सिंगियाविष, सुहागा और मनासिल ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे । इस प्रकार सब औषध लेकर १६ तोले चूकाके रसमें खरल करके १ मासेकी गोली बनावे । इसमेंसे एक गोली खाय तो अजीर्ण, शूल, विषूचिका, अलसक इनको तत्काल दूर करे । इसको बृहच्छंखवटी कहते हैं ॥

लघुक्रव्यादरस ।

पारदाद्द्विगुणं गन्धमर्धांशं मृतलोहकम् । पिप्पली पिप्पली-मूलमग्निशुण्ठी लवङ्गकम् ॥ लोहसाम्यं पृथक् कुर्याद्रससाम्यं सुवर्चलम् । टंकणं मरिचं चापि गन्धतुल्यं प्रदापयेत् ॥ एतद्वि-चूर्ण्य यत्नेन भावयेत्सप्तधाम्लकैः । एतद्रसायनं श्रेष्ठं माषमात्रं प्रदापयेत् ॥ तक्रेण केवलं वापि दद्याद्भोजनपाचने । क्षिप्रं त-ज्जीर्यते भुक्तं दीपनं भवति ध्रुवम् । सर्वाजीर्णप्रशमनं लघुक्र-व्यादसंज्ञितम् ॥

अर्थ—पारा ४ तोले, गंधक ८ तोले, लोहेकी भस्म २ तोले, तथा पीपल, पीपरामू-ल, चित्रक, सोंठ और लौंग प्रत्येक आठ २ तोले लेवे; संचरनोन, सुहागा, काली मिरच

ये सब प्रत्येक चार चार तोले लेवे इन सबका चूर्ण कर नींबूके रसकी इसमें सात भावना देवे तो लघुक्रव्याद नामक रस सिद्ध होवे । इसमेंसे १ मासे भर छाछके साथ लेवे अथवा विना छाछके ही भोजनके पचनेके वास्ते देय तो भोजन तत्काल पचे और अग्नि प्रदीप्त होवे तथा संपूर्ण अजीर्णोंका नाश हो ॥

विदग्धाजीर्णलक्षण ।

विदग्धे भ्रमतृण्मूर्च्छाः पित्ताच्च विविधा रुजः ।
उद्गारश्च सधूमाम्लः स्वेदो दाहश्च जायते ॥

अर्थ-विदग्ध अजीर्णमें भ्रम प्यास और मूर्च्छा ये लक्षण होते हैं । और पित्तके अनेक रोग प्रगट हों तथा धूएंके साथ खट्टी डकार आवे, पसीना आवे और दाह होय ॥

विदग्धाजीर्णकी चिकित्सा ।

अन्नं विदग्धं च नरस्य शीघ्रं शीताम्बुना वै परिपाकमेति ।
तद्यस्य शैत्येन निहन्ति पित्तमाक्लेदिभावाच्च नयत्यधस्तात् ॥

अर्थ-मनुष्यका विदग्ध अन्न शीतल जल पीनेसे अवश्य पचे; तथा शीतके योगसे पित्तभी शांत होता है तथा आर्द्रता (गीलापन) उस पचे अन्नको नीचेको गेरता है ॥

निद्रानियम ।

भोजनात्प्राक् दिवा स्वापात्पाषाणोऽपि च जीर्यति। भोजनान्ते
दिवास्वापाद्वातपित्तकफैः कृतम्॥ आलिप्य जठरं प्राज्ञो हिङ्गु-
त्र्यूषणसैन्धवैः । दिवा स्वापं प्रकुर्वीत सर्वाजीर्णप्रणाशनम् ॥

अर्थ-प्रातःकाल भोजनके प्रथम निद्रा लेनेसे यदि पाषाण (पत्थर) भी खाया होवे तो वह भी पच जावे, तथा भोजन करने पश्चात् निद्रा वादी, पित्त और कफको कुपित करती है । इस वास्ते चतुर मनुष्य हींग, सोंठ, काली मिरच, पीपल और सैंधानमक इनको जलमें पीसके उदर (पेट) पर लेप करके फिर सोय जावे तो संपूर्ण अजीर्णोंका नाश होय इसमें संदेह नहीं है ॥

दिवा निद्रा ।

व्यायामप्रमदाध्ववाहनरतान्क्लिन्नानतीसारिणः
शूलश्वासवतस्तृषापरिगतान् हिक्कामरुत्पीडितान् ।
क्षीणान्क्षीणकफान् शिशून्मदहतान्वृद्धांस्तथा जीर्णिनो
रात्रौ जागरितान्नरान्निरशनान्कामं दिवा स्वापयेत् ॥

अर्थ–व्यायाम (दण्ड करसत), स्त्रीसंग, मार्गगमन, सवारी इनके सेवन करनेसे जो थके हुऐ हैं जो अतिसार, शूल, श्वास, प्यास, हिचकी और वादीके विकारवाले हैं; तथा क्षीण, क्षीणकफ, बालक, मदसे व्याप्त, वृद्ध, अजीर्णवाला, रात्रिमें जगा हुआ, उपवास किया हुआ इनको दिनमें यथेच्छ सुलाना चाहिये ॥

विष्टब्धाजीर्णलक्षण ।

विष्टब्धे शूलमाध्मानं विविधा वातवेदनाः ।
मलवाताप्रवृत्तिश्च स्तम्भो मोहोऽङ्गपीडनम् ॥

अर्थ–विष्टब्ध अजीर्णके यह लक्षण हैं । शूल, अफरा, अनेक वातकी पीडा, मल और अधोवायुका रुक जाना, देह जकड जाय, मोह और देहमें पीडा होय ॥

विष्टब्धाजीर्णमें सामान्य उपचार ।

विष्टब्धे स्वेदनं कार्यं पेयं च लवणोदकम् ॥

अर्थ–विष्टब्धाजीर्णमें पसीने निकाले और नमकका मिला जल पीना चाहिये ॥

रसशेषाजीर्णलक्षण ।

रसशेषेऽन्नविद्वेषो हृदयाशुद्धिगौरवे ॥

अर्थ–रसशेष अजीर्णके यह लक्षण हैं । अन्नमें अरुचि, हृदयमें शुद्धि न होय और देह भारी होय ॥

रसशेषाजीर्णमें सामान्य उपचार ।

रसशेषे दिवा स्वापं लङ्घनं वातवर्जनम् । आलिप्य जठरं प्राज्ञो हिङ्गुत्र्यूषणसैन्धवैः ॥ दिवा स्वापं प्रकुर्वीत सर्वाजीर्णप्रणाशनम् ॥

अर्थ–रसशेष अजीर्णमें दिनमें सोना और लंघन करना, जहां वहुत पवन आती होवे उस जगह न बैठना तथा हींग, सोंठ, मिरच, पीपल और सेंधा नमक इनको जलमें पीसके पेटपर लेप, दिनमें सोना हितकारी है ।

अजीर्ण ।

अनात्मवन्तः पशुवद्भुञ्जन्तेऽशनलोलुपाः ।
रोगानीकस्य ते मूलमजीर्णं प्राप्नुवन्ति हि ॥

अर्थ–जिन मनुष्योंकी इन्द्री स्वाधीन नहीं है वे पशुके समान अप्रमाण भोजन करते हैं । उन्होंके अनेक रोगोंका कारण अजीर्ण रोग प्रगट होता है ॥

अजीर्णके सामान्य लक्षण।

ग्लानिगौरवविष्टम्भभ्रममारुतमूढता।
विबन्धोऽतिप्रवृत्तिर्वा सामन्याजीर्णलक्षणम् ॥

अर्थ-ग्लानि, भारीपना, विष्टंभ, भौर, अधोवातका रुकना, मलरोध अथवा अत्यंत दस्त हो, ये सामान्य अजीर्णके लक्षण हैं।

अजीर्णके उपद्रव।

मूर्च्छा प्रलापो वमथुः प्रसेकः सदनं भ्रमः।
उपद्रवा भवन्त्येते मरणं चाप्यजीर्णतः ॥

अर्थ-मूर्छा, बडबड, ओकारी अर्थात् वमन, लारका गिरना, ग्लानि, भ्रम ये अजीर्णके उपद्रव हैं। और बहुत बढा अजीर्ण मनुष्यको मार भी डालता है ॥

स्वल्पं यदा दोषविबन्धमामं लीनं न तेजः पथमावृणोति।
भवत्यजीर्णेऽपि तदा बुभुक्षा सा मन्दबुद्धिं विषवन्निहन्ति ॥

अर्थ-जिस समय दोषयुक्त अल्प ऐसा आमाजीर्ण अग्निके मार्गका अवरोध नहीं करे तब इस प्राणीको अजीर्णमें भी भोजन करनेकी इच्छा होती है। वह भोजनेच्छा अल्प बुद्धिवाले पुरुषको विषके समान मारती है।

प्रायेणाहारवैषम्यादजीर्णं जायते नृणाम्।
तन्मूलो रोगसंघातस्तद्विघाताद्विनश्यति ॥

अर्थ-प्रायः भोजनके न्यूनाधिकपनसे मनुष्योंके अजीर्ण रोग होता है उस अजीर्णसे इस प्राणीके अनेक प्रकारके रोग होते हैं और इस अजीर्णके नष्ट होनेसे संपूर्ण रोग नष्ट होते हैं ॥

लवणभास्करचूर्ण।

पिप्पली पिप्पलीमूलं धान्यकं कृष्णजीरकम्। सैन्धवं च विडं चैव पत्रं तालीसकेसरान् ॥ एषां द्विपलिकान् भागान् पञ्च सौवर्चलस्य च। मरीचाजाजिशुण्ठीनामेकैकस्य पलं पलम् ॥ त्वगेला चार्धभागा स्यात्सामुद्रं कुडवद्वयम्। दाडिमात्कुडवं चैव द्विपलं चाम्लवेतसम् ॥ एतच्चूर्णीकृतं श्लक्ष्णं गन्धाढ्यममृ-

१ अजीर्णमें भोजनकी इच्छा होती है परंतु उसकी परीक्षा यही है कि वह थोडी देर पीछे स्वयं शांत हो जाती है।

तोपमम् । लवणो भास्करो नाम भास्करेण विनिर्मितः ॥ जगतोऽस्य हितार्थाय वातश्लेष्मामयापहः। वातगुल्मं निहन्त्येष वातशूलानि यानि च ॥ तक्रमस्तुसुरासिन्धुयुक्तः काञ्जिकयोजितः । मन्दाग्नितां विनाश्यैव शक्तो भवति पावकः ॥ हृद्रोगमामदोषं च विविधान्युदराणि च । अन्यान्यपि निहन्त्याशु रोगान् लवणभास्करः ॥

अर्थ–पीपर, पीपरामूल, धनिया, काला जीरा, सैंधा नमक, बिडनमक, पत्रज, तालीसपत्र, नागकेशर ये प्रत्येक आठ २ तोले लेवे । संचरनमक २० तोले और काली मिरच, अजमायन और सोंठ ये प्रत्येक ४ चार तोले, दालचीनी और इलायची बडी दो दो तोले, नमक ३२ तोले और अनारदाना १६ तोले, अमलवेत ८ तोले । सबका चूर्ण करके एकत्र करे तो यह लवणभास्कर चूर्ण बनके तयार होवे । यह उत्तम गंधयुक्त अमृतके समान त्रिलोकीके हित करनेके वास्ते सूर्य भगवान्ने निर्माण किया है । यह वादी, कफ, वादीगोला, वातशूल इनका नाश करे । तथा छाछ, दहीका जल, मद्य, सैंधानमक किंवा कांजी इनमेंसे किसी एकके साथ मंदाग्निवाला प्राणी सेवन करे तो अग्निवृद्धि होय तथा हृद्रोग, आमदोष, संपूर्ण उदरके विकार और इनसे पृथक् अनेक रोगोंको यह नष्ट करता है ॥

अग्निमुख चूर्ण ।

हिङ्गुभागो भवेदेको वचा च द्विगुणा भवेत् । पिप्पली त्रिगुणा ज्ञेया शृंगवेरं चतुर्गुणम् ॥ यवानिका पञ्चगुणा षड्गुणा च हरीतकी । चित्रकं सप्तगुणितं कुष्ठं चाष्टगुणं भवेत् ॥ एतद्वातहरं चूर्णं पीतमात्रं प्रसन्नया । पिबेद्दध्ना मस्तुना वा सुरया कोष्णवारिणा ॥ उदावर्तमजीर्णं च प्लीहानमुदरं तथा । अंगानि यस्य शीर्यन्ति विषं वा येन भक्षितम् ॥ अर्शोहरो दीपनश्च शूलघ्नो गुल्मनाशनः । कासं श्वासं निहन्त्याशु तथैव क्षयनाशनः ॥ चूर्णो ह्यग्निमुखो नाम्ना न क्वस्मिन्प्रतिहन्यत ॥

अर्थ–हींग १ भाग, बच २ भाग, पीपल ३ भाग, अदरख ४ भाग, अजमायन ५ भाग, जंगी हरड ६ भाग चित्रक ७ भाग और कूठ ८ भाग । इस प्रकार सब औषध

लेकर कूट पीसके चूर्ण बनावे इसको मद्य, दही अथवा दहीके पानी, सुरा अथवा गरम जलसे पीवे तो उदावर्त्त, अजीर्ण, प्लीहा, तथा अंगोंका गिरना एवं विष खाय लिया हो तथा बवासीर, शूल, गोला, खाँसी, श्वास और क्षय इनका नाश करे। यह अग्निमुख चूर्ण दीपन है ॥

वृद्धाग्निमुख चूर्ण।

द्वौ क्षारौ चित्रकं पाठा करञ्जो लवणानि च। सुक्ष्मैलापत्रकं भार्ङ्गी क्रमिघ्नं हिङ्गुपुष्करम् ॥ शठी दार्वी त्रिवृन्मुस्ता वचा चेन्द्रयवास्तथा। धात्री जीरकवृक्षाम्लयवासा चोपकुञ्चिका ॥ आम्लवेतसमम्लीका दाडिमं सकटुत्रिकम् । भल्लातकाजमोदा च यवानी सुरदारु च ॥ आपश्चातिविषाः श्यामा हवुषारग्वधं समम् । तिलमुष्ककशिग्रूणां कोकिलाक्षपलाशयोः ॥ क्षीराणि लोहकिट्टं च तप्तं गोमूत्रभावितम् । समभागानि सर्वाणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ मातुलुङ्गरसेनैव भावयेत्तु दिनत्रयम् । दिनत्रयं तु सूक्तेन तथैवार्द्ररसेन च ॥ अत्यन्ताग्निकरं चूर्णं प्रदीप्ताग्निसमप्रभम् । उपयुक्तं विधानेन नाशयत्यचिराद्गदान् ॥ अजीर्णकमथो गुल्मं प्लीहानमुदराणि च। ग्रहणीं पाण्डुरोगांश्च श्वासं कासं च दारुणम् ॥ प्रतिश्यायं क्षयं शोषं विद्रधिं कफजं तथा। जठराण्यन्त्रवृद्धिं च अष्ठीलां वातशोणितम् ॥ प्रणुदत्युल्बणान् दोषान् नष्टमग्निं च दीपयेत् । समस्तव्यञ्जनोपेतं भक्तं दत्त्वा तु भोजयेत् ॥ दापयेदस्य चूर्णस्य बिडालपदमात्रकम् । गोदोहमात्रं तत्सर्वं द्रवे पक्त्वातिसोष्मकम् ॥ एषो ह्यग्निमुखश्चूर्णश्चूर्णराजो निगद्यते । ब्रह्मणा निर्मितो ह्येष अश्विभ्यां परिकीर्तितः ॥

अर्थ–सुहागा, जवाखार, चीतेकी छाल, पाढ, कंजा, पांचों नमक, छोटी इलायची, तमालपत्र, भारंगी, वायविडंग, हींग, पुहकरमूल, कचूर, दारुहलदी, निसोथ, नागरमोथा, बच, इन्द्रजव, आँवले, जीरा, तिंतडीक, धमासा, कलौंजी, काला जीरा,

अमलवेत, इमली, अनारदाना, सोंठ, काली मिरच, पीपल, भिलाए, अजमोद, अजमायन, देवदारु, नेत्रवाला, अतीस, पीपल, हाऊवेर और अमलतासका गूदा ये सब औषधी समान भाग लेवे तथा तिल, घंटापाटलीवृक्ष (मोखावृक्ष), सहजना, तालमखाने, पलासपापडा, आक आदिका दूध, तपायके गोमूत्रमें बुझाया हुआ मंडूर ये सब समान भाग एकत्र करके इसमें बिजोरे निंबूके रसकी तीन दिन भावना देवे । तथा कांजीकी और अदरखके रसकी तीन तीन भावना देवे । यह चूर्ण अग्निको अत्यंत बढाता है । इसको नित्यप्रति सेवन करनेसे थोडेही दिनमें व्याधि दूर होवे तथा अजीर्ण, गोला, प्लीहा, उदररोग, संग्रहणी, पांडुरोग, श्वास, खांसी, पीनस, क्षय, शोष, कफजन्य विद्रधि, अंत्रवृद्धि, अष्ठीला, वातरक्त, त्रिदोष, तथा नष्टाग्नि इनको नष्ट करे । इस पर संपूर्ण पदार्थ भोजन करनेको देवे । इस चूर्णकी मात्रा एक तोलेकी है परंतु वैद्य अपनी बुद्धिसे रोगीके बलाबलको विचारके न्यूनाधिक देवे । यह अग्निमुखचूर्ण संपूर्ण औषधोंमें श्रेष्ठ है । इस प्रकार ब्रह्मदेव और अश्विनीकुमारने कहा है । यह चूर्ण जितनी देरमें गौ दुही जाती है इतनी देरमें संपूर्ण भोजनको पचाय देता है ॥

यावशूकादि चूर्ण ।

स यावशूकनागरं शिवाजलं च सादरम् ।
निहन्त्यजीर्णजं दरं वदामि ते पुरन्दर ॥

अर्थ—जवाखार, सोंठ, हरड इनका काढा अजीर्णसे होनेवाले भयको नष्ट करता है । हे इन्द्र ! यह मैं तेरे आगे कहता हूं ॥

लघुचित्रकादि चूर्ण ।

दहनाजमोदसैन्धवनागरमरिचाम्लतक्रेण ।
सप्ताहादग्निकरं यदर्शोनाशनं परं कथितम् ॥

अर्थ—चित्रककी छाल, अजमोद, सैंधा नमक, सोंठ और काली मिरच इनका चूर्ण करके खट्टी छाछके साथ सात दिन सेवन करे तो अग्निवृद्धि करे और बवासीरको नष्ट करे ॥

शुंठ्यादि चूर्ण ।

यवक्षारान्वितं शुण्ठीचूर्णं लीढं घृतान्वितम् ।
उष्णोदकेन वा पीतं शुण्ठीचूर्णं क्षुधाकरम् ॥

अर्थ–सोंठ और जवाखार इनका एकत्र चूर्ण करके घीके साथ अथवा गरम जलके साथ देवे तो क्षुधाको उत्पन्न करे ॥

कणाद्य चूर्ण ।

कणासिन्धुशिवावह्निचूर्णमुष्णेन वारिणा ।
पीतं प्रातः क्षुधां कुर्यात्पावकस्यापि दीपनम् ॥

अर्थ–पीपल, सैंधा नमक, हरड और चीतेकी छाल इनके चूर्णको गरम जलके साथ प्रातःकाल लेवे तो क्षुधा तथा अग्निवृद्धि इनको करे ॥

कपित्थादियोग ।

कपित्थतक्रचाङ्गेरीमरिचाजाजिचित्रकैः ।
कफवातहरो ग्राही बल्यो दीपनपाचनः ॥

अर्थ–कैथका गूदा, छाछ, चूका, काली मिरच और चीतेकी छाछ इनका योग कफवातहारक, ग्राहक, बल देनेवाला, दीपन और पाचन है ॥

ज्वालामुख चूर्ण ।

हिंग्वाम्लवेतसकटुत्रिकचित्रकाणां कर्षाः पृथक् गुडपलं यवचूर्णकं च । ज्वालामुखोपमनलस्य करोति दीप्तिं चाजीर्णमात्रशमने हि कृशानुरेषः ॥

अर्थ–हींग, अमलबेत, त्रिकुटा, चित्रककी छाल और जवाखार ये प्रत्येक एक एक तोला और उसमें गुड चार तोले मिलावे । इसको ज्वालामुख चूर्ण कहते हैं । यह अग्निवृद्धि तथा अजीर्णका नाश करे ॥

व्योषादि चूर्ण ।

व्योषैला हिङ्गुभार्ङ्गीविडलवणयवक्षारपाठा यवानी
चिञ्चात्वग्भस्म चव्यं दहनगजकणात्वक् पटुग्रन्थजाजी ।
एतच्चूर्णं घृताढ्यं त्रिदिवसमशने हन्यते रोगजालम्
विश्वं वैश्वानरोऽयं दहति सरभसं किं पुनर्भुक्तमन्नम् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, बडी इलायची, हींग, भारंगी, बिडनमक, जवाखार, पाढ, अजमायन, इमलीकी छालकी भस्म, चव्य, चित्रक, गजपीपल, दालचीनी, नमक, पीपरामूल और जीरा, इन सबके चूर्णको घीमें सानके तीन दिन खाय तो संपूर्ण रोगजालोंको नष्ट करे, फिर भोजनका तो क्या कहना है, इसको वैश्वानर चूर्ण कहते हैं ॥

शुण्ठयादि चूर्ण ।

शुण्ठी बाणमिता कणार्णवमिता दीप्या यवानी क्रमा-
द्भागानां त्रितयं द्वयं च लवणं भागैः शिवा तत्समा ।
कोष्ठाटोपरुगामगुल्ममलहृल्लोलिम्बराजोदित-
श्चूर्णोऽद्रीनपि भस्मसात्प्रकुरुते किं भोजनं भो जनाः ॥

अर्थ–सोंठ ५, पीपल ४, अजमोद ३, अजमायन २, नमक १ तथा हरडकी छाल १६ भाग; इन सबका चूर्ण करके खाय तो पेटका गुडगुडाहट, आम, गोला और मल इनको नाश करे यह चूर्ण लोलिंबराज कविका कहा हुआ पर्वतोंको भी भस्म कर देता है, फिर भोजनका भस्म कर देना क्या बडी बात है ॥

विश्वादि चूर्ण ।

विश्वकणोषणनागदलैश्च त्वक्त्रुटिभिर्विहितं क्रमवृद्धम् ।
चूर्णमिदं समखंडमरोचश्वासगुदोद्भवगुल्मवमीषु ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, नागरवेलके पान, दालचीनी तथा छोटी इलायची, ये संपूर्ण पदार्थ क्रमवृद्धि करके लेवे । सबका चूर्ण करे और सब चूर्णकी बराबर खांड मिलवे इसको सेवन करनेसे अरुचि, श्वास, बवासीर, गोला और वांति इनका नाश होता है ॥

चित्रकादि चूर्ण ।

कृशानुश्चव्यं वा मरिचमगधाहिंगुचपला
शठी दीप्यो विश्वा यवजयुगुलं पञ्चलवणम् ।
समं बीजद्रावैर्लुलितमथवा दाडिमरसै-
र्जयेदामान् रोगान्ग्रहणिकफतां वह्नितनुताम् ॥

अर्थ–चित्रक, चव्य, काली मिरच, पीपल, हींग, गजपीपल, कचूर, अजमायन, सोंठ, जवाखार, सैंधानमकसे आदि ले पांचों नमक; ये प्रत्येक समभाग लेवे, सबका चूर्ण कर बिजोरेके रसका पुट देवे । यह आमरोग, संग्रहणी, कफ, वादी और मंदाग्नि इनका नाश करे ॥

बिडलवणादि चूर्ण ।

विडं चित्रकं जाजियुग्मं यवानी शिवा त्र्यूषणं धान्यसौवर्चलं च ।

त्वचा तिंतिडीकाजमोदाम्लवेतं समं योज्यमेतत्समं चाविडङ्गम् ॥
विडादिरोगदारकं गदार्तिनां च तारकं
ह्यनेन जीर्यते धरा कथं न जानते नराः ॥

अर्थ-बिडनमक, चित्रक, जीरा, काला जीरा, अजमायन, हरडकी छाल, सोंठ, काली मिरच, पीपल, धनियां, संचरनमक, दालचीनी, इमली, अजमोद, अमलवेत और वायविडंग; इनको समान भाग लेकर चूर्ण करे। यह बिडादिचूर्ण सर्व प्रकारकी व्याधियोंका नाशक है ॥

वडवानल चूर्ण ।

शिवाकरञ्जचित्रकं कणाजटाकटुत्रिकम् ।
सशर्करं समांशकं त्विदं हि वाडवाग्निकम् ॥

अर्थ-हरडकी छाल, कंजाकी छाल, चीतेकी छाल, पीपरामूल, सोंठ, मिरच, पीपल और खांड इनका समान भाग ले चूर्ण करे। इसको वडवानल चूर्ण कहते हैं। यह अजीर्ण पर पाचन है ॥

पंचाग्नि चूर्ण ।

अम्लवेतसधनंजयवज्री मोरटा तदनु सूरण एषः ।
पञ्चवह्निजठरानलवृद्ध्यै तक्रसाकमिदमाशु हि पेयम् ॥

अर्थ-अमलवेत, कोह वृक्षकी छाल, थूहर, मरोरफली और जमीकंद इन पांचोंका चूर्ण छाछके साथ देवे तो अग्निवृद्धि करता है ॥

विश्वभेषज चूर्ण ।

विश्वभेषजं हिंगुटङ्कणं मागधी च सौवर्चलं त्विदम् ।
शिग्रुपादजैर्भावितं रसैः शूलनाशनं क्षुत्प्रबोधनम् ॥

अर्थ-सोंठ, सुहागा, पीपल और संचरनमक, इनके चूर्णको सहजनेकी जडके रसकी भावना देवे तो यह शूल (पेटके दर्द) को नष्ट तथा क्षुधाको उत्पन्न करे।

संजीवनी गुटी ।

विडङ्गनागरं कृष्णा पथ्या वह्निबिभीतकाः ।
वचा गुडूची भल्लातं विषं चात्र प्रयोजयेत् ॥

एतानि समभागानि गोमूत्रेणैव पेषयेत् ।
गुञ्जाभां वटिकां कुर्याद्द्याद्दार्द्रकजै रसैः ॥
एकामजीर्णयुक्तस्य द्वे विषूच्यां प्रदापयेत् ।
तिस्रो भुजङ्गदष्टस्य चतस्रः सन्निपातिनः ॥
गुटिका जीवनी नाम्ना संजीवयाति मानवम् ॥

अर्थ–वायविडंग, सोंठ, पीपल, हरडकी छाल, चित्रक, बहेडे, वच, गिलोय मिलाए और अतीस; ये सब समान भाग लेके सबका चूर्ण करके गोमूत्रमें खरल करे। फिर १ रत्तीके प्रमाण गोली बनावे। इसको अदरखके रससे अजीर्ण पर एक गोली देवे, तथा विषूचिका (हैजा) में दो गोली देवे, सांपके काटनेपर तीन गोली और सन्निपातमें चार गोली देनी चाहिये। यह संजीवनी नामक गोली मनुष्यको संजीवन करती है ॥

धनंजय वटी ।

जीरकं चित्रकं चव्यं ससुगन्धं वचात्वचौ ।
एलाकर्पूरहपुषाकारवीनागकेसरम् ॥
पृथक्कर्षमितं ख्यातमिति कर्षार्धसंमितम् ।
यवानी पिप्पलामूलं स्वर्जिक्षा च हरीतकी ॥
जातीफललवङ्गं च पृथक्कर्षयुगं मतम् ।
धान्यकं पत्रकं चापि कर्षत्रयमितं पृथक् ॥
कृष्णा पलप्रमाणं स्यात्पलमानं तु रोमकम् ॥
मरीचानि च नः सप्त त्रिवृन्मूलं पलद्वयम् ।
पृथग्दशाक्षं सामुद्रं सैन्धवं नागरं तथा ।
शरावसंमितं चुक्रं तदर्धं तिन्तिणीफलम् ॥
धनंजयवटी ह्येषा धनंजयविवर्धिनी ।
जीर्णं च जरयत्याशु शूलमुन्मूलयेद्द्रुतम् ॥
हृद्विबन्धेन सममाध्मानं कर्षयत्यपि ।
ग्रहण्या निग्रहं कुर्याद्रुचयेद्रुचिमुत्तमाम् ॥

अर्थ-जीरा, चित्रक, चव्य, संचरनमक, वच, दालचीनी, इलायची, कपूर, हंसपदी अजमोद और नागकेशर ये प्रत्येक औषधी एक २ तोला लेवे; अजमायन, पीपरामूल, सज्जीखार, हरड ये प्रत्येक आधा २ तोला लेवे, जायफल और लौंग ये दोनों दो दो तोले तथा धनियां, पत्रज ये दोनों तीन २ तोले, पीपर, सांभरनमक ये चार २ तोले, काली मिरच ७ तोले, निसोथ ८ तोले, नमक १० तोले, सेंधानमक और सोंठ १० तोले एवं चूका ३२ तोले तथा इमली १६ तोले । इन सबका चूर्ण करके गोली बनावे । यह धनंजयवटी अग्निको बढावे तथा अजीर्णको नष्ट करे, शूलको उखाड देवे तथा विड्बंध, अफरा और संग्रहणी इनको नष्ट करे एवं रुचिको उत्पन्न करे है ॥

शंखवटी ।

चिञ्चाश्वत्थस्नुहिक्षारादपामार्गार्ककं तथा ।
लवणं पञ्च संगृह्य ततो लवणपञ्चकात् ॥
सैन्धवाद्यान्समादाय सर्वमेतत्पलद्वयम् ।
द्वौ द्वौ कर्षौ पृथक्कार्यौ तथा द्वौ शङ्खचूर्णतः ॥
फलत्रयाच्च कर्षैकं द्विकर्षं तु लवङ्गकम् ।
एतत्सर्वं समासाद्य श्लक्ष्णचूर्णीकृतं शुभम् ॥
भावयेदम्लयोगेन सप्तधा च प्रयत्नतः ।
रसशङ्खवटी नाम सेवितः सर्वरोगजित् ॥
गुञ्जामात्रमिमं खादेद्वह्निदीपनपाचनम् ।
अजीर्णं वातसंभूतं पित्तश्लेष्माभवं तथा ॥
विषूचीं शूलमानाहं हन्यादत्र न संशयः ।

अर्थ-इमली, पीपल, थूहर, ओंगा, आक इनका क्षार, सैंधवादिक पांचों नमक प्रत्येक आठ २ तोले; शंखभस्म २ तोले, त्रिफला १ तोला और लौंग २ तोले इन सबका चूर्ण करके नींबूके रसकी सात भावना देवे । यह शंखवटी रस १ रत्ती नित्यप्रति सेवन करनेसे संपूर्ण रोगोंको दूर करे तथा दीपन और पाचनहै । तथा अजीर्ण, वात, पित्त और कफ इनसे उत्पन्न हुए अजीर्ण तथा विषूचिका, शूल तथा आनाहवायु इनका नाश करे ॥

लवंगामृतवटी ।

सर्वांधं देवपुष्पं मरिचमगधयोस्त्रिस्त्रिकर्षं यवान्यो-

रुष्टावष्टाग्नितांपित्रिपटुरथ पलं ग्रन्थिकं सप्तकर्षम् ॥ शुण्ठी पथ्या दशाक्षामलककलिफलाजाजिचव्याश्च षट् षट् सुत्रामप्रीतिपात्रं नखमितमखिलं चूर्णितं वस्त्रपूतम् । निर्भाव्यं चार्द्रकस्य द्रवमपि विधिवन् माषयुग्मप्रमाणा बद्धा चुक्रेण सिद्धा प्रभवति गुटिकासौ लवङ्गामृताख्या ॥ भुक्ता युक्ता सकलसुखकरी दीप्तिमग्नेर्विधत्ते वृष्या पुष्या वपुष्याऽमयनिचयहृतातख्याातपूर्णा विभाति ।

अर्थ—काली मिरच पीपल य प्रत्येक ३ तोले अजमायन और चित्रक ८ तीनों नमक ४ तोले, पीपरामूल ७ तोले, सोंठ और हरड १० तोले, बहेडा, आँवला, मिलाए, जीरा और चव्य ये प्रत्येक छः छः तोले, इंद्रजव २० तोले; इन सबका चूर्ण करे और सब चूर्णके बराबर लौंगका चूर्ण लेवे । सबको अदरखके रसकी तथा चूकाके रसकी तीन २ भावना देवे, फिर दो दो मासेकी गोली बनावे । यह लवंगामृत नामक वटी भक्षण करनेसे अग्निको प्रदीप्त करती है तथा वृष (वीर्य बढानेवाली) और संपूर्ण सुखके देनेवाली है; तथा स्त्रियोंके रजोदर्शनसंबंधी व्याधियोंका नाश करती है ॥

व्योषादि गुटी ।

त्रिकटु पिप्पलीमूलमेला लवणपञ्चकम् । द्विजीरधान्यकं नागकेसरं सारत्वक्समैः ॥ चुक्राह्वा तिंतिडीकाद्रिलवणं मर्द्य चार्द्रकम् । निम्बुनीरेण तद्भाव्यं रोगहृद्वह्निदीपनम् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, बडी इलायची, पाचा नमक, जीरा, काला जीरा, धनिया, नागकेशर, कत्था, दालचीनी, चूका, इमली और सैंधानमक, ये समान समान भाग लेके चूर्ण करे । फिर अदरख और नींबूके रसकी भावना देवे । यह व्योषादि वटी रोगनाशक और अग्निदीप्त करनेवाली है ॥

हरीतक्यादि वटी ।

हरीतकी हरिहरतुल्यषड्गुणा चतुर्गुणा चतुरविशालपिप्पली । चित्रकं वरवरैकसैन्धवं रसायनं कुरु नृप वटिं वह्निदीपनीम् ॥

अर्थ-हरडकी छाल ६ भाग, तथा पीपल और गजपीपल ४ भाग, चित्रक १ भाग और सैंधानमक १ भाग; ये सब एकत्र कर गोली बनावे । यह अग्निको प्रदीप्त करने-वाली तथा रसायन है ।

अमृतहरीतकी ।

तक्रे सुसंस्वेद्य शिवाशतानि तद्वीजमुद्धृत्य च कौशले-न । षडूषणं पञ्च पटूनि हिङ्गुक्षारावजाजीमजमोदकं च ॥ षडूषणादिस्त्रिवृदर्धभागं गणे प्रदेयं पटगालितस्य । विभाव्य चुक्रेण रजांस्यमीषां क्षिपेच्छिवां बीजनिवा-सगर्भे ॥ समूह्य घर्मेषु विशोष्य तासां हरीतकीमन्य-तमां निषेवेत् । अजीर्णमन्दानलजाठरामयान्समूलशूलग्र-हणीगुदाङ्कुरान् ॥ विबन्धमानाहरुजो जयत्यसौ स आ-मवातावमृता हरीतकी ।

अर्थ-मोटी २ बडी हरड १०० लेकर उनको छाछमें भिगो देवे; फिर उनको अग्निपर रखके पचावे जब नरम हो जावें तब चतुराईसे उनकी गुठली निकाल डाले और पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रककी छाल, सोंठ, मिरच, नमक, सुहागा, सैंधा-नमक, बिडनमक, संचरनोन, हींग, जवाखार, जीरा और अजमोद ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे और निसोथ छः मासे लेवे । इन सबको कूटपीस कपडछान चूर्ण कर लेवे । फिर इसको चूकाके रसकी भावना देके पूर्वोक्त चिरी हुई हरडोंमें भर देवे और उनको डोरेसे बांधके सुखाय देवे । इनमेंसे १ हरड नित्य खाय तो अजीर्ण, मंदाग्नि, उदर-रोग, शूल, संग्रहणी, बवासीर, विड्बंध, अफरा, वादी और आमवात इनका नाश करे । इसको अमृतहरीतकी अथवा तक्रहरीतकी कहते हैं ॥

चित्रकगुड ।

वह्नेर्द्विपञ्चमूलस्य क्वाथे पलशतद्वये । अमृताया रस-स्यर्क पूतेऽस्मिन्नभयाढकम् ॥ पचेद्गुडतुलां दत्त्वा यावदापाकलक्षणम् । अन्येद्युस्तु सुशीतेऽस्मिन्मधुनः कुडवद्वयम् ॥ प्रत्येकं स्याद्यवक्षाराच्छुक्तिस्तस्मिन् रसायने । उत्तमं कथितं पुंसामश्विभ्यामग्निवृद्धये ॥

जीर्यन्त्यपि च काष्ठानि कासश्वासकृमिक्षयान्।
गुल्मोदरार्शःकुष्ठानि सान्त्रवृद्धीनि हन्ति च॥
योगैः शतैरप्यजितान् त्र्यहाज्जयति पीनसान्।

अर्थ-चित्रक और दशमूलका काढा ८०० तोले और गिलोयका रस २५६ तोले तथ हरडकी छालका चूर्ण २५६ तोले और गुड ४०० तोले; इन सबको कढाईमें भर चूल्हे पर चढायके पाक करे। जब पाक हो जावे तब उतारके धर लेवे। फिर दूसरे दिन इसमें ३२ तोले सहत और जवाखार २ तोले मिलायके सबको एकत्र करे यह उत्तम चित्रकगुड अश्विनीकुमारने पुरुषोंकी अग्निवृद्धि करनेके वास्ते कहाहै। इसका भक्षण करके काष्ठभी खायले वहभी पचजावे तथा श्वास, खाँसी, कृमि, क्षय, गोला, उदर, बवासीर, सर्व प्रकारके कुष्ठ और अंडवृद्धि इनका नाश करे तथा तीन दिनमें पीनस रोगको दूर करे।

द्राक्षादियोग।

विदह्यते यस्य तु भुक्तमात्रं दह्यन्ति हृत्कोष्ठगता मलाश्च।
द्राक्षासितामाक्षिकसंप्रयुक्तां लीढ्वाभयां वा स सुखं लभेच्च॥

अर्थ-जिस प्राणीके भोजन करनेके उपरांत पेटमें जलन होवे और कोष्ठ तथा हृदयमें दाह होय वह दाख, खांड, सहत और हरड इनको भक्षण करे तो सुखी होवे॥

यवागू।

चित्रकचविकानागरभागाभ्यधिकाग्रकैर्यवागूः स्यात्।
गुल्मानिलशूलहरी सचित्रदा वह्निजननी च॥

अर्थ-चित्रक १ भाग, चव्य २ भाग और सोंठ ३ भाग लेवे इनकी यवागू बनावे। यह गुल्म, वादी और शूल इनको नाश करे तथा अग्नि प्रदीप्त करे। यह यवागू आश्चर्यकारक है॥

क्रव्यादकल्क।

एलालवङ्गमरिचं कृष्णाशुक्तिसमन्वितम्। चुक्रनागरसिन्धूत्थशूकं लवणपञ्चकम्॥एषां चूर्णं वस्त्रपूतं क्रव्यादीनतिरिच्यते॥

अर्थ-इलायची, लौंग, काली मिरच, सीपकी भस्म, चूका, सोंठ, सैंधानमक, जवाखार और पांचों नमक इनका कपडछानकर चूर्ण करे। यह क्रव्याद रसके समान गुण करनेवाला है॥

क्षारयोग ।

द्वौ क्षारौ टङ्कणं सूतं लवङ्गं लवणत्रयम् । पिप्पली गन्धकं शुण्ठी मरीचं पलसंमितम् ॥ कर्षमेकं विषं दत्त्वा सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । अर्कदुग्धस्य दातव्या भावनाः सप्तवासरम् ॥ अन्धमूषागजपुटे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् । ततो लवङ्गं मरिचं स्फटिकानां पलं पलम्॥सर्वं संमर्द्य सुदृढं दृढभाण्डे निधापयेत् । सोयं गुञ्जाद्वयं खादेद्भुक्तं द्रावयति क्षणात् ॥ पुनर्भोजनवाञ्छां च जनयेत्प्रहरोपरि । आममांसं द्रावयति श्लेष्मरोगनिकृन्तनः ॥

अर्थ–सज्जीखार और जवाखार, सुहागा, पारा, लौंग, सैंधानमक, बिडनमक, कचियानमक, पीपल, गंधक, सोंठ और मिरच ये प्रत्येक चार २ तोले तथा सींगियाविष १ तोला; इन सबका बारीक चूर्ण करके आकके दूधकी ७ भावना देवे । फिर अंधमूषामें रखके गजपुटमें फूंक देवे । जब शीतल हो जावे तब निकास ले फिर लौंग काली मिरच, तथा फिटकरी इनका चार २ तोले चूर्ण करके उसमें मिलाय देवे फिर सबको खरल करके उत्तम पात्रम भाजन रख देवे इसमेंसे दो रत्तीकी मात्रा खानेको देय तो एक क्षणभर में भोजन करे हुएको भस्म कर देवे तथा फिर भोजन करनेकी इच्छा उत्पन्न करे तथा कच्चे मांसको द्रवरूप कर देवे और कफरोगको शमन करता है ॥

अग्निमुखरस ।

सूतं गन्धं विषं तुल्यं मर्दयेदार्द्रकद्रवैः । अश्वत्थचिञ्चापामार्गक्षारक्षारौ च टङ्कणम् ॥ जातीफलं लवङ्गं च त्रिकटु त्रिफलासमम् । शङ्खक्षारं पञ्चपलं हिङ्गुजीरं द्विभागकम् ॥ मर्दयेदम्लयोगेन गुञ्जामात्रा वटी कृता ॥ पाचनी दीपनी सद्यो जीर्णशूलविषूचिकाः ॥ हिक्कां गुल्मं चोदरं च नाशयेन्नात्र संशयः । रसेन्द्रसंहितायाश्च नाम्ना वह्निमुखो रसः ॥

अर्थ–पारा, गंधक और सींगिया विष इनको अदरखके रसमें खरल करे फिर पीपल, इमली, ओंगा इनका खार, जवाखार, सज्जीखार सुहागा, जायफल, लौंग,

सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आँवला ये समान भाग लेवे शंखकी भस्म ५ पल लेवे, हींग और जीरा दो दो पल लेवे सबको नींबूके रसमें खरल कर एक २ रत्तीकी गोली बनावे यह पाचन करता है, जठाग्निको दीपन करता है, तत्काल अजीर्ण, शूल, विषूचिका, हिचकी, गोला, उदर इनको नष्ट करता है इसमें संदेहनहीं है। यह वह्निमुखरस रसेन्द्रसंहितामें लिखा है ॥

अजीर्णारिरस ।

शुद्धं सूतं गन्धकं च पलमानं पृथक् पृथक् । हरीतकी च द्विपला नागरस्त्रिपलः स्मृतः ॥ कृष्णा च मरिचं तद्वत्सिन्धूत्थं त्रिपलं पृथक् । चतुःपला च विजयामर्द-येन्निम्बुकद्रवैः ॥ पुटानि सप्त देयानि घर्ममध्ये पुनः पुनः । अजीर्णारिरयं प्रोक्तः सद्यो दीपनपाचनः ॥ भक्षयेद्द्विगुणं भक्ष्यं पाचयेद्रेचयेदपि॥

अर्थ–पारा शुद्ध, गंधक शुद्ध दोनों चार २ तोले, हरड ८ और सोंठ १२ तोले पीपल, काली मिरच, सैंधानमक ये प्रत्येक बारह २ तोले और भांग १६ तोले इन सब-का बारीक चूर्ण कर नींबूके रसमें धूपमें धरके सात पुट देवे। यह अजीर्णारि रस दीपन पाचन है। इसके भक्षण करनेसे प्राणी दूना भोजन करे और उसका पाचन करके रेचन भी करता है॥

पाशुपतरस ।

कर्षं सूतं द्विधा गंधं त्रिभागं भस्म तीक्ष्णकम् । त्रिभिः समं विषं योज्यं चित्रकद्रवभावितम् ॥ द्विधा त्रिकटुकं योज्यं लवंगैला तु तत्समे । जातीफलं जातिपत्री चार्ध-भागमितं समम् ॥ तथार्धपञ्चलवणं स्नुह्यर्कौ वापि तिं-तिणी।अपामार्गाश्वत्थ एषां लवणं च पलार्धकम्॥टङ्कणं यावकक्षारं स्वर्जिकां हिंगुजीरकम् । हरीतकी सूततुल्या मर्दयेदम्लयोगतः ॥ धूर्त्तबीजस्य भस्म तु स वै सप्तम-भागतः । रसः पाशुपतो नाम प्रोक्तः प्रत्ययकारकः ॥ गुंजामात्रा वटी कार्या सर्वाजीर्णविनाशिनी । तालमूलीत-

क्रयोगादुदरामयनाशिनी ॥ मोचरसेनातिसारं ग्रहणीं तक्रसैंधवैः । शूले नागरकं शस्तं हिंगुसौवर्चलान्वितम् ॥ अर्शस्सु तक्रेण हिता पिप्पली राजयक्ष्माणि । वात-रोगं निहंत्याशु शुंठी सौवर्चलान्विता ॥ गुडूची शर्करा योगात्पित्तरोगविनाशिनी पिप्पली क्षौद्रयोगेन श्लेष्मरोगं निकृंतति ॥ अतः परतरा नास्ति धन्वन्तरमते वटी ।

अथ-शुद्ध पारा १ तोला, गंधक २ तोले तथा कांतिलोहकी भस्म ३ तोले, इन सबकी बराबर शुद्ध सींगिया विष लेवे सबको चित्रकके रसमें खरल करे तथा सोंठ, मिरच और पीपल ये दो दो भाग, लौंग, इलायची दो दो भाग, जायफल और जावित्री ये एक २ भाग लेवे पाँचों नमक ५ तोले तथा थूहर, आक, इमली, ओंगा और पपिल वृक्ष इनका क्षार प्रत्येक दो दो तोले ले, सुहागा, जवाखार, सज्जीखार, हींग, जीरा और हरड ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे सबका चूर्ण करक अम्लवर्गकी भावना देवे । फिर इसमें धतूरेके बीजोंकी भस्म ७ भाग मिलाकर एक २ रत्तीके प्रमाण गोली बनावे । यह पाशुपत नामक रस तत्काल परचा देनेवाला है । यह संपूर्ण अजीर्णोंका नाश करे तथा मूसली और छाछ इनके साथ उदर रोगपर, अतिसारमें मोचरसके साथ-संग्रहणीमें छाछ और सैंधे नमकके साथ, शूल रोगमें सोठ, हींग और संचर नमकके साथ, बवासीरमें छाछके साथ, क्षयरोगमें पीपलके साथ, वादीमें सोंठ और संचर नमकके साथ, पित्तके रोगमें गिलोय और मिश्रीके साथ, कफरोगमें पीपल और सहतके साथ देना चाहिये । इस पाशुपतरससे बढके दूसरा उत्तम रस धन्वंतरिके मतसे नहीं है ॥

आदित्यरस ।

दरदं च विषं गन्धं त्रिकटु त्रिफलासमम् । जातीफलं लवङ्गं च लवणानि च पञ्च वै ॥ सर्वमेकीकृतं चूर्णमम्लयोगेन सप्तधा । भावयित्वा वटी कुर्याद्गुंजार्धप्रमिता बुधैः ॥ रसो ह्यादित्यसंज्ञोऽ-यमजीर्णक्षयकारकः । भुक्तमात्रं पाचयति जठरानलदीपनः ॥

अर्थ-हींगलु, विष, गंधक, सोंठ, मिरच, पीपल, हरडा, बहेडा, आँवला, जायफल, लौंग, रेहका नमक, सैंधानमक, सञ्चरनमक, कचियानामक, कालानमक, इन सबको एकत्र कर अम्लवर्गकी सात भावना देवे फिर चार २ रत्तीकी गोली बनावे । यह

आदित्य नामक रस अजीर्णका नाशक है तथा जो खाय उसीको पचावे तथा अग्निको प्रदीप्त करता है ॥

हुताशनरस ।

एकं च दिग्द्वादशभागमानं योज्यं विषं टङ्कणमूषणं च ।
हुताशनो नाम हुताशनस्य करोति वृद्धिं कफवातहंता ॥

अर्थ–सींगियाविष १ भाग, सुहागा ८ भाग और काली मिरच १२ भाग लेवे सबको एकत्र कर चूर्ण करे और जलसे घोटके गोली बनावे । यह हुताशन नामक रस अग्निकी वृद्धि करे तथा कफ वादीके रोगोंको नष्ट करे ॥

अजीर्णकण्टकरस ।

शुद्धसूतविषगन्धकं समं तुल्यभागमरिचं च चूर्णितम् ।
मर्दयेत्तु बृहतीफलद्रवैरेकविंशतिविभावितं पुनः ॥
गुञ्जिकात्रयमिदं सुभक्षितं सद्य एव जठराग्निवर्धनम् ।
एष कण्टकरसो विषूचिकाजीर्णमारुतगदान्निहन्ति च ॥

अर्थ–शुद्ध पारा, शुद्ध विष, शुद्ध गंधक, तीनों समान भाग लेवे तथा काली मिरच सबके समान लेवे । इन सबका चूर्ण कर कटेलीके फलके रसकी २१ भावना देवे फिर तीन २ रत्तीकी गोली बनावे, एक गोली नित्य खाय तो अग्निकी वृद्धि करे। यह अजीर्णकंटकरस हैजा, अजीर्ण और वादीके रोगोंको दूर करे ॥

रामबाणरस ।

पारदामृतलवङ्गगन्धकं भागयुग्ममरिचेन मिश्रितम् । तत्र जातिफलमर्धभागिकं तिन्तिणीफलरसेन मर्दितम् ॥ वह्निमांद्यदशवक्त्रनाशनो रामबाण इति विश्रुतो रसः । संग्रहग्रहणिकुम्भकर्णयोः सामवातखरदूषणं जयेत् ॥ दीयते तु चणकानुमानतः सद्य एव जठराग्निदीपनः । रोचनो कफकुलान्तकारकः श्वासकासवमिजन्तुनाशनः ॥

अर्थ–पारा, सींगिया विष, लौंग, गंधक ये समान भाग ले तथा काली मिरच २ भाग और जायफल आधा भाग । सबको एकत्र कर इमलीके रसमें खरल करे यह रामबाण रसकी चनाके समान गोली बनायके देवे। यह मंदाग्निरूप रावण, संग्रहणीरूप कुंभकर्ण,

आमवातरूप खरदूषणको नष्ट करे, तत्काल जठराग्निको दीपन करे, रुचि प्रगट करे, कफ रोग, श्वास, खांसी, वमन और कृमिरोग इनको नष्ट करे ॥

दूसरा प्रकार ।

त्रिनिष्कं शुद्धजेपालं विषं गन्धेश टङ्कणम् । भृङ्गराजरसैः पिष्ट्वा भूयो वटकसाधितः ॥ रामबाणरसः ख्यातो द्विगुंजः श्लेष्मवातहा । अजीर्णाध्मानाविष्टम्भशूलेषु श्वासकासयोः ॥

अर्थ—शुद्ध जमालगोटा ४ मासे तथा सींगियाविष, गंधक और पारा ये एक एक मासा सबको एकत्र कर· भांगरेके रसमें खरल करे इसमेंसे दो दो रत्तीकी गोली बनावे । यह कफ, वादी, अजीर्ण, अफरा, विष्टंभ, शूल, श्वास और खांसी इनका नाश करे ॥

ज्वालानलरस ।

एलात्वग्गगनपुष्पाणामत्रोत्तरविवर्धिताः । मरीचं पिप्पली शुण्ठी चतुःपञ्चषडुत्तरा ॥ द्रव्याण्येतानि यावंति तावद्धि सितशर्करा । चूर्णमेतत्प्रयोक्तव्यमग्निसंदीपनं परम् ॥ क्षारत्रयं सूतगन्धौ पंचकोलमिदं शुभम् । सर्वैस्तुल्या जया भ्रष्टा तदर्धं शिग्रुजा जटा ॥ एतत्सर्वं जयाशिग्रुवह्निमार्द्रकजैर्द्रवैः । भावयेत्त्रिदिनं घर्मे ततो लघुपुटे क्षिपेत् ॥ सप्तधार्द्रद्रवैर्घृष्टो रसो ज्वालानलो भवेत् । निष्कं च मधुना लिह्योऽनुपानं गुडनागरम् ॥ हन्त्यजीर्णमतीसारं ग्रहणीमग्निमार्दवम् । श्लेष्मत्त्लामवसनमालस्यमरुचिं जयेत् ॥

अर्थ—इलायची १, दालचीनी २, अभ्रक भस्म ३, लौंग ४, काली मिरच ४, पीपल ५ सोंठ इस प्रकार सब औषध लेवे और सबके बराबर सपेद खाँड मिलावे सबको एकत्र करके चूर्ण तैयार करे। इसके सेवन करनेसे अग्नि दीपन हो। सज्जीखार, जवाखार, सुहागा, पारा, गंधक, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रककी छाल और सोंठ ये सब समान भाग लेवे, सबका चूर्ण करे और सब चूर्णके बराबर भुनी हुई भांग तथा भांगसे आधी सहजनेकी जड लेवे; सबको खरल कर अरनी, सहजना, चित्रक,

और अदरख इनके रसमें भिगोयके धूपमें धर देवे, फिर उसको सराव संपुटमें रखके लघुपुट देवे जब शीतल हो जावे तब इसमें अदरखके रसकी सात भावना देवे यह ज्वालानलरस ४ मासे सहतमें मिलायकर देवे और ऊपरसे सोंठ और गुड खवावे तो अजीर्ण, अतिसार, संग्रहणी, मंदाग्नि, कफ, हल्लास, वमन, अलस और अरुचि इनका नाश करे॥

चिन्तामणिरस ।

रसं गंधं मृतं शुल्बं मृतमभ्रं फलत्रिकम् । त्र्यूषणं जयपालं च समं खल्वे विमर्दयेत् ॥ द्रोणपुष्पीरसं भाव्यं शुष्कं तद्वस्त्रगालितम् । चिन्तामणिरसो ह्येष अजीर्णे शंसते सदा ॥ ज्वरमष्टविधं हंति सर्वशूलहरः परः । गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा आमवातहरः परः ॥

अथ–पारा, गंधक, तामेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, हरड, बहेडा, आँवला, सोंठ, मिरच, पीपल और जमालगोटा ये सब समान भाग लेके गोमाके रसमें खरल करे जब सूख जावे तब पीसके कपडछान कर लेवे यह चिंतामणिरस अजीर्णपर कहा है । यह आठ प्रकारके ज्वर, संपूर्ण शूल और आमवात इनका नाश करे । इस रसकी मात्रा दो रत्तीकी है ॥

पञ्चमूल्यादिघृत ।

पञ्चमूल्याभयाव्योषपिप्पलीमूलसैंधवम् । रास्नाक्षारद्वयाजाजीविडङ्गसठिभिर्घृतम् ॥ युक्तेन मातुलिंगस्य स्वरसेनार्द्रकस्य च । तक्रमस्तुसुरामण्डसौवीरकतुषोदकैः ॥ काञ्जिकेन तु यत्पक्कं पीतमग्निकरं स्मृतम् । गुल्मशूलोदरश्वासकासानिलकफापहम् ॥

अर्थ–पंचमूल, हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, सैंधानिमक, रासना, जवाखार, सज्जीखार, जीरा, वायविडंग, सँठकी जड इनका काढा करके फिर घी, बिजोरेका रस, भांगरेका रस, छाछ, दहीका जल, मद्य, गेहूँकी कांजी, तुषोंका काढा और कांजी इन सबको मिलायके पचन करावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतार लेवे। इसके सेवन करने से अग्निकी वृद्धि होवे तथा गोला, शूल, उदररोग, श्वास, खांसी, वादी और कफ इनका नाश करे ॥

दशमूलादिघृत ।

मरीचं पिप्पलीमूलं नागरं पिप्पली तथा । भल्लातकयवानी च विडंगं गजपिप्पली ॥ हिंगुसौवर्चलं चैव अजाजीबिडधान्यकम् । सामुद्रसैंधवं क्षारं चित्रकं वचया सह ॥ एभिरर्धपलैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् । दशमूलरसे सिद्धं पयसाष्टगुणेन वा ॥ मंदाग्नेश्च हितं सिद्धं ग्रहणीदोषनाशनम् । विष्टंभमामं दौर्बल्यं प्लीहानमपि कर्षयेत् ॥ कासं श्वासं क्षयं वापि दुर्नामानं भगंदरम् । कफजान्हंति रोगांश्च वातजान् कृमिसंभवान् ॥ तान् सर्वान्नाशयत्याशु शुष्कं दावानलो यथा ॥

अर्थ-मिरच, पीपरामूल, सोंठ, पीपर, भिलाए, अजमायन, वायविडंग, गजपीपर, हींग, संचरनिमक, जीरा, विडनिमक, धनिया, समुद्रनिमक, सैंधानिमक, जवाखार, चीतेकी छाल और वच ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे इनका काढा करके इसमें गौका घी ६४ तोले, दशमूलका रस, दूध ये अठगुने मिलावे फिर मंदाग्नि पर रखके सिद्ध करे। यह संग्रहणी, विष्टंभ, आम, दुर्बलता, प्लीहा, श्वास, खांसी, क्षय, बवासीर, भगंदर, कफके रोग, कृमिरोग इनको जस वनेका अग्नि दहन करे है इस प्रकार नाश करे॥

धान्यादिघृत ।

धान्यजीरकसंसिद्धं घृतमग्निविवर्धनम् ।
रोचनं दोषशमनं वातपित्तविनाशनम् ॥

अर्थ-धनिया और जीरा इनके काढेमें घी मिलायके सिद्ध करे यह अग्निको बढावे रोचक तथा दोषनाशक है तथा बादी और पित्त इनको नाश करे ॥

अग्निघृत ।

पिप्पलीपिप्पलीमूलं चित्रकं गजपिप्पली । हिंगुचव्याजमोदा च पंचैते लवणानि च ॥ द्वौ क्षारौ हपुषा चैव दद्यादर्धपलोन्मिता । दधिकांजिकसूक्तानि स्नेहमात्रसमानि च ॥ आर्द्रकस्वरसप्रस्थं घृतप्रस्थे विपाचयेत् ।

एतदग्निघृतं नाम मंदाग्नीनां प्रशस्यते ॥ अर्शसां नाशनं श्रेष्ठं तथा गुल्मोदरापहम् । नाशयेद् ग्रहणीदोषं श्वयथुं सभगंदरम् ॥ ये च बस्तिगता रोगा ये च कुक्षिसमाश्रयाः । सर्वांस्तान्नाशयत्याशु सूर्यस्तम इवोदितः ॥

अर्थ–पीपल, पीपरामूल, चित्रक गजपीपल, हींग, चव्य, अजमोद, पांचों निमक, सज्जीखार, जवाखार, हैंवेर ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे इनका काढा करके अथवा कल्क करके इसमें दही, कांजी, सूक्त, घी और अदरखका रस ये प्रत्येक ६४ तोले मिलायके मंदाग्निपर चढायके पचन करे, यह अग्निनामक घृत मंदाग्निको उत्तम है तथा बवासीर, गोला, जलंधर, संग्रहणी, सूजन, भगंदर, बस्ति और कूख इनके रोग इन सबको नाश करे जैसे सूर्योदयके होनेसे अंधकारका नाश होता है उसी प्रकार यह सब रोगोंको नाश करे है ॥

शार्दूलकांजिक।

पिप्पली शृंगवेरं च देवदारुं सचित्रकम् । चव्यं सबिल्वपेशी च अजमोदां हरीतकीम् ॥ महौषधिं यवानीं च धान्यकं मरिचं तथा । जीरकं चापि निहितं कांजिकं साधयेद्भिषक् ॥ एष शार्दूलको नाम कांजिकोऽग्निबलप्रदः । सिद्धार्थतैलसंभृष्टो दश रोगान्व्यपोहति ॥ कासं श्वासमतीसारं पांडुरोगं च कामलाम् । आमं च गुल्मशूलं च वातशूलं सवेदनम् ॥ अर्शांसि श्वयथुं चैव भुक्तपातं च शाश्वतम् । क्षीरपाकविधानेन कांजिकस्यापि साधनम् ॥

अर्थ–पीपर, अदरख, देवदारु, चीतेकी छाल, चव्य, बेलगिरी, अजमोद, हरड, सोंठ, अजमायन, धनिया, काली मिरच और जीरा, इन सब वस्तुओंको डालके कांजी सिद्ध करे तो यह शार्दूल नामक कांजी अग्नि और बलको बढावे, यदि इसको कडुए तेलमें छौंकके लेवे तो खांसी, श्वास, अतिसार, पांडुरोग, कामला, आम, गोलेका शूल, वातशूल, बवासीर, परिणामशूल और सूजन इनको दूर करे। कांजीको बनावे तो क्षीरपाककी विधिसे बनावे ॥

विषूचिकादिकी संप्राप्तिनिदान ।

सूचीभिरिव गात्राणि तुदन्संतिष्ठतेऽनिलः ।
यत्राजीर्णे च सा वैद्यैर्विषूचीति निगद्यते ॥

अर्थ-अजीर्णमें वादी सूईकेसे चबका देहमें करे उसको वैद्योंने विषूची (हैजा) रोग कहा है इंग्रेजीमें इसको कॉलरा कहते हैं ॥

न तां परिमिताहारा लभंते विदितागमाः ।
मूढास्तामजितात्मानो लभंतेऽशनलोलुपाः ॥

अर्थ-इस विषूचीका रोगको परिमाणका भोजन करनेवाले और वैद्यशास्त्रके ज्ञाता नहीं प्राप्त होते, किंतु जो मूढ हैं और आत्मा जिनकी वशीभूत नहीं तथा भोजनके लालची हैं वह प्राणी इस विषूचिका रोगको प्राप्त होते हैं ॥

विषूचिकाके लक्षण ।

मूर्च्छातिसारो वमथुः पिपासा शूलभ्रमो द्वेष्टनजृंभदाहाः ।
वैवर्ण्यकंपौ हृदये रुजश्च भवंति तस्यां शिरसश्च भेदः ॥

अर्थ-मूर्च्छा, अँतिसार, वमन, प्यास, शूल, भ्रम, जांघोंमें पीडा, जंभाई, दाह, देहका विवर्ण, कम्प, हृदयमें पीडा और मस्तकमें पीडा ये लक्षण हों उसको विषूचिका कहते हैं इसीको महामारी अथवा हैजा कहते हैं ॥

विलंबिका व अलसक इनकी चिकित्सा ।

विलंबिकालसकयोरूर्ध्वाधः शोधनं हितम् ।
नालेन फलवर्त्या च तथा शोधनभेषजैः ॥
दंडाद्यलसकेऽप्युच्चैरयमेव क्रियाक्रमः ॥

अर्थ-विलंबिका और अलसक इन दोनोंको क्रमसे वमन और विरेचन हितकारी है तथा फलवर्त्ती और शोधन देना हित है । दंडालसकपरभी यही क्रिया जाननी चाहिये ॥

फलवर्त्तिवमिस्वेदं लंघनं चापतर्पणम् ।
विशेषादलसे कुर्याद्विषूच्यामतिसारवत् ॥

अर्थ-कपडेकी बत्ती बनायके उसको रेचक औषधोंमें भिगोकर गुदामें रक्खे, वमन करावे, पसीने निकाले, लंघन करावे, अतृप्त करना, ये उपाय अलसरोगपर विशेष करके करे । बाकीके अतिसारोक्त यत्न करने चाहिये ॥

अलसककी निरुक्ति।

प्रयाति नोर्ध्वं नाधस्तादाहारो न विपच्यते।
आमाशये लसीभूतस्तेनासौ लसको मतः ॥

अर्थ–जिस व्याधिमें ऊपर और नीचे दोष न जावे तथा आमांश पचे नहीं वो दोष आमाशयमें लसी (लहस्सी) के समान होकर रहे उसको अलसक रोग कहते हैं ॥

अलसक व दंडालसकलक्षण।

कुक्षिरानह्यतेऽत्यर्थं प्रताम्येत्परिकूजति। निरुद्धो मारुतश्चैवं कुक्षावुपरि धावति ॥ वातवर्चो निरोधश्च यस्यात्यर्थं भवेदपि। तस्यालसकमाचष्टे तृष्णोद्गारौ तु यस्य च ॥

अर्थ–कूखमें और पेटमें अफरा हो, मोह होय, पीडासे पुकारे, पवन चलनेसे रुककर कूखमें और कंठादि स्थानोंमें फिरे, मलमूत्र और गुदाकी पवन रुके, प्यास बहुत लगे, डकार आवे ये लक्षण जिसमें होंय उसको अलसक रोग कहते हैं ॥

वायुः कंपभ्रमानाहशूलादीन्प्रकरोति च। पित्तं ज्वरातिसारौ च दाहादीन्स्वेदनानि च ॥ श्लेष्मांगगुरुताछर्दिवाक्संगष्ठीवनानि च। लुब्धास्ते लसको दोषाश्छर्द्यतीसारवर्जिता ॥ कारकास्तत्रिशूलादेः स्रोतसः सनिरोधकाः। तिर्यग्गतास्तनुं स्तब्धा दंडवत्स्तंभयंति च ॥ स दंडालसकस्त्याज्यः शीघ्रं देहविनाशकृत् ॥

अर्थ–इस दंडालसकरोगमें वायु, कफ, भ्रम, अफरा और शूल आदि रोगोंको करती है। तथा पित्तज्वर, अतिसार, दाह, पसीने आना, कफ, देहका भारी होना, वमन, वाणीका रुकना, वारंवार थूकना इनको करे। यदि वातादि दोष कुपित हो वमन और अतिसारको न करावे तो वह त्रिक स्थानमें शूल, और छिद्रोंका रुकना यह करे, तथा तिरछे मार्गमें प्राप्त हो देहको दंडके (लकडीके) समान देहको स्तंभित करदेवे। यह दंडालसक रोग तत्काल देहको नष्ट करे इसवास्ते वैद्य इस रोगीको त्याग देवे ॥

विलंबिका लक्षण।

दुष्टं च भुक्तं कफमारुताभ्यां प्रवर्तते नोर्ध्वमधश्च यस्याम्।

विलंबिकां तां भृशदुश्चिकित्स्यामाचक्षते शास्त्रविदः पुराणाः ॥

अर्थ-जिस मनुष्यके भोजन करा भया अन्न, कफ वातकरके दूषित होय ऊपर नीचे नहीं जाय अर्थात् वमन, विरेचन न होय उसको वैद्यविद्याके जाननेवाले जिसकी चिकित्सा नहीं ऐसा विलंबिका रोग कहते हैं। * कोई शंका करे कि अलसक और विलंबिका इन दोनोंकी वातकफके प्रबल होनेसे ऊपर नीचे प्रवृत्ति होती है इन दोनोंमें भेद क्या है सो कहो। * उत्तर-अलसकमें शूल आदि घोर पीडाकर्त्ता रोग होते हैं और विलंबिकामें नहीं हों इतनाही भेद है ॥

अजीर्णसे उत्पन्न हुए आमके कार्य।

यत्रस्थमामं विरुजे तमेव देशं विशेषेण विकारजातैः।
दोषेण येनावततं शरीरं तल्लक्षणैरामसमुद्भवैश्च ॥

अर्थ-जिस ठिकानेपर आम रहताहै उस ठिकानेपर जिस दोषसे वह स्थान व्याप्त हो उसके लक्षण करके (पीडा, दाह, गौरव आदि) और आमजन्य विकार करके (आमवातादिक) विशेष पीडा होती है। इससे जाना गया कि और ठिकानेपर थोडी पीडा होती है और (यत्र) इस सर्वनाम शब्दसे कुपित भये वातादिकोंके सदृश आमका कोई स्थान नहीं है यह दिखाया ॥

विषूची और अलसक इनके असाध्य लक्षण।

यः श्यावदंतोष्ठनखोल्पसंज्ञो वम्यर्दितोभ्यंतरयातनेत्रः।
क्षामस्वरः सर्वविमुक्तसंधिर्यायान्नरोऽसौ पुनरागमाय ॥

अर्थ-जिस रोगीके दांत, नख, होठ काले पडजावें और संज्ञा जाती रहे, वमनसे पीडित होवे और नेत्र भीतरको बैठ जाय, मन्द स्वर हो तथा हाथपैरकी संधि ढीली पडजाय वह मनुष्य बचे नहीं, विलम्बिकास्वरूपसेही असाध्य है यह जैज्जट आचारीका मत है ॥

जीर्णआहारलक्षण।

उद्गारशुद्धिरुत्साहो वेगोत्सर्गो यथोचितः।
लघुता क्षुत्पिपासा च जीर्णाहारस्य लक्षणम् ॥

अर्थ-शुद्ध डकार आवे, मनका प्रसन्न होना, जैसा भोजन करा उसके सदृश मलमूत्री भले प्रकार प्रवृत्ति होना, शरीर हलका होय परंतु कोष्ठ विशेष हलका हो, भूख और प्यास लगे, यह भोजन पचनेके उत्तर लक्षण होते हैं ॥

विषूचिकाके उपद्रव।

निद्रानाशोऽरतिः कंपो मूत्राघातो विसंज्ञिता।
अमी उपद्रवा घोरा विषूच्यां पंच दारुणाः॥

अर्थ-निद्राका नाश, मनका न लगना, कम्प, मूत्रका रुकना, संज्ञाका नाश ये विषूचिकाके घोर पांच उपद्रव हैं॥

विषूचिकाचिकित्सा।

विषूच्यामतिवृद्धायां पाण्योर्दाहः प्रशस्यते।
गंधकं कुंकुमं वापि दद्यान्निंबुजलेन वा॥

अर्थ-विषूचिका अत्यंत बढने पर हाथोंमें दाग देवे अथवा गंधक वा केशरको नींबूके रसमें मिलायके पीवे तो विषूचिका रोग दूर हो॥

लशुनाद्यचूर्ण।

लशुनजीरकसैंधवसंचलं त्रिकटुरामठचूर्णमिदं समम्।
सपदि निंबुरसेन विषूचिकां हरति भो रतिभोगविचक्षणे॥

अर्थ-लहसन, जीरा, सैंधानिमक, संचरनिमक, सोंठ, काली मिरच, पीपल और हींग इनके चूर्णको नींबूके रसमें मिलायके खाय तो हे रतिभोगविचक्षणे! विषूचिका (हैजा) का नाश होवे॥

अपामार्गादियोग।

जलपीतमपामार्गमूलं हन्याद्विषूचिकाम्।
सतैलं कारवेल्लांबु विधुनोति विषूचिकाम्॥

अर्थ-ओंगाकी जडको जलमें औटायके पीवे अथवा करेलेका रस तेल मिलायके पीवे तो विषूचिका रोग नष्ट होवे॥

बालमूत्रादिकाढा।

बालमूत्रस्य निःक्वाथः पिप्पलीचूर्णसंयुतः।
विषूचिनाशनः श्रेष्ठो जठराग्निविवर्द्धनः॥

अर्थ-बछडेके मूत्रके काढेमें पीपलका चूर्ण डालके पीवे तो विषूचिका रोग नष्ट होवे और जठराग्नि वर्द्धित होवे॥

तक्रयोग ।

तक्रेण युक्तं यवचूर्णमुष्णं सक्षारमार्तिं जठरस्य हन्यात् ।
स्वेदो घटैर्वा बहुबाष्पपूर्णैरुष्णैस्तथान्यैरपि पाणितोयैः ॥

अर्थ-जौके चूर्णको छाछमें मिलाय गरम कर उसमें जवाखार मिलायके पीवे उसी प्रकार गरम जलकी बाफ अथवा सेक किंवा हाथोंको सेकना ये सब उपचार विषूचिका रोग नाशक है ॥

बिल्वादिकाढा ।

बिल्वनागरनिःक्वाथो हन्याच्छर्दिविषूचिकाम् ।
बिल्वनागरकैडर्यक्वाथः स्यादधिको गुणैः ॥

अर्थ-बेलगिरी और सोंठ इनका काढा वमन, विषूचिका, इनका नाशक है तथा बेलगिरी और सोंठ तथा कायफल इनका काढा पहले काढेकी अपेक्षा अधिक गुणकारी है॥

यवपिष्टलेप ।

यवपिष्टजवक्षारलेपस्तक्रेण संयुतः ।
उष्णीकृतो हरेत्सद्यो जठरार्तिं सुदुर्जयाम् ॥

अर्थ-जौंका चून और जवाखार इनको छाछमें मिलायके औटावे फिर इसका सुहाता लेप करे तो कैसाही उदरशूल हो वह तत्काल शांत होवे ॥

कुष्ठादिलेप ।

कुष्ठसैंधवयोः कल्कं चुक्रतैलसमन्वितम् ।
विषूच्यामर्दनं कोष्णं खल्लीशूलनिवारणम् ॥

अर्थ-कूठ और सैंधानिमक, इनके चूर्णको चूकाके तेलमें मिलायक मंदोष्ण कर अंगमें लेप करे तो विषूचिका और खल्लीशूल इनको दूर करे है ॥

साधारणलेप ।

सरुग्वानद्धमुदरमम्लपिष्टैः प्रलेपयेत् ।
दारुहैमवतीकुष्ठशताह्वाहिंगुसैंधवैः ॥

अर्थ-शूलयुक्त फूले हुए पेट पर खट्टे रसमें दारुहलदी, हरड ,कूट, शतावर, हींग और सैंधानिमक पीसके लेप करे तो शूल और पेटका फूलना दूर होवे ॥

लवंगादिचूर्ण ।

शाणद्वयं स्यात्तु लवंगमेलाजातीफलं कोलसुनागफेनम् ।
माषप्रमाणं सकलं विचूर्ण्य शाणं कवोष्णेन जलेन पीतम् ॥
विषूचिकां हंति सुदारुणां च शूलातिसारौ वमथुः प्रसक्तः ।

अर्थ–लौंग ८ मासे, इलायची और जायफल य दोनों आधा २ तोला, अफीम एक मासा; इन सबका चूर्ण एकत्र करके गरम जलके साथ छः मासे सेवन करे ता दारुण विषूचिका, शूल, अतिसार और वांति इनका नाश करे ॥

पथ्यादिचूर्ण ।

पथ्यावचाहिंगुकलिंगभृंगसौवर्चलैः सातिविषैः सचूर्ण्य ।
सुखांबुपीतो विनिहंत्यजीर्णशूलं विषूचीं कसनं च सद्यः ॥

अर्थ–हरड, वच, हींग, कूडाकी छाल, भांगरा, संचरनमक और अतीस इनक चूर्णको सुहाता २ गरमजलके साथ पीवे तो अजीर्ण, शूल, हैजा और खांसी इनको तत्काल दूर करे ॥

शंखद्राव ।

लवणानि तथा क्षाराः प्रत्येकं पंचभागिकाः । कासीसं टंकणं तुत्थं गंधकं निंबुकद्रवम् ॥ तिलापामार्गजं क्षारप्रत्येकं वेदभागिकम् । नवसागरसौराष्ट्रीसाजका नेत्रभागिका ॥ एतत्सर्वं समालोड्य भाव्यं जंबीरनीरतः । सरंध्रे नलिकायंत्रे यामयुग्मं विपाचयेत् ॥ शंखद्रावो भवेदेष सर्वदोषनिकृंतनः । लोहपाषाणशंखानां द्रावकोऽयं न संशयः ॥

अर्थ–पांचों निमक, तथा संपूर्णक्षार ये प्रत्येक पांच २ भाग ले, हीराकसीस, सुहागा, नीलाथोथा, गंधक, नींबूका रस, तिल, ओगा इनका खार प्रत्येक ४ भाग लेवे, नौसादर, फिटकरी और सज्जीखार य प्रत्येक दो २ भाग लेवे इन सबको एकत्रकर नींबूके रसमें खरल करे, फिर नलिकायंत्रमें भरके दो प्रहर पकावे तो यह शंखद्राव सिद्ध होवे यह संपूर्ण दोषोंको नाश करे है, यह लोह, पत्थर शंख इत्यादि जो वस्तु इसमें डालो उसीका पानी कर देता है इसमें संदेह नहीं है ॥

दालचीनीतैल।

त्वक्पत्ररास्नागुरुशिग्रुकुष्ठैरम्लप्रपिष्टैः सवचाशताह्वैः।
उद्वर्तनं खल्लिविषूचिकाघ्नं तैलं विपक्कं च तदर्थकारी॥

अर्थ—दालचीनी, पत्रज, रास्ना, अगर, सहजनेकी जड, कूट, वच, और शतावर इन सबको नींबूके रसमें पीसके देहमें मालिस करे अथवा तेल बनाय लेवे इस तेलको देहमें लगावे तो वादी और हैजा इनको नष्ट करे॥

चुक्रतैल।

पलं चुक्रं कुष्ठं पिचुयुगमितं सैंधवकणा तदर्धं प्रत्येकं करतलमितं जातिफलकम्। कटुं तैलं किंचित्कुडवमितिमग्नावधिशृतं तदेतच्चुक्राद्यं शमयति विषूचीं च गदहम्॥ कुष्ठसैंधवयोः कल्कं चुक्रतैलसमान्वितम्। विषूच्यां मर्दनं कोष्णं खल्लीशूलनिवारणम्॥

अर्थ—चूका ४ तोले, कूठ ४ तोले, नीमकी छाल २ तोले, सैंधानिमक १ तोला, पीपल १ तोला, जायफल १ तोला, सरसोंका तेल १६ तोले अथवा सर्व चूर्ण डूब जावे इतना तेल मिलायके सिद्ध करे इसको विषूचिकामें लगावे तो वह नष्ट होवे। तथा कूठ और सैंधानिमक इनका कल्क और चूकाका तेल डालके विषूचिका पर गरम करके मालिस करे तो वायुरोग तथा शूल इनको नष्ट करे॥

अर्कादितैल।

अर्कस्य च रसप्रस्थं प्रस्थं धत्तूरकस्य च। श्वेतस्नुहिरसप्रस्थं प्रस्थं सौभांजनाद्रसात्॥ कुष्ठसैंधवयोः कल्कं पले द्वे द्वे प्रमाणतः। तैलप्रस्थं कांजिकेन पचन् मृद्वग्निना समम्॥ खल्लीं विषूचिक [illegible]ति पक्षाघातं च गृध्रसीम्॥

अर्थ—आकका दूध ६४ तोले, धतूरेका रस ६४ तोले, सपेद थूहरका रस ६४ तोले, सहजनेका रस ६४ तोले, कूठ और सैंधानिमक इनका कल्क दो दो पल, तेल ६४ तोले, और कांजी ८४ तोले सबको मिलायके मंदाग्निसे पचावे जब तेल मात्र आय रहे तब उतारके लगावे तो यह खल्लीवात, विषूचिका, पक्षाघात और गृध्रसी इनका नाश करे॥

तक्र।

विषूच्यामतिवृद्धायां तक्रं दधिसमं जलम्।
नारिकेरांबुपेयां वा प्राणत्राणाय योजयेत् ॥

अर्थ–अत्यंत बढी हुई विषूचिकामें छाछ अथवा दही ले उसमें समान भाग जल मिलाय ले अथवा नारियलके पानीसे पेया करे और पीवे तो प्राणोंकी रक्षा होवे ॥

पानी।

पिपासायां तथोत्क्लेशे लवंगस्यांबु शस्यते।
जातीफलस्य वा शीतं शृतं भद्रघनस्य वा ॥

अर्थ–तृषा अथवा उत्क्लेश इनमें लौंग अथवा जायफल, अथवा नागरमोथा इनका जल औटायके शीतल करके देवे ॥

विलंबिका व अलसिकाचिकित्सा।

विलंबिकालसकयोरयमेव क्रियाक्रमः।
अतएव तयोरुक्तं पृथङ् नैव चिकित्सितम् ॥

अर्थ–विलंबिका और अलसक इनपर विषूचिकाके ऊपर जो चिकित्सा कही है वही इन दोनोंमें करे इन दोनोंमें विषूचिकारोगसे भिन्न चिकित्सा नहीं कही ॥

हस्तिकर्णयोग।

हस्तिकर्णाश्च दंतश्च पिप्पलीकंदसंयुतः।
पीता कोष्णेन तोयेन क्षिप्रं हन्याद्विषूचिकाम् ॥

अर्थ–हस्तिकर्णपलासकी जड और हाथीदांत पीपल और प्याज इनको गरम जलमें पीसके पीनेको देवे तो विषूचिकाका नाश होवे ॥

निंबुरसयोग।

निंबूरसं चिंचिणिकासमेतं विषूचिकाशोषहरं कफं च।
दुग्धेन पीतो यदि टंकणोऽसौ प्रशाम्यतेऽयं वमनं निरुध्यात् ॥

अर्थ–नींबूके रसमें पुरानी इमलीको मिलायके पीवे तो विषूचिका, शोष और कफ इनका नाश होवे तथा दूधमें सुहागा डालके पीवे तो विषूचिका तथा वमन करना बंद होवे ॥

करंजादिकषाय।

करंजं निंबुशिखरिगुडूच्यर्जुनवत्सकैः।
पीतः कषायो वमनात् घोरां हन्याद्विषूचिकाम् ॥

अर्थ-कंजेकी छाल, नीमकी लकडी, ओंगाकी जड, गीलोय, कोह और कूडाकी छाल इनका काढा देय तो वमन होकार विषूचिका नाश होवे ॥

उत्क्लेशलक्षण।

उत्क्लिश्यान्नं न निर्गच्छेत्प्रसेकष्ठीवनेरितम्।
हृदयं पीड्यते चास्य तमुत्क्लेशं विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ-वमन होनेकीसी भ्रांति तथा मुखमेंसे पानी छूटे, वारंवार थूके, हृदय दूखे परंतु वमन न होवे उसको उत्क्लेश कहते हैं ॥

कटुत्रयरस।

कटुत्रयं जीरकहिंगुसिंधूरसोनगंधं च समं विमर्द्य।
निंबुद्रवेणाशु निहंति तूर्णं विषूचिकां दुष्टविलंबिकां च ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, हींग, सैंधानिमक, लहसन और गंधक ये संपूर्ण वस्तु समान भाग लेके पीसे कल्क करके नींबूके रससे देवे तो दुष्ट विषूचिका और विलंबिका इनका नाश होवे ॥

व्योषादि अंजन।

व्योषं करंजस्य फलं हारिद्रे मूलं समावाप्य च मातुलुंग्याः।
छायाविशुष्का गुटिकाः कृतास्ता हन्युर्विषूचीं नयनांजनेन ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, कंजेके बीज, दारुहलदी, हलदी और बिजोरेकी जड इन सबको कूट पीस गोली बनावे उसको छायामें सुखायके धर रक्खे फिर जलमें घिसके नेत्रोंमें अंजन करे तो विषूचिकाका नाश होय ॥

अपामार्गाद्यंजन।

अपामार्गस्य पत्राणि मरीचानि समानि च।
अश्वस्य लालया पिष्टान्यंजनाद्धंति सूचिकाम् ॥

अर्थ-ओंगाके पत्ते और काली मिरच ये दोनों समान भाग लेवे दोनोंको घोडेकी लारमें पीसके अंजन करे तो विषूचिका (हैजेकी बीमारी) दूर होवे ॥

बिल्वादिअंजन ।

बिल्वस्य मूलं शिरसस्य मूलं फलं करंजस्य नतं सुराह्वम् ।
फलत्रयं व्योषनिशाद्वयं च बस्तस्य मूत्रेण सुसूक्ष्मपिष्टम् ॥
भुजंगलूतोदरवृश्चिकादिविषूचिकाजीर्णहरं ज्वरघ्नम् ॥

अर्थ—बेलकी जड, सिरसकी जड, कंजके बीज, तगर, देवदारु, हरड, बहेडा, आँवला, सोंठ, मिरच, पीपल, हरदी, दारुहरदी इन सबको बकरेके मूत्रमें खरल करके गोली बनावे इसको जलमें घिसके अंजन करे तो सांप, लूता, बीछू, इत्यादिकोंका विष तथा जलंधर, विषूचिका, अजीर्ण और ज्वर इनका नाश होवे ॥

अजीर्णादिकों पर पथ्य ।

श्लैष्मिके वमनं पूर्वं पैत्तिके मृदुरेचनम् । वातिके स्वेदनं दाप्यं पथ्यापथ्यं हितं हि यत् ॥ नानाप्रकारो व्यायामो दीपनानि लघूनि च । बहुकालसमुत्पन्ना मुद्गलोहितशालयः ॥ विलेपी लाजमंडश्च मंडो मुद्गरसस्तथा । एणो बर्हिः शशो लावः क्षुद्रमत्स्याश्च सर्वशः ॥ शालिचशाकं वेत्राग्रं वास्तुकं बालमूलकम् । लशुनं वृद्धकूष्मांडं नवीनं कदलफिलम् ॥ सोभांजनं पटोलं च वार्त्ताकं ललदंबुजम् । कर्कोटकं कारवेलं बार्हतं च महार्द्रकम् ॥ प्रसारणी काकमाची चांगेरी सुनिषण्णकम् । धात्रीफलं नागरं च दाडिमं यवपर्पटाः ॥ अम्लवेतसजंबीरमातुलुंगानि माक्षिकम् । नवनीतं घृतं तक्रं सौवारकतुषोदकम् ॥ धान्याम्लं कटुतैलं च रामठं लवणार्द्रकम् । यवानी मरिचं मेथी धान्यकं जीरकं दधि ॥ तांबूलं तप्तसलिलं कटुतिक्तौ रसस्तथा । मन्दानलेऽप्यजीर्णे च पथ्यमेतन्नृणां भवेत् ॥

अर्थ—मंदाग्नि, अजीर्ण (विषूचिका और भस्मकरोग) ये यदि कफजन्य होवे तो प्रथम वमन देवे, और पित्तजन्य होय तो नरम विरेचन देवे । और वातजनित होय

तो स्वेदन कर्म करे, ये यथा कालमें हितकारी होते हैं । तथा अनेक प्रकारके व्यायाम (मेहनत), दीपन, हलके और बहुत दिनके लाल चावल, विलेपी, खीलोंका माँड, मंड (चावल आदिका), मूंगका रस (पानी), (मद्य) तथा कालाहरिण, मोर, शशा, लवा सब प्रकारकी छोटी मछली, शालिंच शाक, वेतकी आगेकी कोंपल, बथुआ, नरम २ मूली, लहसन, पुराना पेठा, नवीन केलाकी फली (गहर), सौभांजन (सहजना,) परवल, बैंगन, (खसका सुगंधित जल), कमल, ककोडा, करेला, कटेरीका फल अदरख, प्रसारणी, मकोय, लोनियाका साग, चौपतिया, आँवले, सोंठ घाडकी, (नारंगी) अनार, (क्षार) जौ पित्तपापडा (पापड), अमलबेत, जंभीरी, बिजोरानींबू, सहत, मक्खन, घृत, छाछ , कांजी, तुषोदक, धान्याम्ल (धानकी कांजी), कडवा तेल, हींग, निमक और अदरक, अजमायन, काली मिरच, मेथी, धनिया, जीरा, दही, पान, गरम जल, कडुए और चरपरे रस, मंदाग्निपर और अजीर्णपर ये पदार्थ पथ्यकारी हैं ॥

अपथ्य ।

विरेचनानि विण्मूत्रवातवेगविधारणम् । अतिवेलं चाध्यशनं जागरं विषमाशनम् ॥ रक्तस्रुतिं शिबिधान्यं मत्स्यं मांसमुपोदिकाम् । जलपानं च विष्टंभं जांबवं सर्वशालुकम् ॥ कूर्चिकां मोरटं क्षीरं किलाटं च प्रपानकम् । लालनं सस्यतद्वालस्नेहनं दुष्टवारि च ॥ विरुद्धासात्म्यपानानां विष्टंभीनि गुरूणि च । अग्निमांद्येप्यजीर्णे च सर्वाणि परिवर्जयेत् ॥

अर्थ-विरेचन, मल और मूत्र इनके वेगका धारण करना, भोजन करनेके अनंतर तत्काल भोजन करना, जागना, विषमाशन (विषम भोजन करना), रुधिरका निकालना, दोदल (जैसे मूंग मोठ चना आदि) का खाना, मछली, मांस, पोईका साग, जल पीना, विष्टंभकारी (जैसे अफरा होवे ऐसे पदार्थ) पिसा अन्न (चून मैदा आदि) जामुन, सर्व प्रकारके कमलोंके कंद, कूर्चिका (चावलोंको घीमें औटाना) सात दिनकी व्याही हुई गौका दूध, किलाट (फटे दूधका खोहा), पना, चिरौंजी (तालफलकी मिंगी, धनिया, नेत्रवाला, स्नेहपदार्थ) वा स्नेहन कर्म (बुरा पानी) विरुद्ध और असात्म्य ऐसे अन्न, तथा जल, विष्टंभी और भारी भारी पदार्थ, ये अग्निमांद्य और अजीर्णरोगपर त्याग देने चाहिये ॥

दूसरा प्रकार* ।

मृतसूताभ्रलोहार्कविषमं गंधकं समम् । सर्वतुल्यांशभल्लातफलमेकत्र चूर्णयेत् ॥ द्रवैः सूरणकंदोत्थैः खल्वे मर्द्यं दिनत्रयम् । माषमात्रां लिहेदाज्यै सर्वार्शांसि नाशयेत् ॥ रसो नित्योदितो नाम गुदोद्भवकुलांतकः । हस्ते नाभौ मुखे पादे गुदे वृषणयोस्तथा ॥ शोथो हृत्पार्श्वशूलं च यस्यासाध्यार्शसां हितः । असाध्यस्यापि कर्तव्या चिकित्सा शंकरोदिता ॥

अर्थ–पारेकी भस्म, अभ्रक, लोहभस्म, तामेकी भस्म, सिंगिया विष और गंधक ये समान भाग लेवे सबकी बराबर भिलाएका चूर्ण मिलावे सबको एकत्र पीसके जमीकंदके रससे तीन दिन खरल करे इसको १ मासा घीके साथ देवे । यह नित्योदितरस बवासीरका नाश करे तथा हाथ, पैर, नाभि, मुख, गुदा और वृषण इनकी सूजन और हृदय तथा पसवाडे इनका शूल और असाध्य बवासीर इनको तथा असाध्य बवासीर चिकित्सा शंकरोदित करनी चाहिये ॥

नित्योदितरस ।

विषरविगगनायःसूतगंधं समांशं समहुतभुजद्रावैर्भावितं सप्तवारम् । प्रबलगुदजकीलं हंति नित्योदितोसौ मलहृति मलबंधे माषमात्रः ससर्पिः

अर्थ–सिंगिया विष, तामेकी भस्म, लोहभस्म, शुद्ध पारा और गंधक ये समान भाग लेवे सबको कूट पीस चित्रकके रसकी सात भावना देवे यह नित्योदितरस बवासीर और मलबंध इनपर एक मासा भर घीके साथ देवे तो बवासीरका नाश करे ॥

अर्शकुठार ।

भागः शुद्धरसस्य भागयुगलं गंधस्य लोहाभ्रयोः षट्बिल्वाग्निव्यूषणाभयरजोदंती च भागैः पृथक् । पंच स्युः स्फुटटंकणस्य च यवक्षारस्य सिंधूद्भवा भागाः पंच गवां जलेषु विमले द्वात्रिंशदैतत्पचेत् ॥ स्नुग्दुग्धं च गवां जलावधिशनैः पिंडीकृतं तद्भवेद्वौ माषौ गुदकीलकाननजटाच्छेदे कुठारो रसः ॥

---

* यह विषय बवासीर रोगमें लिखनेका था ।

अर्थ-शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, लोहभस्म और अभ्रकभस्म ६ भाग, बेलगिरी, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, हरीतकी और जमालगोटा ये प्रत्येक एक २ भाग लेवे, सुहागा, जवाखार, सैंधानिमक ये पांच २ भाग लेवे सबको एकत्र कर गोमूत्र ३२ भागमें डालके पचावे तथा थूहरका दूध ३२ तोले डालके फिर पचावे जब गाढा हो जावे तब दो दो मासेकी गोली बनावे यह रस गुदाके अंकुरोंको तोडनेमें कुठारीके समान है इसीसे इस रसको वैद्यजन अर्शकुठार कहते हैं ॥

षडाननरस ।

वैक्रांतताम्राभ्रकगंधकानां रसस्य कांतस्य समानभागम् ।
चूर्णं भवेत्तेन षडाननोयमर्शोऽविनाशाय च वल्लमात्रम् ॥

अर्थ-वैक्रांतमणी, तांमेकी भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध गंधक, पारा और कांतलोहकी भस्म ये सब समान भाग लेवे सबको घोट लेवे तो यह षडाननरस बने इसको बवासीर दूर करनेके वास्ते तीन रत्तीके प्रमाण देवे ॥

पीयूषसिंधुः ।

शुद्धं सूतं षड्गुणं जीर्णगंधं काचे पात्रे वालुकायंत्रयोगात् ।
भस्मीकृत्वा योजयेदत्र हेम तत्तुल्यांशं भस्म लोहाभ्रयोश्च ॥
सूतस्तुल्यं गंधकं मेलयित्वा खल्वे मर्द्यं सूरणस्य द्रवेण ।
दंती मुंडी काकमाची हलाख्या भृंगार्कौ निःसप्तमेषां रसेन ॥
क्षिप्त्वा पश्चाद्धान्यराशौ त्रिघस्रं चूर्णं कृत्वा माषमात्रं ददीत ।
अर्शोरोगे दारुणे च ग्रहण्यां शूले पांड्वामम्लपित्ते क्षये च ॥
श्रेष्ठं क्षौद्रं चानुपानं प्रशस्तं रोगोक्तं वा माषषट्कप्रयोगात् ।
सर्वे रोगा यांति नाशं जरायां वर्षे द्वंद्वे सेवनीयं प्रयत्नात् ॥
पथ्यं साम्लं चाम्लयोगादियोषिद्वर्ज्यां देयं सर्वरोगप्रशांत्यै ।
पुष्टिं कांतिं वीर्यवृद्धिं सदा च सेवायुक्तो मानवः संलभेत ॥

अर्थ-शुद्ध पारेको लेकर वालुकायंत्रमें षड्गुण गंधक जारण करे फिर उस पारेके समान भाग सुवर्णभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म और गंधक ये मिलायके जमीकंदके रसमें, दंती, गोरखमुंडी, मकोय, मद्य, भांगरा, आक और चित्रक इन प्रत्येकके रसकी सात २ भावना देवे फिर गोला बनायके तीन दिन धानकी राशिमें दावके धर देवे चौथे दिन निकालके इसमेंसे १ मासेकी मात्रा देवे । यह उग्र बवासीरका

रोग, संग्रहणी, शूल, पांडुरोग, अम्लपित्त और क्षय इनमें सहतके साथ देवे । अथवा रोगोक्त अनुपानके साथ देवे । यह छः मासे भक्षण करनेसे संपूर्ण रोग तथा बुढापा दूर होवे । इस वास्ते प्रयत्नसे सेवन करना चाहिये इसके सेवन करनेवालेको खटाई और स्त्रीसंग इनको त्यागके और जो सात्म्य होवे सो देवे तो पुष्टि, कांति और वीर्य वृद्धि ये प्राप्त होवें ॥

चक्रबन्धरस ।

दिनत्रयं गंधसमं रसेंद्रं विमर्दयेच्छ्वेतवसुद्रवेण । ताम्रस्य चक्रेण निबध्य वह्निहरीतकीभृंगरसैर्विमर्द्य ॥ कटुत्रयेणापि ददीत गुंजाद्वयं मरुत्पायुरुहप्रशांत्यै । चक्रबंधरसोऽयं हि सर्वरोगोपकारकः । एतैस्तु गंधकेनैकं पुटं चैव प्रदापयेत् ॥

अर्थ–पारा और गंधक इन दोनोंको सपेद पुनर्नवाके रसमें तीन दिन खरल करे फिर इनमें तामेकी भस्म डालके खरल करे तो चक्रके समान पारा बद्ध होवे फिर उसको चित्रक, हरड, भांगरा, सोंठ, काली मिरच और पीपल इनके रसमें तथा काढेमें खरल कर दो दो रत्तीकी गोली बनावे १ गोली वातार्श (वादीकी बवासीर) दूर करनेको देवे । यह चक्रबंध रस सर्व रोगनाशक है इसमें गंधककी एक पुट देनी चाहिये ॥

पर्पटीरस ।

रसेंद्रगंधं सुदृढं विमर्द्य सर्पिर्युतं तत् द्विगुणं च बोलम् ।
तावत्क्षिपेल्लोहमये द्रवं स्यात् क्षिपेच्च रंभादलयुग्ममध्ये ॥
ततो रसः पर्पटिकाभिधानः समस्तदुर्नामनिकृंतनः स्यात् ।
संसेवितो वल्लचतुष्कमात्रः शोथातिसारं वमिरंगसादनम् ॥
तृष्णाज्वरारोचकवह्निमांद्यं गुदस्य पाकं हृदयं हि शूलम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक इन दोनोंकी कजली करके इसमें घी और बीजा बोलका दूना चूर्ण डालके सबको लोहके पात्रमें भरके अग्नि पर चढावे और पतला करे फिर इसको केलेके पत्तेपर ढाल देवे और तत्काल दूसरे पत्तेसे ढकके गौके गोबरसे दाब देवे । यह पर्पटीरस चार वल्ल (१२ रत्ती) अनुपानके साथ देवे तो संपूर्ण प्रकारकी बवासीर, सूजन, अतिसार, वांति, अंगोंका रह जाना, प्यास, ज्वर, अरुचि, मंदाग्नि, गुदापाक, हृदयका शूल, संपूर्ण बवासीरके विकार और शूल इनको नाश करे ॥

भल्लातकावलेह ।

चित्रकं त्रिफला मुस्तं ग्रंथिकं चविकामृता । हस्तिपिप्पल्यपामार्गौ दंडोत्पलकुठेरकः ॥ एषां चतुःपलान्भागान् जलद्रोणे विपाचयेत् । भल्लातकसहस्रे द्वे छित्त्वा तत्रैव दापयेत् ॥ तत्र पादावशेषेण लोहपात्रे पचेद्भिषक् । तुलार्धं तीक्ष्णलोहस्य घृतस्य कुडवद्वयम् ॥ त्र्यूषणं त्रिफला वह्निसैंधवं बिडमौद्भिदम् । सौगंधिकविडंगानि पलिकांशानि कल्पयेत् ॥ कुडवं वृद्धदारोश्च तालमूल्यास्तथैव च । सूरणस्य पलान्यष्टौ चूर्णीकृत्वा विनिःक्षिपेत् ॥ सिद्धे सति प्रदातव्यं मधुनः कुडवद्वयम् । प्रातर्भोजनकाले वा ततः खादेद्यथाबलम् ॥ अर्शांसि ग्रहणीदोषं पांडुरोगमरोचकम् । कृमिगुल्माश्मरीनाहान् शूलं चापि व्यपोहति ॥ भवेच्छुक्रोपमं चक्षुर्वलीपलितनाशनम् । रसायनमिदं श्रेष्ठं सर्वरोगहरं परम् ॥

अर्थ—चीतेकी छाल, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा, पीपरामूल, चव्य, गिलोय, गजपीपल, ओंगाकी जड, कमल, सहदेईकी जड और आजबला ये प्रत्येक सोलह २ तोले लेवे सबको २०४ तोले जलमें डाले तथा २००० भिलाओंको तोडके उसमें गेरे फिर लोहेके कडावमें चढायके चतुर्थांश काढा करे इसमें तीक्ष्ण (खेरी) लोहकी भस्म २०० तोले डाले; घी ३२ तोले तथा त्रिकुटा, त्रिफला, चित्रक, सैंधा निमक, बिडनिमक, सोरा, संचरनिमक और वायविडंग ये प्रत्येक चार २ तोले तथा वृद्धदारु (विधायरा) १६ तोले, तालमूली (मूसली) १६ तोले और जमीकंद ३२ तोले इन सबका चूर्ण करके उसमें डाल देवे फिर चूल्हेपर चढाय गाढा होने पर्यंत औटावे जब गाढा हो जावे तब उतारके शीतल करे फिर इसमें सहत ३२ तोले डाले तो यह भल्लातकावलेह सिद्ध होवे । इसको प्रातःकाल अथवा भोजनके समय बलाबल विचारके देवे तो बवासीर, संग्रहणी, पांडुरोग, अरुचि, कृमिरोग, गोला, पथरी, अफरा और शूल इनको नाश करे तथा शुक्रके समान नेत्र होवे और वली तथा पलित इनका नाश करे यह सर्व रोगनाशक उत्तम रसायन है ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे अजीर्णरोगनिदानचिकित्सा समाप्ता ।

कृमिरोगाधिकारः ।

कृमिनिदान ।

कृमयस्तु द्विधा प्रोक्ता बाह्याभ्यंतरभेदतः । बहिर्मलकफासृग्विट्जन्मभेदाच्चतुर्विधाः ॥ नामतो विंशति विधा–

अर्थ–कृमिरोग दो प्रकारका है एक बाहरका दूसरा भीतरका तहां बाहरके मल (पसीना आदि) और कफ, रुधिर, विष्ठा इन कारणोंसे बहिः कृमिरोग चार प्रकारका है उनके नाम वीस प्रकारके हैं वह कृमिरोगके बीस नामसे बीस भेद हैं ॥

बाह्यकृमिके नाम ।

बाह्यस्तत्र मलोद्भवाः । तिलप्रमाणसंस्थानवर्णाः केशांबराश्रयाः ॥ बहुपादाश्च सूक्ष्माश्च यूकालिक्षादिनामतः । द्विधा ते कुष्ठपिटिका कंडूगंडान्प्रकुर्वते ॥

अर्थ–तहां बाहरके मलसे प्रगट कृमि, तिलके प्रमाण श्वेत, काली, केश और वस्त्रमें रहनेवाली होती हैं तथा बहुत पैरकी और छोटी जूं लीख नामसे प्रसिद्ध दो प्रकारकी हैं यह कृमि कोढ, पिडिका, खाज, गांठ इत्यादि रोग प्रगट करे है ॥

कृमिरोगका कारण ।

अजीर्णभोजी मधुराम्लनित्यो द्रवः प्रियपिष्टगुडोपभोक्ता । व्यायामवर्जी च दिवा शयानो विरुद्धभुक् संलभते कृमींश्च ॥

अर्थ–अजीर्णमें भोजन करे॰ प्रतिदिन मीठा, खट्टा खावे तथा पतला पदार्थ (जैसे कढी रायता आदि) खावे, पिसा अन्न मैदा आदि और गुडके पदार्थ खावे और भोजन करके परिश्रम न करे, दिनमें सोवे, विरुद्ध भोजन जैसे दूध मछली आदिको खावे ऐसे पुरुषके कृमिरोग प्रगट होता है ॥

पुरीषकफरक्तजकृमिकारण ।

माषपिष्टान्नलवणगुडशाकैः पुरीषजाः । मांसमाषगुडक्षीरदधिसूक्तैः कफोद्भवाः ॥ विरुद्धाजीर्णशाकाद्यैः शोणितोत्था भवंति हि ।

अर्थ–उरद, पिसा अन्न (लड्डू घेवर गूंझा आदि), नोनके, गुडके तथा शाक आदि ऐसे पदार्थ खानेसे मलकी कृमि प्रगट होती हैं । मांस, उडद, गुड, दूध, दही,

कांजी ऐसे पदार्थ खानेसे कफकी कृमि पैदा होती हैं । विरुद्ध पदार्थ जैसे दूध मछली और आधा कच्चा आधा पक्का शाक (जैसे हरा चनेका आदि) ऐसे भोजनसे रुधिरजन्य कृमि पैदा होती हैं ॥

पेटमें कृमि हुएके लक्षण ।

ज्वरो विवर्णता शूलं हृद्रोगः सदनं भ्रमः ।
भक्तद्वेषोऽतिसारश्च संजातकृमिलक्षणम् ॥

अर्थ—ज्वर हो शरीरका रंग औरही प्रकारका हो जावे शूल हृदय दूखे वमनकीसी इच्छा हो भ्रम भोजन बुरा लगे दस्त होंय यह लक्षण जिसके पेटमें गिंडोहा आदि कृमि पडजाते उसके होते हैं ॥

कफजकृमिका लक्षण ।

कफादामाशये जाता वृद्धाः सर्पंति सर्वतः । पृथुब्रध्ननिभाः केचित्केचिद्गंडूपदोपमाः ॥ रूढधान्यांकुराकारास्तनुदीर्घास्तथाणवः । श्वेतास्ताम्रावभासाश्च नामतः सप्तधा तु ते ॥ अंत्रादा उदरावेष्टा हृदयादा महारुजः । चुरवो दर्भकुसुमाः सुगंधास्ते च कुर्वते ॥ हृल्लासमास्यस्रवणमाविपाकमरोचकम् । मूर्च्छाछर्दितृषानाहकार्श्यश्वयथुपीनसान् ॥

अर्थ—कफसे आमाशयमें प्रगट हुई कृमि जब बढ जाती हैं तब चारों तरफ डोलती हैं । कोई चामके सदृश, कोई गिंडोहोंके आकार, कोई धान्यके अंकुरके समान होती हैं । कितनीही छोटी, बडी, चौडी होती हैं और किसीका वर्ण श्वेत, किसीका तामेके समान होय है उन्होंके सात नाम हैं सो इस प्रकार १ अंत्राद, २ उदरावेष्ट, ३ हृदयाद, ४ महारुज, ५ चुरु, ६ दर्भकुसुम और ७ सुगंध ये नाम कोई सार्थक हैं और कोई निरर्थक हैं । व्यवहारके निमित्त पहले आचार्योंने कहे हैं । इन कृमियोंसे वमनकीसी इच्छा होय मुखसे पानी गिरे अन्नका पाक न होना, अरुचि, मूर्च्छा, वमन, प्यास, अफरा, शरीर कृश होवे, सूजन और पीनस इतने विकार होते हैं ॥

रक्तकृमिका लक्षण ।

रक्तवाहशिरस्थाना रक्तजा जंतवोऽणवः । अपादा वृत्तताम्राश्च सौक्ष्म्यात्केचिददर्शनाः ॥ केशादा रोमविध्वंसा रोमद्वीपा उदुंबराः । षट् ते कुष्ठैककर्माणः सहसौरभमातरः ॥

अर्थ–रुधिरकी वहनेवाली नाडियोंमें रुधिरसे प्रगट कृमि बारीक, पादरहित, गोल, तामेके रंगके होते हैं; कोई बहुत बारीक होती हैं वह देखनेसे भी नहीं दीखें। ये कृमि छः प्रकारकी हैं उनके नाम ये हैं १ केशाद, २ रोमविध्वंस, ३ रोमद्वीप, ४ उदुंबर, ५ सौरभ और ६ मातर ये कुष्ठको पैदा करती हैं ॥

पुराषजकृमिका लक्षण ।

पक्वाशये पुरीषोत्था जायंतेऽधोविसर्पिणः। प्रवृद्धाः स्युर्भवेयुश्च ते यदामाशयोन्मुखाः ॥ तदास्योद्गारनिश्वासा विड्गंधानुविधायिनः । पृथुवृत्ततनुस्थूलाः श्यावपीतसितासिताः ॥ ते पंच नाम्ना कृमयः ककेरुकमकेरुकाः । सौसुरादामलूनाश्च लेलिहा जनयंति च ॥ विड्भेदशूलविष्टंभकार्श्यपारुष्यपांडुताः । रोमहर्षाग्निसदनगुदकंडूविमार्गगाः ॥

अर्थ–पक्वाशयमें विष्ठासे प्रगट कृमि गुदाके मार्ग होकर बाहर निकसती हैं जब यह बढ जाती हैं तब आमाशयमें प्राप्त होकर डकार और श्वाससे विष्ठाकीसी वास आने लगती है । ये कृमि बडी, छोटी, गोल, मोटी, रंगमें काली, पीली, सफेद, नीली होती हैं इनके पांच नाम हैं १ ककेरुक, २ अकेरुक, ३ सौसुराद, ४ मलून, ५ लेलिह । जब ये कृमि मार्गको छोड अन्यमार्गमें जाते हैं तब इतने रोग प्रगट करे हैं । दस्तका पतला होना, शूल, अफरा, देहमें कृशता तथा देहमें कठोरता, पांडुरोग, रोमांच, मंदाग्नि और गुदामें खुजलीका होना ।

कृमिरोगचिकित्सा ।

कृमीणां विट्कफोत्थानामेतदुक्तं चिकित्सितम् ।
रक्तजानां तु संहार कुर्यात्कुष्ठचिकित्सया ॥

अर्थ–यह चिकित्सा विष्ठा और कफसे उत्पन्न होनेवाली कृमियोंकी कही है तथा रुधिरसे प्रगट होनेवाली कृमि (कीडा) की चिकित्सा करना होवे तो कुष्ठरोगके समान करे ॥

तेषामन्यतमो वैद्यो जिघांसुः स्निग्धमातुरम् । सुरसादिविपक्वेन सविषं वांत आदिभिः ॥ विरेचयेत्तीक्ष्णतरैर्योगैरास्थापयेद्धि च ।

अर्थ–उस अभ्यंतर (भीतरी) अथवा बाह्य (बाहरकी) कृमिके नाश करनेको प्रथम निर्गुंडी इत्यादिकमें सिद्ध करे हुए घृतादिकसे रोगीको स्निग्ध करके वमन कराय फिर तीक्ष्ण जुलाब देवे अथवा पिचकारी आदि क्रिया करे ॥

पूडी।

शालिपिष्टं कणासिंधु विडंगं भोपनीत्वचैः ।
सुपक्का पोलिका जंतून्पातयेन्मधुभक्षिता ॥

अर्थ-चावलोंका चून, पीपर, सैंधानिमक, वायविडंग इनको एकत्र कर भोपनीके रससे पूडी बनावे इनको सहतके साथ खाय तो संपूर्ण पेटकी कृमि गिर जावें ॥

अन्न।

प्रत्यहं कटुकं तिक्तं भोजनं कफनाशनम् ।
कृमीणां नाशनं रुच्यमग्निसंदीपनं परम् ॥

अर्थ-कृमिरोगवालेको नित्य तीक्ष्ण, कडुआ और कफ, कृमि इनके नाशकारी और अग्निदीपक ऐसे भोजन करने चाहिये ॥

पथ्याखुपर्णिकायुक्ता गोधूमैश्च क्रमाद्धृता ।
सुपक्का पोलिका जंतून्पातयेन्मधुभक्षिता ॥

अर्थ-हरड, मूसाकर्णी, गेहूँका चून इनकी पूडी घीमें उतारके सहतके साथ भोजन करे तो संपूर्ण पेटके कीडे झड जावें ॥

कृमिलेप ।

पारदं मर्दयेन्निष्कं कृष्णधत्तूरकद्रवैः । नागवल्लीद्रवैर्वाथ वस्त्रखंडं प्रलेपयेत् ॥ तद्वस्त्रं मस्तके बद्धा धार्यं याम-त्रयं ततः । यूकाः पतंति निश्चेष्टाः पारीक्ष्यं नात्र संशयः ॥

अर्थ-काले धतूरेके अथवा नागरवेल पानके रसमें पारेको खरल करे फिर उसको बारीक वस्त्रमें लेप करके उसको मस्तकपर दो प्रहर बांधे तो माथेकी जितनी जूंआं लीख हैं सब मरके गिर पडें इसी लेपसे जमजूआँ भी मरके गिर पडते हैं यह अनुभव करा हुआ है ॥

यवागू ।

विडंगतंदुलव्योषशिग्रुभिर्मरिचं नतम् ।
तक्रसिद्धा यवागूः स्यात्कृमिघ्नोससुवर्चिका ॥

अर्थ-वायविडंग, चावल, सोंठ, मिरच, पीपल, सहजनेकी छाल, लालमिरच,

तगर इन सबको छाछमें यवागू (छः गुना जल डालके पतला भात करते हैं) इस प्रकारकी बनावे इसमें काला निमक मिलायके पिलावे तो यह कृमिनाश करे ॥

त्रिवृतादि कल्क ।

त्रिवृत्पलाशबीजं च पारसीकयवानि च । कंपिल्लकं विडंगं च गुडश्च समभागिकः ॥ तक्रेण कल्कमेतेषां कृमिकोटगणापहः ।

अर्थ–निसोथ, पलासपापडा, किरमानी अजमायन, कबीला, वायविडंग इनके चूर्ण तथा चूर्णके समान गुड लेवे इसका छाछमें कल्क करे यह कृमिकोटगण अर्थात् कीडोंके समूहको नष्ट करे ॥

पलाशबीजरस व कल्क ।

पलाशबीजस्वरसं पिबेन्माक्षिकसंयुतम् ।
पिबेत्तद्बीजकल्कं वा तक्रेण कृमिनाशनम् ॥

अर्थ–पलास (ढाकके) बीजोंका स्वरस सहतसे अथवा पलासपापडेका कल्क छाछके साथ पीनेसे कीडामात्रका नाश होवे ॥

स्वरस ।

पारिभद्रकपत्रोत्थरसं क्षौद्रयुतं पिबेत् ।
रुबूकस्य रसं वापि धत्तूरस्यापि वा रसम् ॥

अर्थ–कडुए नींबके पत्तोंका स्वरस तथा अंड अथवा धतूरा इनका रस सहत मिलायके पीवे तो पेटके कीडे मर जावें ॥

तैल ।

विडंगं च शिलया शुद्धं सुरभिजलेन कटु तैलम् ।
निखिलान्नयाति विनाशं लक्षासहिता दिनैर्यूकाः ॥

अर्थ–वायविडंग, मनसिल इनका कल्क और गोमूत्र इनमें सरसोंका तेल मिलायके तेल सिद्ध करे यह १ दिनमें लिख और जूआं इनको नाश करे ॥

विडंगादि तैल ।

विडंगगोमूत्रमनःशिलानां सुगंधिकाभिः परिपाचितं यत् ।
तैलं भवेत्सर्षपसंभवं च यूकासु लीक्षासु हितं हि सद्यः ॥

अर्थ-वायविडंग, गोमूत्र, मनसिल और काली निर्गुंडी इनके कल्कसे सरसोंके तेलको सिद्ध करे यह तेल जूआं, लीख इनको तत्काल नष्ट करे ॥

धतूरपत्रतैल।

धत्तूरपत्रकल्केन तद्रसेनैव पाचितम्।
तैलमभ्यंगमात्रेण यूका नाशयति क्षणात् ॥

अर्थ-धतूरेके पत्तोंका कल्क अथवा रस इसमें तेल डालके सिद्ध करे इसकी देहमें मालिस करे तो तत्काल जूआं जमजूंआ नष्ट होवें ॥

दाडिमादिकाढा।

दाडिमत्वक्कृतः क्वाथस्तिलतैलेन संयुतः।
त्रिदिनात्पातयत्येव कोष्ठतः कृमिजालकम् ॥

अर्थ-अनारकी छालका काढा करके उसमें तिलीका तेल मिलायके पीनेको देवे तो तीन दिनमें पेटकी संपूर्ण कृमियोंको बाहर निकालके गेर देवे ॥

नियमनादि काढा।

नियमनस्त्रिफला कुटजो वचा त्रिकटुकं खदिरा त्रिवृत्तं युतम्।
मुनिदिनं हि गवां सलिलेन च शृतमिदं कृमिनाशकरं पिबेत् ॥

अर्थ-कडुआ नीम, हरड, बहेडा, आमला, कूडाकी छाल, सोंठ, वच, मिरच, पीपल, खैरकी छाल और निसोथ इनका गौके मूत्रमें काढा करके देवे तो सात दिनमें संपूर्ण पेटके कीडे मरके गिर जावें ॥

विडंगादि काढा।

विडंगशृतपानीयं विडंगनावधूलितम्।
पीतं कृमिहरं कुष्ठ कृमिजातान्प्रणाशयेत् ॥

अर्थ-वायविडंगका काढा कर उसमें वायविडंगकाही चूर्ण डालके पिलावे तो कृमिमात्र मरके गिर जावें ॥

मुस्तादि काढा।

मुस्ताखुपर्णीफलदारुशिग्रुक्वाथः सकृष्णाकृमिशत्रुकल्कः।
मार्गद्वयेनापि चिरप्रवृत्तान्कृमीन्निहन्यात्कृमिजांश्च रोगान् ॥

अर्थ-नागरमोथा, मूसाकर्णी, इंद्रजौ, देवदारु और सहजना इनका काढा करके इसमें पीपल और वायविडंगका चूर्ण डालके पिलावे तो दोनों द्वार (गुदा-

और मुख) करके बहुत दिनके पडे हुए कीडे उनको और उन कीडोंके होनेसे जो रोग होवे उनको नाश करे ॥

खदिरादिकाढा ।

खदिरः कुटजः पिचुमंदवचात्रिकटुत्रिफलात्रिवृतासहितम् ।
पशुमूत्रयुतं पिब सप्त दिनं कृमिकोटिशतान्यपि हंत्यचिरात् ॥

अर्थ–खैरकी छाल, कूडाकी छाल, नीमकी छाल, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला और निसोथ इनका चूर्ण अथवा काढा गोमूत्रमें मिलायके सात दिन पीवे तो कोटयवधि अर्थात् करोडों भी कृमि होवे तो तत्काल दूर होवें ॥

रस ।

हिंगुलः कर्षमानं स्याद्दंतिबीजं तदर्धकम् । अर्कक्षीरेण
संमर्द्य दापयेद्भावना दश ॥ माषमात्रं प्रदातव्यमर्कमूल-
रसं पुनः । प्रपिबेद्धिंगुसंयुक्तं कृमिजालनिपातनम् ॥

अर्थ–हींगलू १ तोला और जमालगोटा ६ मासे दोनोंका चूर्ण करके आकके दूधकी १० भावना देवे इसमेंसे एक मासा औषध आककी जडके रस और हींगके साथ देवे तो पेटकी संपूर्ण कृमि झरके गिर पडे ॥

पारदादियोग ।

शुद्धसूतामिंद्रयवमजमोदमनःशिला । पलाशबीजतुल्यांशं देव-
दाल्या द्रवैर्दिनम् ॥ मर्दयेद्भक्षयेन्नित्यं मूषपर्णिकषायकम् । सिता-
युक्तं पिबेच्चानु कृमिपातो भवत्यलम् ॥

अर्थ–शुद्ध पारा, इन्द्रजौ, अजमायन, मनसिल, पलासपापडा ये समान भाग लेके चूर्ण करे इसको बंदालके रससे १ दिन खरल करे इसमेंसे ४ मासे औषध मूसाकर्णी औषधके काढेमें खांड मिलायके देवे तो पेटके कीडे सब गिर पडें ॥

कृमिकुठाररस ।

कर्पूरं चाष्टभागं च कुटजश्चैकभागकः । तत्समानं त्रायमाणाम-
जमोदा विडंगकम् ॥ हिंगुलं विषभागं च तत्समानं च केसरम् ।
सर्वं दृढं च संमर्द्य भृंगराजरसैस्तथा ॥ पलाशबीजसंमिश्रं उंद-
रीरसभावितम् । ब्राह्मीरसं ततो दत्त्वा सिद्धयेत्कृमिकुठारकः ॥

वल्लमात्रां वटीं कुर्याद्द्याद्धेमसमन्विताम् । कुर्यात्क्रमिविनाशं च एवं सप्तविधं दृढम् ॥

अर्थ-कपूर आठ भाग, कूडाकी छाल, त्रायमाण, अजमायन, वायविडंग, हींगलू, सिंगियाविष, केशर और पलासपापडा ये सब एक २ भाग लेके एकत्र करे फिर इसके भांगरेके रस, मूसाकर्णीके रस और ब्राह्मीके रसकी भावना देवे। यह कृमिकुठाररस तीन रत्ती धतूरेके रसके साथ देवे तो सर्व प्रकारके कृमिका नाश करे ॥

कृमिमुद्गररस ।

क्रमेण वृद्धं रसगंधकाजमोदाविडंगं विषमुष्टिका च ।
पलाशबीजस्य च चूर्णमस्य निष्कप्रमाणं मधुनावलीढम् ॥
पिबेत् कषायं घनजं तदूर्ध्वंरसो प्रयुक्तः कृमिमुद्गराख्यः ।

अर्थ-पारा १ भाग, गंधक २ भाग, अजमोद ३ भाग, वायविडंग ४ भाग, बकायनकी छाल ५ भाग, पलासपापडा ६ भाग, इनका चूर्ण एक तोला अथवा शक्तिके प्रमाण सहतके साथ चाटे फिर इसके ऊपर नागरमोथेका काढा पीवे इसको कृमिमुद्गररस कहते हैं ॥

विडंगादिचूर्ण ।

विडंगसिंधूद्भवहिंगुपथ्याकंपिल्लसौवर्चलपिप्पलीनाम् ।
चूर्णं कवोष्णोदकसंगृहीतं कृमीन् निहंत्याशु दहेद्वमिं च ॥

अर्थ-वायविडंग, सैंधानिमक, हींग, हरड, कवीला, संचरनिमक और पीपल इनके चूर्णको गरम जलके साथ पीवे तो कृमि और वमन इनको दूर करे ॥

दूसरा प्रकार ।

विडंगानां तु चूर्णं च कर्षार्धाकर्षमेव च ।
मधुना सहितं लिह्यात् कृमिकोटिनिवृत्तये ॥

अर्थ-वायविडंगका चूर्ण तोला अथवा छः मासे लेकर सहतके साथ सेवन करे तो कृमिके समुदायको नाश करे ॥

पारसिकयवानीचूर्ण ।

पारसिकां यवानीं तु पर्णेन सह भक्षयेत् ।
कृमिजालं निहंत्याशु पीतो निंबरसेन वा ॥

अर्थ-किरमानी अजमायनको पानमें रखके खाय अथवा नीमके रसके साथ पीवे तो कृमि रोग नष्ट होवे ॥

निंबादिचूर्ण।

निंबाजमोदा जंतुघ्नं ब्रह्मबीजं सचोरकम्।
सहिंगुकं समगुडं सद्यो जंतुविनाशनम् ॥

अर्थ-नीमकी छाल, अजमायन, वायविडंग, किरमानी अजमायन और हींग इनके चूर्णकी बराबर गुड मिलायके भक्षण करे तो उदरकी संपूर्ण कृमि नष्ट होवे ॥

विडंगव्योषसयुक्तं भक्तमंडं पिबेन्नरः।
दीपनं कृमिनाशाय जठराग्निविवृद्धये ॥

अर्थ-वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल इनका चूर्ण डालके चावलका मांड पीवे तो दीपन करे और कीडोंको नष्ट करके जठराग्निको बढावे ॥

त्रिफलाद्यघृत।

फलत्रयं वचा दंती त्रिवृत्कंपिल्लकैः समैः।
सिद्धं सर्पिर्गवां मूत्रे पीतं च कृमिनाशनम् ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला, वच, दंतीके बीज, निसोथ, कवीला और गोमूत्र इनके कल्कसे घृत पचावे इस घृतके सेवन करनेसे कृमिका नाश होव ॥

विडंगघृत।

त्रिफलायास्त्रयः प्रस्था विडंगं प्रस्थमेव च। दीपनं द-
शमूलं च लाभतः समुपाहरेत् ॥ पादशेषे जलद्रोणे युते
सर्पिर्विपाचयेत्। प्रस्थोन्मितं सिंधुयुतं तत्पर कृमि-
नाशनम् ॥ विडंगघृतमेतत्तु लेह्यं शर्करया सह। सर्वा-
न्कृमीन्प्रणुदति वज्र मुक्तमिवासुरान् ॥

अर्थ-त्रिफला १९२ तोले, वायविडग ६४ तोले, दीपनीय गणकी औषधी और दशमूल इनमेंसे जो जो औषध मिले वे सब लेकर उनको २०४८ तोले जलमें डालके चतुर्थांश काढा करे उसम ६४ तोले घी और सैंधानिमक डालके घृत सिद्ध कर इस घृतम वायविडंग डालके घृत और खांडके साथ पीवे तो कृमि रोग दूर होवे ॥

सारनालयोग।

सारनालाखुपर्णी वा तक्रं पालाशबीजयुक्।
हिंग्वाजमोदातक्रं वा कृमिरोगं विनाशयेत्।

अर्थ-कांजीमें मूसाकर्णी और छाछमें पलासपापडा अथवा छाछमें हींग और अजमायन मिलायके पीवे तो कृमिरोगका नाश करे॥

भल्लातकयोग।

भल्लातकं वा दध्ना च चिंचाम्लेन हरेत्कृमीन्।

अर्थ-भिलाएको दहीके साथ अथवा इमलीके साथ खानेसे उदरकी कृमि मर जावें॥

पलाशबीजयोग।

पलाशबीजं वल्लैकं स्नुहिक्षीरेण जंतुजित्॥

अर्थ-ढाकके बीज थूहरके दूधके साथ खावे तो पेटके सब कीडे मरके दस्तकी राह निकल जावे॥

किरमानी अजमायनका कल्क।

पारसी यवानी पीता पर्युषिता वारिणा प्रातः।
गुडपूर्वा कृमिजालं कोष्ठगतं पातयत्याशु॥

अर्थ-किरमानी अजमायनको बासे पानीमें पीसके उसमें गुड मिलायके पीवे तो पेटकी सब कृमियोंके जालको तत्काल गिराय देवे॥

निशोत्तरादियोग।

भिंडीपिष्टारनालेन गोमूत्रेणातिमुक्तकः।
कुनटीकटुतैलेन योज्या यूकापहास्त्रयः॥

अर्थ-सफेद निसोथको कांजीमें अथवा तेंदूको गोमूत्रमें अथवा मनसिलको सरसोंके तेलमें मिलायके पीवे ये तीनों योग जूँ लीखके नाशक हैं॥

पिप्पल्याद्यचूर्ण।

पिप्पली पिप्पलीमूलं सैंधवं कृष्णजीरकम्। चव्यचित्रकतालीसपत्रकानागकेसरम्॥ एषां द्विपालिकान्भागान्पंच सौवर्चलस्य च। मरीचाजाजिशुंठीनामेकैकस्य पलं पलम्॥ दाडिमात्कुडवं

चैव द्विदलं चाम्लवेतसात् । सर्वमेकत्र संयुक्तं योजयेत्कुशलो भिषक् ॥ पिप्पल्यादिरिति ख्यातं नष्टवह्नेश्च दीपनम् । अर्शांसि ग्रहणीगुल्ममुदरं सभगंदरम् ॥ कृमिकंडुरुचिहरं सुरयोष्णोदकेन वा । नातः परतरं किंचिदामशोथनिषूदनम् ॥

अर्थ–पीपल, पीपरामूल, सैंधानिमक, काला जीरा, चव्य, चित्रक, तालीसपत्र, नागकेशर, ये आठ २ तोले लेवे, संचरनिमक ५ तोले तथा काली मिरच, जीरा, सोंठ ये चार २ तोले, अनारदाना १६ तोले, अमलवेत ८ तोले ले सबको एकत्र चूर्ण बनावे इस चूर्णको कुशलवैद्य अपने बुद्धिके साथ देवे। यह मंदाग्निको दीपन करे और बवासीर, संग्रहणकी, गोला, जलंधर, भगंदर, कृमि, खुजली, अरुचि इन पर मद्यके साथ अथवा गरम जलके साथ देवे इससे बढकर दूसरी आम और सूजन इनके नाश करनेवाली औषध नहीं है ॥

आखुपर्ण्यादिचूर्ण ।

आखुपर्णदलैः पिष्टैः पिष्टकेन च पूपकान् ।
भुक्त्वा सौवीरकं चानु पिबेत्कृमिहरं परम् ॥

अर्थ–मूसाकर्णीके पत्तोंको कूट चूर्ण कर उसमें गेहूंका चून मिलाय पूआ बनावे और खाय इसके ऊपर यदि जौकी कांजी पीवे तो कृमिरोगका नाश होवे ॥

निंबादिचूर्ण ।

निंबुवत्सकविडंगसंयुतं रामठेन सह जंतुनाशनम् ।
निंबपत्रमजमोदकान्वितं चूर्णमेव मधुना प्रशस्यते ॥

अर्थ–नींबू, कूडाकी छाल, वायविडंग और हींग इनका चूर्ण जंतु (कीडा) नाशक है । अथवा नींबूके पत्ते और अजमायन इनके चूर्णको सहतके साथ खावे तो भी संपूर्ण कीडे नष्ट हो जावें ॥

सुवर्चकादि चूर्ण ।

सुवर्चिकारामठपत्रिकाह्वविडंगबाल्हीककणाग्निविश्वा ।
यवानिकाग्रंथिकभद्रमुस्ता तक्रेण चूर्णं कृमिकोटिहारि ॥

अर्थ–सज्जीखार, हींग, जावित्री, वायविडंग, केशर, पीपल, चीतेकी छाल, सोंठ, अजमायन, पीपरामूल और नागरमोथा इनका चूर्ण छाछके साथ पीवे तो कोटयवधि कृमिका नाश होवे ॥

जूंआ इत्यादिकों पर तैल।

चित्रकं दंतिनीमूलं कोशातकिसमन्वितम्।
कल्कं पिष्ट्वा च तैलं च केशशत्रुविनाशनम्॥

अर्थ-चित्रक, दंतीकी जड, कडुई तोरई इनका कल्क डालके तेल बनावे इस तेलके लगानेसे जूंआ, लीख नष्ट होवे॥

विडंगादि तैल।

सविडंगं जतुशिलया सिद्धं सुरभेर्जलेन कटुतैलम्।
निखिला नयंति विनाशं लिक्षासहिताश्च वै यूकाः॥

अर्थ-वायविडंग, शिलाजीत और गोमूत्र इनमें सरसोंका तेल डालके तैलविधिसे सिद्ध करे। यह तेल लीख और जूंआ इनको नाश करे॥

कपिलाचूर्ण।

कांपिल्यचूर्णकर्षार्धं गुडेन सह भावितम्।
पातयेत्तु कृमीन्सर्वानुदरस्थान्न संशयः॥

अर्थ-कबीलेका चूर्ण आधा तोला लेकर गुडमें मिलायके खावे तो पेटकी यावन्मात्र कृमि हैं सब निकल जावें इसमें संशय नहीं है॥

निंबादिरस।

निंबपत्रसमुद्भूत रसं क्षौद्रयुतं पिबेत्।
धत्तूरपत्रजं वापि कृमिनाशनमुत्तमम्॥

अर्थ-कडुए नीमके पत्तोंका रस अथवा धतूरेके पत्तोंके रसको सहत मिलायके पीवे तो कृमिरोग नष्ट होवे॥

हरीतकीचूर्ण।

हरीतकी चैव तथा हरिद्रा सौवर्चलं चैव समं विचूर्णितम्।
इंद्रवारुणिजलेन भावितं कीटसंघविनिवारणं परम्॥

अर्थ-हरड, हलदी और संचर निमक ये समान भाग लेवे चूर्ण कर उसमें इंद्रायनके काढेकी भावना देवे। यह चूर्ण कृमिसमुदायको नाश करे॥

सावित्रवटक।

पलंकषापले द्वे च कार्ष्णायसपलद्वयम्। पथ्यामृताक्षधात्रीणां

पृथगेकैकशः पलम् ॥ पूतीकचव्यव्योषाग्निकारवीकृमिनाशनैः। चूर्णितैरर्धपलकैस्तिलतैलं पलद्वयम् ॥ त्रिफलाया रसप्रस्थे खंडं प्रस्थयुगं भवेत् । दात्रीं प्रलेपात्पाकश्च चातुर्जातकसंयुतम् ॥ सावित्रवटका ह्येते यथाग्निबलभक्षिताः । कृमिकोष्ठाग्निदौर्बल्यशोथे गुल्मोदरव्रणान् ॥ कामलापांडुरोगार्शोभगंदरगदव्रणान् । निहंत्येतद्धि संधिस्थं बलस्थैर्यसुखप्रदम् ॥ वायुमेहप्रशमनाश्चक्षुषः प्रीतिवर्धनाः । भवंत्यतिस्निग्धभुजो वातातपनिषेविणः ॥

अर्थ-ढाकके बीज ८ तोले, लोहेकी भस्म ८ तोले, हरड, गिलोय, बहेडा, आवला ये प्रत्येक चार २ तोले, तथा पूतीकरंज, चव्य, सोंठ, काली मिरच, पीपल, चित्रक, अजमायन, वायविडंग ये प्रत्येक दो दो तोले और तिलोंका तेल ८ तोले, त्रिफलेका कांढा अथवा त्रिफलेका रस १६ तोले, मिश्री ३२ तोले इन सबको एकत्र कर जबतक कलछीसे न लिपटे तबतक पकावे, जब कलछीसे लिपटने लगे तब उतार लेवें और इसमें चातुर्जात (दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर ये) डालके मिलाय देवे इसको सावित्रवटक कहते हैं। यह अग्नि और बलाबल विचारके देवे तो कृमि, मंदाग्नि, दुर्बलता, सूजन, उदररोग, व्रण, कामला, पांडुरोग, बवासीर, भगंदर इनका नाश करे । तथा अवस्था, बल और स्थिरता इनको करै तथा दुष्ट अधोवायु और प्रमेहको नाश करे । तथा नेत्रोंको हितकारी है इस पर स्निग्ध भोजन और पवन तथा धूप इनका सेवन करना चाहिये ॥

विशालादिधूप ।

विशालायाः फलं पक्कं तप्तलोहोपरि क्षिपेत् ।
तद्धूमो दंतलग्नश्चेत् कीटानां पातनः परः ॥

अर्थ-इन्द्रायनके पके हुए फलोंको गरम तवे पर गेरे इसका धूआं दांतोंको देवै तो दांतोंमें जो कीडा होता है वह तत्काल मरके गिर पडे यह प्रयोग परमोत्तम है ॥

अष्टसुगंधधूप ।

लाक्षा भल्लातकश्च श्रीवासः श्वेतापराजिता । अर्जु-

नस्य फलं पुष्पं विडंग सर्जगुग्गुलुः ॥ एभिः कृतेन धूपेन शाम्यंते निहिते गृहे । भुजंगमूषकादंशाघुणा-मशकमत्कुणाः ॥

अर्थ-लाख, भिलाए, श्रीवास (सरलधूप), सपेद कोयलकी जड, कोहवृक्षके फल और फूल, वायविडंग, राल और गूगल इनकी धूनी घरमें देवे तो सांप, मूंसे, डाँस, मच्छर, छोटे कीडे और खाटके खटमल ये सब मर जावें ॥

ककुभादिधूप ।

ककुभकुसुमं विडंगं लांगली भल्लातकं तथोशिरम् । श्री-वेष्टकं सर्ज्जरसं चंदनमथ कुष्ठमष्टमं दद्यात् ॥ एष सुगंधो धूपः सकृत्क्रमीनां विनाशकः प्रोक्तः । तथा स मत्कुणा-नां शिरासि च गात्रेषु यूकानाम् ॥

अर्थ-कोहवृक्षके फूल, वायायविडंग, पिठवन, भिलाए, नेत्रवाला, राल, चंदन, कूठ यह सुगंधधूप एकवारके देनेसे कृमिनाश करे तथा यह धूप शय्या (सेज) में देनेसे खटमल मर जावे और अपनी देहको यह धूनी देवे तो मस्तकके जूंआ, लीख और देहकी जमजूआ आदिको नष्ट करे है ॥

कृमिरोगपर पथ्य ।

आस्थापनं कायशिरोविरेचनं धूपः कफघ्नश्च शरीरशोधनम् ।
चिरंतना वैणवरक्तशालयः पटोलवेत्राग्ररसोनवास्तुकम् ॥
हुताशमन्दारदलानि सर्षपा नवीनमोचं बृहतीफलान्यपि ।
तिक्तानि नालीचफलानि मौषिकं माषं विडंगं पिचुमन्दपल्लवम् ॥
तैलं तिलानामथ सर्षपोद्भवं सौवीरसूक्तं च तुषोदकं मधु ।
पचेलिमं तारमरुष्करं गवां मूत्रं च तांबूलसुरामृगं रजः ॥
औष्ट्राणि मूत्राज्यपयांसि रामठं क्षारोजमोदा खदिरश्च वत्सकम् ।
जंबीरनीरं सुषवी यवानिका साराः सुराह्वागुरुशिंशिपोद्भवाः ॥
तिक्तः कषायः कटुको रसोऽयं वर्गो नराणां कृमिरोगिणां सुखः ॥

अर्थ-आस्थापनबस्ती, शरीर और मस्तकका विरेचन अर्थात् जुलाब देकर शुद्ध

करना, धूमपान, कफनाशक पदार्थ, देहका शोधन, बहुत दिनके बांसके बीज, (वा सांठी चावल), लाल चावल, परवल, वेतके अग्रभाग, लहसन, बथुआ, चीता, मंदार (आक) के पत्ते, सरसों, नवीन केला, कटेरीके फल, कडुए पदार्थ, नालीके फल (वा तालीसपत्र), मूसेका मांस, उडद, वायविडंग, नीमके पत्ते (हरड) तिल और सरसोंका तेल, कांजी, दहीका तोड, तुषोदक, सहत, पचेलिम, चांदीके वर्क, भिलाए, गोमूत्र, पानका बीडा, मदिरा, कस्तूरी, ऊँटका मूत्र, घी और दूध, हींग, क्षार, अजमोद, खैरसार, कूडाकी छाल, जँभीरी नींबूका रस, सुषवी (कलौंजी), अजमायन, देवदारु, अगर और सीसोंका खार, कडुए और कषेले तथा चरपरे सब रस यह संपूर्ण वर्ग कृमिरोगहरणकारी जानना ॥

अपथ्य ।

छर्दिं च तद्वेगविधारणं च विरुद्धपानाशनमह्नि निद्राम् । द्रवं च पिष्टान्नमजीर्णभोजनं घृतानि माषान्दधिपत्रशाकम् ॥ मांसं पयोम्लं मधुरं रसं च कृमीन् जिघांसुः परिवर्जयेत्तु ॥

अर्थ-वमन करना, तथा वमनके वेगको रोकना, विरुद्ध अन्न पान, दिनमें निद्रा, द्रवपदार्थ, पिष्टान्न (मैदा चून), अजीर्णमें भोजन करना, घी, उडद, दही, पत्तोंका साग, मांस, दूध, खटाई और मीठा रस ये कृमिनाशकर्त्ता प्राणीको त्याग करने योग्य हैं ॥

दूसरा प्रकार ।

शीतांबु मधुरक्षीरं दधिक्षीरघृतादिकम् ।
सौवीरं शाकपत्रांश्च वर्जयेत्कृमिवान्नरः ॥

अर्थ-शीतल जल, मीठा दही, दही, दूध और घृतादिक, कांजी, पत्तेके साक इनको कृमिरोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे कृमिरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ॥

पांडुरोगकर्मविपाकः ।

देवद्विजद्रव्यहारी पांडुरोगी भवेन्नरः ।
कृच्छ्रातिकृच्छ्रे कुर्य्याच्च चांद्रायणमतंद्रितः ॥
कुर्यात्कूष्माण्डहोमं च स्वर्णचंद्रेण वाससी ।
ब्राह्मणेभ्यो यथाशक्ति पांडुरोगस्य शांतये ॥

अर्थ-देवता, ब्राह्मण इनके द्रव्य हरण करनेसे यह प्राणी इस जन्ममें पांडुरोगी होता है, इस पापके प्रायश्चित्त करनेको कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र चांद्रायण व्रत करे अथवा कूष्मांडहोम अथवा सुवर्णका चंद्रमा और वस्त्र दान करे तथा यथाशक्ति द्रव्य देवे तो यह प्राणी पांडुरोगसे छूट जावे ॥

शिरोवेदनासहित पांडुरोगहरण ।

अग्निष्टोमादिकर्माणि प्रक्रम्य न समापयेत् ।
स पांडुरोगा भवति शिरोवेदनवांस्तथा ॥
कृच्छ्रातिकृच्छ्रं कुर्य्याच्च चांद्रायणमतंद्रितः ।
शतं च भोजयेद्विप्रान्मिष्टान्नेन यथेप्सितम् ॥

अर्थ-जो अग्निष्टोमादि कर्मका प्रारंभ करके समाप्ति नहीं करे वह मस्तकपीडावाला पांडुरोगी होता है उसको कृच्छ्र अतिकृच्छ्र चांद्रायण व्रत करना चाहिये अथवा सौ ब्राह्मणोंको मिठाईसे तथा इच्छित भोजन करावे तो यह प्राणीका पांडुरोग जाता रहे ॥

पांडुरोगनिदान ।

पांडुरोगाः स्मृताः पंच वातपित्तकफैस्त्रयः ।
चतुर्थः सन्निपातेन पंचमो भक्षणान्मृदः ॥

अर्थ-मलसे प्रगट कृमिरोग पांडु (पीलिया) रोगको प्रगट करे है इसी कारण कृमिरोगके अनन्तर पांडुरोगका निदान कहे हैं तहां प्रथम पांडुरोगकी संख्यारूप सम्प्राप्ति कहते हैं १ वातका, २ पित्तका, ३ कफका, ४ सन्निपातका और ५ मिट्टीके खानेसे ऐसे पाण्डुरोग पांच प्रकारका कहा है ॥

निदानपूर्वकसंप्राप्ति ।

व्यवायमम्लं लवणानि मद्यं मृदं दिवास्वप्नमतीव तीक्ष्णम् ।
निषेव्यमाणस्य विदूष्य रक्तं कुर्वंति दोषास्त्वचि पांडुभावम् ॥

अर्थ-अति मैथुन, खट्टे पदार्थका भोजन, नोनका पदार्थ खानेसे, वहुत मद्य पीनेसे, मिट्टी खानेसे, दिनमें सोनेसे अत्यंत तीखा पदार्थ खानेसे इन कारणोंसे तीनों दोष रुधिरको बिगाड देहकी त्वचाको पीले रंगकी कर देते हैं इस जगह रुधिरका तौ उपलक्षणमात्र है रक्तके कहनेसे त्वचा, मांस इनको दूषित करते हैं ॥

पूर्वरूप ।

त्वक्स्फोटानिष्ठीवनगात्रसादो मृद्भक्षणप्रेक्षणकूटशोथाः ।
विण्मूत्रपीतत्वमथाविपाको भविष्यतस्तस्य पुरःसराणि ॥

अर्थ–त्वचाका फटना, मुखसे वारंवार थूकना, अंगोंका जकडना, मिट्टी खानेकी इच्छा, नेत्रोंपर सूजन, मलमूत्र पीले हों अन्नका परिपाक न होय ये लक्षण पांडुरोग प्रगट होनेवाला, होय है तब होते हैं ॥

पांडुरोगचिकित्सा ।

साध्यं च पांड्वामयिनं समीक्ष्य स्निग्धं घृतेनोर्ध्वमधश्च शुद्धम् । संपादयेत्क्षौद्रघृतप्रगाढैर्हरीतकीचूर्णमयप्रयोगैः ॥ पिबेद्घृतं वा-रजनीविपक्कं यत्त्रैफलं तैल्वकमेकमेव । विरेचनं द्रव्यकृतं पिबेद्वा योगांश्च वै रेचनिकान्घृतेन ॥ विधिः स्निग्धोऽत्र वातोत्थे तिक्तः शीतश्च पैत्तिके । श्लैष्मिके कटुरूक्षोष्णः कार्यो मिश्रस्तु मिश्रजे ॥

अर्थ–यदि पांडुरोगी साध्य होवे तो उसको घी पिलायके स्निग्ध करे तथा रेचन और वमन कराकर उसको शुद्ध करे फिर सहत, घी और हरड ये जिस चूर्णमें अधिक होवे ऐसी औषधोंका उपचार करे, तथा हलदी डालके औटाये हुए घीको पीवे किंवा त्रिफला और इनसे सिद्ध करा हुआ घी पिलावे अथवा किसी एक औषधसे दस्त लाने-वाली औषध सिद्ध करके पीवे अथवा रेचक औषध घृतके साथ पीवे । अब सामान्य उपचार कहते हैं कि वात पांडुरोग पर स्निग्ध, पित्त पांडुरोग पर कडुए और शीतल तथा कफपांडुरोग पर तीक्ष्ण रूक्ष और उष्ण, द्वंद्वज आतिसार पर मिश्रित यत्न करने चाहिये ॥

वातपांडुनिदान ।

त्वङ्मूत्रनयनादीनां रूक्षकृष्णारुणात्मता ।
वातपांड्वामये कंपतोदानाहभ्रमादयः ॥

अर्थ–वातके पांडुरोगमें त्वचा, मूत्र, नेत्र इनमें रूखापना, कालापना और लाली होय है तथा कंप सुई छेदनेकासा चमका, अफरा, भ्रम, आदि शब्दसे भेद और शूलादिक भी होते हैं ॥

मंडूराद्यरिष्ट ।

मण्डूरस्य तु शुद्धस्य तुलार्द्धं परिकीर्तितम् । तद्वल्लोहस्य पत्राणि तिलोत्सेधप्रमाणतः ॥ पुराणगुडपंचाशत्कोलप्रस्थत्रयं तथा । निकुंभचित्रकाभ्यां च पले द्वे द्वे सुचूर्णिते ॥ पिप्पलीनां विडंगानां कुडवं च पृथक्पृथक् । त्रींश्चापि त्रिफलाप्रस्थाञ्जलद्रोणे समावपेत् ॥ अर्धमासस्थितो धान्ये पेयोरिष्टप्रमाणतः । दोषानुभयतः स्राव्यपांडुरोगं नियच्छति ॥ कृमीनर्शांसि कुष्ठं च कासं श्वासकफामयान् । एषोरिष्टस्तु मंडूरः सर्वपाण्ड्वामयापहः ॥

अर्थ-शुद्ध मंडूर २०० तोले, तिलके बराबर मोटे लोहेके पत्र २०० तोले, पुराना गुड २९२ तोले, जलवेत और चित्रकका चूर्ण प्रत्येक ८ तोले, पीपल और वायविडंग प्रत्येक १६ तोले, हरड ६४ तोले, बहेडे ६४ तोले, आंवला ६४ तोले ले इन सब औषधोंको १०२४ तोले पानीमें डालके पंद्रह दिन धानकी राशिमें धर रक्खे फिर जिस प्रकार अरिष्ट देनेका प्रमाण लिखा है उस प्रकार देवे तो यह दोनों मार्गोंसे दोषोंको निकाल पांडुरोगका नाश करे उसी प्रकार कृमिरोग, बवासीर, कोढ, खांसी, श्वास और कफरोग इनको यह नाश करे। इसको अरिष्टमंडूर कहते हैं यह सर्व प्रकारके पांडुरोगोंका नाशक है ॥

पित्तपांडुनिदान ।

पीतमूत्रसकृन्नेत्रो दाहतृष्णाज्वरान्वितः ।
भिन्नविट्कोऽतिपीताभः पित्तपाण्ड्वामयी नरः ॥

अर्थ-पित्तपांडुरोगीके ये लक्षण होते हैं मल, मूत्र और नेत्र पीले हों, दाह, प्यास, ज्वर इनसे पीडित हो, मल पतला हो और उस रोगीके देहकी कांति अत्यंत पीली होती है ॥

आमलक्यवलेह ।

रसमामलकानां तु संशुद्धं यंत्रपीडितम् । द्रोणं पचेच्च मृद्वग्नौ तत्रेमानि प्रदापयेत् ॥ चूर्णितं पिप्पलीप्रस्थं मधुकं द्विपलं तथा । प्रस्थं गोस्तनिकायाश्च द्राक्षायाः कल्कपेषितम् ॥ शृंगवेरपले द्वे तु तुगाक्षीर्याः फलद्वयम् । तुलार्धं शर्करायाश्च घनीभूतं समु-

द्धरेत् ॥ मधुप्रस्थसमायुक्तं लेहयेत्पलसंमितम् । हलीमकं कामलां च पांडुत्वं चापकर्षति ॥

अर्थ–आमलोंका रस शुद्ध १०२४ तोले लेके अग्निपर चढावे उसमें पीपलका चूर्ण ६४ तोले, मुलहटी ८ तोले, काली मुनक्का दाख बीज निकाली हुई और पीसी हुई ६४ तोले, सोंठ और वंशलोचन ८ तोले तथा खांड २०० तोले इतने पदार्थ डालके गाढा करे जब गाढा हो जावे तब उतार लेवे इसमें ६४ तोले सहत डालके धर देवे चार तोलेके प्रमाण नित्य खावे तो हलीमक, कामला और पांडुरोग ये दूर हों ॥

दुग्धयोग ।

लोहपात्रस्थितं क्षीरं सप्ताहं पथ्यभोजनम् ।
पिबेत्पाण्ड्वामयी शोषी ग्रहणीदोषपीडितः ॥

अर्थ–लोहेके पात्रमें औटाये धरे हुए दूधको सात दिन पीवे और पथ्य करे तो पांडुरोग, क्षय और संग्रहणी ये रोग दूर होवें ॥

कफपांडुनिदान ।

कफप्रसेकश्वयथुस्तंद्रालस्यातिगौरवैः ।
पांडुरोगी कफाच्छुक्लैस्त्वङ्मूत्रनयनाननैः ॥

अर्थ–मुखसे कफका गिरना, सूजन, तन्द्रा, आलस्य, शरीरका भारी होना, त्वचा, मूत्र, नेत्र, मुख इनका सफेद होना इन लक्षणोंसे कफका पांडुरोग जानना ॥

दशमूलादिकाढा ।

द्विपंचमूलाक्कथितं सविश्वं कफात्मके पांडुगदे पिबेत्तत् ।
ज्वरेतिसारे श्वयथौ ग्रहण्यां कासेऽरुचौ कंठहृदामयेषु ॥

अर्थ–दशमूल और सोंठ इनका काढा कफयुक्त पांडुरोग, ज्वर, अतिसार, सूजन, संग्रहणी, खांसी, अरुचि, कंठरोग और हृदयरोग इनको नाश करनेको पिलावे ॥

नागरादियोग ।

नागरं लोहचूर्णं वा कृष्णां पथ्यामयोष्मजाम् ।
गुग्गुलं वाथ मूत्रेण कफपाड्वामयी नरः ॥

अर्थ–सोंठ और लोहभस्म अथवा पीपल, हरड और लोहभस्म, शीलाजीत अथवा गूगल, गोमूत्र ये सब योग कफ पांडुरोगके नाशक हैं ॥

लोहभस्मयोग ।

अतिशुद्धमयोभस्म सर्पिः क्षौद्रयुतं लिहेत् ।
पांडुरोगस्य नाशाय कामलानां च सर्वशः ॥

अर्थ-अत्युत्तम लोहभस्म सहत और घी इनके साथ देवे तो पांडुरोग और कामला इनका नाश करे ॥

मधुमंडूर ।

गृहीत्वा भिषक्प्रस्थमंडूरभागं शृते त्रैफले मर्दयित्वा च यामम् ।
पुटे पाचयेद्यामयुग्मं कृशानौ पुटानीह देयानि चंद्राक्षिवारम् ॥
तथा धेनुमूत्रे कुमारीरसे च विधेयश्च पंचामृते योगराजः । भवे-
त्सिंधुनागैः पुटैः सिद्धिदोऽयमचिंत्यप्रभावश्च मंडूर एषः ॥ मधु-
मंडूरक एष कणामधुना चिरपांडुगदं ननु हे गद्गिनः । जनको
रुधिरस्य निहंति परं विविधार्तिहरस्त्वनुपानबलैः ॥

अर्थ-६४ तोले लोहकी कीटका चूर्ण त्रिफलेके काढेमें डालके प्रहरभर खरल करे फिर सरावसंपुटमें रखके दो प्रहर अग्निपुट देवे । इस प्रकार इकीस पुट देवे फिर गोमूत्र ग्वारपठेका रस और पंचामृत इनके काढेकी प्रत्येककी इकीस २ पुट देवे अर्थात् ८४ पुट देनेसे सर्व सिद्धि देनेवाला अचिंत्यप्रभाव ऐसा यह मंडूर सिद्ध होवे इस प्रकार सिद्ध हुआ मधुमंडूर पीपल और सहत इनके साथ छः रत्ती सेवन करनेसे पांडुरोगको तत्काल नष्ट करे तथा देहमें रुधिर उत्पन्न करे हैं औरभी अनुपानभेदोंकरके अनेक प्रकारके रोग दूर करे ॥

मंडूरवटक ।

सुराब्ददार्वीकटुषट्कताप्यं वेल्लं वरा चेति समांशचूर्णम् । मंडूर-
भागद्वयमष्टमूत्रे पक्त्वा गवां तक्रसमं च देयम् ॥ कामलापां-
डुमेहार्शःशोफकुष्ठकफामयान् । ऊरुस्तंभमजीर्णं च प्लीहानां
नाशयोद्धि च ॥

अर्थ-देवदारु, नागरमोथा, दारुहलदी, सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, चित्रक पीपरामूल, सुवर्णमाक्षिककी भस्म, वायविडंग और त्रिफला ये सब औषध एक एक

---

१ सोंठ, सपेदमूसली, गिलोय, शतावर और गोखरू इन पांच औषधोंकी पञ्चामृत संज्ञा है।

भाग लेवे और मंडूरभस्म २ भाग ले सबका चूर्ण एकत्र करके अष्ट[१] प्रकारके मूत्रोंमें अथवा गौकी छाछमें मिलायके पीवे तो कामला, पांडुरोग, प्रमेह, बवासीर, सूजन, कोढ, कफरोग, ऊरुस्तंभ, अजीर्ण, प्लीहा इनका नाश होवे ॥

मंडूरलवण ।

कृत्वाग्निवर्णं मलमायसं तु मूत्रेऽभिषिंचेद्बहुशो गवां च ।
तत्रैव सिंधूत्थसमं विपाच्यं निरुद्धधूमं च बिभीतकाग्नौ ॥
तक्रेण पीतं मधुनाथवापि बिभीतकाख्यं लवणं प्रयुक्तम् ।
पांड्वामयिभ्यो हितमेतदस्मात्पांड्वामयघ्नं नहि किंचिदन्यत् ॥

अर्थ–लोहेकी कीटीको अग्निमें अग्निके समान लाल करके गोमूत्रमें भिगो देवे इस प्रकार अनेक वार करे फिर सैंधानिमक और वह लोहकीटको गोमूत्रमें डालके धूंआ न निकले इस प्रकार भिलाएकी अग्निसे पचावे इसको बिभीतकाख्यलवण कहते हैं इसे छाछके साथ अथवा सहतके साथ पीवे यह पांडुरोग पर हितकारी है इसके समान पांडुनाशक दूसरी औषध नहीं है ॥

सन्निपातपांडुनिदान ।

सर्वान्नसेविनः सर्वे दुष्टा दोषास्त्रिदोषजम् ।
लिंगैः कुर्वंति दोषाणां पांडुरोगं सुदारुणम् ॥

अर्थ–जो प्राणी सर्व प्रकारके (खट्टे चरपरे आदि) रसोंका सेवन करता है उसके तीनों दोष कुपित हो त्रिदोषके लक्षणवाले ऐसे त्रिदोषज पांडुरोगको करे है ॥

पांडुका असाध्य लक्षण ।

ज्वरारोचकहृल्लासच्छर्दितृष्णाक्लमान्वितः ।
पांडुरोगी त्रिभिर्दोषैस्त्याज्यः क्षीणो हतेंद्रियः ॥

अर्थ–ज्वर, अरुचि, ओकारी, प्यास और तृष्णा तथा वमन इतने उपद्रवयुक्त जो त्रिदोषजन्य पांडुरोगी और क्षीण हो गया हो और जिस रोगीके इन्द्रियोंकी अपने अपने विषय ग्रहण करनेकी शक्ति जाती रही हो ऐसे रोगीको वैद्य त्याग दे ॥

असाध्यलक्षण ।

शूनाक्षिकूटगंडभ्रूः शूनपन्नाभिमेहनः । क्रिमिकोष्ठोऽतिसार्येत मलं चासृक्कफान्वितम् ॥ पांडुरोगाश्चिरोत्पन्नः खरीभूतो न सिध्यति ।

---

१ गो, भैंस, बकरी, भेड, गधा, घोडा, ऊँट और हाथी इनके मूत्रोंकी अष्टमूत्र संज्ञा है ।

कालप्रकर्षाच्छूनांगो यो वा पीतानि पश्यति ॥ बद्धाल्पविट्सह-रितं सकफं योऽतिसार्यते । दीनः श्वेतादिदिग्धांगच्छर्दिमूर्च्छातृ-डर्दितः ॥

अर्थ-नेत्र, कपोल, भृकुटी, पैर, नाभि और लिंग इनमें सूजन हो और कोठेमें कृमि पड जाय तथा रुधिर और कफ मिला दस्त उतरे, सब पांडुरोगोंमें जब पेटमें कृमि पड जाय हैं तब ये पूर्वोक्त लक्षण होते हैं यह (जैज्जट आचारीका मत है और कोई कहता है ये मृत्तिकाजन्य पांडुरोगके लक्षण हैं क्योंकि मृत्तिकाजन्य पांडुरोग लक्षणके अनंतर लिखे हैं परंतु विदेहने तो ये मृत्तिकाजन्य पांडुरोगके लक्षण स्पष्ट कहे हैं) बहुत दिनका पांडुरोग-काल बहुत बीतनेसे पुराना हो जाय है सो अच्छा नहीं होय । अथवा-सब देहमें सूजन आ गई होवे और उसको पदार्थ पीले दीखें सोभी असाध्य है। अथवा-जिस मनुष्यका बंधा हुआ मल थोडा हरे रंगका कफमिश्रित उतरे सोभी असाध्य है । अथवा-जो पुरुष दीन कहिये ग्लानियुक्त हो: और जिसकी देहका श्वेत वर्ण हो और वमन, मूर्च्छा, प्यास इनसे पीडित होवे सो पांडुरोगी नष्ट होवे ॥

दूसरा प्रकार ।

सनास्त्यसृक्क्षयादींश्च पांडुश्वेतत्वमाप्नुयात् । पांडुदंतनखो यस्तु पांडुनेत्रश्च यो भवेत् ॥ पांडुसंघातदर्शी च पांडुरोगी विनश्यति ॥

अर्थ--जो रुधिरक्षय होनेसे पांडुरोग उत्पन्न होय सोभी असाध्य है जिसके दांत, नख और नेत्र पीले होंय वह रोगी असाध्य है। जिसको सब पदार्थ पीलेही पीले दीखें वह रोगी मरे । हाथ, पैर, शिर इनमें सूजन हो और जिसका मध्य पतला होय ऐसा पांडुरोगी असाध्य है, इस विपरीत साध्य है ॥

तीसरा प्रकार ।

अंतेषु शूनं परिहीनमध्यं म्लानं तथांतेषु च मध्यशूनम् । गुदे च शेफस्यथ मुष्कयोश्च शूनं प्रताम्यं तमसंज्ञकल्पम् ॥ वि-वर्जयेत्पांडुकिनं यशोर्थी तथातिसारज्वरपीडितं च ॥

अर्थ--जिस रोगीके देहके मध्यमें सूजन हो और हाथ, पग, शिर ये सूख जाय तथा गुदा, लिंग इनमें सूजन होय तथा मरेके समान हो गया होय ऐसे पांडुरोगीको जिस वैद्यको यशकी इच्छा हो सो त्याग दे । उसी प्रकार अतिसार और ज्वर इनसे पीडित रोगीको वैद्य त्याग देवे ॥

त्रिफलादिलेह ।

त्रिफलायास्त्रयो भागास्त्रयस्त्रिकटुकस्य च। भागश्चित्रकमूलस्य विडंगानां तथैव च ॥ पंचाश्मजतुनो भागास्तथा रूप्यमलस्य च। शुद्धलोहस्य रजसो भागाश्चाष्टौ प्रकल्पयेत् ॥ अष्टौ भागाः सतापस्तु तत्सर्वं मधुसंयुतम् । श्लक्ष्णचूर्णं सुसंस्थाप्यमायसे भाजने शुभे ॥ उदुंबरसमां मात्रां ततः खादेद्यथाग्निना । दिने दिने प्रयोक्तव्यं जीर्णभोज्यं यथोचितम् ॥ वर्जयित्वा कुलित्थांस्तु काकमाचीकपोतकान् । पांडुरोगं विषं कासं यक्ष्माणं विषमज्वरम् ॥ कुष्ठानि जठरं मेहं श्वासं शोफमरोचकम्। विशेषाच्च ह्यपस्मारं कामलागुदजानि च ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, चीतेकी छाल, वायविडंग ये सब औषध एक २ भाग लेवे, शिलाजीत, रूपेकी भस्म और मंडूर ये पांच २ भाग लेवे, शुद्ध लोहकी भस्म और सुवर्णमाक्षिक ये प्रत्येक आठ २ भाग लेवे इन सबका चूर्ण सहत डालके सबको लोहेके पात्रमें भर देवे, फिर इसमेंसे अग्निबल विचारके एक तोले पर्यंतकी मात्रा प्रतिदिन देवे, जब पच जावे तब यथायोग्य पथ्य देवे परंतु कुलथी, मकोय, कबूतर ये खाना वर्जित है। पांडुरोग, विष, खांसी, राजरोग, विषमज्वर, कोढ, जलंधर, प्रमेह, श्वास, सूजन, अरुचि, मृगी, कामला और बवासीर ये रोग नाश करे ॥

फलत्रिकादिकाढा ।

फलत्रिकामृता वासा तिक्ता भूनिंबनिंबजः ।
क्वाथः क्षौद्रयुतो हन्यात्पांडुरोगं सकामलम् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आमला, गिलोय, अडूसा, कुटकी, चिरायता, नीमके पत्ते इन सबके काढेमें सहत डालके पीवे तो पांडुरोग और कामला इनका नाश करे ॥

पुनर्नवादिकाढा ।

पुनर्नवानिंबपटोलशुंठी तिक्तामृता दार्व्यभयाकषायः ।
सर्वांगशोफोदरपांडुरोगं स्थौल्यप्रसेकोर्ध्वकफामयेषु ॥

अर्थ—सांठीकी जड, नीमकी छाल, पटोलपत्र, सोंठ, कुटकी, गिलोय, दारुहलदी और हरड इनका काढा सर्वांगकी सूजन, जलंधर, पांडुरोग, स्थूलता, मुखसे पानीका गिरना और कफरोग इनका नाश करे ॥

वासादिकाढा ।

वासामृतानिंबकिरातकट्वीकषायकोऽयं समधुर्निपीतः ।
सकामलं पांडुमयास्रपित्तं हन्याद्धलीमं च कफादिकान् गदान् ॥

अर्थ—अडूसा, गिलोय, नीमकी छाल, चिरायता और कुटकी इनका काढा, सहत और घी डालके देवे तो कामला, पांडुरोग, रक्तपित्त, हलीमक और कफादिक व्याधि इनको नाश करे ॥

दार्व्यादिवटक ।

दार्वीत्वङ्माक्षिको धातुग्रंथिको देवदारु च । एषां द्विदलिकान्भागान्कृत्वा चूर्णं पृथक् पृथक् ॥ मंडूरं द्विगुणं चूर्णं शुद्धमंजनसन्निभम् । मूत्रे चाष्टगुणे पक्त्वा तस्मिंस्तत्प्रक्षिपेन्नरः ॥ उदुंबरसमान्कृत्वा वटकांस्तान्यथाग्नि च । उपयुंजीत तक्रेण जीर्णे सात्म्यं च भोजनम् ॥ मंडूरवटका ह्येते प्राणदाः पांडुरोगिणः । कुष्ठानि प्रवरं शोथमूरुस्तंभं कफामयान् ॥ अर्शांसि कामलामेहं प्लीहानं शमयंति च ॥

अर्थ—दारुहलदी, दालचीनी, सोनामक्खीकी भस्म, पीपरामूल, देवदारु ये औषध आठ २ तोले ले और मंडूर १६ इन सबको एकत्र करके आठ गुणे गोमूत्रमें पचाके इसमेंसे एक २ तोलेकी गोली करे इसको रोगीका बलाबल विचारके देवे इसके ऊपर पुराने और आत्माको हितकारी ऐसे पदार्थ पथ्यमें देवे यह मंडूरवटक पांडुरोगीको प्राणदायक है तथा कोढ, सूजन, ऊरुस्तंभ, कफरोग, बवासीर, कामला, प्रमेह और प्लीहा इनको शांत करे ॥

किरातादिमंडूर ।

किराततिक्तं सुदारुदार्वी मुस्तागुडूची कटुकापटोलम् । दुरालभापर्पटकं सनिंबा कटुत्रिकं वह्निफलात्रिकं च ॥ फलं विडंगस्य समांशकानि सर्वैः समं चूर्णमथायसं च ॥ सर्पिर्मधुभ्यां वटिका विधेया तत्रानुपानाद्भिषजा प्रयोज्या ॥ निहंति पांडुं च हलीम-

कं च शोथं प्रमेहं ग्रहणीरुजं च। श्वासं च कासं च सरक्तपित्त-मर्शांस्यथोर्वोग्रहमामवातम्॥ व्रणांश्च गुल्मान् कफविद्रधींश्च श्वित्रं च कुष्ठं सततप्रयोगात्॥

अर्थ-चिरायता, देवदारु, दारुहलदी, नागरमोथा, गिलोय, कुटकी, पटोलपत्र, धमासा, पित्तपापडा, नीमकी छाल, सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक, हरड, बहेडा, आमला और वायविडंग ये सब समान भाग ले लोहभस्म सब चूर्णके समान लेके उसकी सहत और घीके साथ गोली बनावे इसको अनुपानके साथ देवे तो पांडुरोग, हलीमक, सूजन, प्रमेह, संग्रहणी, श्वास, खांसी, रक्तपित्त, बवासीर, ऊरुग्रह, आमवात, व्रण, गोला, कफरोग, विद्रधि और सपेद कोढ इन सबको नष्ट करे॥

अभयादिमोदक।

अयस्तिलत्र्यूषणकोलभागैः सर्वैः समं माक्षिकधातुचूर्णम्। तैर्मोदकः क्षौद्रयुतो हि भक्तः पांड्वामये दूरगतोऽपि शस्तः॥

अर्थ-लोहभस्म, तिल, सोंठ, मिरच, पीपल और बेरके फलकी छाल ये समान भाग लेवे इन सबकी बराबर सुवर्णमाक्षिककी भस्म डालके गोली बनावे इसको सहतमें मिलायके खावे तो असाध्यभी पांडुरोग नष्ट होवे॥

पाण्ड्वारिरस।

रसगंधाभ्रलोहैक्यं पाण्ड्वारिः पुटितं त्रिधा।
कुमार्यास्तु चतुर्वल्लं पांडुकामलपूर्वहृत्॥

अर्थ-पारा, गंधक, अभ्रकभस्म, लोहभस्म ये समान भाग ले इनको घीगुवारके रसकी तीन भावना देवे तो यह पांड्वारिरस सिद्ध होय इसको चार वल्ल (१२ रत्तीके) प्रमाण सेवन करनेसे कामला और पांडु इनका नाश करे॥

पुनर्नवादिवटक।

पुनर्नवात्रिवृद्व्योषविडंगं दारुचित्रकम्। कुष्टं हरिद्रे त्रिफला दंती चव्यं कलिंगकम्॥ कटुकापिप्पलीमूलं मुस्तं शृंगी च कारवी। यवानी कट्फलं चेति पृथक्पलमितं मतम्॥ मंडूरं द्विगुणं चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत्। गुडवद्वटकान्कृत्वा तक्रेणालोड्य तान्पिबेत्॥ पुनर्नवादिमंडूरवटोऽश्विभ्यां विनिर्मितः। पांडुरोगं पुराणं च कामलां च हलीमकम्॥ श्वासं कासं च यक्ष्माणं

ज्वरं शोथं तथोदरम् । शूलप्लीहप्रदध्मानमर्शांसि ग्रहणीं कृमीन्॥ वातरक्तं च कुष्ठं च सेवनान्नाशेयद्ध्रुवम् ॥

अर्थ--पुनर्नवा (सांठ), निसोथ, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु, चित्रक, कूट, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आमला, दंति, चव्य इन्द्रजौ, कुटकी, पीपलामूल, नागरमोथा, काकडासिंगी, बडीसोफ (मगरेला), अजमायन, कायफल ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे और मंडूर ८ तोले ले सबको एकत्र करके आठ गुने गोमूत्रमें पचावे जब गुडके समान पाक होजावे तब उसकी गोली बनायके इसको छाछके साथ देवे यह पुनर्नवादि मंडूर अश्विनीकुमारने पुराने पांडुरोग, हलीमक, श्वास, खांसी, क्षय, ज्वर, सूजन, जलंधर, शूल, प्लीहोदर, अफरा, बवासीर, संग्रहणी, कृमि, वातरक्त और कोढ इनके नाश करनेको उत्पन्न करा है इसके सेवन करनेसे पूर्वोक्त सर्व व्याधि नष्ट होवे ॥

लोहासव पांडुरोगादिकोंपर ।

लोहचूर्णं त्रिकटुकं त्रिफलां च यवानिकम् । विडंगं मुस्तकं चित्रं चतुःसंख्यापलान् पृथक् ॥ धातकीकुसुमानां तु प्रक्षिपेत्पलविंशतिः । चूर्णीकृत्वा ततः क्षौद्रं चतुःषष्टिपलं क्षिपेत् ॥ दद्यात् गुडे तुलां तत्र जलद्रोणद्वयं तथा । घृतभांडे विनिक्षिप्य निदध्यान्मासमात्रकम् ॥ लोहासवममुं मर्त्यः पिबेदग्निकरं परम् । पांडुश्च पृथुगुल्मानि जठराण्यर्शसां रुजम्॥ कुष्ठं प्लीहामयं कंडूं कासश्वासभगंदरम् । अरोचकं च ग्रहणीं हृद्रोगं च विनाशयेत् ॥

अर्थ—लोहभस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, अजमायन, वायविडंग, नागरमोथा और चीतेकी छाल ये ग्यारह औषधी चार चार पल लेवे तथा धायके फूल २० पल ले सबका चूर्ण करके ६४ पल सहत और १ तोला गुड ले इसमें पूर्वोक्त चूर्ण मिलायके दो द्रोण जल डाले फिर सबको घीके चिकने वासनमें भरके और मुखपर मुद्रा देकर एकांतमें धर देवे इस प्रकार एक महीनेतक धरा रहने देवे फिर मुद्राको दूर करे इसको लोहासव कहते हैं यह आसव पीवे तो जठराग्नि प्रदीप्त होवे, तथा पांडुरोग, सूजन, पेटके गोलेका रोग, बवासीर, कोढ, प्लीहा (पिलही), खुजली, खांसी, श्वास, भंगदर, अरुचि, संग्रहणी, हृदयका रोग इन सब रोगोंको यह लोहासव दूर करे है ॥

गोमूत्रलोह।

सप्तरात्रं गवां मूत्रं भावितं चायसो रजः।
पांडुरोगप्रशांत्यर्थं पयसा प्रपिबेन्नरः॥

अर्थ--गौके मूत्रमें लोहेको सात रात दिन भीगने देवे फिर इस मूत्रको दूधके साथ मिलायके पांडुरोगी मनुष्यको पिलावे तो पांडुरोग दूर हो॥

गोमूत्रसिद्धमंडूर।

गोमूत्रसिद्धमंडूरचूर्णं सगुडामिश्रितम्।
पांडुरोगः क्षयं याति पक्तिशूलं च दारुणम्॥

अर्थ--गोमूत्रमें मंडूरको पचायके उसको गुडमें मिलायके पांडुरोगीको खिलावे तो पांडुरोग पक्तिशूल (परिणाम शूल) नष्ट होवे॥

नवायसादिचूर्ण पांडुरोगादिकों पर।

चित्रकं त्रिफला मुस्तं विडंगं त्र्यूषणानि च। समभागानि कार्याणि नव भागा हतायसः॥ एतदेकीकृतं चूर्णं मधुसर्पिर्युतं लिहेत्। गोमूत्रमथवा तक्रमनुपाने प्रशस्यते॥ पांडुरोगं जयत्युग्रं त्रिदोषं च भगंदरम्। शोथकुष्ठोदराशांसि मंदाग्निमरुचिं कृमीन्॥

अर्थ--चीतेकी छाल, हरड, बहेडा, आमला, नागरमोथा, वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल ये नौ औषध समान भाग लेकर चूर्ण करे इस चूर्णके समान लोहभस्म ले उस चूर्णमें मिलाय देवे फिर यह चूर्ण सहत और घी मिलाके सेवन करे अथवा गोमूत्रमें किंवा गौकी छाछके साथ सेवन करे तो घोर पांडुरोग दूर होवे तथा त्रिदोष, भगंदर, सूजन, कोढ, उदररोग, बवासीर, मंदाग्नि और कृमिरोग ये सब रोग दूर होवें॥

दूसरा नवायसचूर्ण।

त्र्यूषणं त्रिफला मुस्ता विडंगं चित्रकं समम्। नवायोरजसो भागास्तच्चूर्णं मधुसर्पिषा॥ भक्षयेत्पांडुहृद्रोगकुष्ठार्शःकामलापहम्। गोमूत्रेण पिबेद्वातपांडुरोगं च नाशयेत्॥ शोथहृद्रोगमुदरं कृमिकुष्ठं भगंदरम्। नाशयेदग्निमांद्यं च दुर्नामकमरोचकम्॥ आर्द्रकस्य रसेनापि लिह्यात्कफसमृद्धिमान्। गुंजामेकां समारभ्य यावत्स्युर्नव रक्तिका। प्रलिह्यान्मधुसर्पिर्भ्यां पिबेत्तक्रेण वा सह॥

अर्थ--सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, नागरमोथा, वायविडंग और चित्रक ये समान भाग लेवे तथा लोहभस्म ९भाग, सबको एकत्र करके इसे सहत और घी में मिलायके पांडुरोग, हृदयरोग, कोढ, बवासीर, कामला इन पर देवे यदि गोमूत्रके साथ इसको देवे तो वादीका पांडुरोग, सूजन,हृदयरोग, जलंधर, कृमिरोग, कोढ, भगंदर, मंदाग्नि, बवासीर और अरुचि ये रोग नष्ट होवें तथा अदरखके रससे दिया जाय तो कफरोग नष्ट हो यह चूर्ण एक रत्तीसे लेकर नौ रत्ती पर्यंत देना चाहिये अथवा अठारह रत्ती पर्यंत बलाबल विचारके सहत घी अथवा छाछके साथ देवे ॥

लोहादिचूर्ण जीर्णपांडु पर ।

लोहं कटुत्रिकंकोलं तिलं वा चूर्णसमं कीलकमाक्षिकसंयुक्तम् । क्षौद्रयुतं च सतक्रमेव हि जीर्णतरे खलु पांडुगदेपि ॥

अर्थ—लोहकी भस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, कंकोल, तिल, सुवर्णमाक्षिककी भस्म इनका चूर्ण १ तोलेको सहत अथवा छाछ इनके साथ देवे तो बहुत दिनका पांडुरोग नष्ट होवे ॥

शिलाजितादियोग ।

शिलाजतुक्षौद्रविडंगसर्पिर्लोहाभयाशर्करया समक्षम् ।
आपूर्यते दुर्बलदेहधारी त्रिपंचरात्रेण यथा शशांकः ॥

अर्थ—शिलाजीत, सहत, वायविडंग, घी, हरड और खांड इन सबका समान भाग चूर्ण करके देवे तो पंद्रह दिनमें देह बलवान् होवे जैसे चंद्रमा परिपूर्ण होता है ॥

मंडूरवज्रवटक ।

पंचकोलमरिचं देवदारुफलत्रिकम् । विडंगमुस्तायुक्ताश्च भागास्त्रिफलसंमिताः ॥ यावंत्येतानि चूर्णानि मंडूरं द्विगुणं ततः । पक्त्वाष्टगुणिते मूत्रे तद्घनीभूतमुद्धरेत् ॥ ततोक्षमात्रान् वटकान् पिबेत्तक्रेण तक्रभुक् । पांडुरोगं जयेत्तद्वन्मंदाग्नित्वमरोचकम् ॥ मंडूरवज्रवटको रोगानीकप्रभेदतः । अर्शांसि ग्रहणीशोफमूरुस्तंभं हलीमकम् ॥ कृमिप्लीहानमुदरं गलरोगं च नाशयेत् ॥

अर्थ—पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, काली मिरच, देवदारु, हरड, ब-

हेडा, आँवला, वायविडंग और नागरमोथा ये सब औषध समान भाग ले सबसे दूना मंडूर लेवे सबसे आठ गुने गोमूत्रमें डालके पचावे जब गाढा हो जावे तब उतारके एक २ तोलेकी गोली बनायके एक गोली छाछके साथ देवे तथा छाछ भात पथ्यमें देवे तो पांडुरोग, मंदाग्नि, अरुचि, बवासीर, संग्रहणी, सूजन, ऊरुस्तंभ, हलीमक, कृमिरोग, प्लीहा, उदररोग, गलरोग तथा यह अनेक रोगोंको नाश करे है ॥

हंसमंडूर ।

मंडूरं चूर्णयेत् श्लक्ष्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् । पंचकोलं देवदारुमुस्तव्योषफलत्रयम् ॥ विडंगं स्यात्प्रतिपलं पाकांते चूर्णितं क्षिपेत् । भक्षयेत्कर्षमात्रं च तक्रे तक्रं च भोजने ॥ पांडुशोफं हलीमं च ऊरुस्तंभं च कामलाम् । अर्शांसि हंति नो चित्रं हंसमंडूर उच्यते ॥

अर्थ–मंडूरमें आठ गुना गोमूत्र डालके पचावे जब गाढा हो जावे तब उसमें पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, देवदारु, नागरमोथा, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आँवला और वायविंडग इन प्रत्येकको चार २ तोले लेके सबका चूर्ण करके उस अवलेहमें मिलाय एक २ तोलेकी गोली बनावे इसको छाछके साथ देवे तथा पथ्यमें छाछ भात देवे तो पांडुरोग, सूजन, हलीमक, ऊरुस्तंभ, कामला और बवासीर इनको नाश करे इसको हंसमंडूर कहते हैं ॥

सिद्धमंडूर ।

मंडूरस्य पलान्यष्टौ गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् । पुनर्नवात्रिवृत्त्र्यूषं विडंगं देवदारुकम् ॥ द्विनिशा पुष्करं वह्निर्दंती चव्यं फलत्रिकम् । कुटजस्य फलं तिक्ता पिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥ विषं च प्रतिकर्षस्य चूर्णं कृत्वा विमिश्रयेत् । मंडूरस्य च पाकांते अक्षमात्रं वटीकृतम् ॥ पांडुशोफोदरानाहशूलसत्कृमिगुल्मनुत् । इत्येवं सिद्धमंडूरः सर्वरोगविनाशकृत ॥

अर्थ–मंडूर ३२ तोले और गोमूत्र २५६ तोले दोनोंको एकत्र कर आग्नि पर रखके पचन करे जब गाढा हो जावे तब इसमें पुनर्नवा, निशोथ, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, पुहकरमूल, चीतेकी छाल, दंती, चव्य, हरड, बहेडा, आवला, इन्द्रजौ, कुटकी, पीपरामूल, नागरमोथा, अतीस इन प्रत्येकका तोला २ चूर्ण उसमें

मिलावे जब पाक होजावे तब एक एक तोलेकी गोली बांधे यह सिद्धमंडूरवटक पांडुरोग, उदर, अफरा, शूल, कृमि और गोला तथा सर्व रोगोंका नाश करेहै ॥

अमृतहरीतकी ।

शतावरीभृंगराजपुनर्नवकुरंटकैः । प्रतिसप्तपलं चूर्णं जले क्काथ्यं चतुर्गुणे ॥ पादशेषं कषायं तु वस्त्रपूतं समाहरेत् । हरीतकीपलं तस्मिन् षष्ठं चाधिशतत्रयम् ॥ पाचयेद्विधिवच्चैव त्रिंशद्दुग्धपलं पचेत् । भित्वा निवारयेद्दंड तद्गर्भे सर्वमौषधम् ॥ षट्पलं रसगंधौ च शुद्धे पात्रे क्षणं पचेत् । उत्तार्य चालयेत्तावद्यावत्कठिनतां व्रजेत् ॥ चूर्णयित्वामृतासत्वं पलं सप्त विमिश्रयेत् । मधुना वटिका कार्या षष्ट्यधिकशतत्रयम् । एकैका ह्यभया गर्भे क्षिप्त्वा सूत्रेण बंधयेत् । मधुभांडे क्षिपेत्पश्चादेकैकां भक्षयेद्द्विजम् ॥ शुष्कपांडुहरं सम्यगमृताया हरीतकी ॥

अर्थ-शतावर, भांगरा, पुनर्नवा और पियावांसा ये प्रत्येक अठाईस २ तोले लेवे इनको चौगुने जलमें चढाय काढा करके उतार लेवे, फिर काढेको छानके इसमें हरड १४४० तोले डालके १२० तोले गौका दूध डाले फिर चूल्हे पर चढायके हरडोंको सिजावे जब नरम हो जावें तब उनको फोडके गुठली निकालके फेंक देवे और पारा २४ तोले गंधक २४ तोले दोनोंको एक पात्रमें चढायके पचन करावे जब दोनों सघन हो जावें तब उनका चूर्ण कर उसमें गिलोयका सत्त्व २८ तोले मिलायके सहतसे ३६० गोली बनावे इनको गुठली निकाली हुई हरडोंमें भरे और सूतसे लपेट देवे फिर इनको सहतके वासनमें गेर देवे इसमेंसे नित्य प्रति एक हरड खाय तो यह अमृतहरीतकी शुष्क पांडुरोगका नाश करे ॥

पंचकोलघृत ।

पंचकोलं यवाग्रं च क्षीरं दध्ना घृतं पुनः । समांशानि तु योज्यानि भार्ङ्गी कुष्ठं च पौष्करम् ॥ शतं तत्र हरीतक्या जलेनैव चतुर्गुणम् । क्काथं नैकत्र योज्यांते क्काथयेन्मृदुवह्निना ॥ मृदुपाकघृतं सिद्धं पाने नस्ये च बास्तिषु । गुणाधिक्यं भवेन्नृणां पांडुरोगे हलीमके ॥ क्षये च राजयक्ष्मे च शस्तमुक्तं भिषग्वरैः ॥

अर्थ-पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, जौके अग्रभाग (अर्थात् जौके तुस), दूध, दही, घी, भारंगी, कूठ, पुहकरमूल ये समान भाग लेवे और तीन सौ जवाहरड ले इन सबके काढेमें घी मिलायके मंद २ अग्निपर पचावे; इस घीको पान, नस्य और बस्ति इनमें देवे यह मनुष्यको उत्तम गुणकारक है, यह पांडुरोग, हलीमक, क्षय और राजरोग इन रोगोंमें देना वैद्योंने उत्तम कहा है ॥

साधारणयोग ।

वह्निचूर्णनिशाभाव्यं धात्रीफलकषायकैः ।
गव्येनाज्येन दातव्यं निशायां पांडुरोगिणाम् ॥

अर्थ-चित्रकके चूर्णको आंवलेके काढेमें तीन भावना देवे फिर गौके घीमें मिलायके पांडुरोगवालेको रात्रिके समय देवे तो पांडुरोग नष्ट होय ॥

देवदालीयोग ।

देवदाल्यास्तु पंचांगचूर्णं क्षीरेऽथ वा जले ।
निष्कमात्रं पिबेन्नित्यं मासात्पांडुगदापहम् ॥

अर्थ-देवदाली (बंदाल वा घघरबेल) के पंचांगके चूर्णको दूध अथवा जलके साथ ४ मासे एक महीने पर्यंत देवे तो पांडुरोगको नाश करे ॥

गोमूत्रहरीतकीयोग ।

त्रिःसप्ताहं गवां मूत्रैरभयां च विभावयेत् ।
एकैका भक्षिता नित्यं पांडुरोगविनाशिनी ॥
हस्तिकर्ण्याः समूलायाश्चूर्णपानेन पांडुजित् ॥

अर्थ-हरडोंको २१ दिन पर्यंत गोमूत्रमें भीगने देवे फिर इसमेंसे एक एक नित्य भक्षण करे तो पांडुरोगका नाश करे । अथवा समूल हस्तिकर्ण (कासालू) लेकर चूर्ण करके देवे तो पांडुरोगका नाश होय ॥

भूनिंबादिगुटी ।

भूनिंबाब्दपटोलनिंबकटुकादार्वीविडंगामृतावासाक्षामलकाभया-
मरकणाविश्वौषधैश्चूर्णितैः । तुल्यैः पर्पटचूर्णितैः सदहनैः सद्यो-
हचूर्णार्द्रकैः कर्तव्या मधुसंयुता च गुटिका पांड्वामयग्राहहा ॥

अर्थ-चिरायता, नागरमोथा, पटोलपत्र, नीमकी छाल, कुटकी, दारुहलदी, वायविडंग, गिलोय, धमासा, बहेडा, आमले, हरड, पीपल, सोंठ, पित्तपापडा, चीतेकी छाल,

लोहेकी भस्म इन सबको समान भाग ले चूर्ण करे फिर इसकी अदरखके रसमें गोली बनावे इसको सहतके साथ खानेको देवे तो घोर पांडुरोगका नाश करे ॥

मदेभसिंहसूत।

रसगंधवराताम्रशंखविषनगाभ्रकांतीक्ष्णमुंडं । अथ हिंगुलं टंकणं समांशं सकलतस्त्रिगुणं पुराणकिट्टं ॥ पशुमूत्रविशोधितं तु भृष्ट्वा त्रिफलाभृंगतथार्द्रकोत्थनीरैः । सुविशोध्य नरामृतालिवासास्वरसैरष्टगुणैः पुनर्नवोत्थैः ॥ पृथगाग्निघृतं विपाच्यं गुटिका गुंजमिता निजानुपानैः । ज्वरपांडुतृषास्रपैत्यगुल्मक्षयकासस्वरमग्निसादमूर्च्छाः ॥ पवनादिषु दुस्तराष्टरोगान् सकलं पित्तहरेन्मदावृतं च। बहुना किमयं यथार्थनामा सकलव्याधिहरो मदेभसिंहः ॥

अर्थ–पारा, गंधक, हरड, बहेडा, आंवला, तामेकी भस्म, शंखभस्म, सिंगियाविष, अभ्रक, कांतीलोह, तीक्ष्णलोह, मुंडलोह इनकी भस्म और हींगलू तथा सुहागा ये सब समान भाग लेवे इन सबसे तिगुना मंडूर ले सबको गोमूत्रमें शोधनै कर भूनके निकाल लेवे फिर हरड, बडेडा, आंवला, भांगरा और अदरख इनके रसमें खरल करके सुखायले फिर त्रिफला, गिलोय इनके अठगुने रसोंकी भावना देकर फिर पुनर्नवाके स्वरसको डालके अग्निपर रखके पचावे जब गाढा हो जावे तब एक २ रत्तिकी गोली बनावे, इसको रोग २ के अनुपानसे देवे तो ज्वर, पांडुरोग, तृषा, रक्तपित्त, गोला, क्षय, खांसी, स्वरभेद, मंदाग्नि, मूर्च्छा, वातव्याधि आदि आठ असाध्य रोग, पित्तव्याधि इनको नाश करै यह संपूर्ण व्याधिरूप हाथीके मारनेको सिंहरूप है ॥

त्रैलोक्यनाथरस।

पलानि चत्वारि रसस्य पंच गंधस्य सत्त्वस्य गुडूचिकायाः । व्योषस्य चूर्णस्य सतालमूल्याः सशाल्मलस्येह पलत्रयं स्यात् ॥ पृथक् पृथक् षड् गगनस्य चाष्टौ लोहस्य सर्वं त्रिफलाजलेन। घृष्टं चतुःषष्टिमितं तदर्धाः स्युर्भावनायार्द्रकजद्रवस्य ॥ शिग्रूत्थनीरेण च षोडशाष्टौ तथानलोत्था गृहकन्यकायाः ।

आर्द्रद्रवस्येति रसोऽयमुक्तो पांडुक्षयश्वासगदार्तिहंता ॥
क्षौद्रेण वै शर्करया घृतेन कर्षार्धमेतस्य भजेत्प्रयुंजात् ॥

अर्थ–पारा १६ तोले, गंधक २० तोले, गिलोयका सत्त्व, सोंठ, मिरच, पीपल, मूसली और सेमरका गोंद ये प्रत्येक १२ तोले लेवे. अभ्रक २४ तोले, लोहभस्म ३२ तोले, सबको एकत्र करके चूर्ण करके त्रिफलाके काढेकी ६४ भावना देवे, अदरखके रसकी ३२ भावना, सहजनेके रसकी १६, चित्रकके रसकी ८, घीगुवारके रसकी ८, फिर अदरखके रसकी ८ इस प्रकार देकर उसमेंसे सहत खांड और घी इनके साथ छः मासे देवे तो पांडुरोग, क्षय, श्वास इन सब रोगोंको नाश करे ॥

उदयभास्कर ।

भागैकं रसगंधकं द्विगुणितं शुल्वं च भागाष्टकं शैलेयाब्धयताल-कद्वयमिदं शुद्धं च खल्वे कृतम् । अर्धं व्योषजवेदभागसहितं भागद्वयं चामृतं निर्गुण्डयार्द्रकभृंगराजसहितं भाव्यं जयंतीरसैः॥ प्रत्येकं दिनसप्तकं तु सुदृढं शोष्यं च सूर्यातपे योज्यं गुंजमितं रसार्द्रसहितं व्योषेण संमिश्रितम् । पांडूकामलरोगशोकदहनं स-न्ने त्रिदोषे ज्वरे मेहप्लीहजलोदरं ग्रहणिका कुष्ठं धनुर्वातजम्॥ पथ्यं षष्टिकतंदुलं नवनितं तक्रं च शाल्योदनं देयश्चोदयभास्करः क्षितितले सर्वंधिकारान् जयेत् ॥

अर्थ–पारा १, गंधक २, तामेकी भस्म ८, शिलाजीत ३, हरताल २, सोंठ, मिरच, पीपल तीनों ४ तथा सिंगियाविष २ भाग लेवे इन सबको एकत्र करके निर्गुंडी, अदरख, भांगरा और अरनी इसके रसकी पृथक् २ सात २ भावना देवे अर्थात् खरल करे और धूपमें सुखाय लेवे. इसमेंसे १ रत्ती यह रस अदरखके रस और त्रिकुटा इनके साथ देवे तो पांडुरोग, कामला, सूजन, मंदाग्नि, त्रिदोषज्वर, प्रमेह, प्लीहा, जलंधर, संग्रहणी, कोढ, धनुर्वात इनका नाश करे इस पर पथ्यमें सांठी चावलका भात, छाछ और शाल्योदन (पुराने चावलोंका भात), यह उदयभास्कर संपूर्ण रोगरूप अंधकारको नाश करे है इसीसे इसकी उदयभास्कर संज्ञा है ॥

कामेश्वररस ।

पलं सूतं पलं गंधं वह्निपथ्यात्रयं त्रयम् । मुस्तैलापत्रकानां च

मितं चार्धपलं पलम् ॥ त्र्यूषणं पिप्पलीमूलं विषं चैव पलं पलम् । नागकेसरकर्षैकं रेणुकार्धपलं तथा ॥ पुरातनगुडेनैव तुलार्धेन प्रपाचयेत् । मर्दयेच्चार्द्रकद्रावैर्यामैकं तद्घृतेन च ॥ गुटिका बदराकारा कारयेद्भक्षयेत्सदा । शोफपांडुहरः सोऽयं रसः कामेश्वरो ह्ययम् ॥

अर्थ-पारा, गंधक दोनों चार २ भाग, चीतेकी छाल और हरड हर एक बारह २ भाग, नागरमोथा, इलायची और पत्रज ये दो दो भाग और त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल), पीपरामूल और सिंगियाविष हर एक चार २ भाग, नागकेशर १ तथा रेणुकबीज २ तोले ले इस प्रकार सब औषध लेकर चूर्ण कर लेवे; इसमें पुराना गुड, २०० तोले मिलाकर पचावे अर्थात् पक्व करे फिर शीतल करके अदरखके रसमें १ प्रहर तथा गौके घीमें १ प्रहर मर्दन करके बेरके बराबर गोली बनावे एक गोली नित्य सेवन करे तो सूजन, पांडुरोग इनको नाश करे । इसको कामेश्वर रस कहते हैं ॥

कालविध्वंसकरस ।

शुद्धसूतं हेमतारं ताम्रं तुल्यं विमर्दयेत् । जम्बीरनीरसंयुक्तमातपे शोषयेद्दिनम् ॥ सर्वतुल्यं पुनः सूतं क्षिप्त्वा पिष्टिं प्रकल्पयेत् । आदाय बंधयेद्वस्त्रे इष्टिकायंत्रगं पचेत् ॥ जम्बीरैर्गंधकं पिष्ट्वा अधश्चोर्ध्वं च दापयेत् । तुल्यं तुल्यं पुनर्देयं रुद्ध्वा लघु पुटे पचेत् ॥ षड्गुणैर्गंधके जीर्णे तदुद्धृत्य विचूर्णयेत् । लोहभस्म समांशं च दत्त्वा मर्द्यं द्रवैर्दिनम् ॥ कंटकार्या बृहत्या च तथाग्निधमनद्रवैः । प्रतिद्रावैर्दिनं मर्द्यं पचेत्पंचभिरुत्पलैः ॥ एवं नवपुटं देयं द्रवद्रावैस्त्रिधा त्रिधा । वह्न्यर्कचिरबिल्वानां द्रावैर्द्विर्द्विः पुटे पचेत् ॥ अंधमूषागतं पाच्यमादायाचूर्णयेत्पुनः । दशांशेन विषं योज्यं गुंजामात्रं प्रयोजयेत् ॥ कालविध्वंसको नाम रसः पांड्वामयापहः ॥

अर्थ-शुद्ध पारा और सुवर्ण, चांदी, ताम्र इनकी भस्म समान भाग लेवे सबके जम्भीरीके रसमें एक दिन धूपमें रखके खरल करे तथा इन सबकी बराबर

फिर पारा लेवे सबकी कजली करे और कपडेमें पोटली बांध लेवे पश्चात् जंभीरीके रसमें गंधक घोटकर उस पोटलीके ऊपर नीचे देकर इष्टिकायंत्रमें धरकें पचावे इस प्रकार समान गंधक देदेकर षड्गुण गंधक जारण करे फिर निकालके चूर्ण कर लेवे इस चूर्णके समान लोहभस्म डालके कटेरी, बडी कटेरी और नीम इनके रसमें एक एक दिन खरल करे और पांच उपलेंमें रख २ के फूंकता जावे इस प्रकार प्रत्येककी तीन २ पुट देवे एस नौ पुट हुई, फिर चित्रक, आक और कंजा इनकी दो दो भावना देवे परंतु प्रत्येक भावनामें अंधमूषासंपुटमें रख २ के अग्निमें पचाता जावे फिर इसका चूर्ण करके इसका दशमांश शुद्ध सिंगिया विष मिलावे तो यह रस सिद्ध होवे. इसमेंसे १ रत्तीकी मात्रा देवे तो यह कालविध्वंसकरस पांडुरोगका नाश करे॥

पांड्वरिरस।

र गंधकलोहैकं पांड्वारः पुटितस्त्रिधा।
कुमार्यात्त्कश्चतुर्वल्लपांडुकामलपूर्ववत्॥

अर्थ–पारा, गंधक, लोहभस्म ये समान भाग लेवे सबका चूर्ण करके घीगुवारके रसकी तीन भावना देकर प्रत्येक भावनामें गजपुटमें रखके फूंकता जावे तो यह तैयार हो. इस पांड्वरिरस चार वल्ल रोगीको देवे तो पांडुरोग और कामला इसका नाश करे॥

पांडुसूदन।

रसं गंधं मृतं ताम्रं जयपालं च गुग्गुलम्।
समांशमाज्यसंयुक्तं गुटिकां कारयेन्मिताम्॥
एकैकां प्रददेद्वैद्यः शोथपांडूपशान्तये।
शीतलं च जलं चाम्लं वर्जयेत्पांडुसूदने॥

अर्थ–पारा, गंधक, तामेकी भस्म, जमालगोटा और गूगल ये समान भाग लेकर इसकी घीमें गोली बनावे यह बलाबल विचारके एक एक देवे या न्यूनाधिक दे तो सूजन, पांडुरोग इनका नाश करे इस पर शीतलजल और खट्टा रस खाना वर्जि[illegible] है॥

वंगेश्वर।

वंगसूतकयोः कृत्वा सारणं कन्यकाद्रवैः। संमर्द्य वटिकाः कृत्वा पाचयेत्काचभाजने॥ यावच्चंद्रनिभः शुभ्रो वंगेश्वरसमो गुणैः। पांडुप्रमेहदौर्बल्यकामलांतकनाशनः॥

अर्थ-वंग (रांगा) और पारा दोनोंको घीगुवारके रसमें खरल करके कांचकी आतसी शीशीमें पचन करे तो यह चंद्रमाके तुल्य सुंदर वर्ण तथा गुणोंमें वंगेश्वरकी समान और पांडुरोग, प्रमेह, दुर्बलता, कामला इनका नाश करनेवाला यह दूसरा वंगेश्वर है ॥

पांडुनिग्रहरस ।

अभ्रभस्म रसभस्म गंधकं लोहभस्म मुसलीविमर्दितम् ।
शाल्मलीरसततो गुडूचिकाकाथकैश्च परिमर्दितं दिनम् ॥
भावयेत्रिफलयार्द्रकन्यकावह्निशिग्रुजरसैश्च सप्तधा ।
जायते हि भवजो विवर्जनं शोथपांडुनिवृत्तिदायकम् ॥
वल्लयुग्मपरिमाणतस्त्विमं लेहयेच्च घृतमाक्षिकान्वितम् ।
पथ्यमात्रपरिभाषितं पुरा एतदेव परिवर्जितं हितम् ॥
शोथपांडुविनिवृत्तिदायकः सेवितस्तु यवचिंचिकाद्रवैः ॥
नागराग्निजयपालकैस्तु वा वर्ज्यदुग्धपरिपक्वसर्पिषा ॥
तक्रभक्तमिह भोजयेदतिस्निग्धमन्नमतिनूतनं त्यजेत् ॥

अर्थ-अभ्रकभस्म, पारेकी भस्म, गंधक, लोहभस्म और मूसलीका चूर्ण ये समान भाग ले सबको एकत्र करके सेमरके रससे तथा गिलोयके काढेसे एक एक दिन खरल करके फिर त्रिफलेका काढा, अदरख, घीगुवार, चीता, सहजनेका रस इन सबकी पृथक् २ सात २ भावना देवे तो यह पांडुनिग्रह रस बने. इसमेंसे दो वल्ल (छः रत्ती) रस सहत और घीके साथ देवे, तो सूजन, पांडुरोग इनका नाश करे इस पर जौ, इमली, सोंठ, चित्रक, जमालगोटा और दूध इनको औटायके तथा उसमें घी डाला हुआ ये तथा अतिस्निग्धान्न और नूतनान्न ये वर्जित हैं. पथ्यमें छाछ भात देवे ॥

अनिलरस ।

ताम्रभस्म रसभस्म गंधकं वत्सनाभमपि तुल्यभागिकम् ।
वह्नितोयपरिमर्दितं पचेद्यामपादमथ मंदवह्निना ॥
रक्तिकायुगलमानतोऽनिलः शोथपांडुघनपंकशोषिता ॥

अर्थ-ताम्रभस्म, पारेकी भस्म, गंधक, सिंगियाविष ये सब समान भाग लेवे इन सबको चित्रकके रसमें मंदाग्निपर रखके दो घडी पर्यंत घोटे फिर दो २ रत्तीकी

गोली बनावे सेवन करनेसे यह अनिलरस सूजन और पांडुरोग तथा देहके भीतरकी कीच अर्थात् तरीको सुखाय देता है ॥

लोहसुंदररस।

सूतभस्म मृतलोहगंधकौ भागवर्धितमिदं विनिक्षिपेत् ।
दीर्घनालदृढकूपिकोदरे मृत्स्नया च परिवेष्टितां क्षिपेत् ॥
चुल्लिकोपरि सुकूपिकामुखे प्रक्षिपेच्च वरशाल्मलिद्रवम् ।
त्रैफलं वसुगुडूचिकारसं पाचयेच्च मृदुवह्निना दिनम् ॥
स्वांगशीतलमिदं प्रगृह्य च त्र्यूषणार्द्रकरसेन भावयेत् ।
लोहसुंदररसोयमीरितः शुष्कपांडुविनिवृत्तिदः परः ॥

अर्थ-पारेकी १, लोहभस्म २, तथा गंधक ३ भाग इस प्रकार लेकर खरल करे और उस कजलीको कांचकी आतसी शीशीमें भरके मुख बंद करे ऊपर कपड मिट्टी करके वालुकायंत्रमें रखके एक दिन मंदाग्निसे पचन करे और उसी चूल्हे पर उस शीशीके मुखमें सेमरका रस, त्रिफलेका काढा, वसुका काढा और गिलोयका रस ये डाले जब पचन होकर तैयार हो जावे तब स्वांग शीतल होने पर उतारके उसमें त्रिकुटा और अदरखके रसकी भावना देवे यह लोहसुंदररस शुष्क पांडुरोगका नाश करे ॥

चंदनादितैल।

चंदनं सरलं दारु यष्टचेला वालकं सठी। नखशैलेयकं पद्मकं घनकेसरं ॥ कंकोलकं मुरा मांसी शैलेयं द्वे हरीतकी। त्वगेरण्डका किरातं च सारिवा तिक्तका गुरुः ॥ नलिकावालकं द्राक्षाकषायं सुपरिश्रुतं। तैलमस्तु तथा लाक्षारसेन समभागिकं॥ मंदाग्नौ पाचयेत्तैलं सिद्धं पानेषु बस्तिषु । नस्ये चाभ्यंजने चैव योजयेच्च भिषग्वरः ॥ हंति पांडुं क्षयं कासं ग्रहाग्निबलवर्णकृत् । मंदज्वरमपस्मारं कुष्ठपामाहरं पुनः ॥ करोति बलपुष्ट्योजोमेधाप्रज्ञाविवर्धनं । रूपसौभाग्यदं प्रोक्तं सर्वभूतवशीकरम् ॥

अर्थ-चंदन, सरल, देवदारु, मुलहटी, इलायची, नेत्रवाला, कचूर, नखद्रव्य, शिलाजीत, पद्माख, नागरमोथा, नागकेशर, कंकोल, मुरा, जटामांसी, पत्थरका फूल, छोटी

हरड, बडी हरड, दालचीनी, रेणुकबीज, चिरायता, सरवन, कुटकी, अगर, नलिका सुगंध द्रव्य, सुगंधवाला और दाख इनका काढा करके इसमें मीठी तिलीका तेल, दही-का तोड, लाखका सीरा ये समानभाग डालके मंदाग्नि पर रखके तेल सिद्ध करै. इसके पीनेसे, बस्तिकर्म, नस्य, तथा देहमें मालिस करना इन कर्मोंमें काम लावे तो पांडुरोग, क्षय, खांसी, ग्रहबाधा, मंदज्वर, मृगी, कोढ तथा खुजली इनको नाश करै. तथा बल, वर्ण, पुष्टि, तेज, बुद्धि, स्मृति, रूप, सौभाग्य इनको देवे. तथा सर्व प्राणियोंको वशीकरण करनेवाला तेल है ॥

मृत्तिकाभक्षणजपांडुनिदान ।

मृत्तिकादनशीलस्य कुप्यत्यन्यतमो मलः । कषया मारुतं पित्त-मूषरामधुराकफं ॥ कोपयेन्मृद्रसादींश्च रौक्षाद्भुक्तं च रूक्षयेत् । पूरयत्यविपक्कैश्च स्रोतांसि निरुणद्ध्यपि ॥ इंद्रियाणां बलं हत्वा तेजो वीर्यौजसी तथा । पांडुरोगं करोत्याशु बलवर्णाग्निनाशनम् ॥

अर्थ-मिट्टी खानेका जिस मनुष्यको अभ्यास पड जाय उसके वातादिक दोष कुपित होवे कषेली मिट्टीसे वात कुपित होय खारी मिट्टीसे पित्त और मीठी मिट्टीसे कफ कुपित होवे फिर वही मिट्टी पेटमें जायकर रसादिक धातुओंको रूखा करै. जब रौक्ष्य गुण प्रगट हो जाय तब जो अन्न खाय सो रूखा हो जाय । फिर वही मिट्टी पेटमें विना पके रसको रस वहनेवाली नसोंमें प्राप्त कर उनके मार्गको रोकदे रसके वहनेवाली नसोंका मार्ग जब रुक जाय तब इन्द्रियोंका बल अर्थात् अपने अपने विषय ग्रहण करनेकी शक्ति नाश होय शरीरकी कांति तेज और ओज हिये सब धातुओंका सार (हृदयमें रहता है सो) क्षीण होकर पांडुरोग प्रगट कर उसमें बल, वर्ण और अग्नि इनका नाश होता है ॥

केशरादिकाढा ।

तद्वत्केसरयष्ट्याधर्पिप्पलीसुरसाह्वयैः । मृद्वेषणाय तल्लौल्ये वितरेद्भावितां मृदम् ॥

अर्थ-नागकेशर, मुलहटी, पीपल और निसोथ इनका काढा करके इसकी भावना चिकनी सफेद मिट्टीमें देवे, फिर इस मिट्टीको खवावे तो वह खाई हुई मिट्टी दस्तोंकी राह निकलकर विकारको दूर कर देवे ॥

घृत ।

व्योषबिल्वद्विरजनीत्रिफला द्विपुनर्नवा । मुस्ता चायोरजः पाठा

विडंगं देवदारु च ॥ वृश्चिकाली च भार्ङ्गी च सक्षीरैस्तैर्घृतं शृतं । सर्वान्प्रशमयत्याशु विकारान् मृत्तिकाकृतान् ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, बेलगिरी, हलदी दारुहरदी, हरड, बहेडा, आंवला, सफेद पुनर्नवा, लाल पुनर्नवा, नागरमोथा, लोहभस्म, पाढ, वायविडंग, देवदारु, मेढासिंगी, भारंगी और दूध इतनी औषधोंके काढेमें सिद्ध करा हुआ घी मिट्टी खानेसे हुए सर्व विकारोंको नाश करे ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे पांडुरोगनिदानचिकित्सा समाप्ता ।

कामलाकर्मविपाकः ।

कामली भक्तचोरः स्यात्तस्य वक्ष्यामि निष्कृतिं । कुर्य्याच्च पक्षिराजानं विष्णोर्वाहनमुत्तमं ॥ सुवर्णेन यथाशक्त्या पक्षयोर्मौक्तिकद्वयं । नासिकायां तथा वज्रमुत्तरीयं च राजतं ॥ एवं कृत्वा गरुत्मंतं घृतद्रोणोपरि न्यसेत् । श्वेतवस्त्रेण संवेष्ट्य श्वतमाल्यैः समर्चयेत् ॥ सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञो वैष्णवो धर्मपाठकः । ब्राह्मणस्त्वर्चितो भक्त्या यजमानेन शक्तितः ॥ उपचारैः षोडशभिर्द्विजमभ्यर्चयेत्तथा ॥

अर्थ-जो प्राणी पूर्वजन्ममें भातकी चोरी करे है वो कामलारोगी होवे उस पापके दूर करनेको प्रायश्चित कहते हैं सुवर्णका गरुड पक्षी बनायके उसके पंखोंमें मोती, नाकमें हीरा और उसको चांदीके वस्त्र उढावे. ऐसा गरुड करके १०२४ तोले घीके ऊपर रखके और सपेद वस्त्रोंसे लपेटकर सपेद फूलमालासे सुशोभित कर पूजा करे. फिर इसको सर्वशास्त्रके तत्त्ववेत्ता वैष्णव धर्म और पाठ करनेवाला ऐसे ब्राह्मणका पूजन करके यथाशक्ति षोडशोपचारसे पूजा करके उसको उस गरुडका दान देवे तो कामलारोग नष्ट होवे ॥

प्रतिमादान ।

पीनांगः कामलारोगः कपालमुसलान्वितः ।
पूजाविधानं त्वातंको देवतात्वमुदाहृतः ॥

अर्थ-कामलारोगीको आतंकदेवीकी प्रतिमा पीले रंगकी और जिसके हाथोंमें कपाल और मूसल धारण करे होवे ऐसी बनायके उसकी पूजा करके ब्राह्मणको देवे ॥

कामलानिदान ।

पांडुरोगीति योऽत्यर्थं पित्तलानि निषेवते ।
तस्य पित्तमसृङ्मांसं दग्ध्वा रोगाय कल्पते ॥

अर्थ-जो पांडुरोगी अत्यंत पित्तकारक वस्तुओंका सेवन करे उसके पित्त, रुधिर मांसको जलाय (दुष्ट कर) कामलारूप रोग प्रगट करनेको समर्थ होय ॥

लक्षण ।

हारिद्रनेत्रः सुभृशं हारिद्रत्वङ्नखाननः । रक्तपित्तशकृन्मूत्रो भेकवर्णो हतेंद्रियः ॥ दाहाविपाकदौर्बल्यसदनारुचिकर्षितः । कामला बहुपित्तैषा कोष्ठशाखाश्रया मता ॥

अर्थ-उस मनुष्यके नेत्र अत्यंत पीले होंय, त्वचा, नख और मुख यह पीले होंय, मल मूत्र काले होंय, अथवा पीले होंय, वह मनुष्य वर्षाऋतुके मेंडकके समान पील होवे, इन्द्रियोंकी शक्ति नष्ट होय, दाह, अन्न पचे नहीं, दुर्बलता, अंगग्लानि, अन्नमें अरुचि इनसे पीडित होय जिसमें पित्त प्रबल ऐसी यह कामला एक कोष्ठाश्रय और दूसरी शाखा (रक्तादि धातु) आश्रित है, उसी प्रकार कामला स्वतंत्र होय है ॥

कामलाचिकित्साक्रम ।

रेचनं कामलार्तस्य स्निग्धस्यादौ प्रयोजयेत् ।
ततः प्रशमनी कार्या क्रिया वैद्येन जानता ॥

अर्थ-ज्ञाता वैद्य होवे उसको कामलारोगसे पीडित ऐसे मनुष्यको दूध, घी, कोईसा स्निग्ध पदार्थ पिलायके दस्त करावे फिर दोष शमन करनेवाली औषध देनी चाहिये ॥

नस्य व अंजन ।

हिंगु वा लोचने न्यस्तं कामलोन्मूलने क्षमम् ।
कामलार्तस्य चैरंडं पिप्पल्यो न विनांजने ॥

अर्थ-कामलाके नाश करनका हींगका अंजन करे, अथवा अंडका रस तथा पीपलका चूर्ण इनकी नस्य देवे ॥

जालिनीफलादि नस्य।

जालिनीफलमाध्मानं नस्यं वा तंडुलांभसा।
जालिनीफलमध्यस्थं श्यामासर्षपनस्यतः॥

अर्थ-कडुई तोरईके फलके बीजोंके धोवनके जलकी नस्य देवे अथवा कडुई तुंबीके बीचमें पीपल और सरसों भरके थोडी देर रख देवे फिर उसको पीसके उसकी नस्य देवे तो कामलारोग दूर हो॥

कुमारीकंदनस्य।

किंवा तोयेन सा पिष्टः कुमारीकंदनस्यतः।
जायते कामलोपेतो पित्तनेत्रांतकामला॥

अर्थ-घीगुवारका रस निकालके उसमें घी डालके नस्य देवे तो कामला करके नेत्र पीले भी हो गये हों तोभी उसका नाश करे॥

कामलापर अन्न।

यवगोधूमशाल्यन्नं रसैर्जांगलजैः शुभैः।
मुद्गाढकामसूराद्यैस्तयोर्भोजनमिष्यते॥

अर्थ-जौ, गेहूं और शालीचावल ये अन्न, जांगली जीवोंके मांसरस करके युक्त अथव मूंग, मसूर इत्यादि करके युक्त जो भोजन वह कामलावाले रोगीको और पांडुरोगीको देना चाहिये॥

कामलापर काढा।

त्रिफलाया गुडूच्या वा दार्व्या निंबस्य वा रसम्।
प्रातर्मधुयुतं वैद्यः कामलार्ताय योजयेत्॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आमला इनका काढा, अथवा गिलोयका काढा अथवा दारुहलदी वा नीमके काढेमें सहद डालके प्रातःकाल वैद्य कामलारोगपीडितको देवे तो कामलरोग दूर होवे॥

पुनर्नवादि काढा।

पुनर्नवानिंबपटोलतिक्ताविश्वाभयादारुनिशामृतानाम्।
कषायकः पांडुगदं निहंति सश्वासकासोदरशूलशोथम्॥

अर्थ-पुनर्नवा, नीम, पटोलपत्र, कुटकी, सोंठ, हरड, दारुहलदी, हलदी और गिलोय

इनका काढा पांडुरोग, श्वास, खांसी, उदररोग, शूल और सूजन इनको नाश करे ॥

त्रिफलादि काढा ।

त्रिफलानिंबकैराततिक्तावासामृताभवैः ।
काथो मधुयुतो हंति कामलां पांडुतामपि ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला, नीमकी छाल, चिरायता, कुटकी, अडूसा और गिलोय इनका काढा सहत डालके पीवे तो कामलारोग और पांडुरोग नष्ट होवे ॥

गोदुग्धपान ।

अये मनोज्ञकुंडले स्फुरन्मुखेंदुमंडले ।
गवां पयः सनागरं प्रिये निहंति कामलाम् ॥

अर्थ-हे मनोज्ञकुंडले ! हे स्फुरन्मुखेन्दुमंडले प्यारी ! गौके दूधमें सोंठ डालके पीवे तो कामलारोग निश्चय दूर होवे ॥

हरीतक्याद्यंजन ।

हरीतकी च धात्रिका तथा मनोज्ञगैरिका ।
इति प्रयोजितांजनं निहन्ति कामलाननम् ॥

अर्थ-हरड, वच, आंवला और स्वर्णगेरु इनकी नस्य कामलारोगका नाश करे है ॥

खरविट्स्वरस ।

खरविट् दधिना सार्धं सम्यक् समर्द्य पाययेत् ।
महत्पित्तोद्भवं रोगं कामलां च प्रणश्यति ॥

अर्थ-गधेकी लीद दहीके साथ पीसके उसका रस निकाल लेवे इसके पीनेसे और पित्तके दोषसे उत्पन्न कामलारोग नष्ट होवे ॥

गुडूचीकल्क ।

गुडूचीपत्रकल्कं वा पिबेत्तक्रेण कामली ॥

अर्थ-कामलारोगवाला गिलोयके पत्तेके कल्कको छाछके साथ पीवे तो कामला दूर हो॥

धात्र्यादिचूर्ण ।

धात्रीलोहरजोव्योषनिशाक्षौद्राज्यशर्करा ।
लीढानि वारयंत्याशु कामलामुद्धतामपि ॥

अर्थ-आंवले, लोहेकी भस्म, मिरच सोंठ, मिरच, पीपल, सहत, घी और खांड इनको मिलायके नित्य पीवे तो घोर बढी हुई कामलारोगको तत्काल दूर करे ॥

अयोरजादिचूर्ण ।

अयोरजोव्योषविडंगचूर्णं लिह्याद्धरिद्रात्रिफलान्वितं वा ।
सशर्करा कामलिनां त्रिभंडी हिता गवाक्षी सगुडा च शुंठी ॥

अर्थ--लोहेकी भस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, हलदी, हरड, बहेडा, आंमला इनका चूर्ण अथवा निशोथ और मिश्री अथवा इन्द्रायनका गूदा, सोंठ और गुड ये देवे तो कामलारोग नष्ट हो ॥

व्योषादिचूर्ण ।

व्योषाग्निवल्यत्रिफलामुस्तैस्तुल्यमयोरजः ।
चूर्णितं तक्रमध्वाज्यं कोष्णतोयोपयोजितम् ॥
कामलापांडुहृद्रोगकुष्ठार्शोमेहनाशनम् ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक, काली मिरच, हरड, बहेडा, आंवला और नागरमोथा ये सब समान भाग लेवे तथा सबकी बराबर लोहेकी भस्म लेवे सबको एकत्र चूर्ण कर छाछ सहत और घी अथवा गरम जल इनके साथ देवे तो कामला, पांडुरोग, हृदयरोग, कोढ, बवासीर और प्रमेह इनको नष्ट करे ॥

अयोरजादियोग ।

तुल्यमयोरजः पथ्या हरिद्रा क्षौद्रसर्पिषा ।
चूर्णितं कामली लिह्याद्गुडक्षौद्रेण वाभया ॥

अर्थ-लोहेकी भस्म, हरड, हलदी, इनका चूर्ण सहत और घीसे देवे अथवा हरडके चूर्णको सहतमें मिलायके देवे तो कामलारोग नष्ट होवे ॥

अंजन ।

अंजनं कामलार्तानां द्रोणपुष्पीरसं शुभम् ।
निशागैरिकधात्रीणां चूर्णवासं प्रकल्पयेत् ॥

अर्थ-गोमाका रस अथवा हलदी, गेरू और आंवले इनको पीसके अंजन करे तो कामलारोग नष्ट होवे इसमें संदेह नहीं ॥

नस्य ।

वेणीफलरसः स्वच्छो नस्यतस्तस्य सादरम् ।
कामला कामलोपेता याति दूरं च सर्पिषा ॥

अर्थ-देवदाली (बंदाल) के फलोंका रस स्वच्छ निकालके नस्य देवे तो कामला दूर होवे अथवा कुछ २ दोषों करके युक्त जो कामला वो घीके पीनेसे नष्ट होती है ॥

लोहादिचूर्ण ।

लोहचूर्णनिशायुग्मं त्रिफलाकटुरोहिणी ।
प्रलिह्य मधुसर्पिभ्यां कामलार्तः सुखी भवेत् ॥

अर्थ-लोहेकी भस्म, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आंवला और कुटकी इनके चूर्णको सहत और घी इनमें मिलायकर देवे तो कामलारोगी अच्छा होय ॥

एलादिचूर्ण ।

एलाजीरकभूधात्रीसिता गव्येन भावयेत् ।
प्रातः संसेवनं कुर्यात् कामलानाशनं परम् ॥

अर्थ-इलायची, जीरा, भूयआंवला और मिश्री इनको दूधमें औटायके प्रातःकालके समय सेवन करे तो कामलाका नाश होवे ॥

हरिद्राचूर्ण ।

निशाचूर्णं कर्षमितं दध्नः पलमितं तथा ।
प्रातः संसेवनं कुर्यात् कामलानाशनं परम् ॥

अर्थ-हलदीका चूर्ण १ तोला और दही ४ तोले दोनोंको मिलायके प्रातःकाल सेवन करे तो कामलारोगका नाश होवे ॥

दार्व्यादिचूर्ण ।

दार्वी च त्रिफलाव्योषविडंगानयसो रजः ।
मधुसर्पिर्युतं लिह्यात्कामलापांडुरोगवान् ॥

अर्थ-दारुहलदी, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल और लोहेकी भस्म ये समान भाग लेवे चूर्ण करके सहत और घीके साथ पांडुरोगी और कामलावाले रोगीको सेवन करना चाहिये ॥

घृत ।

हरिद्रात्रिफलानिंबबलामधुकसाधितम् ।
सक्षीरं माहिषं सर्पिः कामलापहमुत्तमम् ॥

अर्थ-हलदी, हरड, बहेडा, आंवला, नीमकी छाल, खिरेटी और मुलहटी इनके काढेमें सिद्ध करा हुआ भैंसका घी उसको भैंसके दूधके साथ पीवे तो कामलारोग नष्ट होवे ॥

एरंडस्वरस ।

वातारेश्च जटाद्रावं कर्षार्धं दुग्धमिश्रितम् ।
पाययेत्तु प्रतिदिनमेवमेव दिनत्रये ॥
घृतं दुग्धोदनं पथ्यं कुर्याद्वै लवणं विना ।
कामलां नाशयत्याशु वायुनाभ्रं हरेद्यथा ॥

अर्थ—अंडकी कोमल २ डंडी ले उनका रस निकालके छः मासे लेवे उसको दूधमें मिलाय प्रतिदिन रोगीको पिलावे इस प्रकार तीन दिन देवे और पथ्यमें घी दूध और भात देवे तो यह कामलारोगको नष्ट करे जैसे पवन बादलोंको नष्ट कर देती है. इस पर निमक खाना वर्जित है ॥

कटुकीयोग ।

पिबेत्कवोष्णेन जलेन तिक्तां सशर्करां पाणितलप्रमाणाम् ।
निहंति दुष्टामपि कामलां सा हरीतकी वा मधुना प्रयुक्ता ॥

अर्थ—गरम जलके साथ कूठके चूर्णमें मिश्री मिलायके एक तोलेके प्रमाण पीवे. अथवा सहतमें मिलायके हरड देवै तो कामलारोग नष्ट होवे ॥

कुंभकामलानिदान ।

कालांतरात्खरीभूता कृच्छ्रा स्यात्कुंभकामला ॥

अर्थ—बहुत कालसे पुरानी पडनेसे जो कुंभकामला होवे सो कृच्छ्रसाध्य होती है. कुम्भ कहिये कोष्ठ तद्गत जो कामला अर्थात् कोष्ठाश्रय कामला ॥

कामलाका असाध्य लक्षण ।

कृष्णपीतशकृन्मूत्रो भृशं शूनश्च मानवः ।
सरक्ताक्षिमुखच्छर्दिविण्मूत्रो यश्च ताम्यति ॥

अर्थ—जिस मनुष्यका मल काला और मूत्र पीला हो और शरीरपर सूजन विशेष होवे और नेत्र, मुख, वमन, मल और मूत्र ये अत्यंत लाल होय मोह होय वह कामलावान् रोगी बचे नहीं ॥

दूसरा प्रकार ।

दाहारुचितृडानाहतंद्रामोहसमन्वितः ।
नष्टाग्निसंज्ञः क्षिप्रं हि कामलावान्विपद्यते ॥

अर्थ—दाह, अरुचि, प्यास, अफरा, तंद्रा, मोह इन लक्षणयुक्त तथा मन्दाग्नि और विस्मृतिवान् कामलावाला रोगी तत्काल मरे ॥

कुंभकामलाका असाध्य लक्षण ।

छर्द्यरोचकहृल्लासज्वरक्लमनिपीडितः ।
नश्यति श्वासकासार्तो विड्भेदी कुंभकामली ॥

अर्थ—वमन, अरुचि, ओकारीका आना, ज्वर, अनायास श्रम इनसे पीडित तथा श्वास, खांसी इनसे जर्जरित और अतिसारयुक्त ऐसा कुम्भकामलावाला रोगी मर जावे ॥

कुंभकामलाचिकित्साक्रम ।

कुंभाख्यकामलायां तु हितः कामलको विधिः ॥

अर्थ—कुंभकामलारोगमें जो चिकित्सा कामलारोगमें कही है वह करना हित है. अर्थात् वह कुंभकामलारोगको दूर करती है ॥

शिलाजीतयोग ।

गोमूत्रेण पिबेत्कुंभकामलायां शिलाजतु ॥

अर्थ—गोमूत्रके साथ शिलाजीतको मिलायके पीवे तो कुंभकामलारोग नष्ट होवे ॥

मंडूर ।

दग्ध्वाक्षकाष्ठैर्मलमायसं तु गोमूत्रनिर्वापितमष्टवारान् ।
विचूर्ण्य लीढं मधुना चिरेण कुंभाह्वयं पांडुगदं निहंति ॥

अर्थ—बहेडेके काष्ठमें लोहेकी कीटीको फूंक देवे, जब लाल हो जावे तब निकालके गोमूत्रमें बुझाय दे इस प्रकार आठ वार करे. फिर उसको बारीक पीस दो अथवा तीन रत्तीके अनुमान सहतके साथ चाटे तो कुंभकामलाका शीघ्रही नाश करे ॥

नस्यादियोग ।

अर्कमूलं हरेन्नस्यात्कामलां तंडुलोदकम् ॥ एरंडमूलिका पीता मधुना हंति कामलाम् ॥ अपामार्गशिफा पीता सतक्रा कामलापहा । विष्णुक्रांताशिफा तक्रपीता वा तद्विनाशिनी ॥ लांगलीपत्रचूर्णं वा पिबेत्तक्रेण कामली । गुडार्द्रकयुतं हंति कामलां त्रिफलाशिता ॥

अर्थ--कामला (वा कुंभकामला) पर आककी जडको चांवलोंके धोवनमें पीसके नस्य करे और अंडकी जडका चूर्ण सहतमें मिलाय खानेको देवे, तथा ओंगाकी जडको छाछमें औटायके देवे तथा कोयलजड पीसके छाछमें मिलायके देवे अथवा कलियारीके पत्तोंका चूर्ण छाछमें मिलायके देवे. अथवा त्रिफला

के चूर्णको गुड और अदरखमें मिलायके देवे तो कामलारोग नाश होवे ये छः योग कहते हैं ॥

पांडुरोगमें कब हलीमक होता है ।

यदा तु पांडुवर्णः स्याद्धरितश्यावपीतकः । बलोत्साहक्षयस्तंद्रा मंदाग्नित्वं मृदुज्वरः ॥ स्त्रीष्वहर्षोऽङ्गमर्दश्च दाहस्तृष्णारुचिर्भ्रमः । हलीमकं तदा तस्य विद्यादनिलपित्ततः ।

अर्थ–जिस समय पांडुरोगीका वर्ण हरा, काला, पीला होय और बल व उत्साह इनका नाश, तंद्रा, मन्दाग्नि, महीनज्वर, स्त्रीसंभोगकी इच्छाका नाश, अंगोंका टूटना, दाह, प्यास, अन्नमें अप्रीति और भ्रम ये उपद्रव वातपित्तसे प्रगट हलीमक रोगके हैं ॥

पानकीलक्षण ।

संतापो भिन्नवर्चस्त्वं बहिरंतश्च पीतता ।
पांडुता नेत्रयोर्यस्य पानकीलक्षणं भवेत् ॥

अर्थ–सन्ताप कहिये इन्द्री मन इनका ताप, मलका पतला होना, भीतर, बाहर पीला हो जावे और नेत्रोंका पीला होना ये पानकीरोगके लक्षण हैं ॥

हलीमकपरिभाषा ।

पांडुरोगक्रियां सर्वां योजयेच्च हलीमके ।
कामलायां तु यां दृष्टा सापि कार्या भिषग्वरैः ॥

अर्थ–जो यत्न पांडुरोग पर तथा कामलारोग पर कहे हैं वह दोनों उपचार वैद्यको हलीमकरोग पर करने चाहिये ॥

अयोभस्मयोग ।

मारितस्यायसश्चूर्णं मुस्ताचूर्णेन संयुतम् ।
खदिरस्य कषायेण पिबेद्धन्तुं हलीमकम् ॥

अर्थ–लोहभस्म और नागरमोथेका चूर्ण ये एकत्र करके खैरके काढेके साथ पिलावै तो हलीमक रोग नष्ट होवे ॥

सितादिलेह ।

सितातिक्ताबलायष्टीत्रिफलारजनीयुगैः ।
लेहं लिह्यात्समध्वाज्यं हलीमकनिवृत्तये ॥

अथ-मिश्री, कुटकी, मुलहटी, खिरेटी त्रिफला, हलदी और दारुहलदी इनकी अवलेह बनायके सहत और घी डालके चाटे तो हलीमक रोग दूर होवे ॥

अमृतादिघृत ।

अमृतलतारसकल्कं प्रसाधितं तुरगविद्विषः सर्पिः ।
क्षीरचतुर्गुणमेतद्वितरेच्च हलीमकार्तेभ्यः ॥

अर्थ-गिलोयका स्वरस अथवा कल्क इनसे सिद्ध करा हुआ भैंसका घी उसमें उससे चौगुना दूध मिलायके हलीमकरोगवालेको पिलावे तो यह रोग दूर होवे ॥

गुडूचीस्वरसयोग ।

गुडूचीस्वरसे सर्पिः सक्षीरं माहिषं घृतम् ।
चतुर्गुणेन पयसा पाययेत्तद्धलीमके ॥

अर्थ-गिलोयका रस, घी और दूध इनको मिलायके पीवे अथवा भैंसके घीमें चौगुन दूध डालके पीवे तो हलीमकरोग नष्ट होवे ॥

पांडु कामला कुंभकामला हलीमक इन पर पथ्य ।

छर्दिर्विरेचनं जीर्णा यवगोधूमशालयः । मुद्गाढकीमसूराणां यूषा जांगलजा रसाः॥पटोलं वृद्धकूष्मांडं तरुणं कदलीफलम् । जीवंती-क्षुरमत्स्याक्षी गुडूची तंदुलीयकम् ॥ पुनर्नवा द्रोणपुष्पी वार्ताकं लशुनद्वयम् । पक्वाम्रमभया बिंबी शृंगी मत्स्यो गवां जलम्॥ धात्री तक्रं घृतं तैलं सौवीरकतुषोदकम् । नवनीतं गंधसारो हरिद्रा नागकेसरम् ॥ यवक्षारो लोहभस्म कषायाणि च कुंकुमम् । यथादोषमिदं पथ्यं पांडुरोगवतां नृणाम् ॥

अर्थ-वमन, रेचक, पुराने जौ, गेहूं और चावल, मूंग, अरहर, मसूर इनका यूष जंगली जीवोंका मांसरस, परवर, पुराना पेठा, नवीन केलाकी फली, जीवंती (डोडी), कालाईख, (तालमखाना), मछेली, गिलोय, चौलाई, पुनर्नवा (सांठ), द्रोणपुष्पी (गोमां), बैंगन, दोनों लहसन (प्याज और एक पोतिया लहसन), पका हुआ आंब, हरड, बिंबी (कंदूरी), शृंगीनामक अर्थात् सींगवाली मछली, गोमूत्र, आंवले, छाछ, घृत, तेल, कांजी, तुषोदक, मक्खन, मलयागिरिचंदन, हलदी, नागकेशर, जवाखार, लोहेकी भस्म (शीशेकी भस्म), कषेले रस, केशर ये सब पांडुरोगमें दोषोंके अनुसार मनुष्योंको पथ्य देना ॥

अपथ्य।

रक्तस्रुतिर्धूमपानं वमिवेगविधारणम्। स्वेदनं मैथुनं शिंबी पत्रशाकानि रामठम्॥ माषोंऽबुपानं पिण्याकं तांबूलं सर्षपं सुरा। सर्वाण्यम्लानि दुष्टानि विरुद्धाध्यशनानि च॥ गुर्वन्नं च विदाहीनि पांडुरोगवतां विषम्॥

अर्थ–रुधिरका निकालना, धूमपान, वमन, मलमूत्रादि वेगोंका धारण, स्वेदनकर्म, मैथुन करना, सेम (फली) और पत्तेका शाक, हींग, उडद, जलपान, खल, नागरवेलके पान, सरसों, दारु, सर्व प्रकारके खट्टे रस, पुष्ट अन्न, विरुद्ध भोजन, अध्यशन (भोजनके ऊपर तत्काल भोजन), भारी अन्न और दाह करता अन्न ये पांडुरोगवालेको विषके सदृश अपथ्य हैं॥

पांडुरोगपर दंभ।

दाहश्चरणयोः संधौ नाभेर्द्व्यंगुलकादधः।
मस्तके हस्तयोर्मूले मध्ये च स्तनकुक्षयोः॥

अर्थ–पांडुरोगवाले रोगीके दोनों पैरोंकी संधिपर और नाभीके नीचे दो अंगुल पर तथा मस्तक, स्तन और कूख इनमें दाग देवे॥

कामल पर दंभ।

कामलेषु करपृष्ठविभागे दंभयेद्रविशलाकयैव।
कूर्परार्धमितमध्यप्रदेशे द्राविते द्रवाति निश्चयेन रोगः॥

अर्थ–कामलारोगमें हाथोंके पिछाडी पहुँचेके नीचे तथा पहुँचेके आधे भागमें अर्थात् कलाईमें तामेकी पट्टीसे दाग देवे तथा उसको बहने देवे तो निश्चय कामला, कुंभकामला, हलीमकादि रोग नष्ट होवें॥

रक्तपित्तिकर्मविपाकः।

मद्यपो रक्तपित्ती स्यात्स दद्यात्सर्पिषो घटम्।
मधुनोऽर्धघटं चैव सहिरण्यं विशुद्धये॥

अर्थ–जो प्राणी पूर्वजन्ममें मद्य पीता (दारु पीता) है वह इस जन्ममें रक्तपित्तरोगी

होता है उसको घी गगरीभर और सहतसे दूसरा आधा घडा भरके उस घीके घडे पर रख उसको सुवर्ण युक्त दान करे तो रक्तपित्तरोग शांत होवे ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय ।

चंद्रक्षेत्रे यदा भौमो जायते मनुजस्तदा ।
रक्तपित्तेन दुर्नाम्नो नानाव्याधिसमाकुलः ॥

अर्थ—जिसके जन्मलग्नमें चन्द्रमाके क्षेत्रमें मंगल बैठा होवे तो रक्तपित्त और बवासीर ऐसी अनेक व्याधि करके युक्त होता है ॥

दूसरा प्रकार ।

रक्तपित्तं ज्वरं दाहमग्निवाय्वादिरुपद्रवम् । लभते नात्र संदेहश्चंद्रमध्ये यदा अजः ॥ भौममंत्रजपः कार्यो होमः खादिरजैस्तिलैः । घृतेन च समायुक्तं दानं रक्तवृषस्य च ॥

अर्थ—चंद्रमाकी दशामें भौमके आनेसे रक्तपित्त, ज्वर, दाह, बादी इन उपद्रवोंको करे, उस दोषके दूर करनेको मंगलका जप करे और खैरकी समिधा, तिल, घी इनका होम करे, तथा लाल बैलका दान करे ॥

ज्योतिःशास्त्रोक्तचिकित्सा ।

बिल्वचंदनबलाशणपुष्पैर्हिंगुलूकफलिनीबकुलैश्च ।
स्नानमद्भिरिदमग्नियुताभिर्भौमदोषविनिवारणमाशु ॥

अर्थ—बेलफल, चन्दन, खिरेटी, सन, हींगलु, कठूमर, मौरसिरीके फल इन पदार्थोंको डालके पानी औटावे फिर इस जलसे रोगीको नहलावे तो चंद्रमाके स्थानमें स्थित भौमदोषकी शांति होय ॥

रक्तपित्तनिदान ।

घर्मव्यायामशोकाध्वव्यवायैरतिसेवितैः । तीक्ष्णोष्णक्षारलवणैरम्लैः कटुभिरेव च ॥ पित्तं विदग्धं स्वगुणैर्विदहत्याशु शोणितम् । ततः प्रवर्तते रक्तमूर्ध्वं चाधो द्विधापि वा ॥ ऊर्ध्वं नासाक्षिकर्णास्यैर्मेढ्रयोनिगुदैरधः । कुपितं रोमकूपैश्च समस्तैस्तत्प्रवर्तते ॥

अर्थ—धूपमें बहुत डोलनेसे, अति परिश्रम करनेसे, शोकसे, बहुत मार्ग चलनेसे, अति मैथुन करनेसे, मिरच आदि तीखी वस्तु खानेसे, अग्निके तापनेसे,

जवाखार आदि खारे पदार्थ, नोनसे आदि ले लवणके पदार्थ, खट्टी, कडुवी ऐसी वस्तुके खानेसे कोपको प्राप्त भया जो पित्त सो अपने तीक्ष्ण द्रव पूति इत्यादि गुणोंसे रुधिरको बिगाडे तब रुधिर ऊपरके अथवा नीचेके मार्ग अथवा दोनों मार्ग होकर प्रवृत्त हो (निकले), ऊपरके मार्ग नाक, कान, नेत्र मुख इनके द्वारा निकले और अधोमार्ग कहिये लिंग गुदा और योनि इनके रास्ते होकर निकले और जब रुधिर अत्यंत कुपित होय तब दोनों मार्ग और सब रोमांचोंसे निकले है ॥

पूर्वरूपलक्षण ।

सदनं शीतकामित्वं कंठधूमायनं वमिः ।
लोहगंधिश्च निःश्वासो भवत्यस्मिन्भविष्यति ॥

अर्थ—ग्लानि, शीतकी इच्छा, कंठसे धुआं निकलना, वमन और तपाये भये लोहपर जल गेरनेसे जैसी गंध आवे ऐसी श्वास लेनेसे गंधका आना, जिस मनुष्यमें इतने लक्षण मिलते होंय उसके जानना कि इसके रक्तपित्त प्रगट होवेगा ॥

असाध्य लक्षण ।

मांसप्रक्षालनाभं क्वथितमिव च यत्कर्दमांभोनिभं च मेदः पूयास्रकल्पं यकृदिव यदि वा पक्वजंबूफलाभम् । यत्कृष्णं यच्च नीलं भृशमतिकुणपं यत्र चोक्ता विकारास्तद्वर्ज्यं रक्तपित्तं सुरपतिधनुषा यच्च तुल्यं विभाति ॥

अर्थ—जो रक्तपित्त मांस धोये हुए जलके समान हो अथवा सडे पानीके समान अथवा कीचके समान, अथवा जलके समान, उसी प्रकार मेद राध रुधिर इनके समान, अथवा कलेजेके टुकडेके समान, अथवा पकी जामनके समान, किंवा काले रंगका किंवा नील कहिये पपैया पक्षीके पंखके समान अथवा जिसमें मुरदेकीसी वास आवे और जिसमें पूर्वोक्त कहे श्वासकासादि विकारयुक्त हो ऐसा रक्तपित्त वर्जित है और जो रक्तपित्त इन्द्रधनुषके वर्णसमान रंग हो सो भी त्याज्य है अर्थात् ऐसे रक्तपित्तकी वैद्य चिकित्सा न करे ॥

वातरक्तपित्तनिदान ।

श्यावारुणं सफेनं च तनु रूक्षं च वातकम् ॥

अर्थ—नीला वर्ण, लाल वर्ण, कुछ झागयुक्त, पतला और रूखा ऐसा रक्त पित्तवातका जानना ॥

भोजन।

शालिषष्टिकनीवारचणमुद्गा मसूरकाः।
श्यामाकाश्च प्रियंगुश्च भोजनं रक्तपित्तिनाम् ॥

अर्थ-सांठी चावल, समा, पसाई, चना, मूंग, मसूर, सामखिया और प्रियंगू इतने धान्य रक्तपित्तवाले रोगीको भोजन करनेको देवे ॥

रक्तपित्तशास्त्रार्थ।

अतिप्रवृद्धदोषस्य पूर्वं लोहितपित्तिनः।
अक्षीणबलमांसाग्नेः कर्त्तव्यमपतर्पणम् ॥

अर्थ-जिसके दोष अत्यंत बढे रहे हों, तथा बल, मांस और जठराग्नि क्षीण न हुई हो उस रोगीका यत्न वैद्यको करना चाहिये ॥

ऊर्ध्वगे रेचनं शस्तमधोगे वमनं हितम् ॥

अर्थ-ऊपर होके जानेवाले रक्तपित्तमें दस्त कराने और अधोगामी अर्थात् नीचे होकर जानेवाले रक्तपित्तमें वमन करना चाहिये ॥

पित्तास्रं शमयेन्नादौ प्रवृत्तं बलिनः स्रुतम्।
हृत्पांडुग्रहणीरोगप्लीहगुल्मोदरादिकृत् ॥

अर्थ-बली पुरुषके रक्तपित्तको प्रथमही बंद न करे यदि ऐसे मनुष्यका रोग होते ही रुधिर बंद कर दिया जावे तो हृदयरोग, पांडु, संग्रहणी, प्लीहा, गोला और उदर (जलंधर) ये रोग उत्पन्न होवें ॥

क्षीणमांसबलं बालं वृद्धं शोषानुबंधिनम्।
अवाम्यमविरेच्यं च शमनीयैरुपाचरेत् ॥

अर्थ-जिसका मांस और बल क्षीण है तथा जो बाल तथा वृद्ध तथा जिसके शोषरोगका उपद्रव होवे तथा जो वमन अथवा विरेचनयोग्य नहीं है ॥

शालिपर्ण्यादिना सिद्धो पेयो यूषस्त्वधोगते।
रक्तातिसारहंता च योज्यो विधिरशेषतः ॥

अर्थ-अधोगत रक्तपित्तपर सालवण इत्यादि औषधोंसे सिद्ध करा हुआ मंड पिलवे रक्तातिसारपर सब उपचार करने चाहिये

पयांसि शीतानि रसाश्च जांगलाः सतीनयूषाश्च सशालिषष्टिकाः।
हितानि चैतानि सरक्तपित्ते चान्यान्यपि स्युः किल पित्तहानि ॥

अर्थ—रक्तपित्त पर शीतल दूध, जंगली जीवोंका मांसरस, सांठी चावलोंका मंड हितकारी कहाहै. तथा जितनी पित्तशांति करनेवाली वस्तु हैं वह सब रक्तपित्तपर हितकरनेवाली जाननी ॥

मसूरमुद्गचणकाः समकुष्टाढकीफलाः ।
प्रशस्ताः सूपयूषार्थे कल्किता रक्तपित्तिनाम् ॥

अर्थ—रक्तपित्तवाले मनुष्यको मसूर, मूंग, चना, मोंठ और अरहर इनकी दाल अथवा इनका मंड बनानेके लिये उत्तम है ॥

दाडिमामलकं बिल्वानम्लार्थं चापि दापयेत् ॥

अर्थ—रक्तपित्तवाले मनुष्यको खटाई देनी होवे तो अनारदाना, आँवले और बेलफल ये देवे ॥

पटोला निंबवेत्राग्रप्लक्षवेतसपल्लवाः ।
शाकार्थं शाककामानां तंडुलीयादयो हिताः ॥

अर्थ—रक्तपित्तवाले रोगीको शाक (तरकारी) खानेकी इच्छा होवे तो परवल, नीम, बेतकी कोपल तथा जलवेतस, पाखरके पत्ते अथवा चौलाई इनकी तरकारी हितकारक है॥

रक्तपित्तादिकपर कामदेवघृत ।

अश्वगंधा तुलैका स्यात्तदर्धो गोक्षुरः । स्मृतः । बलामृता शालिपर्णी विदारी च शतावरी ॥ पुनर्नवाश्वत्थशुंठी काश्मर्यास्तु फलान्यपि । पद्मबीजं माषबीजं दद्याद्दशपलं पृथक् ॥ चतुर्द्रोणांभसा पक्त्वा पादशेषं शृतं नयेत् । जीवनीयगणः कुष्ठं पद्मकं रक्तचंदनम् ॥पत्रकं पिप्पली द्राक्षा कपिकच्छूफलं तथा । नीलोत्पलं नागपुष्पं सारिवे द्वे बले तथा ॥ पृथक् कर्षसमा भागाः शर्करायाः पलद्वयम् । रसश्च पौंड्रकेक्षूणामाढकैकं समाहरेत् ॥ घृतस्य चाढकं दत्त्वा पाचयेन्मृदुनाग्निना । घृतमेतन्निहंत्याशु रक्तपित्तमुरःक्षतम् ॥ हलीमकं पांडुरोगं वर्णभेदं स्वरक्षयम् । वातरक्तं मूत्रकृच्छ्रं पार्श्वशूलं च कामलाम् ॥ शुक्रक्षयमुरोदाहं कार्श्यमोजःक्षयं तथा । स्त्रीणां चैवाग्रजातानां गर्भदं शुक्रदं नृणाम् ॥ कामदेवघृतं नाम हृद्यं बल्यं रसायनम् ॥

अर्थ-असगंध १०० पल, गोखरू ५० पल, खिरेंटीकी जड, गिलोय, शालपर्णी, विदारीकंद, शतावर, पुनर्नवा, पीपल वृक्षकी मूल, सोंठ, कंभारीके फल, कमलगट्टा और उडद ये ग्यारह औषध दश दश पल लेवे जवकूट करके सबको एकत्र करके इसमें कल्क बनाकर डालनेकी औषध इस प्रकार हैं. मुलहटी, विदारीकंद, असगंध, मुद्गपर्णी, माषपर्णी यह जीवनीय गण है. कूठ, पद्माख, लालचंदन, पत्रज, पीपल, दाख, कौंचके बीज, नीला कमल, नागकेशर, गौरीशर, कालीशर, बला, नागबला ये बीस औषध एक एक कर्ष लेवे सबका कल्क करके काढेमें डाल देवे. फिर उस काढेमें खांड दो पल डाले. एवं सपेद ईखका रस और घी ये दोनों एक २ आढक मिलाने चाहिये फिर उस काढेको चूल्हे पर चढाय मंद २ अग्निसे पचायके घृत शेष रखे. इसको छानके उत्तम चीनी अथवा अमृतवान आदि उत्तम पात्रमें भरके धर रखे. इस घृतके सेवन करनेसे रक्त-पित्त, उरःक्षतरोग, पांडुरोगका भेद हलीमकरोग, स्वरभंग, वातरक्त, मूत्रकृच्छ्र, पीठका शूल, नेत्रोंमें कामला होताहै वह, धातुक्षय, उरमें जो रोग होता है वह, देहकी कृशता, शरीरके तेजका क्षय ये संपूर्ण रोग दूर होवें. यह घी जिस स्त्रीके संतान नहीं होती उसको संतान देता है, तथा पुरुषोंके धातु उत्पन्न करेहै, हृदयको हितकारीहै तथा बल देताहै. यह कामदेवघृत रसायन है अर्थात् रोग और बुढापेका नाश करनेवाला है ॥

दूर्वादिघृत ।

दूर्वामुत्पलकिंजल्कं मंजिष्ठां चैलवालुकम् । शिवां लोध्रमुशीरं च मुस्ताचंदनपद्मकैः ॥ विपचेत्कार्षिकैः कल्कैर्घृतप्रस्थं सुखाग्निना । तंदुलांबुमजाक्षीरं दत्त्वा चैव चतुर्गुणम् ॥ तत्पानाद्वमतो रक्तं नाव-नान्नासिकागतम् । कर्णाभ्यां यस्य गच्छेच्च तस्य कर्णौ प्रपूरयेत्॥ चक्षुस्राविणि रक्ते च पूरयेत्तेन चक्षुषी। मेढ्रपायुप्रवृत्तेषु बस्तिकर्म प्रकारयेत ॥ रोमकूपे प्रवृत्ते च तदभ्यंगे प्रयोजयेत् । सर्वेषु रक्त-पित्तेषु तस्माच्छ्रेष्ठमिदं घृतम् ॥

अर्थ-दूब, कमलकी केशर, मजीठ, नेत्रवाला, हरड, लोध पठानी, खस, नागरमोथा, चंदन और पद्माख ये प्रत्येक तोला २ लेवे इनका कल्क और घी ६४ तोले तथा चांवलोंका धोवन, बकरीका दूध ये चौगुने डालके मंदाग्निसे पचन करावे. जब घृत मात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे इसके खानेसे रुधिर और उलटी और, नाकसे रुधिरका गिरना, कानसे निकलनेवाला रुधिर, नेत्रसे गिरनेवाला

रुधिर तथा स्त्रीकी भग, लिंग, गुदा इनसे निकलनेवाला रुधिर इनपर तथा समस्त रोमकूपोंसे जानेवाला रुधिर इनपर इसकी मालिस करे. उलटीवालेको पिलावे और कान नाकसे जाय तो कान नाकमें इसको डाले और लिंग-गुदासे जाता होवे तो बस्ति कर्म करावे. यह सर्व रक्तपित्त विकारोंपर देना श्रेष्ठ कहा है ॥

शतावर्यादिपेय।

शतावरी बला रास्ना काश्मर्यं सपरूषकम्।
पाययेद्रक्तपित्तघ्नं सद्यः शूलहरं परम् ॥

अर्थ-शतावरी, बला, रास्ना, कंभारी और फालसे इनका काढा करके पीवे तो रक्तपित्तका नाश करके शूलका भी नाश करे है ॥

पैत्तिकरक्तपित्तनिदान।

रक्तपित्तं कषायाभं कृष्णं गोमूत्रसन्निभम्।
मेचकागारधूमाभमंजनाभं च पैत्तिकम् ॥

अर्थ-जो रक्तपित्त काढेके रंगसमान हो काला गौके मूत्रसमान हो अथवा मोरकी चन्द्रिकाके समान नीलवर्ण होय अर्थात् बैंजनी रंगके सदृश होय, घरके धूआंके सुर्माके समान होय ये रक्तपित्तके लक्षण हैं. शंका-क्योंजी केवल पैत्तिक रक्तपित्त नहीं हो सके है कारण इसका यह है कि जैसे कफके रक्तपित्तका मार्ग कहा है इस प्रकार पित्तके रक्तपित्तका नहीं कहा ? उत्तर-तुमने कहा सो ठीक है परंतु यह मार्ग जो कहा है सो वातकफके लक्षण प्रति नहीं कहा है ॥

त्रिफलादिकाढा।

त्रिफलाकृतमालभवं क्वथनं सितया मधुना मिलितं हरति।
ननु शोणितपित्तरुजं विविधाघनदाहकपित्तशूलहरम् ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला और अमलतासका गूदा इनका काढा कर उसमें खांड और सहत मिलायके पीवे तो अनेक प्रकारके रक्तपित्त, दाह और पित्तशूल इनको नष्ट करे ॥

अतस्यादिकाढा।

अतसीकुसुमसमंगा वटप्ररोहास्तृणांभसा पीताः।
साधयंति रक्तपित्तं यदि भुंक्ते मुद्गयूषेण ॥

अर्थ-अलसीके फूल, मजीठ, बडकी कोंपल और रोहिसतृण इनका काढा पीवे और इसपर मूंगके यूषके साथ भात खावे तो रक्तपित्तका नाश करे ॥

वासादिलेह ।

वासकस्वरसैः पथ्या सप्तधा परिभाविता ।
कृष्णा वा मधुना लीढा रक्तपित्तं द्रुतं जयेत् ॥

अर्थ-अडूसेके रसकी सात भावना दी हुई हरड सेवन करनेसे रक्तपित्त दूर होवे अथवा पीपलके चूर्णको सहतमें मिलायके चाटे तो रक्तपित्तका नाश होवे ॥

कूष्मांडकावलेह रक्तपित्तादिकोंपर ।

निष्कुलीकृतकूष्मांडखंडं पलशतं पचेत् । निक्षिप्य द्वितुलं नीरमर्धशिष्टं च गृह्यते ॥ तानि कूष्मांडखंडानि पीडयेत् दृढवाससा । आतपे शोषयेत्किंचिच्छूलाग्रैर्बहुशो व्यधेत् ॥ क्षिप्त्वा ताम्रकटाहे च दद्यादष्टपलं घृतम् । तेन किंचिद्भर्जयित्वा पूर्वोक्तं तज्जलं क्षिपेत् ॥ खंडापलं शतं दत्त्वा सर्वमेकत्र पाचयेत् । सुपक्वे पिप्पली शुंठी जीरकं द्विपलं पृथक् ॥ पृथक् पलार्धधान्याकं पत्रैलामरिचत्वचम् । चूर्णीकृत्य क्षिपेत्तत्र घृतार्धं क्षौद्रमावहेत् ॥ खादेदग्निबलं दृष्ट्वा रक्तपित्ती क्षयी ज्वरी । शोषस्तृषातमश्छर्दिकासश्वासक्षतातुरः ॥ कूष्मांडकावलेहोऽयं बालवृद्धेषु युज्यते । उरःसंधानकृद्वृष्यो ग्रहणीबलकृन्मतः ॥

अर्थ-पुराने पके हुए पेठेकी ऊपरका छिलका छीले फिर बनारके उसके बीज दूर कर टुकडे कर १०० पल लेवे. इसको प्रथम चूनेके पानीमें गेरके शुद्ध कर लेवे फिर दो तुला (२०० पल) जलमें गेरके औटावे जब आधा जल रहे तब उतारके जलको छान लेवे. और उस जलको अलग धर रखे और उन पेठेके कतलानको मजबूत कपडेमें बांधके निचोड लेवे. फिर उन टुकडोंको किंचित् धूप देकर छेदनेके कांटेसो खूब छेद लेवे. फिर तांबेके कलईदार पात्रमें ८ पल घी डालके उन टुकडोंको डाल आंचपर रखके भून लेवे फिर पूर्वोक्त पेठेसे निकाले हुए जलको कढाईमें चढायके मिश्री २०० पल गेरके दुतारी चासनी करे. फिर इसमें चूर्ण डालनेकी औषध इस प्रकार लेवे. पीपल, सोंठ, जीरा ये तीनों और दो दो पल तथा धनिया, पत्रज, इलायची, काली मिरच, दालचीनी ये पांच औषध दो दो तोले लेवे सबको एकत्र चूर्ण कर प्रथम पेठेके टुकडे डाले फिर इस चूर्णको डालके सबको एक जीव कर देवे इसमें सहत चार

पल डाले, इसको कूष्मांडावलेह कहते हैं यह अवलेह रोगीकी शक्ति और अग्निका बलाबल विचारके देवे तो रक्तपित्त, क्षय, ज्वर, शोष, प्यास, नेत्रोंके सामने अंधेरीका आना, वमन, श्वास, खांसी, उरःक्षत ये रोग दूर हों. यह अवलेह बालकोंको तथा वृद्धोंको उपयोगी होताहै. तथा हृदयमें अन्नका रस आताहै उसका साधक होताहै. तथा स्त्रीसंग करनेकी इच्छा उत्पन्न करे. तथा धातुवृद्धि करे और बल देता है ॥

कफयुक्त रक्तपित्तनिदान ।

सांद्रं सपांडु सस्नेहं पिच्छलं च कफान्वितम् ॥

अर्थ—सघन कुछ पीला और कुछ चिकना तथा गाढा ऐसा रक्तपित्त कफमिश्रित जानना ॥

अभयाभक्षण ।

अभया मधुसंयुक्ता पाचनी दीपनी मता ।
श्लेष्माणं रक्तपित्तं च हंति शूलातिसारजित् ॥

अर्थ—हरडका चूर्ण कर सहतके साथ सेवन करनेसे पाचक, दीपक और कफ, रक्त तथा पित्त इनका नाशक, शूल, अतिसार इनके जीतनेवाली है ॥

कफवायुके संबंधसे रक्तका प्रवर्त्तनमार्ग ।

ऊर्ध्वगं कफसंसृष्टमधोगं मारुतानुगम् ॥

अर्थ—ऊपरके मार्गसे कफका और नीचेके मार्ग होकर वातका रक्तपित्त जानना ॥

आज्यपान ।

शृतेनाज्येन पयसा सुपिष्टं कुंकुमं भवेत् ।
ऊर्ध्वरक्तविनाशाय तेनैवाज्येन भोजनम् ॥

अर्थ—बकरीके दूधमें केशर मिलायके पीवे और बकरीके दूधके वा घीके साथ भात भोजन करे तो ऊर्ध्वगत रक्तपित्त बंद होवे ॥

ह्रीबेरादिजल ।

ह्रीबेरचंदनोशीरं मुस्तपर्पटकैः शृतम् ।
केवलं शृतशीतं वा दद्यात्तोयं पिपासिते ॥

अर्थ—नेत्रवाला, चंदन, खस, नागरमोथा और पित्तपापडा इनका काढा अथवा इनका चाहके सदृश जल उतारके शीतल करके पीनेको देवे तो तृषा दूर होवे ॥

मृद्वीकादिगुटी।

लोहगंधानिभश्वासे डकारे रक्तगंधिनि।
मृद्वीकोषणमात्रात्तु खादेद्द्विगुणशर्कराम् ॥

अथ-जिस रक्तपित्तवालेकी श्वासमें गरम लोह पर जल छिडकनेसे जैसी दुर्गंध आती है और डकारमें रुधिरकीसी दुर्गंध आवे उस पर गोस्तनी दाख, मिरच इनसे दुगुनी खांड डालके गोली बनावे और भक्षण करे तो पूर्वोक्त रक्तपित्तके उपद्रव नहीं होवे ॥

पारावतादियूष।

पारावतकपोतांश्च लावान् रक्ताक्षवर्तकान्।
शशान्कपिंजलानेणान्हारिणान्कालपुच्छकान् ॥
रक्तपित्तहरान्विद्याद्रसं तेषां प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-परेवा, कपोत (पिंडुकिया), लवा, कबूतर तथा बटेर ये पक्षी और ससा, सपेद तीतर, काला हरिण, दुवा ये पशु रक्तपित्तनाशक हैं इसवास्ते इनके मांसका रस तैयार करके पीवे ॥

घृतसैंधवयोग।

ईषदम्लाननम्लांश्च घृतभ्रष्टान् ससैंधवान्।
कफानुगे यूषशाकं दद्याद्वातानुगे रसम् ॥

अर्थ-कफजन्य रक्तपित्त पर कुछ खट्टे किंवा मीठे पदार्थ घीमें भून सेंधेनिमकमें मिलायके देवे. किंवा यूष तथा शाक देवे. यदि वातानुबंध होवे तो उसको मांसरस देवे ॥

पथ्य और जलपान।

पथ्यं सतीनयूषेण ससितैर्लाजसक्तुभिः।
जलं खर्जूरमृद्वीकामधुकैः सपरूषकैः ॥

अर्थ-मटरका यूष, खील, सत्तू और खांड ये पथ्यमें देवे. तथा खजूर, दाख, मुलहटी और फालसे इनका काढा कर छान लेवे और शीतल करके यह जल पीनेको देवे ॥

द्वंद्वजसान्निपातरक्तपित्तनिदान।

संसृष्टलिंगं संसर्गात्त्रिलिंगं सान्निपातिकम् ॥

अर्थ—दो दोषके मिलनेसे जो रक्तपित्त होय है उसमें दोनों दोषोंके लक्षण मिलनेसे द्विदोषज जानना और जिसमें तीनों दोषोंके लक्षण मिलते हों उसको सन्निपातका रक्तपित्त जानना ॥

असाध्यरक्तपित्तलक्षण ।

द्विमार्गं कफवाताभ्यामुभाभ्यामनुवर्तते । ऊर्ध्वं साध्यमधो याप्य-
मसाध्यं युगपद्गतम् ॥ एकमार्गं बलवतो नातिवेगं नवोत्थितम् ।
रक्तपित्तं सुखे काले साध्यं स्यान्निरुपद्रवम् ॥ एकदोषानुगं साध्यं
द्विदोषं याप्यमुच्यते । त्रिदोषजमसाध्यं स्यान्मंदाग्नेरतिवेगितम् ॥

अर्थ—दोनों मार्गसे जो रक्तपित्त निकले सो वात और पित्त इन दोषोंसे प्रगट भया जानना. ऊपरके मार्गसे लोही निकले सो साध्य है (क्योंकि कफसे प्रगट है सो कफ-के रक्तपित्तमें क्वाथ तीखे रस कफ पित्तके हरण कर्त्ता होते हैं) और नीचेके मार्गसे जिसमें रुधिर गिरे सो याप्य (साध्यासाध्य) है. [इसका कारण यह है कि पित्तके हरणमें विरेचन मुख्य है और इसपर वातपित्त शमन करनेवाला मधुर रस प्रधान है, वमन देनेसे विरुद्धमार्गी होय है अर्थात् वेगमात्रका अवरोधक है. परंतु पित्तका हरण करनेवाला नहीं है] और दोनों मार्गसे गिरनेवाला रक्तपित्त असाध्य है. कारण इसपर विरुद्ध चिकित्सा करनी पडती है. बलवान् पुरुषके एक मार्ग (अर्थात् ऊपरके मार्ग) से जाता होय अति वेग नहीं होवे नवीन प्रगट भया होय और हेमन्त शिशिर कालमें प्रगट भया हो और दुर्बलता आदि उपद्रवरहित होय, ऐसा रक्तपित्त साध्य होय है. एक दोषका रक्तपित्त साध्य है द्विदोषका याप्य है और तीनों दोषोंका असाध्य है. मन्दाग्नि अतिवेगसे होय है ॥

असाध्यलक्षण ।

व्याधिभिः क्षीणदेहस्य वृद्धस्यानश्नतश्च यत् ॥

अर्थ—रोगसे क्षीण देहवालेका बूढे मनुष्यके और जिसका आहार थक गया होय ऐसे मनुष्यके रक्तपित्त असाध्य होय है ॥

रक्तपित्तके उपद्रव ।

दौर्बल्यं श्वासकासज्वरवमथुमदाः पांडुतादाहमूर्च्छा भुक्ते घोरो
विदाहस्त्वधृतिरपि सदा ह्यतुल्या च पीडा । तृष्णा कोष्ठस्य
भेदः शिरसि च तपनं पूतिनिष्ठीवनत्वं भक्तद्वेषाविपाको विकृ-
तिरपि भवेद्रक्तपित्तोपसर्गाः ॥

अर्थ-अशक्तता, श्वास, खांसी, ज्वर, वमन धतूरेके फूल खानेसे जैसी अवस्था होय ऐसी अवस्था, शरीरका पीला वर्ण हो जावे, दाह, मूर्च्छा, अन्न खानेसे अत्यंत दाह होय, अधीरजपना, सर्व काल हृदयमें विलक्षण पीडा, प्यास, कोष्ठभेद (अर्थात् मल पतला होय) मस्तकमें पीडा, दुर्गंधयुक्त थूकना, अन्नमें अरुचि, आहारका परिपाक न होना, ये रक्तपित्तके उपद्रव हैं और उसी प्रकार उस रक्तपित्तकी विकृतिभी होय है ॥

असाध्यलक्षण ।

येन चोपहतो रक्तं रक्तपित्तेन मानवः । पश्येद्दृश्यं वियच्चापि तच्चासाध्यमसंशयम् ॥ लोहितं छर्दयेद्यस्तु बहुशो लोहितेक्षणः । लोहितोद्गारदर्शी च म्रियते रक्तपैत्तिकः ॥

अर्थ-जिस रक्तपित्तने मनुष्यको ग्रस लिया होय वह दृश्य कहिये घटपटादि और अदृश्य कहिये आकाश इनको रक्तवर्णका देखे वह रोगी निःसन्देह असाध्य जानना. जो वारंवार रुधिरकी वमन करे और जिसके लाल नेत्र होंय तथा डकार भी लाल आवे सो रक्तपित्तवाला रोगी मर जावे ॥

वृषादिस्वरस ।

वृषपत्राणि निष्पीड्य रसं समधुशर्करम् ।
अनेन प्रशमं याति रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥

अर्थ-अडूसेके स्वरसमें सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो भयंकर भी रक्तपित्त-रोग दूर होवे ॥

मातुलिंग्यादिपेय ।

मूलानि पुष्पाणि च मातुलिंग्याः समं पिबेत्तंदुलधावनेन ।
घ्राणप्रवृत्ते जलमाशु देयं सशर्करं नासिकयोः पयो वा ॥

अर्थ-बिजोरेकी जड और फूलको चावलके धोवनमें पीसके पीवे. अथवा बिजोरेकी जडका वा फूलका रस निकाल उसमें मिश्री किंवा दूध डालके नाकमें डाले तो नाकसे रुधिरका गिरना बंद हो ॥

उदुंबरादियोग ।

उदुंबराणि पक्वानि गुडेन मधुनापि वा ।
उपभुक्तानि निघ्नंति नासारक्तं नृणां ध्रुवम् ॥

अर्थ–गूलरके पके हुए फलोंको बराबरके गुडमें मिलायके खाय तो नाकसे रुधिरका गिरना बंद होय ॥

अश्वत्थपत्रयोग ।

अश्वत्थपत्राग्ररसात् षडंशो बोलोऽथ तस्माद् द्विगुणं मधु स्यात् ।
रक्तप्रवाहं हृदयस्थितं वा वातो यथाभ्रं हरते तथैव ॥

अर्थ–पीपलके पत्तोंके अग्रभागका रस एक भाग और रक्तबोल छः भाग इसका दुगुना सहत ले सबको एकत्र करके पीवे तो रुधिरका प्रवाह तथा हृदयमें संचित रुधिरको दूर करे जैसे पवन बादलोंको नष्ट करे है ॥

चित्रकचूर्णयोग ।

जयेन्नासाश्रितं रक्तं लीढं वा क्षौद्रपावकम् ॥

अर्थ–सहतके साथ चित्रके चूर्णको चाटे तो नाकसे रुधिरका जाना बंद होवे ॥

गंधकादिप्राशन ।

गंधं सूतं माक्षिकं लोहचूर्णं सर्वं घृष्टं त्रैफलेनोदकेन ।
लौहे पात्रे गोपयसा च धृत्वा रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशांत्यै ॥

अर्थ--गंधक, पारा, सुवर्णमाक्षिकभस्म, लोहभस्म, सबको एकत्र करके लोहेके पात्रमें त्रिफलेके काढेसे खरल करे तथा गौके दूधके साथ रात्रिके समय पीवे तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

दुग्धादियोग ।

पयः सिताढ्यं शृतशीतमाज्यं गव्यं पयो वा प्रसमीक्ष्य वह्निम् ।
यष्टीमधूकार्जुनभावनीयं द्राक्षाथ वा गोक्षुरकैः शृतं वा ॥
द्राक्षया फलिनीमिव विलयान्तागरेण वा । श्वदंष्ट्र्या शतावर्या रक्तजित्साधितं पयः ॥

अर्थ–गौका अथवा बकरीका दूध, मुलहटी, महुआ, अथवा कोह इनसे किंवा दाख, खिरेटी और गोखरू इनसे अथवा दाख और फूलप्रियंगु इनसे अथवा खिरेटी और सोंठ, इनसे तथा गोखरू और शतावर इनको डालके औटावे फिर शीतल करके देवे तो रक्तपित्तको शमन करे ॥

वासास्वरस ।

वासायां विद्यमानामाशायां जीवितस्य च ।

रक्तपित्ती क्षयी कासी किमर्थमवसीदति ॥

अर्थ–पृथ्वीपर अडूसा है इस आशासे जीवनेवाले जो रक्तपित्ती, क्षयरोगी और खांसीरोगवाले क्यों व्यर्थ दुःख पाते हैं ? अर्थात् जब अडूसा पृथ्वीपर है तब आप लोग उसको क्यों नहीं सेवन करते कि जिससे तुम्हारा रोग नष्ट हो जावे ॥

लाक्षादियोग ।

क्षीरेण लाक्षां मधुमिश्रितेन प्रपीय जीर्णे पयसानुमद्यम् ।
सद्यो निहन्याद्रुधिरं क्षतोत्थं कांतार्जुनानामथवापि कल्कः ॥

अर्थ--दूधमें लाख और सहत डालके पीवे, जब यह पच जावे तब दूधमें मद्य मिलायके पीवे तो तत्काल घावसे निकलनेवाला रुधिर बंद होवे अथवा कांतलोहकी भस्म कोह वृक्षकी छालके चूर्णके साथ मिलायके देवे तो वह निकलते हुए रुधिरको बंद करे ॥

मध्वादिपेय ।

मध्वाटरूषकरसौ यदि तुल्यभागौ कृत्वा नरः
पिबति पुण्यतरः प्रभाते । तद्रक्तपित्तमतिदारुण-
वश्यमाशु यद्वत् प्रशाम्यति जलैरिव वह्निपुंजः ॥

अर्थ–सहत और अडूसेका रस दोनोंको समान भाग लेकर प्रातःकाल यदि पीवे तो दारुण भी रक्तपित्त तत्काल दूर होय. जैसे जल अग्निके समूहको शांत करता है ॥

मधुकादिकल्क ।

कल्कं मधूजात्रिफलार्जुनानां निशि स्थितं लोहमये सुपात्रे ।
साज्यं विलिह्यादनुपिबेत्सुशीतं सशर्करं छागपयः क्षतार्तः ॥

अर्थ–मुलहटी, हरड, बहेडा, आंवला और कोहवृक्ष इनका कल्क रात्रिके समय लोहेके पात्रमें धर देवे प्रातःकाल घी मिलायके देवे तथा इनके ऊपर बकरीका दूध औटा हुआ और मिश्री मिला हुआ देवे तो रक्तपित्तका नाश होवे ॥

ह्रीवेरादि काढा ।

ह्रीवेरमुत्पलं धान्यं चंदनं यष्टिकामृता । उशीरं च तृषश्चैषां
क्वाथः समधुशर्करः ॥ पाययेत्तेन सद्यो हि रक्तपित्तं प्रणश्यति ।
रक्तपित्तं जयत्युग्रं तृष्णां दाहं ज्वरं तथा ॥

अर्थ–नेत्रवाला, कमल, धनिया, चंदन, मुलहटी, गिलोय, खस, अडूसा इनका काढा सहत और मिश्री डालके देवे यह उग्र रक्तपित्त, तृषा, दाह और ज्वर इनको नाश करे॥

पद्मोत्पलादिकाढा।

पद्मोत्पलानां किञ्जल्कः पृष्ठिपर्णी प्रियंगुका।
वासापत्रसमुद्भूतो रसः समधुशर्करः॥
क्वाथो वा हरते पीतो रक्तपित्तं सुदारुणम्॥

अर्थ–सफेद कमल और नीला कमल इनकी केशर, पृष्ठिपर्णी, फूलप्रियंगु और अडूसेके पत्ते इनका स्वरस अथवा काढा पीवे तो अतिकठिनभी रक्तपित्त नाश होवे॥

इक्ष्वादिकाढा।

इक्षूणां मध्यकाण्डानि सकंदं नीलमुत्पलम्। केसरं पुण्डरीकस्य मोचं मधुकपद्मके॥ वटप्ररोहशुंगाश्च द्राक्षा खर्जूरमेव च। एतानि समभागानि कषायमुपकल्पयेत्॥ द्युषितं मधुसंयुक्तं कषायं शर्करान्वितम्। स प्रमेहं रक्तपित्तं क्षिप्रमेतन्नियच्छति॥

अर्थ–ईखकी बीचकी पोई, कंदसाहित नीला कमल, सफेद कमलकी केशर, मोचरस, मुलहटी, पद्माख, बडकी कोपल और बडकी मुँहमुदी कली, दाख और खजूर ये सब समान भाग लेवे सबका काढा करे फिर उतारके शीतल करे पश्चात् इसमें सहत और मिश्री डालके पिलावे तो प्रमेह और रक्तपित्त इनका नाश करे॥

चन्दनादिकाढा।

चंदनेन्द्रयवा पाठा कटुका सुदुरालभा। गुडूची वालकं लोध्रं पिप्पली क्षौद्रसंयुतम्॥ कफान्वितं जयेद्रक्तं तृष्णाकासज्वरापहम्॥

अर्थ–लाल चंदन, इन्द्रजौ, पाढ, कुटकी, धमासा, गिलोय, नेत्रवाला, पठानी लोध और पीपल इनका काढा करके उसमें सहत डालके पिलावे तो कफ, रक्तपित्त, तृषा, खाँसी और ज्वर इनको दूर करे॥

उशीरादिकाढा।

उशीरं चंदनं पाठा द्राक्षा मधुकपिप्पली।
सक्षौद्रं पाययेत् क्वाथं रक्तपित्तहरं ध्रुवम्॥

अर्थ-खस, लाल चंदन, पाढ, दाख, मुलहटी और पीपल इनके काढेमें सहत डालके पीवे तो निश्चय रक्तपित्तको हरण करे ॥

अमृतादिकाढा ।

अमृता मधुकं चैव खर्जूरं गजपिप्पली ।
क्वाथः क्षौद्रयुतो ह्येष रक्तपित्तविकारनुत् ॥

अर्थ-गिलोय, मुलहटी, खजूर और गजपीपल इनके काढेमें सहत डालके पीवे तो रक्तपित्तसंबंधी विकारोंका नाश करे ॥

ह्रीबेरादि काढा ।

ह्रीबेरधान्यकं शुंठी चंदनं मधुयाष्टिका ।
वृषोशीरयुतः क्वाथः शर्करामधुयोजितः ॥
रक्तपित्तं जयत्युग्रं तृष्णां दाहज्वरं तथा ॥

अर्थ-नेत्रवाला, धनिया, सोंठ, लालचंदन, मुलहटी, अडूसेके पत्ते और खस इनका काढा सहत और मिश्री डालके पीवे तो घोर अतिसार, प्यास, दाह और ज्वर इनको दूर करे ॥

मुद्गादिकाढा ।

मुद्गाः सलाजाः सयवाः सकृष्णाः सोशीरमुस्ताः सह चंदनेन ।
बलाजलैः पर्युषितः कषायः स रक्तपित्तं शमयत्युदीर्णम् ॥

अर्थ-मूंग, खील चामलकी, जौ, पीपल, खस, नागरमोथा, चंदन और खिरेटी इन सबको जौ कूट करके रात्रिके समय कोरे कुल्हडेमें भिगो देवे. दूसरे दिन प्रातःकाल काढा करके पीवे तो रक्तपित्त शांत होवे ॥

यष्ट्यादिकाढा ।

यष्टीमधुसमायुक्तं क्षीरं संक्वाथ्य शीतलम् ।
शर्करामधुसंमिश्रं रक्तपित्तापहं पिबेत् ॥

अर्थ-मुलहटी और दूध इनका काढा करके शीतल कर लेवे. फिर इसमें मिश्री और सहत डालके पीवे तो रक्तपित्तका नाश होय ॥

पलाशकल्क व काढा ।

पलाशकल्कः क्वाथो वा सुशीतः शर्करान्वितः ।
पिबेद्वा मधुसर्पिभ्यां गवाश्वशकृतो रसम् ॥

अर्थ–पलाश (ढाक) के फूलोंको पीस उसमें मिश्री मिलायके पीवे. अथवा उन फूलोंका काढा करके उसमें खांड मिलायके पीवे अथवा गौके गोबरका रस अथवा घोडेकी लीदके रसमें सहत और घी डालके पीवे तो रक्तपित्त दूर होय ॥

आटरूषादिकाढा ।

आटरूषकनिर्यूहः प्रियंगूमृत्तिकांजने ।
विनीय लोध्रं सक्षौद्रं रक्तपित्तहरं पिबेत् ॥

अर्थ–अडूसेका रस, फूलिप्रियंगू, फिटकरी, रसोत और लोध इनके काढेमें सहत डालके पीवे तो रक्तपित्तका नाश करे ॥

वासादिकाढा ।

वासाकषायोत्पलमृत्प्रियंगुलोध्रांजनांभोरुहकेसराणि ।
पीत्वा सितक्षौद्रयुतानि जह्यात् पित्तासृजो वेगमुदीर्णमाशु ॥

अर्थ–अडूसा, कमल, फिटकरी, फूलप्रियंगू, लोध, रसोत, कमलकी केशर इनका काढा सहत डालके और मिश्री मिलायके पीवे तो रक्तपित्त नाश होय ॥

उशीरादिचूर्ण ।

उशीरकालीयकलोध्रपद्मकं प्रियंगुकाकट्फलशंखगैरिकम् ।
पृथक्पृथक्चंदनतुल्यभागिकं सशर्करं तंदुलधावनप्लुतम् ॥
सरक्तपित्तं तमकं पिपासां दाहं च पीतं शमयेद्धि सद्यः ॥

अर्थ–खस, दारुहलदी, लोध, पद्माख, फूलप्रियंगू, कायफल, शंख गेरू ये सब समान भाग लेके चूर्ण करे इसमें मिश्री मिलाय चांवलोंके धोवनके साथ देवे तो रक्तपित्त, तमकश्वास, प्यास और दाह ये नष्ट होंय ॥

मृद्वीकादिचूर्ण ।

मृद्वीका चंदनं लोध्रं प्रियंगुं च विचूर्णयेत् । चूर्णमेतत्पिबेत्क्षौद्र-
वासारससमन्वितम् ॥ नासिकामुखपायुभ्यो योनिमेढ्राच्च वेगतः ।
रक्तपित्तं स्रवद्धंति सिद्धये स प्रयोगराट् ॥ यच्च शस्त्रक्षतेनैव
रक्तं स्रवति वेगतः । तदप्यनेन चूर्णेन तिष्ठत्येवावचूर्णितम् ॥
मेढ्रतोऽतिप्रवृत्तेस्रे बस्तिरुत्तर इष्यते ॥

अर्थ–दाख, चंदन, लोध पठानी, फूलप्रियंगू इनका चूर्ण करके इसको अडूसेके रस और सहतके साथ पीवे तो नाक, मुख, शिश्न, गुदा और योनि इनसे गिरने–

वाला रुधिर, स्रवनेवाला रक्तपित्त, घावमेंसे वहनेवाला रक्तपित्त इनको बंद करे. अथवा शिश्नेन्द्रियसे यदि रुधिर वहने लगे तो इस औषधीसे उत्तर बस्ति करे तो रुधिर बंद होवे॥

चंदनादिचूर्ण ।

चंदनं नलदं लोध्रमुशीरं पद्मकेसरम् । नागपुष्पं च बिल्वं च भद्रमुस्तं सशर्करम् ॥ ह्रीबेरं चैव पाठा च कुटजोत्पलमेव च । शृंगबेरं सातिविषा धातकी सरसांजना ॥ आम्रास्थि जंबुसारास्थि तथा पाचरसोऽपि च । नीलोत्पलं समंगा च सूक्ष्मैला दाडिमत्वचः ॥ चतुर्विंशतिरेतानि समभागानि कारयेत् । तंदुलोदकसंयुक्तं मधुना सह योजयेत् ॥ अतिसारान्तथा छर्दिं स्त्रीणां चापि रजोग्रहम् । प्रच्युतानां च गर्भाणां स्थापनं परमिष्यते ॥ अश्विनोः संमतो योगो रक्तपित्तनिबर्हणः ॥

अर्थ–चंदन, जटामांसी, लोध, नेत्रवाला, कमलकी केशर, नागकेशर, बेलफल, भद्रमोथा, मिश्री, खस, पाढ, कूडेके बीज (इन्द्रजौ), कमल, सोंठ, अतीस, धायके फूल, रसोत, आमकी गुठली, जामुनकी गुठली, पाच नीले कमल, मजीठ, इलायची, अनारकी छाल, ये बीस पदार्थ समान भाग लेवे सबका चूर्ण कर चावलके धोवनके साथ सहत मिलायके पीवे तो सम्पूर्ण अतिसार, वांति, स्त्रियोंका प्रदर इनको नष्ट करे. तथा यह गर्भस्थापन करनेवाला है. यह योग रक्तपित्त नाश करनेको अश्विनीकुमारका संमति करा हुआ है ॥

पत्रकादिचूर्ण ।

पत्रत्वगेलानतचंदनानां श्यामाकशुंठीमधुकोत्पलानाम् । स्याद्वात्रिवासाद्विगुणोत्तराणां चूर्णं सिताक्षौद्रसमन्वितानाम् ॥ खादेज्ज्वरे लोहितरक्तपित्ते कासे क्षये लोहितमूत्रकृच्छ्रे । रक्तेऽतिनिष्ठीवति गात्रसादे दाहे च सद्यः स्मृतिविभ्रमे च ॥ देहस्थिते तूर्ध्वगते च वाते श्वासे सहिक्कासु हृदामयेषु । मनोभितापे सततांगतापे योन्यामये सप्रदरे च रोगे ॥ रक्तेऽतिमात्रं पतिते मुखाभ्यां गुदेऽथ नासामुखमेढ्रयोनौ । रक्तस्य पित्तस्य विनाशनार्थं सूक्तं च शिष्टेन महद्गदघ्नम् ॥

अर्थ–पत्रज २, दालचीनी ४, इलायची ६, तगर ८, चंदन १०, समा १२, सोंठ १४, मुलहटी १६, कमल १८, आंवले २० और अडूसा २२ भाग लेवे. तथा इन सब औषधोंके द्विगुणोत्तर भागके अनुसार चूर्ण करे. इसमें मिश्री और सहत मिलायके देवे तो ज्वर, रक्तपित्त, खांसी, क्षय, रक्तकृच्छ्र, रुधिरकी उलटी, देहका रह जाना, स्मृतिनाश (भूलका रोग), ऊर्ध्व वात (डकारोंका बहुत आना), श्वास, खांसी, हृदयरोग, मनका संताप, अंगताप, योनिरोग, प्रदररोग, मुख, गुदा, नाक, शिश्न और योनि इनसे अत्यन्त रुधिरका जाना और रक्तपित्त इन सब रोगोंका नाश करै ॥

कर्पूरादिचूर्ण ।

कर्पूरकं च कंकोलं जातीफलदलं समम् । लवंगं स्यात्समरिचं कृष्णा शुंठी विवृद्धितः ॥ चूर्णं समासितं हृद्यं दीपनं वह्निकारकम् । रक्तपित्तं प्रतिश्यायं श्वासं कासमरोचकम् ॥ हृद्रोगं च जयेच्छ्रीघ्रमिंद्रारिमशनिर्यथा ॥

अर्थ–कपूर भीमसेनी, कंकोल, जायफल, जावित्री, लौंग, काली मिरच, पीपल और सोंठ ये पदार्थ एक, दूसरा दूना इस क्रमसे लेवे सबको एकत्र कर उस चूर्णके समान मिश्री मिलायके देवे तो हृदयको हितकारी (दिलको कुव्वत देनेवाला), दीपन और अग्निकारक है. तथा रक्तपित्त, पीनस, श्वास, खांसी, अरुचि तथा हृदयका रोग इनको नाश करे. जैसे इन्द्रका वज्र शत्रुओंका नाश करे है ॥

वासापुटपाक ।

पिष्टानां वृषपत्राणां पुटपाको रसो हिमः ।
मधुयुक्तो जयेद्रक्तपित्तकासज्वरक्षयान् ॥

अर्थ–अडूसेके पत्तोंको पीस पुटपाकसे उनको भूनके रस निकाल शीतल कर लेवे. फिर इसमें सहत डालके पीवे तो रक्तपित्त, खांसी, ज्वर, क्षय इनका नाश करे ॥

एलादिगुटी रक्तपित्तादिकों पर ।

एलापत्रत्वचो द्राक्षाः पिप्पल्यर्धपलं तथा । शिलामधुकखर्जूरमृद्वीकाश्च पलोन्मिताः ॥ संचूर्ण्य मधुना युक्तां गुटिकां संप्रकल्पयेत् । अक्षमात्रां ततश्चैकां भक्षयेत्तां दिने तथा ॥ कासश्वासं

ज्वरं हिक्कां छर्दिं मूर्च्छां मदं भ्रमम् । रक्तनिष्ठीवनं तृष्णां पार्श्वशूल-मरोचकम् ॥ शोषं प्लीहं मूढवातं स्वरभेदं क्षतक्षयम् । गुटिका तर्पणी वृष्या रक्तपित्तं विनाशयेत् ॥

अर्थ-इलायची, पत्रज, दालचीनी, दाख और पीपल ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे, शिलाजीत, मुलहटी, खर्जूर और मुनक्का दाख ये प्रत्येक चार ४ तोले, लेवे; सबको कूट पीस सहत डालके १ तोलेकी गोली बनायके इसमेंसे नित्यप्रति एक गोली खाया करे तो खांसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, वमन, मद, मूर्च्छा, भ्रम, मुखसे रुधिरका गिरना, प्यास, पार्श्वशूल (पसलीका दर्द), अरुचि, शोष, प्लीहा (तिल्ली), मूत्राघात, स्वरभंग, क्षतक्षय और रक्तपित्त इनका नाश करे. तथा वृष्य और तृप्तिका देनेवाला है ॥

हरीतक्यादिनस्य ।

हरीतकीदाडिमपुष्पदूर्वालाक्षारसो नस्यविधानयोगात् ।
निवारयत्येव चिरप्रवृत्तमप्याशु नासांतरशोणितौघम् ॥

अर्थ-हरड, अनारका फूल, दूबका रस और लाख इन सबके रसको एकत्र कर नाकमें डाले तो बहुत दिनका व पडनेवाला नाकसे रुधिर बंद होवे ॥

मस्तकलेप ।

नासाप्रवृत्तं रुधिरं घृतभ्रष्टं श्लक्ष्णपिष्टमामलकम् ।
सेतुरिव रुधिरवेगं रुणद्धि मूर्ध्नि प्रलेपः ॥

अर्थ-आंवलेको घीमें भूनके उसका बारीक चूर्ण करे फिर पानी मिलायके मस्तक पर लेप करे तो यह लेप नाकसे रक्तपित्तका जो रुधिर गिरता है उसको बंद करे ॥

कल्प व घृत ।

शीतलामलकल्केन शतधौतघृतेन च ।
मुंडयित्वा शिरो लेपः करणीयः पुन पुनः ॥

अर्थ-शीतल आंवलोंका कल्क तथा सौ वार धुला हुआ घी इनका मस्तक मुंडायके उस पर शीतल २ लेप वारंवार करे ॥

नस्य ।

नस्यं दाडिमपुष्पोत्थं रसो दूर्वाभवोऽथ वा । आम्रास्थिजं पलां-

इत्थं नासिकास्रावि रक्ताजित् ॥ नासाप्रवृत्ते रुधिरे जलनस्यं प्रशस्यते ॥

अर्थ—अनारके फूलके रसकी अथवा दूबके रसकी अथवा आमकी गुठली लहसनके रसकी अथवा शीतल जल इनकी नस्य देवे तौ नासिकासे रुधिरका गिरना दूर होवे ॥

दूसरा प्रकार ।

भृंगगृहं तु क्षीरेण नारीणां नावनाज्जयेत् ।
लोहं खदिरसारेण नासिकारक्तनाशनम् ॥

अर्थ—भृंगी (पीले रंगकी मक्खी) के घरको स्त्रियोंके दूधमें मिलायके नस्य देवे तथा लोहभस्म और कत्था दोनोंको मिलायके नस्य देवे तो नाकसे रुधिरका गिरना अर्थात् नकशीर बंद होय ॥

आर्द्रकादिनस्य ।

शृंगगैरिकयोः कल्कं धातक्या मधुकस्य च ।
घ्राणस्रुतेऽसृजि प्रोक्तं योषित्क्षीरेण नावनम् ॥

अर्थ—अदरख, गेरू वा फिटकरी, धायके फूल, मुलहटी इनके चूर्णको स्त्रियोंके दूधमें मिलायके नस्य देवे तो नकशीर बंद होवे ॥

हरीतक्यादिनस्य ।

अभया दाडिमीपुष्पं लांगलीपिष्टमंभसा । नस्यतो हंति नासाया रक्तस्रावमतिस्रुतम् ॥ त्रिदिनं शर्कराक्षीरप्लुतं गोधूमचूर्णकम् । नासारक्तं वारयति वेगतो वहमानकम् ॥

अर्थ—हरड, अनारका फूल, कलयारी इनको जलमें पीसके नस्य देवे; अथवा खांड और दूध डालके गेहूँका चून मिलायके नस्य देवे तो नकसीरके जाते हुए रुधिरको बंद करे ॥

कूष्मांडकावलेह ।

खंडकामलकेभ्यस्तु रसः प्रस्थद्वयोन्मितः । खंडकूष्मांडमेकैकं संस्विद्य रसमाहरेत् ॥ अन्यत्र खंडकूष्मांडे समंतः सकलो रसः । पंचाशच्च पलं स्विन्नं कूष्मांडात्प्रस्थमाज्यतः ॥ पक्वं पलशतं

खंडं वासाक्काथाढके पचेत् । शिवा धात्रीफलं भार्ङ्गी त्रिसुगंधैश्च कार्षिकैः ॥ तालीसविश्वधान्याकमरिचैश्च पलांशकैः । पिप्पली कुडवं चैव मधुना संप्रदापयेत् ॥ कासं श्वासं ज्वरं हिक्कां रक्तपित्तं हलीमकम् । हृद्रोगमम्लपित्तं च पीनसं च व्यपोहति ॥

अर्थ-मिश्री और आँवलोंका रस प्रत्येक १२८ तोले तथा पेठेके टुकडोंको भूनके उनका रस २०० तोले, गौका घी ६४ तोले तथा पके हुए पेठेके टुकडे ४०० तोले, अडूसेका रस २५६ तोले लेके काढेमें पचावे. जब गाढा हो जावे तब हरड, आंवला, भांरगी, तज, पत्रज और इलायची ये प्रत्येक तोला तोला लेके तथा तालीसपत्र, सोंठ, धनिया और काली मिरच ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे और पीपल १६ तोले तथा सहत ३२ तोले डालके धर रक्खे इसमेंसे रोगीका अग्निबल विचारके खानेको देवे तो खांसी श्वास, ज्वर, हिचकी, रक्तपित्त, हलीमक, हृदयरोग, अम्लपित्त और पीनस इनको दूर करे ॥

दूसरा प्रकार ।

पुराणं पीनमानीय कूष्माण्डस्य फलं दृढम् । तद्बीजाधारबर्जितवक्रशिराशून्यं च कारयेत् ॥ ततस्तस्य च खण्डानि पचेज्जलतुलाद्वये । तस्मिन्नीरार्धशिष्टे तु यत्नतः शीतलीकृते ॥ तानि कूष्मांडखंडानि पीडयेद्दृढवाससा । यत्नतस्तज्जलं नीत्वा पुनः पाकाय धारयेत् ॥ कूष्माण्डं शोषयेद्धर्मे ताम्रपात्रे ततः क्षिपेत् । क्षिप्त्वा तप्तघृतप्रस्थं कूष्माण्डं तेन भर्जयेत् ॥ मधुवर्णं तदालोक्य तज्जलं तत्र निःक्षिपेत् । सितायाश्च तुलां तत्र क्षिप्त्वा तल्लेहवत्पचेत् ॥ सुपक्के पिप्पलीशुंठीजीराणां द्वे पले पृथक् । पृथक् पलार्द्धं धान्याकपत्रैलामरिचत्वचा ॥ चूर्णमेषां क्षिपेत्तत्र घृतार्धं क्षौद्रमाहरेत् । क्षौद्राधिका सिता केचित्क्षौद्रात्केचित्सितार्धकम् ॥ द्राक्षार्धानि लवंगानि कर्षं कर्पूरकं क्षिपेत् । तद्यथाग्निबलं खादेद्रक्तपित्तक्षतक्षयी ॥ कासश्वासी ततश्छर्दितृष्णाज्वरनिपीडितः । वृष्यं पुनर्नवकरं बलवर्णप्रसादनम् ॥ उरःसंधानकरणं बृंहणं स्वरबोधनम् । आश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं कूष्माण्डकरसायनम् ॥

अर्थ—पुराना और पका हुआ पेठा उसके ऊपरका छिलका और भीतरके बीजोंको दूर करके छोटे २ कतरा कर लेवे उन टुकडोंको ८०० तोले जलमें डालके औटावे जब आधा जल रहे तब उतारके उन पेठेके टुकडोंको कपडेमें बांधके निचोड लेवे, इस जलको कढाईमें डालके फिर चूल्हेपर चढावे. और पेठेके टुकडोंको धूपमें सुखाय एक तामेकी कढाईमें चढावे और ६४ तोले घी डालके मंद २ अग्निसे भूने जब लालरंगका हो जावे तब उतार लेवे और पूर्वोक्त पेठेके पानीमें देवे, तथा मिश्री ४०० तोले डाले और मंद २ अग्निसे पाक करे. जब अवेलहके समान पाक हो जावे तब इतनी औषध और डाले. पीपल, सोंठ और जीरा ये प्रत्येक ८ तोले लेवे तथा धनिया, पत्रज, इलायची, काली मिरच, दालचीनी इनका चूर्ण दो दो तोले लेवे और सहत ३२ तोले मिलावे और मिश्री किसीके मतसे सहतसे अधिक और किसीके मतसे सहतसे आधी डाले तथा १६ तोले दाख, लौंग और कपूर एक एक तोला डाले इसको घीके बरतनमें भरके धर रखे. यह कूष्माण्डकरसायन अग्निबल विचारके देवे. यह रक्तपित्त, क्षतक्षय, खांसी, श्वास, वमन, प्यास और ज्वर इनपर देवे यह वृष्य, तथा तारुण्यकारक, बल, वर्ण इनको करनेवाला, उरःक्षतको भरनेवाला, पुष्टि करता और स्वरको साफ करे है. यह अश्विनीकुमारने उत्पन्न करा है ॥

तिसरा प्रकार।

पुराणं पीनमानीय कूष्मांडस्य फलं दृढम्। तद्बीजाधारबीजत्वक्शिराशून्यं च कारयेत् ॥ ततोऽतिसूक्ष्मखंडानि कृत्वा तस्य तुलां पचेत् । गोदुग्धस्य तुलायुग्मे मंदाग्नौ चालयेच्छनैः ॥ शर्करायास्तुलार्धं च गोघृतं प्रस्थमात्रकम्। प्रस्थार्धं माक्षिकं चापि कुडवं नारिकेरतः ॥ प्रियालफलमज्जानां द्विपलं त्रिखुरीपलम् । क्षिपेदेकत्र विपचेल्लेहयेत्साधु साधयेत् ॥ भिषग्भिषक्त्वमालोक्य ज्वलनादवतारयेत्। काष्ठौषध्यः क्षिपेदेषां चूर्णं तानि वदाम्हयम् ॥ एकोक्षः शतपुष्पाया अथ जीरो यवानिका। गोक्षुरः क्षुरकः पथ्या कपिकच्छूफलानि च ॥ सप्तमी त्वक्च सर्वेषामेषामक्षयुगं पृथक्। धान्यकं पिप्पली मुस्तमश्वगंधा शतावरी॥तालमूली नागबला वालकं पत्रकं शठी। जातीफलं लवंगं च सूक्ष्मैलाबृहदेलिकान् ॥ शृंगाटकं पर्पटकं

सर्वं पलमितं पृथक् । चंदनं नागरं धात्रीफलं चापि कसेरुकम् ॥ प्रत्येकं पंचकर्षाणि चोत्तार्यैतानि निःक्षिपेत् । पलद्वयमुशीरस्य पलान्यष्टोषणानि च ॥ कूष्मांडस्यावलेहोऽयं भक्षितः पलमात्रकः । किंवा यथावह्निबलं भुंजन् रोगान् विनाशयेत् ॥ रक्तपित्तं शीतपित्तमाम्लपित्तमरोचकम् । वह्निमांद्यं सदाहं च तृष्णां प्रदरमेव च ॥ रक्तार्शो पित्तजिच्छर्दिं पांडुरोगं च कामलान् । उपदंशं विसर्पं च जीर्णं च विषमज्वरम् ॥ लेहोऽयं परमो वृष्यो बृंहणो बलवर्धनः । स्थापनीयो विशेषेण भाजने मृन्मये नवे ॥

अर्थ–पका हुआ पुराना पेठा लेकर उसको छील बना रक्खे बीज निकाल डाले और छोटे २ टुकडे कर लेवे उनको ४०० तोले लेय और ८०० तोले दूधमें डालके मंदाग्निपर पचन करे. तथा धीरे २ कौचेसे हिलाता जावे जब सीज जाय और गाढे होने लगे तब २०० तोले मिश्री डाले, गौका घी ६४ तोले, सहत ३२ तोले, नारियलकी गिरी कतरी हुई १६ तोले चिरौंजी ८ तोले और गोखरू ४ तोले डालके एकजीव कर लेवे जब चाटने योग्य गाढा हो जावे तब उतारके इसमें सोंफ १ तोला, तथा जीरा, अजमायन, गोखरू, तालमखाना, हरड, कौंछके बीज, दालचीनी ये प्रत्येक दो दो तोले ले, और धनिया, पीपल, नागरमोथा, असगंध, शतावर, मूसली, नागबला, नेत्रवाला, पत्रज, कचूर, जायफल, लौंग, इलायची बडी, इलायची छोटी, सिंघाडे, पित्तपापडा ये प्रत्येक चार २ तोले लेय और चंदन, सोंठ, आंवले, नागकेशर ये प्रत्येक पांच २ तोले ले, खस दो तोले, काली मिरच ८ तोले इनका चूर्ण करके उस अवलेहको नीचे उतारके डाले यह कूष्माण्डकावलेह चार तोले प्रातः-काल सेवन करे. अथवा अग्निका बलाबल विचारके अधिक अथवा कम मात्रा देवे तो रक्तपित्त, शीतपित्त, अम्लपित्त, अरुचि, मंदाग्नि, दाह, तृषा, प्रदर, खूनी बवासीर, पित्तजन्य वमनका होना, पांडुरोग, कामला, उपदंश, विसर्प, जीर्णज्वर और विषमज्वर इनका नाश करे यह अवलेह अत्यन्त वृष्य है, पौष्टिक तथा बलको बढानेवाला है. इस अवलेहको मिट्टीके बरतनमें भरके धर रक्खे, अथवा किसी उत्तम चीनीके बासनमें भरके धर देवे ॥

चौथा प्रकार ।

कूष्मांडकस्य स्वरसं पलानां शतमात्रकम् । रसतुल्यं गवां क्षीरं

धात्रीचूर्णं षडाष्टकम् ॥ मृद्वग्निना पचेतावद्यावद्दर्वाति पिंडवत् । धात्रीतुल्या सिता योज्या पलार्धं लेहयेदनु ॥ खंडकूष्मांडकं ह्येतद्भुक्तमभ्यासतो हरेत् । रक्तपित्तं ह्यम्लपित्तं दाहं तृष्णां च कामलाम् ॥

अर्थ–पेठेका स्वरस ४०० तोले, गौका दूध ४०० तोले और आँवलोंका चूर्ण ३२ तोले इन सबको मंदाग्निपर पक्व करे जब गोला बंधने लगे तब इसमें मिश्री बत्तीस तोले डालके मिलाय देवे. फिर इसमेंसे दो तोले नित्य प्रातःकाल भक्षण किया करे यह खंडकूष्माण्डकावलेह अभ्यासके साथ सेवन करनेसे रक्तपित्त, अम्लपित्त, दाह, तृषा और कामला इनको नाश करे ॥

वासाखंड ।

तुलामादाय वासायाः पचेदष्टगुणे जले । तेन पादावशेषेण पाचयेदाढकं भिषक् ॥ चूर्णानामभयानां तु खंडं शतपलं तथा । शीतीभूते तन्निदध्यात्क्षौद्रस्याष्टौ पलानि च ॥ वंशोद्भवा च चत्वारि पिप्पली द्विपलं तथा । चातुर्जातं पलं त्वेकं चूर्णितं तत्र दापयेत् ॥ रक्तपित्तं निहंत्याशु कासश्वासं क्षतक्षयम् । विद्रधिं जाठरं गुल्मं तृष्णाहृद्रोगपीनसान् ॥ पलार्धभोजनं चास्य यथेष्टं तत्र भोजनम् ॥

अर्थ–अडूसा चार सौ तोले लेकर ३२०० बत्तीस सौ तोले जलमें डालके औटावे जब चतुर्थांश जल शेष रहे तब उतारके छान लेय इस काढेमें हरडका चूर्ण १०२४ तोले तथा मिश्री ४०० तोले डालके पचावे जब सिद्ध होजावे तब उतारके शीतल कर लेवे और ३२ तोले सहत, १६ तोले वंशलोचन, ८ तोले पीपल और ४ तोले चातुर्जात ले इन सबका चूर्ण करके चासनीमें डाल देवे, इसमेंसे दो तोले यह वासाखंड सेवन करे तो रक्तपित्त, खांसी, श्वास, क्षतक्षय, विद्रधि, उदर रोग, गोला, प्यास, हृदयरोग और पीनस इनका नाश करे इस पर यथेष्ट भोजन करे ॥

उशीरासव रक्तपित्तादिकोंपर ।

उशीरं वालकं पद्मं काश्मरीनीलमुत्पलम् । प्रियंगुपद्मकं लोध्रं मंजिष्ठा धन्वयासकः ॥ पाठा किराततिक्तं च न्यग्रोधोदुंबरं शठी । पर्पटं पुंडरीकं च पटोलं काचनारकम् ॥ जंबूशाल्मलिनिर्यासं

प्रत्येकं पलसामतान् । भागान्सुचूर्णितान्कृत्वा द्राक्षायाः पल- विंशतिः ॥ धातकीं षोडशपलां जलद्रोणद्वये क्षिपेत् । शर्क- रायास्तुलां दत्त्वा क्षौद्रस्यैकतुलां तथा ॥ मासं च स्थापयेत भांडे मांसीमरिचधूपिते । उशीरासव इत्येष रक्तपित्तनिवा- रणः ॥ पांडुकुष्ठप्रमेहार्शःकृमिकाशापहस्तथा ॥

अर्थ-खस, नेत्रवाला, लालकमल, कंभारी, नीला कमल, फूल प्रियंगू, पद्माख, लोध, मजीठ, जवासा, पाढ, चिरायता, कुटकी, वडकी छाल, गूलरकी छाल, कचूर, पित्त- पापडा, सपेद कमल और पटोलपत्र, कचनारकी छाल, जामुनकी छाल, सेमरका गोंद ये बाईस औषध चार २ तोले लेवे तथा दाख २० पल, धायके फूल १६ पल ले सबका कूट पीसके चूर्ण बनावे इसको दो द्रोण जलमें डाले तथा मिश्री १ तोला डाले. फिर जटामांसी और मिरच इनकी धूनी देकर उस बासनमें ये सब वस्तु भर देवे उस पात्रका मुख बंदकर मुद्रा देकर १ महीने पर्यंत रक्खा रहनेदे बाद महिनेके मुद्राको दूर करके इसको निकास लेवे, इसे उशीरासव कहते हैं इस आसवके पीनेसे रक्तपित्त, पांडुरोग, कोढ, प्रमेह, बवासीर, कृमिरोग और शोष (' देहका दुबला हो जाना) इन सब रोगोंको यह दूर करे ॥

वमन ।

मुस्तेंद्रयवयष्ट्याह्वमदनाह्वं पयो मधु ।
शिशिरं वमनं योज्यं रक्तपित्तहरं परम् ॥

अर्थ-नागरमोथा, इन्द्रजौ, मुलहटी, मैनफल, दूध और सहत इनको शीतल करके वमन करनेको देवे तो रक्तपित्तका नाश होय ॥

यष्ट्यादिवमन ।

यष्टीमधुकसंयुक्तं सक्षौद्रं वमनं हितम् ॥

अर्थ-मुलहटी और सहत इनका वमन करना रक्तपित्तवालेको हितकारी है ॥

आरग्वधादिरेचन ।

आरग्वधेन धात्र्या वा त्रिवृता पथ्ययाऽथवा ।
विरेचनं प्रयोक्तव्यं शर्करामाक्षिकोत्तरम् ॥

अर्थ-अमलतास और आंवले अथवा निसोत और हरड इनका काढा कर उसमें सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो दस्त होकर ऊर्ध्वगामी रक्तपित्त बंद होवे ॥

विरेचन ।

द्राक्षामधुककाश्मर्यैः सितायुक्तं विरेचनम् ॥

अर्थ—ऊर्ध्वगत रक्तपित्तपर दाख, मुलहटी और कंभारी इनमें खांड मिलायके दस्त करानेको देवे तो ऊर्ध्वगत रक्तपित्त दूर होवे ॥

अपतर्पण ।

जलं खर्जूरमृद्वीकामधूकैः सपरूषकैः ।
शृतं जलं प्रयोक्तव्यं तर्पणाय सशर्करम् ॥

अर्थ- नेत्रवाला, खजूर, दाख, मुलहटी और फालसा इन औषधोंको काढेमें मिश्री मिलायके पीवे तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

दूसरा प्रकार ।

तर्पणं सघृतक्षौद्रं लाजाचूर्णैः प्रदापयेत् ।
ऊर्ध्वगे रक्तपित्ते तत्काले देयं पिपासिते ॥

अर्थ—धानकी खीलोंका चूर्ण कर उसमें घी और सहत ये एकत्र करके ऊर्ध्व-रक्तपित्तमें जब प्यास लगे तब पीनको देवे ॥

पारावतशकृल्लेह ।

सक्षौद्रं ग्रंथिके रक्ते लिह्यात्पारावतं शकृत् ॥

अर्थ—यदि देहमें रुधिरकी गांठ पड गई हो तो सहतके साथ कबूतरकी बीट सेवन करे ॥

केशरलेह ।

अतिनिःसृतरक्तो वा क्षौद्रेण रुधिरं पिबेत ॥

अर्थ—जिसके देहसे अत्यन्त रुधिर निकल गया हो वो सहतके साथ केशर पीवे ॥

खदिरादिलेह

खदिरस्य प्रियंगूनां कोविदारस्य शाल्मलेः ।
पुष्पचूर्णानि मधुना लिह्याद्वा रक्तपित्तनुत् ॥

अर्थ—खैर, फूल प्रियंगू, कोविदार (कचनारका भेद), सेमल इनके फूलोंके चूर्णको सहतमें मिलायके चाटे तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

उदुंबरादिलेह ।

पक्वोदुंबरकाश्मर्यपथ्या खर्जूरगोस्तनीः ।

मधुना घ्नंति संलीढा रक्तपित्तं पृथक् पृथक् ॥

अर्थ-पके हुए गूलरके फल, कंभारीके फल, हरड, खजूर और दाख इनमेंसे किसी एकको सहतके साथ खाय तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

खंडकाद्यवलेह ।

शतावरी मुंडितका बलामृता पलं त्वचः पुष्करमूलभार्ङ्गी । वृषो बृहत्यौ खदिरस्य मूली पृथक् पृथक् पंचपलानि मात्रा ॥ पक्कं जले द्रोणमितेऽष्टमांशं यावद्भवेच्छेषमथैव पूतम् । विमूर्च्छितस्यापि निधाय धीमान्पलानि च द्वादश माक्षिकस्य ॥ तथा सुवर्णस्य च लोहजस्य विद्याद्धितं खंडघृतस्य तुल्यम् । देयं पलं षोडशकं विधिज्ञो विपाचयेल्लोहमये कटाहे ॥ गुडेन तुल्यं च यदा भवेत्तदा तुगा विडंगं मगधा च शुंठी । द्वे जीरके कर्कटकं फलत्रिकं धान्यं मरीचं सकणा सकेसरम् ॥ पलेन मात्रा विदधीत तत्पृथक् सुघट्टितं चूर्णमिदं घृतेन । स्निग्धे कटाहे प्रणिधाय युंज्यात्कर्षप्रमाणं विदधीत चूर्णम् ॥ प्रभातकाले च सदुग्धपानं गुरूणि चान्नानि च भोजनानि । रक्तं सपित्तं सहसा निहंति रक्तप्रवाहं च सरक्तशूलम् । रक्तातिसारं रुधिरप्रमेहं तथैव बस्तौ विहितं नराणाम् । भगंदरार्शः श्वयथुं निहंति तथाम्लपित्तं किल राजरोगम् ॥ विशेषतः कुष्ठयुजश्च गुल्मान् बलप्रदं वृष्यतमं प्रदिष्टम् । वातरक्तं प्रमेहं च शीतपित्तं वमिं कृमीन् ॥ श्वयथुं पांडुरोगं च कुष्ठं प्लीहोदरं तथा । आनाहो मूत्रसंस्रावमम्लपित्तं निहंति च ॥ चक्षुष्यं बृंहणं वृष्यं मांगल्यं प्रीतिवर्द्धनम् । आरोग्यपुत्रदं श्रेष्ठं कामाग्निबलवर्द्धनम् ॥ श्रीकरं लाघवकरं खंडकाद्यं प्रकीर्तितम् । छागं पारावतं मांसं तित्तिरं कृकराशशम् ॥ कुरंगाः कृष्णसाराश्च मांसमेषां प्रयोजयेत् । नारिकेलपयःपानं सुनिषण्णकवास्तुकम् ॥ शुष्कमूलकजीवाख्यं पटोलं बृहतीफलम् । फलं वार्ताकपक्काम्रं खर्जूरं स्वादु दाडि-

मम्॥ ककारपूर्वकं पंच मांसं चानूपसंभवम् । वर्जनीयं विशेषेण खंडकाद्यं समश्नता ॥

अर्थ–सतावर, गोरखमुंडी, खिरेटी और गिलोय ये औषध चार चार तोले, दालचीनी, पोहकरमूल, भारंगी, अडूसा, कटेरी, वडी कटेरी, खैरकी जड ये प्रत्येक तीस२ तोले ले इनको १०२४ तोले जलमें डालके अष्टावशेष काढा करे फिर छानके जल अलग निकास लेवे. इसमें ४८ तोले स्वर्णमाक्षिककी भस्म, ४८ तोले सुवर्णकी भस्म, १६ तोले लोह भस्म और मिश्री तथा ६४ तोले घी इस प्रकार सबको एकत्र कर लोहेकी कढाईमें पाक करे. जब गुडके समान पाक हो जावे तब इसमें वंशलोचन, वायविडंग, पीपल, सोंठ, जीरा, काला जीरा, ककडीके बीज, हरड, बहेडा, आमला, धनिया, काली मिरच, पीपल, नागकेशर ये प्रत्येक चार चार तोले ले सबका चूर्ण करके चासनीमें मिलाय एकजीव कर देवे. इस खंडकाद्यवलेहको घीके शुद्ध चिकने बासनमें भरके धर रखे और नित्य १ तोला खाय ऊपरसे दूध पीवे तथा भारी अन्न भोजन करे तो रक्तपित्त, रक्तका प्रवाह, रक्तशूल, रक्तातिसार, रक्तप्रमेह, भगंदर, बवासीर, सूजन, अम्लपित्त, क्षय, कोढ, गोला, वातरक्त, प्रमेह, शीतपित्त, वमन, कृमिरोग, पांडुरोग, प्लीहा, उदररोग, अफरा, मूत्रका रोग और अम्लपित्त इन सब रोगोंको दूर करे तथा नेत्रोंको हितकारी, पौष्टिक, मांगल्य, प्रीतिको वढावे, आरोग्य तथा पुत्र देनेवाला और कामदेव, जठराग्नि, बल, श्री और लाघव इनको करे इसके ऊपर बकरा, कबूतर, तीतर, कुकिर, ससा हरिण, काला हरिण इनका मांस भक्षण करे और नारियल, दूध, चौपतिया, बथुआ, सूखी मूली, जीवंती, परवल, कटेरीके फल, बैंगन, पका आम, खजूर, मीठे अनार, ककारपंचक, अनूपदेशका मांस ये संपूर्ण पदार्थ खंडकाद्यवलेह सेवन करनेवालेको खाना निषेध है ॥

रक्तपित्तकुठाररस ।

शुद्धपारदबलिप्रवालकं हेममाक्षिकभुजंगरंगकम् । मारितं सकलमेतदुत्तमं भावयेच्च विततं द्रवैस्त्रिशः॥ चंदनस्य कमलस्य मालतीकोरकस्य वृषपल्लवस्य च । धान्यवारणकणाशतावरीशाल्मलीवटजटामृतस्य च॥ रक्तपित्तकुलकंडनाभिधो जायते रसवरोऽस्रपित्तिनाम् । प्राणदो मधुवृषद्रवैरयं सेवितस्तु वसुकृष्णलोमतः॥ नास्त्यनेन सममत्र भूतले भेषजं किमपि रक्तपित्तिनाम्॥

अर्थ–शुद्ध पारा, गंधक, मूंगा, सुवर्णमाक्षिक, शीसा, रांगा इन सबकी शुद्ध भस्म समान भाग लेवे. सबको एकत्र करे फिर चंदन, कमल, मालती (चमेली) के फूल, अडूसा, धनिया, गजपील, सतावर, सेमर और वडकी कोपल, गिलोय इन प्रत्येकके रसोंकी तीन २ भावना देवे. यह रक्तपित्तकुलकुठार रस एक मासेको अडूसेका रस और सहत इनके साथ देवे तो रक्तपित्तका नाश करे ॥

वासासुत ।

आटरूषनवपल्लवद्रवं पालिकारसकभस्मवल्लकम् ।
कर्षसंमितमधुप्रयोजितं प्राश्य नश्यति च रक्तपित्तकम् ॥

अर्थ–अडूसेके कोमल पत्तोंका रस चार तोले, तथा पारेकी भस्म इनको एकत्र कर सहत मिलायके एक तोलेकी मात्रा खानेको देवे तो रक्तपित्तका नाश होवे ॥

बोलपर्पटीरस ।

सूतगंधकसुकज्जलिकायाः पर्पटीसमयुतासमभागम् । बोलचूर्णविहितं प्रतिवाप्यं स्याद्रसोयमसृगामयहारी ॥ वल्लयुग्मयुगलं प्रति देयं शर्करामधुयुतः किल दत्तः । रक्तपित्तगुदजस्रुतियोनिस्रावमाशु विनिवारयतीशः ॥

अर्थ–शुद्ध पारा, गंधक दोनोंकी कजली करके फिर इस कजलीके बराबर बोलका चूर्ण ले इनको एकत्र करके लोहके पात्रमें तपायके गोबरपर केलेका पत्ता बिछाय देवे उसपर उसको ढाल देना चाहिये और ऊपरसे केलेका पत्ता ढक गोबरसे दाब देवे तो यह रक्तरोग नाश करनेवाली बोलपर्पटी बने. इसमेंसे ६ रत्ती पर्पटी और मिश्री तथा सहत इनमें मिलायके देवे तो रक्तपित्त, बवासीर, रक्तका वहना और योनिस्राव इनको नाश करे ॥

सुधानिधिरस ।

गंधं सूतं माक्षिकं लोहचूर्णं सर्वं घृष्टं त्रैफलेनोदकेन ।
लौहे पात्रे गोलिका सा च कृत्वा रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशान्त्यै ॥

अर्थ–गंधक, पारा, सुवर्णमाक्षिककी भस्म और लोह भस्म ये समान भाग ले इनको लोहके खरलमें डालके त्रिफलेके काढेसे खरल करके गोली बनाय ले यह रक्तपित्त दूर करनेके वास्ते देवे ॥

आटरूषाद्यर्क ।

आटरूषकमृद्वीका पथ्यार्कश्च सशर्करः । वृषार्कोऽवा समधुको

रक्तपित्तनिवारणः ॥ लोध्रप्रियंगुमृद्वीकाचंदनार्को रसान्वितः । वासायाः क्षौद्रसंयुक्त ऊर्ध्वाधोरक्तपित्तहृत् ॥ अर्को दाडिमपुष्पोत्थो मृद्वीकासंभवोऽपि वा । पानात्तस्य हरेन्नासारक्तमाम्रास्थिजोऽपि वा ॥

अर्थ—अडूसा, दाख और हरड इनके अर्कमें मिश्री मिलायके देवे अथवा अडूसा और मुलहटीका अर्क देवे, अथवा लोध, फूल प्रियंगू, दाख और चंदन इनके अर्कमें अडूसेका रस और सहत मिलाकर देवे. अथवा अनारके फूल और दाख इनका अर्क देवे. किंवा आमके गुठलीका अर्क देवे तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

शतावरीघृत ।

शतावरी दाडिमतिंतिडीकं कांकोलिकं वा मधुकं विदारी ।
पिष्ट्वा च मूलं फलपूरकस्य पचेद्घृतं क्षीरचतुर्गुणं तत् ॥
कासज्वरोन्मादविबंधशूलं तद्रक्तपित्तं विविधं निहंति ॥

अर्थ—सतावर, अनार, इमली, कंकोल, मुलहटी, विदारीकंद और बिजोरेका पंचांग लेकर उनका कल्क करके उसमें चौगुना दूध डाले. फिर गौका घी डालके अग्निपर सिद्ध करे । यह शतावरीघृत खांसी, ज्वर, उन्मत्तता, विबंध, शूल और अनेक प्रकारके रक्तपित्तका नाश करे ॥

दूर्वादितैल ।

दूर्वामधुकमंजिष्ठाद्राक्षेक्षुरसचंदनैः । सारिवाघननक्ताह्वैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥ क्षीरं चतुर्गुणं दत्त्वा सिद्धमभ्यंजने हितम् । रक्तपित्तहरं ह्येतद्बल्यं वातघ्नमुत्तमम् ॥ दूर्वातैलमिति ख्यातं सुवर्णकरणं महत् ॥

अर्थ—दूब, मुलहटी, मंजीठ, दाख, ईखका रस, चंदन, सारिवा, नागरमोथा और हलदी ये समान भाग लेवे. १ सेर तेल और ४ सेर दूध डालके घी बनावे । इसकी देहमें मालिस करना हितकारी है, रक्तपित्तको नाश करे, बल बढावे यह उत्तम वातनाशक है । यह दूर्वातैल देहकी उत्तम कांती करे है ॥

दूसरा प्रकार ।

दूर्वा भव्यफलं माषकुलित्थौ वंशपत्रिका । जलस्थलोद्भवौ

कर्णमोचकौ खरमंजरी ॥ दंडोत्पलस्य मूलं तु निःक्वाथ्याष्टगुणेंऽभसि । तत्पादशेषितं तैलं तुल्यं कृत्वा विपाचयेत् ॥ तत्तैलं प्रतिघर्षेण आनाहाख्यं गदं जयेत् ॥

अर्थ-दूब, नीमके फल, उडद, कुलथी, वंशपत्रिका (बांस जातिकी एक घास) जल और स्थलमें उत्पन्न होनेवाला केला, ओंगा और सहदेईकी जड ये सब समान भाग लेवे औषधोंसे आठ गुना जल ले चतुर्थांश काढा करके छान लेवे इस काढेमें बराबरका तेल मिलाय फिर पाक करे इस तेलकी देहमें मालिस करनेसे आनाहाख्य रोगको दूर करे है ॥

रक्तपित्तपर पथ्य ।

अधोगते छर्दनमूर्ध्वनिर्गमे विरेचनं स्यादुभयत्र लंघनम् । पुरातनाः षष्टिकशालिकोद्रवा प्रियंगुनीवारयवप्रसादकाः ॥ मुद्गा मसूराश्चणकास्तुवर्यो मकुष्टकश्चागडुवार्मिमत्स्याः । शशः कपोतो हरिणैणलावाः शरारिपारावतवर्तिकाश्च ॥ बका उरभ्राश्च सकालपुच्छाः कपिंजलाश्चापि कषायवर्गाः । गवामजायाश्च पयो घृतं च घृतं महिष्याः पनसं प्रियालम् ॥ रंभाफलं कंचनतंदुलीयपटोलवेत्राग्रमहार्द्रकाणि । पुराणकूष्मांडफलं च पथ्यं तालानि तद्बीजजलानि वाता ॥ स्वादूनि चिह्लानि च दाडिमानि खर्जूरधात्रीमिशिनारिकेरम् । कसेरुशृंगाटकपौष्करााणि कपित्थशालूकपरूषकाणि ॥ भूनिंबशाकं पिचुमंदपत्रं तुंबी कलिंगानि च लाजसक्तु । द्राक्षा सिता माक्षिकमिक्षवश्च शीतोदकं चोद्भिदवारि चापि ॥ सेकावगाहः शतधौतसर्पिरभ्यंगयोगः शिशिरः प्रदेशः । हिमानिलश्चंदनमिंदुपादाः कथा विचित्राश्च मनोनुकूलाः ॥ धारागृहं भूमिगृहं सुशीतं वैडूर्यमुक्तामणिधारणं च । रक्तोत्पलांभोरुहपत्रशय्या क्षौमांबरं चोपवनं सुशीतम् ॥ प्रियंगुकाचंदनरूषिकांतामालिंगनं चापि वरांगनानाम् । पद्माकराणां सरितोद्भतानां चंद्रोदयानां हिमशीक-

राणाम् ॥ सुशीतलानां गिरिनिर्झराणामतिप्रशस्तानि च कीर्तनानि । प्रतीरनीरं हिमवालुकानि मित्रं नृणां शोणितपित्तरोगे ॥

अर्थ—अधोगत (गुदालिंगेन्द्रिय द्वारा रुधिर जानेवाले) रक्तपित्त रोगीको वमन करावे, तथा ऊर्ध्वगत रक्तपित्तमें जुलाब देवे, और ऊपर नीचे दोनों मार्गसे रुधिर जानेवालेको लंघन कराना चाहिये । एवं पुराने सांठी चावल, कोदों, कांगनी, समा, पसाई, जौ, तीनी, मूंग, मसूर, चना, अरहर तथा मोठ ये धान्य तथा गडुजाति और बर्मी जातकी मछली (जो सूपके आकार होती हैं) तथा ससा, कपोत पिंडुकिया), हरिण. काला हरिण, लवा, बगला, कबूतर बटेर, (वनका चिडा), (मुरगा वा बगला), मेंढा, दुंबा, सपेद तीतर और कपेले वर्ग तथा गौका और बकरीका घी और दूध, भैंसका घी, पनस (कटहर), चिरोंजी, केलाकी गहर, जलचौलाई, चौलाई, पटोल (परवर) वेतकी कोंपल, अदरख, पुराना पेठा, ताडफल, ताडफलके बीज, ताडीरस, अडूसा, स्वादु चिल्लीका साग, (स्वादिष्ठ तथा तीखे रस), अनार, खजूर (छुहारा), आमले, सोंफ, नारियल, कसेरू, सिंघाडे, पुहकरमूल, कैथ, भसीडा, फालसे, चिरायता (साग), नीमके पत्ते, सपेद तुंबी, तरबूज वा इंद्रजौ, चावलकी खील, सतुआ (सतू), दाख, मिश्री, सहत, ईख, शीतल जल, झरनेका पानी, जलका सींचन (छिरकना), जलमें गोता मारना, सौ बारका धुला हुआ घी, तेलकी मालिस, शीतल वस्तुका उटना, शीतल पवन, चंदन लगाना, चंद्रकिरण (चांदनी), विचित्र और मनोनुकूल (मनोहर) कथा कहानी, फव्वारेदार घर, भूमिगृह (तहखान), वैदूर्य, मोती और हीरा, पन्ना आदि मणियोंका धारण, लाल कमल, (केलाके भीतरके नम्र पत्ते), कमलके पत्ते, इनसे रचित शय्या (सेज), रेशमी कपडे, शीतल वनबाग, प्रियंगु, चंदनचर्चित उत्तम स्त्रियोंका आलिंगन, जिनमें कमल फूल रहें ऐसा सरोवर अथवा नदी, चंद्रोदय, हिम (बरफ)की फुहार, (वा पर्वतके झरने), अत्यंत सुंदर गान, नदीतटका जल, शीतल, वालू (रेत) अथवा कपूर ये संपूर्ण वस्तु रक्तपित्त रोगपर पथ्यकारक हैं ॥

रक्तपित्तपर अपथ्य ।

व्यायामाध्वनिषेवणं रविकरास्तीक्ष्णानि कर्माणि च । स्रोतोवेगविधारणं चपलता हस्त्यश्वयानानि च ॥ स्वेदासृक्प्रतिधूमपानसुरतक्रोधः खलु स्याद्गुडो । वार्ताकीतिलमाषसर्षपदधिक्षीराणि कौपं पयः ॥ तांबूलं लशुनं मद्यलशुनं शिम्बी विरुद्धाशनम् । कट्वम्लं लवणं विदाहि च गणस्त्याज्योऽस्रपित्ते नृणाम् ॥

अर्थ-व्यायाम (दंड कसरत), मार्गका चलना, सूर्यकिरण, उग्रकर्म (क्षोभ) मलमूत्रादि वेगोंका धारण, चपलता, हाथी तथा घोडेपर बैठना, पसीने निकालने, धूमपान, मैथुन करना, क्रोध करना, कुलथी, गुड, बैंगन, तिल, उडद, सरसों, दही, क्षार, कूएका जल, तांबूल (बीडा), (खस), दारू, लहसन, फली (सेम) विरुद्ध भोजन. चरपरे, खट्टे, निमकीन और दाहकारी पदार्थ ये संपूर्ण वस्तु मनुष्योंको रक्तपित्त रोगमें त्याज्य हैं अर्थात् उक्त वस्तुओंका सेवन न करे ॥

क्षयकर्मविपाकः ।

ब्रह्महा क्षयरोगी स्यात्क्षयी स्यात्क्षेत्रमारणे ॥

अर्थ-पूर्वजन्ममें ब्रह्महत्या करनेसे अथवा पराई पृथ्वीके हरण करनेसे यह प्राणी इस जन्ममें क्षई (खई) रोगवाला होता है ॥

कदलीदान ।

कारयेत्कदलीं दिव्यां पत्रैः सर्वत्र संयुताम् । फलपूगेन संयुक्ता सुवर्णस्य पलेन तु ॥ यथाविभवतः कुर्याद्वस्त्रेणावेष्टच सूत्रकैः । ब्राह्मणान्भोजयेच्चापि भक्ष्यैर्नानाविधैः शुभैः॥ होमं च कारयेत्तत्र पूर्ववद्ब्राह्मणेन च । तस्मै तां कदलीं दद्याद्वस्त्रालंकारपूर्विकाम् ॥ पूजिताय दरिद्राय व्रतस्थायात्मवेदिने । धर्मज्ञायातिदांताय मंत्रेणानेन तां क्षयी ॥ हिरण्यगर्भपुरुष परात्पर जगन्मय । रंभादानेन देवेश क्षयं क्षपय मे प्रभो ॥ पुण्याहवाचनं कार्यं ब्राह्मणैर्वेदपारगैः । शिष्टैरिष्टैर्बंधुभिश्च सह भोजनमाचरेत् ॥

अर्थ-क्षय रोगवाला रोगी अपनी सामर्थ्यानुसार सुवर्णकी फल पत्र करके युक्त कदली (केला) बनावे उसको वस्त्र उढाय डोरेसे बांध देवे तथा अनेक प्रकार पक्कान्न करके ब्राह्मणोंको भोजन करावे और होम करे फिर अलंकारपूर्वक उस केलाका दरिद्री व्रतस्थ, आत्माका जाननेवाला, धर्मज्ञ तथा शांत ऐसे ब्राह्मणको दान देवे और "हिरण्यगर्भपुरुष परात्पर" इस मंत्रसे पूजनादिक करे तथा पुण्याहवाचन करे तथा उत्तम ब्राह्मण, इष्टमित्र, बांधव इनके साथ बैठके भोजन करे ॥

ब्रह्मचर्यादियोग ।

ब्रह्मशास्त्राण्याविज्ञाय प्रायश्चित्तं ददाति यः । राजयक्ष्मा भवेत्तस्य रोगो पीडातिदारुणा ॥ पूर्वोक्तेन विधानेन प्रदद्यात्प्रातिरूपकम् । राजयक्ष्मा कृशतनुः शंखोपासिततर्जनिः ॥ दद्यात्रिनेत्रो दंष्ट्राभ्यां दृष्टोऽहं हेतुमुद्यतः ॥

अर्थ–जो धर्मशास्त्रके विना जाने किसी पापीको उस पापका प्रायश्चित्त बतावे उसके राजयक्ष्माका रोग होता है. उस प्राणीको पूर्वोक्त विधिसे क्षयरोगकी कृश देह तर्जनीसे शंखकी धारण करनेवाली तीन नेत्र दांतोंको चवानेवाली तथा तारण करनेको आती हुई ऐसी मूर्तिका दान करे तो क्षयी रोग दूर होवे ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय ।

ब्रह्मचर्येण दानेन तपसा देवतार्चनैः ।
सत्येनाचारयोगेन रविमंडलसेवया ॥
वैद्यविप्रार्चनाच्चैव रोगराजो निवर्तते ॥

अर्थ–ब्रह्मचर्य, दान, तप, देवपूजन, सत्य, आचारयोग, सूर्यनारायणकी सेवा तथ वैद्य और ब्राह्मणोंके पूजन करनेसे इस प्राणीका खईका रोग दूर होता है ॥

दूसरा प्रकार ।

कुष्ठकंडुविकारैश्च क्षयरोगभगंदरैः ।
गजादिवाहनभयं भवेद्य इनगे बुधे ॥

अर्थ–सूर्यकी दशामें बुधका अंतर आनेसे कोढ, खुजलीका विकार, क्षयरोग, भगंदर, हाथी घोडे आदि वाहनोंसे भय होता है ॥

देवपूजादियोग ।

चंद्रक्षेत्रे यदा चांद्रिर्जायते यस्य जन्मनि ।
स जातः क्षयरोगी स्यात्कुष्ठादीनि च पांडुता ॥

अर्थ–जिसके जन्मकालके समय चन्द्रक्षेत्रमें बुधका योग होय वह आदमी क्षयरोगी होता है और उसके कुष्ठ पांडु इत्यादि रोग भी होते हैं ॥

शास्त्राथ।

नित्यं स्वदेवपूजाभक्तिर्भैषज्यदेवतागुरुषु।
छागलमांसपयोऽश्नन् जीवति यक्ष्मी चिरं धृतिमान् ॥

अर्थ–नित्य इष्ट देवपूजन और औषधी, देवता और गुरु इनकी भक्ति तथा बकरेका मांस तथा बकरीका दूध इनका सेवन इन उपायोंसे क्षयरोगी बहुत काल इस रोगसे बचा रहता है ॥

उपद्रवान्स्वरवैकृतादीन् जयद्यथा क्षिप्रसमीक्ष्य शास्त्रम्।
त्यजत्कुवैद्यप्रतिपादितानि बुद्धेर्विरुद्धानि च भेषजानि ॥

अर्थ–तत्काल जो विकृति आदि उपद्रव होते हैं उनको शास्त्रमें कहे मार्गसे कुशल वैद्यके द्वारा नाश करना चाहिये. कुवैद्य (मूर्खवैद्यकी) औषध न खाय तथा विना समझे और विचारे हर किसी औषधको नर न खाने लगे ऐसा करनेसे इस रोगीका हित हो अन्यथा अहित हो ॥

गीतादिउपाय।

गीतवादित्रैरिष्टैश्च प्रियस्तुतिभिरेव च।
हर्षणाश्वासनैर्नित्यैर्गुरूणां समुपासनैः।

अर्थ–उत्तम गीत गाना, बाजे बजाना, इष्ट पदार्थ, प्रिय लगे ऐसी बडाई करना और आनंददायक पदार्थ तथा आश्वासन (दिलासा देना) ऐसा वाक्य कहना तथा नित्य गुरुकी उपासना इन उपायोंसे क्षयरोगको जीते।

राजयक्ष्माक्षयनिदान।

वेगरोधात्क्षयाच्चैव साहसाद्विषमाशनात्।
त्रिदोषो जायते यक्ष्मा गदो हेतुचतुष्टयात् ॥

अर्थ–वात, मूत्र, पुरीष आदि वेगोंके रोकनेसे, अति मैथुन, उपवास, ईर्ष्या, खेद इत्यादिक धातुक्षयके कारणोंसे बलवान्से वैर करनेसे, विषमाशन कहिये कुसमय थोडा अथवा बहुत भोजन करनेसे इन चार कारणोंसे तीनों दोषोंके कोपसे मनुष्यके राजयक्ष्मा रोग होय है. वेगका रोकना ही वातकोपका कारण है यह सत्य है तथापि वातकोपसे अग्नि दुष्ट होकर कफ पित्तका कोप होय है इन चार हेतुओंमें असंख्य हेतु अन्तर्भाव होय हैं, रसादि धातुओंके शोषण (सुखाने) से इस रोगको (शोष) कहते हैं. तथा शरीरमें पाचनादि सर्व क्रियाओंको क्षय करे है इसीसे इस रोगको (क्षय) कहते हैं. और राजा (चन्द्र) इस रोगसे अति पीडित भया इसीसे

इसको (राजयक्ष्मा) कहते हैं. यह (सुश्रुत) का आशय है और (वाग्भट) ने इसको सर्व रोगोंका राजा कहा है इसीसे इसको (राजयक्ष्मा) नाम कहा है इस श्लोकमें जो कहा है कि त्रिदोषका एकही यक्ष्मारोग प्रगट होय है उसका तात्पर्य यह है कि तीनों दोषोंके कारण भेदसे अनेक प्रकारका नहीं है सो (सुश्रुत) में कहाभी है और इस श्लोकमें (वेगरोधात्) इस पदसे केवल वात, मूत्र, मल इनका ही ग्रहण करना चाहिये. श्रमादिक सबोंका ग्रहण नहीं है सो (चरक) में लिखा है इति ॥

अनुलोम व प्रतिलोम क्षयका संप्राप्ति ।

कफप्रधानैर्दोषैस्तु रुद्धेषु रसवर्त्मसु । अतिव्यवायिनो वापि क्षीणे रेतस्यनंतराः ॥ क्षीयंते धातवः सर्वे ततः शुष्यति मानवः । राज्ञश्चंद्रमसो यस्मादभूदेष किलामयः ॥ तस्मात्तं राजक्ष्मेति केचिदाहुर्मनीषिणः ॥

अर्थ--कफ है प्रधान जिनमें ऐसे जो वातादिक दोष तिन करके रसके वहनेवाली नाडियोंके मार्ग रुक जानेसे (इससे यह सूचना करी कि रसमार्ग बंद होनेसे हृदयमें स्थित जो रस उसको बिगाड और उसी स्थानमें विकृति कहिये और प्रकारका स्वरूप करके खांसीके वेगसे मुखमार्ग होकर निकाले) सो (चरक) में लिखाभी है " इससे अनुलोम क्षय दिखाया " " अब प्रतिलोम क्षय कैसा होय है उसको कहते हैं " अथवा अति मैथुन करनेसे मनुष्यका वीर्य क्षीण होय है. जब शुक्र क्षीण हो जाय तब समीपकी धातु क्षीण होय तब पुरुष सूखने लगे जैसे शुक्र क्षीणके अनन्तर मज्जा क्षीण होय मज्जा क्षीणके अनन्तर हड्डी क्षीण होय ऐसे पूर्व पूर्व धातु क्षीण होय जाय । * शंका--क्योंजी रस, रुधिर, मांस, मेदा, हड्डी, मज्जा, शुक्र इनमें क्रमसे प्रत्येकके क्षीण होनेसे शुक्रका क्षय होना उचित है परंतु कार्यभूत शुक्रका क्षय होनेसे कारणभूत धातुओंका नाश कैसे होय है ? * उत्तर--जब शुक्रका क्षय होय है तब वात कुपित होता है सो तंत्रान्तरोंमें लिखा है अर्थात धातुके नष्ट होनेसे पवनके वहनेवाली नाडियोंका मार्ग बन्द होकर वायुको कुपित करे तब वही पवन समीपकी मज्जा धातुको सुखावे तदनंतर हड्डी और उसके पश्चात् मेदा इसी रीतिसे रसपर्यंत धातुओंको सुखावे है इस जगहपर * दृष्टांत--है जैसे अग्निमें तपाया भया लोहका गोला गीली पृथ्वीमें धरनेसे प्रथम समीपकी पृथ्वीके आर्द्रपनेको शोषण करे पीछे दूरका गीलापना शोषण करे उसी रीतिसे यहां जानना चाहिये ॥

पूर्वरूप ।

श्वासांगसादकफसंस्रवतालुशोषवम्यग्निसादमदपीनसकासनिद्राः। शोषो भविष्यति भवंति स चापि जंतुः शुक्लेक्षणो भवति मांसपरो रिरंसुः ॥ स्वप्नेषु काकशुकशल्लकिनीलकंठगृध्रास्त-थैव कपयः कृकलासकाश्च। तं वाहयंति स नदीर्विजलाश्च पश्येत् शुष्कांस्तरून्पवनधूमदवार्दितांश्च ॥

अर्थ–श्वास, हाथ पैरका गलना, कफका थूकना, तालुवेका सूखना, वमन, मन्दाग्नि, उन्मत्तता, पीनस, खांसी और निद्रा ये लक्षण धातुशोष होनेवालेके होते हैं और उस मनुष्यके नेत्र सफेद होते हैं और उस मनुष्यकी मांस खानेपर तथा स्त्रीसंग करनेकी इच्छा होती है और सपनेमें कौआ, तोता, सेह, नीलकंठ (मोर), गीध, बन्दर, करकैटा इनपर अपनेको बैठा देखे और जलहीन नदीको देखे तथा पवन धूर और धूंआं इनसे पीडित ऐसे वृक्ष देखे. चकारसे तृण, केश आदिका गिरना ये होते हैं ये सब स्वप्न क्षईरोग होनेके पहले दीखते हैं (सो चरकमें लिखाहै) * शका–क्योंजी शुक्रका तो क्षय हो जाय है फिर (रिरंसुः) यह पद क्यौं धरा ? उत्तर–यह केवल व्याधिके बढनेसे मनके दोषसे जानना चाहिये ॥

क्षयका समान्य त्रिरूपलक्षण ।

अंशपार्श्वाभिसंतापः संतापः करपादयोः ।
ज्वरः सर्वांगगश्चैव लक्षणं राजयक्ष्मणः ॥

अर्थ–कन्धा और पसवाडेमें पीडा, हाथपैरमें जलन और सर्व अंगोंमें ज्वर ये राजयक्ष्माके लक्षण ये तीन लक्षण अवश्य होते हैं ऐसे चरकने कहा है ॥

एकादशरूप षड्रूप और त्रिरूप क्षयोंका कारण ।

स्वरभेदोनिलाच्छूलं संकोचश्चांसपार्श्वयोः । ज्वरो दाहोऽतिसारश्च पित्ताद्रक्तस्य चागमः ॥ शिरसः परिपूर्णत्वमभक्तच्छंद एव च । कासः कंठस्य च ध्वंसो विज्ञेयः कफकोपतः ॥ एकादशभिरे-तैर्वा षड्भिर्वापि समन्वितम् । कासातिसारपार्श्वार्तिस्वरभे-दारुचिज्वरैः ॥ त्रिभिर्वा पीडितं लिंगैर्ज्वरकासासृगामयैः । जह्याच्छेषार्दितं जंतुमिच्छन्सुविपुलं यशः ॥

अर्थ—राजयक्ष्मा ये त्रिदोषसे उत्पन्न है इसमें दोषोंको न्यारे न्यारे मिलाकर सब ग्यारह रूप हैं ये व्याधिके प्रभावसे होते हैं सन्निपातज्वरके सदृश सर्व लक्षण सब दोषोंसे नहीं होते पृथक् पृथक् होते ह सो दिखाते हैं. वादीके प्रभावसे स्वरभेद, कन्धा और पसवाडे इनमें संकोच और पीडा होय. पित्तसे ज्वर, दाह, अतिसार और मुखसे रुधिरका गिरना और कफके कोपसे मस्तकका भारीपना, अन्नसे द्वेष, खांसी, स्वरभेद ये लक्षण होते हैं. इसमें तीन तो वातसे और चार लक्षण पित्तसे तथा चारही लक्षण कफसे ऐसे सब ग्यारह लक्षणसे अथवा खांसी, अतिसार, पसवाडेमें पीडा, स्वरभेद, अरुचि और ज्वर ये छः लक्षणोंसे अथवा ज्वर, खांसी और रुधिरविकार इन तीन लक्षणोंसे पीडित क्षई रोगवाले मनुष्य तथा जिसका बल, मांस क्षीण हो गया होय ऐसे रोगीको यशेच्छू वैद्य त्याग देय ऐसा रोगी असाध्य है ॥

पुनः असाध्यलक्षण ।

सर्वैरर्धैस्त्रिभिर्वापि लिंगैर्मांसबलक्षयैः । युक्तो वर्ज्यश्चिकित्स्यै-स्तु सर्वरूपस्ततोन्यथा ॥ महाशनं क्षीयमाणमतीसारनिपी-डितम् । शूनमुष्कोदरं चैव यक्ष्मिणं परिवर्जयेत् ॥

अर्थ—स्वरभेदादिक जो ग्यारह लक्षण कहे वो सब लक्षण करके अथवा उनमेंसे आधे (अर्थात् छः लक्षणोंसे) अथवा तीन लक्षण कहे इनसे युक्त जो खईरोगी बल, मांस,क्षीण होनेपर त्याज्य है. यदि बल मांस जिसका क्षीण न भया हो परंतु सर्व लक्षणयुक्तभी है तथापि त्याज्य नहीं है उसकी चिकित्सा करनी चाहिये. जो बहुत भोजन करे परंतु सर्व दिनादिनप्रति क्षीण होता जाय (ये असाध्य रोगी है) अतिसार करके अत्यन्त पीडित होय सो रोगीभी असाध्य होय है क्योंकि खईरोगवालेका जीना मलके आधीन है (जैसे लिखा है) उक्तं च यथा—मलायत्तं बलं पुंसां शुक्रायत्तं तु जीवितम् । तस्माद्यत्नेन संरक्षेद्यक्ष्मिणो मलरेतसी ॥ इति ॥ और जिसके अंडकोश और उदर ये सूज गये हों ऐसा रोगी असाध्य है क्योंकि शोथवाला दस्तके करानेसे अच्छा होय है सो इस पर दस्त करना वर्जित है इसीसे ऐसे रोगीको वैद्य त्याग देय ॥

साध्यलक्षण ।

ज्वरानुबंधरहितं बलवंतं क्रियासहम् ।
उपक्रमेदात्मवंतं दीप्ताग्निमकृशं नरम् ॥

अर्थ-जिस खईरोगवाले मनुष्यको ज्वरका सम्बन्ध होय नहीं बलवान् औषधादि उपचारका सहनेवाला और जिसकी इन्द्री बलमें हो तथा जठराग्नि जिसकी दीप्त होय और कृश न होय ऐसे रोगीकी चिकित्सा (उपचार) करना चाहिये । इस श्लोकमें (अकृशं) इस पदके धरनेका यह प्रयोजन है कि पुष्ट देहवालाभी इस खईरोगसे हजार दिन बचसके है सोई ग्रन्थान्तरमें लिखा है ॥

असाध्यलक्षण ।

शुक्लाक्षमन्नद्वेष्टारं ऊर्ध्वश्वासनिपीडितम् ।
कृच्छ्रेण बहु मेहंतं यक्ष्मा हंति च मानवम् ॥

अर्थ-सपेद नेत्र जिसके हो गये होंय अन्न जिसको बुरा लगे ऊर्ध्वश्वाससे पीडित और कष्टसे बहुत मूतनेवाला अर्थात् मल सुखसे उतरे इससे ये दिखाया कि जो आहार खाय सो मल हो जाय जब आहारका मल हो गया तब उसके मांस, रुधिर इनका क्षय होय इसीसे ये यह असाध्य है ॥

क्षयीरोगीको वर्ज्य पदार्थ ।

वृंताकं कारवेल्लं च तैलं बिल्वं च राजिकाम् ।
मैथुनं च दिवा निद्रां क्षयी कोपं विवर्जयेत् ॥

अर्थ-बैंगन, करेले, तेल, बेलफल, राई, स्त्रीसंग, दिनमें सोना और क्रोध करना ये सब कर्म खईरोगवालेके लिये निषेध है ॥

क्षयहारक पदार्थ ।

सधान्ययवगोधूमा मुद्गाश्चापि सदा हिताः ।
स्त्रियश्चतुष्पदे श्रेष्ठाः पुमांसो विहगा मताः ॥

अर्थ-सुंदर धान; जो, गेहूं, मूंग, चौपाये स्त्री जातिके पशुओंका मांस और पक्षियोंमें पुरुष जातिका मांस ये क्षय रोगमें हितकारी हैं ॥

छागं मांसं पयश्छागं सर्पिश्छागं सशर्करम् ।
छागोपसेवा सततं छागमध्ये तु यक्ष्मनुत् ॥

अर्थ-बकरीका मांस, बकरीका दूध, बकरीका घी इनमें मिश्री मिलायके सेवन करना, तथा बकरीकी टहल चाकरी करना. तथा उन बकरियोंमें रहना ये सब क्षयरोगनाशक यत्न हैं ॥

गीतवादित्रशब्दैश्च प्रियस्तुतिभिरेव च । हर्षणाश्वासनैर्नित्यं

---

१ पर दिनसहस्रं तु यदि जीवति मानवः । सुभिषग्भिरुपक्रांतस्तरुणः शोषपीडितः॥ इति ।

गुरूणा समुपासनैः ॥ ब्रह्मचर्येण दानेन तपसा देवतार्चनैः । सत्येनाचारयोगेन रविमंडलसेवया ॥ वैद्यविप्रार्चनाच्चैव रोगराजो निवर्तते ॥

अर्थ—गीत, वाजे आदिका घोष, प्रियस्तुति, हर्ष, आश्वासन, गुरुकी सेवा, ब्रह्मचर्य, तप, देवपूजन, सत्य बोलना, आचार, सूर्यनारायणकी सेवा, वैद्य और ब्राह्मणकी सेवा और पूजा करना ये सब कर्म राजयक्ष्माको दूर करते हैं ॥

षडंगयूष ।

द्रव्यतो द्विगुणं मांसं सर्वतोऽष्टगुणं जलम् ।
पदस्थं संस्कृतं चाज्यं षडंगो यूष उच्यते ॥

अर्थ—औषधकी अपेक्षा दुगुना मांस लेवे तथा सबसे आठगुना जल डाले जब औटते २ चौथाई रहे तब इसमें घी डाले इसे षडंगयूष कहते हैं ॥

ज्वरदाहक्रिया ।

ज्वराणां शमनीयो यः पूर्वमुक्तो क्रियाविधिः ।
क्षयिणां ज्वरदाहेषु स सर्वोऽपि प्रशस्यते ॥

अर्थ—जो प्रथम ज्वरोंके शमनार्थ क्रियाका प्रकार लिखा है वह संपूर्ण क्षयमें ज्वर और दाह इत्यादिकोंपर करे ॥

वर्खभक्षणका माहात्म्य ।

नवनीतसितामधुप्रयुक्तो वरखो हेमभवः क्षयं क्षिणोति ।
वितथः प्रभवेदयं प्रयोगो यदि तन्मे शपथः सदाशिवस्य ॥

अर्थ—मक्खन, मिश्री, सहत इनमें सोनेके वर्खको मिलायके सेवन करे तो क्षयरोगका नाश होवे यदि यह कहा हुआ मेरा प्रयोग असत्य होवे तो मुझे मेरे उपास्य श्रीशिवजीकी शपथ (सौगंध) है यह वैद्यामृत ग्रंथमें लिखा है ॥

च्यवनप्राशावलेह ।

पाटलारणिकाश्मर्यबिल्वारलुकगोक्षुराः । पर्ण्यौ बृहत्यौ पिप्पल्यः शृंगी द्राक्षामृताभयाः ॥ बला भूम्यामली वासा ऋद्धिर्जीवंतिका सठी । जीवकर्षभकौ मुस्तं पौष्करं काकनासिका ॥ मुद्गपर्णी माषपर्णी विदारी च पुनर्नवा । कांकोल्यौ कमलं मेदे

सूक्ष्मैलागरुचंदनम् ॥एकैकं पलसम्मानं स्थूलचूर्णितमौषधम् । एकीकृत्य बृहत्पात्रे पंचामलशतानि च॥पचेत् द्रोणजले क्षिप्त्वा ग्राह्यमष्टांशशेषितम् । ततस्तु तान्यामलानि निष्कुलीकृत्य वाससा ॥ दृढहस्तेन संमर्द्य क्षिप्त्वा तत्र ततो घृतम् । पलसप्तमितं तोयं किंचित् भृष्टाल्पवह्निना ॥ ततस्तत्र क्षिपेत्क्वाथं खंडं चार्धपलोन्मितम् । लेहवत्साधयित्वा च चूर्णानीमानि दापयेत् ॥ पिप्पली द्विपला ज्ञेया तुगाक्षीरी चतुःपला । प्रत्येकं च त्रिशाणा स्युस्त्वगेलापत्रकेशराः ॥ ततस्त्वेकीकृते तस्मिन्-क्षिपेत्क्षौद्रं च षट्पलम् । इत्येवं च्यवनप्रोक्तं च्यवनप्राश्यसंज्ञकम् ॥ लेहं वह्निबलं दृष्ट्वा खादेत्क्षीणो रसायनम् । बालवृद्धक्षतक्षीणा नारीक्षीणाश्च शोषिणः ॥ हृद्रोगिणः स्वरक्षीणा ये नरास्तेषु युज्यते । कासं श्वासं पिपासां च वातास्रमुरसो ग्रहम्॥वातपित्तं शुक्रदोषं मूत्रदोषं च नाशयेत् । मेधां स्मृतिं स्त्रीषु हर्षं कांतिं वर्णं प्रसन्नताम् ॥ अस्मात्प्रयोगादाप्नोति नरो जीर्णविवर्जितः ॥

अर्थ-पाठ, अरनी, कंभारी, बेलगिरी, टेंटू, गोखरू, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेरी, बडी कटेरी, पीपल, काकडासिंगी, दाख, गिलोय, हरड, बला, भूँयआवला, अडूसा, ऋद्धि, सिद्धिके अभावमें वाराहीकंद, जीवंती (डोडी), कचूर, जीवक, ऋषभक इन दोनोंके अभावमें विदारीकंद, नागरमोथा, पुहकरमूल, काकनासा (कौआडोडी), मुद्गपर्णी, माषपर्णी, विदारीकंद, पुनर्नवा (सांठ), काकोली, क्षीर काकोली इन दोनोंके अभावमें असगंध, कमल, मेदा, महामेदा इन दोनोंके अभावमें मुलहटी, छोटी इलायची, अगर, लालचंदन, इन सब औषधोंको एकत्र एक एक पल लेवे सबको जव कूट कर लेवे फिर बडे २ आंवले ५०० लेवे इन सबको बडे भारी पात्रमें भरके १ द्रोण जलमें औटावे जब आठवां हिस्सा जल शेष रहे तब उन आवलोंको उतार लेवे और मोटे गाढे कपडेमें उन आवलोंको डारके मथ डाले तो उस वस्त्रमेंसे आवलोंका सीरा छनके नीचेके पात्रमें गिरेगा उसको अलग रख लेवे. फिर कलईके बासनमें २८ तोले घी डाल अग्निपर चढावे और आवलोंका सीरा डालके मंद २ अग्निसे भून लेवे और फिर पूर्वोक्त आवलोंका

जल डालके तथा ५० पल मिश्री डालके पक्व करे जब अवलेहके माफिक चासनी हो जावे तब इन औषधोंका चूर्ण डाले. पीपल ८ तोले, वंशलोचन १६ तोले, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, प्रत्येक तीन शाण लेवे सबका चूर्ण करके उस चासनीमें डाल देवे और सहत छः पल मिलावे तो च्यवनऋषिका कहा हुआ यह अवलेह सिद्ध होवे। इसे च्यवनप्राश्य अवलेह कहते हैं इस अवलेहको रोगीका बलाबल देखके देवे तथा उसका अग्निबलभी विचार लेना चाहिये तो इससे क्षीणत्व दूर होवे. बाल वृद्ध और क्षत (घाव) करके जो क्षीण हैं तथा स्त्रीसंग अत्यन्त करनेसे जिनकी धातु नष्ट हो गई है तथा जिन मनुष्योंके शोष रोग है. जिनके हृदयका रोग है वा एवं जिनके कंठका स्वर क्षीण हो गया है इतने मनुष्योंको यह अवलेह देनी चाहिये, श्वास, खांसी, प्यास, वातरक्त, उरोग्रह, वात, पित्तविकार, धातुदोष, तथा मूत्र दोष ये संपूर्ण रोग दूर होवें तथा इस अवलेहके सेवन करनेसे बुद्धि बढती है. स्मरणशक्ति (याद) ठीक रहे है. तथा स्त्रियोंसे मैथुन करनेकी इच्छा बढती है. शरीरकी कांति और शरीरका वर्ण ये उत्तम होते हैं मन प्रसन्न रहता है तथा मनुष्यके सब रोग दूर करे है यह रसायन है ॥

एलाद्यचूर्ण।

एलापत्रं नागपुष्पं लवंगा भागस्त्वेषां द्वौ च खर्जूरकस्य।
द्राक्षायष्टीशर्करापिप्पलीनां चत्वार्यैतत्क्षौद्रयुक्तं क्षये स्यात् ॥

अर्थ–इलायची, पत्रज, नागकेशर और लौंग इनको एक २ भाग ले, खजूर दो भाग लेवे मुनक्का दाख, मुलहटी, मिश्री और पीपल इनको चार भाग लेवे सबका एकत्र चूर्ण कर सहतके साथ खानेको देवे. यह चूर्ण क्षयरोगपर उत्तम है ॥

अश्वगंधाचूर्ण।

अश्वगंधा दशपलं तदर्धं नागरान्वितम्। तदर्धकणसंयुक्तं मरीचं च चतुर्थकम् ॥ चातुर्जातं वरांगं च भार्ङ्गी तालीसपत्रकम्। कचोराजाजिकैटर्यं मांसीकं कोलमुस्तकम् ॥ रास्ना कटुकरोहिण्याजीवंती कुष्ठकं तथा। प्रायः कर्षमितं चूर्णं चूर्णेन समशर्करा ॥ प्रातःकाले त्विदं चूर्णं जलेनोष्णेन सेवयेत्। वातपित्तक्षये चैव अजागोघृतसंयुतम् ॥ श्लेष्मक्षये क्षौद्रयुक्तं नवनीतेन मेहजित्। शिरोभ्रमणपित्तार्तं गोक्षुरेण समन्वितम् ॥

क्षतक्षीणं च देहं च विशेषबलवर्द्धनम् । मेदोदरं च मंदाग्निं कुक्षिशूलोदरापहम् ॥ अनुपानविशेषेण सर्वरोगहरं परम् ॥

अर्थ-असगंध ४० तोले, सोंठ २० तोले, पीपल १० तोले, काली मिरच ४ तोले तथा चातुर्जात, दालचीनी, भारंगी, पत्रज, कचूर, जीरा, अजमायन, कायफल, जटामांसी, कंकोल, नागरमोथा, रास्ना, कुटकी, जीवंती, कूठ ये संपूर्ण औषधी एक एक तोला लेकर चूर्ण करे तथा सब चूर्णकी बराबर मिश्री मिलावे. इस चूर्णको प्रातःकाल गरम जलके साथ देवे तथा वातक्षय, पित्तक्षय इनपर बकरीका अथवा गौके घीके साथ देवे तथा कफक्षयपर सहतके साथ देवे, प्रमेहमें लोनी (मक्खन) के साथ शिरोभ्रमण (मस्तकके घूमने) पर तथा पित्तव्याधि इन पर गोखरूके साथ देवे यह विशेष करके क्षतक्षीण तथा क्षीणदेह इनके बलकी वृद्धि करे है तथा मेद, उदर, मंदाग्नि, कुक्षिशूल, जलंधर इनका तथा सर्व रोगोंका नाश करे है ॥

द्राक्षादि चूर्ण ।

द्राक्षालाजासितोपलं समधुकं खर्जूरगोपीतुगा ह्रीबेरामलकाब्द-चंदननतं कंकोलजातीफलम् । चातुर्जातकणा सधान्यकमिदं चूर्णं समं शर्करा प्रातर्भक्षितमात्मकेन विधिना पित्तं सदाहं जयेत् ॥ मूर्च्छांछर्दिमरोचकं च शमयेत्कायस्य कांतिप्रदं पांडूकामिलरक्तपित्तमुदरं दाहज्वरारोचकम् । यक्ष्माणं रुधिरप्रमेहहरणं तद्योनिदोषापहं रक्तार्शोऽन्त्रविवृद्धिविद्रधिहरं द्राक्षादिचूर्णोत्तमम् ॥

अर्थ-दाख, खील, मिश्री, मुलहटी, खजूर, सरिवन, वंशलोचन, नेत्रवाला, आमले नागरमोथा, चंदन, तज, कंकोल, जायफल, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, पीपल और धनिया ये सब समान भाग ले इनकी बराबर मिश्री मिलावे इस चूर्णको प्रातःकाल सेवन करनेसे पित्त, पित्तदाह, मूर्च्छा, वमन और अरुचि इनको शमन करे, शरीरकी कांति बढावे और पांडुरोग, कामला, रक्तपित्त, उदर, दाह, ज्वर, अरोचक, खई, रुधिरका विकार, प्रमेह, योनिके दोष, खुनी बवासीर, अंत्रवृद्धि और बढी हुई विद्रधिका रोग इन सब रोगोंको यह द्राक्षादिचूर्ण दूर करे है ॥

कर्पूरं चोचकं कोलजातीफलदलैः समैः । लवंगमांसीमरिचैः

कृष्णाशुंठीविवर्धितैः ॥ चूर्णं सितासमं हृद्यं सदाहक्षयकास-
जित् । वैवर्ण्यपीनसश्वासच्छर्दिकंठामयापहम् ॥ प्रयुक्तं चानुपानैर्वा
भेषजद्वेषिणां हितम् ॥

अर्थ-कपूर, दालचीनी, कंकोल, जायफल और पत्रज ये समान भाग लेवे तथा लौंग १, जटामांसी २, काली मिरच ३, पीपल ४, सोंठ ५ भाग इस प्रकार सब औषध लेकर चूर्ण करे चूर्णके बराबर मिश्री मिलायके देवे. यह हृदयको हितकारी है तथा दाह, क्षय, खांसी, विवर्णता, पीनस, प्यास, वमन और कंठके रोग इन पर अनुपानके साथ देवे यह औषधसे द्वेष करनेवालेको भी प्रिय लगे है ॥

यवादिचूर्ण।

यवगोधूमचूर्णं वा क्षीरसिद्धं घृतप्लुतम् ।
तत्कृत्वा सर्पिषा क्षौद्रसितात्कं क्षयशांतये ॥

अर्थ-जव और गेहूं इनका चून दूधमें पक करके उसमें घी सहत और मिश्री मिला-यके पीनेको देवे तो क्षयरोगकी शांति होवे ॥

त्रिकट्वादिचूर्ण ।

त्रिकटुत्रिफलैलाभिर्जातीफललवंगकैः । नवभागोन्मितैरेतैः
समं तीक्ष्णं मृतं भवेत् ॥ संचूर्ण्यालोडयेत्क्षौद्रे नित्यं यः सेवते
नरः । कासं श्वासं क्षयं मेहं पांडुरोगं भगंदरम् ॥ ज्वरं मंदानलं
शोथं संमोहं ग्रहणीं जयेत् ॥

अर्थ-त्रिकुटा, त्रिफला, इलायची, जायफल, लौंग इनका चूर्ण बराबर करके इन सबके बराबर पोलाद लोहकी भस्म लेवे सबको एकत्र कर नित्य प्रति सहतके संग खाय तो श्वास, खांसी, क्षय, प्रमेह, पांडुरोग, भगंदर, ज्वर, मंदाग्नि, सूजन, मोह, संग्रहणी इनका नाश करे ॥

शंखपोटलीरस ।

रसं गंधं कंत्रोर्भसितमपि कापर्दभसितं मरीचं भूचंद्रांबुधिर-
ससहस्रांशुलविकम् । रसांघ्र्यंशं टंकं सकलमपि चूर्णीकृतमिदं
क्रमाद्यावान्निष्कं घृतसहितमद्यात्क्षयहरम् ॥

अर्थ-पारा १, गंधक १, शंखकी भस्म ४, कौडीकी भस्म ६, काली मिरच १२

और सुहागेका चूर्ण १॥ भाग ले सबका बारीक चूर्ण करके नित्यप्रति एक मासेके अनुमान घीके साथ सेवन करे तो क्षयरोगको नष्ट करे ॥

शिलाजतुयोग ।

फलत्रिककाथविशुद्धमादौ सिद्धं गुडूच्या दशमूलसिद्धम् । स्थिरादिकाकोलियुगादिसिद्धं शिलाजतु स्यात्क्षयिषु प्रशस्तम् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला इनके काढेमें शिलाजितको बारीक करके पोटली बांध दोलायंत्रकी विधिसे शुद्ध कर लेवे फिर गिलोयके काढे, दशमूलके काढे, स्थिरादि काढे, कांकोल्यादि काढा इनकी भावना देकर सिद्ध कर लेवे यह बना हुआ शिलाजीत क्षयरोग पर परम हितकारी है।

पिप्पल्यासव क्षयादिकोंपर ।

पिप्पली मरिचं चव्यं हरिद्रा चित्रको घनः । विडंगं क्रमुको लोध्रः पाठा धात्र्येलवालुकम् ॥ उशीरं चंदनं कुष्ठं लवंगं तगरं तथा । मांसी त्वगेला पत्रं च प्रियंगुर्नागकेशरम् ॥ एषामर्धपलान्भागान् सूक्ष्मचूर्णीकृतान् शुभान् । जलद्रोणद्वये क्षिप्त्वा दद्यात् गुडतुलात्रयम् ॥ पलानि दश धातक्या द्राक्षा षष्टिपला भवेत् । एतान्येकत्र संयोज्य मृद्भांडे च विनिक्षिपेत् ॥ ज्ञात्वा गतरसं सर्वं पाययेदग्न्यपेक्षया । क्षयं गुल्मोदरं कार्श्यं ग्रहणीं पांडुतां तथा ॥ अर्शांसि नाशयेच्छीघ्रं पिप्पल्याद्यासवस्त्वयम् ॥

अर्थ–पीपल, काली मिरच, चव्य, हलदी, चीतेकी छाल, नागरमोथा, वायविडंग, सुपारी, लोध, पाढ, आमले, एलवालुक, खस, चंदन, कूठ, लौंग, तगर, जटामांसी, दालचीनी, इलायची, पत्रज, फूलप्रियंगु, नागकेशर ये तेईस औषध एक एक पल लेवे बारीक चूर्ण करके दो द्रोण जलमें डालके और गुड तीन तुला डाले तथा धायके फूल १० पल, दाख ६० पल इन दोनोंको पीस उस जलमें गेर देवे सबको एक मिट्टीके घडेमें भर मुख बंद करके मुद्रा दे देवे फिर इसको एक महीने और पंद्रह दिन धरा रहने देवे. जब औषधोंका उत्तम रस निकल आवे तब सब मुद्राको दूर करके इसको छान लेवें. इसे पिप्पलासव कहते हैं. इस आसवको शक्तिका तारतम्य देखकर वैद्य रोगीको देवे तो यह क्षयरोग, गोला, उदररोग, शरीरकी कृशता, संग्रहणी, पांडुरोग और मूलव्याधि (बवासीर) इनको दूर करे ॥

कृष्णाद्यवलेह ।

कृष्णाद्राक्षासिताऌेहः क्षयहा क्षौद्रतैलवान् ।
मधुसर्पिर्युतो वाश्वगंधाकृष्णासितोद्भवः ॥

अर्थ—पीपल, दाख, मिश्री, सहत और सरसोंका तेल इनका अवलेह क्षयरोगनाशक है तथा सहत, असगंध, पीपल और मिश्री इनका अवलेह भी क्षयरोगनाशक है ॥

रास्नादिचूर्ण ।

रास्नाकर्पूरतालीसभेकपर्णीशिलाजतु । त्रिकटुत्रिफलामुस्ताविडंगदहनाः समाः ॥ चतुर्दशायसो भागास्तच्चूर्णं मधुसर्पिषा । लीढं कासं ज्वरं श्वासं राजयक्ष्माणमेव च ॥ बलवर्णाग्निपुष्टिं च वर्धनं दोषनाशनम् ॥

अर्थ—रास्ना, कपूर, तालीसपत्र, मँजीठ, शिलाजीत, त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा, वायविडंग और चित्रक ये सब औषधी समान भाग लेवे और लोहभस्म १४ भाग ले सबको एकत्र चूर्ण कर सहत घीके साथ बलाबल विचारके खाय तो श्वास, खांसी, ज्वर, राजरोग इनको नष्ट करे तथा बल, वर्ण, अग्नि इनको बढावे तथा दोषोंका नाश करे ॥

अगस्त्यहरीतकी क्षयादिकोंपर ।

हरितकीशतं भद्रयवानामाढकं तथा । पलानि दश मूलस्य विंशतिश्च नियोजयेत् ॥ चित्रकः पिप्पलीमूलमपामार्गः सठी तथा । कपिकच्छूः शंखपुष्पी भार्ङ्गी च गजपिप्पली ॥ बला पुष्करमूलं च पृथक् द्विपलमात्रया । पचेत्पंचाढके नीरे यवैः स्विन्नैः शृतं नयेत् ॥ तच्चाभयाशतं दद्यात् क्वाथे तस्मिन्विचक्षणः । सर्पिस्तैलाष्टपलकं क्षिपेत् गुडतुलां तथा ॥ पक्त्वा लेहत्वमानीय सिद्धे शीते पृथक् पृथक् । क्षौद्रं च पिप्पलीचूर्णं दद्यात्कुडवमात्रया ॥ हरीतकीद्वयं खादेत्तेन लेहेन नित्यशः । क्षयं कासं ज्वरं श्वासहिक्काशोरुचिपीनसान् ॥ ग्रहणीं नाशयेदेष

वलीपलितनाशनः । बलवर्णकरः पुंसामवलेहो रसायनः ॥ विहितोगस्त्यमुनिना सर्वरोगप्रणाशनः ॥

अर्थ-जौ एक आढक (४ सेर) ले उनको जौकूट कर चौगुने जलमें चढायके औटावे जब चौथाई जल रहे तब उतार लेवे और जलको छान लेय और जौको दूर पटक देवे फिर दशमूलकी औषध २० पल ले, चित्रक, पीपरामूल, ओंगा, कचूर, कौंछके बीज, शंखपुष्पी (शंखाहुली), भारंगी, गजपीपल, बला, पुहकरमूल ये दश औषध आठ २ तोले लेवे सबको जौंकुट करके पांच आढक जलमें डालके चौथाई जल रहे तबतक औटावे फिर उतारके छान लेय फिर इसको जौके काढेमें मिलाय देवे, फिर उस जलमें बडी २ हरड १०० गेरे, घी और तिलोंका तेल आठ २ पल तथा गुड एक तुला मिलावे पश्चात् इस काढेको अग्निपर चढायके अवलेह बनावे जब तैयार होनेको होय तब पीपलका चूर्ण और सहत ये दोनों एक एक कुडव अर्थात् पाव पाव भर मिलावे परंतु पीपल और सहत शीतल हो जावे तब मिलावे नरममें न मिलावे. यह अगस्त्यऋषिकी कही हुई अवलेह है इसीसे इसको अगस्त्यहरीतकी कहते हैं इसमेंसे रोगीको दो हरड अवलेहके साथ खानी चाहिये तो यह क्षय, खांसी, ज्वर, श्वास, हिचकी, बवासीर, अरुचि, पीनसरोग जो नाकमें होता है और संग्रहणी ये रोग दूर होवें. देहमें जो गुजरुट पडती है सो तथा बालोंकी सफेदी दूर होवे तथा बल और कांति होवे. यह अवलेह रसायन है. इससे संपूर्ण रोग नष्ट होवें ॥

आटरूषादिकषाय ।

आटरूषो शिरीषाश्वगंधश्चेति पुनर्नवा ।
एतैः क्वाथ्य पयः पीतं क्षयरोगविनाशनम् ॥

अर्थ-अडूसा, सिरस वृक्षकी जड, असगंध, लालबोल और पुनर्नवा (सांठ) इनका काढा करके पीवे तो राजरोगका नाश होय ॥

अश्वत्थवल्कलादिलोह ।

अश्वत्थवल्कलं चैव त्रिकटुर्लोहकिट्टकम् ।
गुडेन सह दातव्यं क्षयरोगविनाशनम् ॥

अर्थ-पीपलकी छाल, सोंठ, मिरच, पीपल इनके चूर्ण और मंडूर इनको एकत्र कर गुडके साथ खाय तो क्षयरोगका नाश होय ॥

ककुभाद्यचूर्ण ।

ककुभत्वङ्नागबलाधात्रीवातारिबीजानाम् ।
चूर्णं मधुघृतयुक्तं सशिवं यक्ष्मादिकासहरम् ॥

अर्थ–कोहकी छाल, सोंठ, बला, आंवला और अंडके बीज इनका चूर्ण कर घी और सहत मिलायके सेवन करे तो क्षयरोग और खांसी आदि रोगोंको दूर करे ॥

अश्वगंधाद्यचूर्ण ।

अश्वगंधामृता भीरुदशमूलीबलाद्वयम् ।
पुष्करातिबला घ्नंति क्षयं क्षीररसाशिनः ॥

अर्थ–असगंध, गिलोय, सतावर, दशमूल, बला और अतिबला, तथा पुहकरमूल, इनका चूर्ण सेवन करे और ऊपरसे दुग्ध आदि पथ्यमें देवे तो क्षयरोगका नाश होय ॥

तालीसाद्यचूर्ण ।

तालीसपत्रमरिचनागरं पिप्पली तुगा । यथोत्तरं भागवृद्ध्या त्वगेला चार्धभागिका ॥ पिप्पल्यष्टगुणा चात्र प्रदेया सितशर्करा । कासश्वासारुचिहरं तच्चूर्णं दीपनं परम् ॥ पांडुहृद्ग्रहणीदोषप्लीहशोषज्वरापहम् ॥

अर्थ–तालीसपत्र, काली मिरच, सोंठ, पीपल और वंशलोचन, ये एकोत्तर वृद्धि, से लेवे. तथा दालचीनी और इलायची ये अर्ध २ भाग ले. पीपल ८ भाग और सपेद चीनी सब चूर्णकी बराबर लेके इसके सेवन करनेसे खांसी, श्वास, अरुचि, पांडुरोग, हृदयरोग, संग्रहणी, प्लीहा, शोष और ज्वर इनका नाश करे तथा अत्यंत दीपन है ॥

नवनीतयोग ।

शर्करामधुसंयुक्तं नवनीतं लिहेत्क्षयी ।
क्षीराशी लभते पुष्टिं मधुकुल्पाजमाक्षिके ॥

अर्थ–मिश्री, सहत और मक्खन इनको मिलायके सेवन करे अथवा दूध, सहत और घी एकत्र करके देवे तो यह प्राणी पुष्ट होय, और क्षय रोग दूर होवे ॥

सितोपलादिचूर्ण ।

सितोपला षोडश स्यादष्टौ स्याद्वंशरोचना । पिप्पली स्याच्च-

तुःकर्षा एला स्याच्च द्विकर्षिका ॥ एककर्षा च त्वग्ग्राह्या चूर्ण-येत्सर्वमेकतः । सितोपलादिकं चूर्णं मधुसर्पिर्युतं लिहेत् ॥ कासश्वासक्षयहरं हस्तपादांगदाहजित् ॥ मंदाग्निं सुप्तजिह्वत्वं पार्श्वशूलमरोचकम् ॥ ज्वरमूर्ध्वगतं रक्तं पित्तमाशु व्यपोहति ॥

अर्थ-मिश्री १६ तोले, वंशलोचन ८ तोले, पीपल ४ तोले, इलायची २ तोले और दालचीनी १ तोला इन सबका चूर्ण करे इसे सितोपलादि चूर्ण कहते हैं इसको सहत और घीके साथ देवे तो खांसी, श्वास, क्षय और हाथ, पैर, अंग इनका दाह, मंदाग्नि, जिह्वाका रसअज्ञान, पसलीकी पीडा, अरुचि, ज्वर, ऊर्ध्वगत रक्तविकार और पित्त इनको शीघ्र नाश करे ॥

तवराजादिचूर्ण ।

तवराजकणा द्राक्षा खर्जूरं मधुकं त्रुटी । लवंगं पत्रकं चैव नागकेसरनामतः ॥ मधुना भक्षितं हंति चूर्णमेषां हि निश्चि-तम् । भ्रमं दाहं शिरःपीडां क्षयरोगं न संशयः ॥

अर्थ-मिश्री, पीपल, दाख, खजूर, मुलहटी, इलायची छोटी, लौंग, पत्रज और नागकेशर इनका चूर्ण कर सहतके साथ देवे तो यह भ्रम, दाह, मस्तकशूल और क्षय-रोग इनका नाश करे ॥

अडूसायोग ।

आयुर्यदा स्याद्बलवन्नराणां सरक्तपित्तश्वसनक्षयीणाम् ।
मधुप्रयुक्ता यशसा प्रतीता वासा तदा किं न करिष्यतीयम् ॥

अर्थ-यदि रोगीकी आयु बलवान् होवे तो उसके रक्तपित्त, श्वास, क्षय ये रोग अडूसेके स्वरस वा काढेमें सहत डालके पीनेसे क्या परचा नहीं देवे. अर्थात् अवश्य अपना परचा देता है ॥

द्राक्षादिचूर्ण ।

द्राक्षाखर्जूरसर्पिर्भिः पिप्पल्या च सह स्मृतम् ।
सक्षौद्रं ज्वरकासघ्नं श्वयथुं च प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-दाख, खजूर और पीपल इनके चूर्णको सहत और घी डालके सेवन करे इसको ज्वर, खांसी और सूजन पर देवे तो इन रोगोंको नष्ट करे ॥

स्वर्णमाक्षिकादिचूर्ण ।

मधुताप्यविडंगाश्मजतु लोहं घृतं मतम् ।
हंति यक्ष्माणमत्युग्रं सेव्यमानं हिताशिनः ॥

अर्थ–सुवर्णमाक्षिक, वायविडंग, शिलाजीत, लोह इनका चूर्ण कर इसको घी और सहतमें मिलायके देवे तो क्षय और श्वास इनको नाश करे ॥

शिलाजितादिचूर्ण ।

शिलाजतुमधुव्योषताप्यलोहरजांसि च ।
क्षीरयुग्लेहिनः श्वासः क्षयः क्षयमवाप्नुयात् ॥

अर्थ–शिलाजीत, सोंठ, मिरच, पीपल, सुवर्णमाक्षिककी भस्म और कांति लोहकी भस्म ये दूध, सहत और मिश्री इनमें मिलायके देवे तो क्षय तथा श्वास इनका नाश होय॥

लाक्षाकूष्मांडरस ।

कूष्मांडकगिरोत्थेन रसेन परिपेषितम् ।
लाक्षाकर्षद्वयं पीत्वा जयेद्रक्तक्षयं तथा ॥

अर्थ–कुह्मडा (पेठे) के गूदेके रसमें दो तोले लाखका चूर्ण डालके पीवे तो रक्तक्षय का नाश होवे. परंतु पेठा पका हुआ लेवे ॥

मार्कवादिचूर्ण ।

द्वे पले मार्कवं धात्री माक्षिकं सपुनर्नवा । तुगा स्पृक्का शालिपर्णी वासकं सदुरालभम् ॥ चूर्णार्धेन समं योज्यं त्रिगंधं मरिचानि च । तालीसं मगधा चैव तदर्धेन शिलोद्भवम् ॥ शिलाभेदं तदर्धेन सर्वं चैकत्र मिश्रयेत् । समेन तिलचूर्णेन शर्करा च समाहृता ॥ भक्षयित्वा पयःपानं शस्यते घृतसंयुतम् । तेन क्षयो राजयक्ष्मा कामला च विनश्यति ॥ अर्शांश्मरीं जयत्याशु बलवीर्याधिको भवेत् । शाम्यंति च महारोगाः शुक्राढ्यो जायते नरः ॥

अर्थ-भांगरा, आँवले, स्वर्णमाक्षिक, पुनर्नवा, वंशलोचन, लजालु कंद, शालपर्णी, अडूसा और धमासा ये समान भाग लेवे इन सबसे आधी दालचीनी, पत्रज, इला-

यची, काली मिरच, तालीसपत्र, पीपर लेवे तथा इनसे आधा शिलाजीत, पाषाणभेद और सब चूर्णके बराबर तिलोंका चूर्ण और खांड ले सबको एकत्र कर चूर्ण करे इसको भक्षण करे ऊपरसे घी डालके दूध पीवे तो क्षय, राजयक्ष्मा, कामला, बवासीर, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और अष्ट महारोग इनको नाश करे तथा रोगीको बल आनकर धातु पुष्ट होवे॥

बलादिचूर्ण ।

बला विदारी लघुपंचमूली पंचैव क्षीरावृतत्वक् प्रयोज्या । पुनर्नवा मेघतुगा च भृंगः संजीवनीयैर्मधुकैः समांशैः ॥ अक्षप्रमाणानि च मानिकानि सर्वाणि चैतानि विचूर्णयित्वा । विमिश्रयेत्तऋकणाशतानि पंचाशगोधूमयवाश्च पिष्ट्वा ॥ तुगासमांशं सितंदुलानां पिष्टं सशृंगाटकमिश्रितं तु । प्राक् चूर्णं क्वाथेन वियोजनीयं सर्वांशकेनाप्यथ वा प्रयोज्यम् ॥ विभावयेच्चामलकीरसेन वारत्रयं गोपयसा विभाव्यम् । ततोऽस्य सर्वैः समशर्करा वा घृतेन चैवं पुनरेव भाव्यम् । तद्भक्षयेत्क्षौद्रयुतं पलार्द्धं जीर्णे च भोज्यं कटुकाम्लवर्ज्यम् । क्षीरं घृतं वा सितशर्करं वा यवान्नगोधूमकशालिमद्यान् ॥ ज्ञात्वाग्निपाकं जठरे नरस्य देयो विधिज्ञैः क्षयरोगशांत्यै ॥

अर्थ-बला, विदारीकंद, लघुपंचमूल, वड, गूलर, पीपलवृक्ष, पाईर, नांदरूख इनकी छाल, पुनर्नवा, नागरमोथा, बंशलोचन, भांगरा और जीवनीयगण, मुलहटी ये सब समान भाग लेकर चूर्ण करे इस चूर्णका पांचवां भाग गेहूं और जौका आटा तथा बंशलोचनके समान चावल और सिंघाडेका चूर्ण लेवे ये सब चूर्णको एकत्र करके ऊपर कही हुई बलासे लेकर मुलहटी पर्यंत फिर लेके उनका काढा करके पूर्वोक्त चूर्णमें भावना देवे फिर चूर्णमें बराबरकी मिश्री मिलाय लेवे इसमेंसे छः मासे चूर्णको सहतके साथ देवे जब चार घडी वीत जावे तब चरपरे और खट्टे पदार्थ त्यागकर दूध, घी, खांड, गेहूं, जौ, चावल और मद्य ये पथ्यमें देवे. इस प्रकार अग्निबल जानके क्षयरोगका नाश करनेके अर्थ देवे तो राजरोग नष्ट होवे ॥

जातीफलादिचूर्ण ।

जातीफलं विडंगानि चित्रकं तगरं तिलाः । तालीसं चंदनं शुंठी

लवंगमुपकुंचिका ॥ कर्पूरश्चाभया धात्री मरीचं पिप्पली तुगा । एषामक्षसमा भागाश्चातुर्जातकसंयुताः ॥ पलानि सप्त भंगायाः सिता सर्वसमा मता । चूर्णमेतत्क्षयं कासं श्वासं च ग्रहणीगदम् ॥ अरोचकं प्रतिश्यायं तथा चानलमंदताम् । एतान् रोगान् निहंत्येव वृक्षानिंद्राशनिर्यथा ॥

अर्थ-जायफल, वायविडंग, चातकी छाल, तगर, तिल, तालीसपत्र, चंदन, सोंठ लौंग, इलायची, भीमसेनी कपूर, हरड, आंवला, काली मिरच, पीपल, वंशलोचन तथा चातुर्जात ये प्रत्येक एक तोला लेवे तथा भांग सात तोले ले और सबके बराबर मिश्री लेवे इस चूर्णके खानेसे क्षय, खांसी, श्वास, संग्रहणी, अरुचि, प्रतिश्याय और मंदाग्नि इनका नाश करे ॥

शिवगुटी ।

त्रीन्वारान्प्रथमे शिलाजतुजले भाव्यं भवे त्रैफले निःक्वाथे दशमूलजेऽथ तदनु च्छिन्नोद्भवाया रसैः । क्वाथे वालकजे पटोलसलिले यष्टीकषाये पुनर्गोमूत्रेऽथ पयस्यथापि च गवामेषां कषाये ततः ॥ द्राक्षाभीरुविदारिकाद्वयपृथक्पर्णीस्थिरापौष्करैः पाठाकर्कटकोटजाख्यकटुकारास्नांबुदालंबुदैः । दंतीचित्रकचव्यवारुणकणावीराष्टवर्गौषधैरष्टोर्णे चरणस्थिते पलमितैराभः पृथक् भावयेत् ॥ धात्रीमेषविषाणिकात्रिकटुकैरेभिः पृथक् पंचकैर्द्रव्यैश्च द्विपलोन्मितैरपि पल चूर्णं विदारीभवम् ॥ तालीसात्कुडवं चतुःपलमिह प्रक्षिप्यते सर्पिषस्तैलस्यार्धपलं पलाष्टकमथ क्षौद्रं भिषग्योजयेत् ॥ तुल्य पलैः षोडशभिः शितायास्त्वक्क्षीरिकापत्रककेसरैश्च । बिल्वांशकैस्त्वक्त्रुटिसंयुक्तैरित्यक्षमात्रा गुटिका प्रकल्प्या ॥ तासामेकतमां प्रयोज्य विधिवत्प्रातः पुमान्भोजनात्प्राग्वा मुद्गदलांबुजांगलरसं शीतं शृतं वा जलम् । माक्षिकं मादिरामगुर्वशनभुक् पीत्वा पयो वा गवां प्राप्नोत्यंग मनोभवः सुभवनं संपन्नमानंदकृत् ॥ शोफ-

ग्रंथिविबंधवेपथुवमिं पांड्वामयं श्लीपदं प्लीहार्शः प्रदरं प्रमेहपिटिका मेहाश्मरीं शर्कराम् । हृद्रोगार्बुदवृद्धिविद्रधियकृद्योन्यामयः सानिलश्चोरुस्तंभभगंदरज्वररुजस्तूणी प्रतूणी तथा॥ वातासृक् प्रबलं प्रवृद्धमुदरं कुष्ठं किलासं कृमीन् कासं श्वासमुरःक्षतक्षयमसृक्पित्तं समानात्ययम् । उन्मादं मदमप्यपस्मृतिमातिस्थौल्यं कृशत्वं तनोः सालस्यं च हलीमकं च शमयेन्मूत्रस्य कृच्छ्राणि च ॥

अर्थ-शोधा शिलाजीत लेकर उसको त्रिफलेके काढेकी ३ भावना देवे फिर दशमूलका काढा, गिलोयका रस, नेत्रवालाका काढा, पटोलपत्रका रस, मुलहटी, गोमूत्र, गौका दूध, दाख, शतावर, विदारीकंद, कोहडा, सालपर्णी, पृश्नपर्णी, पुहकरमूल, पाढ, कूडेके बीज (इन्द्रजौ), कांकडी, रास्ना, नागरमोथा, खस, दंती, चीतेकी छाल, चव्य, गजपीपल, भूंयआवला, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली, क्षीरकाकाली, ये औषधी प्रत्येक चार चार तोल लेकर इनके रसकी अथवा काढेकी पृथक् भावना देवे, फिर आंवला, मेढासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल ये प्रत्येक ८ तोले, विदारिकंदका चूर्ण ४ तोले, तालीसपत्र १६ तोले और घी १५ तोले, तेल २ तोले, सहत ३२ तोले और मिश्री ६० तोले, वंशलोचन, पत्रज, नागकेशर, दालचीनी, छोटी इलायची, ये सब चार २ तोले लेवे सबको एकजीव करके एक २ तोलेकी गोली बनावे इसको प्रातःकालमें सेवन करे और भोजन करनेके प्रथम देवे और पथ्यमें मूंगकी दाल अथवा मूंगका जल देवे, जगलो जीवोंका मांसरस औटायके शीतल करा हुआ जल सहत, मद्य, हलके अन्न, तथा गौका दूध ये पदार्थ देने चाहिये, यह कामदेवको प्रबल करे तथा सूजन, गांठ विड्बंध, कफ, वांति, पांडुरोग, श्लीपद, प्लीहा, बवासीर, प्रदर, प्रमेह, प्रमेहपिटिका, मूत्राश्मरी, हृदयरोग, अर्बुद, अंडवृद्धि, विद्रधि, यकृत्, योनिरोग, वातरोग, ऊरुस्तंभ, भगदर, ज्वर तथा तूणी और प्रतूनी, वातरक्त, बढा हुआ जलंधरका रोग, कुष्ठ, किलासकुष्ठ, कृमिरोग, खांसी, श्वास, उरःक्षत, क्षत, रक्तपित्त, मद, उन्माद (बावलापना), अपस्मार (मृगी), अतिस्थूलता, अत्यंत कृशता, आलकस, हलीमक, मूत्रकृच्छ्र, वली (देहमें गुजलटोंका पडजाना), पलित (बालोंका सपेद हो जाना) इन सब रोगोंको यह शिवगुटी दूर करे है ॥

लघुशिवगुटी ।

कौटजं त्रिफलां निंबं पटोलं घननागरैः । भावितानि दशाहानि

रसौर्द्वित्रिगुणानि च ॥ शिलाजतुपलान्यष्टौ तावती सितशर्करा। त्वक्क्षीरी पिप्पली धात्री कर्कटाख्या पलोन्मिता ॥ निदिग्धी फलमूलाभ्यां पलं युंज्यात् त्रिजातकात् । मधुत्रिपलसंयुक्ता कुर्यादक्षसमा गुटी ॥ दाडिमाम्लपयःक्षीररसयूषसुरासवान् । तान्भक्षयित्वानुपिबेन्निरन्नो हितभक्ष्यभाक् ॥ पांडुं कुष्ठज्वरप्लीहतमकार्शोभगंदरम् । नाशयेन्मूत्रकृच्छ्राणि मूत्रस्थानविबंधनुत् ॥ यद्यत्र मेलितं येन कांतलोहं तथाभ्रकम् । पलं पलं च मिलितं तदा स्यात्किमतः परम् ॥ तीव्रदुःखप्रदं पांडुं प्रमेहमपरिग्रहम् । राजरोगं च व्याधिं च जयेदिति किमद्भुतम् ॥

अर्थ–शुद्ध शिलाजीत बत्तीस तोलेको कुडाकी छाल, हरड, बहेडा, आँवला, नीम, पटोलपत्र, नागरमोथा और सोंठ इनके काढेमें एक महीना खरल करे फिर इसमें मिश्री ३२ तोले तथा वंशलोचन, पीपल, आंवला, ककोडा ये प्रत्येक चार चार तोले और कटेरीका पंचांग ४ तोले तथा दालचीनी, पत्रज, इलायची और सहत ये बारह २ तोले ले इनको खरल करके दश मासेकी गोली खायकर अनारदाना, दूध, खीर, रस, यूष, मद्य अथवा आसव इनमेंसे किसी एकको भक्षण करे, तथा हितकारी भोजन करे तो पांडुरोग, कोढ, ज्वर, प्लीहा, तमक, बवासीर, भगंदर, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रसंबंधी रोग तथा मूत्रबंध इनको नाश करे. इस गोलीमें किसी २ वैद्यकी आज्ञा है कि इसमें कांतलोह और अभ्रक इनकी भस्म ये चार २ तोल और मिलावे फिर इसके गुणोंका क्याही कहना है. यह पांडुरोग, सर्व प्रकारके प्रमेह, क्षय और अनेक व्याधियोंको नाश करे इसमें आश्चर्य ही क्या है ॥

सूर्यप्रभागुटी

दार्वी व्योषविडंगचित्रकवचा पीता करंजामृता देवाह्वातिविषा त्रिवृत्सकटुका कुस्तुंबरुः कारवी । द्वौ क्षारौ लवणत्रय गजकणा चव्यं तथारुष्करं तालीसं कणमूलपुष्करजटाभूनिंबसंज्ञैर्युतम् ॥ भार्ङ्गी पद्मकजीरकोशकुटजो दंतीत्वचा भद्रकं सर्वं कर्षसमांशकं सुभिषजा सूक्ष्मं च संचूर्णितम् । तद्वत्पंचपलं वरा गिरिजतु स्यात्पंचमुष्टिः पुरोर्लोहस्य द्विपलं पलद्वयमथो ताप्यस्य

संमिश्रितम् ॥ क्षिप्त्वा पच पलान शुभ्रसिकतावश्यं पलं यो-
जितं त्वेकैकत्रिसुगंधवस्तु पलिकं क्षौद्रैघृतैर्लेहवत् । एकीकृत्य
समांशमेव गुटिका कार्या सुवर्णोन्मिता सा च ब्रह्ममुखांबुजप्रक-
टिता सूर्यप्रभा नामतः ॥ शोषं कासमुरःक्षतं सतमकं पांड्वामयं
कामलं गुल्मं विद्रधिपार्श्वशूलमुदरं स्त्रीषु क्षयं च कृमीन् ।
कुष्ठार्शोविषमज्वरग्रहणिकामूत्रग्रहं नाशयेद्भुक्तैकां गुटिकां प्रहृ-
ष्टमनसा योज्यं यथेष्टाशनम् ॥ नास्त्येतत्सममौषधं त्रिजगति
चक्रे हितं प्राणिनामुद्दामप्रमदामदद्विपदराट् सिंहस्तु सूर्यप्रभा ॥

अर्थ-दारुहलदी, सोंठ, काली मिरच, पीपल, वायविडंग, चीतेकी छाल, वच, हलदी, कंजा, गिलोय, देवदारु, अतीस, निसोथ, कुटकी, धनिया, अजमायन जवाखार, सुहागा, सेंधानिमक, बिडनोन, कचिया नोन, गजपीपल, चव्य, भिलाए, तालीसपत्र, पीपरामूल, चिरायता भारंगी, पद्माख, जीरा, जायफल, कूडेकी छाल, दंती नागरमोथा ये प्रत्येक एक २ तोला लेवे और त्रिफला २० तोले, शिलाजीत २० तोले, गूगल ८ पल, तथा लोहकी भस्म २८ तोले, सुवर्ण माक्षिककी भस्म ८ तोले, मिश्री २० तोले, वंशलोचन, दालचीनी, पत्रज, इलायची ये सब चार २ तोले लेवे सबका एकत्र चूर्ण करके घी और सहतमें मिलायके इसकी एक एक तोलेकी गोली बनावे यह ब्रह्मदेवके मुखसे सूर्यप्रभा नामक वटी प्रगट हुई है. यह शोष, खांसी, उरः-क्षत, तमक, पांडुरोग, कामला, गोला, विद्राधि, पार्श्वशूल, उदर, स्त्रियोंका क्षय, कृमिरोग, कोढ, बवासीर, विषमज्वर, संग्रहणी, मूत्रका रुकना इन सब रोगोंको यह नष्ट करे इसको भक्षण करके यथेष्ट पथ्य देवे किसी वस्तुका विचार न करे इस सूर्यप्रभा नामक गोलीके समान और कोई औषधी नहीं है ॥

गुडूच्यादिमोदक ।

गुडूचीं खंडशः कृत्वा कुट्टयित्वा सुमर्दयेत् । वस्त्रेण विधृतं तोयं
स्रावयेत्तच्छनैः शनैः ॥ शुद्धशंखमिमं चूर्णमेतैः संमिश्रयेद्भिषक् ।
उशीरं बालकं पत्रं कुष्ठं धात्रीं च मौसलीम् । एलां हरेणुकं द्राक्षां
कुंकुमं नागकेशरम् । पद्मकंदं च कर्पूरं चंदनद्वयमिश्रितम् ॥ व्योषं
च मधुकं लाजा अश्वगंधः शतावरी । गोक्षुरं मर्कटाख्यं च जाति-
तक्कोलचोरकम् ॥ रसश्च वंगलोहैश्च संमिश्रं कारयेद्बुधः एतानि
समभागानि द्विगुणामृतशर्करा ॥ मत्स्यंडयाज्यमधूपेतं भक्षयेत्प्रा-

तरुत्थितः । क्षयं च रक्तपित्तं च पाददाहमसृग्दरम् ॥ मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं वातकुंडलिकां तथा । निहन्याच्च प्रमेहांश्च सोमरोगं च दारुणम् ॥ रसायनमिवर्षीणाममृतं चामृतांधसाम् ॥

अर्थ–गिलोयके छोटे २ टुकडे कूट डाले. फिर उसमें जल डालके हाथोंसे खूब मींड डाले. फिर इसको गाढे कपडेमें डालके धीरे २ जलको निचोड देवे तो शंखचूर्णके समान यह गिलोय सत्व बनके तैयार होवे इसमें खस, नेत्रवाला, पत्रज, कूठ, आँवले, मुसली, इलायची, पित्तपापडा, दाख, केशर, नागकेशर, कमलकंद, कपूर, चंदन, लाल चंदन, सोंठ, मिरच, पीपल, मूलहटी, खील, असगंध, सतावरी, गोखरू, कौंचके बीज, जायफल, कंकोल, चोरजीरा, पारेकी भस्म, वंगभस्म और लोहकी भस्म ये संपूण वस्तु समान भाग लेवे. सबको एकत्र कर उसमें दुगुनी मिश्री मिलावे. इस चूर्णको मिश्री सहत और घी इनमें मिलायके सेवन करे तो क्षय, रक्तपित्त, पाददाह, रक्तप्रदर, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, वातकुण्डली, प्रमेह और सोमरोग, इन सबको नष्ट करे. यह मोदक जैसे ऋषियोंको रसायन और देवताओंको अमृत गुण करे है उसी प्रकार रोगी मनुष्यको हितकारी है ॥

इक्ष्वादिमोदक ।

उच्चटेक्षुरसः क्षौद्रं तुगाक्षीर्यांश्च बुद्धिमान् । प्रस्थं प्रस्थं पृथग्गृह्य शर्करार्धतुलां तथा॥आत्म गुप्ताफलानां च कुडवं मरिचस्य च । त्रिसुगंधं कृतावापं मंथानेन विमंथयेत् ॥ पलिकान्मोदकान्कृत्वा स्थापयेद्भाजने शुभे । एतद् द्विकालमेकं वा खादेदग्निबलं प्रति ॥ वटिकां नियताहारो ब्रह्मचारी जितेन्द्रियः । ग्रहण्यां यक्ष्मिणे सद्यश्चैकादशविधे तथा ॥ स्वरवर्णबलौदार्यतुष्टिपुष्टिविवर्द्धनम् । आयुष्यं पौष्टिकं चाथ भूतोपहतचेतसाम् ॥ व्याकुलीकृतदेहानां वृद्धानां क्षीणरेतसाम् । वाजीकरणमप्येवं वंध्यानां पुत्रदं परम् ॥ धनुस्त्रीमद्यभारैश्च खिन्नानां बलवर्धनम् । हृत्प्लीहग्रहणीदोषमूत्रकृच्छ्रापतंत्रकम् ॥ अपस्मारविषोन्मादनाशनं तद्रसायनम् ॥

अर्थ–उटंगनके बीज अथवा चूंवचीके पत्ते, ईखका रस, सहत, वंशलोचन, ये प्रत्येक ६४ तोले तथा मिश्री २०० तोले, कौंछके बीज, काली मिरच, दालचीनी,

पत्रज, इलायची ये प्रत्येक २६ तोले लेवे इन सबका चूर्ण कर उस पूर्वोक्त रसोंमें मिलाय देवे फिर रईसे मंथन करके चार २ तोलेके लड्डू करके धर रखे इसमेंसे दोनों बख्त अथवा एक बार इस मोदकको अग्निका बल विचारके खानेको देवे. इस पर पथ्य उत्तम करे तथा जितेन्द्री और ब्रह्मचर्यसे रहे तो यह संग्रहणी, ग्यारह प्रकारकी क्षय रोग इनको नष्ट करे और जो वृद्ध व्याकुल हैं तथा धातुक्षीण हो गये हैं उनको यह वाजीकरण कर्त्ता है, वंध्याओंको पुत्र देय है युद्ध (लडाई), स्त्रीसंग, मद्य, भार इनसे श्रमित पुरुषोंको बल बढावे आर हृद्रोग, प्लीहा, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, अपतंत्रक, अपस्मार, विष, उन्माद इनको नाश करे यह रसायन है ॥

द्राक्षासव ।

मृद्वीकायास्तुलार्द्धं तु द्विद्रोणेऽपां विपाचयेत् । पादशेषे कषाये च पूते शीते प्रदापयेत् ॥ गुडस्य द्वितुला भाविधातक्या घृतभाजने । विडंगं फलिनी कृष्णा त्वगेलापत्रकेशरम् ॥ मरिचं भिषक् चूर्णं सम्यक् दत्त्वा विचक्षणः । क्षिपेच्च पलिकैर्भागैः स्थापयेच्चातपे दिने ॥ ततो यथाबलं पीत्वा कासश्वासगलामयान् । हंति यक्ष्माणमत्युग्रमुरःसंधानकारकम् ॥ चतुर्थभागो द्राक्षाया धातकीमत्र केचन । प्रयच्छंति ततो वीर्यमेतस्योच्चैः प्रजायत ॥

अर्थ–मुनक्का दाख दो सौ तोलेंको चार हजार छियानव तोले जलमें डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके जलको छान लेवे जब काढेका जल शीतल, हो जावे तब गुड आठ सौ तोले डाले और धायके फूलोंका चूर्ण ८०० तोले डालके सबको घीके चिकने बासनमें भरके उसमें वायविडंग, त्रायमाण, पीपल, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर और काली मिरच इन प्रत्येकका चार चार तोले चूर्ण डालके १ दिन धूपमें धरा रहने दे फिर मुख बंद करके १ महीने पर्यंत धरा रहने देवे इसको बलाबल विचार करके पीवे तो घोर खाईका रोग, खांसी श्वास, गलेके रोग, उरःक्षत, इनको दूर करे इस आसवमें कोई २ वैद्य चतुर्थांश धायके फूल गेरते हैं कि जिससे आसव अधिक वीर्यवाली हो जावे ॥

खर्जूरासव ।

पंचप्रस्थं समादाय खर्जूरस्य विचक्षणः । द्रोणांभसि पचेत्सम्यक् ततोत्तार्य च गालयेत् ॥ कुंभं सुधूपितं कृत्वा प्रक्षिपेत्तं

रसं शुभम्। हपुषा ताम्रपुष्पी च कषायं तत्र निःक्षिपेत् ॥ द्वारं निरुध्य सुदृढं निक्षिपेद्वसुधातले। सप्तकद्वययोगेन सिद्धोऽयमासवो रसः॥ रोगराजं तथा शोफं प्रमेहं पांडुकामलाम् ॥ ग्रहणीं पंचगुल्यार्शो नाशयत्यतिवेगतः ॥

अर्थ-खजूर ३२० तोलेको २०४८ जलमें डालके औटावे चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेवे फिर एक मिट्टीकी गगरी ले उसको अगर आदिकी धूनी देके उस काढेके जलको उसमें भर देवे फिर हाऊबेर, धायके फूल इनका काढा उसमें डालके मुख बद कर उस गागरको धरती खोदके गाड देवे, १४ चौदह दिनके उपरान्त निकाल लेय तो यह खर्जूरासव तैयार हो यह क्षय, सूजन, प्रमेह, पांडुरोग, कामला, संग्रहणी, पांच प्रकारके गोलेका रोग, बवासीर इन सब रोगोंका नाश करे ॥

दशमूलासव।

दशमूलं तुलार्द्धं च पौष्करं च तदर्धकम्। हरीतकीनां प्रस्थार्द्धं धात्री प्रस्थद्वयं तथा॥ चित्रकं पुष्करमितं चित्रकार्धं दुरालभा। गुडूच्यादिः शतपलं विशालापलपंचकम्॥खदिरस्य पलान्यष्टौ तदर्धं बीजकं तथा। मंजिष्ठा मधुकं कुष्ठं कपित्थं देवदारु च॥ विडंगं चविकं लोध्रं भागं चाष्टकवर्गकम्। कृष्णाजाजी पिप्पली च क्रमुकं पद्मकं सठी॥ प्रियंगुसारिवामांसी रेणुका नागकेसरम्। त्रिवृता रजनी रास्ना मेषशृंगी पुनर्नवा॥शतावरी चेंद्रयवा मुस्ता द्विपलिकान् जले। चतुर्गुणे पादशेषे द्राक्षाषष्टिपलं क्षिपेत्॥ त्रिंशत्पलानि धातक्या गुडं पलचतुष्टयम्। मधु द्वात्रिंशत्पलं च सर्वमेकत्र कारयेत्॥ भांडे पुराणे स्निग्धे वा मांसीमरिचधूपिते। पृथक् द्विपलिकानेतान् पिप्पली चंदनं जलम्॥ जातीफलं लवंगं च त्वगेलापत्रकेशरान्। कर्षमात्रां च कस्तूरीं दत्त्वा पक्षं निधापयेत्॥ कनकद्रुपलं चूर्णं क्षिपेन्निर्मलभावितम्। पक्षादूर्ध्वं पिबेद्यस्तु मात्रया च यथाबलम्॥ धातुक्षयं जयत्येव कासं पंचविधं तथा। अर्शांसि षट्प्रकाराणि तथाष्टा-

बुदराणि च ॥ प्रमेहं च महाव्याधिमरुचिं पाण्डुरुक् तथा। सर्ववातांस्तथा शूलं श्वासं छर्दिमसृग्दरम् ॥ अष्टादशैव कुष्ठानि शोफं शूलं भगंदरम्। शर्कराद्यं मूत्रकृच्छ्रमश्मरीं च विनाशयेत् ॥ कृशस्य पुष्टिं कुरुते पुष्टस्य च महाबलम् । महावेगो महातेजा महावीर्यो विलोक्यते ॥ कामपुष्टिकरो ह्येष वंध्यानां पुत्रदो भवेत् ॥

अर्थ–दशमूल २०० तोले, पुहकरमूल १००, हरड ८० तोले, आँवले १२८ तोले, चीतेकी छाल १००, धमासा ५०, गुडूच्यादि काथकी औषध ४००, इन्द्रायनकी जड २० तोले, खैरसार, ३२ तोले और बिजोरा १६ तोले लेवे तथा मँजीठ, मुलहटी, कूट, कैथ, देवदारु, वायविडंग, चव्य, लोध ये सब एक २ तोले. तथा जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली, क्षीरकाकोली ये सब चार चार तोले लेवे. तथा पीपल, जीरा, गजपीपल, चिकनी सुपारी, पद्माख, कचूर, फूल प्रियंगु, सारिवा, रेणुकद्रव्य, नागकेशर, निसोथ, हलदी, रास्ना, मेढासिंगी, पुनर्नवा, शतावर, इन्द्रजौ और नागरमोथा इन सबको आठ २ तोले लेवे इस प्रकार सबको लेके औषधोंसे चौगुना जल डालके औटावे. जब चतुर्थांश काढा रह जावे. तब उसको उतारके छान लेय. इस काढेके जलमें दाख २४० तोले, धायके फूल १२० तोले, गुड १६ तोले, सहत १२८ तोले इन सबको एकत्र कर पुरानी घीकी चिकनी गागरमें प्रथम जटामांसीकी और काली मिरच इनकी धूनी देके सब रस और औषधोंको भर देवे तथा पीपल, चंदन, नेत्रवाला, जायफल, लौंग, तज, इलायची, पत्रज, नागकेशर, ये प्रत्येक आठ २ तोले ले. कस्तूरी १ तोला, धतूरेके फलका चूर्ण ४ तोले डालके १५ दिन धरा रहने देवे. फिर बलाबल विचारके देवे तो यह धातुक्षय, पांच प्रकारकी खांसी, छः प्रकारकी बवासीर, आठ प्रकारके उदररोग, प्रमेह, महाव्याधि, अरुचि, पांडुरोग, संपूर्ण वादीके रोग, शूल, श्वास, वांति, रक्तप्रदर, अठारह कोढ, मूत्रशर्करा, मूत्रकृच्छ्र, पथरी इनको नष्ट करे लटे हुएको पुष्ट करे तथा पुष्ट बलवान् तथा महातेजस्वी महावीर्यवान् करे है तथा काम पुष्टि इनको देवे तथा वंध्या स्त्रीको पुत्र देवे ॥

कुमारीपाक ।

कुमारीकंदमादाय पलं विंशतिसंख्यया। चतुर्गुणं च गोदुग्धं पाचयेन्मंदवह्निना ॥ यावच्च जीर्यते दुग्धं तावत्पाचनकं कुरु।

छायाशुष्कं च कुर्वीत चूर्णयेद्बुद्धिमान् भिषक् ॥ पिप्पली मरिचं शुंठी प्रत्येकं च पलत्रयम् । जातीफलं जातिपत्री लवंगं पलमेव च ॥ गोक्षुरं कर्कटीबीजं प्रत्येकं च पलं पलम् । चातुर्जातपलं चैव चित्रकं च पलं तथा ॥ सर्वेषां सूक्ष्मचूर्णं च कारयेद्बुद्धिमान् भिषक् । सिता पलं च विंशत्या गोघृतं च पलं दश ॥ तत्समं महिषीदुग्धं तत्समं मधुमिश्रितम् । लोहपात्रे विनिक्षिप्य पाचयेन्मृदुवह्निना॥ चूर्णं निक्षिप्य यत्नेन दर्व्या सम्यक् विचालयेत् । यावद्घृत प्रदृश्येत तावत्पाचनकं कुरु ॥ कर्षमेकं लोहभस्म सुवर्णं तत्समं ततः । सिंदूरं कर्षमेकं तु दापयेद्भिषगुत्तमः ॥ कोलप्रमाणवटकान् भक्षयेद्बुद्धिमान्नरः । जीर्णज्वरं क्षयं कासं श्वाससंतापशूलनुत् ॥ अजीर्णमामवातघ्नं प्रदरं पञ्चनाशनम् । स्त्रीणां वंध्यात्वहरणं पुत्रं चैव प्रसूयते ॥ अंडवृद्धिहरं चव स्त्रीणां रमयते शतम् ॥ इदं गोप्यमिदं गोप्यमाश्विनीदेवनिर्मितम् ॥

अर्थ–घीगुवारका गूदा ८० तोले, तथा गौका दूध ३२० तोले, दोनोंको एकत्र कर मंदाग्निपर रखके जबतक दूध सब न जले तबतक औटावे फिर उतारके उसको छायामें सुखायके चूर्ण कर डाले. फिर पीपल, मिरच और सोंठ प्रत्येक बारह २ तोले, जायफल, जावित्री, लाग, गोखरू, ककडीके बीज, चातुर्जात और चित्रककी छाल ये प्रत्येक चार २ तोले ले बारीक चूर्ण कर उसमें मिलाय देवे. तथा मिश्री ८० तोले और गौका घी ४०, भैंसका दूध ४० और सहत ४० तोले मिलायके इन सबको लोहेके पात्रमें भरके मंदाग्निसे पचन करे और औटानेके बाद पूर्वोक्त चूर्ण आदिको इसमें मिलाय देवे. और कलछीसे एकमें करदे जबतक घी दीखता रहे तबतक मिलाता रहे और पचावे फिर इसमें लोहकी भस्म, सुवर्णकी भस्म, रससिंदूर ये प्रत्येक एक एक तोला डालके तोले २ भरकी गोली बनाय लेवे. यह जीर्णज्वर, क्षय, खांसी, श्वास, संताप, शूल, अजीर्ण, आमवात और प्रदर इनका नाश करे, तथा स्त्रियोंका वंध्यापना और पुरुषोंका नपुंसकत्वको दूर करे है तथा १०० स्त्री भोगनेकी शक्ति करे यह कुमारीपाक अश्विनीकुमारने कहा है यह अति गोप्य है ॥

धात्रीपाक ।

धात्रीफलानि पक्वानि तीक्ष्णलोहेन वेधयेत् । विश्वावरणपत्रैश्च फलानि स्वेदयेद्भृशम् ॥ ततो दुग्धे च संस्वेद्य जले च तदनंतरम् । मधुमध्ये क्षिपेद्भांडे स्थापयेद्दिनविंशतिः ॥ विनष्टं मधु संत्यज्य मधुमध्यं पुनः क्षिपेत् । सिता धात्रीफलान्येव पेषयेत्करिणा सह ॥ एला चैव तुगा क्षीरी लोहं वंगं तथैव च । मेलयित्वा सुनक्षत्रे प्रातः कर्षमितं भजेत् ॥ बले क्षीणे क्षये चैव पथ्यं मधुरमाचरेत् । प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रं च नाशयेत्तत्क्षणादपि ॥ वीर्यवृद्धिकरं चव वाजीकरणमुत्तमम् । कुष्ठं पित्तप्रकोपं च नाशयेन्नात्र संशयः ॥ एतेऽन्ये पित्तजा रोगाः शोणिताद्यास्त-थैव च । ते सर्वे प्रशमं यांति धात्रीपाकस्य सेवनात् ॥

अर्थ—मोटे २ और पके हुए आँवले लेके उनको कांटेसे खूब गोद लेवे फिर अदरकके पत्ते जलमें डालके और आँवले डालके औटावे जब सीज जांव तब निकालके फिर दूधमें औटावे फिर स्वच्छ जलमें औटायके सहतसे भरे हुए बासनमें गेर देवे और बीस दिन पर्यंत धरे रहनेदे फिर उस खराब सहतको निकाल नवीन ताजा सहत भरे तथा मिश्री, आँवले, गजपीपर, इलायची, वंशलोचन, लोहभस्म, वंग भस्म, ये सब डालके शुभदिनमें प्रातःकाल १तोला बलक्षय और क्षय रोग इनपर देवे तथा मधुर पदार्थ पथ्यमें देवे तो प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, कोढ, पित्तका कोप, पित्तजन्य सर्व रोग और रुधिरविकार ये नष्ट होवें तथा वीर्यवृद्धि करके उत्तम वाजीकरण करे है ॥

शेवंतीपाक ।

श्वेतपुष्पसहस्रं तु घृतप्रस्थे विपाचयेत् । घृते पक्वीकृते तत्र निःक्षिपेदौषधं भिषक् ॥ सितोपलाचतुष्कं च चातुर्जातं पलं पलम् । मृद्वीका षट्पलं चैव क्षिप्त्वा मधु पलाष्टकम् ॥ धारा-सत्त्वं तवक्षीरं श्वेतजीरं पृथक् पृथक् । नागं वंगं पलार्द्धं च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ कर्पूरं वल्लमात्रं च दत्त्वा स्थाप्य सुकुंभके ।

भक्षयेन्निष्कमात्रं तु प्रातरेव हि पथ्यभुक् ॥ जीर्णज्वरे क्षये कासे अग्निमांद्ये प्रमेहके । दिनरात्रिज्वरे चैव शिरोरोगे प्रशस्यते ॥ प्रदरं रक्तजान् रोगान् कुष्ठार्शांसि च नाशयेत् । नेत्ररोगान्सुदुष्टांश्च तथा सर्वान्मुखे स्थितान् ॥ नाशयेन्नात्र संदेहो मंडलस्य च सेवनात् ॥

अर्थ–सपेद सेवतीके फूल १००० ले इनको ६४ तोले घीमें पचावे फिर मिश्री २५६ तोले, चातुर्जात १६ तोले, दाख २४ तोले, सहत ३२ तोले गिलोय सत्व, तवाखीर, सपेद जीरा, नागेश्वर, वंग ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे इस प्रमाणसे सबको एकत्र कर तीन रत्ती भीमसेनी कपूर इसमें और मिलावे इसको अमृतवान आदिमें अथवा चीनीके बरतनमें भरके धर दे. इसमेंसे छः मासे नित्य ४० दिन सेवन करे और पथ्यसे रहे तो जीर्णज्वर, क्षय, खांसी, मंदाग्नि, प्रमेह, दिनका ज्वर, रात्रिज्वर, मस्तकरोग, रक्तप्रदर, रक्तजन्य रोग, कोढ, बवासीर, नेत्ररोग, तथा मुखरोग इनको नाश करे ॥

महाकनकसुंदररस ।

रसगंधकनागाश्च रसको माक्षिकाभ्रके । कांतविद्रुममुक्तानां वंगभस्म च तालकम् ॥ भस्म कृत्वा प्रयत्नेन प्रत्येकं कर्षसंमितम् । सर्वतुल्यं शुद्धहेमभस्म कृत्वा प्रयोजयेत् ॥ मर्दयेत्रिदिनं सर्वं हंसपादरिसैर्भिषक् । ततो वै गोलकान्कृत्वा काचकुप्यां विनिःक्षिपेत् ॥ रुद्धा तत्काचकूप्यां च सप्तवस्त्रेण वेष्टितम् । ततो वै सिकतायंत्रे त्रिदिनं चोक्तवह्निना ॥ पश्चात्तं स्वांगशीतं च मर्द्यं पूर्वोदिते रसे । विनिःक्षिप्य करंडेऽथ संपूज्य रसराजकम् ॥ महाकनकसिंदूरो राजयक्ष्महरः परः । पांडुरोगं श्वासकासकामलाग्रहणीगदान् ॥ कृमिशोफोदरावर्तगुल्ममेहगुदांकुरान् । मंदाग्निच्छर्दिमरुचिमामशूलहलीमकान् ज्वरान्द्वंद्वादिकान्सर्वान्सान्निपातास्त्रयोदश । पैत्तरोगमपस्मारं वातरोगान्विनिःक्षिपेत् ॥ रक्तपित्तप्रमेहांश्च स्त्रीणां रक्तस्रुतिं तथा ॥ विंशतिश्लेष्मरोगांश्च

मूत्ररोगं निहन्त्यसौ ॥ हेमवर्णश्च बल्यश्च आयुःशुक्रविवर्धनः । महाकनकसिंदूरः काश्यपेन विनिर्मितः ॥

अर्थ-पारा, गंधक, शीशेकी भस्म, खपरिया, माक्षिक भस्म, अभ्रक भस्म, कांतलोह, मूंगा, मोती, बंग और हरताल इनकी भस्म समान भाग लेवे सबको एकत्र करके सबके बराबर सुवर्णकी भस्म मिलावे. फिर हंसपदीके रसमें तीन दिन खरल कर गोली बनावे इनको आतसी शीशीमें भरके उस पर सात कपडमिट्टी कर वालुकायंत्रमें रखके तीन दिन पर्यंत जिस प्रकार वालुकायंत्रकी विधि कही उसी रीतेसे पचावे जब स्वांग शीतल हो जावे तब इस रसको निकालके हंसपदीके रसमें घोट शीशीमें भरके धर रखे यह महाकनकसुंदररस राजयक्ष्मा, पांडुरोग, श्वास, खांसी कामला, संग्रहणी, कृमिरोग, सूजन, जलंधर, उदावर्त, गोला, प्रमेह, बवासीर मंदाग्नि, वमन, अरुचि, आमशूल, हलीमक, सर्व प्रकारके ज्वर, द्वंद्वज ज्वर, तेरह प्रकारके संन्निपात, पित्तके रोग, मृगी, वादीके रोग, रक्तपित्त, प्रमेह, स्त्रियोंका रक्तप्रदर, बीस प्रकारके कफरोग, और मूत्ररोग इनको नाश करे तथा देहका सुवर्णके समान वर्ण करे तथा आयुष्य और धातु इनको बढावे यह रस काश्यपऋषिने कहाहै ।

क्षयकेसरीरस ।

नेत्रलोचनचंद्रेंदुप्रमाणं भागमाहरेत् । वह्निजं फटकी मृष्टा गरलं नवसागरम् ॥ चूर्णमेषां सितायुक्तं गुंजार्धं योजयेद्भिषक् । क्षयकेसरिनामायं रसः परमदारुणः ॥

अर्थ-काली मिरच २ भाग, फिटकरी २ भाग, सिंगिया विष १ भाग, तथा नोसदर १ भाग, इनका चूर्ण करके मिश्रीके साथ आधी रत्ती देवे यह क्षयकेसरीरस क्षयरोग पर अत्यन्त गुणकारी है ।

शंखेश्वररस ।

शंखस्य वलयं निष्कं चतुर्निष्कं वराटिका । कर्षार्धं नीलतुत्थं स्यात्सर्वतुल्यं तु गंधकम् ॥ गंधतुल्यं मृतं नागं नागतुल्यं मृतं रसम् । टंकणं रसतुल्यांशं भर्ज्यं पाच्यं मृगांकवत् ॥ राजरोगहरः सोऽयं नाम्ना शंखेश्वरो रसः । षड्गुंजा तु कणा क्षौद्रैः क्षये वा मरिचं घृतम् ॥

अर्थ-शंखके टुकडे छः मासे, पीली कौडी २ तोले, लीलाथोथा छः मासे तथा इन सबके बराबर गंधक और शीशेकी भस्म पृथक् २ लेवे, पारेकी भस्म

और सुहागा, ये भी गंधकके बराबर अलग २ लेवे, सब एकत्र कर संपुटमें रखके गजपुटमें फूंक देवे इस पर पथ्य मृगांकरसके समान करे यह शंखेश्वररस छः रत्ती, पीपल और सहत अथवा काली मिरच और घी इनके साथ देवे तो क्षयका नाश होवे॥

हररुद्ररस ।

तीक्ष्णं शुल्बं नागतारं स्वर्णं च मारितं पृथक् । एकाद्वित्रिचतुःपंचक्रमषट्शुद्धसूतकम् ॥ चांगेर्याश्च द्रवैर्मर्द्यं दिनैकं कृतगोलकम्। मृगांकवत्पचेत् स्थाल्यां वालुकाभिः प्रपूरितम् ॥ उद्धृत्य चूर्णयेत् श्लक्ष्णं हररुद्रो रसोत्तमः । मृगांकवत्क्षयं हंति तद्वन्मात्रानुपानकम् ॥

अर्थ–खेडी लोहकी भस्म १ भाग, ताम्र भस्म २ भाग, शीशेकी भस्म ३ भाग चांदीकी भस्म ४ भाग, सुवर्णभस्म ५ भाग, शुद्ध पारा ६ भाग, इस क्रमसे सब भस्मोंको एकत्र कर चूकेके रसमें एक दिन घोटे फिर गोला बनाय इसको मृगांकके समान वालुकायंत्रमें पचन करावे स्वांगशीतल होने पर घोटकर बारीक चूर्ण कर लेवे यह हररुद्ररस मृगांकके समान क्षयरोगको नाश करे है इस पर पथ्य और अनुपान ये सब मृगांकरसके समान करनी चाहिये ॥

नीलकंठरस ।

विषं क्षुद्रा उशीरं च हरिद्रा गोपयो मधु ।
कुटजस्य त्वचाचूर्णं समांशं माषमात्रकम् ॥
राजयक्ष्महरं खादेद्रसोऽयं नीलकंठकः ॥

अर्थ–सिंगियाविष, कटेरी, खस, कूडेकी छालका चूर्ण ये समान भाग ले सबका चूर्ण करके इसको सहत और गौके दूधमें मिलायके एक मासा देवे यह नीलकंठरस क्षयरोगका नाश करे ॥

शंखगर्भपोटलीरस ।

शंखनाभिर्गवां क्षीरैः वेषयेन्निष्कषोडश । तेन मूषा प्रकर्तव्या तन्मध्ये भस्म सूतकम् ॥ निष्कार्धगंधकं त्रीणि चूर्णीकृत्य विनिःक्षिपेत् । रुद्ध्वा तद्वेष्टयेद्वस्त्रे मृत्तिकां लेपयेद्बहिः ॥ शोष्यं गजपुटे पश्चान्मूषया सह चूर्णयेत् । गुंजैकमनुपानैश्च क्षयं हंति मृगांकवत् ॥ पोटलीशंखगर्भोऽयं योजयेद्वातपित्तजित् ॥

अर्थ-शंखकी नाभी ८ तोले ले बारीक चूर्ण करके उसकी मूस बनावे उसमें पारेकी भस्म भरके ऊपरसे १॥ तोले गंधकका चूर्ण डाल देवे फिर इस मूसाके मुखको बंद कर ऊपरसे ७ कपडमिट्टी करे. इसको धूपमें सुखायके गजपुटमें रखके फूंक देवे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल मूसा समेतको खरलमें डालके पीस डाले और उत्तम शीशीमें भरके धर देवे यह शंखगर्भपोटली रस एक रत्ती देवे और पथ्य मृगांकरसके समान करे तो क्षय और वातपित्त इनका नाश करे ॥

हेमगर्भरस ।

रसभस्म द्विनिष्कं तु निष्कैकं स्वर्णभस्मकम् । शुद्धगंधकद्वौ निष्कौ मर्दयेच्चित्रकद्रवैः ॥ द्वियामांते विशोष्याथ तेन पूर्य वराटिकाम् । गोक्षीरैष्टंकणं पिष्ट्वा तेन रोध्य वराटिकां ॥ वराटीमृन्मये भांडे रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् । स्वांगशीतो विचूर्ण्याथ पोटलीहेमगर्भकः ॥ मृगांकवच्चतुर्गुंजा भक्षिता राजयक्ष्मनुत् ॥

अर्थ-पारदकी भस्म १ तोला, सुवर्णकी भस्म छः मासे, शुद्ध गंधक १ तोला इन सबको एकत्र करके चीतेके रसमें दो प्रहर खरल करे फिर इसको सुखाय कौडियोंमें भरे और गौके दूधमें सुहागा घोटके उन कौडियोंके मुखको बंद करे और उन कौडियोंको मिट्टीके बासनमें बंद कर ढक देवे गजपुटमें फूंक देवे जब स्वयं शीतल हो जावे तब निकाल खरलमें बारीक चूर्ण कर धर रखे इसका नाम हिरण्यगर्भपोटलीरस है यह चार रत्ती अनुपानके साथ देवे तथा पथ्य और अनुपान मृगांकरसके समान करने चाहिये ॥

नागेश्वररस ।

मृतसूतं मृतं नागं गंधकं तूत्थटंकणम् । प्रत्येकं कर्षनिष्कं स्यान्मृतशुल्वं द्विनिष्कम् ॥ शंखचूर्णं द्विनिष्कं स्यान्नवनिष्कं वराटिका । पूरयेत् पूर्वचूर्णं पुटयेल्लोकनाथवत् ॥ ततश्चार्कदलद्रावैर्मर्द्यं रुद्ध्वा पुटे पचेत् । आदाय चूर्णयेत् श्लक्ष्णं तुल्यांशैर्मरिचैर्युतम् ॥ चूर्णाच्चतुर्गुणं गंधमेकीकृत्य विचूर्णयेत् । पंचमाषघृतैर्लेह्यमसाध्यराजयक्ष्माजित् ॥ शोफोदराशोग्रहणीज्वरं गुल्मं च नाशयेत् ॥

अर्थ-पारेकी भस्म, शीशेकी भस्म, गंधक, लीलाथोथा, सुहागा ये प्रत्येक डेढ २ तोला लेवे. तामेकी भस्म और शंखकी भस्म ये एक २ तोला ले पीली कौडी ४॥ तोले

पारे आदिकी भस्मको इन कौडियोंमें पूर्व प्रकारसे भरे और लोकनाथ रसके समान पुट देवे. फिर आकके पत्तोंके रसमें खरल कर गजपुटमें रखके फूंक देवे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल बराबरकी मिरच मिलाय बारीक खरल करे फिर इसमें चौगुनी गंधक मिलावे तो यह नागेश्वर रस तैयार होवे इसको पांच मासे लेकर घीके साथ देवे तो असाध्य क्षयरोग, सूजन, उदर, बवासीर, संग्रहणी, ज्वर और गोलेका रोग इनको नाश करे ॥

कालांतकरस ।

कुर्याल्लोहमयीं मूषामुन्नतां द्वादशांगुलाम् । मर्दितं स्वर्णवाराहिप्रहकन्यारसै रसम् ॥ लशुनैर्यामभात्रं च पिंडीकृत्वा निवेशयेत् । कृत्वा पूर्वोक्तमूषायां सूतपादं च गंधकम् ॥ निर्गुंडीरससंपिष्टं तन्मूषायां विनिःक्षिपेत् । आच्छाद्य लोहचक्रेण रुद्रयंत्रेण जारयेत् ॥ एवमष्टगुणे जीर्णे समुद्धृत्य विचूर्णयेत् । पंचगुंजामितं खादेदनुपानं मृगांकवत् ॥ अयं कालांतको नाम रसोऽयं राजयक्ष्मजित् ॥

अर्थ—बारह अंगुलकी ऊंची लोहकी मूस बनावे उसमें धतूरा, वाराहीकंद, घीगुवार और लहसन इन प्रत्येकमें एक एक प्रहर घुटे हुए पारेका गोला करके उस पूर्वोक्त मूसामें चतुर्थांश गंधक निर्गुंडीके रसमें खरल करके उस मूसामें डालके उस पर उस पारेको रखे. ऊपरसे गंधक देकर लोहेके पत्र उस मूसाके मुख पर देकर उसको रुद्रयंत्रमें पचावे इस प्रकार अष्ट गुण गंधक जारन करे फिर रसको निकालके घोट डाले फिर इसके मृगांकके समान अनुपानके साथ पांच रत्ती देवे यह कालांतकरस क्षयका नाश करे है॥

चंद्रायतनरस ।

शुद्धसूतसमं गंधं सूततुल्यं च सैंधवम् । शमीश्वेतदलाद्रावैर्मर्दितं गोलकीकृतम् ॥ नागवल्लीदलव्योषैः पाच्यं पाचनयंत्रके । दिनांते ऊर्ध्वलग्नं तु ग्राह्यं भक्ष्यं त्रिगुंजकम् ॥ पर्णखंडेन संयुक्तं माषैकं राजयक्ष्मजित् । रसश्चंद्रायतो नाम ह्यनुपानं मृगांकवत् ॥

अर्थ—शुद्ध पारा, गंधक और सेंधानिमक ये समान भाग लेवे. इनको सपेद शमीके पत्तोंके रसमें घोट गोला बनाय ले उसको सोंठ, मिरच, पीपल तथा नागरबेल पान इनके

साथ डमरूयंत्रमें भरके एक दिन चूल्हे पर रखके नीचे अग्नि देवे सांयकालको उस डमरूयंत्रमेंसे ऊपर लगे हुए पारेको निकालले इसको तीन रत्ती पानमें रखके १ महीने-तक खानेको देय इस रसकाभी अनुपान और पथ्य मृगांक रसके समान है ॥

प्राणनाथरस ।

लोहभस्म पलैकं तु द्विपलं भृंगजद्रवैः । वराभार्ङ्गीभवं द्रावं पलैकैकं नियोजयेत् ॥ पलैकं त्रैफले क्वाथे सर्वं भर्ज्यं च खर्परे । लोहांशं माक्षिकं शुद्धं मर्द्यं पूर्वोदितैर्द्रवैः ॥ रुद्धा त्रिभिः पुटैः पाच्य द्रवैर्मर्द्यं पुनः पुनः । मृतं सूतं मृतं वंगं निष्कं निष्कं विमिश्रयेत् ॥ द्वौ निष्कौ शुद्धगंधस्य चतुर्निष्का वराटिका । एकीकृत्य पुटे पाच्यं पूर्वं लोहविमिश्रितम् ॥ पूर्वोक्तैस्तु द्रवैर्मर्द्य पुटेनैकेन पाचयेत् । चूर्णयेन्मरिचं सप्त तूत्थटंकणयोर्दश ॥ मेलयेच्च पृथक् निष्कं प्राणनाथाह्वयो रसः । भक्षयेन्निष्कपादार्धमसाध्यराजयक्ष्मनुत ॥ शोफोदराशोग्रहणीज्वरगुल्महरं तथा ॥

अर्थ–लोहभस्म ४ तोले लेवे. उसको ८ भांगरेके रसमें खरल करे. फिर गिलोय और भारंगी इनका काढा तथा त्रिफलेका काढा ४–४ तोले ले सबको एकत्र कर अग्नि पर रख खिपडेमें भून तथा जितना लोहा हो उतनी शुद्ध माक्षिक भस्म डाल पूर्वोक्त रसोंसे घुटावे और पुट देवे इस प्रकार तीन पुट देवे. फिर पारेकी भस्म और तामेकी भस्म प्रत्येक ६–६ मासे शुद्ध गंधक १ तोला, पीली कौडी ४ तोले, उनको एकत्र कर उनको पुट देकर उन्हें उस लोहमें मिलावे फिर पूर्वोक्त रसोंकी भावना देकर फिर १ पुट देवे पश्चात् निकालके इसमें ३॥ तोले काली मिरच, लीलाथोथा और सुहागा ५–५ तोले लेकर मिलावे तो यह प्राणनाथरस तैयार हो इसमेंसे ६ रत्तीकी मात्रा देवे तो असाध्य क्षय, सूजन, उदर, बवासीर, संग्रहणी, ज्वर और गोला इनको नाश करे ।

सुवर्णपर्पटीरस ।

शुद्धं सुवर्णदलमष्टगुणेन शुद्धसूतेन पिंडितमयोवसुभागभाजम् । गंधे द्रुते दरदवह्नितुलोहपात्रे दत्त्वा विलोडच लघुलो-

इशलाकया तत् ॥ मंदं निरस्य सुरभीमलमंडलस्थं रंभादले तदुपरि प्रणिधाय चान्यत् । रंभादलं लघु नियंत्र्य तदाददीत शीतं सुवर्णरसपर्पटिकाभिधानम् ॥ पित्तोल्बणे ससितया तुगयाथ वातश्लेष्मोल्बणे ।किल तुगामधुपिप्पलीभिः । क्षीणे विरेकिणि च शोषिणि मंदवह्नौ पांडौ प्रमेहिणि चिरज्वरिणि ग्रहण्याम्॥ वृद्धे शिशौ सुखिनि राज्ञि तदेवमार्यं भेषज्यमेतदुदितं हितमामयघ्नम् ॥

अर्थ–सोनेके वर्क १ भाग, शुद्ध पारा ८ भाग, और लोभस्म ८ भाग, इन सबको एकत्र खरल कर लोहेके पात्रमें गंधकको तपाय उसमें हिंगुल १ और चित्रक १ भाग इनके साथ पूर्वोक्त औषधी मिलाय कर्छीकी डांडीसे १ मेल करे फिर पृथ्वीमें गोबरका चौका दे उसे केलेके पत्ते बिछाय उस पर उस कजलीकी चासनीको उलट देवे और तत्काल दूसरे केलेके पत्तेसे ढक गोबरसे दाब देवे जब शीतल हो जावे तब निकास ले इसको सुवर्णपर्पटी कहते हैं यह पित्तादिक व्याधी पर वंशलोचन और मिश्री इनसे तथा वात श्लेष्मादिक व्याधी पर वंशलोचन, सहत और पपिल इनसे खाय और यह क्षीणत्व, दस्त होनेपर, क्षय पर, मंदाग्नि, पाण्डुरोग, प्रमेह, संग्रहणी, वृद्ध, बालक और राजा इनको देने योग्य यह संपूर्ण रोगोंका नाश करे है ॥

प्राणदापर्पटी ।

सूताभ्रायोहिंवंगोषणविषमखिलांशेन गंधेन कृत्वा कोलाग्नौ विद्रुतेन क्षणममलमिदं ढालितं गोमयस्थे । रंभापत्रमुतान्येनच दृढपिहितं प्राणदा पर्पटी स्यात्पांडौ रेके ग्रहण्यां ज्वररुजि कसने यक्ष्ममेहाग्निमांद्ये ॥ प्राणदा पर्पटी सैषा भाषिता शंभुना स्वयम् ॥ तत्तद्रोगानुपानेन सर्वरोगविनाशिनी ॥

अर्थ–पारा, अभ्रक, लोह, वंग, मिरच और सिंगिया विष यह सम भाग तथा सबके बराबर गंधक लेकर लोहेके पात्रमें बेरकी अग्नि पर पतला करके उसमें सब औषधी डालके गोबरके चौकेमें केलेके पत्ते बिछाय देवे और उस पर उस कजलीकी चासनीको उंडेल देवे और तत्काल दूसरे पत्तेसे ढकके दाबदेवे जब शीतल हो जावे तब निकाल ले इस औषधीको प्राणदापर्पटी कहते हैं यह पांडुरोग, अतिसार, संग्रहणी,

ज्वर, अरुचि, कास, क्षय, प्रमेह तथा मंदाग्नि इन पर देवे यह प्राणदापर्पटी महादेवजी-ने स्वयं अपने मुखसे कही है यह योग्य अनुपानके साथ देनेसे संपूर्ण रोगोंका नाश करे ॥

कुमुदेश्वररस ।

पारदं शोधितं गंधमभ्रकं च समं समम् । तदर्धं दरदं दद्यात्तदर्धं च मनःशिलाम् ॥ सर्वार्धं मृतलोहं च खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् । द्विःसप्त भावना देया शतावर्या रसेन च ॥ ततः सिद्धो भवत्येष कुमुदेश्वरसंज्ञकः । सितया मरिचेनाथ गुंजाद्वित्रिप्रमाणतः ॥ भक्षयेत्प्रातरुत्थाय पूजयित्वेष्टदेवताः । यक्ष्माणमुग्रं हंत्येव वातपित्तकफामयान् ॥ ज्वरादीनखिलान् रोगान् यथा दैत्यान् जनार्दनः । सतताभ्यासयोगेन वलीपलितनाशनः ॥

अर्थ-शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक तथा अभ्रक भस्म; ये समान भाग इनसे आधा हिंगुल तथा इससे आधी मनशील तथा सब औषधोंसे आधा मृत लोह इन सबको खरलमें डालके सतावरीके रसकी १४ भावना देवे तो यह कुमुदेश्वररस सिद्ध होय इसको मिश्री और काली मिरच इनके साथ दो अथवा तीन रत्ती प्रातःकाल इष्टदेवका पूजन करके सेवन करे तो उग्रक्षय, वातपित्तरोग और ज्वरादि सब रोगोंका नाश करे जैसे विष्णु दैत्योंको नष्ट करे है उसी प्रकार यह सब रोगोंको नष्ट करे इस रसको निरंतर सेवन करनेसे वली (गुजलट) और पलित (सपेदबाल) इनको नष्ट करे ॥

पंचामृताख्यरस ।

भस्मीभूतसुवर्णतारादिनकृत्सूताभ्रसत्त्वैः क्रमात्संवृद्धैस्त्रितयं त्रयः कृमिहरांभोदैर्युतः कट्फलैः । निर्गुंडीदशमूलवह्निरजनी-व्योषार्द्रकैर्भावितो गोलं कृत्य विशेषतो निगदितः पंचामृताख्यो रसः॥ नानेन सदृशः कोपि रसोस्ति भुवनत्रये । निहंति सकलान् रोगान् भवरोगमिवाच्युतः ॥ सर्वरोगहरः सूतस्तत्तद्रोगानुपा-नतः । अयं पंचामृतो नृणां त्रिदशानामिवामृतम् ॥

अर्थ-सुवर्ण भस्म, रौप्य भस्म, तामेकी भस्म, पारेकी भस्म, अभ्रक सत्त्व ये प्रत्येक वृद्धिके क्रमसे लेवे तथा वायविडंग, नागरमोथा, कायफल ये तीन २

भाग लेवे सबको एकत्र कर निर्गुंडी, दशमूल, चित्रक, हलदी, त्रिकुटा और अदरख इनके रसकी भावना देकर गोली बांध लेवे तो यह पंचामृताख्यरस होवे. इस रसके समान त्रिलोकीमें दूसरा रस नहीं है यह संपूर्ण रोगोंको नाश करे जैसे विष्णु जन्म मरणका नाश करे है उसी प्रकार यह संपूर्ण रोगोंको योग्य अनुपान करके नाश करे है यह पंचामृत रस मनुष्यको अमृतके प्रमाण है ॥

स्वयमग्निरस।

शुद्धसूतं द्विधा गंधं कुर्यात् खल्वेन कज्जली । तयोः समं तीक्ष्मचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ द्वियामांते कृतं गोलं ताम्रपात्रे विनिःक्षिपेत् । आच्छाद्येरंडपत्रेण यामार्धेत्युष्णतां भवेत् ॥ धान्यराशौ न्यसेत्पश्चादहोरात्रात्समुद्धरेत् संचूर्ण्य गालयद्वस्त्रे सत्यं वारितरं भवेत्॥भावयेत्कन्यकाद्रावैः सप्तधा भृंगजैस्तथा। काकमाचीकुरंटोत्थद्रवैर्मुंडया पुनर्नवैः ॥ सहदेव्यमृतानीलया निर्गुंड्याश्चित्रजैस्तथा ॥ सप्तधा तु पृथग्द्रावैर्भाव्यं शोष्यं तथातपे ॥ सिद्धयोगो ह्ययं ख्यातः सिद्धानां च मुखागतः । अनुभूतो मया सत्यं सर्वरोगगणापहः ॥ स्वर्णादीन्मारयेदेवं चूर्णीकृत्य तु लोहवत् । त्रिफलामधुसंयुक्तः सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ त्रिकटुत्रिफलैलाभिर्जातीफललवंगकैः । नवभागोन्मितैरेतैः समः पूर्वरसो भवेत् ॥ संचूर्ण्य लोडयेत्क्षौद्रैर्भक्ष्यं निष्कद्वयं द्वये । स्वयमग्निरसो नाम्ना क्षयकासनिकृंतनः ॥

अर्थ-शुद्ध पारा १ भाग, गंधक २ भाग, दोनोंको एकत्र खरल कर कजली करे इसमें समान भाग खेरी लोहकी भस्म डाले फिर घीगुवारके रससे २ प्रहर खरल कर गोला बनावे. इसको तामेके पात्रमें रखकर चारों तरफ अंडीके पत्ते ढक्कर चार घडी पर्यंत धूपमें रहनेदे तो यह गोला अत्यंत उष्ण हो जावेगा इसको धानकी राशिमें गाड देवे १ दिन रातके उपरान्त निकाल ले तो इसकी भस्म होय उसको खरल कर कपडेमें छानले, इसको पानीमें डालनेसे निश्चय करके तरने लगे इसमें संदेह नहीं फिर इस भस्मको खरलमें डालके जिन २ वनस्पतियोंकी पुट देना चाहिये वह इस प्रकार जाननी घीगुवारके रसमें खरल कर धूपमें सुखाय ले सूखने पर फिर उसीके रसमें खरल कर धूपमें सुखावे इस प्रकार सात पुट घीगुवारके देवे फिर उसी प्रकार भांगरेके रसकी, मकोयके रसकी

पीयावांसेके रसकी और मुंडीके रसकी और पुनर्नवाके रसकी तथा सहदेई, गिलोय, नील, निर्गुंडी और चित्रक इनके रसकी पृथक् २ सात २ पुट देवे तो ये रसायन सिद्ध हो इसे स्वयमाग्निरस कहते हैं. यह रस विख्यात है ये बडे २ सिद्ध पुरुषोंने कहा है इसी वास्ते मैंने अनुभव करके कहाहै यह स्वयमाग्निरस संपूर्ण रोग दूर करनेके वास्ते त्रिफलेके चूर्ण और सहत इस अनुपानसे दो निष्क प्रमाण खाय तो संपूर्ण रोग दूर होय. सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्ड, बहेडा, आंवला, इलायची, जायफल, लौंग ये नौ औषध समान भाग ले चूर्ण करे इस चूर्णके बराबर यह स्वयमाग्निरस ले दोनोंको एकत्र कर २ निष्क प्रमाण खानेको दे तो क्षय रोग और खांसीका रोग ये दूर होंय तथा रसायनकी रीतिसे सुवर्णादिक धातुओंका चूर्ण करके भस्म करे तो होय ॥

राजमृगांक ।

रसभस्म त्रिभागं स्याद्भागैकं हेमभस्मकम् । मृतताम्रस्य भागैकं शिलागंधकतालकम् ॥ प्रतिभागद्वयं शुद्धमेकीकृत्वावचूर्णयेत् । वराटान्पूरयेत्तेन चाजाक्षीरेण टंकणम् ॥ पिष्ट्वा तेन मुखं रुद्ध्वा मृद्भांडे सन्निधापयेत् । शुष्कं गजपुटे पाच्यं चूर्णयेत्स्वांगशीतलम् ॥ रसो राजमृगांकोऽयं चतुर्गुंजः क्षयापहः । एकोनत्रिंशन्मरिचैर्घृतेन सह भक्षयेत् ॥ दशानां पिप्पलीनां च चूर्णं दत्त्वा प्रदापयेत् । क्षये कासे ज्वरे पांडौ ग्रहण्यां चातिसारके ॥

अर्थ-पारद भस्म ३ भाग, सुवर्ण भस्म १भाग, ताम्र भस्म १ भाग और मनीसल गंधक, हरताल ये प्रत्येक दो दो भाग, लेवे सबको एकत्र खरल कर कौडियोंमें भरके बकरीके दूधमें सुहागा पीस उन कौडियोंके मुखको मूंद देवे फिर धूपमें सुखाय संपुटमें भरके उसका मुख बंद कर देवे फिर उसको गजपुटमें धरके फूंक देवे जब स्वांगशीतल हो जावे तब इसको खरल करके धर रखे इसे राजमृगांक कहते हैं. २९ मिरचोंका चूर्ण कर अथवा १० पीपलका चूर्ण और घी इनमें मिलायके चार रत्तीके प्रमाण देवे तो क्षय, खांसी, ज्वर, पांडु, संग्रहणी और अतिसार इनको नाश करे ॥

दूसरा प्रकार ।

रसेन तुल्यं कनकं तयोस्तु साम्येन युञ्ज्यान्नवमौक्तिकानि । रसप्रमाणो बलिरग्निभागः क्षारश्च सर्वं तुषवारिणा तु ॥ संमर्द्य

वस्त्रे तु विधाय गोलं दिनं पचेत्तं लवणेन पूर्णे । भांडे मृगांको-ऽयमतिप्रगल्भः क्षयाग्निमांद्यग्रहणगिदेषु ॥ साज्योषणाभिर्मधु-पिप्पलीभिर्वल्लोऽस्य देयो न ततोऽधिकस्तु । पथ्यं हितं शीत-लमेव योज्यं त्याज्यं सदा पित्तकरं विदाहि ॥

अर्थ—पारा, सुवर्ण इन दोनोंकी बराबर मोती और पारेके समान गंधक खपरिया २ भाग ले इस प्रकार सबको लेकर धानके तुषाम्लके काढेसे खरल करे वस्त्रमें उस गोलेको बांधके एक सराव लेवे प्रथम आधा निमकसे भर बीचमें इसको धरके ऊपरसे फिर इसको निमकसे भर देवे और उसका मुख बंद कर गजपुट धरके फूंक देवे तो यह मृगांक अत्यन्त उत्कृष्ट बने यह क्षय, मंदाग्नि, संग्रहणी इन पर घी और मिरचका चूर्ण अथवा सहत और पीपल इनके साथ ३ रत्ती देवे अधिक न देवे इस पर शीतल पथ्यमें पदार्थ देवे पित्तकारक और गरम ऐसे पदार्थ न देवे तो क्षयादि सर्व रोगोंको नाश करे ॥

लोकेश्वर ।

पलं कपर्दचूर्णस्य पलं पारदगंधयोः । माषष्टंकणकस्यैको जं-बीराद्भिर्विमर्दयेत् ॥ पुटेल्लोकेश्वरो नाम्ना लोकनाथोऽयमुत्तमः । ऋते कष्टं रक्तपित्तमन्यरोगान्क्षयं जयेत् ॥ पुष्टिवीर्यप्रसादौजः-कांतिलावण्यदः परः । कोऽस्ति लोकेश्वरादन्यो नृणां शंभुमु-खोद्गतात् ॥

अर्थ—कौडीकी भस्म, पारा और गंधक ये प्रत्येक चार २ तोले, सुहागा १ मासा इस क्रमसे लेकर नींबूके रससे खरल करे फिर पुट देवे तो यह लोकेश्वर रस तैयार हो इसको लोकनाथरसभी कहते हैं। यह विना कष्टके रक्तपित्त, क्षय इत्यादि रोग नाश करे और पुष्टि वीर्यकी निर्दोषता करे कांति, सुंदरता इनको करे लोकेश्वररस श्रीशंभुके मुखसे निकला इससे परे मनुष्यको सुखका देनेवाला कौन है ॥

नवरत्नराजमृगांक ।

सूतं गंधकहेमताररसकं वैक्रांतकांतायसं बंगं नागपविप्रवाल-विमलामाणिक्यगारुत्मतम् । ताप्यं मौक्तिकपुष्परागजलजं वैडू-र्यकं शुल्बकं शुक्तिस्तालकमभ्रहिंगुलसिलागोमेदनीलं समम् ॥ गोक्षूरैः फणिवल्लिसिंहवदनामुंडीकणाचित्रकैरिक्षुच्छिन्नरुहाहर-

प्रियजयाद्राक्षावराजिद्रवैः । कंकोलैर्मदनागकेसरजलैर्भाव्यं पृथक् सप्तधा भांडे सिंधुभृते मृगांकवदयं पाच्यः क्रमाग्नौ दिनम् ॥ भूयः प्राक् समुदाहृतैर्द्रववयैस्तं भावयेत्पूर्ववत्पश्चात्तुल्यविभागशीतलरजःकस्तूरिकाभावना ॥ गोप्याद्गोप्यतरं रसायनमिदं श्रीशंकरेणोदितं गुंजासिंधुयुतः कणामधुयुतः शोफे सपांड्वामये ॥ वातव्याधिसुपद्रवैश्च सहितं मेहांस्तथा विंशतिं संयोज्यस्तु हरीतकीगुडयुतो वातास्रके दुर्जये । गंभीरे च गुडूचिसत्वचपलाक्षौद्रैस्तु संयोजितश्चाध्मानारुचिशूलमांद्यकसनापस्मारवातोदरान् ॥ श्वासान्संग्रहणीं हलीमकमथो सर्वज्वरान्नाशयेद्धातून्पुष्टयति क्षयं क्षपयति इयामाशतं यौवनम् । प्रौढाटोपयुतं करोति सहसा तारुण्यगर्वोज्झितं सिद्धो राजमृगांक एव जयति स्वस्यानुपानैर्गदान् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, सुवर्ण भस्म, रूप्यभस्म, खपरिया, वैक्रांत (कांसुले) की भस्म, कांतलोहकी भस्म, वंगभस्म, नागभस्म, हीरेकी भस्म, मूंगाकी भस्म, विमलामणिकी भस्म, माणिककी भस्म, पन्नेकी भस्म, सुवर्णमाक्षिककी भस्म, मोतीकी भस्म, पुखराजकी भस्म, शंख भस्म, वैदूर्यमणिकी भस्म, ताम्रभस्म, शीपीकी भस्म, हरताल-भस्म, अभ्रक भस्म, हिंगुल, मनसिल, गोमेदमणिकी भस्म और नीलमणिकी भस्म इन सब भस्मोंको एकत्र कर गोखरू, नागरवेलके पान, अडूसा, गोरखमुंडी, पीपल, चीतेकी छाल, ईख, गिलोय, धतूरा, भांग, दाख, शतावर, कंकोल, कस्तूरी, नागकेसर इनके रसकी अथवा जिसका रस न निकले उसके काढेकी पृथक् २ सात सात भावना देवे सब मिलायके १०५ भावना हुई फिर इसका गोला बनायके एक हांडी लेवे उसमें सैंधा निमक भर बीचमें गोला रखके ऊपरसे नोनको फिर भर देवे और अग्निपर रखके क्रमसे मंद, मध्य और तेज अग्नि देकर मृगांकके समान पचावे फिर पूर्वोक्त रीतिसे भावना देवे फिर कपूर और कस्तूरी समान भाग ले इनकी भावना देवे तो यह रस सिद्ध होवे यह छिपाने लायकोंमेंभी अतिगोपनीय है यह रस श्रीशंकरने कहा है इसे १ रती सेंधे निमकके साथ सेवन करे तो सूजनको नाश करे और सहत तथा पीपल इनके साथ पांडुरोग और उपद्रव सहित वादीके रोग, बीस प्रकारके प्रमेह इनका नाश करे तथा हरड और गुड इनके साथ वातरक्तको नाश करे तथा

अफरा, अरुचि, शूल, मंदाग्नि, खांसी, अपस्मार (मृगी), वातोदर, श्वास, संग्रहणी, हली मक, ज्वर, क्षय इन पर अनुपानके साथ सेवन करनेसे इनका नाश करे और धातुको पुष्ट करनेवाला सौ तरुणी स्त्रियोंके गर्व दूर करनेकी शक्ति देनेवाला है इसको राजमृगांकरस कहते हैं. यह योग्य अनुपानके साथ देनेसे सर्व रोगोंको नाश करे है ॥

मृगांकरस ।

रसबलितपनीयं योजयेत्तुल्यभागं तदनु युगुलभागं मौक्तिकानां शुभानाम् । यवजचरणभागं मर्दयेत्सर्वमेतद्दिनमपि तुषवारा गोलकं लब्धमात्रे ॥ विधाय मुद्रां विदधीत भांडे चुल्ल्यां समुद्रे लवणेन पूर्णे । दिनं पचेच्चानुमृगांकनामा क्षयाग्निमांद्यग्रहणीविकारे ॥ योज्यः सदा वह्निजसर्पिषा वा कृष्णामधुभ्यां सततं त्रिगुंजः ॥ वर्ज्यं सदा पित्तकरं हि वस्तु लोकेशवत्पथ्यविधिर्निरुक्तः ॥

अर्थ—पारा, गंधक और सोना ये समान भाग ले मोती २ भाग, जवाखार १ भाग इन सबको एकत्र करके फिर तुषोंकी कांजीमें १ दिन खरल करके गोला बनाय ले फिर इसपर कपडमिट्टी करके निमक भरे पात्रके बीचमें इसको धरके उस पात्रका मुख बंद कर एक दिन चूल्हे पर रखके अग्नि देवे जब शीतल हो जावे तब उसमेंसे इस रसको निकाल ले यह मृगांकरस क्षय, मंदाग्नि, संग्रहणी इन पर सहत और पीपल इनसे तीन रत्तीके अनुमान देवे और पित्तकर्त्ता वस्तुओंसे परहेज करे तथा लोकनाथ रसके समान पथ्य करे ॥

कनकसिंदूर ।

रसः कनकभागिकः कनकमाक्षिकस्तालकः शिलारसकगंधकारससमाः सतुत्था इमे । विमर्द्य पयसा रवेः सकलमेतदस्योपरि द्रवैः प्रतिदिनं पृथक् तदिति भावयेद्बुद्धिमान् ॥ जयामुनिकलिप्रियादहनभृंगवासोद्भवैर्विभाव्य च रसस्ततः सुदृढगोलकं स्वेदयेत् । मृगांकवदथार्द्रकद्रवभरेण तं सप्तधा विमर्द्य च कटुत्रयांबुभिरयं क्षयस्यांतकृत् ॥ रसः कनकसिंदुरो भवति सन्निपातेऽप्ययं सदार्द्रकरसैस्तथा पवनगुल्मशूलादिहृत् । सवि-

श्वघृतयोजितः सकलमत्र पथ्यं हितं मृगांकवदथापरं किमपि नैव योज्यं क्वचित् ॥

अर्थ-पारद, सुवर्ण, सुवर्णमाक्षिक, हरताल, मनसिल, खपरिया, गंधक और लीलाथोथा ये समान भाग लेवे पारा और गंधककी कजली करे इस कजलीमें सब औषध मिलाय आकके दूधमें खरल करे फिर अरनी, अगस्तिया, बहेडा, चित्रक, भांगरा और अडूसा इन प्रत्येकके रसमें एक एक दिन खरल करे फिर गोला बनाय भूधर यंत्रमें मृगांकके समान पुट देवे फिर निकालके अदरखके रसकी सात भावना देवे पश्चात सोंठ, मिरच, पीपल इनके काढेकी सात २ भावना देवे यह कनकसुंदररस क्षयरोगका नाश करे यह अदरखके रससे सन्निपात पर देवे और सोंठ, तथा घी इनसे वातव्याधिपर देवे इस परभी राजमृगांकके समान पथ्य करे इससे सिवाय और कुछ न खाय ॥

हेमाभ्रकरससिंदूर ।

अभ्रकं रससिंदूरं मिश्रितं हेमभस्मना । समभागं प्रकुर्वीत रसेनार्द्रकयोजितम् ॥ क्षयं च क्षयपांडुं च क्षयकासं च कुंभकम् । जयेन्मंडलपर्यंतं पूर्वकर्मविपाकवित् ॥

अर्थ-अभ्रक भस्म, रससिंदूर और सुवर्ण भस्म ये समान भाग लेवे सबको अदरखके रसमें खरल कर दो रत्तीकी मात्रा सेवन करे तो क्षय, क्षयपांडुरोग, खांसी, कुंभकामला इनको दूर करे कर्मविपाकका जाननेवाला उसको एक मंडल पर्यंत सेवन करना चाहिये ॥

सुवर्णभूपति ।

शुद्धं सूतं समं गंधं मृतशुल्बं तयोः समम् । अभ्रलोहकयोर्भस्म कान्तभस्म सुवर्णजम् । रजतं च विषं सम्यक् पृथक् सूतसमं भवेत् । हंसपादीरसैर्मर्द्यं दिनमेकं वटीकृतम् ॥ काचकुप्यां विनिःक्षिप्य मृदा संलेपयेद्बहिः । शुष्का सा वालुकायंत्रे शनैर्मृद्वाग्निना पचेत् ॥ चतुर्गुंजमितं देयं पिप्पल्यादिद्रवेण तु । क्षयं त्रिदोषजं हन्ति सन्निपातांस्त्रयोदश ॥ आमवातं धनुर्वातं शृंखलावातमेव च । आढ्यवातं पंगुवातं कफवाताग्निमांद्यनुत् ॥ कटीवातं सर्वशूलं नाशयेन्नात्र संशयः । गुल्मशूलमुदावर्तं ग्रहणीमतिदुस्तराम् ॥

प्रमेहमुदरं सर्वामश्मरीं मूत्रविड्ग्रहम् । भगंदरं सर्वकुष्ठं विद्रधिं महतीं तथा ॥ श्वासं कासमजीर्णं च ज्वरमष्टविधं तथा । कामलां पांडुरोगं च शिरोरोगं च नाशयेत् ॥ अनुपानविशेषेण सर्वरोगान्विनाशयेत् । यथा सूर्योदये नश्येत्तमःसर्वगतं तथा ॥ सर्वरोगविनाशाय सर्वेषां स्वर्णभूपतिः ॥

अर्थ—पारा १, गंधक १, ताम्रभस्म २ और अभ्रक, लोह, कांति, सुवर्ण और चांदी इन प्रत्येककी भस्म एक एक भाग और सिंगियविष १ भाग, इस प्रकार सब औषध लेकर हंसपदी (लाल लजालू) के रसमें १ दिन खरल कर गोली बनावे इनको कांचकी आतसी शीशीमें भर मुख बंद करे और उसके ऊपर कपडमिट्टी करके सुखाय लेवे इसको वालुकायंत्रमें मंद २ अग्निसे धीरे पचावे तो रस सिद्ध होवे. इसको पीपल और अदरखके साथ ४ रत्ती देवे तो त्रिदोष, क्षय, तेरह प्रकारके संनिपात, आमवात, धनुर्वात, शृंखलावात, आढचवात, पंगु वात, कफवात, मंदाग्नि, कटिवात, सर्व प्रकारके शूल, गुल्मशूल, उदावर्त्त, संग्रहणी, प्रमेह, उदररोग, सर्व प्रकारकी पथरी, मूत्रकृच्छ्र, विड्ग्रह, भगंदर, सर्व प्रकारके कुष्ठरोग, घोर विद्रधिका रोग, श्वास, खांसी, अजीर्ण, आठ प्रकारके ज्वर, कामला, पांडुरोग और मस्तकरोग इत्यादि सब रोगोंको अनुपान विशेष करके नाश करे है. जैसे सूर्योदय होनेसे अंधकार सर्वत्रका नष्ट होता है इसी प्रकार यह सुवर्णभूपतिरस सर्वरोग नाश करके प्रगट हुआ है ॥

लक्ष्मीविलासरस ।

सुवर्णताराभ्रकताम्रवंगं त्रिलोहनागामृतमौक्तिकं च । एतत्समं योज्य रसस्य भस्म खल्वे कृतं स्याकृतकज्जलीकम् ॥ संमर्द-येन्माक्षिकसंप्रयुक्तं तच्छोषयेत् द्वित्रिदिनं च घर्मे । तत्कल्कमू-षोदरमध्यगामी यत्नात्कृतं तार्क्ष्यपुटेन पक्वम् ॥ यामाष्टकं पा-वकमर्दितं च लक्ष्मीविलासो रसराज एषः । क्षये त्रिदोषप्रभवे च पांडौ सकामलासर्वसमीरणेषु ॥ शोकप्रतिश्यायविनष्टवीर्ये मूलामयं सर्वसशूलकुष्ठम् । हत्वाग्निमांद्यं क्षयसन्निपातं श्वासं च कासं च हरेत्प्रयुक्तम् ॥ तारुण्यलक्ष्मीप्रतिबोधनाय श्रीम-द्विलासो रसराज एषः ॥

अर्थ-सुवर्ण, रूपा, अभ्रक, ताम्र, रांगा, वट्टलोह, शीसा, सिंगियाविष और मोती इन प्रत्येककी भस्म समान भाग ले तथा सबकी बराबर पारेकी भस्म लेवे सबको एकत्र कर सहत डालके खरल करे और सुखावे फिर मूसमें भरके गरुपुडटमें फूंक देवे शीतल होने पर निकालके चीतेके काढेमें आठ प्रहर खरल करे तो यह लक्ष्मीविलासरस बने यह संपूर्ण रसोंका राजा है यह त्रिदोषसे प्रगट क्षयरोग, पांडुरोग, कामला, सर्व प्रकारके वादीके रोग, सूजन, प्रतिश्याय, निनष्ठीवीर, बवासीर सर्व प्रकारके शूल, कोढ, मंदाग्नि, सन्निपात, श्वास और खांसी इनको नष्ट करे तथा तारुण्यलक्ष्मीको बढावे, धनवान् (सेठ, साहुकार राजा, महाराजाओं) को यह विलासके अर्थ है ॥

शिलाजत्वादिलोह ।

शिलाजतुयुतं लोहं वल्लं तु विधिमारितम् ।
पथ्याशी सेवते यस्तु स यक्ष्माणं व्यपोहति ॥

अर्थ-लोह भस्म २ रत्ती शिलाजितके साथ सेवन करे और पथ्यसे रहे तो राजयक्ष्मा (खईका) रोग नाश होवे ॥

पंचामृतरस ।

भस्मसूताभ्रलोहानां शिलाजतुविषं समम् । गुडूचीत्रिफलाक्राथसंस्कृतं गुग्गुलं तथा ॥ मृतनैपालताम्रं वा सूततुल्यं नियोजयेत् । एकीकृत्य द्विगुंजं तु भक्षयेद्राजयक्ष्मनुत् ॥ पंचामृतो रसो नाम ह्यनुपानं च पूर्ववत् ॥

अर्थ-पारा, अभ्रक, लोह इनकी भस्म, शिलाजीत और सिंगियाविष ये समान भाग लेवे इनको गिलोय, हरड, बहेडा, आँवला इनके रसमें खरल कर गूगल और नेपाली तामेकी भस्म ये पारेके समान मिलायके घोटे फिर दो रत्ती इसमेंसे अनुपानके संग देय तो यह पंचामृतरस राजयक्ष्माको नाश करे ॥

अमृतेश्वररस ।

रसभस्मामृतासत्वं लोहं मधुघृतान्वितम् ।
अमृतेश्वरनामायं षड्गुंजा राजयक्ष्मजित् ॥

अर्थ-पारेकी भस्म, गिलोयका सत्त्व और लोह इनको एकत्र कर सहत और घीके साथ १ रत्तीके प्रमाण देवे. इसको अमृतेश्वररस कहते हैं यह क्षयनाशक है ॥

चिंतामणिरस ।

रसेंद्रवैक्रांतकरौप्यताम्रसलोहमुक्ताफलगंधहेम्नाम् । त्रिर्भावितं चार्द्रकमार्कवह्निरसैरजागोपयसा तथैव ॥ अर्शः क्षयं कासमरोचकं च जीर्णज्वरं पांडुमपि प्रमेहान् । गुंजाप्रमाणं मधुमागधीभ्यां लीढं निहन्याद्विषमं च वातम् ॥ चिंतामणिरिति ख्यातः पार्वत्या निर्मितः स्वयम् ॥

अर्थ—पारा, वैक्रांत, रूपा, लोहा, मोती और सुवर्ण इनकी भस्म तथा गंधक ये समान भाग लेवे सबको खरलमें डालके अदरख, भांगरा और चित्रक इनके रसकी तीन २ भावना देवे और बकरी, गौ इनके दूधकी तीन २ भावना देवे तो यह चिंतामणि रस सिद्ध होवे । यह १ रत्ती सहत और पीपलके साथ खाय तो बवासीर, क्षय, खांसी, अरुचि, अजीर्ण, ज्वर, पांडुरोग, प्रमेह इनको नाश करे यह पहले पार्वतीने स्वयं निर्माण करा है ॥

दूसरा त्रैलोक्यचिंतामणि ।

सूताभ्रस्वर्णताराुणभिदुरशिलाताप्यगन्धप्रवालायोमुक्ताशंखतालं वरमिदमनलक्काथतः सप्तभाव्यम् । निर्गुंडीसूरणांभःपविरविपयसा त्रिः पृथग्भावयित्वा चापूर्यैतैर्वराटानथ मिहिरपयष्टंकणालिप्तरक्तान् ॥ कृत्वा भांडे च रुद्ध्वा गजपुटजठरे युक्तितस्तत्तु पक्त्वोद्धृत्यैतन्मर्दयित्वा तदखिलतुलितं सूतभस्म प्रदद्यात् । वैक्रांतं सूर्यतुर्यांशकमथ मिलितं सप्तशः शिग्रुमूलं त्वग्बाणस्तेन तुल्यं विषमनलवरं टंकणं चोषणं च ॥ पथ्या जातीफलं चामरकुसुमकणानागरं वत्सनाभं तुर्यांशं मेलयित्वा पृथगथ दिवसं मर्दयेद्भृंगतोयैः । एष त्रैलोक्यचिंतामणिरखिलगदध्वांतविध्वंसहंसस्तत्तद्रोगानुपानादुपासि कवलितः सार्धवल्लप्रमाणः ॥ वातव्याध्यामवातज्वरजठरकृमिश्वासशूलास्रवातासृक्पित्तक्षैण्यकासक्षयकफजगदोरःक्षताजीर्णमेहे । कुष्ठातीसारपांडुग्रहणिषु तमकेषु व्रणार्शः प्रकृष्टे खांजे खंजाढ्यवाते श्रुतिभगजगदे सर्वथैष प्रशस्तः ॥

अर्थ-पारा, अभ्रक, सुवर्ण, चांदी, माणिक, हीरा, मनशिल, सुवर्णमाक्षिक, गंधक, मूगा, लोह, मोती, शंख और हरताल इनकी भस्म, पारा और गंधक इनकी कजली इन सबको एकत्र करके चित्रकके काढेकी सात भावना देवे फिर निर्गुंडी, सूरण (जमीकंद) इनके रस, थूहर और आक इनका दूध इन प्रत्येककी तीन तीन भावना देवे फिर इनको कौडियोंमें भर आकके दूधमें सुहागा पीसके उन कौडियोंके मुखको बंद कर देवे फिर इनको एक सरावमें बंद कर संपुटमें धरके गजपुटमें फूंक देवे जब शीतल हो जावे तब निकालके घोट डाले फिर सब चूर्णके समान पारेकी भस्म और वैक्रांतकी भस्म पारेकी भस्मसे चतुर्थांश ले सबको एकत्र कर सबसे सातगुना सहजनेके जडका चूर्ण डाले. दालचीनी पांच भाग तथा लाल बोल, चित्रक, सुहागा, काली मिरच ये सब पाव २ भाग लेवे, जंगी हरड, जायफल, लौंग, पीपल, सोंठ और सिंगियाविष ये प्रत्येक चतुर्थांश मिलावे फिर इसको बिजोरेके रसमें १ दिन खरल करे यह त्रैलोक्यचिंतामणिरस संपूर्ण रोगरूप अंधकार नाश करनेमें सूर्यके समान है. यह रोगोक्त अनुपानसे तीन रत्ती सेवन करनेसे संपूर्ण रोगोंका नाश करे. यह वातव्याधि, आमवात, ज्वर, उदर, कृमि, श्वास, शूल, रक्तवात, रक्तपित्त, क्षीणता, खांसी, क्षय, कफरोग, उरःक्षत, अजीर्ण, प्रमेह, कोढ, अतिसार, पांडु, संग्रहणी, तमकश्वास, व्रण, बवासीर, पंगुवात, आढ्यवात, कर्णरोग और योनिरोग इनपर उत्तम है ॥

वसंतकुसुमाकर ।

प्रवालरसमौक्तिकाभ्रकमिदं चतुर्भागभाक् पृथक्पृथगथ स्मृते रजतहेमनी द्व्यंशके । अयोभुजगरंगकं त्रिलवकं विमर्द्याखिलं शुभेऽहनि विभावयेद्भिषगियं धिया सप्तशः ॥ द्रवैर्वृषनिशेक्षुजैः कमलमालतीपुष्पजै रसैः कदलिकंदजैर्मलयचंदनादुद्भवैः । वसंतकुसुमाकरो रसपतिर्द्विवल्लोऽशितः समस्तगदहृद्भवेत्किलनिजानुपानैरयम् ॥ क्षिपेच्च समधूषणैः क्षयगदेषु सर्वेष्वपि प्रमेहरुजि शात्रिभिः समधुशर्कराभिः सह । सितामलयजद्रवैर्महति रक्तपित्तेऽथ वा सितामधुसमन्वितैर्वृषभपल्लवानां द्रवैः ॥ त्रिजातगुरुचंदनैरपि च तुष्टिपुष्टिप्रदो मनोभवकरः परो वमिषु शंखपुष्पीरसैः । अभीरुरसशर्करामधुभिरम्लपित्तामये परेषु च यथोचितं ननु गदेषु संसेवयेत् ॥

अर्थ—मूंगा, पारा, मोती और अभ्रक ये चार २ तोले, रौप्यभस्म और सुवर्णभस्म, ये दो दो तोले, लोहेकी भस्म शीशेकी तथा रांग इनकी भस्म तीन २ तोले लेवे सबको एकत्र खरल कर अडूसेका रस, हलदीका काढा, ईखका रस, कमल और मालती इनके फूलोंका रस, केलेके कंदका रस, काली अगर और चंदन उनका काढा इन प्रत्येककी सात २ भावना देवे तो यह वसंतकुसुमाकररस बनकर तैयार होवे. इसमेंसे ४ या ६ रत्ती रोगोक्त अनुपानके साथ सेवन करे तो संपूर्ण व्याधिका नाश करे. सहत और काली मिरच इनके साथ क्षय पर देवे. प्रमेह पर हलदीके चूर्ण तथा सहत और मिश्री इनसे चंदनका काढा और मिश्री इनके साथ रक्तपित्त पर दे. अथवा मिश्री, सहत, अडूसेके रसके साथ देवे तथा दालचीनी, पत्रज, इलायची इनके चूर्णसे देवे तो तुष्टि तथा पुष्टि देकर कामोद्दीपन करे तथा शंखाहूलीके रससे वांति पर शतावरका रस, मिश्री और सहत इनसे अम्लपित्त पर तथा सर्वरोगों पर योग्य अनुपानोंके साथ सेवन करे ॥

लोकेश्वरपोटली ।

रसस्य भस्म वा हेम पादांशेन प्रकल्पयेत् । द्विगुणं गंधकं दत्त्वा मर्दयेच्चित्रकांबुना ॥ वराटकांश्च संपूर्य टंकणेन निरुध्य च । भांडे चूर्णप्रलिप्तेऽथ शीघ्रं रुन्ध्यात्तु मृन्मये॥ शोषयित्वा पुटे गर्तेऽरत्निमात्रेपराह्निके । स्वांगशीतलमुद्धृत्य चूर्णयित्वाथ विन्यसेत् ॥ एष लोकेश्वरो नाम वीर्यपुष्टिविवर्धनः । गुंजाचतुष्टयं खादेत्पिप्पलीमधुसंयुतः ॥ भक्षयेत्परया भक्त्या लोकेशः सर्वदर्शनः । अंगकार्श्येऽग्निमांद्ये च कासे पित्ते रसः स्वयम् ॥ मरीचैर्घृतसंयुक्तैः प्रदातव्यो दिनत्रयम् । लवणं वर्जयेत्तत्र साज्यं दधि च योजयेत् ॥ एकविंशद्दिनं यावन्मरीचं सघृतं पिबेत् । पथ्यं मृगांकवत् ज्ञेयं शयीतोत्तानपादतः ॥ ये शुष्का विषमाशनैः क्षयरुजा व्याप्ताश्च ये कुष्ठिनो ये पांडुत्वहताः कुवैद्यविधिना ये शोषिणो दुर्भगाः । ये तप्ता विविधज्वरैर्भ्रममदोन्मादैः प्रमादं गतास्ते सर्वे विगता यया हि परया स्युः पोटलीसेवया ॥

अर्थ—पारदभस्म ४, सुवर्णभस्म १ और गंधक ८ इस प्रकार भाग लेकर चित्रकके काढेसे खरल करे फिर कौडियोंमें भरे और उनके मुखको आकके दूधमें सुहागेको पीस उस सुहागेसे बंद करे फिर १ हाँडी लेय उसको आधी चूनेसे भरे फिर इन कौडियोंको भरे और ऊपरसे चूना फिर भर दे फिर उसका मुख बंद कर फिर १ हाथका गड्ढा खोद उसमें उस पात्रको रख आरने ऊपलोंसे भर देवे ३ पहरके अनंतर पुट देकर भस्म करे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल खरल कर धर रक्खे इसे लोकेश्वर रस कहते हैं यह पीपर और सहत इनके साथ ४--४ रत्ती सेवन करे तो तथा भक्तिपूर्वक सेवन करनेसे सर्व सुखका दिखानेवाला है देहकी कृशता, मंदाग्नि, खांसी, पित्त इन पर घी और मिर्चके चूर्णके साथ ३ दिन देवे निमक खाना वर्जित है तथा इसके ऊपर घी और दही खाय और २१ दिनतक घी और मिर्चका चूरा मिलाकर पीया करे और मृगांकके समान पथ्य करे तथा पैरोंको सीधे करके लेटे और जो कोई विषमाशन करके शुष्क, क्षय रोग करके व्याप्त, कोढी, पांडुरोगी, कुत्सित वैद्योंके उपचार करके शोषयुक्त, दुर्भग, अनेक प्रकारके ज्वरों करके तप्त, भ्रमरोगवाला, उन्माद रोगवाला और बावला ऐसे सर्व रोग इस लोकेश्वरपोटलीके सेवन करनेसे निरोगी होय ॥

लोहरसायन क्षयादिकोंपर ।

शुद्धं रसेंद्रं भागैकं द्विभागं शुद्धगंधकम् । क्षिपेत्कज्जलिकां कुर्यात्तत्र तीक्ष्णभवं रजः ॥ क्षिप्त्वा कज्जलिकातुल्यं प्रहरैकं विमर्दयेत्। ततः संजायते तस्य सोष्णो धूमोद्गमो महान् ॥ अत्यंतं पिंडितं कृत्वा ताम्रपात्रे निधाय च । मध्ये धान्येकशूकस्य त्रिदिनं धारयेद्बुधः॥ उद्धृत्य तस्मात्खल्वे च क्षिप्त्वा घर्मे निधाय च । रसैः कुठारच्छिन्नायास्त्रिवेलं परिभावयेत् ॥ संशोष्य घर्मक्काथैश्च भावयेत्त्रिकटोस्त्रिधा । लोहपात्रे ततः क्षिप्त्वा भावयेत्त्रिफलाजलैः ॥ निर्गुंडीदाडिमत्वग्भिर्बिसभृंगकुरंटकैः । पलाशकदलीद्रावैर्बीजकस्य शृतेन वा ॥ नीलीकालंबुषाद्रावैर्बब्बूलफलिकारसैः । त्रिस्त्रिवेलं यथालाभं भावयेदेभिरौषधैः ॥ ततः प्रातर्लिहेत्क्षौद्रघृताभ्यां कालमात्रकम् । पलमात्रं वरक्काथं पिबेदस्यानुमानकम् ॥ मासत्रयं शीलितं स्याद्वलीपलित-

नाशनम् । मंदाग्निश्वासकासांश्च पांडुतां कफमारुतौ ॥ पिप्पलीमधुसंयुक्तं हन्यादेतन्न संशयः । वातास्रं मूत्रदोषांश्च ग्रहणीं तोयजां रुजम् ॥ अंडवृद्धिं जयेदेतच्छिन्नासत्त्वमधुप्लुतम् । बलवर्णकरं वृष्यमायुष्यं परमं स्मृतम् ॥ कूष्मांडं तिलतैलं च माषान्नं राजिका तथा । मद्यमम्लरसं चैव त्यजेल्लोहस्य सेवकः ॥

अर्थ–शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, दोनोंको खरलमें डाल खरल करे उसके समान भाग काली मिर्चका चूर्ण लेकर उस कजलीमें मिलाय १ प्रहर खरल करे फिर घीगुवारके रसमें ३ दिन पर्यंत खरल करे ऐसा करनेसे इस औषधीमेंसे गर्म २ घोर धूंआ निकलता है तब इसका प्रथम गोला करके तामेके पात्रमें धरके धानीमें गाड देवे जब ३ दिन बीत जाय चौथे दिन उस गोलेको निकालकर खरल कर धूपमें रख वनतुलसीके रसकी ३ पुट देवे फिर सोंठ, मिर्च, पीपर इनका काढा करके पृथक् २ तीन दिन पुट देवे फिर अडूसा, गिलोय और चित्रक इन तीनोंका रस पृथक् २ निकाल क्रमसे एक २ की पुट तीन २ देवे पश्चात् इस रसायनको लोहेकी कढाईमें डालके आगे लिखी औषधोंकी पुट देवे जैसे हरड, बहेडा, आँवला, निर्गुंडी, अनारकी छाल, कमलकंद, भांगरा, पीयावांसा, पलास, केलाका कंद, विजेसार, नीलपुष्पी, मुंडी, बबूरके फलीका रस, इन चौदह ओषधोंके न्यारे २ रस निकालकर क्रमपूर्वक एक एक रसकी तीन भावना देकर गोली झडिया बेरकी बराबर बनावे. १ गोली सहत और घी इनको एकत्र कर इसमें मिलायके खाय और तत्काल इसके ऊपर त्रिफलेका काढा एक पलके प्रमाण पीवे इस प्रकार तीन महीनें पर्यंत इस रसायनको सेवन करे तो देहकी गुजलट और छोटी उम्र (अवस्था) में बालोंका सफेद होना ये दूर हों और देह हृष्ट पुष्ट हो तथा बाल काले हो तथा सहत और पीपलके साथ सेवन करे तो मंदाग्नि, श्वास, खांसी, पांडुरोग, कफवायु ये रोग दूर हों तथा गिलोयके सत्त्वके साथ मिलायकर खाय तो वातरक्त, मूत्रदोष, दुष्ट पानी पीनेसे हुई जो संग्रहणी तथा अंडवृद्धि ये रोग दूर हों. यह रसायन है. यह बल, कांति, तथा स्त्रीगमनमें इच्छा देनेवाला तथा आयुष्यकी वृद्धि करनेवाला है. तथा पेठा, तिलोंका तैल, उडद, राई, मद्य (दारू) और खट्टे पदार्थ ये सब इस रसके सेवन करनेवालेको खाना वर्जित अर्थात् अपथ्य हैं ॥

रत्नगर्भपोटली ।

रसं वज्रं हेम तारं नागं लोहं तथाभ्रकम् । तुल्यांशं मारितं यो-

ज्यं मुक्तामाक्षिकविद्रुमम् ॥ राजावर्तं च वैक्रांतं गोमेदं पुष्पराजकम् । शंखं च तुल्यतुल्यांशं सप्ताहं चित्रकद्रवैः ॥ मर्दयित्वा विचूर्ण्याथ तेनापूर्य वराटकान् । टंकणं रविदुग्धेन पिष्ट्वा तन्मुखमालिपेत्॥मृद्भांडे तान्सुसंयन्त्र्य सम्यग्गजपुटे पचेत् । आदाय चूर्णयेत्सम्यङ् निर्गुंडद्याः सप्तभावनाः ॥ आर्द्रकस्य रसैः सप्त चित्रकस्यैकविंशतिः । द्रवैर्भाव्यं ततः शुष्कं देयं गुंजाचतुष्टयम् ॥ क्षयरोगं निहंत्याशु सत्यं शिव इवांधकम् । योजयेत्पिप्पलीक्षौद्रैः सघृतैर्मरिचैश्च वा ॥ पोटलीरत्नगर्भोऽयं सर्वरोगहरो मतः ॥

अर्थ-पारा, हीरा, सुवर्ण, चांदी, शीशा, लोह, अभ्रक, मोती, सुवर्णमाक्षिक, मूंगा, राजावर्त्त, गोमेद, पुखराज और शंख इन सबकी भस्म समान भाग लेवे सात दिन पर्यंत चित्रकके काढेमें खरल करे फिर इस चूर्णको कौडियोंमें भरे उनका मुख आकके दूधमें पिसे सुहागेसे बंद करे. फिर उन कौडियोंको मिट्टीकी हांडियामें बंद कर उसके मुखको बंद कर देवे और इस हांडीको गजपुटमें धरके फूंक देवे. शीतल होने पर निकालके चूर्ण कर लेवे और निर्गुंडीके रसकी सात भावना देकर सुखायले. इसमेंसे ४ रत्ती रस ले सहत, पीपल अथवा घी और काली मिरचोंकी बुकनी इनके साथ देवे तो जसे शिवने अंधक दैत्यका नाश करा उसी प्रकार यह रत्नगर्भपोटली रस क्षयरोगका नाश करे तथा सर्व रोगोंका भी नाश करे ॥

हेमगर्भपोटलीरस कफक्षयादिकोंपर ।

सूतात्पादप्रमाणेन हेम्नः पिष्टं प्रकल्पयेत् । तयोः स्याद्द्विगुणो गंधो मर्दयेत्कांचनारिणा ॥ कृत्वा गोलं क्षिपेन्मूषासंपुटे मुद्रयेत्ततः । पचेद्भूधरयंत्रेण वासरत्रितयं बुधः ॥ तत उद्धृत्य तत्सर्वं दद्याद्गंधं च तत्समम् । मर्दयेच्चार्द्रकरसैश्चित्रकस्वरसेन च ॥ स्थूलपीतवराटांश्च पूरयेत्तेन युक्तितः । एतस्मादौषधात्कुर्यादष्टमांशेन टंकणम् ॥ टंकणार्धं विषं दत्त्वा पिष्ट्वा सेहुंडदुग्धकैः । मुद्रयेत्तेन कल्केन वराटानां मुखानि च ॥ भांडे चूर्णप्र-

लिप्तेऽथ धृत्वा मुद्रां प्रदापयेत् । गर्ते हस्तोन्मिते धृत्वा पुटे-द्गजपुटेन च ॥ स्वांगशीतं रसं ज्ञात्वा प्रदद्याल्लोकनाथवत् । पथ्यं मृगांकवत् ज्ञेयं त्रिदिनं लवणं त्यजेत् ॥ यदा छर्दिर्भवे-त्तस्य दद्याच्छिन्नाशृतं तदा । मधुयुक्तं तथा श्लेष्मकोपे दद्याद्गुडार्द्रकम् ॥ विरेके भर्जिता भंगा प्रदेया दधिसंयुता । जयेत्कासं क्षयं श्वासं ग्रहणीमरुचिं तथा ॥ अग्निं च कुरुते दीप्तं कफवातं नियच्छति । हेमगर्भः परो ज्ञेयो रसः पोटलिकाभिधः ॥

अर्थ—शुद्ध पारा १ भाग तथा पारेका चतुर्थांश खरल करा हुआ सुवर्णका वरक और दोनोंसे दुगुनी गंधक लेवे इन तीनोंको कचनारके रसमें खरल करे और इसका गोला बनाय लेवे इस गोलेको मिट्टीके सराव संपुटमें रख कपडमिट्टी करके उसको भूधर-यंत्रमें पचावे. जब शीतल होजावे तब बाहर निकाल उसके समान गंधक ले दोनों-को अदरखके रसमें घोटे फिर चित्रकके रसमें घोटे फिर इसको सुखायके बडी २ पीली कौडियोंमें युक्तिपूर्वक भर देवे. फिर सब औषधोंका आठवां हिस्सा सुहागा ले और सुहागेसे आधा सिंगियाविष लेवे दोनोंको थूहरके दूधमें खरल करके उन कौडियोंके मुख पर मुद्रा देवे. फिर इन कौडियोंको एक चूने भरे हुए पात्रके बीचमें रख ऊपरसे फिर दाबके चूनेको भर देवे फिर इस पात्रके मुख पर दूसरा पात्र औंधा रखके उसकी संधियोंको कपडामिट्टीसे ल्हेस देवे. फिर एक हाथ भरका गड्ढा खोदके आरने उपले भरे और बीचमें इस पात्रको रखके ऊपरसे फिर आरने उपले भर देवे और अग्नि लगाय देवे जब इस गजपुटकी अग्नि स्वांगशीतल हो जावे तब बडी होशयारी-से उन कौडियोंको निकालके खरलमें डालके पीस डाले इस रसको हेमगर्भपोटली कहते हैं. यह हेमगर्भपोटली लोकनाथ रसके समान सेवन करे और पथ्य मृगांकरसायनके समान सेवन करे. तथा इससे भी विशेषता यह है तीन दिन अधिक नोन न खावे पश्चात् इस औषधसे उलटी आने लगती है तब गिलोयका काढा कर उसमें सहत मिला-यके देवे तो उलटी दूर हो. तथा कफका प्रकोप होनेसे गुड और अदरकका रस मिलायके देवे तो कफप्रकोप दूर होवे तथा दस्त होने लगें तो भांगकी भून दहीमें मिलायके देवे इससे दस्तोंका होना बंद होवे, तथा इस हेमगर्भ पोटलीसे खांसी, क्षय, श्वास, संग्रहणी और अरुचि ये रोग सब दूर होवें तथा अग्नि प्रदीप्त होय तथा कफ और वायुका प्रकोप दूर होवे ॥

दूसरा प्रकार ।

रसस्य भागाश्चत्वारस्तावंतः कनकस्य च । तयोश्च पिष्टिकां कृत्वा गंधो द्वादशभागिकः ॥ कुर्य्यात्कज्जलिकां तेषां मुक्ताभागाश्च षोडश । चतुर्विंशच्च शंखस्य भागैकं टंकणस्य च ॥ एकत्र मर्दयेत्सर्वं पक्वनिंबूकजै रसैः । कृत्वा तेषां ततो गोलं मूषासंपुटके न्यसेत् ॥ मुद्रां दत्त्वा ततो हस्तमात्रे गर्ते च गोमयैः । पुटेद्गजपुटेनैव स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥ पिष्ट्वा गुंजाचतुर्मानं दद्याद्व्याज्यसंयुतम् । एकोनत्रिंशदुन्मानमरिचैः सह दीयते ॥ राजते मृन्मये पात्रे काचजे वावलेहयेत् । लोकनाथसमं पथ्यं कुर्यात् शुचितमानसः ॥ कासे श्वासे क्षये वाते कफग्रहणिकागदे । अतिसारे प्रयोक्तव्या पोटली हेमगर्भिका ॥

अर्थ–पारा ४ भाग, सुवर्णके वर्क ४ भाग, दोनोंको एकत्र करके खरल करे जब उत्तम पिठी हो जावे तब पारेके बराबर शुद्ध गंधक लेवे इसको मिलायके फिर घोटकर कजली करे पश्चात् पारेके सोलह भाग मोती, चौबीस भाग शंख, एक भाग सुहागा ले पूर्वोक्त कजलीमें मिलाय पके हुए नींबुके रसमें मिलायके खरल करे गोला बनाय ले इस गोलेको मिट्टीके सराव संपुटमें रख कपडमिट्टी करके गौके गोबरोंके गजपुटमें धरके फूंक देवे. जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल उसमेंसे युक्तिपूर्वक औषधको निकाल लेवे और इसको खरलमें डालके पीस डाले. इसको भी हेमगर्भपोटली रस कहते हैं यह हेमगर्भ ४ रत्तीके अनुमान उनतीस मिरचकी बुकनीके साथ चांदीके पात्रमें अथवा मिट्टीके अथवा शीशेके प्यालेमें गौका घी डालके सब मिलायके सेवन करे तथा अंतःकरणको स्वस्थ कर लोकनाथरसके समान पथ्य करे. श्वास, क्षयरोग, वातके विकार, कफ और संग्रहणी, तथा अतिसार ये रोग दूर होवें ।

लोकनाथरस ।

शुद्धो बुभुक्षितः सूतो भागद्वयमितो भवेत् । तथा गंधस्य भागौ द्वौ कुर्य्यात्कज्जलिकां तयोः ॥ सूताच्चतुर्गुणेष्वेव कपर्देषु विनिक्षिपेत् । भागैकं टंकणं दत्त्वा गोक्षीरेण विमर्दयेत् ॥ तथा शंखस्य खंडानां भागानष्टौ प्रकल्पयेत् । क्षिपेत्सर्वंपुटस्यांत-

श्चूर्णलिप्तशरावयोः ॥ गर्ते हस्तोन्मिते धृत्वा पचेद्गजपुटेन च । स्वांगशीतं समुद्धृत्य पिष्ट्वा तत्सर्वमेकतः ॥ षड्गुंजासंमितं चूर्णमेकोनत्रिंशदूषणैः । तेन वातजे दद्यान्नवनीतेन पित्तजे ॥ क्षौद्रेण श्लेष्मजे दद्यादतीसारे क्षये तथा । अरुचौ ग्रहणीरोगे काइर्ये मंदानले तथा ॥ कासे श्वासेषु गुल्मेषु लोकनाथो रसो हितः । तस्योपरि घृतान्नं च भुंजीत कवलत्रयम् ॥ मंचे क्षणैकमुत्तानः शयीतानुपधानके । अनम्लमन्नं सघृतं भुंजीत मधुरं दधि ॥ प्रायेण जांगलं मांसं प्रदेयं घृतपाचितम् ॥ सुदुग्धभक्तं दद्याच्च जातेऽग्नौ सांध्यभोजने । सघृतान् मुद्गवटकान् व्यंजनेष्वेव चारयेत् ॥ तिलामलककल्केन स्नापयेत्सर्पिषाथवा । अभ्यंजयेत्सर्पिषा च स्नानं कोष्णोदकेन च ॥ क्वचित्तैलं न गृह्णीयान्न बिल्वं कारवेल्लकम् । वार्ताकं शफरीं चिंचां त्यजेद्व्यायाममैथुने ॥ मद्यं संधानकं हिंगुशुंठीमाषान् मसूरकान् । कूष्मांडराजिकां कापं कांजिकं चैव वर्जयेत् ॥ त्यजेच्च युक्तनिद्रां च कांस्यपात्रे च भोजनम् । ककारादियुतं सर्वं त्यजेच्छाकफलादिकम् ॥ पथ्योऽयं लोकनाथस्तु शुभनक्षत्रवासरे । पूर्णातिथौ शुक्लपक्षजाते चंद्रबले तथा ॥ पूजयित्वा लोकनाथं कुमारीं भोजयेत्ततः । दानं दद्याद्द्विघटिकामध्ये ग्राह्यो रसोत्तमः ॥ रसात्संजायते तापस्तदा शर्करया युतम् । सत्त्वं गुडूच्या गृह्णीयाद्वंशरोचनया युतम् ॥ खर्जूरं दाडिमं द्राक्षामिक्षुखंडानि चारयेत् । अरुचौ निस्तुषं धान्यं घृतभृष्टं सशर्करम् ॥ दद्यात्तथा ज्वरे धान्यं गुडूचीक्काथमाहरेत् । उशीरवासकक्काथं दद्यात्समधुशर्करम् ॥ रक्तपित्ते कफे श्वासे कासे च स्वरसंक्षये । अग्निभृष्टजयाचूर्णं मधुना निशि दीयते ॥ निद्रानाशेऽतिसारे च ग्रहण्यां मंदपावके । सौवर्चलाभयाकृष्णाचूर्णमुष्णजलैः पिबेत् ॥

शूले जीर्णे तथा कृष्णा मधुयुक्ता ज्वरे हिता । प्लीहोदरे वातरक्ते छर्द्यां चैव गुदांकुरे ॥ नासिकादिषु रक्तेषु रसदाडिमपुष्पजम् । दूर्वायाः स्वरस नस्ये दद्याच्छर्करया युतम् ॥ कोलमज्जाकणाबर्हियक्षभस्म सशर्करम् । मधुना लेहयेच्छर्दिहिक्काकोपस्य शांतये ॥ विधिरेष प्रयोज्यस्तु सर्वस्मिन् पोटलीरसे । मृगांके हेमगर्भे च मौक्तिकाख्ये रसेषु च ॥ इत्ययं लोकनाथोक्तो रसः सर्वरुजो जयेत् ॥

अर्थ-शुद्ध और बुभुक्षित पारा दो भाग तथा शुद्ध करी हुई गंधक दो भाग इन दोनोंकी एकत्र कजली करे फिर पारेसे चौगुनी पीली कौडी ले उनमें इस कजलीको युक्तिसे भर देवे और सुहागा एक भाग लेके गौके दूधमें खरल करके इससे उन कौडियोंके मुख बंद कर देवे. फिर शंखके टुकडे वजनमें आठ भाग ले, और मिट्टीके दो सराव लेकर एकमें चूना भरके उस चूनेके बीचमें शंखके टुकडेको रखके और उस पर उन कौडियोंको रखके आधे शंखके टुकडेको उन कौडियोंके ऊपर रख देवे और चूनेसे दाब ऊपर दूसरे सरावसे ढक देवे और कपडमिट्टी करके एक हाथके गढ्ढेमें आरने उपले भर बीचमें इस संपुटको धर देय और ऊपर फिर ऊपले भरके फूंक देवे जब गजपुट स्वयं शीतल हो जावे तब संपुटको निकाल उसके भीतरसे चूना दूर कर बाकी सबकी भस्मको निकालके खरलमें डालके घोट डाले और उत्तम पात्रमें भरके रख देवे इसको लोकनाथरस कहते हैं. यह लोकनाथ रस छः रत्ती लेकर उन्नीस काली मिरचोंके चूर्णमें मिलायके वादीका रोग होवे तो घीके साथ देवे. तथा पित्तरोग होय तो मक्खनके साथ और कफका रोग होय तो सहतमें मिलाकर देवे तथा अतिसार, क्षय, अरुचि, संग्रहणी, कृशता, मंदाग्नि, खांसी, श्वास और गोला इतने रोग दूर होनेको यह रस देवे इसकी मात्रा लेकर इसके ऊपर घी भातके तीन ग्रास खाय फिर शय्या (खाट) पर विना बिछैयाके एक क्षण मात्र चीत लेट जावे खट्टे पदार्थको त्यागके घृतसे भोजन करे तथा उत्तम मीठा दही भोजनमें खाय जंगली जीवोंका अर्थात् हरिण आदिके मांस घीमें तलके खाय. सायंकालमें जब भूँख लगे तब दूधभात खाय मूंगके बडे घीमें तलके खाय. तिल और आँवले इनका कल्क करके देहमें मालिस कर फिर स्नान करे; अथवा घीकी देहमें मालिस करके स्नान करे. स्नानके शिवाय देहमें लगाना होय तो घीकोही लगावे और स्नानको जल सुहाता २ गरम लेवे. तेलका स्पर्श न करे तथा बेलफल, करेला, बेंगन, छोटी

मछली, इमली, परिश्रम करना, मैथुन, मद्यपान, संधान (अचार), हींग, सोंठ, उडद, मसूर, पेठा, राई, कांजी इन सब वस्तुओंका सेवन त्याग देय, क्रोध करना, दिनमें सोना त्याग देवे, कांसेके पात्रमें भोजन न करे ककार है आदिमें जिनके ऐसे शाक और फल इत्यादि वर्जित हैं इस प्रकार लोकनाथकी पथ्य करे. शुभदिन, शुभवार, पूर्णतिथि, शुक्लपक्ष और अपनेको जिस दिन उत्तम चंद्रमा होवे उस दिन लोकनाथरसकी पूजा करके फिर कुमारी स्त्रीको भोजन करावे तथा सुवर्णादिक दान करके लोकनाथ रसको खाय इसके खानेसे दो घडी पश्चात् देहमें संताप होता है इसके दूर करनेको मिश्री और गिलोयका सत्त्व और वंशलोचन इन तीनोंको एकत्र मिलायके सेवन करे तो संताप दूर हो. खजूर, अनार, दाख, ईखके टुकडे ये पदार्थ थोडे थोडे खाय तो संताप और अरुचिका होना दूर होवे तथा धनियोंको कूट उसकी गिरी निकालके घीमें भून और मिश्री मिलायके उसके साथ लोकनाथ रस खाय तो अरुचि दूर हो. धनिया, गिलोय इनका काढा कर इस काढेमें इस रसको मिलायके पीवे तो ज्वर दूर होय. खस और अडूसा इन दोनोंका काढा कर सहत और मिश्री मिलाय उसमें लोकनाथ रसको मिलायके पीवे. रक्त और कफ, श्वास, खांसी, स्वरभंग ये रोग दूर हों, भांगको भूनके चूर्ण करे उसमें इस रसको मिलायके और सहत डालके रात्रिमें सेवन करे तो जिसको निद्रा न आती हो उसको निद्रा आवे. अतिसार और संग्रहणी ये रोग दूर हों, जठराग्नि प्रदीप्त होवे, संचरनिमक, जंगहिरड, पीपल इन तीन औषधोंका चूर्ण कर इसमें इस लोकनाथ रसको मिलायके गरम जलके साथ पीवे, शूल और अजीर्ण ये दूर हों, सहत और पीपलके साथ लोकनाथ रस सेवन करे तो ज्वर दूर हो, अनारके फलके रसके साथ सेवन करे तो पेटमें दहने तरफ जो तिल्लीका रोग होता है वह और वातरक्त, वमन, बवासीर, नाकसे रुधिरका गिरना ये सब रोग दूर हों. दूबका रस निकाल उसमें खांड मिलाय तथा लोकनाथको डालके नाकमें नस्य देवे तो नाकसे रुधिर गिरना बंद होवे. बेरकी गुठलीके भीतरकी मींगी, पीपल, मोरचंद्रकी भस्म इन तीन औषधोंको एकत्र कर उसमें मिश्री और सहत डाल लोकनाथरस मिलायके सेवन करे तो वमन और हिचकी ये दूर हों, इस प्रकार संपूर्ण जितने पोटली रस हैं उनमें तथा मृगांक तथा हेमगर्भ और मौक्तिकाख्य रसायन इनमें इसी प्रकार विधि करनी चाहिये. इस प्रकार लोकनाथरस कहा है यह लोकनाथ संपूर्ण रोगोंको दूर करता है यह शार्ङ्गधर संहितामें लिखा है और अन्य ग्रंथोंमें भी लिखा है ॥

लघुलोकनाथरस ।

वराटभस्म मंडूरं चूर्णयित्वा घृते पचेत् । तत्समं मरिचं चूर्णं

नागवल्या विभावितम् ॥ तच्चूर्णं मधुना लेह्यमथवा नवनीतकैः। माषमात्रं क्षयं हंति यामे यामे च भक्षितम् ॥ लोकनाथरसो ह्येष मंडलाद्राजयक्ष्मनुत् ॥

अर्थ-कौडिकी भस्म १ भाग, मंडूर १ भाग, काली मिरच २ भाग इनको एकत्र करके घीमें खरल करे जब घी गाढा हो जावे तब नागरवेलपानमें खरल करके मासे २ भरकी गोली बनावे इसको सहत अथवा नवनीतके संग एक एक प्रहरमें सेवन करे तो सामान्य क्षयको दूर करे इसी प्रकार एक मंडल सेवन करनेसे राजयक्ष्माको भी दूर करे इसे लघुलोकनाथरस कहते हैं इसकी भी पथ्य लोकनाथके समान करे ऐसी किसी आचार्यकी संमति है ॥

मृगांकपोटलीरस ।

भूर्जवत्तनुपत्राणि हेम्नः सूक्ष्माणि कारयेत् । तुल्यानि तानि सूतेन खल्वे क्षिप्त्वा विमर्दयेत् ॥ कांचनाररसेनैव ज्वालामुख्यारसेन वा । लांगल्या वा रसैस्तावद्यावद्भवति पिष्टिका ॥ ततो हेम्नश्चतुर्थांशं टंकणं तत्र निक्षिपेत् । पिष्टमौक्तिकचूर्णं च हेमद्विगुणमावपेत् ॥ तेषु सर्वसमं गंधं क्षिप्त्वा चैकत्र मर्दयेत् । तेषां कृत्वा ततो गोलं वासोभिः परिवेष्टयेत् ॥ पश्चान्मृदा वेष्टयित्वा शोषयित्वा च धारयेत् । शरावसंपुटस्यान्ते तत्र मुद्रां प्रदापयेत् ॥ लवणापूरिते भांडे धारयेत्तं च संपुटम् । मुद्रां दत्त्वा शोषयित्वा बहुभिर्गोमयैः पुटेत् ॥ ॥ ततः शीते समाहृत्य गंधं सूतसमं क्षिपेत् ॥ घृष्ट्वा च पूर्ववत्खल्वे पुटेद्गजपुटेन च ॥ स्वांगशीतं ततो नीत्वा गुंजायुग्मं प्रकल्पयेत् । अष्टभिर्मरिचैर्युक्तो कृष्णात्रययुतोऽथवा ॥ विलोक्य देयो दोषादीनेकैका रसरक्तिका । सर्पिषा मधुना वापि दद्याद्दोषाद्यपेक्षया ॥ लोकनाथसमं पथ्य कुर्यात्स्वस्थमनाः शुचिः ॥ श्लेष्माणं ग्रहणीं कासं श्वासं क्षयमरोचकम् । मृगांकोऽयं रसो हन्यात्कृशत्वं बलहानिताम् ॥

अर्थ–सोनेके भोजपत्रके समान बारीक पत्र करके उसके समान भाग शुद्ध पारा लेवे दोनोंको एकत्र करके कचनारके रसमें अथवा ज्वालामुखीके रसमें तथा कटियारीके रसमें जबतक सब मिलकर उत्तम पिट्ठी न होवे तबतक खरल करे फिर सुवर्णकी चतुर्थांश सुहागा और सुवर्णसे दूना मोतीका बारीक चूर्ण तथा सोनेके बराबर गंधक ले सबको एकत्र खरल कर गोला बनावे उसके चारों तरफ कपडा लपेट उस पर मिट्टीका लेप करके धूपमें सुखाय ले फिर मिट्टीके दो सराव ले एकमें उस गोलेको रखके उसके ऊपर दूसरा रख देवे और दोनोंको मिलाय कपडमिट्टी कर देवे मिट्टीके मटकेमें नोन भरके उसमें इस सराव संपुटको रखके ऊपरसे फिर निमक भर देवे फिर इसके मुखको बंद कर उसकी संधियोंको कपडमिट्टीसे बंद कर देवे. फिर इसको गजपुटसे अधिक आरने उपलोंकी अग्निमें रखके फूंक देवे. जब शीतल हो जावे तब निकालके फिर उस पारेकी बराबर गंधक लेकर सबको खरलमें डालके पहले जो औषध कही है उन्हींके रसोंमें खरल करे और पूर्वविधिसे गजपुटकी अग्नि देवे जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल फिर इस संपुटमेंसे औषधी निकाल लेवे इसको मृगांकपोटली रस कहते हैं. यह पोटली रस दो रत्तीके अनुमान आठ मिरचोंके अथवा तीन पीपलोंके साथ देवे तथा दोषोंका तारतम्य देखकर एक रत्ती भी देवे जैसी दोषोंकी अपेक्षा होवे उसी प्रकार घीमें अथवा सहतमें मिलायके सेवन करे तथा अंतःकरणको स्वच्छ करके पवित्र हो लोकनाथरसके समान पथ्य करे. इस प्रकार आचरण करनेसे इस रसायनसे कफरोग, संग्रहणी, खांसी, श्वास, क्षयरोग, अरुचि, शरीरकी कृशता तथा बलहानि ये रोग दूर होवें॥

गोक्षुराद्यघृत ।

दुरालभा श्वदंष्ट्रा च चतस्रः पर्णिनी बला । भागान्पलोन्मितान् कृत्वा पलं पर्पटकस्य च ॥ पचेद्दशगुणे तोये दशभागावशेषितम् । रसे पूते तु द्रव्याणामेषां कल्कं समावपेत् ॥ सठीपुष्करमूलानां पिप्पलीत्रायमाणयोः । तामलक्या किरातस्य तिक्तस्य कटुकस्य च ॥ पलानां सारिवायाश्च तत्पिष्ट्वा कर्षसंमितान् । तैः साधयेद्घृतप्रस्थं क्षीरं द्विगुणितं भिषक् ॥ ज्वरं दाहं तमःश्वासं कासं पार्श्वशिरोरुजम् । तृष्णां छर्दिमतीसारमेतत्पानं व्यपोहति ॥

अर्थ-गोखरू, धमासा, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, खरेंटी, पित्तपापडा ये आठ औषध चार २ तोले लेवे इनको दस गुने जलमें डालके औटावे और काढा करे जब दशांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे फिर कचूर, पुहकरमूल, पीपल, त्रायमाण, हरड, चिरायता, तेजबल, कुटकी, सारिवा ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे इनका कल्क तथा ६४ तोले घी, १२८ तोले दूध डालके घृतपाककी विधिसे इस घृतको सिद्ध करे यह गोक्षुरादिघृत ज्वर, दाह, तमकश्वास, पसली और मस्तक इनके शूलको तथा प्यास, वमन और अतिसार इनको नाश करे ॥

जीवंत्यादिघृत ।

जीवंतिकावत्सकयष्टिकानां सपौष्करं गोक्षुरके बले द्वे । नीलोत्पलं तामलकं यवासा सत्रायमाणा मगधा च कुष्ठम् ॥ द्राक्षामलक्या रसमेकप्रस्थं प्रस्थद्वयं छागलकं पयश्च । प्रस्थं तथा योज्य दधिश्च धीमान् पचेत् घृतं वा मृदुवह्निना तत् ॥ पाने प्रशस्तं हितमेतदेव नस्ये च बस्तौ विनियोजयेत्तु । विनाशयत्याशु च राजयक्ष्महलीमकं कामलपांडुरोगम् ॥ मूर्छाभ्रमश्लेष्मशिरोर्तिशूलं मदाश्मरीं वा गुदकीलकुष्ठम् । शिरोगदं नाशमुपैति तस्य नस्यप्रदानेन नियोजितेन ॥ पानेन पाण्ड्वामयराजयक्ष्मा नाशं समायाति हलीमकं च । बस्तिप्रदानेन गुदोद्भवश्च रोगो विनाशं समुपैति पुंसाम् ॥ विसर्पविस्फोटकमृंक्षणेन नश्यंत्यनेनैव गदाः समस्ताः ॥

अर्थ-गिलोय, कुडेकी छाल, मुलहटी, पुहकरमूल, गोखरू, खिरेंटी, गंगेरन, नीला कमल, भूय आवला, धमासा, त्रायमाण, पीपल, कूठ, दाख और आमले इनका रस ६४ तोले, बकरीका दूध १२८ तोले, दही ६४ और घी ६४ तोले ले सबको एकत्र करके लोहेकी कढाईमें भरके चूल्हेपर चढावे और मंद २ अग्निसे पचावे इस घृतके नस्य देनेसे तथा पान करनेसे तथा बस्ति इन कर्मोंमें देवे तो तत्काल राजयक्ष्मा, हलीमक, कामला, पांडुरोग इनको तथा बस्तिकर्मसे गुदासंबंधी रोगोंका तथा देहमें लगानेसे विसर्प, विस्फोटक इनको और अनेक व्याधियोंको नाश करे ॥

बलाद्यघृत ।

बला श्वदंष्ट्रा कलशी बृहती धावनी स्थिरा । निंबपर्पटकं मुस्ता त्रा-

यमाणं दुरालभा ॥ कृत्वा कषायं पेयार्थं दद्यात्तामलकी सठी ॥ द्राक्षा पुष्करमूलं च मेदा ह्यामलकानि च ॥ घृतं पयश्च तत्सिद्धं सर्पिर्ज्वरहरं परम् । क्षयकासप्रशमनं शिरःपार्श्वरुजापहम् ॥

अर्थ–खिरेटी, गोखरू, पिठवन, कटेरी, बडी कटेरी, सालपर्णी, नीमकी छाल, पित्तपापडा, नागरमोथा, त्रायमाण, धमासा, हरड, कचूर, दाख, पुहकरमूल, मेदा और आँवला इनका काढा, तथा दूध, घी, डालके घृतपाककी विधिसे इस घृतको सिद्ध करे तो यह अत्यंत ज्वरनाशक, मोह और क्षय, मस्तक और पसली इनके शूलको नाश करे. इसको बलादिघृत कहते हैं ॥

कोलाद्यघृत ।

कोललाक्षारसे तद्वत्क्षीराष्टगुणसाधितम् ॥ कल्कैः षडंगदार्वीत्वग्द्राक्षाक्षोटफलान्वितम् ॥ घृतं खर्जूरमृद्वीकामधूकैः सपरूषकैः । सपिप्पलीकं वैस्वर्यकासश्वासरुजापहम् ॥

अर्थ–बेरकी लाखके काढेमें अष्टमांश दूध तथा गोखरू, दारुहलदी, दालचीनी, दाख, अखरोट, खजूर, गोस्तनी मुनक्का, मुलहटी, फालसे और पीपल इनका कल्क करके इसमें घी सिद्ध करे यह घृत स्वरभंग, खांसी और श्वास इनका नाश करे है ॥

कणाद्यघृत ।

कणापलं पंचगुडांभसश्च सज्यं घृतं वै विपचेत्समांशम् ।
पानेऽथवा भोजनके प्रशस्तं क्षये च राजक्षयनाशहेतुः ॥

अर्थ–पीपल २० तोले, गुडका जल २० तोले और घी ये सब समान भाग ले सबको एकत्र कर घृत सिद्ध करे इसको पीनेके वास्ते अथवा भोजन करनेको देवे तो क्षय और राजयक्ष्मा इनको दूर करे ॥

पाराशरघृत ।

यष्टी बला गुडूची च पंचमूलं समांशकम् । क्काथेन सदृशं धात्रीरसं चेक्षुरसं तथा ॥ विदार्याया रसं चैव घृतं च समभागिकम् ॥ क्षीरं दधिसमं चात्र नवनीतं तु तत्समम् ॥ द्राक्षातालीससंयुक्तं पथ्यालाभेन योजयेत् ॥ सिद्धं घृतं च पानीये नस्ये बस्तौ प्रदापयेत् । हरते राजयक्ष्माणं पांडुरोगं च दारु-

णम् ॥ हलीमकार्शसी नित्यं रक्तपित्तनिवारणम् । लेपनं दुष्टवीसर्पपित्तदग्धव्रणापहम् ॥

अर्थ-मुलहटी, खिरेटी, गिलोय और पंचमूल इन सबको समान भाग लेकर काढा करे इस काढेके समान आँवलेका रस ईखका रस विदारी कंदका रस और घी, दूध, दही, मक्खन, दाख, तालीसपत्र ये यथालाभ करके घीको सिद्ध करे इस घीके खानेसे नस्य अथवा बस्ति इनमें देवे तो क्षय, पांडुरोग, कामला, हलीमक, बवासीर, रक्तपित्त, इनको नाश करे तथा इसकी देहमें मालिस करनेसे पित्त और दग्ध व्रण इनको दूर करे ॥

जलाद्यघृत ।

जलद्रोणे विपक्तव्यं यावत्पादावशेषितम् । पिप्पली चंदनं लोध्रं ह्रीबेरोशीरपर्पटम् ॥ पाठाभूनिंबयष्ट्याह्वा त्रायंती नीलमुत्पलम् । मुस्तकेंद्रयवा शुंठी कटुकं सदुरालभम् ॥ त्वक्पत्रं वृषमूलं च कल्पैरर्धपलैर्भिषक् । अजाक्षीरेण तुल्येन घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ हंति यक्ष्माणमत्युग्रं रक्तपित्तं त्रिदोषजम् । श्वासकासक्षतक्षीणदाहशोकरुजापहम् ॥

अर्थ-१०२४ तोले जलमें पीपल, रक्तचंदन, लोध्र, नेत्रवाला, खस, पित्तपापडा, पाढ, चिरायता, मुलहटी, त्रायंती, काला कमल, नागरमोथा, इन्द्रजौ, सोंठ, कुटकी, धमासा, दालचीनी और अडूसेकी जड ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे सबको एकत्र करके चतुर्थांश शेष काढा करे. फिर इसको छान लेय और काढेके समान बकरीका दूध तथा ६४ तोले घी, इन सबको एकत्र करके औटावे जब घृतमात्र शेष रहे तब उतार लेवे यह घी क्षयरोग, त्रिदोषजन्य रक्तपित्त, श्वास, खांसी, क्षतक्षीण, दाह, तथा शोक इनको नाश करे ॥

वासाद्यघृत ।

वासामृतारिष्टनिदिग्धिकानां रसेश्वगंधेभबलार्जुनानाम् ।
सिद्धं सपंचोषणपुष्कराणां कल्कैर्घृतं छागपयस्तु शोषे ॥

अर्थ-अडूसा, गिलोय, नीमकी छाल, कटेरी, असगंध, अतिबला, कोह, इनके काढेमें घी, सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, पीपरामूल, पुहकरमूल इनके कल्ककी बराबर बकरीका दूध डालके घीको सिद्ध करे तो यह वासादिघृत क्षयरोगको नाश करे है ॥

खर्जूरादिघृत।

घृतं खर्जूरमृद्वीकामधूकैः सपरूषकैः।
सपिप्पलीकैर्वैस्वर्यकासश्वासज्वरापहम् ॥

अर्थ-खजूर, दाख, मुलहटी, फालसे और पीपल इनसे सिद्ध करे हुए घीके सेवन करनेसे स्वरभंग (आवाजका बैठ जाना), खांसी, श्वास, ज्वर इनका नाश करे ॥

पिप्पल्याद्यघृत।

पिप्पलीगुडसंयुक्तं छागमांसयुतं घृतम्।
एतदग्निविवृद्ध्यर्थं प्रदेयं क्षयकासिनाम् ॥

अर्थ-पीपल और गुड तथा बकरेका मांस इनसे सिद्ध करा हुआ घी क्षयरोग और खांसी इनपर देना चाहिये ॥

दूसरा प्रकार।

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः।
सयावशूकैश्च क्षीरं स्रोतसां शोधनं परम् ॥
कल्कोऽत्र पादिकः कार्यः क्षीरं वापि चतुर्गुणम् ॥

अर्थ-पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ और जवाखार इनसे सिद्ध करा हुआ घृत स्रोत (देहकी छिद्रों) की शुद्धि करे है. इस जगह औषधोंका कल्क १ भाग और घी ४ भाग इस प्रमाणसे लेकर घी बनावे ॥

दशमूलाद्यघृत।

दशमूलीशृतात्क्षीरात्सर्पिर्यदुदियान्नवम्।
सपिप्पलीकं सक्षौद्रं तत्परं स्वरशोधनम् ॥
शिरःपार्श्वांगशूलघ्नं कासश्वासज्वरापहम् ॥

अर्थ-दशमूल डालके औटे हुए दूधको जमाय घी निकाल लेवे यह घी, सहत और पीपल इनके साथ सेवन करे तो स्वरको शुद्ध करता और मस्तक, कूख इनके शूलका, खांसी, श्वास और ज्वर इनका नाशक है ॥

तिलोंका तैल।

क्षीरे चतुर्गुणे तैलं प्रस्थद्वयातिलोद्भवम्।
शतशः पावितं यष्टीपलकल्केन यत्नतः ॥

पानन्स्यादिभिर्यक्ष्महरमामयपांडुजित् ।
ऊर्ध्वजत्रुगरोन्मादरक्तपित्तविसर्पनुत् ॥

अर्थ-१२८ तोले तिलोंका तेल, ५१२ तोले दूध, ४ तोले मुलहटीका चूरा इनको एकत्र कर बहुत वार औटावे फिर छानके पीवे तो राजयक्ष्मा, पांडुरोग, हसलीके ऊपरके भागमें होनेवाले रोग, विषके रोग, उन्माद, रक्तपित्त और विसर्प इन रोगोंको दूर करे ॥

चंदनादितैल ।

चंदनांबुनखैर्याम्यं यष्ट्या शैलेयपद्मकम् । मंजिष्ठा सरलं दारु सेव्यैलं पूतिकेसरम् ॥ हरिद्रा सारिवा तिक्ता लवंगागुरु-कुंकुमम् । त्वग्रेणुनलिका चेति तैलं मस्तु चतुर्गुणम् ॥ लाक्षार-ससमं सिद्धं ग्रहघ्नं बलवर्धनम् । अपस्मारज्वरोन्मादकृत्याल-क्ष्मीविनाशनम् ॥ आयुःपुष्टिकरं चैव वशीकरणमुत्तमम् । विशेषात्क्षयरोगघ्नं रक्तपित्तहरं परम् ॥

अर्थ-चंदन, नेत्रवाला, नख (सुगंधद्रव्य), लाल चंदन, मुलहटी, शिलाजीत, पद्माख, मँजीठ, सरलद्रव्य, देवदारु, खस, जवाद हलदी, सारिवा, कुटकी, लौंग, अगर, केशर, दालचीनी, रेणुकबीज और नलिका ये सब वस्तु समान भाग ले और इन सबसे चौगुना तेल तथा दहीका जल और सबकी बरावर लाखका काढा लेवे सबको एकत्र करके तेल सिद्ध करे यह ग्रहनाशक, बल बढानेवाला, मृगी, ज्वर, उन्माद रोग, कृत्या (घातमूठ) और अलक्ष्मी इनको नाश करे तथा आयुष्य, पुष्टि और वशीकरण इनको करे है तथा विशेष करके क्षयरोग और रक्तपित्त इनको नाश करे है ॥

लक्ष्मीविलासतैल ।

एलाश्रीखंडरास्नाजतुनखशशितक्कोलकं चाथ मुस्ता वल्कत्व-ग्दारुकृष्णागरुतगरजटाकुष्ठमेतत्समांशम् । त्रैगुण्यं कालरालं सुदृढडमरुकायंत्रसिद्धं तु तैलं गंधैः पुष्पैश्च भाव्यं परिमलल-लितं नामतो गंधतैलम् ॥ एतल्लक्ष्मीविलासं जनयति जगती-नायकैः संप्रयोगं युक्त्या रोगान् निखिलगदहरं वातसंघात-हंतृ । पीतं तांबूलवल्लीदलमिलितमलं जाठरे वह्निसिद्धं कु-र्याद्दुर्नामयक्ष्मक्षयमपि नितरामंगसंमर्दनेन ॥

अर्थ–इलायची, चंदन, रासना, लाख, नखद्रव्य, कपूर, कंकोल, नागरमोथा, खिरेटी, दालचीनी, हलदी, पीपल, अगर, तगर, जटामांसी, कूठ ये समान भाग ले. तिगुनी राल लेवे. इन सब पदार्थोंको डमरूयंत्रमें डालके तेल निकाल लेवे. इसे लक्ष्मीविलासतैल कहते हैं यह अत्यंत सुगंध करके युक्त इसको गंधतैलभी कहते हैं. यह स्त्रीपुरुषोंमें प्रीति उत्पन्न करे है. युक्तिपूर्वक इसका उपयोग करनेसे अनेक रोग तथा अनेक वादीके रोग इनको नाश करे. इसको पानमें लगायके खाय तो जठराग्निको दीप्त करे तथा देहमें लगानेसे बवासीर, क्षयरोग इनको नाश करे है ॥

व्यवायजन्यशोष ।

व्यवायशोकवार्धक्यव्यायामाध्वप्रशोषितान् ।
व्रणोरःक्षतसंज्ञौ तु शोषिणो लक्षणं शृणु ॥

अर्थ–अति मैथुनका शोष, शोकशोषी, वार्द्धक्यशोषी, व्यायामशोषी, मार्गशोषी व्रणशोषी और उरःक्षतशोषी इनके न्यारे न्यारे लक्षण कहता हूं ॥

व्यवायशोषिलक्षण ।

व्यवायशोषी शुक्रस्य क्षयलिंगैरुपद्रुतः ।
पांडुदेहो यथापूर्वं क्षीयंते चास्य धातवः ॥

अर्थ–व्यवायशोषी (अति मैथुनसे क्षीण भया), (सुश्रुत) के कहे अनुसार शुक्रक्षयलक्षणोंसे (शुक्रक्षय होनेसे लिंग और अंडकोशमें पीडा होय मैथुन करनेमें अशक्ति और बलसे मैथुन करे तो बहुत देरमें शुक्रका स्राव होय और वह स्राव बहुत अल्प होय अथवा रुधिरका स्राव होय) पीडित होय उसके देहका वर्ण पीला हो जाय और शुक्रसे मज्जा मज्जासे हड्डी ऐसे उलटे धातु क्षीण होते जाते हैं ॥

व्यवायदोषचिकित्सा ।

व्यवायशोषिणं क्षीररसमांसाज्यभोजनैः ।
सकलैर्मधुरैर्हृद्यैर्जीवनीयैरुपाचरेत् ॥

अर्थ–जो प्राणी अत्यन्त मैथुनके करनेसे क्षीण हो गया हो उसको दूध, मांस, घी इन करके युक्त भोजन करे तथा संपूर्ण मिष्ट पदार्थ, हृदयको जो प्रिय हों, आयुष्यवर्धक ऐसी औषधोंका उपचार करे ॥

शोकशोषिलक्षण ।

प्रध्मानशीलः स्रस्तांगः शोकशोष्यपि तादृशः ।
विना शुक्रक्षयकृतैर्विकारैरुपलक्षितः ॥

अर्थ-शोकशोषी अर्थात् शोचसे जिसको क्षय हो वह चिंता करे और हाथ, पैर गलने लगे तथा शुक्रक्षयव्यतिरिक्त शोषवान् हो और पांडु देह होय ऐसा शोचसे क्षयवाला पुरुष होता है ॥

शोकशोषिचिकित्सा ।

हर्षणाश्वासनैः क्षीरैः स्निग्धैर्मधुरशीतलैः ।
दीपनैर्लघुभिश्चान्नैः शोकशोषमुपाचरेत् ॥

अर्थ-जो प्राणी शोकके कारण क्षीण हो उसको हर्ष (प्रसन्न करना), आश्वासन (धीरज बंधाना) तथा क्षीर, स्निग्ध, मधुर, शीतल, दीपन और हलके ऐसे अन्न इन पदार्थों करके उपचार करे ॥

जराशोषलक्षण ।

जराशोषी कृशो मंदवीर्यबुद्धिबलेंद्रियः ।
कंपनो रुचिमान्भिन्नः कांस्यपात्रहतस्वरः ॥
ष्ठीवति श्लेष्मणा हीनो गौरवारुचिपीडितः ।
संप्रस्रुतास्यनासाक्षिः शुष्करूक्षमलच्छविः ॥

अर्थ-जरा (बुढापा) शोषी मनुष्य कृश होय है उसके वीर्य, बुद्धि, बल और इन्द्रियें मन्द हो जाँय, कंप होय, अन्नमें अरुचि, फूटे कांसेके बासनको लकडीसे बजानेसे जैसा शब्द होय ऐसा शब्द होय, कफरहित वारंवार थूके (अर्थात् कफके निकालनेके वास्ते यत्न करे तथापि कफ नहीं निकले), शरीर भारी रहे, अरुचिसे पीडित (पुनः अरुचि ग्रहणविशेषताद्योतकके वास्ते कही है) मुख, नाक और नेत्र इनसे स्राव होय, मल शुष्क उतरे और देह की कांति निस्तेज होय ॥

अध्वशोषलक्षण ।

अध्वप्रशोषी स्रस्तांगः संभृष्टपरुषच्छविः ।
प्रसुप्तगात्रावयवः शुष्कक्लोमगलाननः ॥

अर्थ-अध्वप्रशोषी (अति मार्ग चलनेसे क्षीण हुआ) मनुष्यके हाथ, पैर, शिथिल हो जावें उसके देहका वर्ण भूजे पदार्थके सदृश और खरदार होय है सर्व देहमें प्रसुप्तता हृदयमें प्यासका स्थान है सो गला और मुख इनका सूखना शंका-क्यों जी जराशोषीके अनन्तर व्यायामशोषीके लक्षण कहने चाहिये अध्व (मार्ग) शोषीके लक्षण नहीं कहने चाहिये फिर माधवाचार्यने अध्वशोषीके लक्षण क्यों कहे । उत्तर-अध्वशोषीके लक्षण इस वास्ते पहले कहे कि व्यायामशोषीमें

इसके सब लक्षण मिलते हैं । अच्छा आप ऐसे कहोगे तो व्यायामशोषीमें अध्वशोषीके कौनसे लक्षण नहीं मिलते ? * उत्तर–तुमने कहा सो ठीक है परंतु अध्वशोषीमें उरःक्षत आदि चिह्न नहीं है इससे पूर्व अध्वशोषीके लक्षण कहे ॥

अध्वशोषचिकित्सा ।

आस्यासुखैर्दिवास्वप्नैः शीतैर्मधुरबृंहणैः ।
अन्नमांसरसाहारैरध्वशोषमुपाचरेत् ॥

अर्थ–बैठनेका सुख, दिनमें सोना और शीतल, मधुर, पौष्टिक ऐसे अन्न, मांसका रस इनके सेवन इन उपायोंसे अध्वशोष (रास्तेके चलने करके जो सूख गया हो उस) की चिकित्सा करे ॥

व्यायामशोषलक्षण ।

व्यायामशोषी भूयिष्ठमेभिरेवमुपद्रुतः ।
लिंगैरुरःक्षतसमैः संयुक्तश्च क्षतं विना ॥

अर्थ–व्यायाशोषीके (अत्यंत दंड कसरत आदि श्रमसे क्षीण) मनुष्य, विशेष करके अध्वशोषीके लक्षण स्रस्तांगतादियुक्त होय है, अर्थात् जो लक्षण अध्वशोषीमें थोडे थोडे होते हैं वे व्यायामशोषीमें अधिक होते हैं और उस मनुष्यके घावके विना ही उरःक्षतके लक्षण मिलते हैं उरःक्षतके लक्षण सुश्रुतमें लिखे हैं ॥

व्यायामशोषचिकित्सा ।

व्यायामशोषिणं स्निग्धैः क्षतक्षयकृतैर्हितैः ।
उपाचरेज्जीवनीयैर्विधिना श्लैष्मिकेण तु ॥

अर्थ–जो प्राणी दंड, कसरत आदि परिश्रमके करनेसे क्षीण हो गया हो उसको स्निग्ध, क्षतक्षय पर जो पदार्थ हितकारी हैं तथा शरीरको हितकारी, कफ करनेवाले और जीवनीयगणोक्त औषध इत्यादिक उपचार करें ॥

व्रणशोषलक्षण ।

रक्तक्षयाद्वेदनाभिस्तथैवाहारयंत्रणात् ।
व्रणिनश्च भवेच्छोषः स चासाध्यतमो मतः ॥

अर्थ–रुधिरके क्षयसे फोडाकी पीडासे तैसे ही आहारके घटनेसे व्रणी पुरुषके जो शोष होय सो अत्यंत असाध्य जानना ॥

व्रणशोष ।

व्रणशोषं जयेत्स्निग्धैर्दीपनैः स्वादुशीतलैः ।
ईषदम्लैरनम्लैर्वा यूषमांसरसादिभिः ॥

अर्थ-चिकने, दीपन, मीठे, कुछ २ खट्टे और मिष्ट ऐसे यूष मांस रस इत्यादिकसे व्रणशोष अर्थात् जिसके घाव होनेसे क्षीण हो उसका यत्न करे ॥

रसवर्द्धन ।

गुडूची शृंगबेरं च यवानां क्वथितं जलम् ।
मरीचैः क्वथितं दुग्धं पाने रात्रौ प्रशस्यते ॥
रसस्य तेन वृद्धिः स्यात्क्षयं शीघ्रं विमुंचति ॥

अर्थ-गिलोय, अदरख और जौ इनका काढा अथवा काली मिरच डालके तपाय हुआ दूध पीवे तो रसधातुकी वृद्धि होवे और तत्काल रसक्षयका नाश होय ॥

रक्तवर्द्धन ।

गोधूमयवशालीनां जांगलानि विशेषतः ।
घृतदुग्धसिताक्षौद्रमरीचानि च पिप्पली ॥
पानं शस्तं मनुष्याणां रक्तवृद्धिकरं परम् ॥

अर्थ-गेहूं, जौ, शालीधान्य, जंगली जीवोंका मांस, घी, दूध, मिश्री, सहत, काली मिरच और पीपल इनका सेवन करे तो मनुष्योंके रुधिर वृद्धि करनेको यह यत्न उत्तम है ॥

मांसवर्द्धन ।

अनूपानि च धान्यानि लशुनादीनि कल्पयेत् ।
कुल्यासघृतदुग्धादीन् सेवयेन्मधुराणि च ॥

अर्थ-जलसमीप रहनेवाले जीवोंका मांस और अनूपदेशके धान्य, लहसन, घी, दूध और मधुर पदार्थ ये भक्षण करे तो मांसवृद्धि होय ॥

मेदवर्धन ।

तालिसाद्यं हितं चूर्णसेवनं मधुरांस्तथा ।
रसांश्च जांगलान्दद्यात् सेवनार्थं भिषग्वरः ॥

अर्थ-तालीसादिक चूर्ण, मधुर रस, तथा जंगली जीवोंके मांसका रस ये पदार्थ जिस प्राणीकी मेदाधातु क्षीण हो गई हो उसको देवे ॥

दूसरा प्रकार ।

सीतोपलादिकं चूर्णमजाक्षीरं सकोलकम् ।
हितं पानं क्षये चैव कल्पयेत्प्रातराशनैः ॥

अर्थ–सितोपलादि चूर्ण, बकरीका दूध, वनमें रहनेवाला सूअरका मांस तथा हितकारी पदार्थोंका पान ये सब वस्तुओंको वैद्य प्रातःकाल खानेको देवे तो मेदाधातुकी वृद्धि होवे ॥

अस्थिवर्धन ।

घृतपक्वानि शस्तानि क्षीराणि विविधानि च ।
चंदनादीनि द्राक्षादिचूर्णानि च भिषग्वरैः ॥
जांगलानि च सर्वाणि सेवनीयानि पुत्रक ।
मधुराणि तथान्नानि सर्वाणि संप्रयोजयेत् ॥

अर्थ–घृतपक्व पदार्थ (मोमनकी पूडी, कचौडी), दूधके पदार्थ, चंदनादि और द्राक्षादि चूर्ण, जंगली जीवोंका मांस मधुर अन्न और पान ये सब कुशलवैद्य हड्डी क्षीण हो गईहो उसके बढानेको देवे ॥

शुक्रवृद्धि ।

शुक्रक्षयेऽम्लपक्वानि सराणि च विशेषतः ।
नवनीतं तथा क्षीरं मधुराणि च सेवयेत् ।

अर्थ–जिस प्राणीका शुक्र (वीर्य) क्षीण हो गया हो उसको अम्ल पदार्थोंसे सिद्ध करा हुआ अन्न तथा विशेष करके दस्तावर पदार्थ, मक्खन, दूध और मधुर रस ये देने चाहिये ॥

दूसरा प्रकार ।

कर्कटीमूलपयसा विदारीकंदशाल्मली ।
सिताढ्यं च हितं पानं शस्यते मधुना सह ॥

अर्थ–ककडीकी जडको पीसके दूधमें मिलाय लेवे तथा विदारीकंद, सेमरका मूसला, तथा मिश्री और सहत मिलायके पीवे तो शुक्रकी क्षीणता दूर होवे ॥

ककडीका रस वांतिपर ।

पिबेद्वांतिप्रशांत्यर्थं क्षौद्रं छिन्नरुहारसम् ।

मातुलुंगस्य मूलं वा लाजाचूर्णं ससैंधवम् ॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तं खादेद्वांतिप्रशांतये ॥

अर्थ-क्षयरोगमें वांति (वमन) नाश करनेको गिलोयका रस, सहत अथवा बिजोरे-की जड, खीलोंका चूरा, सैंधा निमक, पीपल और सहत इनको एकत्र करके पीवे तो वमन होना शांत होवे ॥

दूसरा प्रकार।

रजनी पूगखंडं च निष्कैकं वांतिनाशकम् ।
निष्कार्धं टंकणं वाथ काकमाचीद्रवैः पिबेत् ॥
सुगंधं वा पिबेत्खादेत्सर्वं वांतिप्रशांतये ॥

अर्थ-हलदी, सुपारी और मिश्री इनका एक तोला चूर्ण सेवन करे तो वांतिके नाश करे अथवा आधा तोला मकोयके रसमें सुहागा मिलायके पीवे अथवा सुगंधित पदार्थोंको पीवे वा खाय तो सर्व प्रकारकी वांति (रद्दी) की शांति होवे ॥

रक्तवांतिपर।

आलक्तकरसैः क्षौद्रं रक्तवांतिहरं परम् ।
पुष्यार्के काकतुंडयास्तु मूलं गोक्षीरमर्कटम् ॥
रक्तवांतिहरं पेयं सदाहे निष्कनिष्ककम् ॥

अर्थ-लाखका रस और सहत इनको एकत्र करके पिलावे अथवा काकडोडीकी जड पुष्य नक्षत्र पर जब सूर्य आवे तब उखाडी हो उसको गौके दूधमें औटायके देवे वह दाहयुक्त रुधिरकी वांतिको नाश करे ॥

उशीरादिचूर्ण।

उशीरं तगरं शुंठी कंकोलं चंदनद्वयम्। लवंगं पिप्पलीमूलं कृष्णैला नागकेसरम्॥ मुस्तामलककर्पूरं तवक्षीरं च पत्रकम् । कृष्णागरुसमं चूर्णं सिता स्यादष्टमांशतः ॥ रक्तवांतिं च हृत्तापं नाशयेन्नात्र संशयः ॥

अर्थ-खस, तगर, सोंठ, कंकोल, लाल चंदन, सपेद चंदन, लौंग, पीपरामूल, पीपल, इलायची, नागकेशर, नागरमोथा, आँवला, कपूर, तवाखीर, पत्रज, काली अगर ये समान भाग लेवे तथा इन सबके अष्टमांश मिश्री मिलायके चूर्ण करे यह रक्तवांति तथा हृदयका संताप इनको नष्ट करे ॥

श्लेष्मापर ।

विकारे श्लेष्मणो जाते भक्षयेत्कदलीफलम् ।
भृष्टं तन्मरिचैः साज्यं हंति श्लेष्माणमुल्बणम् ॥

अर्थ-कफविकार होनेसे केलाकी पकी हुई फलीको भून सहत और काली मिरचके चूर्णमें मिलायके खाय तो बढे हुए कफको नाश करे ॥

कुस्तुंबर्यादिचूर्ण ।

घृतं कुस्तुंबरीचूर्णं पाययेच्छर्करायुतम् ।
एलामरीचसंयुक्तं खादेदरुचिशांतये ॥

अर्थ-धनिया, इलायची, काली मिरच इनके चूर्णको घी मिलायके खाय तो अरुचिनाश होय ॥

अरुचिपर ।

खादेदरुचिशांत्यर्थमार्द्रकं वा समाक्षिकम् ॥

अर्थ-अरुचि दूर करनेको अदरखका रस मिलायके पीवे ॥

दाहपर ।

कांचनारस्य त्वक्पिष्टं सजीरं तापनाशकम् ।
कर्पूरेण समायुक्तं रसं तापे प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-कचनारकी छालको कूटकर रस निकाल लेवे उसमें जीरेका चूर्ण और कपूर डालके देवे तो संतापका नाश ॥

शोषपर ।

कोकिलाक्षस्य बीजैर्वा जीरकेण गुडेन वा ।
वमने चास्य शोषे वा फलं जात्याः प्रशस्यते ॥
मत्स्याक्षी पाटला मेघनादमूलं च शोषजित् ॥

अर्थ-तालमखाने, जीरा और जायफल इनका चूर्ण गुडके साथ देवे किंवा मत्स्याक्षी (मछेली), पाढर और चौलाई इनकी जड देवे तो शोषरोग नष्ट होवे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे राजयक्ष्मरोगनिदानचिकित्सा समाप्त ।

उरःक्षतक्षयनिदानम्।

धनुरायम्यतोऽत्यर्थं भारमुद्वहतो गुरुम्। युध्यमानस्य बलिभिः पततो विषमोच्चतः॥ वृषं हयं वा धावंतं दम्यं चान्यं निगृह्णतः। शिलाकाष्ठाश्मनिर्घातान्क्षिपतो निघ्नतः परान्॥ अधीयानस्य वात्युच्चैर्दूराद्वा व्रजतो भृशम्। महानदीं चातरतो हयैर्वा सह धावतः॥ सहसोत्पततो दूरं तूर्णं वापि प्रनृत्यतः। तथान्यैः कर्मभिः क्रूरैर्भृशमभ्याहतस्य च॥ विक्ष्यते वक्षसि व्याधिर्बलवान्समुदीर्यते। स्त्रीषु चातिप्रसक्तस्य रूक्षाल्पप्रमिताशिनः॥ उरो विरुज्यतेऽत्यर्थं भिद्यतेऽथ विदह्यते। प्रपीड्यते तथा पार्श्वे शुष्यत्यंगं प्रवेपते॥ क्रमाद्वीर्यं बलं वर्णो रुचिरग्निश्च हीयते। ज्वरो व्यथा मनोदैन्यं विड्भेदाग्निवधावपि॥ दुष्टः श्यावः सदुर्गंधः पीतो विग्रथितो बहु। कासमानस्य चाभीक्ष्णं कफस्रावः प्रवर्तते॥ स क्षती क्षीयतेऽत्यर्थं तथा शुक्रौजसः क्षयात्॥

अर्थ-बहुत तीरंदाजी करनेसे बहुत भारी वस्तु उठानेसे बलवान् पुरुषके साथ युद्ध करनेसे ऊंचे स्थानसे गिरनेसे बैल घोडा हाथी ऊंट इत्यादिक दौडते हुओंको थामनेसे भ री शिला लकडी पत्थरनिर्घात (अस्त्रविशेष) इनके फेंकनेसे शत्रुको मारनेवाला जोरसे वेदादिक शास्त्रको पढनेसे अथवा दूर दिशावर शीघ्र चलकर जानेसे गंगा यमुनादि महानदीको तरनेवाला अथवा घोडेके साथ दौडनेवाला अकस्मात् कला खानेवाला जल्दी जल्दी बहुत नाचनेसे इस प्रकार दूसरे मल्लयुद्धादि क्रूर कर्म करनेसे उर (छाती) फट जातीहै ऐसे पुरुषकी छाती दूखनेसे बलवान् उरःक्षतरूप व्याधी उत्पन्न होय है और बहुत मैथुन करे तथा रूखा थोडा कुसमय तथा छातीमें चोट लगनेसे अत्यंत स्त्रीरमण करनेसे और रूखा थोडा और अनुमानका भोजन करनेवालेके पूर्वोक्त ऐसे लक्षण युक्त पुरुषका हृदय फटेके सदृश मालूम हो अथवा हृदयके दो टूक कर डाले ऐसा मालूम होय और हृदयमें अत्यंत पीडा होय और उसके पसवाडोंमें अत्यंत पीडा होय अंग सब सूखने लगे तथा थरथर कांपने लगे और शक्ति मांस वर्ण रुचि और अग्नि ये सब क्रमसे घटने लगे ज्वर रहे व्यथा होय मनमें सन्ताप दीन हो जाय अग्नि मन्द होनेसे दस्त होने लगे और वारंवार खांसते खांसते दुष्ट काला अत्यन्त दुर्गन्धयुक्त पीला गांठके समान

बहुत और रुधिर मिला ऐसा कफ गिरे इस प्रकार क्षतरोगी अत्यंत क्षीण होवे सो केवल क्षतसेही क्षीण हो जाय ऐसा नहीं किन्तु स्त्रीसेवन करनेसे शुक्र और ओज (सब धातुओंका तेज) इनका क्षय होनेसे ये मनुष्य क्षीण होय है ॥

उरःक्षतके पूर्वरूप ।

अव्यक्तं लक्षणं तस्य पूर्वरूपमिति स्मृतम् ॥

अर्थ–उस उरःक्षतके अप्रगट लक्षणोंको पूर्वरूप कहते हैं ॥

क्षतक्षीणके असाध्यलक्षण ।

उरोरुक्छोणितच्छर्दिकासो वैशेषिकः क्षते ।
क्षीणे सरक्तमूत्रत्वं पार्श्वपृष्ठकटिग्रहः ॥

अर्थ–क्षतक्षीण रोगीके हृदयमें पीडा होय रुधिरकी उलटी करे और विशिष्ट कास (अर्थात् पूर्व कहे जो दुष्टश्वासादि लक्षण उन्होंसे युक्त होय) और रुधिरयुक्त मूत्रका उतरना पसवाडे पीठ और कमर इनमें पीडा होय ॥

असाध्यलक्षण ।

अल्पलिंगस्य दीप्ताग्नेः साध्यो बलवतो नवः । परिसंवत्सरो याप्यः सर्वलिंगं विवर्जयेत् ॥ परं दिनसहस्रं तु यदि जीवति मानवः । सुभिषग्भिरुपक्रांतस्तरुणः शोषपीडितः ॥

अर्थ–जिसमें थोडे लक्षण मिलते हों और जिसकी अग्नि दीप्त होय ऐसे पुरुष बलवान्के होय तथा रोग नवा हो तो वह साध्य है और रोगको भये एक वर्ष व्यतीत हो गया सो याप्य (साध्यासाध्य) है और जिसमें सर्व लक्षण मिलते होंय सो असाध्य है उसको वैद्य त्याग देय ॥

उरःक्षतक्षयचिकित्साक्रम ।

यद्यच्च तर्पणं शीतमविदाहि हितं लघु ।
अन्नपानं निषेव्यं तत्क्षतक्षीणैः सुखार्थिभिः ॥

अर्थ–जो जो पदार्थ तृप्ति करनेवाले, शीतल, अविदाही अर्थात् जो दाह न करे, हितकारी, हलके हों वह वह अन्न और जल सेवन उरःक्षतसे क्षीण हुआ तथा सुखकी इच्छा करनेवालेको करना चाहिये ॥

चिकित्साक्रम ।

शोकं स्त्रियः क्रोधमसूयतां च त्यजेदुदारान्विषयान्भजेच्च ।
तथा द्विजातींस्त्रिदशान्गुरूंश्च वाचश्च पुण्याः शृणुयाद् द्विजेभ्यः ॥

अर्थ-उरःक्षतसे क्षीण हुए मनुष्यको शोक करना, स्त्री सेवन, दूसरेके गुणोंमें दोष लगाना ये छोड देवे. तथा कथा, पुराण इत्यादि विषय सेवन करे. देव, ब्राह्मण और गुरु इनकी सेवा करे ब्राह्मणोंसे पुण्यकारक वाणीको श्रवण करे ये सब कर्म हितकारी है॥

दशमूलादिकाढा ।

दश मूलबलारास्नापुष्करामरदारुनागरैः क्वथितम् ।
पेयं पार्श्वांसशिरोरुक्क्षतकासादिशांतये सलिलम् ॥

अर्थ-दशमूल, खिरेटी, रास्ना, पोहकरमूल, देवदारु, नागरमोथा इनका काढा पीवे तो पसवाडा, कंधा, मस्तक इन स्थानोंकी पीडा, उरःक्षत, खांसी, श्वास ये शांत होवें ॥

बलादिकाढा ।

बला विदारी श्रीपर्णी बहुपुत्री पुनर्नवा । पयसा नित्यमभ्यस्ताः शमयंति क्षतक्षयम् ॥ शृतं पयो मधुयुतं सिद्धार्थानां पिबेत्क्षयी ॥

अर्थ-बला, विदारीकंद, श्रीपर्णी (कंभारी), कांटेसेवंती वा सतावर, पुनर्नवा इनको पी के दूध और सहत इनके साथ पीवे तो उरःक्षत, क्षयका नाश होय ॥

एलादिगुटिका ।

एलापत्रत्वचो द्राक्षा पिप्पल्यर्धपलं पृथक् । सितामधुकखर्जूर-मृद्वीकाश्च पलोन्मिताः ॥ संचूर्ण्य मधुना युक्ता वटिकाः संप्रकल्पयेत् । अक्षमात्रास्ततश्चैव भक्षयेच्च दिने दिने ॥ क्षतक्षयं ज्वरं कासं श्वासं हिक्कां वमिं भ्रमम् । मूर्च्छां मदं तृषां शोषं पार्श्वशूलमरोचकम् ॥ प्लीहानमाढ्यवातं च रक्तपित्तं ज्वरं क्षयम् । एलादिगुटिका हंति वृष्या संतर्पणी परा ॥

अर्थ-इलायची, पत्रज, दालचीनी, दाख, पीपल ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे मिश्री, मुलहटी, खर्जूर और दाख ये प्रत्येक चार ४ तोले लेय सबका चूर्ण करके उसमें सहत

मिलायके गोली एक २ तोलेकी बनावे इसमेंसे नित्य प्रति एक एक सेवन करे तो उरःक्षत क्षय, ज्वर, खांसी, श्वास, हिचकी, वमन, भ्रम, मूर्च्छा, मद, तृषा, शोष, पसवाडेका शूल, अरुचिका रोग, प्लीहा (तापतिल्ली),आढ्यवात, रक्तपित्त, ज्वर और क्षय इनका नाश करे ऐसी यह एलादिगुटिका वृष्य और तृप्ति करनेवाली है ॥

द्राक्षादिघृत ।

द्राक्षायाः प्रस्थमेकं तु मधुकस्य पलाष्टकम् । पचेत्तोयाढके शुद्धे पादशेषेण तेन तु ॥ पलिके मधुकद्राक्षे पिष्टं कृष्णापल-द्वयम् । प्रदाय सर्पिषः प्रस्थं पचेत्क्षीरे चतुर्गुणे ॥ सिद्धे शीते पलान्यष्टौ शर्करायाः प्रदापयेत् । एतद्‌ द्राक्षाघृतं सिद्धं क्षत-क्षीणसुखावहम् ॥ वातपित्तज्वरश्वासविस्फोटकहलीमकान् । प्रदरं रक्तपित्तं च हन्यान्मांसबलप्रदम् ॥

अर्थ—दाख ६४ तोले मुलहटी ३२ तोले और जल २५६ तोले इन तीनोंको एकत्र कर औटावे. जब चतुर्थांश जल रहे तब इस काढेको उतारके छान लेवे इसमें मुलहटी और दाख इनको कूट २ कर चार चार तोले डाले पीपलका चूर्ण ८ तोले घी ६४ तोले और सबसे चौगुना दूध डाले फिर चूल्हे पर चढायके घृतको सिद्ध करे अर्थात् बनावे जब तैयार हो जावे तब उतारके शीतल कर लेवे फिर इसमें ३२ तोले मिश्री मिलावे और सबको चलायके एक जीव कर लेय तो यह द्राक्षाघृत बनके तैयारहो यह उरःक्षत करके क्षीण मनुष्योंको हितकारी है और वातपित्तज्वर, श्वास, विस्फोटक, हलीमक, प्रदर और रक्तपित्त इनको नाश करे तथा मांसको बलवान् करे ॥

बलादिघृत ।

घृतं बलानागबलार्जुनांबुसिद्धं सयष्टीमधुकल्कपादम् ।
हृद्रोगशूलक्षतरक्तपित्तं कासानिलार्शान् शमयत्युदीर्णान् ॥

अर्थ—खिरेटी, गगेरन और कोह इनके काढेमें मुलहटीका कल्क मिलायके घृतको बनावे इस घृतके सेवन करनेसे हृदयरोग, शूल, उरःक्षत, रक्तपित्त, खांसी, वादी और बवासीर ये अत्यंत बढे हुएहों तोभी नाश करे ॥

पथ्यादिघृत ।

पथ्याह्वनागबलयोः क्राथे क्षीरसमे घृतम् ।

पयसा पिप्पलीवासाकल्कसिद्धं क्षते हितम् ॥

अर्थ-हरड और गंगेरन इनके काढेमें बराबरका दूध पीपल और अडूसा इनका कल्क डालके घृत बनावे यह घृत उरःक्षत क्षयको नाश करे ॥

गोक्षुराद्यघृत ।

श्वदंष्ट्रोशीरमंजिष्ठाबलाकाश्मर्यकट्टतृणम् । दर्भमूलं पृष्टिपर्णी बला सर्षपका स्थिरा ॥ पलिकान्साधयेत्तेषां रसे क्षीरे चतुर्गुणे । कल्कैः स्वगुप्तर्षभकमेदाजीवंतिजीवकैः ॥ शतावर्यादिमृद्वीकाशर्कराश्रावणीवृषैः । प्रस्थं सिद्धं घृतं वातपित्तहृद्रोगगुल्मनुत् ॥ मूत्रकृच्छ्रप्रमेहार्शकासशोषक्षयापहम् । धनुःस्त्रीसंगभाराध्वखिन्नानां बलमांसदम् ॥

अर्थ-गोखरू, खस, मँजीठ, खिरेटी, कंभीरा, कट्टतृण, डाभकी जड, पृष्ठपर्णी, अतिबला, सरसों और सालपर्णी ये सब औषध चार २ तोले लेय इनका रस और चौगुणा दूध तथा सपेद लजालू, सपेद सांठ, मेदा, जीवंती, जीवक, सतावर, दाख, मिश्री, मुंडी और अडूसा इनका कल्क और १ सेर घी इनको एकत्र करके घृतपाक करे इस घीके खानेसे वात, पित्त, हृदयरोग, गोला, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, बवासीर, खांसी, शोष और क्षय इनको नाश करे ॥

अमृतप्राश्यावलेह ।

क्षीरधात्रीविदारीक्षुक्षीरीणां च तथा रसे । पचेत्समे घृतप्रस्थे मधुकैरिक्षुणान्वितैः । द्राक्षाद्विचंदनोशीरशर्करोत्पलपद्मकैः । मधूककुसुमानंताकाश्मरीतृणसंज्ञकैः ॥ प्रस्थार्धं मधुनः शीतशर्करायास्तुलां तथा । पलार्धकांश्च संचूर्ण्य त्वगेलापद्मकेसरान् ॥ विनीय तस्य संलिह्यान्मात्रां नित्यं सुयंत्रितः । अमृतप्राश्यमित्येतन्निर्मितं त्रिपुरारिणा ॥ क्षीरमांसाशिनो हंति रक्तपित्तक्षतक्षयान् । तृष्णारुचिश्वासकासछर्दिहिक्काप्रमर्दनम् ॥ मूत्रकृच्छ्रज्वरघ्नं च बल्यं स्त्रीरतिवर्धनम् ॥

अर्थ-दूध, आवलोंका रस, विदारी कंदका रस, ईखका रस क्षीरवृक्षोंका रस २ सेर तथा १ सेर घी इन सबको मिलायके उत्तम विधिसे पचावे फिर इसमें मुलहटी, ईख, दाख,

चंदन, लालचंदन, नेत्रवाला, मिश्री, कूट, पद्माख, महुआके फूल, धमासा, कंभारी और कत्तृण इनका चूर्ण डालके अवलेह बनावे जब शीतल हो जावे तब ३२ तोले सहत और ४०० तोले मिश्री और दालचीनी, पत्रज, नागकेशर इन प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले डालके धर रखे. इसमेंसे अग्निका बलाबल विचारके मात्रा खानेको देवे. दूध और मांस इत्यादिक पदार्थ पथ्यमें देवे तो रक्तपित्त, क्षतक्षय, प्यास, अरुचि, श्वास, खांसी, वांति, हिचकी, मूत्रकृच्छ्र और ज्वर इनका नाश करे और बल तथा स्त्रियोंमें प्रीति इसके सेवनसे बढती है. इसको अमृतप्राश्यावलेह कहते हैं ॥

रसराज ।

मुक्ताप्रवालरसहेमशिताभ्रकांतं वंगं मृतं सकलमेतदलं विभाव्य । छिन्नारसेन च वरीसलिलेन सप्त पश्चाद्ददेन्मधुहविर्मरिचेन साकम् ॥ लिह्यादुरःक्षतहरं रसराजकाख्यं माषप्रमाणमतनूद्भवहेतुमेनम् ॥

अर्थ—मोती, मूंगा, पारा, सुवर्ण, काला अभ्रक, कांतलोह और वंग इन सबकी भस्म समान भाग लेवे. इनको गिलोय और सतावरके रसकी पृथक् २ सात सात दिन भावना देवे फिर इस रसराजमेंसे १ मासेकी मात्रा सहत, घी और काली मिरचोंका चूर्ण इनके साथ देवे तो उरःक्षतका नाश करे तथा कामदेवको प्रदीप्त करे है ॥

उरोमंथिक्षती लाजान्पयसा मधुसंयुतान् । सद्य एव पिबेत् जीर्णे पयसाद्यात्सशर्करम् ॥ पार्श्वबास्तिरुजि स्वल्पपित्ताग्निस्तान् सुरायुतान् ॥

अर्थ—उरःक्षत क्षयरोगी खीलोंको दूध और सहतके साथ भक्षण करे, जब ये पच जावे तब मिश्री मिलायकर दूध पीवे तथा पसवाडा और बस्ती इनमें शूल तथा अग्नि और पित्त ये मंद होवे तो उन रोगियोंको मद्यके साथ धानकी खील खानी चाहिये ॥

क्षयरोगमें पथ्य ।

दोषाधिकस्य बलिनो मृदुशुद्धिरग्रे गोधूममुद्गचणकाधनशालयश्च । छागानि मांसनवनीतपयोघृतानि क्रव्यादमांसमपि जांगलजा रसाश्च ॥ मार्त्तंडचन्द्रकिरणैः प्रतिशोषितानि लेह्यानि पक्वपललानि सुचूर्णितानि । रागाः सकांबलिकखांडववेसवाराः

भक्ष्याः शशांककिरणैर्मधुरो रसश्च ॥ पक्वानि मोचपनसाम्रफलानि धात्रीखर्जूरपौष्करपरूपकनारिकेरम् । सौभाञ्जनं बकुलकं नवतालसस्यद्राक्षाफलानि भिषजापि इमानि दद्यात् ॥ सिंहास्यपत्रमपि गोमहिषीघृतं च छागाश्रयश्च हितदंतकमूत्रलेपः । मत्स्यंडिकाशिखरणीमदिरारसालाः कर्पूरकं मृगमदः शितिचंदनं च ॥ अभ्यंजनानि सुरभीण्यनुलेपनानि स्थानानि वेश्मरचनान्यवगाहनानि । हर्म्यं स्रजः स्मरकथा मृदुगंधवाहः शीतानिलास्यमपि चंद्ररुजो विपंची ॥ संदर्शनं मृगदृशामपि हेमपूर्णं मुक्तामणिप्रचुरभूषणधारणं च । होमप्रदानममरद्विजपूजनानि दिव्यानुपानमपि पथ्यगणः क्षयार्त्ते ॥

अर्थ–जो दोषाधिक क्षयरोगी बलवान् हो तो प्रथम मृदु विरेचन आदिसे शुद्धि करे तथा गेहूँ, मूंग, चना, वनके शाली (लाल चावल), बकरेका मांस, मक्खन, दूध, घी, कच्चे मांस भक्षण करनेवाले पक्षियोंका मांस, जंगली जीवोंका मांस, रस, सूर्यकी किरणोंसे तपे हुए तथा चंद्रमाकी किरणोंसे शीतल ऐसे लेह्य पदार्थ, पक्क करे हुए तथा बारीक करे हुए मांस, खांडवादि, राग और कांबलिक (मूल और फल इनके काढेमें समभाग तिलपुष्पोंकी खटाई डालते हैं वह) वेसवार (गरम मसाला) [तर्वट] पने, चंद्रमाकी किरण, मीठे रस, पके हुए केलेकी गहर, कटहर, पके आम, आंवरे, खजूर (छुहारे), पुहकर मूल, फालसे, नारियल, सहजना, मौलसरी, नवीन तालके फल, हरी दाख, अडूसेके पत्ते, गौ और भैंसका घी, सर्वदा बकरियोंमें रहना (अथवा बकरेकी मेंगनी और मूत्रका लेप), मत्स्यंडी (मिश्री), सिखरन, मद्य (दारू), रसाला (मिश्री काली मिरच मिलायके बनाते हैं वह पदार्थ), कपूर, कस्तूरी, सपेद चंदन, उवटना, सुगंधित लेप, उत्तम सुंदर और मनोहर ऐसे स्थान, तथा घर (न्हाना और वस्त्रालंकारादिसे सजना), गोता मारना, फूल मालाका धारण करना, कामके बढाने-वाली वार्ताका कहना, शीतल मंद सुगंध पवन, नाच, गान, चंद्रमाकी चांदनी, वीणा (बीनबाजा) स्त्रियोंका दर्शन तथा सुवर्ण (सुवर्णके वर्क), मोती, हीरा पन्ना आदि, रत्नके गहनोंका धारण तथा होम दान देव और ब्राह्मण इनकी पूजा और उत्तम अनुपान, यह सब क्षयरोगमें पथ्यगण कहा है. क्षयरोगको भाषामें खईकी बिमारी कहते हैं कोई कोई इसको राजरोग कहते हैं ॥

क्षयपर अपथ्य ।

विरेचनं वेगविधारणं च श्रमश्च सुस्वेदनमंजनं च । प्रजागरं साह-सकर्मसेवा रूक्षं च पानं विषमाशनं च ॥ तांबूलकालिंगकुलिंग-मांसं रसोनवंशांकुररामठानि । अम्लानि तिक्तानि कषायकाणि कटूनि सर्वाणि च पत्रशाकम् ॥ क्षारान्विरुद्धाध्यशनानि बिंबी कर्कोटकं चापि विदाहि सर्वम् । कुटिल्लकं कृष्णमपि क्षयेषु वि-वर्जयेत्संततमप्रमत्तः ॥

अर्थ–विरेचन, मलमूत्रादि वेगोंका धारण, परिश्रम, स्वेदन, अंजन, रात्रिमें जागना, साहस (जो अपनी सामर्थ्यसे न हो सके उसको करना), रूखा अन्न, रूखा पान, विषमाशन, तांबूल भक्षण, तरबूज, कुलथी, (कुलंग पक्षीका मांस), उडद, लहसन, वंशकी कोंपल, हींग, खट्टे पदार्थ, कडुए और कषेले पदार्थ, तथा सब चर्परे रस, साग, पत्तोंका क्षार, विरुद्ध भोजन, अध्यशन, कंदूरी (सेम), ककोडा (करेला), संपूर्ण विदाही पदार्थ, लाल और सपेद पुनर्नवा ये पदार्थ क्षयरोगीको सेवन करना वर्जित है ॥

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे उरःक्षतनिदानचिकित्सा समाप्ता ।

कासकर्मविपाकः ।

द्रव्याणि चाल्पसाराणां स्तेयं कृत्वान्यवेषतः ।
चरेत्सांतपनं कृच्छ्रमित्येवं मनुरब्रवीत् ॥

अर्थ–जो प्राणी दुर्बल (गरीब) मनुष्योंका द्रव्य चुराता है इस पापके प्रभावसे इस जन्ममें वह प्राणी कफरोगी होता है. उसको इस पापके प्रायश्चित्त करनेको कृच्छ्र और सांतपन व्रत करना चाहिये ऐसे मनुमहाराजकी आज्ञा है ॥

दूसरा प्रकार ।

त्रपुहारी च पुरुषो जायते श्लेष्मलः सदा ।
उपोष्य दिवसं सोऽपि दद्यात्पलशतं त्रपु ॥

अर्थ–जो प्राणी पूर्वजन्ममें रांगेकी चोरी करता है वो इस जन्ममें कफरोगी होता है उसको एक दिन उपवास करके ४०० तोले रांगेका दान करना चाहिये ॥

तीसरा प्रकार।

नित्यानुष्ठानविमुखः कफरोगी भवेन्नरः। पराभवं स चाप्नोतीत्याह वै भगवान् यमः॥ तच्छांतये मासमेकं यावकं भक्षयेन्नरः। सहस्रनामपाठश्च होमश्चाष्टोत्तरायुतम्॥ नाममंत्रेण कुर्वीत चर्वाज्यं च हविर्भवेत्॥

अर्थ-जो प्राणी नित्यकर्म (संध्यावंदनादि) नहीं करे वो कफरोगी होता है उसको कफसे अथवा शत्रुसे पीडा होती है इस प्रकार यमऋषिने कहा है. इस पापकी शांतिके अर्थ १ महीने पर्यंत जौ खाय और विष्णुसहस्रनामका पाठ तथा अष्टाक्षरी वा द्वादशाक्षरीनाममंत्रसे चरु और आज्य (घृत) इनसे १०८ आहुती देवें इस प्रकार विधि करनी चाहिये॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय।

सूर्ये कुलीरजाते बुधेन दृष्टे विगतनेत्रः।
कफमारुतरोगार्तः परस्वहारी विलोलमतिचेष्टः॥

अर्थ-जन्मसमयमें सूर्य कर्कराशिमें बैठा होय और बुध उसको देखता होय तो नष्टदृष्टि अर्थात् अंधा होय अथवा कफवातरोगी होय अथवा चोरी और चंचलपने (चालाकी) के कर्म करे॥

कारणसम्प्राप्ति और निरुक्ति।

धूमोपघाताद्रजसस्तथैव व्यायामरूक्षान्ननिषेवणाच्च। विमार्गगत्वादपि भोजनस्य वेगावरोधात्क्षवथोस्तथैव॥ प्राणो ह्युदानानुगतः प्रदुष्टः संभिन्नकांस्यस्वनतुल्यघोषः। निरेति वक्त्रात्सहसा सदोषो मनीषिभिः कास इति प्रदिष्टः॥

अर्थ-नाक मुखमें धूर वा धूंआ जानेसे दंड, कसरत, रूक्षान्न इनके नित्य सेवन करनेसे, भोजनके कुपथ्यसे, मलमूत्रके रोकनेसे, उसी प्रकार छिक्का अर्थात् (छींक) आती हुईके रोकनेसे, प्राणवायु अत्यंत दुष्ट होकर और दुष्ट उदानवायुसे मिलकर कफपित्तयुक्त अकस्मात् मुखसे बाहर निकले उसका शब्द फूटे कांस्यपात्रके समान होय उसको विद्वान् लोग कांस (खांसी) कहते हैं॥

संख्यारूपसंप्राप्ति।

पंच कासाः स्मृता वातपित्तश्लेष्मक्षतक्षयैः।
क्षयायोपेक्षिताः सर्वे बलिनश्चोत्तरोत्तरम्॥

अर्थ--वात, पित्त, कफ, क्षत और क्षय ऐसे पांच प्रकारकी खांसी होती हैं इनकी औषध न करे तो सर्वका क्षयरूप हो जाय है ये उत्तरोत्तर बलवान् जाननी जैसे वातसे पित्तकी, पित्तसे कफकी, कफसे क्षतकी क्षतसे क्षयकी, खांसी प्रबल है ॥

पूर्वरूप ।

पूर्वरूपं भवेत्तेषां शूकपूर्णगलास्यता ।
कंठे कंडूश्च भोज्यानामवरोधश्च जायते ॥

अर्थ--मुख और गलेमें कांटेसे पड जाय तथा कंठमें खुजली चले भोजन करा न जाय ये खांसी होनेहारेके लक्षण हैं ॥

वातिक कासनिदान ।

हृच्छंखमूर्धोदरपार्श्वशूली क्षामाननः क्षीणबलस्वरौजाः ।
प्रसक्तवेगस्तु समीरणेन भिन्नस्वरः कास्यति शुष्कमेव ॥

अर्थ--हृदय, कनपटी, मस्तक, उदर, पसवाडा इनमें शूल चले, मुँह उत्तर जाय बल, स्वर,पराक्रम ये क्षीण पड जाँय वारंवार खांसीका उठना, स्वरभेद और सूखी खांसी उठे यह वातकी खांसीके लक्षण हैं ॥

कासचिकित्सापरिभाषा ।

रूक्षस्यानिलजं कासमादौ स्नेहैरुपाचरेत् । सर्पिभिर्वस्तुभिः पेया क्षीरे यूषरसादिभिः ॥ ग्राम्यानूपोदकैः शालियवगोधूमषाष्टिकैः । रसैर्मांसात्मगुप्तानां यूषैर्वा भोजयेद्धितैः ॥

अर्थ--रूक्ष रोगीके वादीकी खांसीको प्रथम स्नेहपानादिक उपचार करे तथा घृत, बस्तिकर्म इत्यादिक करे और पेया, क्षीर, यूष, रस तथा ग्रामके जीव, अनूप (अनूपदेशके जीव).चावल, जौ, गेहूं, साठी ये धान्य तथा मांस और कौंछ इनका रस अथवा यूष इनको भोजन करे ॥

रुद्रपर्पटी ।

शुद्धसूतं द्विधा गंधं संमर्द्यैषां द्रवैः पुनः । वातारिरार्द्रकं शृंगी काकमाच्यादिकर्णिका ॥ दिनैकं मर्दयेत् खल्वे पाचयेत्पर्पटीं तथा । द्वयोः पादं मृतं ताम्रं क्षिप्त्वा मृद्वग्निना पचेत् ॥ रक्तवर्णं भवेद्यावत्तावत्पाच्यं प्रचालयेत् । प्रक्षिपेत् कदलीपत्रे

स्थाप्यं स्निग्धपुटे पुनः ॥ आच्छाद्य तेन योगेन अधश्चोर्ध्वं च गोमयम् । दग्धं विचूर्णयेत्पश्चाच्चूर्णपादं विषं क्षिपेत् ॥ रुद्रपर्पटिका ह्येषा देया गुंजाद्वयं द्वयम् । चूर्णितं कटुनिर्गुंडया मूलनिष्कद्वयं पिबेत् ॥ भृंगराजरसेनैव लिहेद्वा मधुना सह । वातकासान्निहंत्याशु सर्वथैव न संशयः ॥

अर्थ-शुद्धपारा १ भाग, गंधक २ भाग, दोनोंको मिलायके कजली करे फिर इसको अंडकी जड, काकडासींगी, मकोय और इनके रसमें एक २ दिन खरल करे फिर इसको अग्निपर तपायके पर्पटी बनावे फिर इस पर्पटीका चतुर्थांश ताम्रभस्म मिलावे और मंदाग्निपर पचन करे जब लालरंग हो जावे तब उतारके केलेके पत्तेपर डाल देवे और तत्काल दूसरे पत्तेसे ढकके गोबरसे दाब देय तो पतली पर्पटी हो जावेगी जब शीतल हो जाय तब निकालके चूर्ण करके धर रखे इसमें चतुर्थांश सिंगिया विष मिलावे यह रुद्रपर्पटी दो रत्ती अनुपानसे देवे और इसके ऊपर निर्गुंडीके जडका चूर्ण छः मासे देवे अथवा भांगरेका रस और सहत इनके साथ देवे तो सर्व वादीकी खांसी नाश करे ॥

भूतांकुशरस ।

शुद्धसूतस्य भागैकं द्विभागं शुद्धगंधकम् । भागत्रयं मृतं ताम्रं मरीचं दशभागिकम् ॥ मृताभ्रस्य चतुर्भागं भागमेकं विषं क्षिपेत् । भूतांकुशस्य भागैकं सर्वमम्लेन मर्दयेत ॥ रसो भूतांकुशो नाम माषैको वातकासजित् । अनुपानं लिहेत्क्षौद्रं बिभीतकफलत्वचः ॥

अर्थ-शुद्ध पारा १ भाग, गंधक २ भाग, तामेकी भस्म ३ भाग, मिरच १० भाग, अभ्रक ४, विष १ और नकछिकनी १ भाग ले इन सबको एकत्र चूर्ण कर नींबूके रसमें खरल करे. इस भूतांकुशरसकी मात्रा १ तोलेकी है इसको बहेडेका चूर्ण और सहत इनके साथ देवे तो वादीकी खांसी दूर होय ॥

सठ्यादि लेह ।

सठी शृंगी कणा भार्ङ्गी गुडवारिदयासकैः ।
सतैलैर्वातकासघ्नो लेहोयमपराजितः ॥

अर्थ-कचोरा, काकडासींगी, पीपली, भारंगमूल, गुड, नागरमोथा और धमासा इनका लेह करके तैल डालके सेवन करनेसे वातका नाश करता है ॥

भाङ्ग्यादिलेह।

भार्ङ्गी द्राक्षा शठी शृंगी पिप्पली विश्वभेषजम्।
गुडतैलयुतो लेहो हितो मारुतकासिनाम् ॥

अर्थ–भारंगी, दाख, कचूर, काकडासिंगी, पीपल और सोंठ इनका गुड मिलायके अवलेह बनावे इसमें तेल डालके सेवन करे तो वादीकी खांसी दूर होय ॥

विश्वादिलेह।

विश्वा भार्ङ्गी कणा सोमवल्कद्राक्षासठीसिताः।
लीढा तैलेन वातोत्थं कासं जयति दुस्तरम् ॥

अर्थ–सोंठ, भारंगी, पीपल, कायफल, दाख और कचूर इनका अवलेह तेल मिलायके सिद्ध करे इसमें मिश्री मिलायके सेवन करे तो घोर दुस्तर वादीकी खांसी नाश होय ॥

दशमूलघृत।

दशमूलीकषायेण भार्ङ्गीकल्कैर्घृतं पचेत्।
दशतित्तिरनिर्य्यूहैस्तत्परं वातकासनुत् ॥

अर्थ–दशमूलका काढा, भारंगीका कल्क तथा दश तीतरोंके मांसका काढा इनमें घी डालके सिद्ध करे यह वातकी खांसी नाश करनेमें उत्तम है ॥

कट्फलादिपेय वातकफकासोंपर।

कट्फलं कट्तृणं भार्ङ्गी मुस्तधान्यं वचाभया। शुंठी पर्पटकं शृंगी सुराह्वं च जले शृतम् ॥ मधुहिंगुयुतं पेयं कासे वातकफान्विते। कंठरोगे मुखे शूले हिक्काश्वासज्वरेषु च ॥

अर्थ–कायफल, रोहिषतृण, भारंगी, नागरमोथा, धनियां, बच, हरड, सोंठ, पित्तपापडा, काकडासिंगी, देवदार इनके काढेमें सहत, हींग डालके पीवे तो वादी कफकी खांसी, कंठरोग, मुखरोग, शूल, हिचकी, श्वास और ज्वर इनपर परमोत्तम है ॥

शुंठ्यादिचूर्ण।

शुंठी दुरालभैरंडमूलं कर्कटशृंगिका। चचुंदरो देवदारुश्चूर्णमेषां समांशतः ॥ उष्णेन वारिणा किंवा तैलेनालोड्य भक्षितम्। वातजं श्लेष्मजं कासं नाशयत्यतिवेगतः ॥

अर्थ-सोंठ, जवासा, अंडकी जड, काकडासिंगी, चचूंदर, देवदारु इनका समभाग चूर्ण कर गरम जलसे अथवा तेलसे सेवन करे तो वातजन्य तथा कफजन्य खांसीका नाश होय ॥

चित्रकादिलेह ।

चित्रकं पिप्पलीमूलं व्योषं मुस्ता दुरालभा । शठी पुष्करमूलं च श्रेयसी सुरसा वचा ॥ भार्ङ्गी छिन्नरुहा रास्ना कर्कटाख्या च कार्षिका । कल्कोऽग्निदग्धाद्वितुलां कषाये पलविंशतिः॥ मत्स्यंडिकाया दश वा सर्पिषः कुडवं पचेत् । सिद्धे सीते पृथक् क्षौद्रपिप्पलीकुडवान्वितम् ॥ चतुः पलं तुगाक्षीर्याश्चूर्णं तत्र प्रदापयेत् । लेहयेत्कासहृद्रोगश्वासगुल्मनिवारणम् ॥

अर्थ-चीतेकी छाल, पीपल, पीपरामूल, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, धमासा, कचूर, पुहकरमूल, हरड, तुलसी, वच, भारंगी, गिलोय, रास्ना, काकडासिंगी इनको समान भाग ले कल्क और राख ८० तोले इनको औषधोंके ८०० तोले काढेमें डाले और मिश्री ४० तोले तथा घी ६४ तोले डालके उस काढेको पचावे तो अवलेह सिद्ध होय इसमें सहत, पीपल और वंशलोचन ये प्रत्येक १६ तोले डाले और सेवन करे तो खांसी, हृदय, श्वास और गोला इनको दूर करे ॥

शुंठ्यादि लेह वातकासपर ।

चूर्णिता विश्वदुःस्पर्शा शृंगी द्राक्षा शठी सिता ।
लिहेत्तैलेन वाताद्यं कासं जयति दुस्तरम् ॥

अर्थ-सोंठ, धमासा, काकडासिंगी, द्राक्षा, कचूर और मिश्री इनको तेल मिलायके अवलेह बनावे इसके सेवन करनेसे दुस्तर वाताधिक खांसीको नाश करे ॥

दशमूलका काढा ।

दशमूली शृता विश्वा कासहिक्कारुजापहा ।
यवागू दीपनी वृष्या वातरोगविनाशिनी ॥

अर्थ-दशमूल, सोंठ इनका काढा खांसी और हिचकी इनका नाश करै. और यवागू छः गुना पानी डालके करा हुआ पतला भात यह दीपन, कामोदीपक तथा वातरोग नाश करनेवाला है ॥

पंचमूलकाढा ।

पंचमूलीकृतः क्काथः पिप्पलीचूर्णसंयुतः ।
रसान्नमश्नतो नित्यं वातकासमुदस्यति ॥

अर्थ-शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू इनका काढा पीपलका चूर्ण डालके सेवन करे तथा रसयुक्त भोजन करे तो वातखांसीका नाश करे ॥

कर्कटरस ।

रसं कर्कटकानां वा घृतभृष्टं सनागरम् ।
वातकासप्रशमनं शृंगीमत्स्यरस्य वा पुनः ॥

अर्थ-केकडेके मांसरसको घीमें भून उसमें सोंठ डालके देवे अथवा शृंगीजातिकी मछलीका रस घृतमें भून सोंठको डालके देवे तो वातकी खांसी दूर करे ॥

शुंठ्यादिचूर्ण ।

शुंठी दुरालभा द्राक्षा कर्चूरस्तवराजकम् ।
वातकासं निहंत्याशु तैलभुक्तं हि चूर्णकम् ॥

अर्थ-सोंठ, धमासा, दाख, कचूर और यवाशशर्करा (शीराखिस्त) इनका चूर्ण तेलमें मिलायके देवे तो वादीकी खांसीका नाश होय ॥

पित्तकासनिदान ।

उरोविदाहज्वरवक्रशोषैरभ्यार्दितस्तिक्तमुखस्तृषार्तः ।
पित्तेन पीतानि वमेत्कटूनि कासेन पांडुः परिदह्यमानः ॥

अर्थ-पित्तकी खांसीसे हृदयमें दाह, ज्वर, मुखका सूखना इनसे पीडित हो मुख कडुआ रहे प्यास लगे पीले रंगकी और कडुवी ऐसी पित्तके प्रभावसे वमन होय रोगीका पीला वर्ण हो जाय और सब देहमें दाह होय ॥

सिंहास्यादिकाढा ।

सिंहास्यामृतसिंहीनां क्काथं मधुयुतं पिबेत् ।
पिबेत्सपित्तकफजे कासे श्वासे ज्वरे क्षये ॥

अर्थ-अडूसा, गिलोय और कटेरी इनके काढेमें सहत डालके पीवे तो पित्तकफात्मक खांसी, श्वास, ज्वर और क्षय इनका नाश करे ॥

बलादिकाढा ।

बलाद्विबृहतीद्राक्षावासाभिः क्वथितं जलम् ।
पित्तकासापहं पेयं शर्करामधुयोजितम् ॥

अर्थ-खिरेटी, कटेरी, बडी कटेरी, दाख और अडूसा इनके काढेमें सहत और मिश्री डालके सेवन करे तो यह पित्तकासको नाश करे ॥

शठ्यादिकाढा ।

शठी ह्रीबेरबृहती शर्करा विश्वभेषजम् ।
पक्त्वा रसे पिबेत्पूतं सघृतं पित्तकासनुत् ॥

अर्थ-कचूर, नेत्रवाला, कटेरी और सोंठ इनके काढेमें घी और मिश्री डालके देवे तो पित्तकी खांसीको नाश करे ॥

शरादिकाढा ।

शरादिपंचमूलस्य पिप्पलीद्राक्षयोस्तथा ।
कषायेण शृतं क्षीरं पिबेत्समधुशर्करम् ॥

अर्थ-शर, ईख, डाभ, कांस इनकी जडका काढा करके उसमें दूध डालके औटावे फिर सहत और मिश्री डालके देवे तो पित्तकी खांसीका नाश करे ॥

शठ्यादिकाढा ।

सठीद्विपंचमूलस्य पिप्पलीद्राक्षयोस्तथा ।
कषायेण शृतं क्षीरं पिबेत्समधुशर्करम् ॥

अर्थ-कचूर, दशमूल, पीपल और दाख इनके काढेमें औटा हुआ दूध सहत और मिश्री मिलायके देवे तो पीत्तकी खांसी दूर होय ॥

त्वक्क्षीरलेह ।

त्वक्क्षीरपिप्पलीलाजाद्राक्षाजलदशर्कराः ।
सर्पिर्मध्वावलेहोऽयं पित्तकासविनाशनः ॥

अर्थ-तवाखीर, पीपल, खील, दाख, नागरमोथा इनके काढेमें मिश्री, घी और सहत डालके पीवे तो पित्तकी खांसी दूर होवे ॥

कंटकार्य्यादिकाढा ।

कंटकारीयुगं द्राक्षावासाकर्चूरबालकैः ।

नागरेण च पिप्पल्या कथितं सलिलं पिबेत् ॥
शर्करामधुसंयुक्तं पित्तकासहरं परम् ॥

अर्थ–कटेरी, बडी कटेरी, दाख, अडूसा, कचूर, नेत्रवाला, सोंठ और पीपल इनके काढेमें मिश्री और सहत मिलायके देवे तो पित्तकी खांसीको दूर करे ॥

पिप्पल्यादिचूर्ण ।

पिप्पलीतवराजश्च तवक्षीरं त्रयं समम् ।
मधुसर्पिर्युतं भुक्तं पित्तकासविनाशनम् ॥

अर्थ–पीपर, यवासशर्करा, तवाखीर इनको समान भाग लेवे सबका चूर्ण करके सहत और घी मिलायके सेवन करे तो पित्त (गरमी) की खांसी दूर हो ॥

मधुकादिचूर्ण ।

मधुकं पिप्पलीमूलं दूर्वाद्राक्षाकणासमम् ।
घृतेन मधुना युक्तं पित्तकासविनाशनम् ॥

अर्थ–मुलहटी, पीपरामूल, दूर्वा, दाख और पीपल इनका समान भाग चूर्ण करके सहतके साथ खाय तो पित्तकी खांसीको दूर करे ॥

अर्धावर्तितकाढा ।

अर्धावर्तितपानीयं सलाजं पिप्पली मधु ।
त्रयं सर्पिर्युतं भुक्तं पित्तकासविनाशकृत् ॥

अर्थ–अधोटा पानी, खील और पीपल इनका काढा करके उसमें सहत और घी डालके पीवे तो पित्तकी खांसीका निवारण होय ॥

मातुलिंगादिलेह ।

मातुलिंगरसो हिंगुत्रिफला मधुशर्करा ।
सर्पिर्मध्वावलेहोऽयं पित्तकासविनाशकृत ॥

अर्थ–बिजोरेका रस, हींग और त्रिफला इनका काढा सहत और मिश्री डालके देवे तो पित्तकी खांसीको दूर करे ॥

खर्जूरादिलेह ।

खर्जूरं पिप्पली द्राक्षा सिता लाजाः समांशकाः ।
मधुसर्पिर्युतो लेहः पित्तकासहरः परः ॥

अर्थ–खजूर, पीपल, दाख, मिश्री और खील इनको समान भाग लेकर लेह सिद्ध

करे इसमें सहत घी डालके सेवन करे तो पित्तकी खांसीको नाश करे ॥

द्राक्षामलकादिलेह ।

द्राक्षामलकखर्जूरं पिप्लीमरिचान्वितम् ।
पित्तकासहरं ह्येतल्लिह्यान्माक्षिकसंयुतम् ॥

अर्थ-दाख, आमला, खजूर, पीपल इनको एकत्र चूर्ण कर सहत और घीके खानेसे पित्तकी खांसीको नाश करे है ॥

क्षीरामलकघृत ।

महिष्यजाविगोक्षीरधात्रीफलरसैः समैः ।
सर्पिः प्रस्थं पचेद्युक्त्या पित्तकासनिबर्हणम् ॥

अर्थ-भैंस, बकरी और गौ इनका दूध और आमलेका रस ये समान भाग ले इसमें ६४ तोले घी मिलायके युक्तिसे पचावे और सेवन करे तो यह घृत पित्तकी खांसीको दूर करे ॥

रस ।

भस्मताम्राभ्रतीक्ष्णानां कासमर्दवरीरसैः ।
मुनिजैर्वेतसाम्लेन दिनं मद्ये तु पीडितम् ॥
निष्कार्धं पित्तकासार्तं भक्षयेन्नात्र संशयः ॥

अर्थ-ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म और कांतभस्म इनको एकत्र करके कसौंदीके रसकी, सतावर और अगस्तिया, अमलवेत और मद्य इनमें घोटके दो मासे पित्तखांसीवालेको देवे तो हित करे ॥

लोकेश्वररस ।

रसो लोकेश्वरोप्यत्र पिप्पलीमधुना सह ।
दातव्यो विनिहंत्येव पित्तकासं सुदारुणम् ॥

अर्थ-क्षयीरोगमें जो लोकेश्वररस कह आये हैं उसको पीपल और सहतके साथ देवे तो दारुण पित्तखांसीको नाश करे ॥

कफकासनिदान ।

प्रलिप्यमानेन मुखेन सीदन् शिरोरुजार्त्तः कफपूर्णदेहः ।
अभक्तरुग्गौरवकंडुयुक्तः कासेद्भृशं सांद्रकफः कफेन ॥

अर्थ-कफकी खांसीसे मुख कफसे लिपटा रहे मथवाय और सब देह कफसे

परिपूर्ण रहे अन्नमें अरुचि शरीर भारी रहे कंठमें खुजली और रोगी वारंवार खांसे कफकी गांठ थूकनेसे सुख मालूम होवे ॥

कफकाससामान्यचिकित्सा।

कफजे वमनं कार्यं कासे लंघनमेव च ।
शस्तापवाताप्रकृतिर्यूषाश्च कटुतिक्तकाः ॥

अर्थ–कफकी खांसीमें प्रथमही वमन करावे तथा लंघन कराना ये उपचार तथा मुख्यत्व करके वातरहित प्रकृतिका रखना और चरपरे, कडुए ऐसे यूष देना इत्यादि उपचार करे ॥

नवांगयूष।

मुद्गामलाभ्यां यवदाडिमाभ्यां कर्कंधुना मूलकशुष्ककेन ।
शुंठीकणाभ्यां सकुलित्थकेन यूषो नवांगः कफकासहंता ॥

अर्थ–मूंग, आमले, जौ, अनार, बेर, सूखी मूली, सोंठ, पीपल और कुलथी इनका यूष करे यह नवांगयूष कफकासको नाश करे ॥

पिप्पल्यादिकाढा।

पिप्पली कट्फलं शुंठी शृंगी भार्ङ्गी तथोषणम्। कारकं कंटकारी च सिंधुवारो यवानिका ॥ चित्रको वासकश्चैषां कषायं विधिवत्कृतम् । कफकासविनाशाय पिबेत्कृष्णारजोयुतम् ॥

अर्थ–पीपर, कायफल, सोंठ, कांकडासिंगी, भार्ङ्गी, मिरच, अजमायन, कटेरी, निर्गुंडी, अजमोद, चित्रक और अडूसा इनके काढेमें पीपलके चूर्णकी बुकनी डालके देवे तो कफकासको नष्ट करे ॥

पित्तश्लेष्मकास।

वासकः स्वरसः पेयो मधुयुक्तो हिताशिना ।
पित्तश्लेष्मकृते कासे तालीसाद्यं च योजयेत् ॥

अर्थ–पित्तकफकी खांसी पर अडूसेका रस सहत मिलायके देवे और पथ्यसे रहे अथवा तालीसादि चूर्ण देवे तो इसको नष्ट करे ॥

अवलेह।

शठी सातिविषा मुस्ता शृंगी कर्कटकस्य च। अभयां

शृंगबेरं च समं शुंठ्यादि पेषयेत् ॥ हिंगुसैंधवसंयुक्तं तक्रोदकपरिप्लुतम् । श्लेष्मकासी लिहेदेवमवलेहं मुहुर्मुहुः ॥

अर्थ-कचूर, अतीस, नागरमोथा, कांकडासिंगी, हरड, अदरख और सोंठ ये समान भाग लेकर चूर्ण करे इसे छाछके जलमें हींग और सेंधानिमक मिलायके वारंवार चाटनेको देवे तो कफकी खांसी नष्ट होय इसमें संदेह नहीं है ॥

बिभीतकधारण ।

बिभीतकं घृताभ्यक्तं गोशकृत्परिवेष्टितम् ।
स्विन्नमेतन्निहंत्याशु कासमास्यविधारितम् ॥

अर्थ-बहेडेको घृतमें भूनके उस पर गोबर लपेट पुटपाक कर लेवे फिर इससे गोबर दूर करके तोड डाले इसके टुकडोंको मुखमें रखे तो सर्व प्रकारकी खांसी नष्ट होय ॥

भद्रमुस्तादिचूर्ण ।

भद्रमुस्ताकणाचूर्णं समांशं मधुना सह ।
निहंति भक्षितं शीघ्रं श्लेष्मकासं न संशयः ॥

अर्थ-नागरमोथा और पीपल इनका समान भाग चूर्ण कर सहतसे खाय तो कफकी खांसीको नष्ट करे इसमें संदेह नहीं है ॥

पथ्यादिचूर्ण ।

पथ्या विश्वा कणा मुस्ता देवदारुः समांशकम् ।
एतच्चूर्णं मधूपेतं श्लेष्मकासापनुत्तये ॥

अर्थ-हरड, सोंठ, पीपल, नागरमोथा और देवदारु इनका समान भाग चूर्ण करके सहतमें मिलायके चाटे तो कफकी खांसी नष्ट होय ॥

चित्रकादिचूर्ण ।

चित्रकं पिप्पलीमूलं पिप्पली गजपिप्पली ।
एतच्चूर्णं समं युक्तं मधुना श्लेष्मकासनुत ॥

अर्थ-चित्रककी छाल, पीपरामूल, पीपल और गजपीपल इनके चूर्णको एकत्र समान भाग लेवे. इसमें यथायोग्य मात्रा सहतमें मिलायके देवे तो कफकी खांसीको नष्ट करे ॥

शिलादिलेह ।

शिला व्योषाभयाहिंगुविडंगं सैंधवं समम् ।
लेह्यं साज्यमधुश्वासहिक्काकासेषु शस्यते ॥

अर्थ-मनसिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, हींग, वायविडंग और सेंधानिमक इनके चूर्णको सहत और घी इनमें मिलायके श्वास, हिचकी और खांसी इन पर देना चाहिये ॥

व्योषादिघृत ।

व्योषाजमोदचित्रकजीरकषड्ग्रंथिचव्यकाल्कितं सर्पिः ।
कफकासश्वासहरं वासकरससाधितं समधु ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपर, अजमोद, जीरा, वच और चव्य इनको समान भाग ले सबका कल्क करके उसमें घी, अडूसेका रस और सहत डालके सेवन करे तो कफसंबंधी खांसी, श्वासोंको नाश करे ॥

कटुत्रयादिचूर्ण ।

कटुत्रयं पावकदेवदारुरास्नाविडंगात्रिफलामृतानाम् ।
चूर्णं समांशं सितया समेतं कासं जयेद्विष्णुरिव दैत्यान् ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, चीतेकी छाल, देवदारु, रास्ना, वायविडंग, हरड, बहेडा, आँवला इनका चूर्ण मिलायके देवे तो खांसीका नाश करे ॥

बोलबद्धरस ।

रसभस्म विषं तुल्यं बोलाद्याद्द्विगुणं मतम् । बोलतालकपाठाग्निककोंटीमाक्षिकं निशा ॥ कंटकारीयवक्षारं लांगली जीरसैंधवम् । मधूकसारसं चूर्णं सप्ताहं चार्द्रकद्रवैः ॥ छायायां भावयेत्पश्चात्सप्ताहं चित्रकद्रवैः । गुटिका बदराकारा श्लेष्मकासापनुत्तये ॥ भक्षयेद्बोलबद्धोऽयं रसः स्यात् श्वासपांडुजित् ॥

अर्थ-पारदकी भस्म और सिंगियाविष दोनों समान भाग लेवे तथा बोल, हरताल, पाढ, काकडासिंगी, सुवर्णमाक्षिक, हलदी, कटेरी, जवाखार, कलयारी, जीरा, सेंधानिमक और मुलहटी इनके चूर्णको सात दिन अदरखके रसमें खरल करे फिर छायामें सुखायके सात दिन चीतेके रसमें खरल कर बेरकी बराबर गोली बनाय लेवे इसको कफरोग, श्वास और पांडुरोग इन पर देवे ॥

दंतीधूम ।

दंतिमूलस्य धूमं वा निर्गुंडीं चापि योजयेत् ।
श्लेष्मकासं न संदेहो धूमपानेन तत्क्षणात् ॥

अर्थ--दंतीकी जडका धूआं अथवा निर्गुंडीका धूआं पीवे तो इस धूमपानके करनेसे कफकी खांसी दूर हो इसमें संदेह नहीं है ॥

उरःक्षतकासनिदान ।

अतिव्यवायभाराध्वयुद्धाश्च गजनिग्रहैः ।
रूक्षस्योरः क्षतं वायुर्गृहीत्वा कासमावहेत् ॥

अर्थ—बहुत स्त्रीसंग करनेसे, भारके उठानेसे, बहुत मार्ग चलनेसे, मल्लयुद्ध (कुस्ती) करनेसे दौडते हुए हाथी घोडेको रोकनेसे रूक्ष पुरुषका हृदय फूटकर वायुकोप होकर खांसीको प्रगट करे ॥

क्षतकासलक्षण ।

स पूर्वं कासते शुष्कं ततः ष्ठीवति शोणितम् । कंठेन रुजतात्यर्थं विभिन्नेनेव चोरसा ॥ सूचीभिरिव तीक्ष्णाभिस्तुद्यमानेन शूलिना । दुःखस्पर्शेन शूलेन भेदपीडाभितापिना ॥ पर्वभेदज्वरश्वासतृष्णावैवर्ण्यपीडितः । पारावत इवाकूजन्कासवेगात्क्षयो भवेत् ॥

अर्थ—सो पुरुष प्रथम सूखा खांसे पीछे रुधिर मिला थूके कंठ अत्यंत दूखे हृदय फूटे सदृश मालूम होय और तीखी सुईकेसे चभका चले और उसको हृदयका स्पर्श सुहाय नहीं दोनों पसवाडोंमें शूल होय यह वाग्भटका मत है तथा दाह हो उस रोगके गांठ गांठमें पीडा होय ज्वर, श्वास, प्यास, स्वरभेद इनसे पीडित होय क्षतजन्य खांसीके वेगसे रोगी कबूतरकी तरह घुंघुं शब्द करे ॥

क्षयकासनिदान ।

विषमासात्म्यभोज्यातिव्यवायाद्वेगनिग्रहात् ।
घृणिनां शोचतां नृणां व्याप्यन्तेऽग्नौ त्रयो मलाः ॥
कुपिता क्षयजं कासं कुर्युर्देहक्षयप्रदम् ॥

अर्थ--कुपथ्य और विषमाशनके करनेसे अतिमैथुन मलमूत्रादिक वेगधारण इनसे अति दया करनेसे अति शोक करनेसे अग्नि मन्द होय (अर्थात् आहार

थककर वायु कुपित हो अग्निको नष्ट करे) तब तीनों दोष कोपको प्राप्त हों क्षयजन्य देहका नाशक ऐसी खांसीको प्रगट करे तब वह खांसी देहको क्षीण करे ॥

क्षयकासलक्षण।

सगात्रशूलज्वरदाहमोहात्प्राणक्षयं चोपलभेच्च कासी। शुष्कं विनिष्ठीवति दुर्बलस्तु प्रक्षीणमांसो रुधिरं सपूयम् ॥ तं सर्वलिंगं भृशदुश्चिकित्स्यं चिकित्सितज्ञा क्षयजं वदंति ॥ इत्येष क्षयजः कासः क्षीणानां देहनाशनः। साध्यो बलवतां वा स्याद्याप्यस्त्वेवं क्षतोत्थितः ॥

अर्थ–शूल, ज्वर, दाह और मोह ये होंय तब यह प्राणका नाश करे सूखी खांसी, रुधिर, मांस शरीरको सुखावे रुधिर और राध थूके ये सर्व लक्षणयुक्त और चिकित्सा करनेमें अति कठिन ऐसे खांसीको वैद्य क्षयज कहते हैं. इस प्रकार यह क्षयजकास(खांसी) क्षीण पुरुषकी घातक होय है बलवान् पुरुषके असाध्य अथवा याप्य (साध्यासाध्य) होय है क्षतज खांसीभी इसी प्रकारकी होती है यदि वैद्यादि पादचतुष्टसंपन्न हो और ये) दोनों प्रकारकी खांसी नवीन होय तो कदाचित् साध्य होय और बूढे पुरुषके जराकास अर्थात् धातुक्षीण होनेसे भई जो खांसी सो सब प्रकारकी याप्य है सो सब इंद्रियके अंतर्गत जाननी अब कहते हैं कि वात, पित्त, कफ ये तीन खांसी साध्य हैं और बाकी तीन याप्य हैं वे पथ्य सेवन करनेसे नाश होती और अवज्ञा करनेसे असाध्य हो जाती हैं ॥

साध्यासाध्यविचार।

न वै कदाचित्साध्येतामपि पादगुणान्वितौ।
स्थविराणां जराकासः सर्वो याप्यः प्रकीर्तितः ॥
त्रीन्पूर्वान्साधयेत्साध्यान्पथ्यैर्याप्यांस्तु यापयेत् ॥

अर्थ–यदि नवीनोत्पन्न क्षयकासरोगी वैद्य परिचारक और द्रव्य इत्यादि गुणों करके युक्त होय तो वह रोगी कदाचित् अच्छा होय और वृद्ध रोगीका जो जराकास होय तो सर्व याप्य जानना तथा वातादिक जनित तीन प्रकारके जो खांसी हैं वह साध्य है वह औषधों करके अच्छी हो तथा याप्य खांसीको पथ्य करके न्यून करे ॥

चिकित्साप्रक्रिया।

कासे तु क्षतजे बल्ये पाचनैर्बृंहणैरपि।
शमनैः पित्तकासघ्नैरन्यैश्च मधुरौषधैः ॥

अर्थ-क्षयकासको पाचन, पौष्टिक और शमन तथा पित्तकासको शमन करनेवाली औषधों करके तथा दूसरी मधुर औषधों करके शमन करे ॥

यवागूं वा पिबेत्सिद्धां क्षतोरस्कः सुशीतलाम् ।
इक्ष्विक्षुबालिकापद्ममृणालोत्पलचंदनैः ॥
शृतां पेयां मधुयुतो संधानार्थं पिबेत्क्षती ।

अर्थ-उरःक्षत खांसी रोगी ईख, कसौंदीके बीज, कमलका कंद, नीलकमल कंद तथा चंदन इन करके सिद्ध करी शीतल यवागू घावको संधान करनेके अर्थ पीवे ॥

इक्ष्वाद्यावलेह ।

इक्ष्विक्षुबालिकापद्ममृणालोत्पलचंदनैः । मधुकं पिप्पली द्राक्षा लाक्षा शृंगी शतावरी ॥ द्विगुणा च तुगाक्षीरी सिता सर्वैश्चतुर्गुणा । लिह्यात्तं मधुसर्पिर्भ्यां क्षतकासनिवृत्तये ॥

अर्थ-ईखका रस, कसौंदीके बीज, कमलकंद, कमल, सपेद चंदन, मुलहटी, पीपल, दाख, लाख, कांकडासिंगी और सतावर ये समान भाग ले तथा दो भाग वंशलोचन तथा सब औषधोंसे चौगुनी मिश्री डालके अवलेह बनावे इसमें सहत और घी डालके चाटे तो खांसीकी निवृत्ति अर्थात् नाश होय ॥

मंजिष्ठाद्यचूर्ण ।

मंजिष्ठमूर्वानतवह्निपाठाकृष्णाहरिद्राविदधीतचूर्णाः ।
क्षौद्रेण कासे विलिहेत्क्षतोत्थे पिबेद्घृतं चेक्षुरसे विपक्वम् ॥

अर्थ-मँजीठ, मूर्वा, तगर, चित्रक, पाठा, पीपल और हलदी इनका चूर्ण सहतके साथ चाटे अथवा ईखके रसमें घीको औटाकर पीवे ये दोनों योग क्षतज खांसीपर उत्तम हैं ॥

क्षुद्रावलेह ।

समूलकंटकारी च चपला चपलाजटा । अपामार्गस्य बीजानि ।
जीर्णं सामुद्रकं तथा ॥ मधुना लेहयेत्सर्वं कासश्वासहरं परम् ।
उरःक्षतक्षये तीव्रे कफरक्तवमीषु च ॥

अर्थ-कटेरीका पंचांग, पीपल, पीपरामूल, ओंगाके बीज जीरा और सैंधानिमक इनसे सिद्ध करे अवलेहको सेवन करे तो खांसी, श्वास, उरःक्षत और कफरक्तकी वांति इनको दूर करे ॥

तारेश्वररस।

रसपादं मृतं तारं शिलाताप्यं चतुर्गुणम्। वासाचेक्षुरसाभ्यां च मर्दयेत्प्रहरद्वयम्॥ द्वियामं वालुकायंत्रे स्वेद्यमादाय चूर्णयेत्। गुंजाद्वयं निहंत्याशु कासं क्षतभवं ध्रुवम्॥ रसस्तारेश्वरो नाम ह्यनुपानं च कथ्यते। दाडिमं त्रिफला व्योषं त्रयाणां च समं गुडम्॥ चूर्णितं भक्षयेत्कर्षं क्षतकासापनुत्तये॥

अर्थ–पारा १ भाग, रूपेको भस्म, पारेकी चतुर्थांश, मनसिल तथा सुवर्णमाक्षिक ये चतुर्गुण लेकर अडूसा और ईखका रस इनमें दो प्रहर खरल करे फिर इसको कांचकी शीशीमें भरके वालुकायंत्रमें दो प्रहर पर्यंत पचायके उतार लेवे इसमेंसे दो रत्ती यह तारकेश्वररस अनार, त्रिफला (हरड, बहेडा, आंवला), सोंठ, मिरच, पीपल तथा इन सबके बराबर गुड मिलाय इनके एक तोले चूर्णके साथ देवे तो क्षतकासको नष्ट करे॥

सूर्यरस।

रसमेकं द्विधा गंधं त्रिताप्यं पंच तालकम्। सर्वशुद्धं विचूर्ण्याथ चतुर्भागं मृताभ्रकम्॥ वचा कुष्ठहरिद्राग्निटंकणं सैंधवं विषम्। सपाठालांगलीव्योषं सर्वं प्रत्येककर्षकम्॥ भावितं भृंगसारेण दिनैकं तं च भक्षयेत्। माषः सूर्यरसो नाम हिक्कावैस्वर्यकासजित्॥ अष्टगुंजामितं भक्ष्यं विख्याता रसपर्पटी। त्रिकंटमूलशुंठी च अजाक्षीरसमोदकम्॥ क्षीरावशिष्टं तं क्वाथं सकणं पाययेन्निशि॥

अर्थ–पारा १, गंधक २, सुवर्णमाक्षिक ३, हरताल ५ और अभ्रक ४ भाग लेवे और वच, कूठ, हलदी, चित्रक, सुहागा, सैंधानिमक, वच्छनाग विष, पाढ, कलयारी, सोंठ, मिरच और पीपल ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे सबका चूर्ण कर भांगरेके रसमें १ दिन खरल करे यह सूर्यरस एक मासा खानेको देय तो हिचकी, स्वरभंग और खांसी इनको नष्ट करे अथवा रत्ती रसपर्पटी लेकर रात्रिमें गोखरू, सोंठ, बकरीका दूध तथा दूधके बराबर जल लेकर औटावे जब दूधमात्र शेष रहे तब उतारके उसमें पीपलका चूर्ण डालके पीवे॥

पिप्पल्यादिलेह।

पिप्पली पद्मकं लाक्षा सुपक्कं बृहतीफलम्।
घृतक्षौद्रयुतो लेहः क्षयकासनिबर्हणः॥

अर्थ-पीपल, पद्माख, लाख और उत्तम पके हुए कटेरीके फल ये समान भाग लेवे सबको पीस घी और इनसे अवलेह युक्त बनायके सेवन करे तो क्षयजन्य खांसीको नाश करे॥

कुलित्थगुड।

कुलित्थानां शतपलं दशमूलं तथा शतम्। शतब्राह्मणयष्टचाह्वा चतुर्गुणजले शृतम्॥ पादावशेषतः पूते गुडस्यार्धतुलां पचेत्। पाकं ज्ञात्वावतार्यैवं सुशीते श्लक्ष्णचूर्णितम्॥ षट्पलं च तुगाक्षीर्यां पिप्पल्या द्विपलं तथा। कुडवं मधुना दद्यात्स्थापयेद्भाजने शुभे॥ खादेदग्निबलापेक्षी नाशयेदचिराद्गदान्। यक्ष्माणं पित्तजं कासं श्वासं जीर्णमजीर्णकम्॥ जीर्णज्वरं पांडुरोगं हृद्रोगं श्लेष्ममारुतौ। कुलित्थगुड इत्युक्तः सर्वोपद्रवनाशनः॥

अर्थ-कुलथी ५०० तोले, दशमूलकी औषध ४०० तोले और भारंगी ४०० तोले ले १६०० तोले जलमें काढा करके चतुर्थांश शेष रहने पर उतार लेवे. इसमें गुड २०० तोले डालके पाक करे जब तैयार हो जावे तब शीतल करके इसमें २४ तोले वंशलोचन, ८ तोले पीपल और १६ तोले सहत डालके उत्तम पात्रमें भरके धर रखे. इसमेंसे अग्निबल विचारके खानेको देवे तो क्षय, पित्तकी खांसी, श्वास, पका हुआ अजीर्ण, जीर्णज्वर, पांडुरोग, हृदयरोग और कफवात इनको और संपूर्ण उपद्रवोंको यह कुलित्थगुड नाश करे॥

वासाकूष्मांडावलेह।

पंचाशतपलं स्विन्नं कूष्मांडं प्रस्थमाज्यतः। पक्कं पलशतं खंडं वासाक्काथाढके पचेत्॥ शुभ्रा धात्री घनो भार्ङ्गी त्रिसुगंधिश्च कर्षकैः। एलोपविषधान्याकमरिचैश्च पलांशकैः॥ पिप्पला कुडवं चैव मधुपानं प्रदापयेत्। कासं श्वासं क्षयं हिक्कां रक्तपित्तहलीमकान्॥ हृद्रोगमम्लपित्तं च पीनसं च व्यपोहति॥

अर्थ-पेठेके टुकडे शुद्ध करे हुए २०० तोले इनको ६४ तोले घीमें भूने फिर इसमें १०० तोले टुकडे लेकर अडूसेके २५६ तोले काढेमें सिजावे इसमें वंशलोचन, आंवले, नागरमोथा, भारंगी, तज, तमालपत्र और इलायची ये प्रत्येक चार २ तोले ले तथा पीपल १६ तोले और सहत ३२ तोले डालके भरके धर रखे इसमेंसे बलाबल विचारके मात्रा वैद्य देवे तो खांसी, श्वास, क्षय, हिचकी, रक्तपित्त, हलीमक, हृदयरोग, अम्लपित्त और पीनस इनको दूर करे ॥

ककुभलेह ।

चूर्णं ककुभविपिष्टं वासकरसभावितं सुबहुवारान् ।
मधुघृतसितोपलाभिर्लेह्यं क्षयकासपित्तहरम् ॥

अर्थ-कोहवृक्षकी छालके चूर्णमें अडूसेके रसकी बहुतसी भावना देवे फिर सहत, घी और मिश्री मिलायके चाटे तो क्षय, कास और पित्त इनको नाश करे ॥

पिप्पल्यादिघृत ।

पिप्पलीगुडसंसिद्धं छागक्षीरयुतं घृतम् ।
एतदग्निविवृद्ध्यर्थमुक्तं च क्षयकासिनाम् ॥

अर्थ-पीपल और गुड इनसे बनाया हुआ घी बकरीके दूधके साथ पीवे तो क्षय, खांसी, दूर होती है और अग्नि प्रदीप्त करनेमें उत्तम है ॥

पिप्पल्यादिलेह ।

पिप्पलीमधुकं पिष्टं कषायंससितोपलम् । प्रस्थैकं गव्यमाज्यं च क्षीरमिक्षुरसस्तथा ॥ यवगोधूममृद्वीका चूर्णमामलकीरसम् । तैलं च प्रसृतांशानि तत्सर्वं मृदुवह्निना ॥ पचेल्लेहं घृतक्षौद्रयुक्तः सश्वासकासनुत । क्षयहृद्रोगकासघ्नो हितो वृद्धाल्परेतसाम् ॥

अर्थ-पीपल और मुलहटी इन दोनोंको कूट इनके चूर्णका काढा मिश्री मिले हुए गौका दूध, घी और ईखका रस प्रत्येक ६४ तोले जौका चून गेहूंका चून, दाख, आंवलेका रस और सरसोंका तेल ये प्रत्येक आठ २ तोले लेवे सबको एकत्र कर मंद २ अग्निपर रखके अवलेह बनावे इस अवलेहमें सहत और घी डालके पीवे तो श्वास, खांसी, क्षय और हृदयरोग इनको नाश करे और वृद्धत्व तथा अल्पवीर्य पुरुषोंको परम हितकारी है ॥

स्वयमग्निरस ।

शुद्धसूतं द्विधा गंधं कुर्य्यात्खल्वे च कज्जलीम् । तयोः समं तीक्ष्णचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ द्वियामांते कृतं गोलं ताम्रपात्रे विनिक्षिपेत् । आच्छाद्यैरंडपत्रेण यामार्धेऽत्युष्णतां व्रजेत् ॥ धान्यराशौ न्यसेत्पश्चात् द्विदिनांते समुद्धरेत् । संपेष्य गालयेद्वस्त्रे सत्यं वारितरं भवेत् ॥ त्रिकटुत्रिफलाचैलाजातीफललवंगकैः । एतेषां नवभागानां समं पूर्वैरितं भवेत् ॥ संचूर्ण्य लोडयेत्क्षौद्रैर्भक्ष्यं निष्कद्वयं द्वयम् । स्वयमग्निरसो नाम क्षयकासनिकृंतकः ॥ इंद्रवारुणिकामूलं भृंगीकृष्णातिलैः सह । भक्षयेत्क्षयकासार्तो निष्कमात्रं प्रशांतये ॥

अर्थ-शुद्ध पारा १ भाग और गंधक २ भाग ले दोनोंकी कजली करे तथा कजलीके समान पोलाद लोहकी चूर्ण मिलायके उसको घीगुवारके रसमें दो प्रहर घोटके गोला बनावे उसको ताम्रसंपुटमें रखके उसके ऊपर और नीचे अंडके पत्ता लपेट देवे फिर चार घडी पर्यंत उसको धूपमें उसी प्रकार धरा रहने दे जब गरम हो जावे तब उठायके धानकी राशिमें दो दिन पर्यंत गडा रहने दे तीसरे दिन निकालके खरलमें डालके घोट डाले कपडेमें छानले तो यह जलमें तैरनेवाली लोहकी भस्म होवे. यह लोहभस्म सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, इलायची, जायफल और लौंग इन नौ औषधोंके चूर्णके बराबर लोहभस्म मिलायके इसको सहतसे आठ मासे पर्यंत देवे यह स्वयमग्निरस क्षय कासका नाश करे, अथवा इंद्रायनकी जड, भांग, पीपल और तिल इनके साथ ४ मासे देवे तो क्षयजन्य खांसी शांत होय ॥

सन्निपातकास ।

सन्निपातभवो ह्येषः क्षयकासः सुदारुणः ।
सन्निपातहितं तस्मात्कार्यमत्र चिकित्सितम् ॥

अर्थ-यह दारुण क्षयकास संनिपातसे होती है इसीसे जो संनिपात पर हित होवे उसी उपायको वैद्य करे ॥

अमृतादिकाढा।

अमृता नागरं फंजी व्याघ्रिपर्णीसुसाधितः।
क्वाथः पिप्पलिचूर्णाढ्यः कासश्वासौ जयत्यलम् ॥

अर्थ–गिलोय, सोंठ और सालपर्णी इनके काढेमें पीपलका चूर्ण डालके रोगीको पिलावे तो खांसी और श्वास इनको शीघ्र नाश करे ॥

भाङ्‌र्यादिकाढा।

भार्ङ्गी सनागरा सिंही कुलित्थं मूलकं तथा।
पिबेत्पिप्पलिचूर्णेन कासश्वासं व्यपोहति ॥

अर्थ–भारंगी, सोंठ, कटेरी, कुलथी और मूली इनका काढा कर फिर पीपलका चूर्ण मिलायके पीवे तो खांसी और श्वास इनको दूर करे ॥

स्वरसादियोग।

स्वरसं शृंगबेरस्य माक्षिकेण समन्वितम्।
पाययेच्छ्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफापहम् ॥

अर्थ–अदरकके रसमें सहत डालके पीवे तो श्वास, खांसी, पीनस और कफ इनका नाश करे परंतु अग्निपर कुछ गरम करके और बडी इलायचीका चूरा मिलायके खाय तो अधिक गुण करे ॥

मरीच्यादिचूर्ण।

सेवितं मधुखंडाभ्यां चूर्णं मरिचजं यदि।
किमर्थं क्रियते चिंता कासश्वासपराजितैः ॥

अर्थ–सहत और मिश्री इनके साथ मिरचका चूर्ण देनेसे खांसीकी और श्वासकी दूर होनेकी फिकर क्यों करते हो ? ॥

कुलित्थादिकाढा।

कुलित्थं कंटकारी च तथा ब्राह्मणयष्टिका।
शुंठीसुरभिसंयुक्तः कासश्वासज्वरापहः ॥

अर्थ–कुलथी, कटेरी, भारंगी, सोंठ और राल इन सबका काढा करके पीवे तो खांसी श्वास और ज्वर इनका नाश करे ॥

पुष्करादिकाढा ।

पौष्करं कट्फलं भार्ङ्गीं विश्वपिप्पलिसाधितम् ।
पिबेत्क्वाथं कफोद्रेके कासे श्वासे च हृद्गदे ॥

अर्थ-पुहकरमूल, कायफल, भारंगी, सोंठ और पीपल इन सबको समान भाग लेके काढा करे तो कफादिक, श्वास, खांसी और हृदयरोग इनको नाश करे ॥

कुनट्यादिलेह ।

कुनटी सैंधवं व्योषविडंगामरुहिंगुभिः ।
लेहः साज्यमधुकासहिक्काश्वासनिवारणः ॥

अर्थ-मनसिल, सैंधानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु और हींग इनका अवलेह करके उसमें घी और सहत डाल पीवे तो खांसी, हिचकी, श्वास इनको दूर करे ॥

बर्हिपादादि और मरिचादिलेह ।

श्वासकासहरा बर्हिपादा च क्षौद्रसर्पिषा ।
लिह्यान्मरिचचूर्णं वा सघृतं क्षौद्रशर्करम् ॥

अर्थ-पीले टेंटूके चूर्णमें सहत और घी मिलायके देवे अथवा काली मिरचोंका चूर्ण घी, सहत और मिश्री मिलायकर देवे तो खांसी दूर हो ॥

भार्ङ्ग्यादिचूर्ण ।

भार्ङ्गीशुंठिकणाचूर्णं गुडेन श्वासकासनुत् । संयुतो मधुसर्पिर्भ्यां चूर्णं त्रिकटुसंभवम् ॥ निहंति तरसा कासं श्वासानिव सतां हरिः ॥

अर्थ-भारंगी, सोंठ, पीपल इनके चूर्णको गुडमें मिलायके, अथवा सोंठ, मिरच, पीपल इनके चूर्णको सहत और घीमें मिलायके देवे तो श्वास, खांसीका नाश हो ॥

घनादिगुटी ।

घनविश्वशिवागुडजा गुटिका त्रिदिनं वदनांबुजमध्यधृता ।
हरति श्वसनं कसनं ललने ललनेव हिमे हृदये निहिता ॥

अर्थ-नागरमोथा, सोंठ और हरड इनका चूर्ण करके उसमें गुड मिलायके अथवा सोंठ, मिरच और पीपल इनका चूर्ण सहत और घी इनके साथ देवे तो श्वास, खांसीका नाश होय ॥

निर्गुंड्यादिघृत।

निर्गुंडीरसभागैकं रसाच्चतुर्गुणं घृतम्। पाच्यं घृतावशेषं च चव्यं वह्निविडंगकम्॥ चतुर्जातं कटुः कुष्ठं समं चूर्ण्य घृते पचेत्। अष्टमांशघृतं चूर्णं निर्गुंड्याख्यं घृतं पिबेत्॥ यवागूः कृष्णशाल्यास्तु तंडुलैः परिपाचितैः। निर्गुंडीघृतसंयुक्तं कासश्वासहरं पिबेत्॥

अर्थ–निर्गुंडीका रस १ भाग ले उसमें चौगुना घी डालके घृत शेष रहे तबतक पचावे फिर इसमें चव्य, चित्रक, वायविडंग, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, महुआ, कूठ इनका चूर्ण घृतका अष्टमांश डालके घृतके साथ पचावे फिर काले चावलोंकी यवागू डालके पचावे तो यह निर्गुंडीघृत सिद्ध होवे, यह खांसी और श्वासको दूर करे॥

धूमपान।

अपामार्गस्य पंचांगं संपिष्टं नलिकारसैः। तल्लिप्तवस्त्रे वालिप्य तालकं च मनःशिला॥ तं क्षिप्त्वाग्नौ पिबेत्धूमं सप्ताहं श्वासकासजित्॥

अर्थ–ओंगाके पंचांगको बारीक पीस उसको नालिकाके रसमें खरल करे उसमें हरताल और मनसिल घोटके उसका कपडे पर लेप करे जब सूख जावे तब इसको हुक्केमें धरके धूंआ पीवे तो सात दिनमें श्वास और खांसी इनको नाश करे॥

वारुणीपत्रधूम।

उत्तरावारुणीपत्रं शालितंडुलतालकम्। संपेष्य गुटिका कार्या बदरांडप्रमाणका॥ मुखी तंडुलपिष्टेन कर्तव्या छिद्रसंयुता। दीप्तांगारे वटीं क्षिप्त्वा मुखमाच्छाद्य यत्नतः॥ धूममेरंडनालेन पिबेद्भुक्तोत्तरं शनैः। तांबूलपूरितमुखं पथ्यं क्षीरोदनं हितम्॥ तत्क्षणान्नाशयेत्कासं सिद्धयोग उदाहृतः॥

अर्थ–इंद्रायनके पत्ते, शालीधानके चावल और हरताल इनको एकत्र पीस बेरकी गुठलीके बराबर गोली बनावे फिर चावलोंको पीसके चिलम बनावे

उसमें इस गोलीको रखके ऊपर अग्नि रखे और उसको ढकनेसे ढक देवे फिर उस चिलममें अंडकी नली (नै) लगायके भोजन करनेके पश्चात् पीवे और ऊपरसे पान खाय और पथ्यमें दूध भात खानेको देवे तो खांसी तत्क्षण दूर होय यह सिद्ध प्रयोग है ॥

हेमगर्भपोटली।

रसस्य भागाश्चत्वारस्तावंतः कनकस्य च। तयोश्च पिष्टिकां कृत्वा गंधो द्वादशभागिकः ॥ कुर्यात्कज्जलिकां तेषामुक्तभागाश्च षोडश। चतुर्विंशच्च शंखस्य भागैकं टंकणस्य च ॥ एकत्र मर्दयेत्सर्वं पक्वनिंबूकजै रसैः। कृत्वा तेषां ततो गोलं मूषासंपुटके न्यसेत्॥ मुद्रां दत्त्वा तते हस्तमात्रे गर्ते च गोमयैः। पुटेद्गजपुटेनैव स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥ पिष्ट्वा गुंजाचतुर्मानं दद्याद्गव्याज्यसंयुतम्। एकोनत्रिंशदुन्मानमरिचैः सह दीयते ॥ राजते मृन्मये पात्रे काचजे वावलेहयेत्। लोकनाथसमं पथ्यं कुर्याच्छुचितमानसः ॥ कासे श्वासे क्षये वाते कफग्रहणिकागदे। अतिसारे प्रयोक्तव्या पोटली हेमगर्भिका ॥

अर्थ-पारा ४ भाग और सुवर्णका बारीक चूरा ४ भाग लेकर दोनोंको एकत्र मर्दन करे जब दोनोंकी उत्तम पिट्ठी हो जावे तब पारेका १२ भाग गंधक ले. इसी पिट्ठीमें मिलायके खरल कर कजली करे फिर पारेका सोलहवां भाग मोती, चौवीस भाग शंख तथा एक भाग सुहागा लेकर उसमें मिलाय देवे फिर पके हुए नींबूके रसमें खरल करके उसका गोला बनावे और उस गोलेको सराव संपुटमें रखे ऊपरसे कपडमिट्टी करे फिर एक हाथ भरका गढा खोदे उसमें गोबरके आरने उपले भर बीचमें उस संपुटको रख गजपुटकी अग्नि देवे जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल लेवे और उसमें औषध निकाल किसी उत्तम पात्रमें भरके धर रखे. इस रसको हेमगर्भपोटलीरस कहते हैं. यह हेमगर्भ ४ रत्ती ले २९ नग काली मिरचोंके चूर्णसे चांदीके पात्रमें अथवा मिट्टीके पात्रमें अथवा कांचके प्यालेमें गौका घी डालके पीवे तथा चित्तको एकाग्र कर लोकनाथरसके समान पथ्य करे तो श्वास, खांसी, क्षयरोग, वादीके विकार, कफ और संग्रहणी तथा अतिसार इन सब रोगों को दूर करे ॥

कासविधूननरस ।

रसभागो भवेदेको गंधको द्वौ तथैव च । यवक्षारं त्रिभागं स्याद्रुचकं च चतुर्गुणम् ॥ मरीचं पंचभागं स्याच्छुद्धं रसविमर्दितम् । कासं पंचविधं हन्याच्छ्वासं पंचविधं हरेत् ॥

अर्थ–पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, जवाखार ३ भाग, पांगानिमक ४ भाग, काली मिरच ५ भाग ले इनको अदरखके रसमें खरल कर तीन २ रत्तीकी गोली बनायले इसे खाय तो पांच प्रकारकी खांसियोंका नाश करे ॥

ताम्रपर्पटी ।

मृतं ताम्रं त्रिभागं च रसं गंधं च तत्समम् । भागमेकं वत्सनाभं कज्जलीं खल्वमध्यगाम् ॥ गोघृतेन कृतं कल्कं लोहपात्रे विपाचयेत् । ढालयेदर्कपत्रस्थपर्पटीरससिद्धये ॥ गुंजाद्वयं त्रयं चैव पिप्पलीमधुसंयुतम् । त्रिःसप्तरात्रयोनेन रोगराजं च नाशयेत् ॥ आर्द्रकस्य रसेनैव सन्निपातं नियच्छति । त्रिफला खंडसंयुक्तं सर्वं पांडुं विनाशयेत् ॥ वातारितैलसंयुक्तं सर्वशूलनिवारणम् । कुमारिरसयोगेन वातपित्तोपशांतये ॥ बाकूचीरससंयुक्तं सर्वदद्रूविनाशनम् । त्रिफलामधुसंयुक्तं सर्वमेहनिवारणम् ॥ खदिरक्काथपानेन कुष्ठाष्टादशनाशनम् । मंथानभैरवेणोक्ता लोकानां हितकाम्यया ॥

अर्थ–तामेकी भस्म, पारा, गंधक ये प्रत्येक तीन भाग ले सिंगियाविष १ भाग इन सबको एकत्र करके कजली करे इसको गौके घीमें खरल कर लोहेके पात्रमें पक्क करके इसको आकके पत्तों पर ढाल देवे और दूसरे पत्तेसे तत्काल इसको ढकके दवाय देवे तो यह पर्पटी सिद्ध होय इसको दो अथवा तीन रत्ती लेके सहत और पीपलके चूर्णके साथ २१ दिन खाय तो राजयक्ष्माको नाश करे, अदरखके रसके साथ सेवन करे तो सन्निपातका नाश करे, त्रिफला और मिश्रीके अनुपानसे सर्व प्रकारके पांडुरोग, अंडीके तिलके अनुपानसे शूल, घीगुवारके रसके अनुपानसे वातपित्त, बावचीके रसके अनुपानसे सर्वकुष्ठ, त्रिफला और सहत इनके अनुपानसे सर्वप्रकारके प्रमेह, खैरके काढेके अनुपानसे अठारह प्रकारके कोढ इस प्रकार अनुपानके भेदसे अनेक रोगोंका नाश करे. यह मंथानभैरवने लोगोंके हितार्थ पर्पटीरस कहा है ॥

कंटकार्यादिचूर्ण ।

कंटकार्याः कणायाश्च चूर्ण समधु कासहृत् ॥

अर्थ-कटेरी और पीपल इनके चूर्णको सहतसे देवे तो खांसीको दूर करे ॥

लवंगादिचूर्ण ।

लवंगजातीफलपिप्पलीनां भागाश्च कल्प्याक्षसमानपूर्वाः । पलार्द्धमानं मरिचं प्रदेयं पलानि चत्वारि महौषधस्य ॥ सितासमस्तेन समाप्य चूर्णं रोगानिमानाशु बलान्निहंति । कासज्वरारोचकमेदगुल्मश्वासाग्निमांद्यं ग्रहणीविकारान् ॥

अर्थ-लौंग, जायफल और पीपल ये एक एक तोला, बहेडा ३ तोले, काली मिरच २ तोले तथा सोंठ १६ तोले ले इन सबका चूर्ण कर और इस चूर्णकी बरावर मिश्री मिलवे. यह चूर्ण खांसी, ज्वर, अरुचि, प्रमेह, गोला, श्वास, मंदाग्नि और संग्रहणीको दूर करे ॥

बिभीतकादिचूर्ण ।

द्वौ भागौ च बिभीतक्या भागैकं पिप्पलीयुतम् ।
चूर्णं मधुयुतं लेह्यं कासरोगहरं परम् ॥

अर्थ-बेहडा २ भाग और पीपल १ भाग इनका एकत्र चूर्ण कर सहतसे चाटे तो यह खांसीके दूर करनेमें सर्वोत्कृष्ट है ॥

पंचकोलादिचूर्ण ।

पिप्पली पिप्पलीमूलं शुंठीचूर्णं बिभीतकम् ।
मधुना लेहयेच्चाशु हरेत्कासं त्रिदोषजम् ॥

अर्थ-पीपल, पीपरामूल, सोंठ और बहेडा इनका चूर्ण सहतसे चाटे तो त्रिदोषजन्य खांसीका नाश होय ॥

बदरीकल्क ।

बदरीपत्रकल्कं वा घृतभृष्टं ससैंधवम् ।
ज्वरोपघाते श्वासे च लेहमेतं प्रयोजयेत् ।

अर्थ-बेरके पत्तोंका कल्क करके उसमें सैंधा निमक मिलायके घीमें तल लेय यह स्वरभंग और श्वास इन पर देवे ॥

कर्पूरादिचूर्ण ।

कर्पूरवालकंकोलजातीफलदलं समम् । लवंगं नागमरिचं कृष्णा-शुंठीविवर्द्धिता ॥ चूर्ण सितासमं ग्राह्यं रोचनं क्षयकासजित् । वैस्वर्यश्वासकासघ्नं छर्दितृष्णाक्षयापहम् ॥

अर्थ–कपूर, नेत्रवाला, कंकोल, जायफल और जावित्री ये समान भाग लेवे तथा लौंग, नागकेशर, काली मिरच, पीपल और सोंठ ये सब १–२–३–४ भाग इस क्रमसे लेय सबका चूर्ण कर तथा सब चूर्णकी बरावर मिश्री मिलावे इसके सेवन करनेसे रुचि करे और क्षय, कास, स्वरभंग, श्वास, खांसी और वमन इनका नाश करे ॥

त्रिकटुकादिचूर्ण ।

कटुत्रिकं छिन्नलताकृशानुफलत्रिकं वेल्लभवं सरासना । सशर्करं चूर्णमिदं तु सेव्यं कासाटवीदाहदवानलाख्यम् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, गिलोय, चीतेकी छाल, हरड, बहेडा, आंवला, मिरच और रास्ना इनका चूर्ण कर इसमें मिश्री मिलाय खानेको देवे तो खांसीरूप वनको अग्निके समान नष्ट करनेवाला है ॥

देवदार्वादिचूर्ण ।

देवदारुबलारास्नात्रिफलाव्योषपद्मकैः । सविडंगैः सितातुल्यं तच्चूर्णं सर्वकासनुत् ॥

अर्थ–देवदारु, बला, रास्ना, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, पद्माख और वायविडंग इनका चूर्ण करके बराबर मिश्री मिलाय खानेको देवे तो संपूर्ण खांसियोंका नाश करे ॥

द्विक्षारादि ।

द्वौ क्षारौ पञ्चमूलानि पंचैव लवणानि च । सठीनागरकोदीच्य-कल्कं वा वस्त्रगालितम् ॥ पाययेच्च घृतोन्मिश्रं सर्वकासनिबर्हणम् ॥

अर्थ–जवाखार, सज्जीखार, पंचमूल और पांचों निमक, कचूर, सोंठ, नेत्रवाला इनका कल्क करके वस्त्रसे छान लेवे फिर इसमें घी डालके देवे तो संपूर्ण खांसियोंका नाश करे ॥

ग्रंथिकादि ।

ग्रंथिकमागधिकाक्षमहौषधे रचितं चूर्णमिदं मधुना युतम् । हरति कासभवं दरमाततं विविधदोषहरं च निषेवितम् ॥

अर्थ-पीपरामूल, पीपल, बहेडा और सोंठ इनका चूर्ण सहतमें मिलायके देवे तो खांसीकी भयको और अनेक दोषोंका नाश करे ॥

कटुत्रिकादि ।

कटुत्रिकं च चूर्णितं गुडेन सर्पिषा युतम् ।
निहंति कासजं दरं निषेवणं निरंतरम् ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल इनका चूर्ण गुड और घी इनके साथ बहुत दिन देवे तो खांसीका भय नष्ट होवे ॥

हरीतक्यादिगुटी ।

हरीतकी कणा शुंठी मरिचं गुडसंयुतम् ।
कासघ्नो मोदकः प्रोक्तः परं चानलदीपनः ॥

अर्थ-हरड, पीपल, साठ और काली मिरच इनका चूर्ण गुडमें मिलायके खाय तो खांसी नष्ट होय तथा दीपन और पाचन है ॥

त्रिजातादि ।

त्रिजातमर्धकर्षं च पिप्पल्यर्धपलं सिता । द्राक्षामधुकखर्जूरं पलांशं श्लक्ष्णकल्कितम् ॥ मधुना गुटिका घ्नंति ता वृष्याः पित्तशोणिते । कासश्वासारुचिच्छर्दिमूर्च्छाहिक्कामदभ्रमान् ॥ क्षतक्षये स्वरभ्रंशे प्लीहशोषाढ्यमारुतान् । रक्तनिष्ठीवहृत्पार्श्व-रुक्पिपासाज्वरानपि ।

अर्थ-दालचीनी, पत्रज और इलायची ये छः छः मासे लेवे. पीपल २ तोले और मिश्री, मुलहटी, दाख, खजूर ये प्रत्येक ४ तोले बारीक चूर्ण करके कल्क करे और सहतसे गोली बनायके देवे. यह वृष्य है तथा पित्तरक्त, श्वास, खांसी, अरुचि, वांति, मूर्च्छा, हिचकी, मद, भ्रम, क्षतक्षय, स्वरभंग, प्लीहा, शोष, आढ्यवात, रुधिरकी वमन, हृदयरोग, पार्श्वशूल, प्यास और ज्वर इनको दूर करे ॥

मरीच्यादिगुटी ।

मरीचं कर्षमात्रं च पिप्पली कर्षसंमिता । अर्धकर्षो यवक्षारो कर्षयुग्मं च दाडिमम् एतच्चूर्णीकृतं युंज्यादष्टकर्षगुडेन हि । शाणप्रमाणगुटिका कृत्वा वक्त्रे विधारयन् ॥ अस्याः प्रभावा-त्सर्वेऽपि कासा यांत्येव संक्षयम् ॥

अर्थ—काली मिरच १ तोला, पीपल १ तोला, जवाखार छः मासे, अनारकी छाल २ तोले इन सबका चूर्ण करके उसमें ८ तोले गुड मिलायके चार २ मासेकी गोली बनावे इसको मुखमें रखे इस गोलीके प्रभावसे संपूर्ण प्रकारकी खांसी नष्ट होवे ॥

लवंगादिगुटी।

तुल्या लवंगमरिचाक्षफलत्वचः स्युः सर्वैः समो निगदितः खदिरस्य सारः । बब्बूलवल्कलकषाययुता विभाव्याकासान्निहंति गुटिका घटिकाष्टकांते ॥

अर्थ—लौंग, काली मिरच और बहेडेकी छाल लेवे; तथा इन तीनोंके बराबर खैरसार लेवे. सबको खरलमें डाल बबूरकी छालके काढेसे खरल करे तो यह लवंगादिगुटी आठ घडीमें सर्व प्रकारकी खांसियोंको दूर करे ॥

धनंजयवटी।

धनंजयत्रिजातकं कणा जटा कटुत्रिकम् ।
रसार्द्रकेन भावितं जयेच्च कासमाततम् ॥

अर्थ—कोहकी छाल, दालचीनी, पत्रज, इलायची, पीपरामूल, सोंठ कालि मिरच और पीपल इनका चूर्ण अदरखके रसमें खरल करे और गोली बनाय ले यह धनंजयवटी सर्व प्रकारकी खांसियोंको नष्ट करे ॥

खदिरादिगुटी।

खदिरं पौष्करं शृंगी कट्फलं द्विजयष्टिका। हरीतकी लवंगं च व्योषं चातिविषं तथा ॥ कारवीयासममृता बृहतीद्वयमक्षकम् । पृथक्कर्षद्वयं ग्राह्यं सूक्ष्मचूर्णं तु कारयेत् ॥ सर्वैः समं खादिरं च मेलयित्वा विभावयेत् । दाडिमत्वक् तथा क्षुद्राखादिरांभोभिरार्द्रकैः ॥ बबूलत्वग्दलैः क्वाथैश्चाटरूषजलं तथा । सप्तधा भावयेद्बध्वा गुटिका खदिराभिधा ॥ कासश्वासौ निहंत्याशु दुस्तरौ चिरजावपि।

अर्थ—कत्था, पुहकरमूल, कांकडासिंगी, कायफल, भारंगी, हरड, लौंग, सोंठ, मिरच, पापल, अतीस, अजमायन, धमासा, गिलोय कटेरी, बडी कटेरी और बहेडेका बक्कल ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. सबका बारीक चूर्ण करके उस सब चूर्णकी बराबर

खैरसार मिलावे, फिर अनारकी छाल, कटेरी, खैरकी छाल, बबूरकी छाल और पत्ते, अडूसा इनके काढेसे अथवा रससे सात वार घोटे फिर मासे भरकी गोली बांध ले. इसे खदिरादिवटी कहते हैं इससे खांसी और श्वास ये बहुत दिनके होवें तौ भी नष्ट हों ॥

व्योषादिगुटी ।

व्योषाम्लवेतसं चव्यं तालीसं चित्रकं तथा । जीरकं तित्तिडीकं च प्रत्येकं कर्षभागिकम् ॥ त्रिसुगंधित्रिशाणं स्याद्गुडः स्यात्कर्षविंशतिः । सर्वमेकत्र संकुट्य गुटिका कर्षसंमिता ॥ भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वान् कासान् व्यपोहति । पीनसं श्वासमरुचिं स्वरभेदं व्यपोहति ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, अमलवेत, चव्य, तालीस, चीता, जीरा, तिंतिडीक, प्रत्येक एक २ तोला ले और तज, पत्रज और इलायची ये चार २ मासे लेवे और गुड २० तोले इन सबको एकत्र कूटके एक एक मासेकी गोली बनावे इसको प्रातःकाल खाय तो संपूर्ण खांसी पीनस, श्वास, अरुचि और स्वरभेद इन सबको दूर करे ॥

पिप्पल्यादिगुटी ।

सपिप्पली पुष्करमूलपथ्या शुंठी शठा मुस्तकसूक्ष्मचूर्णम् ।
गुडेन युक्ता गुटिका प्रयोज्या श्वासेषु कासेषु विवर्धितेषु ॥

अर्थ-पीपल, पुहकरमूल, हरड, सोंठ, कचूर और नागरमोथा इनका बारीक चूर्ण करके इसको गुडमें मिलाय गोली बनावे यह बढी हुई खांसी, श्वास इनको दूर करे ॥

क्षवथौ गंधनाशे च धूमपानं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-जिसको छींक और गंध न आती हो उसको धूमपान करना चाहिये ॥

अर्कमूलादिधूम ।

अर्कमूलशिलेस्तुल्यं ततोऽर्धेन कटुत्रिकम् । चूर्णितं वह्निनिक्षिप्तं पिबेद्धूमं तु योगवित्॥ भक्षयेदथ तांबूलं पिबेद्दुग्धमथापि वा । कासः पंचविधो याति शांतिमाशु न संशयः ॥

अर्थ-आककी जड और मनसिल इनसे आधी सोंठ, मिरच, पीपल इनके

चूर्णको अग्निपर डालके धूँएको पीवे और ऊपरसे बीडी खाय अथवा दूध पीवे तो पांच प्रकारकी खांसी नष्ट हो. इसमें संदेह नहीं है ॥

मनःशिलादिधूम ।

मनःशिलाभिर्मरिचमांसीमुस्तेंगुदीयुतम् । धूमं तस्यानुपचय सुखोष्णं सगुडं पिबेत् ॥ एष कासान्पृथग्द्वंद्वसन्निपातसमुद्भवान् । शतैरपि प्रयोगाणां साधयेदप्रसाधितान् ॥

अर्थ-मनासिल, काली मिरच, जटामांसी, नागरमोथा और गोंदी इनके चूर्णमें गुड मिलायके इसको सुखोष्ण पीवे तो यह दोपज, द्वंद्वज, सान्निपातिक और सैकडों औषधोंसे जो खांसी अच्छी न होवे वे सब इससे नष्ट हों ॥

दूसरा प्रकार ।

मनःशिलालिप्तदलं बदर्यातपशोषितम् ।
सक्षीरं धूमपानं च महाकासनिबर्हणम् ॥

अर्थ-बेरके पत्तोंमें मनासिल लगाके धूपमें धर देवे जब सूख जावे तब इनको चिलममें धरके इनका धूआ पीवे तो घोर खांसीका नाश होय ॥

धत्तूरादिधूम ।

पिष्ट्वा त्रिपुटधत्तूरमूलव्योषमनः शिलाः। तेन प्रलिप्य वसनं धूमवर्तिं प्रकल्पयेत् ॥ धूमं तस्याः पिबेद्यस्तु कासो नश्येद्दिनत्रयात् ॥

अर्थ-धतूरेकी जड, सोंठ, मिरच, पीपल और मनसिल इनको एकत्र जलमें पीस कपडे पर लेप कर देवे फिर इसको धूपमें सुखायके वत्ती बनाय ले इसका धूँआ पीवे तो तीन दिनमें खांसी दूर होवे अथवा इसको हुक्केमें धरके पीवे ॥

जातिपत्रादिधूम ।

जातिपत्रं शिलारालैर्योजयेद्गुग्गुलं समम् ।
अजामूत्रेण पिष्टोऽयं धूमः कासहरः परः ॥

अर्थ-जावित्री, मनसिल, राल और गूगुल ये समान भागले सबको कूट पीस बकरीके मूत्रमें खरल करे फिर इसको हुक्केमें रखके इसके धूंएको पीवे तो खांसीको नष्ट करे ॥

जातिमूलादिधूम ।

जातीजटाकिसलयैर्बदरीदलैश्च जाता मसूरकफलैः समनःशिलाभिः । स्याद्धूमवर्तिरिह गुग्गुलुना समेतैः कासे स्थिते बदरिकाग्निविदह्यमानैः ॥

अर्थ—चमेलीकी जड, चमेलीके पत्ते, मसूर, मनसिल और गुगल इनको पीसके बेरकी पत्ती पर लेप कर देवे फिर इनको सुखाय हुक्केमें रखके इनके धूंएको पीवे तो खांसीको नष्ट करे ॥

हरिद्राधूम ।

रात्रिद्वयशिलाधूमपानात्कासश्रुतिः कुतः ।
जलपानादपि तथा क्षणेन क्षणदाक्षये ॥

अर्थ—हरदी, दारुहरदी और मनसिल इनके धूंएको पीवे किंवा उषःपान करे अर्थात् प्रातःकाल उठकर जलको पीवे तो सर्व प्रकारकी खांसी दूर हो ॥

बिभीतकावलेह ।

अजस्य मूत्रस्य शतं पलानि शतं पलानां च कलिद्रुमस्य ।
पक्वं समध्वाशु निहंति कासं श्वासं च तद्वत्सबलं बलासम् ॥

अर्थ—बकरीका मूत्र १००पल और बहेडेकी छाल १०० पल ले दोनोंको औटायके अवलेह बनावे इस अवलेहमें सहत डालके पीवे तो खांसी, श्वास और कफ इनका नाश करे

कंटकार्यवलेह ।

कंटकारीं तुलानीरे द्रोणे पक्त्वा कषायकम् । पादशेषं गृहीत्वा च तस्मिन् चूर्णानि दापयेत् ॥ पृथक्पलांशान्येतानि गुडूचीचव्यचित्रकम् । मुस्तकर्कटशृंगी च त्र्यूषणं धन्वयासकम् ॥ भार्ङ्गी रास्ना शठी चैव शर्करापलविंशतिः । प्रत्येकं च पलान्यष्टौ प्रदद्याद्धृततैलयोः ॥ पक्त्वा लेहत्वजाते च शीते मधुपलाष्टकम् । चतुःपलं तुगाक्षीरीपिप्पलीनां चतुःपलम् ॥ क्षिप्त्वा निदध्यात्सुदृढे मृन्मये भाजने शुभे । लेहोऽयं हंति कासार्तिहिक्काश्वासानशेषतः ॥

अर्थ–कटेरी ४०० तोले, जल २०४८ तोले ले सबको एकत्र कर चतुर्थांश काढा करे उसमें गिलोय, चव्य, चित्रक, नागरमोथा, काकडासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, धमासा, भारंगी, रास्ना और कचूर ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे तथा मिश्री ८० तोले, घी ३२ तोले लेवे और लोहभस्म ३२ तोले, वंशलोचन १६ तोले और पीपल १६ तोले मिलायके यह अवलेह उत्तम मिट्टीके पात्रमें भरके धर रखे इसको खाय तो यह खांसी, हिचकी, सर्व प्रकारके श्वास रोग इनको नाश करे ॥

अगस्तिहरीतक्यवलेह ।

दशमूली स्वयंगुप्ता शंखपुष्पी शठी बला । हस्तिपिप्पल्यपामार्गपिप्पलीमूलचित्रकान् ॥ भार्ङ्गीं पुष्करमूलं च द्विपलांशं यवाढकम् । हरीतकीशतं चैव जले पंचाढके पचेत् ॥ यवैः स्विन्नैः कषाये च पूतं तच्चाभयाशतम् । पचेद्गुडतुलां दत्त्वा कुडवं च पृथग्घृतम् ॥ तैलात्सपिप्पलिचूर्णाच्च सिद्धे शीते च माक्षिकात् । लिह्याद्द्वे चाभये नित्यमतः खादेद्रसायनम् ॥ वलिं च पलितं हन्याद्वर्णायुर्बलवर्द्धनम् । पंच कासान् क्षयान् श्वासान् हिक्कां च विषमज्वरान् ॥ हन्यात्तथा ग्रहण्यर्शोहृद्रोगारुचिपीनसान् । अगस्तिविहितं धन्यमिदं श्रेष्ठं रसायनम् ॥

अर्थ–दशमूल, कौंछके बीज, संखाहूली, कचूर, खिरेटी, गजपीपर, औंगा, पीपरामूल, चित्रककी छाल, भारंगी, पुहकरमूल ये प्रत्येक आठ आठ तोले लेवे जौ १०२४ तोले, हरड ४०० तोले और जल ५१२० तोले डालके पक करे जब जौ सीजके काढा हो जावे तब उतारके जलको छानले उसमें ४०० तोले वडी २ हरड डालके औटावे और गुड ४०० तोले, घी १६ तोले, तेल १६ तोले और पीपलका चूर्ण १६ तोले डालके अवलेह बनावे जब तैयार हो जावे तब नीचे उतारले शीतल होने पर सहत १६ तोले मिलावे और शीशीमें अथवा चीनी आदिके पात्रमें भरके धर रखे इसमेंसे दो हरड नित्य खाय यह हरड वली, पलित और ५ प्रकारकी खांसी, क्षय, श्वास, हिचकी, विषमज्वर, संग्रहणी, बवासीर, हृदयरोग, पीनस इनको नष्ट करे और वर्ण, आयुष्य तथा बलको बढावे. यह अगस्त्यऋषिकी कही हुई है इसीसे इसको अगस्त्यावलेह कहते हैं ॥

व्याघ्र्यादिघृत ।

व्याघ्रीस्वरसविपक्वं रास्नाकटफलगोक्षुरव्योषैः ।
सर्पिः स्वरोपघातं निहंति कासं च पंचविधम् ॥

अर्थ--कटेरीके स्वरसमें रास्ना, कायफल, गोखरू, सोंठ, मिरच, पीपल और घी डालके इस घृतको सिद्ध कर लेवे इसके खानेसे स्वरभंग और पांच प्रकारकी खांसी इनका नाश होवे ॥

गुडूच्यादिघृत ।

सर्पिर्गुडूचीवृषकंटकारीक्राथेन कल्केन च सिद्धमेतत् ।
पेयं पुराणज्वरकासशूलप्लीहाग्निमांद्यग्रहणीगदेषु ॥

अर्थ--गिलोय, अडूसा और कटेरी इनका काढा करे तथा कल्क करे इसमें घी डालके सिद्ध करे तो यह जीर्णज्वर, खांसी, शूल, प्लीहा, मंदाग्नि और संग्रहणी इनको नष्ट करे ॥

त्र्यूषणादिघृत ।

त्र्यूषणं त्रिफला द्राक्षा काश्मर्यांटपरूषकम् । द्वे पाठे देवदार्व्यब्दसगुप्तं चित्रकं सठी ॥ व्याघ्री तामलकी मेदा काकनासा शतावरी । त्रिकंटकं विदारी च पिष्ट्वा कर्षसमान् घृतात् ॥ प्रस्थं चतुर्गुणं क्षीरं सिद्धं कासहरं पिबेत् । ज्वरगुल्मारुचिप्लीहशिरोहृत्पार्श्वशूलनुत् ॥ कामलार्शोनिलाष्ठीलाक्षतशोषक्षयापहम् । त्र्यूषणं नाम विख्यातं घृतमेतन्महोत्तमम् ॥

अर्थ--सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, दाख, कंभारी, अडूसा, पाढ, वल्लीपाढ, देवदारू, नागरमोथा, कौंछके बीज, चित्रक, कचूर, कटेरी, भूय आंवला ये सब एक २ तोला ले घी ६४ तोले, दूध २५६ तोले डालके घृत सिद्ध करे तो खांसी, ज्वर, गोला, अरुचि, प्लीहा और मस्तक, हृदय, पार्श्व इनका शूल, कामला, बवासीर, वाताष्ठीला, क्षतक्षय और क्षय इनका नाश करे यह त्र्यूषणनामक घृत सर्वोत्तम विख्यात है ॥

कंटकारीघृत ।

समूलफलपत्रायाः कंटकार्या रसाढकम् । घृतप्रस्थं बलाव्योषविडंगं शठिदाडिमम् ॥ सौवर्चलं यवक्षारं विश्वामलकपौष्करैः। वृश्चिवद्बृहतीपथ्या यवानीचित्रकादिभिः ॥ मृद्वीका चव्यवर्षाभूदुरालंभाम्लवेतसैः । शृंगीतामलकीभार्ङ्गीरास्नागोक्षुरकैः

पचेत् ॥ कल्कैस्तु सर्वकासेषु श्वासहिक्कासु शस्यते । कंट-कारीघृतं सिद्धं पंचकासनिषूदनम् ॥

अर्थ–कटेरीके पंचांगका रस १०२४ तोले, घी ६४ तोले और खिरेटीका रस, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, कचूर, अनारदाना, संचर निमक, जवाखार, सोंठ, आमले, पुहकरमूल, सोंठ, लाल रंगकी कटेरी, हरड, अजमायन, चित्रक, दाख, चव्य, सपेद सांठ, धमासा, अमलवेत, काकडासिंगी, भूयआंवला, भारंगी, रास्ना, गोखरू इनका काढा और कल्क डालके घृत सिद्ध करे यह संपूर्ण प्रकारकी खांसी, श्वास और हिचकी इन पर देना चाहिये यह सिद्धकंटकारीघृत पांच प्रकारकी खांसीको नष्ट करे ॥

दूसरा प्रकार।

कंटकार्यास्तुलां क्षुण्णां कृत्वा द्रोणेऽभसः पचेत् । तेनाढकेन क्वाथस्य घृतप्रस्थं पिचून्मितैः ॥ रास्नादुस्पर्शषड्ग्रंथिपिप्प-लीद्वयचित्रकैः । सौवर्चलयवक्षारकृष्णामूलैश्च तज्जयेत् ॥ कास-श्वासकफष्ठीवहिक्कारोचकपीनसान् ॥

अर्थ–कटेरी ४०० तोलेको २०४८ तोले जलमें औटावे जब आधा जल रहे तब इस काढेको उतारके छान लेवे फिर इसमें ६४ तोले घी तथा रास्ना, धमासा, पीपल बडी, पीपल छोटी, गजपीपल, चित्रक, संचर निमक, जवाखार, पीपरामूल ये एक एक तोला डालके घृत सिद्ध करे. यह कंटकारीघृत खांसी, श्वास, कफकी वांति, अरुचि और पीनस इनको दूर करे ॥

भागोत्तरवटी।

रसगंधकणा पथ्या कलिद्रुफलवासकः । भार्ङ्गी चेति क्रमाद्वृद्ध-मेतज्जंबीरजद्रवैः ॥ अष्टाविंशत्तमानेतान्कुर्यात्क्षौद्रेण गोलकान् । कर्षप्रमाणमेतस्य तमेकं प्रातरुत्थितः ॥ अद्यान्मासत्रयं क्षुद्रा-क्वाथं दशकणायुतम् । पिबेत्तदनु कासाच्च श्वासाच्च परिमुच्यते॥

अर्थ–पारा, गंधक, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, और भारंगी ये क्रमवृद्धिसे लेकर इनका चूर्ण करे और नींबूके रसमें खरल करे फिर सहतसे १ तोले भरकी गोली २८ बनावे और नित्यप्रति १ गोली सेवन करे. इस प्रकार तीन महीने भक्षण करे और ऊपरसे दस पीपल पीसके पीवे तो खांसी और श्वाससे छूट जावे ॥

अगंधखर्परपर्पटी ।

भागौ रसस्य द्वावेकौ द्वावेकौ लोहभस्मनः । एतद्धृते द्रवीभूतं मृद्वग्नौ कदलीदले ॥ पातयेद्गोमयगते तथैवोपरि योजयेत् । ततः पिष्ट्वा द्रवैरेभिर्मर्दयेत्सप्तधा पृथक् ॥ भार्ङ्गीशुंठीमुनिवराजयानिर्गुंडिकाद्रवैः । व्योषवासककन्यार्द्रद्रवैः शुष्कैः पुटेल्लघुः ॥ अगंधखर्परो नाम्नां पर्पटीति रसो भवेत् । सर्वरोगहरः स्वैः स्वैरनुपानैर्द्विमाषतः ॥ तांबूलपत्रसहितः कासश्वासहरः परः । सकणः सुरसाक्काथोऽनुपानं वा सगोजलम् ॥

अर्थ–पारा बारह भाग और लोहभस्म बारह भाग इनकी कजलीको अग्निमें तपायके केलेके पत्ते पर ढाल देवे. फिर उसको पीसके भारंगी, सोंठ, अगस्तिया, अरनी, निर्गुंडी, सोंठ, मिरच, पीपल, अडूसा, घीगुवार और अदरख इनके काढेमें अथवा रसमें घोटकर लघु पुट देवे तो यह अगंधखर्पर नामक रस बने इसको पर्पटीभी कहते हैं यह अनुपान दो रत्तीके प्रमाण देनेसे संपूर्ण रोगोंको हरण करे. इसको पानमें रखके खाय और ऊपरसे तुलसीके काढेमें पीपलका चूर्ण डालके पीवे अथवा गोमूत्र पीवे तो खांसी और श्वास इनको नष्ट करे ॥

कासश्वासविधूननरस ।

रसभागो भवेदेको गंधकद्वौ तथैव च । यवक्षारस्त्रिभागः स्याद्रुचकं च चतुर्गुणम् ॥ मरीचं पंचभागं स्याच्छुद्धं रसविमर्दितम् । कासं पंचविधं हन्याच्छ्वासं पंचविधं तथा ॥

अर्थ–शुद्ध पारा १ भाग, गंधक २ भाग, जवाखार ३ भाग, पांगा निमक ४ भाग, तथा काली मिरच ५ भाग सब शुद्ध लेवे सबको पारेके साथ खरल करे जबतयार हो जावे तब, खानेको देवे तो ५ प्रकारकी खांसी तथा पांच प्रकारका श्वास इनको नाश करे ॥

गुरुपंचमूलीकाढा ।

अतः परं कोमलवाणि कासश्वासप्रतीकारमुदीरयामि ।
निहंति कासं गुरुपंचमूलीकृतः कषायश्चपलासहायः ॥

अर्थ–लोलिंबराजकवि अपनी स्त्रीको संबोधन देकर कहता है कि हे कोमलवाणि ! अब इसके उपरांत मैं तेरे आगे खांसी और श्वासका प्रतीकार कहता हूं. बृहत्पंचमूलके काढेमें पीपलका चूर्ण डालके पीवे तो खांसीको नष्ट करे ॥

वासादिकाढा ।

वासाहरिद्राधनिकागुडूचीभार्ङ्गीकणापौष्कररिंगणिनाम् ।
क्काथेन मारीचरजोन्वितेन कासः क्षयं याति न कस्य पुंसः ॥

अर्थ–अडूसा, हलदी, धनिया, गिलोय, भारंगी, पीपल, पुहकरमूल और कटेरी इनका काढा काली मिरचोंका चूर्ण डालके पीवे तो किस पुरुषकी खांसी दूर नहीं होती ? ॥

सिंहीकषाय ।

अयि रत्नकले नीलनलिनच्छदनेक्षणे ।
सिंहीकषायः सकणः कासग्रासकरः क्षणात् ॥

अर्थ–हे रत्नकले ! हे नीलनलिनच्छदनेक्षणे ! कटेरीके काढेमें पीपलका चूर्ण डालके देवे तो खांसीको एक क्षणमात्रमें ग्रास कर जावे ॥

वृषादिकाढा ।

पुलोमजावल्लभसूनुपत्नीतातात्मभूशेखरवाहनस्य ।
सौंदर्यदूरीकृतरामरामे कषायकः कासमीरसर्पः ।

अर्थ–हे सौंदर्यदूरीकृतरामरामे ! इन्द्राणी पति (इन्द्र) का पुत्र (अर्जुन) की स्त्री (द्रौपदी) का पिता (द्रुपद) का पुत्र (शिखंडी) सो है मस्तकमें जिसके ऐसे (शिव) का वाहन (वृष) अर्थात् अडूसा इसका काढा खांसीरूप पवनके पीनेको सर्परूप है यह श्लोक कूट है और लोलिंबराजमें लिखा है ॥

आर्द्रकावलेह ।

आर्द्रादर्धगुडातुलाऽपि तथार्धाभ्रं च कुस्तुंबरीदीप्यायोजरणा-
त्रिजातकटुकादेतत्पचेद्युक्तितः । लेहो रत्नकले तवैव कथितः
प्राणप्रियाया मया कासार्शोज्वरपीनसश्वयथुरुग्गुल्मक्षयध्वंसनः॥

अर्थ–अदरख २०० तोले, गुड २०० तोले, धनिया २ तोले और अजमायन, लोह-भस्म, जीरा, दालचीनी, पत्रज, इलायची, कुटकी इन प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले लेवे सबको युक्तिपूर्वक पचायके अवलेह सिद्ध करे यह खांसी, बवासीर, ज्वर, पीनस, सूजन, गोला और क्षय इनका नाश करे ॥

व्याघ्रीहरीतक्यवलेह ।

समूलपुष्पच्छदकंटकार्यातुलाजले द्रोणपरिप्लुता च । हरीतकीनां

च शतं निदध्यादेतत्तु पक्त्वा चरणावशेषम् ॥ गुडस्य दत्त्वा शतमेतदग्नौ विपक्कमुत्तार्य ततः सुशीते । कटुत्रिकं च त्रिपलप्रमाणं पलानि षट् पुष्परसस्य चापि ॥ क्षिपेच्चतुर्जातपलं यथाग्निप्रयुज्यमानो विधिनावलेहः । वातात्मकं पित्तकफोद्भवं च द्विदोषकासानपि सन्निपातान् ॥ क्षतोद्भवं कासक्षयं च हन्यात्सपीनसश्वासमुरःक्षतं च । यक्ष्माणमेकादशमुग्रभूयं भृगूपदिष्टं हि रसायनं स्यात् ॥

अर्थ–कटेरीका पंचांग ४०० तोले और ४०० तोले हरड ले इनको २०४८ तोले जलमें डालके चतुर्थांश शेष काढा करे फिर उसमें ४०० तोले गुड डालके उत्तम अवलेह योग्य पाक करे जब सिद्ध हो जावे तब उतार लेवे और शीतल होने पर आगे लिखी हुई औषध डाले जैसे सोंठ, काली मिरच और पीपर चार २ तोले, सहत २४ तोले तथा दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर ये चार तोले डाले फिर इसको बलाबल विचारके खोनेको देय तो वात, पित्त, कफ, द्विदोष, सन्निपात इनसे होनेवाले तथा क्षतकास, क्षयकास, पीनस, उरःक्षत, ग्यारह प्रकारके क्षय इनको नाश करे यह रसायन भृगुने कहा है ॥

कासकंडनावलेह ।

अजामूत्रं शतपलं मंदाग्नौ गुडपाकवत् । पक्त्वा बिभीतक चूर्णं पलद्वयमितं क्षिपेत् ॥ पलं पिप्पलिचूर्णं च पलमात्रं मृतायसम् । कंटकारीफलरजो निःक्षिपेच्च पलद्वयम् ॥ ततो माषद्वयं खादेट्टंककर्षमथापि वा । क्षौद्ररंभांबुना वापि सर्वकासात्प्रमुच्यते ॥ असाध्यभिषजा त्यक्ताश्चिरजापथ्यवर्जिताः । ये कासास्ते त्वनेनाशु प्रणश्यंति न संशयः ॥ कासकंडननामायं योग आत्रेयभाषितः ॥

अर्थ--बकरीके मूत्र ४०० तोलेको मंदाग्नि पर रखके ·गुडपाकके समान पक करके उसमें बहेडेका चूर्ण ८ तोले, पीपलका चूर्ण ४ तोले, लोहकी भस्म ४ तोले, कटेरीके फलका चूर्ण ८ तोले इन सबको एकत्र करके सहतसे अवलेह बनावे यह कासकंडनावलेहको दो मासे वा दस मासे अथवा एक तोला नित्य सेवन करे अथवा केलेके जलसे देवे तो बहुत दिनोंसे वैद्योंने छोडा तथा पथ्यहीन ऐसा खांसीका रोग शीघ्र नष्ट करे यह आत्रेयऋषिने कहा है ॥

हेमगर्भपोटली ।

शुद्धसूतं त्रिभागं च तत्समं लोहभस्म च । भागैकं गंधकं दद्या-त्तदर्धं स्वर्णमेव च ॥ कज्जलीं कारयेत्तत्तु खल्वके सप्तवासरम् । अथ निर्गुंडिकाद्रावैर्मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ अथवा कनकद्रावैर्गुटिकां कारयेत्ततः । किंचिच्छलिसमायुक्तवस्त्रे गोलं निधाय च ॥ बध्नीयात्पोटलीमेवं ततश्च त्रिपुटं पचेत् । दृढमृन्मयपात्रस्थे गंधं दत्त्वाधरोत्तरम् ॥ तन्मध्ये पोटलीं न्यस्य निर्वातभवनांतरम् । वितस्तिप्रमितां गर्त्तां तस्यां संस्थाप्य मुद्रयेत ॥ अंगुलीमुद्रिकाभिश्च ज्वालयेदिंधनानि च ॥ यामेन सिद्धतां याति हेमगर्भाख्यपोटली ॥ अनुपानानुसारेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥

अर्थ-शुद्ध पारा ३ भाग, लोहभस्म ३ भाग, गंधक १ भाग, और सुवर्णकी भस्म आधा भाग इनकी खरलमें कजली करे फिर इसको निर्गुंडीके रससे ७ दिन भावना देवे फिर धतूरेके रसमें खरल करके गोला कर लेवे फिर इसके ऊपर कपडा लपेटदे और मिट्टीके बरतनमें गंधक बिछाय इस गोलेको रख देवे और ऊपरसे फिर गंधक बिछाय दे. फिर निर्वात स्थानमें एक बितस्तका गड्ढा करके उसमें इस गोलेके पात्रको रखके उस पर मुद्रा दे उसके ऊपर १ अंगुल मिट्टी डाल देवे और एक प्रहर लकडीकी अग्नि देवे तो यह हेमगर्भपोटलीरस सिद्ध होवे इसको अनुपानके साथ सर्व रोगपर देवे तो सबको नष्ट करे ॥

हेमगर्भ ।

रसस्य भागाश्चत्वारस्तदर्धं कनकस्य च । तदर्धं ताम्रकं चैव मौक्तिकं विद्रुमं समम् ॥ तत्समानेन बलिना सर्वं खल्वे विमर्दयेत् । कृत्वा तु गोलकं पश्चात्पचेद्भूधरयंत्रके ॥ मृदुना वह्निना चैव स्वांगशीतं समुद्धरेत् । बलिमेव च सम्यग्वै षड्गुणं जारयेत्सुधीः ॥ हेमगर्भरसो नाम त्रिषु लोकेषु विश्रुतः । कासश्वासेषु सर्वेषु शुलेषु च हितस्तथा ॥ तत्तद्रोगानुपानेन सर्वान् रोगाञ्जयेत्परम् ॥

अर्थ-पारा ४ भाग, ताम्रभस्म १ भाग, मोती ११ भाग, मूंगा १ भाग और गंधक १ भाग इन सबको खरलमें डालके कजली करे। फिर इसका गोला बनाय उसको

भूधरयंत्रमें रख मंदाग्निसे पचन करावे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल गंधकके साथ खरल करके फिर पुट देवे इस प्रकार षड्गुण गंधक जारण करे तो यह हेमगर्भ रस त्रिलोकीमें खांसी, संपूर्ण श्वास और शूल इनका नाश करनेमें प्रसिद्ध है तथा रोगोक्त अनुपानके साथ सर्व रोगोंका नाश करे ॥

दूसरा प्रकार ।

शुद्धसूतं पलं चैकं पादांशं शुद्धहेमकम् शुद्धगंधस्य माषैकं प्रतिकर्षेण योजयेत् ॥ त्रयमेकत्र कुर्वीत श्लक्ष्णचूर्णं च कारयेत् । सुदृढं बंधयेद्वस्त्रे बहिः सूतं समं बलिम् ॥ वस्त्रं गृहीत्वा गुटिका तदंतर्बंधयेत्पुनः । शरावसंपुटे न्यस्य मुखे मुद्रां च कारयेत् ॥ भूमिसंपुटगं कृत्वा भूधराख्ये पचेत्पुटे । स्वांगशीतं समुद्धृत्य त्यजेज्जीर्णं च गंधकम् ॥ पुनःसंचूर्ण्य गुटिकाः सुदृढं बंधयेद्भिषक् । तथा बहिर्बलिं दत्त्वा भूधराख्ये पुनः पचेत् ॥ एवं दत्त्वा सुनिपुटं रसः स्याद्धेमगर्भकः । श्वासकासेषु सर्वेषु शूलेषु विहितस्तथा ॥

अर्थ-शुद्ध पारा ४ तोले, शुद्ध सुवर्ण १ तोला और शुद्ध गंधक १ मासा ले तीनोंको एकत्र करके बारीक चूर्ण करे फिर इसको दृढ कपडेमें बांधे और उस कपडेके बाहर पारे गंधककी कजली कर उसको जलमें सानके लेप करदे और दूसरा कपडा चढाय देवे फिर गोलेको सरावसंपुटमें रख मुखको मुद्रा देकर बंद कर देवे, फिर इसको पृथ्वीमें गड्ढा खोद भूधरयंत्रमें पचन करे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकालके ऊपर जली हुई गंधकको दूर करे फिर चूर्ण कर दृढ गोला बनाय लेवे उसी प्रकार कपडा लपेट कजलीकी पंक ऊपरसे लपेट देवे और भूधरयंत्रमें रखके फूंक देवे इस प्रकार सात पुट देवे तो हेमगर्भपोटलीरस सिद्ध होवे यह खांसी, श्वास, शूल इन पर परम हितकारी है तथा अनुपानके साथ सर्व रोगोंका नाश करे है ॥

कासकेसरी ।

दरदं मरिचं मुस्तं टंकणं च विषं समम् ।
जंबीराद्भिश्च संमर्द्य कुर्यान्मुद्गनिभां वटीम् ॥
आर्द्रकस्वरसेनैव कासं श्वासं व्यपोहति ॥

अर्थ-हिंगुल, काली मिरच, नागरमोथा, सुहागा और सिंगियाविष इन सबको

जंभीरीके रसमें खरल कर मूंगके समान गोली बनावे. इसको अदरखके रससे खानेको देवे तो खांसी और श्वास इनको दूर करे ॥

रसेंद्रवटी ।

कर्षं शुद्धरसेंद्रस्य गंधकस्याभ्रकस्य च । ताम्रस्य हरितालस्य लोहस्य च विषस्य च ॥ मरिचस्य च सर्वेषां लक्ष्णचूर्णं पृथक् पृथक् । मानोल्बौ खंडकर्षं च निर्गुंडी काकमाचिका ॥ केशराजभृंगराजस्वरसेन सुभावितम् । कलायपरिमाणं तु गुटिकां कारयेद्भिषक् ॥ कृत्वादौ शिवमभ्यर्च्य द्विजादीन्परितोषितान् । जीर्णान्नो भोजयेत्पश्चात्क्षीरमांसरसाशनः ॥ अपि वैद्यशतैस्त्यक्तमम्लपित्तं नियच्छति । कासं पंचविधं हंति श्वासं चैव सुदुर्जयम् ॥

अर्थ–शुद्ध पारा, गंधक, अभ्रक, ताम्र, हरिताल लोह इनकी भस्म और सिंगिया-विष तथा काली मिरच इनका बारीक चूर्ण करके निर्गुंडी, मकोय, काला भांगरा और भांगरा इनके रसकी भावना देकर मटरके बराबर गोली बनावे इसको श्रीशिवका पूजन कर तथा ब्राह्मणोंको दान देकर सेवन करे और अन्न पचने पर फिर भोजन करे, दूध और मांसरस भोजन करे तो सैकडों वैद्योंसे जो अच्छा न होवे ऐसा अम्लपित्त, पांच प्रकारकी खांसी और दुर्जय श्वास इनको नाश करे ॥

नीलकंठरस ।

सूतकं गंधकं लोहं विषं चित्रकपत्रकम् । वरांगं रेणुका मुस्ता ग्रंथिकं नागकेसरम् ॥ फलत्रिकं त्रिकटुकं शुल्बं तुल्यं तथैव च । एतानि समभागानि गुडो द्विगुणमुच्यते ॥ संमर्द्य गुटिकां कृत्वा भक्षयेच्चणमात्रकम् । कासे श्वासे तथा गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ॥ मूत्रकृच्छ्रे मूढगर्भे वातरोगे च दारुणे । नीलकंठरसो नाम शंभुना निर्मितः स्वयम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, लोहभस्म, सिंगियाविष, चित्रक, पत्रज, मोटी दालचीनी, पित्तपापडा, नागरमोथा, पीपरामूल, नागकेशर, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल और ताम्रभस्म ये समान भाग लेवे तथा सब औषधोंसे दूना गुड डाले सबको घोटके

एक जीव करे और चनेके बराबर गोली बनावे यह खांसी, श्वास, गोला, प्रमेह, विषमज्वर, मूत्रकृच्छ्र, मूढगर्भ और वातरोग इन पर भक्षण करे यह नीलकंठ नामक रस श्रीशिवने स्वयं निर्माण करा है ॥

लोकनाथपोटली ।

कृत्वा जंभरसेन गंधरसयोस्तत्तुल्यताम्रावृतं गोलं लावणयंत्रगर्भनिहितं रुद्ध्वा पचेत्तं शनैः । यामानष्टकपर्दजेन सकलं तुल्येन तद्भस्मना युक्तं चित्रकवारिणा लघुतरं पिष्ट्वा पुटं दापयेत् ॥ संशुद्धामिति पोटलीं सहविषं मारीचचूर्णेन तां मृद्नीयादिति लोकनाथविधिना दौर्बल्यकासादिषु । शोफामानिलगुल्मशूलकसनश्वासग्रहण्यार्शसी प्रौढे यक्ष्मणि पांडुरोगसहिते संतापमांद्यारुचौ ॥

अर्थ–गंधक और पारा इन दोनोंकी कजली करके नींबूके रसमें खरल करे फिर कजलीके समान तामेकी डिब्बिया लेवे उसमें इस कजलीको भरके बंद कर देवे और एक हांडीमें निमक भरके बीचमें उस डिब्बीको रखे ऊपर फिर निमक भर देवे और उसके मुखको बंद कर देय तथा ऊपरसे उस पर कपडमिट्टी देकर सुखायले इसको अग्निके संपुटमें रखके आठ प्रहर पर्यंत पचावे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकालके उसके बीचमेंसे उस डिब्बीसहित भस्मको निकाल पीस लेवे और उसमें समान कौडीकी भस्म मिलवे फिर चित्रकके रसमें घोटके पुट देवे उस पुटमेंसे निकालके सिंगियाविष और काली मिरचका चूर्ण मिलावे और खरलमें डालके बारीक पीस डाले इस लोकनाथपोटलीरसको लोकनाथरसके सदृश देवे तो दुर्बलता, कृशता, सूजन, आमवात, गोला, शूल, खांसी, श्वास, संग्रहणी, बवासीर, क्षयरोग, पांडुरोग, संताप, मंदाग्नि और अरुचि इनको नाश करे ॥

अमृतार्णवरस ।

पारदं गंधकं शुद्धं मृतलोहं च टंकणम् । रास्नाविडंगत्रिफलादेवदारुकटुत्रयम् ॥ अमृता पद्मकं क्षौद्रं विषं तुल्यांशचूर्णितम् । त्रिगुंजं सर्वकासार्तं सेवयेदमृतार्णवम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, लोहभस्म, सुहागा, रास्ना, वायविडंग, हरड, बहेडा, आंवला, देवदारु, सोंठ, मिरच, पीपल, गिलोय, पद्माख, सहत और सिंगियाविष ये सब समान

भाग लेवे सबका चूर्ण करके तीन रत्ती सर्वकासयुक्त रोगीको देवे. इसे अमृतार्णवरस कहते हैं ॥

अग्निरस ।

रसगंधकपिप्पल्यो हरीतक्यक्षवासकः । यष्ट्यांतरगुडं चूर्णं बब्बूलक्काथभावितम् ॥ एकविंशतिवारेण शोषयित्वा विचूर्णयेत् । भक्षयेन्मधुना हंति कासमग्निरसो ह्ययम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, पीपल, हरड, बहेडा, अडूसा और मुलहटी इनको समान भाग ले चूर्ण करे फिर इसको बबूरके काढेकी २१ भावना देवे तथा सुखायके चूर्ण कर लेवे इसको सहतके साथ देवें तो खांसीको दूर करे इसको अग्निरस कहते हैं ॥

कासकर्त्तरी ।

वंगं कृष्णाभयाक्षाटरूषभार्ङ्ग्यः क्रमोत्तराः । तत्समं खादिरं क्षारं बब्बूलक्काथभावितम् ॥ एकविंशतिवारं च मधुना कासकर्तरी । कासं श्वासं क्षयं हिक्कां हंत्येतन्नात्र संशयः ॥

अर्थ–वंग [लौंग], पीपल, हरड, बहेडा, अडूसा और भारंगी ये क्रमसे अधिक २ भाग लेवे इन सबके बराबर खैरका सार लेवे अथवा क्षार लेवे इन सबको एकत्र करके बबूलके काढेकी २१ भावना देवे तो यह कासकर्त्तरीरस बने इस रसको सहतमें मिलायके देवे तो खांसी, श्वास, क्षय और हिचकी इनका नाश करे इसमें संदेह नहीं ॥

कफाग्निवटी ।

कर्पूरमर्धकर्षं मृगमदमपि देवकुसुमयुगम् । मरिचं कणाक्षकुलिंजनमेकैकं शुक्तिपरिमाणम् ॥ दाडिमफलवल्कलपलमखिलसमं खादिरसारमवचूर्ण्य । वटिका मुद्गसमाना कृता धृतास्ये कफघ्नी स्यात् ॥

अर्थ–कपूर और कस्तूरी एक २ तोला, लौंग २ तोले और काली मिरच, पीपल, बहेडा, कुलिंजन ये प्रत्येक आधा २ तोला लेय तथा अनारकी छाल ४ तोले लेय इन सबको खैरसारके काढेसे खरल करके मूंगके समान गोली बांधे इसको मुखमें रखे तो कफका नाश करे ॥

कासपथ्य ।

शालिषष्टिकगोधूममाषमुद्गकुलित्थकाः । छाग्याः पयो घृतं बिंबी वार्त्ताकं बालमूलकम् ॥ कासमर्दकजीवंती वास्तुकं बीजपूरकम् । गोस्तनी लशुनं लाजा व्योषमुष्णोदकं मधु ॥ पथ्यमेतद्यथादोषमुक्तं कासगदातुरे ॥

अर्थ-शालीचांवल, गेहूं, उडद, मूंग, कुलित्थ बकरीका दूध व घी, कंदूरी, बैंगन, छोटी मूली, कासमर्द, जीवंती, वास्तुक, बिजोरा, मुनक्का, लहसन, खील, सोंठ, मिरच, पीपल, गरम पानी और सहत ये पदार्थ कासरोगमें पथ्य हैं ॥

अपथ्य ।

मैथुनं स्निग्धमधुरं दिवास्वापं पयो दधि ।
पिष्टान्नं पायसादीनि कासी धूमं च वर्जयेत् ॥

अर्थ-मथुन, स्निग्ध (चिकना) और मीठे पदाथ, दिनमें सोना, दूध, दही, पिष्टान्न, पायस और धुंआ यह कासरोगमें अपथ्य है ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे कासरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

हिक्काकर्मविपाकः ।

योऽकृत्वा ब्राह्मणो भुंक्ते स्नानहोमजपादिकम् ।
स हिक्कारोगसंयुक्तस्तत्पापस्यापनुत्तये ॥
चांद्रायणत्रयं कुर्यात् त्रीन् कृच्छ्रांश्च समाचरेत् ॥

अथ-जो ब्राह्मण पूर्व जन्ममें स्नान, होम, जपादिक नहीं करे और भोजन कर लेय वह हिक्का (हिचकी) रोगी होता है इस पापके दूर करनेको तीन चांद्रायण व्रत और तीन कृच्छ्रव्रत ये प्रायश्चित्त करे तो हिचकीका रोग दूर होवे ॥

हिक्कानिदान ।

विदाहिगुरुविष्टंभिरूक्षाभिष्यंदिभोजनैः । शीतपानाशनस्नानरजोधूमातपानिलैः ॥ व्यायामकर्मभाराध्ववेगघातापतर्पणैः । हिक्का श्वासश्च कासश्च नृणां समुपजायते ॥

अर्थ–दाहकारक, भारी, अफराकारक, रूखी, अभिष्यंदी ऐसे भोजन करनेसे शीतल जल पीनेसे, शीतल अन्न खानेसे, शीत जल करके स्नान करनेसे, रज और धूंआ मुख नाकमें जानेसे, गरमी हवामें डोलनेसे, दंड कसरतके करनेस, भारके उठानेसे, बहुत मार्गके चलनेसे, मलादिक वेगके रोकनेसे और उपवासके करनेसे मनुष्यके हिक्का (हिचकी), श्वास (दमा) और कास (खांसी) ये रोग उत्पन्न होते हैं ॥

संप्राप्ति ।

मुहुर्मुहुर्वायुरुदेति सस्वनो यकृत्प्लिहांत्राणि मुखादि वा क्षिपन् ।
सघोषवानाशु हिनस्ति यस्मात्ततस्तु हिक्केत्यभिधीयते बुधैः ॥

अर्थ–उदानवायु प्राणवायुके साथ मिलकर जब निकले तब मनुष्य हिग्हिग् ऐसा शब्द करे और कलेजा प्लीह इनको मुखपर्यंत खींच लावे (इस स्थानमें मुख शब्द करके प्राण, जल, अन्न इनके वहनेवाले मार्ग जाने) और मुखमें आकर बडा शब्द निकले उसको वैद्यवर हिक्का (हिचकी) रोग कहते हैं यह शीघ्र प्राणोंका हर्त्ता होय है ।

हिक्काके भेद ।

अन्नजां यमलां क्षुद्रां गंभीरां महतीं तथा ।
वायुः कफेनानुगतः पंच हिक्काः करोति च ॥

अर्थ–वात कफसे मिलकर १ अन्नजा, २ यमला, ३ क्षुद्रा, ४ गंभीरा और ५ महती ऐसे पांच प्रकारकी हिचकी रोगको प्रगट करे ॥

पूर्वरूप ।

कंठो रसो गुरुत्वं च वदनस्य कषायता ।
हिक्कानां पूर्वरूपाणि कुक्षेराटोप एव च ॥

अर्थ–कंठ और हृदय भारी रहे और वादीसे मुख कसेला रहे, कूखमें अफरा रहे यह हिचकीका पूर्वरूप जानना ॥

सामान्याचिकित्सा ।

यत्किंचित्कफवातघ्नमुष्णं वातानुलोमनम् ।
भषज पानमन्नं वा हिक्काश्वासेषु तद्धितम् ॥

अर्थ–जो कुछ कफवातनाशक, गरम, वादीको अनुलोमन कर्त्ता ऐसे औषध पान और अन्न ये हिचकी तथा श्वास इस विषयमें हितकारक हैं ॥

हिक्काश्वासातुरे पूर्वं तैलाक्ते स्वेद इष्यते ।
ऊर्ध्वाधःशोधनं शक्ते दुर्बले शमनं मतम् ॥

अर्थ-हिचकी और श्वासवाले रोगीके देहमें प्रथम तेलकी मालिस करके पसीने निकाले फिर यही रोगी बलवान् होय तो उसको वमन और विरेचन देकर देह शुद्ध करे और रोगी निर्बल होवे तो दोष शमन करनेवाली औषध देवे ॥

प्राणावरोधतर्जनविस्मापनशीतवारिपरिषेकैः ।
चित्रैः कथाप्रयोगैः शमयेद्धिक्कां मनोभिघातैश्च ॥

अर्थ-प्राणायामसे प्राणपवनको रोकना, भय दिखाना अथवा आश्चर्य करनेवाली बात कहना, शीतजलकी देहमें छींटा देना और अनेक प्रकारकी वार्त्ता कहनी अथवा मनको बिगाडना इन उपचारोंके करनेसे हिचकीरोगको शमन करे ॥

त्याज्यहिक्का ।

वातेन हिक्काः प्रभवंति पंच तासामसाध्यत्वमुदाहरंति ।
अक्षीणमांसस्य भवंति साध्याः प्रांते च हिक्के परिवर्जनीये ॥

अर्थ-वातसे पांच प्रकारकी हिचकी होती हैं वे बहुत असाध्य हैं, अक्षीणमांसवालेकी मात्र साध्य हैं. आखिरकी दो हिचकी वैद्यको त्याग देनी चाहिये ॥

कासप्रकरणोक्तं च भिषगत्र नियोजयेत् ।
क्षयोक्तं वातकासे च हिक्काश्वासे नियोजयेत् ॥

अर्थ-जो यत्न खांसी रोगमें कह आये हैं वे सब इस वातकी हिचकी रोगमें करे. तथा क्षयरोगमें यत्न कहे हैं वे सब इस वातकी खांसीमें करने चाहिये ॥

अन्नजाहिक्कानिदान ।

पानान्नैरतिसंयुक्तैः सहसा पीडितोऽनिलः ।
हिक्कयत्यूर्ध्वगो भूत्वा विद्यात्तामन्नजां भिषक् ॥

अर्थ-अन्न और पानीके बहुत सेवन करनेसे वात अकस्मात् कुपित हो ऊर्ध्वगामी होकर मनुष्यके अन्नजा हिचकी प्रगट करे ॥

यूष ।

कासमर्दकपत्राणां यूषः सोभांजनस्य च ।
शुष्कमूलकमंडस्तु हिक्काश्वासनिवारणः ॥

अर्थ-कसोंदीके पत्ते अथवा सहजनेकी छाल अथवा सूखी मूलीका मांड हिचकी और श्वास इनको दूर करे ।

सदधिव्योषसर्पिष्को यूषो वार्ताकजो हितः ॥

अर्थ–बैंगनोंका मंड, दही, सोंठ, काली मिरच, पीपल और घी इनको मिलायके पीवे तो हिचकी दूर हो ॥

कुलित्थादिकाढा ।

कुलित्था नागरं व्याघ्री वासाभिः कथितं जलम् ।
पीतं पुष्करसंयुक्तं हिक्काश्वासनिवारणम् ॥

अर्थ–कुलथी, सोंठ, कटेरी और अडूसा इनका काढा पुहकरमूलका चूर्ण डालके पीवे तो यह हिचकी और श्वासको दूर करे ॥

हरिद्रादिलेह ।

हरिद्रा मरिचं द्राक्षा गुडं रास्ना कणा शठी । लिह्यात्तैलेन वि-
लिहन् श्वासं प्राणहरामपि ॥ हिक्कां हरति प्रबलां श्वासातिप्र-
भूतं निवारयति ॥

अर्थ–हलदी, काली मिरच, दाख, गुड, रास्ना, पीपल और कचूर इनके चूर्णको तेलके साथ अवलेह बनायके देवे तो श्वास, प्राणहारक हिचकी तथा अत्यंत बढी हुई श्वास इनको नष्ट करे ॥

अभयादिकल्क ।

अभयानागरकल्कं पौष्करयावशूकमरीचकल्कं वा ।
तोयेनोष्णेन पिबतः श्वासहिक्कां नियच्छति ॥

अर्थ–हरड और सोंठ इनका अथवा पुहकरमूल और जौके अंकुर और काली मिरच इनका कल्क करके इसको गरम जलके साथ पीवे तो श्वास और हिचकी ये शांत होवें ॥

चंद्रसूरकाढा ।

चंद्रसूरस्य बीजानि क्षिपेदष्टगुणे जले । यदा मृदूनि गृह्णीया-
त्तो वाससि गालयेत् ॥ हिक्कातिवेगकलुस्तज्जलं पलमात्र-
या । पिबेत्पुनः पुनश्चापि हिक्का शीघ्रं प्रणश्यति ॥

अर्थ–हालोंके बीजोंको अठगुने जलमें भिगोवे जब नरम हो जावे तब उनको मलके कपडेमें छान लेवे. इस जलको चार ४ तोले वारंवार पीवे तो हिचकी बहुत जल्दी दूर हो ॥

मधुना कटुकाचूर्णं लीढं हिक्कानिवारणम् ॥

अर्थ-कुटकीके चूर्णको सहतमें मिलायके चाटे तो हिचकीका आना बंद होय ॥

यमलाहिक्कानिदान ।

चिरेण यमलैर्वेगैर्या हिक्का संप्रवर्तते ।
कंपयंती शिरोग्रीवं यमलां तां विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ-ठहर ठहरके दो दो हिचकी चलें शिर कंधाको कँपावे उसको यमला हिचकी जाननी ॥

दशमूलीयवागू ।

दशमूली सठी रास्ना पिप्पली विश्वपौष्करैः । शृंगी तामलकी भार्ङ्गी गुडूचीनागरादिभिः ॥ यवागूं मधुना सिद्धां कषायं वा पिबेन्नरः । कासहृद्ग्रहपार्श्वार्तिहिक्काश्वासप्रशांतये ॥

अर्थ-दशमूल, कचूर, रास्ना, पीपर, सोंठ, पुहरकरमूल, काकडासिंगी, भूयआंवला, भारंगी, गिलोय, नागरमोथा इनसे सिद्ध करी हुई यवागूको सहतके साथ पीवे अथवा इनका काढा पीवे तो खांसी, हृदयरोग, पसलीकी वादी, श्वास, हिचकी इनको शांत करे ॥

हिंग्वादियवागू ।

हिंगुसौवर्चलाजाजीबिडपुष्पकाचित्रकैः ।
सिद्धा कर्कटशृंग्या च यवागूः श्वासहिक्किनाम् ॥

अर्थ-हाग, संचरनोन, जीरा, बिड निमक, पुहकरमूल, चित्रक और काकडासिंगी इन सबसे सिद्ध करी हुई कांजी श्वास वा हिचकी इनको दूर करे ॥

क्षुद्रहिक्कानिदान ।

विकृष्टकालैर्या वेगैर्मंदैः समभिवर्तते ।
क्षुद्रिका नाम सा हिक्का जत्रूमूलात्प्रधावति ॥

अर्थ-जो हिचकी बहुत देरमें कंठ हृदयकी संधिसे मंद मंद. चले उसको क्षुद्रानाम हिचकी कहते हैं ॥

दशमूलीकाढा ।

दक्षमूलीजलयुतं हितं हिक्कासु योजयेत् ।
श्वासकासहरः सर्वो विधिरत्रापि युज्यते ॥

अर्थ-दशमूलके काढेके साथ हिचकी रोग पर जो हित पदार्थ होवे वह देवे तथ संपूर्ण श्वास और खांसी इनके नाशक जो औषधी हैं वह हिचकी रोगपर देवे ॥

कुलित्थादिकाढा।

कुलित्थयवकोलांबुदशमूलबलाजलम् ।
पानार्थं कल्पयेत्कासहिक्काश्वासप्रशांतये ॥

अर्थ-कुलथी, जौ, बेर, दशमूल और खिरैटी इनका काढा खांसी, हिचकी तथा श्वास इनकी शांति होनेके वास्ते पीवे ॥

धात्र्यादिकाढा।

धात्री च मागधी शुंठी क्वाथश्चैषां सितायुतः ।
हिनस्ति हृदयोद्भूतां हिक्कां प्राणापनोदिनीम् ॥

अर्थ-आंवले, पीपल और सोंठ इनके काढेमें मिश्री मिलायके पीवे तो प्राणोंको नाश करनेवाली घोर हिचकीका नाश होय ॥

गंभीराहिक्कानिदान।

नाभिप्रवृत्ता या हिक्का घोरा गंभीरनादिनी । शुष्कास्यकंठजिह्वा स्याच्छ्वासकासरुजाकरी ॥ अनेकोपद्रववती गंभीरा नाम सा स्मृता ॥

अर्थ-जो हिचकी नाभिके पाससे उठ घोर गंभीर शब्द करे और जिसमें ज्वरादि अनेक उपद्रव हों उसको गंभीरा हिचकी कहते हैं ॥

पाटल्यादियोग।

पाटल्याः फलतोयेन क्षौद्रेण च समन्वितम् ।
हेमभस्म निहंत्येव हिक्काः पंचातिदुस्तराः ॥

अर्थ-पाढरके फलोंका रस और सहत इनके साथ सुवर्णकी भस्म सेवन करे तो अतिकठोर पांच प्रकारकी हिचकियोंका नाश करे ॥

दशमूलीकाढा।

दशमूलीकषायेण मधुना च समन्वितम् ।
कांतायोभस्म हिक्कानां पंचानां पंचतां नयेत् ॥

अर्थ-दशमूलका काढा और सहत इसमें कांतलोहका भस्म लेनेसे पांच प्रकारकी हिचकियोंका नाश होता है ॥

छागदुग्धयोग ।

हिक्कार्तस्य पयश्छागं हंति नागरसाधितम् ।
रसान्पचेत्फलाम्लांश्च लाजचूर्णं ससैंधवम् ॥

अर्थ-हिचकी पर सोंठको डालके औटाया हुआ दूध अथवा अमलवेतसे सिद्ध करा हुआ अम्लरस अथवा धानोंकी खीलोंका चूर्ण मिलाकर सेंधा निमक डालके देवे ॥

मधुसौवर्चलयोग ।

मधुसौवर्चलोपेतं मातुलिंगरसं पिबेत् ।
हिक्कार्तो मधुना लिह्याच्छुंठीधात्रीकणान्वितम् ॥

अर्थ--हिचकी रोगवालेको बिजोरेका रस, सहत और संचर निमक डालके पिलावे अथवा बिजोरेके रसमें सोंठ, आंवला और पीपल इनका चूर्ण और सहत डालके चाटे तो हिचकीरोग दूर होवे ॥

शिखिलेह ।

शिखिपिच्छभस्मकृष्णाचूर्णं मधुमिश्रितं मुहुर्लीढम् ।
हिक्कां हरति प्रबलां श्वासं चैवातिदुस्तरां छर्दिम् ॥

अर्थ--मोरकी पांखोंकी भस्म और पीपलका चूर्ण इन दोनोंको सहतमें मिलायके वारंवार चाटे तो घोर हिचकी, श्वास और घोर वमनका रोग इनको दूर करे ॥

पिप्पल्यादिलेह ।

पिप्पलीमूलमधुकं गुडगोश्वसकृद्रसान् ।
हिध्माभिष्यंदकासघ्नान् लिह्न्मधुघृतान्वितान् ॥

अर्थ-पीपरामूल, मुलहटी, गुड और गौके गोबरका रस तथा घोडेकी लीदका रस इन सबको मिलाय काढा करे उसमें सहत और घी डालके वारंवार चाटे तो हिचकी, अंगस्फुरण तथा खांसी इनका नाश करे ॥

कपित्थस्वरसो वापि रस आमलकस्य च ।
पिप्पलीक्षौद्रसंयुक्तो हिक्काश्वासनिवारणः ॥

अर्थ-कैथका स्वरस अथवा आँवलेका स्वरस इनमें सहत और पीपलका चूर्ण मिलायके चाटे तो हिचकी और श्वास इनको दूर करे ॥

खर्जूरं पिप्पली द्राक्षा शर्करा चेति तत्समम् ।
मधुसर्पिर्युतो लेहो हिक्काश्वासनिवारणः ॥

अर्थ-खजूर, पीपल, दाख, मिश्री ये समान भाग ले इनको पीस सहत और घी मिलाय लेह बनावे यह हिचकी और श्वास इनको निवारण करे ॥

कटुकादिभस्म ।

कटुकागैरिकाभ्यां च मुक्ताभस्म तथैव च ।
बीजपूरस्य तोयेन ताम्रं तद्वत्समाक्षिकम् ॥

अर्थ-कुटकी, गेरू और मोतीकी भस्म ये समान भाग लेवे इनको बिजोरेके रसमें मिलाय और उसमें सहत डालके पीवे अथवा कुटकी, गेरू. बिजोरेका रस और सहत इनको ताम्रकी भस्म मिलायके चाटे तो हिचकीका नाश होय ॥

कोलमज्जालेह ।

कोलमज्जांजनं लाजास्तिक्ता कांचनगैरिकम् । कृष्णा धात्री सिता शुंठी कासीसं दाधनाम च ॥ पाटल्याः सफलं पुष्पं कृष्णा खर्जूरमुस्तकम् षडेते पादिका लेहा हिक्काघ्ना मधुसंयुताः ॥

अर्थ-बेरकी गुठलीकी मिंगी, सुरमा और खील यह एक; कुटकी, नागकेशर और सुवर्णभस्म यह दूसरा; पीपल, आंवले, मिश्री और सोंठ यह तीसरा; हीराकसीस और कमरख यह चौथा; पाडलके फल और फूल यह पांचवां; पीपल, खजूर और नागरमोथा यह छठा इनमेंसे किसीको चतुर्थांश जल डालके अवलेह बनावे तो यह प्रत्येक योग हिक्काको नाश करे ॥

हेममात्रा ।

हेममुक्तार्ककांतानां भस्म वल्लमितं वरम् । बीजपूररसक्षौद्रसौवर्चलसमन्वितम् ॥ हंति हिक्काशतं सत्यमेकमात्राप्रयोगतः । का कथा पंच हिक्कानां हरणे पुनरुच्यते ॥

अर्थ-सुवर्ण, मोती, ताम्र और कांतलोह इन चारोंकी भस्म तीन रत्ती ले बिजोरेका रस और सहत तथा संचर निमक इनके साथ एक वार भक्षण करे तो सौ हिचकियोंको नाश करे फिर पांच हिचकियोंको नाश करना क्या बडी बात है ? ॥

पिपल्यादिलोह ।

पिप्पल्यामलकीद्राक्षाकोलास्थिमधुशर्करैः । विडंगपौष्करैर्युक्तो लोहो हंति सुदुर्जयाम् ॥ छर्दिं हिक्कां तथा तृष्णां त्रिरात्रेण न संशयः ॥

अर्थ-पीपल, आंवला, दाख, बेरकी गुठली, सहत, मिश्री, वायविडंग और पुहकर मूल इनके चूर्णमें लोहकी भस्म मिलायके सेवन करे तो तीन दिनमें छर्दि (वमन), हिक्का (हिचकी) और तृषा (प्यास) इनको नाश करे ॥

शंखचूलरस ।

रसाभ्रहेमभस्मानि वैक्रांतं सर्वतुल्यकम् । सर्वैः पंचगुणं शंखचूर्णं शुष्कं विमर्दयेत् ॥ लेहयेन्मधुना माषचतुष्कं सानुपानकम् । हिक्कां पंचविधां हंति मुमूर्षोरपि तत्क्षणात् ॥

अर्थ-पारा, अभ्रक, सुवर्ण इन तीनोंकी भस्म समान भाग और इन तीनोंकी बराबर वैक्रांतभस्म लेवे और चारोंसे पंचगुनी शंखकी भस्म लेवे इस प्रकार सबको एकत्र कर पीस डाले फिर इसमेंसे चार मासे भस्म सहतके साथ अनुपानके साथ खाय तो यदि मरणोन्मुख रोगी होय तोभी उसके पांच प्रकारकी हिचकियोंको तत्क्षण नाश करे ॥

मेघडंबररस ।

तंदुलीयद्रवैः पिष्टं सूततुल्यं च गंधकम् । वज्रमूषागतं चैव भूधरे भस्मतां व्रजेत् ॥ दशमूलकषायेण भावयेत्प्रहरद्वयम् । गुंजाद्वयं हरत्येष हिक्काश्वासं ज्वरं किल ॥ अनुपानेन दातव्यो रसोऽयं मेघडंबरः ॥

अर्थ-चौलाईके रसमें पारा गंधक बराबर लेकर खरल करे फिर वज्रमूषामें भरके भूधरयंत्रमें पचावे तो भस्म होय फिर दशमूलके काढेमें इस भस्मको दो प्रहर खरल करे फिर इसमेंसे दो रत्ती खानेको देवे तो यह मेघडंबररस हिचकी, श्वास और ज्वर इनको नाश करे ॥

महाहिक्कानिदान ।

मर्माण्युत्पीडयंतीव सततं या प्रवर्तते ।
महाहिक्केति सा ज्ञेया सर्वगात्रप्रकंपिनी ॥

अर्थ-जो हिचकी मर्मस्थानमें पीडा करती हुई और सर्व गात्रको कंपावती हुई सर्वकाल प्रवृत्त होय उसको महाहिक्का कहते हैं ॥

कटुत्रिकलेह ।

कटुत्रिकयवासकट्फलककारवीपौष्करैः । सशृंगिभिरतिद्रुतं

मधुयुतोऽवलेहो जयेत् ॥ सहिध्मकसनः कफश्वसनमंभसा सिंधुजं प्रदत्तमपि नावनं झटिति सर्व हिक्काहरम् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, धमासा, कायफल, अजमायन, पुहकरमूल और काकडासिंगी इनका सहत डालके अवलेह बनावे इसके सेवन करनेसे हिचकी, खांसी, कफ और श्वास इनको नाश करे अथवा सैंधा निमक और जल इनकी नस्य देवे तो ये संपूर्ण हिचकियोंका नाश करे ॥

असाध्याहिक्कानिदानलक्षण ।

आयम्यते हिक्कतो यस्य देहो दृष्टिश्चोर्ध्वं ताम्यते यस्य नित्यम् । क्षीणोऽन्नद्विट् क्षौति यश्चातिमात्रं तौ द्वौ चांत्यौ वर्जयेद्धिकमानौ ॥ अतिसंचितदोषस्य भक्तच्छेदकृशस्य च । व्याधिभिः क्षीणदेहस्य वृद्धस्यातिव्यवायिनः ॥ आयासाद्यासमुत्पन्ना हिक्का हंत्याशु जीवितम् । यमिका च प्रलापार्तिमोहतृष्णासमान्विता ॥

अर्थ–जिसका हिचकीसे देह तन जावे ऊंची दृष्टि हो जावे और मोह होय क्षीण पड जाय भोजनसे अरुचि होय और छींक बहुत आवे ये दोनों हिचकीवाला रोगी अर्थात् जिसको गम्भीरा और महती हिचकी होय सो वैद्यको त्याज्य है जिसके अत्यन्त दोषोंका संचय हो गया हो और जिसका अन्न छूट गया हो जो कृश हो गया हो जिसके अनेक व्याधिसे देह क्षीण हो गया होय और जो वृद्ध है अति मैथुन करनेवाला हो ऐसे पुरुषके ये दोनों हिचकी उत्पन्न होंय तो तत्क्षण उस रोगीके प्राण नाश करे, बकवाद, पीडा होय, मोह, प्यास इन लक्षणसे युक्त जो यमिका नामकी हिचकी सो तत्काल प्राणहर्त्री जाननी ॥

असाध्यलक्षण ।

अक्षीणश्चाप्यदीनश्च स्थिरधात्विंद्रियश्च यः ।
तस्य साधयितुं शक्या यमिका हंत्यतोऽन्यथा ॥

अर्थ–बलवान्, प्रसन्न मन, जिसकी धातु और इन्द्रिय स्थिर होय ऐसे पुरुषकी यमिकाहिचकी साध्य है और इससे विपरीत (अर्थात् क्षीण, दीन इत्यादि) पुरुषको तत्काल ही नाश करे । अन्नजा, क्षुद्रा यह दोनों साध्यही हैं दो वार आनेसे यमिका कहाती है चरकोक्त यमला इस जगह नहीं ग्रहण करनी चाहिये ॥

यष्ट्यादिचूर्ण ।

यष्ट्याह्वं वामाक्षिकेणावलीढं कृष्णाचूर्णं शर्कराढ्यं च किंवा ।
सर्पिः कोष्णं क्षीरमुष्णं रसो वा हन्यादिक्षोः पानतः पंच हिक्काः ॥

अर्थ–मुलहटी और सहत अथवा पीपल और मिश्री अथवा गरम २ घी अथवा औटा हुआ दूध अथवा ईखका रस ये सब योग पांच प्रकारकी हिचकियोंको नाश करते हैं ॥

विश्वादिचूर्ण ।

विश्वाशिवाकणाचूर्णः ससितः समधुः स्मृतः ।
गुडूचीनागरं नस्यं हिक्काधिक्कारकारकम् ॥

अर्थ–सोंठ, हरड और पीपल इनका चूर्ण सहत और मिश्री मिलायके चाटे अथवा गिलोय और सोंठ इनकी नस्य देय तो हिचकीका नाश करे ॥

रक्तचंदनयोग ।

नारीपयः पिष्टसुरक्तचंदनं कृतं सुखोष्णं च सुसैंधवं च ।
पिष्टं तथा सैंधवमंबुना वा निहंति हिक्कां ननु नावनेन ॥

अर्थ–स्त्रीके दूधमें रक्तचंदनको पीस कुछ थोडासा गरम कर उसमें सेंधा निमक डालके पीवे अथवा इस सैंधा निमकको जलमें मिलायके नस्य देवे तो हिचकी दूर हो ॥

कृष्णाचूर्ण ।

कृष्णामलकशुंठीनां चूर्णं मधुसितायुतम् ।
मुहुर्मुहुः प्रयोक्तव्यं हिक्काश्वासनिवारणम् ॥

अर्थ–पीपल, आंवला, सोंठ इनका चूर्ण सहत और मिश्रीके साथ सेवन करे तो हिचकी और श्वास दूर होता है ॥

शृंग्यादिचूर्ण ।

शृंगीकटुत्रिकफलत्रयकंटकारी भार्ङ्गीसपुष्करजटालवणानि चैषाम् । चूर्णं पिबेदशिशिरेण जलेन हिक्कां श्वासोर्ध्ववातकसनारुचिपीनसेषु ॥

अर्थ–काकडासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, कटेरी, भारंगी,

पुहकरमूल और सैंधा निमक इनका चूर्ण गरम जलसे देय तो हिचकी, श्वास, ऊर्ध्व-वात, खांसी, अरुचि और पीनस इनको दूर करे ॥

भार्ङ्ग्यादिचूर्ण ।

हिक्काश्वासी पिबेद् भार्ङ्गीसविश्वामुष्णवारिणा ।
नागरं वा सिताभार्ङ्गीसौवर्चलसमन्वितम् ॥

अर्थ-भारंगी और सोंठ इनके चूर्णको गरम जलके साथ पीवें अथवा सोंठ, मिश्री, भारंगी और संचरनिमक इनके चूर्णको गरम जलके साथ पाव तो श्वास आर खांसी नष्ट होय ॥

हिक्कानस्य ।

हरेणुकापिप्पलिकाकषायो हिंग्वान्वितोपोहति पंच हिक्काः ।
नस्यं तथालक्तकसंभवं च स्तन्येन वापोहति माक्षिकाविट् ॥

अर्थ-निर्गुंडी अथवा कबीला इनका काढा करके उसमें हींग डालके पीवे तो पांच प्रकारकी हिचकी दूर हो अथवा लाखकी नस्य देय अथवा मक्खीके विष्ठाको स्त्रीके दूधमें मिलायके नस्य देवे तो हिचकी दूर हो ॥

मधुकनस्य ।

मधुकं मधुसंयुक्तं पिप्पली शर्करान्विता ।
नागरं गुडसंयुक्तं हिक्काघ्नं नावनत्रयम् ॥

अर्थ-मुलहटी और सहत पीपल और मिश्री तथा सोंठ और गुड इन तीन नस्योंमेंसे कोई नस्य देवे तो हिचकी दूर हो ॥

मक्षिकानस्य ।

स्तन्येन माक्षिकाविष्ठा नस्ये वालक्तकांबुना ।
योज्या हिक्काभिभूतेभ्यः स्तन्यं वा चंदनान्वितम् ॥

अर्थ-स्त्रीके दूधमें मक्खीकी वीट पीसके अथवा लाखके रसको जलमें मिलायके नस्य देवे अथवा स्त्रीके दूधमें चंदन पीसके नस्य देवे तो हिचकीका रोग दूर हो ॥

शिलाजीतधूम ।

शिलामूलस्य पानं वा नालिकायंत्रयोगतः । नेपालया गोविषाणाद्वा कुष्ठसर्जरसस्य वा ॥ धूमं कुशस्य वा साज्यं पिबेद्धिक्कोपशांतये ॥

अर्थ–शिलाजीत और मूली अथवा कस्तूरी और बबूर किंवा कूट और राल अथवा दर्भ (डाभ) को घृत योग करके उसको चिलममें रखके धूमपान करे तो यह हिचकीको नाश करे ॥

श्वासावरोध ।

श्वासावरोधतो हिक्का शमयत्यातिवेगतः ।
चूलकैर्वा जलं पीतं धृत्वा श्वासैर्निवर्तते ॥

अर्थ–श्वासके रोकनेसे अथवा एक चुलू जल पीके तत्क्षण श्वासको रोक लेवे तो बहुत जल्दी हिचकीके रोगका नाश होवे ॥

माषादिधूम ।

धूमो माषनिशारजोयुतशणत्वक्संभवो हंत्यलम् ।
श्वासोर्ध्वानिलकासहृद्गलरुजोहिध्माः समस्ता अपि ॥

अर्थ–उडद और हलदी इनके चूर्णको और सन इनको मिलायके हुक्केमें रखके पीवे तो श्वास, ऊर्ध्ववात, खांसी, गलेका रोग और सर्व प्रकारकी हिचकियोंको नाश करे ॥

हिंग्वादिधूम ।

निर्धूमांगारसंक्षिप्तहिंगुमाषरजोद्भवम् ।
हिक्का पंचापि हंत्याशु धूमः पीतो न संशयः ॥

अर्थ–निर्धूम अंगारों पर हींग और उडदका चूर्ण डालके उसके धुएँको पीवे तो पांच प्रकारकी हिचकियोंका नाश करे ॥

हिक्कारोगमें पथ्य ।

स्वेदनं वमनं नस्यं धूमपानं विरेचनम् । निद्रा स्निग्धानि चान्नानि मृदूनि लवणानि च ॥ जीर्णा कुलित्था गोधूमाः शालयः षष्टिका यवाः । एणतित्तिरलावाद्या जांगला मृगपक्षिणः ॥ उष्णोदकं मातुलुंगं माक्षिकं सुरभीजलम् । पक्वं कपित्थं लशुनं पटोलं बालमूलकम् ॥ पौष्करं कृष्णतुलसी मदिरा नलदंबु च । अन्नपानानि सर्वाणि वातश्लेष्महराणि च ॥ शीतांबुसेकः सहसा त्रासो विस्मापनं भयम् । क्रोधो हर्षः प्रियोद्वेगः प्राणा-

यामनिषेवणम् ॥ दग्धसिक्तमृदाघ्राणं कूर्चधारा जलार्पणम् । नाभ्यर्धपीडनं दाहो दीपदग्धहरिद्रया ॥ पादयोर्द्व्यंगुलान्नाभेरूर्ध्वं चेष्टातिहिक्किनाम् ॥

अर्थ–स्वेदन, वमन, नास, धूमपान, विरेचन, निद्रा, चिकने और नरम अन्न, निमक, पुराने कुलथी, गेहूं, सांठी चावल, जौं, एण (काला हिरन), तीतर, लवा आदिका मांस, जंगली जीव, मृग और पक्षियोंका मांस, गरम जल, बिजोरा, नींबू, सहत, गोमूत्र, पके हुए कैथ, लहसन, परवल, नरम २ छोटी मूली, पोहकरमूल, काली तुलसी, मदिरा, खसका सुगंधित जल तथा वात और कफनाशक सर्व प्रकारके अन्नपान, शीतल जलका छिडकाव करना, एकसाथ त्रास देना, विस्मापन (भुलाईमें डाल देना), भय दिखाना, क्रोध करना, हर्ष, प्रिय और उद्वेग करनेवाले पदार्थ, प्राणायाम (श्वासका रोकना), अग्निसे गरमागरम मिट्टी पर जल छिडकके सूंघना, कूर्च (कुशाकीसी गड्डी) से अथवा धारासे जलका गेरना, नाभीके ऊपर दाबना तथा जली हुई हलदीसे नाभिके ऊपर दाग देना अथवा पैरोंसे ऊपर दो अंगुल पर दाग देना, अथवा नाभिसे दो अंगुल ऊपर दाग देना ये प्रकार हिचकी रोगवालेको हितकारी हैं ॥

हिक्कारोगमें अपथ्य ।

वातमूत्रोद्गारकासशकृद्वेगविधारणम् । रजोनिलातपायासान्विरुद्धान्यशनानि च ॥ विष्टंभीनि विदाहीनि रूक्षाणि कफदानि च । निष्पावमाषपिण्याकवारिजानूपमामिषम् ॥ अविदुग्धं दंतकाष्ठं बस्तिमत्स्यांश्च सर्षपान् । आम्लं तुंबीफलं कंदं तैलभृष्टमुपोदिकाम् ॥ गुरु शीतं चान्नपानं हिक्कारोगी विवर्जयेत् ॥

अर्थ–अधोवायु, मूत्र, डकार, खांसी और मल इनकी बाधाको रोकना धूल, पवन धूप, परिश्रम (शीत), विरुद्धभोजन, चौंरा, उडद, (पिष्ट पदार्थ), पिण्याक (खल), जलके जीव और जल किनारे रहनेवाले जीवोंका मांस, भेडका दूध, दांतन करना, बस्तिकर्म, मछली, सरसों, खटाई, तूंबीका फल, कंदके साग, तैलमें छुका पोईका साग, भारी और शीतल ऐसे अन्न और पान इन सबको हिचकी रोगवाला त्याग देवे

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे हिक्कारोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

श्वासकर्मविपाकः ।

कृतघ्नो जायते मर्त्यः कफवाञ्श्वासकासवान् । उष्णज्वरो च नित्यं हि पित्तरोगसमन्वितः ॥ चांद्रायणत्रयं कुर्यात्पंचाशद्विप्रभोजनम् । विष्णोर्नामजपं कुर्यात्तथा चैव द्विजोत्तमान् ॥ पूजयेद्भोजयेद्दद्यात्तन्मना नान्यमानसः ॥

अर्थ-जो प्राणी कृतघ्नी (किसीके करे हुए उपकारको न माने) वह कफ, श्वास, खांसी, उष्ण ज्वर और पित्तरोग इनसे पीडित होता है. इस पापके दूर करनेको तीन चांद्रायण प्रायश्चित करके ५० ब्राह्मणोंको जिमावे तथा विष्णुसहस्रनामका पाठ करे और ब्राह्मणोंका पूजन करके उनको भोजन करावे तथा दान देवे ॥

दूसरा प्रकार ।

कुरुक्षेत्रादिदेशेषु कालेषु ग्रहणादिषु । महादानानि गृह्णीयान्निषिद्धान्यथ वा स्वयम् ॥ अपात्रभूतो दातृभ्यो निषिद्धेभ्यश्च मानवः । स पामाश्वासकासैश्च कुक्षिस्थकृमिभिस्तथा ॥ कंडूत्या चैव पीड्येत तद्रोगस्य प्रशांतये । महिषीं यमदैवत्यां दद्याद्वित्तानुसारतः ॥ काम्यं यद्दीयते दानं तत्समग्रं सुखावहम् । असमग्रं तु दोषाय भवतीह परत्र च ॥ जपेन्नारायणस्याथ नाम्नां चैव सहस्रकम् । हिरण्यं रक्तवासांसि पंचाशद्विप्रभोजनम् ॥ सहस्रकलशस्नानं प्रकुर्याद्रोगशांतये ॥

अर्थ-जो प्राणी कुरुक्षेत्रादि पुण्यदेशोंमें, ग्रहणादि पुण्य कालमें, निषिद्ध मनुष्यसे (जिसका दान लेना वर्जित है) दान लेवे अथवा जो दान लेने योग्य नहीं है उसको लेवे तो वह खुजली, श्वास, खांसी, कुक्षिरोग, कृमि और कंडू इनसे पीडित होता है इसके दूर करनेको यमदेवता जिसका ऐसा भैंसका दान यथाशक्ति करे. जो काम्य कर्म करे वह संपूर्ण होनेसे सुख होता है और आधा रहनेसे वहा कर्म दुखदाइ होता है तथा इस लोक और परलोकमें पातक लगे. उसको विष्णुसहस्रनामका जप करना अथवा सुवर्ण, रक्त वस्त्र दान करे और ५० ब्राह्मणोंको भोजन करावे, किंवा सहस्र कलशाभिषेक करे तो रोग दूर होय ॥

तीसरा प्रकार ।

पिशुनो नरकस्यांते जायते श्वासकासवान् ।
घृतं तेन प्रदातव्यं सहस्रपलसंख्यया ॥

अर्थ-पिशुन (चुगलखोर) मनुष्य प्रथम नरकोंको भोगे पश्चात् नरक भोगनेके उपरांत श्वास और खांसीवाला होवे उसके दूर करनेको इस प्राणीको १००० पल अर्थात् चार सौ तोले घीका दान करे ॥

श्वासनिदान ।

महोर्ध्वच्छिन्नतमकक्षुद्रभेदैस्तु पंचधा ।
भिद्यते स महाव्याधिः श्वास एको विशेषतः ॥

अर्थ-हिक्का श्वासका एक हेतु होनेसे हिक्काके अनन्तर श्वासरोगको कहते हैं. महाश्वास, ऊर्ध्वश्वास, छिन्नश्वास, तमकश्वास और क्षुद्रश्वास इन भेदोंसे एक श्वासरोग पांच प्रकारका है ॥

प्राग्रूप ।

प्राग्रूपं तस्य हृत्पीडा शूलमाध्मानमेव च ।
आनाहो वक्त्रवैरस्यं शंखनिस्तोद एव च ॥

अर्थ-हृदय दूखे, शूल होय अफरा होय, पेट तनासा होय, कनपटी दूखे, मुखमें रसका स्वाद आवे नहीं यह श्वासरोगका पूर्वरूप है ॥

संप्राप्ति ।

यदा स्रोतांसि संरुध्य मारुतः कफपूर्वकः ।
विष्वग्व्रजति संरुद्धस्तदा श्वासं करोति सः ।

अर्थ-सर्व देहमें विचरनेवाला पवन जब कफसे मिलकर प्राण, अन्न, उदक वहनेवाली सब नसोंके मार्गको रोक देवे तब पवन फिरनेसे रुककर श्वासरोगको प्रकट करे ॥

सामान्यचिकित्सा ।

यत्किंचित्कफवातघ्नमुष्णं वातानुलोमनम् । भेषजं पानमन्नं वा हिक्काश्वासेषु तद्धितम् ॥ हिक्काश्वासातुरे पूर्वं तैलाक्ते स्वेद इष्यते । ऊर्ध्वाधः शोधनं वह्नेर्दुर्बले शमनं मतम् ॥

अर्थ-जो कुछ कफ बादीके नाशक, गरम, वादीको अनुलोमन करनेवाले औषध

पान और अन्न है वह सब हिचकी और श्वास रोग पर देवे अथवा हिचकी और श्वास ये रोग जिसके हैं उसके प्रथम देहमें तेलकी मालिस करके पसीने निकाले और वमन तथा अग्निदीपनकर्त्री क्रिया करे ॥

दूसरा प्रकार।

स्नेहबस्तिमृते केचिदूर्ध्वं चाधश्च शोधनम्। मृदुप्राणवतां श्रेष्ठं श्वासिनामादिशंति हि ॥ सर्वेषु श्वासरोगेषु वातश्लेष्मनिबर्हणम्। विदधीत विधिं विद्वानादौ स्वेदं मृदुं तथा ॥

अर्थ-स्नेहन और बस्तिकर्म इनके विना ऊर्ध्वाध अर्थात् ऊपर नीचे शोधन करना अल्पप्राणवाले (निर्बलों) को उत्तम है. संपूण श्वासरोगोंमें वात और कफके नाशक यत्न करने चाहिये तथा प्रथम विद्वान् वैद्यको उचित है कि मृदु स्वेदन कर्म करे ॥

महाश्वासलक्षण।

उद्धूयमानवातो यः शब्दवद्दुःखितो नरः। उच्चैः श्वसिति संरुद्धो मत्तर्षभ इवानिशम् ॥ प्रनष्टज्ञानविज्ञानस्तथा विभ्रांतलोचनः। निवृत्ताक्ष्याननो बद्धमूत्रवर्चाविशीर्णवाक् ॥ दीर्घं प्रश्वसितं चास्य दूराद्विज्ञायते भृशम् । महाश्वासोपसृष्टस्तु क्षिप्रमेव विपद्यते ॥

अर्थ-जिसका वायु ऊपरको जायके प्राप्त हो ऐसा मनुष्य दुःखित होकर मुखसे शब्दयुक्त श्वासको निकाले, ऊंचे स्वरसे अथवा जैसे मतवाला बैल शब्द करे उस प्रकार रात्रिदिन श्वाससे पीडित होय उसका ज्ञान विज्ञान जाते रहे, नेत्र चंचल होय और जिसका श्वास लेनेमें नेत्र और मुख फट जाय, मल मूत्र बन्द हो जाय, बोला जाय नहीं अथवा बोले तौ मन्द बोले, मन खिन्न होय और जिसका श्वास दूरसे सुनाई देय यह महाश्वास जिस पुरुषको होय वह तत्काल मरणको प्राप्त होय ॥

शृंग्यादि चूर्ण।

शृंगी कटुत्रिकफलत्रयकंटकारी भार्ङ्गी च पुष्करजटालवणानि पंच। चूर्णं पिबेदशिशिरेण जलेन हिक्काश्वासोर्ध्ववातकसनारुचिषु प्रशस्तम् ॥

अर्थ–कांकडासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, कटेरी, भारंगी, पुहकरमूल, जटामांसी, सैंधानिमक, संचरनिमक, बिडनिमक, कचियानिमक और सामुद्रनिमक इनका चूर्ण करके गरम जलसे पीवे तो हिचकी, श्वास, ऊर्ध्ववात, खांसी और अरुचि इनको नाश करे ॥

शुंठ्यादि चूर्ण ।

शुंठीकणामरिचनागदलं त्वगेलाचूर्णं कृतं क्रमविवर्धितमूर्ध्वमंत्यात् । खादेदिदं समसितं गुदजाग्निमांद्यकासारुचिश्वसनकंठहृदामयेषु ॥

अर्थ–सोंठ, पीपल, काली मिरच ४, पान ३, तज २, इलायची १ क्रमसे लेवे सबका चूर्ण करके बराबरकी मिश्री मिलावे इसके भक्षण करनेसे बवासीर, मंदाग्नि, खांसी, अरुचि, श्वास, कंठरोग और हृदयरोग ये दूर हों ॥

मर्कटीचूर्ण ।

मर्कटीनां तु बीजानां चूर्णं माक्षिकसर्पिषा ।
प्रलिह्यात्प्रातरुत्थाय श्वासार्तः स्वास्थ्यमाप्नुयात् ॥

अर्थ–कौंचके बीजोंके चूर्णको सहत और घीमें मिलायके प्रातःकाल सेवन करे तो श्वाससे पीडित प्राणी सुखी होय ॥

शठ्यादि चूर्ण ।

शठी भार्ङ्गी वचा व्योषपथ्यारुचककट्फलम् ।
तेजोह्वा पौष्करं शृंगी सक्षौद्रं श्वासकासहृत् ॥

अर्थ–कचूर, भारंगी, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड छोटी, संचर निमक, कायफल, तेजबल, पुहकरमूल और कांकडासिंगी इनके चर्णको सहतमें मिलायके चाटे तो पचास खांसीका नाश होय ॥

गुडादि लेह ।

गुडोषणा निशा रास्ना द्राक्षा मागधिकाः समाः ।
तैलेन चूर्णिता लीढास्तीव्रश्वासनुदः स्मृताः ॥

अर्थ–गुड, काली मिरच, हलदी, रास्ना, मुनक्का, दाख और पीपल इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण करे इसको तेलमें मिलायके सेवन करे तो तीव्र श्वासका नाश करे ॥

भाङ्ग्र्यादि चूर्ण ।

भार्ङ्गीनागरयोश्चूर्णं लीढमार्द्रकवारिणा ।
श्वासं निहंति दुर्धर्षं पंचानन इव द्विपम् ॥

अर्थ-भारंगी और सोंठ इन दोनोंके चूर्णको अदरखके रससे सेवन करे तो घोर दुर्धरभी श्वासरोगका नाश करे. जैसे सिंह हाथीको नष्ट करता है ॥

ऊर्ध्वश्वासनिदान ।

ऊर्ध्वं श्वसिति योत्यर्थं नच प्रत्याहरत्यधः । श्लेष्मावृतमुखश्रोत्राः क्रुद्धगंधवहार्दितः ॥ ऊर्ध्वदृष्टिर्विपश्यंश्च विभ्रांताक्ष इतस्ततः । प्रमुह्यन्वेदनार्तश्च शुष्कास्यो ह्यतिपीडितः ॥

अर्थ-बहुत देर पर्यंत ऊंचा श्वास लेय, नीचे आवे नहीं, कफसे मुख भर जाय तथा और सब नाडीके मार्ग कफसे बन्द हो जांय, कुपित वायुसे पीडित होय, ऊपरको नेत्र कर चंचल दृष्टिसे चारों ओर देखे, मूर्छासे और पीडासे अत्यंत पीडित होय, मुख सूखे तथा बेहोश यह ऊर्ध्वश्वासके लक्षण हैं ॥

श्वास नीचे न आनेका कारण ।

ऊर्ध्वः श्वासे प्रकुपिते ह्यधः श्वासो निरुध्यते ।
मुह्यतस्ताम्यतश्चोर्ध्वं श्वासस्तस्यैव हंत्यसून् ।

अर्थ-ऊपरका श्वास कुपित होनेसे नीचेका श्वास बन्द होय अर्थात् हृदयमें रुक जाय अथवा श्वास कहिये वायु सो खाली नीचे नहीं उतरे तब मनुष्यको मोह होय, ग्लानि होय ऐसे पुरुषके ऊर्ध्वश्वास प्राणका हरण करे ॥

दुलहरीचूर्ण ।

दुलहरी सैधवं मासा लवणं च सुवर्चलम् । त्रिकटु ब्रह्मदंडी च त्रिफलैरण्डमूलिका ॥ पीतमुष्णांभसा कासमूर्ध्वश्वासं निवारयेत् । बिडादिलवणं सर्वं मासं श्लक्ष्णं विचूर्णितम् ॥

अर्थ-दुलहरी, सैंधानिमक, जटामांसी, निमक, संचरनिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, ब्रह्मदंडी, हरड, बहेडा, आंवला और अंडकी जड इनके चूर्णको गरम जलके साथ पीवे तो ऊर्ध्वश्वासको दूर करे अथवा बिडादिसंपूर्ण लवणोंको एक महीने पर्यंत बारीक पीसके गरम जलके साथ सेवन करे तो उक्त रोग दूर हो ॥

शुंठ्यादि चूर्ण ।

शुंठीदारुकणाचूर्णं पीतमुष्णांभसा समम् ।
ऊर्ध्वश्वासहरं किंवा शुंठीपिप्पलिचूर्णकम् ॥

अर्थ—सोंठ, देवदारु, पीपल इनको अथवा सोंठ और पीपल इनके चूर्णको गरम जलके साथ पीवे तो ऊर्ध्वश्वासको दूर करे ॥

शिलाद्यवलेह ।

शिलाहिंगुविडंगं च मरिचं कुष्ठसैंधवम् ॥
मध्वाज्याभ्यां लिहेत्कर्षं श्वासकासकफापहम् ॥

अर्थ—शिलाजीत, हींग, वायविडंग, काली मिरच, कूठ और सैंधानिमक इनके चूर्णको सहत और घीमें मिलाय एक कर्ष सेवन करे तो श्वास, खांसी और कफ इसको नाश करे ॥

विडंगादि चूर्ण ।

विडंगं पिप्पली चैला त्वचं च प्रतिकर्षकम् । द्विकर्षमरिचं चूर्णं नागरं च चतुःपलम् ॥ सर्वैस्तुल्या सिता योज्या कर्षमात्रं च भक्षयेत् । श्वासकासज्वरप्लीहपांडुरोगज्वरापहम् ॥

अर्थ—वायविडंग, पीपल, इलायची और दालचीनी प्रत्येक तोले तोले भर, काली मिरच २ तोले और सोंठ १६ तोले सबका चूर्ण करे और सब चूर्णकी बराबर मिश्री मिलावे वो एक तोला नित्यप्रति खाय तो श्वास, खांसी, ज्वर, प्लीहा और पांडुरोग इनको नाश करे ॥

दाडिमादिचूर्ण ।

दाडिमं नागरं हिंगु कृष्णा च लवणं समम् ।
आम्लवेतससंयुक्तं श्वासहृद्रोगजिद्भवेत् ॥

अर्थ—अनारदाना, सोंठ, हींग, पीपर, निमक और अमलवेत ये सब औषध समान भाग लेवे इनका चूर्ण करके खाय तो श्वास, खांसी और हृदयरोग इनका नाश करे ॥

विडंगादि चूर्ण ।

विडंगं पिप्पली हिंगु साजिसैंधवनागरम् । रास्नया च समं चूर्णं कर्षमद्याद्घृतप्लुतम् ॥ कफश्वासहरं ख्यातं विडंगादि च नामकम् ॥

अर्थ—वायविडंग, पीपल, हींग, अजमायन, सैंधानिमक, सोंठ और रास्ना इनका

समान भाग चूर्ण कर १ तोलेकी मात्रा घीमें मिलायके देवे तो कफ और श्वास इनका नाश करे इसको विडंगादि चूर्ण कहते हैं ॥

आर्द्रकस्वरस।

एक एवार्द्रकरसः समधु श्वासकासजित्।
रतिवल्लभचांपेयचापचारुकलेवरे ॥

अर्थ-हे रतिवल्लभचांपेयचापचारुकलेवरे ! एक ही अदरखका रस सहत डालके पीनेसे श्वास और खांसीका नाश करे ॥

अक्षकवल।

रावणस्य सुतो हन्यान्मुखवारिजधारितः।
श्वसनं कसनं वापि तमिवानिलनंदनः ॥

अर्थ-रावणका सुत (अक्ष अर्थात् बहेडा) मुखमें रखनेसे श्वास और खांसीको नाश करे जैसे तं (अक्षकुमारं) अर्थात् अक्षकुमारको अनिलनंदन हनुमान् नाश करते भये ॥

आटरूषरस।

आटरूषरसो गव्यनवनीतेन पाचितः।
तेन त्रिफलजं चूर्णं भक्षितं श्वासवारकम् ॥

अर्थ-अडूसेके रसको गौके मक्खनमें मिलायके औटावे जब रस जलके केवल घृत-मात्र रहे तब उतारके इसमें त्रिफलेका चूर्ण मिलायके सेवन करे तो श्वासको दूर करे॥

छिन्नश्वासनिदान।

यस्तु श्वसिति विच्छिन्नं सर्वप्राणैर्निपीडितः। न वा श्वसिति दुःखार्तो मर्मभेदरुजार्दितः॥ आनाहस्वेदमूर्च्छार्तो दह्यमानेन ब-स्तिना। विप्लुताक्षः परिक्षीणः श्वसन् रक्तैकलोचनः॥ विचेताः परिशुष्कास्यो विवर्णः प्रलपन्नरः। छिन्नश्वासेन विच्छिन्नः स शीघ्रं विजहात्यसून् ॥

अर्थ-जो पुरुष ठहर ठहरकर जितनी शक्ति उतनी शक्तिसे श्वासको त्याग करे, अथवा क्लेशको प्राप्त हो, श्वासको नहीं छोडे और मर्म कहिये हृदय बस्ती (मूत्रस्थान) और नाडियोंको मानों कोई छेदन करे ऐसी पीडा होय, पेटका

फूलना, पसीना और मूर्च्छा, इनसे पीडित होय, बस्ती (मूत्रस्थान) में जलन होय, नेत्र चलायमान होय, अथवा नेत्र आंसुओंसे भरे होंय, श्वास लेते लेते थक जाय, तथा श्वास लेते लेते एक नेत्र लाल हो जाय, (यह व्याधिके प्रभावसे होय है दोषके प्रभावसे होय तौ दोनों हो जांय), उद्विग्न चित्त हो जाय, मुख सूखे, देहका वर्ण पलट जाय, बकवाद करे, संधिके सब बंध शिथिल हो जाय, इस छिन्नश्वास करके मनुष्य शीघ्र प्राणका त्याग करे ॥

तमकश्वासके लक्षण ।

प्रतिलोमं यदा वायुः स्रोतांसि प्रतिपद्यते । ग्रीवां शिरश्च संगृह्य श्लेष्माणं समुदीर्य च ॥ करोति पीनसं तेन रुद्धो घुर्घुरकं तथा । अतीव तीव्रवेगेन श्वासं प्राणप्रपीडकम् ॥ प्रताम्यति स वेगेन त्रस्यते सन्निरुध्यते । प्रमोहं कासमानश्च स गच्छति मुहुर्मुहुः ॥ श्लेष्मणा मुच्यमानेन भृशं भवति दुःखितः । तस्यैव च विमोक्षांते मुहूर्तं लभते सुखम् ॥ तथास्योद्ध्वंसते कंठः कृच्छ्राच्छक्नोतिभाषितम् । न चापि निद्रां लभते शयानः श्वासपीडितः ॥ पार्श्वे तस्यावगृह्णाति शयानस्य समीरणः । आसीनो लभते सौख्यमुष्णं चैवाभिनंदति ॥ उच्छ्रिताक्षो ललाटेन स्विद्यता भृशमार्तिमान् । विशुष्कास्यो बहुश्वासो मुहुश्चैवावधम्यते ॥ मेघांबुशीतप्राग्वातैः श्लेष्मलैश्च विवर्धते ॥ स याप्यस्तमकश्वासः साध्यो वा स्यान्नवोत्थितः ॥

अर्थ–जिस कालमें शरीरकी पवन उलटी गतिसे नाडियोंके छिद्रमें प्राप्त होकर मस्तक तथा कंठका आश्रय कर कफसंयुक्त होय, तब कफसे रुककर अतिवेगपूर्वक कंठमें घुर घुर शब्द करे और मस्तकमें पीनसरोग करे और अत्यन्त तीव्रवेगसे हृदयमें पीडाका करनेवाला ऐसे श्वासको उत्पन्न करे, उस श्वासके वेगसे मूर्च्छित होय, त्रासको प्राप्त होय, चेष्टारहित होय और खांसीके उठनेसे बडे मोहको वारंवार प्राप्त होय, और जब कफ छूटे तब दुःख होय और कफ छूटनेके बाद दो घडी पर्य्यन्त सुख पावे, कंठमें खुजली चले, बडे कष्टसे बोले, श्वासकी पीडासे नींद न आवे सोवे तौ वायुसे पसवाडोंमें पीडा होय, बैठे ही चैन पडे और गरमीके पदार्थसे खुश होय, नेत्रोंमें सूजन होय, ललाटमें पसीना आवे, अत्यन्त पीडा होय, मुख सूखे, वारंवार श्वास और वारंवार हाथीपर

बैठनेके सदृश सर्व देह चलायमान होवे, यह श्वास मेघके वर्षनेसे, शीतसे पूरबकी पवनसे और कफकारक पदार्थ इनके सेवन करनेसे बढे है यह तमकश्वास याप्य है. यदि नया प्रगट भया होय तौ साध्य होय है ॥

प्रतमकनिदान।

ज्वरमूर्च्छापरीतस्य विद्यात्प्रतमकं तु तम् । उदावर्त्तरजोजीर्णक्लिन्नकायनिरोधजः ॥ तमसा वर्धतेऽत्यर्थं शीतैश्चाशु प्रशाम्यति । मज्जतस्तमसीवास्य विद्यात्प्रतमकं तु तम् ॥

अर्थ-इस तमकश्वासमें श्वास, ज्वर और मूर्च्छा ये दोनों लक्षण होनेसे इसको प्रतमक श्वास कहते हैं. उदावर्त, धूल, आमादि, अजीर्ण, विदग्धान्न, मल, मूत्रादि वेगके रोकनेसे अथवा क्लिन्नकाय कहिये वृद्ध मनुष्य और निरोध कहिये वेगरोध इन कारणोंसे प्रगट भई जो श्वास सो अंधकारसे अथवा तमोगुणसे अत्यन्त बढे और शीतल उपचारसे शीघ्र शांत हो जाय, इस श्वासके योगसे रोगीको अन्धकारमें बूडासदृश मालूम होय, इसको प्रतमकश्वास ऐसे कहते हैं ॥

सठ्यादि चूर्ण।

सठी पुष्करजीवंती त्वङ्मुस्तं पुष्कराह्वयम् । सुरसातामलक्येलापिप्पल्यागरुनागरम् ॥ वालुकं च समं चूर्णं कृत्वा द्विगुणशर्करम् । सर्वथा तमकश्वासे हिक्कायां च प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-कचूर, कमलकंद, गिलोय, दालचीनी, नागरमोथा, पुहकरमूल, तुलसी, भूयआंवला, इलायची, पीपल, काली अगर, सोंठ और भीमसेनी कपूर इनको समान भाग ले चूर्ण करे और सब चूर्णसे दूनी मिश्री मिलावे. यह चूर्ण प्रायः तमकश्वास और हिचकी इनपर देवे ॥

व्याघ्रीजीरकादिगुटिका।

व्याघ्रीजीरकधात्रीणां चूर्णं मधुयुतं लिहेत् ।
ऊर्ध्ववातमहाश्वासतमकैर्मुच्यते क्षणात् ॥

अर्थ-कटेरी, जीरा और आंवला इन तीन औषधोंका चूर्ण करके सहतमें मिलायके चाटे तो ऊर्ध्ववायु, महाश्वास और तमकश्वास ये रोग क्षणमात्रमें दूर हों ॥

क्षुद्रावलेह।

व्याघ्रीशतं स्यादभयाशतं च द्रोणे जलस्य प्रपचेत्कषायम् ।

तुलाप्रमाणेन गुडेन युक्तं पक्त्वाभयाभिः सह ताभिरत्र ॥ शीते क्षिपेत्षण्मधुनः पलानि पलानि च त्रीणि कटुत्रयस्य । त्वक्-पत्रकैलाकरिकेसराणां चूर्णात्पलं चेति विदेहदृष्टः ॥ क्षुद्रावले-हः कफजान्विकारान्सश्वासशोषानपि पंच कासान् हिक्कामुरो-रोगमपस्मृतिं च हत्वा विवृद्धिं कुरुतेऽनलस्य ॥

अर्थ—कटेरी और हरड प्रत्येक सौ सौ तोले लेवे इनको १०२४ तोले जलमें डा-लके काढा बनावे फिर इसको छानके उसमें ४०० तोले गुड मिलायके पक करी हुई हरड मिलायके फिर पक्क करे जब शीतल हो जावे तब २४ तोले सहत और सोंठ, मिरच, पीपल ये प्रत्येक चार ४ तोले, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर ये प्रत्येक एक ४ तोला मिलायके अवलेह बनावे इसको क्षुद्रावलेह कहते हैं. यह विदेह नामक आचार्यने प्रथम देखा है. यह कफविकार, श्वास, शोष, खांसी, हिचकी, छाती-का रोग तथा अपस्मार (मृगीका रोग) इनका नाशक और अग्निको दीपन करे है॥

कंटकार्यावलेह श्वासकासोंपर ।

कंटकारीतुलां नीरद्रोणे पक्त्वा कषायकम्।पादशेषं गृहीत्वा च तस्मिश्चूर्णानि दापयेत् ॥ पृथक् पलानि चैतानि गुडूची-चव्यचित्रकाः । मुस्तं कर्कटशृंगी च त्र्यूषणं धन्वयासकः ॥ भार्ङ्गी रास्ना सठी चैव शर्करा पलविंशतिः । प्रत्येकं च पला-न्यष्टौ प्रदद्याद्घृततैलयोः ॥ पक्त्वालेहत्वमानीय शीते मधु-पलाष्टकम् । चतुःपलं तुगाक्षीर्याः पिप्पलीनां चतुःपलम् ॥ क्षि-प्त्वा निदध्यात्सुदृढे मृन्मये भाजने शुभे । लेहोऽयं हंति हिक्कार्ति श्वासकासानशेषतः ॥

अर्थ—कटेरी ४०० तोले ले जवकूट करके २०२४ तोले जलमें डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके कपडेसे छान लेवे. फिर गिलोय, चव्य, चित्रक, नागरमोथा, काकडासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, धमासा, भारंगी, रास्ना और कचूर ये बारह औषध एक एक पल लेवे; सबका चूर्ण करके उस काढेमें डाल देवे; और मिश्री २० पल मिलावे. घी ८ पल और सरसोंका तेल आठ पल इन सबको काढेमें मिलायके फिर औटायके अवलेह बनाय लेवे फिर शीतल होने पर सहत ८ पल मिलावे. इसको दृढ चीनीके अथवा इम्रतवान् आदि उत्तम पात्रमें भरके धर रखे

चार पल इनका चूर्ण भी उसी अवलेहमें मिलाय देवे फिर वंशलोचन ४ पल पीपल इसमेंसे बलाबल विचारके रोगी नित्यप्रति सेवन करे तो हिचकी तथा सर्व प्रकारके श्वास रोग और खांसी ये दूर हों ॥

क्षुद्रश्वासनिदान।

रूक्षायासोद्भवः कोष्ठे क्षुद्रो वातमुदीरयेत् । क्षुद्रश्वासेन सोऽत्यर्थं दुःखेनांगप्रबाधकः ॥ हिनस्ति न स गात्राणि न च दुःखं यथेतरे । न च भोजनपानानि निरुणद्ध्युचितां गतिम् ॥ नेंद्रियाणां व्यथां चापि कांचिदापादयेद्रुजम् । स साध्य उक्तो बलिनः सर्वे चाव्यक्तलक्षणाः ॥ क्षुद्रः साध्यतमस्तेषां तमकः क्षुद्र उच्यते ॥

अर्थ—रूखा पदार्थ खानेसे, श्रमके करनेसे, प्रगट भई जो क्षुद्रश्वास सो पवनको ऊपर ले जाय यह क्षुद्रश्वास अत्यन्त दुःखदायक नहीं है तथा अंगोंको कुछ विकार नहीं करे, जैसे ऊर्ध्व श्वासादिक दुःखदायक हैं ऐसे यह नहीं है और भोजनपानादिकोंकी उचित गतिको बन्द नहीं करे और इन्द्रीनकी भी पीडा नहीं करे और कोई रोगको भी नहीं प्रगट करे. यह क्षुद्रश्वास साध्य कहा है. बलवान् पुरुषके सब महाश्वासादिकोंके लक्षण प्रगट न होंय तौ साध्य है, तिनमें भी क्षुद्रश्वास अत्यंत साध्य है, और तमकको क्षुद्र कहते हैं अथवा "तमकः क्षुद्र उच्यते" इस जगह "तमकः कृच्छ्र उच्यते" ऐसा भी पाठ कोई कहते हैं. इसका अर्थ यह है कि तमक कृच्छ्रसाध्य है महान् ऊर्ध्व और छिन्न ॥

असाध्यलक्षण।

त्रयः श्वासा न सिध्यंति तमको दुर्बलस्य च । कामं प्राणहरा रोगा बहवो न तु ते तथा ॥ यथा श्वासश्च हिक्का च हरतः प्राणमाशु च ॥

अर्थ—ये तीन श्वास सम्पूर्ण लक्षणयुक्त साध्य नहीं हैं और निर्बल पुरुषके तमकश्वासभी साध्य नहीं होय. प्राण हरण करनेवाले ऐसे सन्निपात ज्वरादिक रोग बहुतसे हैं सो ठीक है. परंतु श्वास और हिचकी ये जैसे जल्दी प्राण हरण करते हैं ऐसे और ज्वरादिक नहीं करे ॥

सामान्य उपचार।

श्वासहिक्कातुरं प्रायः स्निग्धैः स्वेदैरुपाचरेत्। युक्तैर्लवणतैलाभ्यां तैरस्य ग्रथितः कफः॥ श्वासो विलयमायाति मारुतश्चोपशाम्यति। स्निग्धं ज्ञात्वा ततश्चैनं भोजयेच्च रसोदनम्॥

अर्थ—श्वास और हिचकी इनसे आतुर प्राणीको सैंधव, निमक और तेल इनसे स्निग्ध ऐसा पसीने निकालनेका उपचार करे इस प्रकार करनेसे उस मनुष्यका गाठदार जो कफ हो गया है वो पतला होकर श्वासका नाश करे और वादीको शमन करे फिर वह मनुष्य स्निग्ध हुआ जानके इसको मांसरस और भात भोजन करावे॥

शृंगबेररस।

स्वरसं शृंगबेरस्य माक्षिकेण समन्वितम्।
पाययेच्छ्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफापहम्॥

अर्थ—अदरखका स्वरस सहत डालके पिलावे तो श्वास, खांसी, पीनस और कफ इनको नाश करे॥

बिभीतकावलेह।

प्रस्थं बिभीतकानामस्थि विना साधयेदजामूत्रे।
अयमेव लेहो लीढो मधुसहितः श्वासकासघ्नः॥

अर्थ—एक सेर भिलावेकी छालको बकरीकी मूत्रमें पचावे जब सिद्ध हो जावे तब इसमें सहत डालके चाटे तो श्वास और खांसी ये दूर हों॥

द्राक्षाद्यवलेह।

द्राक्षां हरीतकीं मुस्तां कर्कटाख्यां दुरालभाम्।
सर्पिर्मधुभ्यां विलिहन् श्वासान् हंति सुदारुणान्॥

अर्थ—दाख, हरड, नागरमोथा, कांकडासिंगी और धमासा इनका अवलेह सहत और घी डालके बनावे इसको भक्षण करनेसे घोर भयंकर श्वास दूर हो॥

दशमूला यवागू।

दशमूलीसठीरास्नापिप्पलीविश्वपौष्करैः। शृंगी तामलकी भार्ङ्गी गुडूचीनागराग्निभिः॥ यवागूं विधिना सिद्धां कषायं वा पिबेन्नरः। श्वासहृद्ग्रहपार्श्वार्तिहिक्काकासप्रशांतये॥

अर्थ-दशमूल, कचूर, रास्ना, पीपल, सोंठ, अंडकी जड, काकडासिंगी, भूयआंवला भारंगी, गिलोय, सोंठ और चित्रक इन औषधोंसे करी हुई कांजीको पीवे अथवा काढा करके पीवे तो श्वास, हृदयव्यथा, पसलीकी पीडा, हिचकी और खांसी इनकी शांति होय ॥

दशमूलकाढा ।

दशमूलस्य वा क्वाथः पौष्करेणावचूर्णितः ।
श्वासकासप्रशमनः पार्श्वशूलविनाशनः ॥

अर्थ-दशमूलका काढा करके उसमें पुहकरमूलका (अथवा अंडकी जडका) चूर्ण डालके पीवे तो श्वास, खांसी और पसलीकी पीडा ये नष्ट होवें ॥

रंभादिकुसुमपान ।

रंभाकुंदशिरीषाणां कुसुमं पिप्पलीयुतम् ।
पिष्ट्वा तंदुलतोयेन पीत्वा श्वासमपोहति ॥

अर्थ-केलाका फूल और कुंदका फूल तथा शिरसका फूल इन तीनों पुष्पोंमें पीपल मिलायके चावलोंके धोवनसे पीसके पीवे तो श्वास नष्ट होवे ॥

कटुतैलेन संयुक्तो गुडो यावन्न सेवितः ॥
तावन्नश्यति किं श्वासः पीयूषमधुराधरे ॥

अर्थ-जबतक सरसोंका तेल और गुडको यह प्राणी सेवन नहीं करता है पीयूषमधुराधरे ! क्या इसका श्वासरोग नष्ट होता है कदापि नहीं ॥

शृंग्यादिचूर्ण ।

शृंगीमहौषधकणाघनपुष्कराणां चूर्णं शठीमरिचयोश्च सितावि-
मिश्रम् । क्वाथेन पीतममृतावृषपंचमूल्याः श्वासं त्र्यहेण विनि-
हंति हि घोररूपम् ॥

अर्थ-काकडासिंगी, सोंठ, पीपल, नागरमोथा, पुहकरमूल, कचूर और काली मिरच इनका चूर्ण समान भाग लेकर फिर गिलोय, अडूसा और पंचमूल इनका काढा करके चूर्ण मिलाय तथा मिश्री डालके पीवे तो बडा भारी घोररूप श्वास तीन दिनमें नष्ट होय ॥

शुंठ्यादिकाढा ।

अयि प्राणप्रिये जातिफललोहितलोचने ।
शुंठीभार्ङ्गीकृतः क्वाथः श्वासत्रासाय पाययेत् ॥

अर्थ-हे प्राणप्रिये ! हे जातिफललोहितलोचने !! श्वास नष्ट करनेको सोंठ और भारंगी इनका काढा करके पीवे ॥

पंचमूलीयोग।

पंचमूली तु सामान्या पित्ते योज्या कनीयसी।
महती मारुते देया सैव देया कफाधिके॥

अर्थ-सामान्यता करके पित्तकी श्वासमें लघुपंचमूल देवे और वातश्वास तथा कफ श्वास पर बृहत्पंचमूल देना चाहिये ॥

कूष्मांडशिफाचूर्ण।

कूष्मांडकशिफाचूर्णं पीतं कोष्णेन वारिणा।
शीघ्रं शमयति श्वासं कासं चापि सुदारुणम् ॥

अर्थ-पेठेकी जडके चूर्णको गरम जलके साथ पीवे तो घोर दारुण श्वास और खांसी शीघ्र शमन होवे ॥

हरिद्राद्यवलेह।

हरिद्रामरिचं द्राक्षां कणां रास्नां शठीं गुडम्।
कटुतैलं लिहन्हन्याच्छ्वासान्प्राणहरानपि ॥

अर्थ-हरदी, मिरच, दाख, पीपल, रास्ना, कचूर और गुड इनका चूर्ण सरसोंके तेलमें मिलायके चाटे तो प्र णोंके नाश करनेवालेभी श्वासका नाश होवे ॥

भार्ङ्गीगुड।

शतं संगृह्य भार्ङ्ग्यास्तु दशमूल्यास्तथा शतम्। शतं हरीतकीनां च पचेत्तोये चतुर्गुणे ॥ पादावशेषे तस्मिंस्तु रसे वस्त्रनिपीडिते। आलोड्य च तुलां पूतां गुडस्याप्यभयां पुनः॥ पुनः पचेत्तु मृद्वग्नौ यावल्लेहत्वमेति तत्। शीते च मधुनस्तत्र षट् पलानि विनिःक्षिपेत् ॥ त्रिकटुत्रिसुगंधं च पलमात्रं पृथक् पृथक्। यवक्षारं कर्षयुग्मं संचूर्ण्य प्रक्षिपेत्ततः ॥ भक्षयेदभयामेकां लेहस्यार्धपलं तथा। श्वासं सुदारुणं हंति कासं पंचविधं तथा ॥ अर्शांस्यरोचकं गुल्मं शकृद्भेदं क्षयं तथा। स्वरवर्णप्रदो ह्येष जठराग्नेः प्रदीपनः॥ नाम्ना भार्ङ्गीगुडः ख्यातो भिषग्भिः सकलैर्मतः ॥

अर्थ-भारंगी, दशमूल और हरड ये प्रत्येक १०० तोले ले इनको १२०० तोले जलमें डालके तथा औटावे जब चतुर्थांश रहे तब उतारके कपडेमें छान लेवे फिर इसमें ४०० तोले गुड डालके तथा औटाई हुई हरडोंको डाल फिर मंदाग्निपर रसको पचावे जब गाढी अवलेह हो जावे तब उतारके इसको शीतल कर लेवे और शीतल होने पर २४ तोले सहत और सोंठ, काली मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची तथा पत्रज ये प्रत्येक चार २ तोले ले जवाखार २ तोले इन सबका चूर्ण करके अवलेहमें मिलाय देवे और कडछीसे मिलायके एकत्र देवे तो यह अवलेह सिद्ध होवे इसमेंसे दो तोले अवलेह और उसमेंसे १ हरड नित्य प्रातःकाल खाय तो बडा भारी भयंकर श्वास, पांच प्रकारकी खांसी, बवासीर, अरुचि, गोला, अतिसार और क्षय इनको नाश करे तथा स्वर और देहके वर्णको उत्तम करनेवाला और अग्निदीपक ऐसा है इसको भार्ङ्गीगुड ऐसा कहते हैं यह सर्ववैद्योंको माननीय है ॥

द्राक्षादिकाढा ।

द्राक्षामृता नागरमुष्णतोयं कृष्णाविपाकं बहुरोगनिघ्नम् ।
श्वासं च शूलं कसनं च मांद्यं जीर्णज्वरं चैव जयेच्च तृष्णाम् ॥

अर्थ-दाख, गिलोय और सोंठ इनके काढेमें पीपलका चूर्ण डालके पीवे तो श्वास, शूल, खांसी, मंदाग्नि, अजीर्ण और प्यास इनको दूर करे ॥

कुलित्थादिकाढा ।

कुलित्थनागरव्याघ्रीवासाभिः क्वथितं जलम् ।
पीतं पौष्करसंयुक्तं श्वासकासनिवारणम् ॥

अर्थ-कुलथी, सोंठ, कटेरी, अडूसा और पुहकरमूल इनके काढेको पीवे तो श्वास, खांसी इनको दूर करे ॥

देवदार्व्यादिकाढा ।

देवदारुवचाव्याघ्रीविश्वकटफलपौष्करैः ।
कृतः क्वाथो जयत्याशु श्वासकासावशेषतः ॥

अर्थ-देवदारु, वच, कटेरी, सोंठ, कायफल और पुहकरमूल इनका काढा करके देवे तो श्वास, खांसी इनका शीघ्र निवारण करे ॥

सिंह्यादिकाढा ।

सिंही निशा सिंहमुखी गुडूची विश्वोपकुल्याभृगुजाघनानाम् ।
कृष्णामरीचैर्मिलितः कषायः श्वासाटवीदाहपयोद एषः ॥

अर्थ–कटेरी, हलदी, अडूसा, गिलोय, सोंठ, पीपल, भारंगी और नागरमोथा इनका काढा कर उसमें पीपल और काली मिरच इनका चूर्ण डालके पीवे तो यह श्वासरूप वनके दहन करते अग्निको मेघके समान है ॥

वासादिकाढा।

वासा हरिद्रा मगधा गुडूची भार्ङ्गी घना नागररिङ्गिणिनाम्।
क्वाथेन मारिच्यकणान्वितेन श्वासः शमं याति न कस्य पुंसः॥

अर्थ–अडूसा, हरदी, पीपल, गिलोय, भारंगी, नागरमोथा, सोंठ और कटेरी इनके काढेमें काली मिरच और पीपलका चूर्ण डालके पीवे तो इससे किस मनुष्यकी श्वास दूर नहीं हो ॥

भार्ङ्ग्यादिलेह।

प्रलिह्यान्मधुसर्पिर्भ्यां भार्ङ्गी मधुकसंयुताम्।
पथ्यां तिक्ताकणाव्योषयुक्तां वा श्वासनाशनीम् ॥

अर्थ–भारंगीकी जड, ज्येष्ठमध, हरीतकी, पीपल, कुटकी, सोंठ, काली मिरच, पीपल इनका चूर्ण सहत और घी डालके देवे तो श्वासका नाश करता है ॥

गुडाद्यवलेह।

गुडदाडिममृद्वीकापिप्पलीविश्वभेषजैः।
मातुलिंगरसं क्षौद्रं लीढं श्वासनिबर्हणम् ॥

अर्थ–गुड, अनारदाना, दाख, पीपल और सोंठ इनका चूर्ण बिजोरेके रसमें देवे तो श्वासरोगको दूर करे ॥

वासाद्यवलेह।

वासातुलामष्टगुणे च नीरे विपाच्य तां पादजलेन साकम्। क्षु-
ण्णाढकं तद्विपचेच्छिवानां खंडा प्रयोज्या सकलस्य तुल्या॥ ततः
समुत्तार्य पलानि चाष्टौ क्षौद्रस्य च द्वे किल वंशजायाः। क्षि-
पेत्तथा मागधिकापलार्धं पलं चतुर्जातभवं प्रयोज्यम्॥ योज्यं
पलार्धं श्वसने च कासे क्षयेऽस्रपित्ते कफपीनसे च। हृद्रोगका-
र्श्ये किल विद्रधौ च उरःक्षते शोणितवांतिकोपे ॥

अर्थ–अडूसा ४०० तोले ले इसको कूटके ३२०० तोले जलमें गेरके काढा करे जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके छानले फिर इसमें २५६ तोले हरडका चूर्ण डालके

फिर पचावे जब गाढा हो जावे तब उतारके शीतल करे और ३२ तोले सहत, वंशलोचन ८ तोले, पीपल २ तोले तथा चातुर्जात ४ तोले इन सबका चूर्ण करके मिलाय देवे फिर इसमेंसे दो तोले सेवन करे तो श्वास, खांसी, क्षय, रक्तपित्त, कफ, पीनस, हृदयरोग, कृशता, विद्रधि रोग, उरःक्षत और रुधिरकी वांति इनका नाश करे ॥

सितादिचूर्ण ।

सिताद्राक्षाकणाचूर्णं समांशं तैलपाचितम् ।
भक्षितं दारुणं श्वासं निवर्तयाति वेगतः ॥

अर्थ-मिश्री, दाख और पीपलका चूर्ण इनको समान भाग ले चूर्णको तेलमें पचावे फिर इसके भक्षण करनेसे आतिदारुण श्वासके वेगको नाश करे ॥

शिलाद्यवलेह ।

शिलाव्योषभयाहिंगुमणिमंथविडंगकैः ।
लेहः साज्यमधुः कासहिक्काश्वासेषु शस्यते ॥

अर्थ-मनसिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, हींग, सेंधानिमक और वायविडंग इनका लेह सहत और घी इनके साथ देवे. यह श्वास, खांसी और हिचकी इन पर उत्तम है॥

राजिकादिगुटी ।

राजिकाक्षीरकंदश्च चपला च रसोनकम् । ऊषणातिविषा देवकुसुमं च विचूर्णितम् ॥ मार्कवार्ककुमारीभिर्निर्गुंडीमुंडिचित्रकैः । भावयित्वा पृथक्सर्वैः श्वासकासनिकृंतनम् ॥

अर्थ-राई, सपेद विदारीकंद, पीपल, लहसन, काली मिरच, अतीस और लौंग इनका चूर्ण करके उसको भांगरेका रस, आकका दूध, घीगुवार, निर्गुंडी, मुंडी और चित्रक इन प्रत्येककी भावना देवे फिर गोली बनायले यह गोली श्वास और खांसी इनका नाश करे ॥

सूर्यावर्तरस ।

सूतार्धं बलिमेकयाममभितः कृत्वा रसैर्मर्दयेत्तद्द्वंद्वेन समं तु शुल्बजलदं लिप्त्वा घटीयंत्रकैः । पक्त्वैकाहमथाहरान्निगदितो वह्नोन्मितः श्वासजित्सूर्यावर्तरसोऽथ गंधमरिचैः साज्यः कफश्वासजित् ॥

अर्थ-पारा १ भाग और गंधक आधा भाग इन दोनोंको प्रहर भर तक खूब घोटे फिर इन दोनोंकी बराबर बहुत बारीक ताम्रपत्र ले उनपर लेप करके संपुटमें रख घटीयंत्रसे एक दिन पचावे फिर निकालके एक वल्ल गंधक, काली मिरच और घी इनके साथ देवे तो कफ, श्वास इनको नाश करे ॥

अमृतार्णवरस ।

पारदं गंधकं शुद्धं मृतं लोहं च टंकणम् । रास्ना विडंगत्रिफलादेवदारुकटुत्रयम् ॥ अमृता पद्मकं क्षौद्रं विषं तुल्यं सचूर्णितम् । त्रिगुंजं श्वासकासार्तं सेवयेदमृतार्णवम् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, लोहभस्म, सुहागा, रास्ना, वायविडंग, त्रिफला, देवदारु, सोंठ, मिरच, पीपल, गिलोय, पद्माख, सहत, विष इनको समान भाग लेके चूर्ण करे इसको ३ रत्ती श्वास और खांसीरोगवाला सेवन करे इसे अमृतार्णव रस कहते हैं ॥

श्वासहेमाद्रिरस ।

आच्छादितां शिलां ताम्रे द्विगुणं वालुकाह्वये । पक्त्वा संचूर्ण्य गंधेशौ दिनार्धं तां पुनः पचेत् ॥ श्वासहेमाद्रिनामायं महाश्वासविनाशनः । वर्णवृद्धिकरो ह्येष सौवर्ण्यश्च न संशयः ॥

अर्थ-मनसिलको तामेकी डिब्बीमें भरके वालुकायंत्रमें पचावे फिर उस डिब्बीके साथ चूर्ण करके उसमें पारा, गंधक इनकी कजली डालके फिर आधे दिन पचावे यह श्वासहेमाद्रिनामक रस महाश्वासको नाश करे इसमें संदेह नहीं है ॥

उदयभास्कर ।

धान्याभ्रं सूतकं गंधं श्वेतापामार्गजद्रवैः । तुल्यांशं मर्दयेच्चायःपात्रे पाचनकं पचेत् ॥ ऊर्ध्वलग्नं ततो ग्राह्यं रसो ह्युदयभास्करः । श्वासं पंचविधं हंति गुंजाद्वयानुपानतः ॥ निष्कैकं लेहयेच्चानु क्षौद्रेण कटुरोहिणीम् ॥

अर्थ-धान्याभ्रक लेके उसमें पारा और गंधक अभ्रकके बराबर मिलायके सपेद ओंगाके रससे उसको खरल करके फिर डमरूयंत्रमें भरके अग्नि देवे. फिर ऊपरके लगे हुए पारेको निकाल लेवे इसको उदयभास्कर सूत कहते हैं यह दो २ रत्ती अनुपानके साथ देवे और ऊपरसे सहत और कुटकीका चूर्ण चटावे तो पांच प्रकारके श्वासोंको नष्ट करे ॥

श्वासकालेश्वर ।

मृतं वंगं मृतं लोहं मृतार्क मृतमभ्रकम् । शुद्धसूतं तथा गंधं माक्षिकं हिंगुलं विषम् ॥ जातीफलं लवंगं च त्वेगलानागकेसरम् । उन्मत्तकस्य बीजानि जेपालं रात्रिदुर्लभम् ॥ एतानि समभागानि मरिचं हरनेत्रयोः । सर्वं तद्याक्षिपेत्खल्वे लोहदंडेन मर्दयेत् ॥ तावच्चूर्णीकृतं धीमान् यावत्सूतो न दृश्यते । शक्राशनस्य स्वरसैर्भावना एकविंशतिः ॥ द्विगुंजा उत्तमा मात्रा आर्द्रकस्वरसैर्युता । तदर्धं बालवृद्धेषु पथ्यं देयं तदुच्यते ॥ पंच श्वासान् क्षयं कासं राजयक्ष्मनिवारणम् । श्वासकालेश्वरो नाम लोकानामपि दुर्लभः ॥

अर्थ-वंगकी भस्म, लोहभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, पारा, गंधक, सुवर्णमाक्षिककी भस्म, हींगुलू, विष, जायफल, लौंग, दालचीनी, इलायची, नागकेशर, धतूरेके बीज, जमालगोटा, हलदी, कचूर ये सब समान भाग लेवे और काली मिरच तीन भाग ले सबको खरलमें डालके लोहेके मूसलसे खरल करे कि जबतक पारा दीखनेसे न बंद होवे. फिर इसको भांगके स्वरसकी २१ भावना देवे, इसमेंसे २ रत्तीकी उत्तम मात्राको अदरखके रससे देवे. और बालक वृद्ध होवे उनको आधी मात्रा देनी चाहिये और पथ्यसे रहे तो ५ प्रकारके श्वास, क्षय, खांसी, राजयक्ष्मा इनको नाश करे यह श्वासकालेश्वर रस देवताओंकोभी दुर्लभ है ॥

पारदादिगुटी ।

पारदं गंधकं नागं ताम्रं व्योषानलैः समम् । सर्जीरसेन संचूर्ण्य प्रदेया भावना दश ॥ पुनः पत्ररसे सम्यक् चार्द्रकस्य रसैस्तथा । मिर्चप्रमाणा कफजित् कार्या सा गुटिकोत्तमा ॥ मंदाग्निकफरोगेषु श्वासकासे विशेषतः । आध्मानप्रतिपन्नार्तप्रदेया सुखकारिणी ॥

अर्थ-पारा, गंधक, शीशेकी भस्म, ताम्रभस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक और राल ये समान भाग लेकर चूर्ण करे और नागरवेलके पत्तोंके रसकी १० भावना देवे और अदरखके रसकी १० भावना देवे. फिर मिरचके समान गोली बनावे. यह मंदाग्नि, कफरोग, श्वास खांसी ओर पेटका फूलना इन पर देवे तो सुखदायक होय ॥

लवंगादिगुटी ।

लवंगमरिचे तुल्ये त्रिफलारसभाविते ।
बब्बूलत्वचया कार्या गुटी श्वासकफापहा ॥

अर्थ-लौंग, काली मिरच और त्रिफला (हरड, बहेडा, आँवला) का चूर्ण समान भाग ले उसको बबूलके छालके काढेकी भावना देकर गोली बनावे. यह श्वास और कफ इनको नाश करे ॥

दूसरा प्रकार ।

लवंगात्रिकटूनागभृंगीक्षुद्राबिभीतकैः ।
कन्यारसेन गुटिका कार्या श्वासनिवारिणी ॥

अर्थ-लौंग, सोंठ, काली मिरच, पीपल, सिंगिया विष, भांगरा, कटेरी और बहेडा इनका समान भाग चूर्ण कर घीगुवारके रसमें घोटके गोली बनाय ले इसमेंसे एक २ गोली खानेको देय तो यह श्वासरोगको नष्ट करे ॥

त्रिकटुकवटी ।

त्रिकटूटंकणं नागपत्रेण क्रियते वटी ।
मिर्चप्रमाणा कफजिन्नाम्ना त्रिपुरभैरवी ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल और सुहागा इनको एकत्र चूर्ण करके नागरवेलके पानोंके रसमें घोटके गोली मिरचके समान बनावे इसके खानेसे कफ नष्ट होय । इसे त्रिपुरभैरवी गुटी कहते हैं ॥

फलत्रयगुटी ।

फलत्रयं नागरदारुकृष्णाविषानपावेल्लसुवर्णबीजैः ।
दिनत्रयं भृंगरसैर्विमर्द्य कार्या गुटी श्वासकफापहारिणी ॥

अर्थ-त्रिफला (हरड, बहेडा, आंवला), सोंठ, देवदारु, पीपल, सिंगिया विष, नेत्रबाला, काली मिरच और धतूरेके बीज इन सबको तीन दिन भांगरेके रसमें खरल कर गोली बनावे यह श्वास और कफको दूर करे ॥

स्नुहीदुग्धयोग ।

वल्लयुग्मं स्नुहीदुग्धं गुडयुक्तनिषेवणात् ।
कासः श्वासः क्षयरोगो हृद्रोगश्च प्रणश्यति ॥

अर्थ-दो वल्ल (४ रत्ती) थूहरके दूधको गुडमें मिलायके सेवन करे तो श्वास, खांसी, क्षयरोग और हृदयरोग नष्ट होवे ॥

श्वासकुठार ।

रसो गंधो विषं चापि टंकणं च मनःशिला । एतानि कर्षमात्राणि मरिचं चाष्टकर्षकम् ॥ कटुत्रयं कर्षयुग्मं पृथगत्र विनिःक्षिपेत् । रसः श्वासकुठारोऽयं सर्वश्वासनिवारणः ॥

अर्थ-पारा, गंधक, सिंगिया विष, सुहागा और मनासिल इनको एक २ तोला ले सोंठ, मिरच, पीपल ये एक तोला लेकर चूर्ण करे. इसके सेवन करनेसे यह श्वासकुठाररस संपूर्ण रोगोंको नाश करे ॥

दूसरा प्रकार ।

रसं गंधं विषं चैवं टंकणं च मनःशिला । एतानि टंकमात्राणि मरिचं चाष्टटंककम् ॥ एकैकं मरिचं दत्त्वा खल्वे सूक्ष्मं विमर्दयेत् । त्रिकटुं टंकषट्कं च दत्त्वा पश्चाद्विचूर्णयेत् ॥ सर्वमेकत्र संयोज्य काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् । श्वासे कासे च मंदाग्नौ वातश्लेष्मामयेषु च ॥ गुंजामात्रं प्रदातव्यं पर्णखंडेन धीमता । सन्निपाते च मूर्च्छायामपस्मारे तथा पुनः ॥ अतिमोहत्वमापन्ने नस्यं दद्याद्विचक्षणः । रसः श्वासकुठारोऽयं सर्वश्वासगदप्रणुत् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, विष, सुहागा और मनसिल ये एक २ तोला ले काली मिरच ८ तोले और सोंठ, मिरच, पीपल ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे, फिर एक एक मिरच डालके पीसे फिर सब औषधोंको डालके बारीक चूर्ण करे और कपडेसे छान लेवे फिर इसको काचकी शीशीमें भरके धर रखे और श्वास, खांसी, मंदाग्नि, वात, कफसंबंधी रोग इनमें पानके बीडामें रखके १ रत्ती खाय तथा सन्निपात अपस्मार और अतिमोहवाले रोगीको इस रसकी नास देवे यह श्वासकुठाररस संपूर्ण श्वाससंबंधी रोगोंको दूर करे ॥

मरीच्यादिगुटिका कासादिकोंपर ।

मरिचं कर्षमात्रं स्यात्पिप्पली कर्षसंमिता । अर्धकर्षो यवक्षारः कर्षयुग्मं च दाडिमम् ॥ एतच्चूर्णीकृतं युंज्यादष्टकर्षगुडेन हि ।

शाणप्रमाणां गुटिकां कृत्वा वक्त्रे विधारयेत् ॥ अस्याः प्रभावात्सर्वेऽपि कासा यान्त्येव संक्षयम् ॥

अर्थ-काली मिरच १ तोला, पीपल १ तोला, जवाखार छः मासे, अनारका छिलका १ तोले इन चार औषधोंका चूर्ण कर आठ तोले गुडमें कूट पीसके चार २ मासेकी गोली बनाय लेवे इस गोलीको मुखमें रखे तो सर्व प्रकारकी खांसी और श्वास दूर हो इसमें संदेह नहीं है ॥

श्वासे पथ्य ।

विरेचनं स्वेदनधूम्रपानप्रच्छर्दनानि स्वपनं दिवा च । पुरातनाः षष्टिकरक्तशालिकुलित्थगोधूमयवाः प्रशस्ताः ॥ शशाहिभुक्तित्तिरिलावदक्षाः शुकादयो धन्वमृगा द्विजाश्च । पुरातनं सर्पिरजाप्रभूतं पयो घृतं वापि सुरा मधूनि ॥ पटोलवार्त्ताकरसोनबिंबीजंबीरतंदूलियवास्तुकं च । द्राक्षा त्रुटिः पौष्करमुष्णवारि कटुत्रयं गोजनितं च मूत्रम् ॥ अन्नानि पानानि च भेषजानि श्लेष्मानिलघ्नानि च पथ्यवर्गः ॥

अर्थ-विरेचन, स्वेदन, धूमपान, दिनमें सोना, पुराने सांठी चावल, और लाल चावल, कुलथी, गेंहू जौ ये सब अन्न पुराने पथ्य हैं. ससे, मोर, तीतर, लवा, मुरगा, तोता आदि शब्दसे मैना कोयल, मरुभूमिके मृग और पक्षी, पुराना बकरीका घी, दूध, मद्य, सहत, पटोल, बैंगन, लहसन, कँदूरी, जंभीरी, बथुएका साग (कटेरीका साग, डोडीका साग, मूली, पिंडुकिया), दाख, [हरड], इलायची, पोहकर मूल, गरम जल, त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल) गौका मूत्र तथा कफवातनाशक अन्न पान तथा औषधी ये पथ्य हैं ॥

अपथ्य ।

रक्तस्रावं पूर्ववातान्नपानं मेषीसर्पिर्दुग्धमंभोपि दुष्टम् । मत्स्याः कंदाः सर्षपाश्चान्नपानं रूक्षं शीतं गुर्वपि श्वासि वर्ज्यम् ॥ मूत्रोद्गारश्छर्दितृट्कामवेगधो नस्यं बस्तिर्दंतकाष्ठं श्रमं च ॥

अर्थ-रुधिरका निकालना, पूर्व दिशाकी पवन, बहुत जलका पीना, भेडका घी और दूध, खराब जल, मछली, कंद, सरसों तथा रूखे शीतल और भारी ऐसे अन्न, पान, मूत्र, डकार, वमन, प्यास, कामदेव इनकी बाधाको रोकना, नास लेना, बस्तिकर्म, दांतन, परिश्रम श्वासरोगको वर्जित हैं ॥

दंभ ।

वक्षः प्रदेशादपि पार्श्वयुग्मे करस्थयोर्मध्यमयोर्धऽयोश्च । प्रदीप्त-
लोहेन च कंठकूपे दाहोऽपि च श्वासिनि दंभ उक्तः ॥

अर्थ-वक्षस्थल (छाती) के दोनों तरफ दोनों हाथोंके बीचकी अंगुलियोंमें तथा कंठमें गरम लोहेसे जलाना इत्यादि अन्य जो कर्म हैं वह सब श्वासरोगीका दम्भ है ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे श्वासरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

अथ स्वरभेदनिदानम् ।

अत्युच्चभाषणविषाध्ययनाभिघातसंदूषणैः प्रकु-
पिताः पवनादयस्तु । स्रोतःसु ते स्वरवहेषु गताः
प्रतिष्ठां हन्युः स्वरं भवति चापि हि षड्विधः सः ॥

अर्थ-बहुत जोरके बोलनेसे, विषके खानेसे, ऊंचे स्वरके पाठ करनेसे अर्थात् वेदादि पाठ करनेसे, कंठमें लकडी काष्ठ आदिकी चोट लगनेसे कोपको प्राप्त हुए जो वात, कफ, पित्त सो कंठमें स्वरके वहनेवाली चार नसें हैं उनमें प्राप्त हो अथवा उनमें वृद्धिको प्राप्त स्वरको नाश करे यह स्वरभेद रोग वात, पित, कफ, सन्निपात, क्षय और मेद इन भेदोंसे छः प्रकारका है ॥

चिकित्साप्रक्रिया ।

वाते सलवणं तैलं पित्ते सर्पिः समाक्षिकम् ।
कफे सक्षारकटुकं क्षौद्रं केवलमिष्यते ॥

अर्थ-वादीके स्वरभेद पर क्षार और तेल तथा पित्तके स्वरभेद पर घी और सहत एवं कफके स्वरभेद पर क्षार और मरिचादिक तीखे रस तथा सहत इत्यादिक उपचार करने चाहिये ॥

गले तालुनि जिह्वायां दंतमूलेषु चाश्रितः ।
तेन निष्क्रमते श्लेष्मा स्वरश्चाशु प्रसीदति ॥

अर्थ-ऊपर कहे हुए कर्मके करनेसे गला, तालू, जीभ, दांतोंकी जड इनका आश्रय करके रहनेवाला कफ निकलकर गिर जानेसे स्वर स्वच्छ होवे ॥

स्वरभेदसामान्यचिकित्सा।

वातादिजनितश्वासकासघ्ना ये प्रकीर्तिताः।
योगास्तानत्र युंजीत यथादोषं चिकित्सकः॥

अर्थ-वातादि दोषोंके कुपित होनेसे जो हुआ स्वरभंग उसपर वातादिजनित श्वास खांसीके जो यत्न लिखे हैं वे सब यथा दोषक्रमसे चिकित्सा करे॥

स्वरोपघाते मेदोजे कफवद्विधिरिष्यते।
क्षयजे सर्वजे वापि प्रत्याख्याय चरेत्क्रियाम्॥

अर्थ-मेदवृद्धिसे जो प्रगट स्वरभेद उसपर कफजन्य स्वरभेदकी कही हुई चिकित्सा करे और क्षयज तथा सर्वज (सन्निपातजन्य) स्वरभेदको असाध्य जानके उसकी यथायोग्य चिकित्सा वैद्यको करनी चाहिये॥

वातिकस्वरभेदनिदान।

वातेन कृष्णनयनाननमूत्रवर्चाभिन्नं शनैर्वदति गर्द्दभवत्स्वरं च।

अर्थ-वायुसे स्वरभंग होय तौ रोगीके नेत्र, मुख, मूत्र और विष्ठा यह काले होंय वह पुरुष टूटा हुआ शब्द बोले, अथवा गधेके स्वर प्रमाण कर्कश बोले॥

मरीचघृतपान।

स्वरोपघातेनिलजेभुक्त्वोपरि घृतं पिबेत्।
मरीचचूर्णसहितं मरुत्स्वरहतिप्रणुत्॥

अर्थ-वादीसे उत्पन्न हुए स्वरभेदपर भोजन करके उपरांत घीको काली मिरचका चूर्ण डालके पीवे तो यह वादीके स्वरभेदको नष्ट करे॥

घृतगुडोदन।

आद्ये कोष्णजलं पेयं जग्ध्वा घृतगुडौदनम्।
पीतं घृतं हंत्यनिलं सिद्धं मार्कवजे रसे॥

अर्थ-भातमें गुड और घी मिलायके भोजन करे फिर ऊपरसे गरम २ जल पीवे तो वादीका स्वरभेद अच्छा होय. उसी प्रकार भांगरेके रसमें घी डालके औटावे जब घृतमात्र शेष रहे तब इसको पीवे तो वादीका स्वरभंग अच्छा होवे॥

कासमर्दादिघृत।

कासमर्दरसं दत्त्वा भार्ङ्गीकल्कं शनैः शनैः।
सिद्धं सर्पिर्हितं पीतं स्वरभेदं मरुद्भवम्॥

अर्थ-कसोंदीका रस और भारंगी इनका चूर्ण डालके मंदाग्निपर सिद्ध करा हुआ घी पीवे तो वातजन्य स्वरभेद दूर होवे ॥

व्याघ्रीघृत ।

व्याघ्रीस्वरसविपक्वं रास्नावाटयालगोक्षुरैः सिद्धम् ।
सर्पिः स्वरोपघातं हन्यात् कासं च पंचविधम् ॥

अर्थ-कटेरीका स्वरस, रास्ना, खिरेंटी और गोखरू इनका कल्क अथवा काढा डालके सिद्ध करा हुआ घी स्वरभंग तथा पांच प्रकारकी खांसी इनको नष्ट करे ॥

पैत्तिकस्वरभेदनिदान ।

पित्तेन पीतनयनाननमूत्रवर्चा ब्रूयाद्गलेन स च दाहसमन्वितेन ॥

अर्थ-पित्तस्वरभेदवाले मनुष्यके नेत्र, मुख, मूत्र और विष्ठा ये पीले होते हैं और बोलते समय गलेसे दाह होय है ॥

सामान्यचिकित्सा ।

पैत्तिके तु विरेकः स्यात्पयश्च मधुरैः शृतम् ।
लिह्यान्मधुरवस्तूनां चूर्णं मधुसमन्वितम् ॥

अर्थ-पित्तके स्वरभेदपर रेचन (जुलाब) देवे और मिश्री अथवा दूसरे मधुर पदार्थ डालके औटाया हुआ दूध अथवा मीठे २ पदार्थोंका चूर्ण करके सहतमें मिलायके चाटे तो पित्तका स्वरभेद दूर होवे ॥

जेष्ठीमधकाढा ।

अश्नीयाच्च ससर्पिष्कं यष्टीमधुकषायकम् ॥

अर्थ-पित्तके स्वरभेदपर मुलहटीके काढेमें घी मिलायके पीवे तो हित करे ॥

पयःपान ।

शर्करामधुमिश्राणि शृतानि मधुरैः सह ।
पिबेत्पयांसि यस्योच्चैर्वदतोऽपि हतः स्वरः ॥

अर्थ-ऊंचा और बहुत बोलनेसे जिसका स्वर बैठ गया हो उसको मिश्री, सहत इनसे मिला हुआ तथा अन्य मीठे पदार्थ मुनक्का आदि मिलायके औटा हुआ दूध पीवे ॥

शतावरीचूर्ण ।

शतावरीचूर्णयोगं बलाचूर्णमथापि वा ।
लाजाशतावरीचूर्णं लिह्यान्मधुसितायुतम् ॥

अर्थ-सतावर और खिरेटी इनके चूर्णको अथवा खील और सतावर इनके चूर्णको सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो पित्तके स्वरभंगको दूर करे ॥

शुंठीघृत ।

शुंठीत्वचो दुग्धवतां द्रुमाणां संपिष्य दुग्धे विपचेत्तु तेन ।
कल्केन यष्टीमधुकस्य सर्पिः सशर्करं पित्तरुजामयघ्नम् ॥

अर्थ-सोंठ और तज इनके चूर्णको वड आदि क्षीरवृक्ष हैं उनके दूधमें औटाके घी और मिश्री मिलायके भक्षण करे. अथवा मुलहटीके चूर्णको घी मिश्रीके साथ खाय तो पित्तजन्य स्वरभंगको नाश करे ॥

पित्तस्वरभेद ।

कासमर्दकवार्ताकमार्कवैः स्वरसैर्युतम् ।
क्षीरानुपानं पैत्तेषु पिबेत्सर्पिरतंद्रितः ॥

अर्थ-कसौंदी, बैंगन और भांगरा इनके स्वरसमें घी डालके पीवे और ऊपरसे दूध पीवे तो पित्तसे उत्पन्न स्वरभेद दूर होय ॥

कफस्वरभेद ।

ब्रूयात्स्वनेन सततं कफरुद्धकंठः
स्वल्पं शनैर्वदति चापि दिवा विशेषात् ॥

अर्थ-कफके स्वरभेदसे कंठ कफसे रुका रहे, और मंद मंद तथा थोडा बोले दिनमें बहुत बोले ॥

पिप्पलीयोग ।

पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं विश्वभेषजम् ।
पिबेन्मूत्रेण मतिमान्कफजे स्वरसंक्षये ॥

अर्थ-पीपल, पीपरामूल, काली मिरच और सोंठ इनके चूर्णको गोमूत्रमें डालके पीवे तो कफसे प्रगट हुआ स्वरभंग नष्ट होय ॥

आम्लवेतसादिचूर्ण ।

चव्याम्लवेतसकटुत्रयतित्तिडीकं तालीसजीरकतुगादहनैः समांशैः ।
चूर्णं गुडप्रमुदितं त्रिसुगंधियुक्तं वैस्वर्यपीनसकफारुचिषु प्रशस्तम् ॥

अर्थ-चव्य, अमलवेत, सोंठ, काली मिरच, पीपल, इमली, तालीसपत्र, जीरा. वंशलोचन, चित्रक, दालचीनी, पत्रज और इलायची इनका चूर्ण गुडमें मिलायके खाय तो स्वरभेद, पीनस, कफ और अरुचि इनपर उत्तम है ॥

गंडूष ।

आर्द्रकस्वरसोपेतं सैंधवं च कटुत्रिकैः ।
बीजपूररसैः सार्धं गंडूषः कफकेसरी ॥

अर्थ-अदरखका रस, सैंधानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, बिजोरेका रस इनके गंडूष (कुल्ले) करे तो कफरूप हाथीके मारनेको सिंहरूप है ॥

कटुकादिकाढा ।

कटुकातिविषापाठादारुमुस्तकलिंगकाः ।
गोमूत्रक्वथिताः पेयाः कंठरोगविनाशनाः ॥

अर्थ-कुटकी, अतीस, पाढ, दारुहलदी, नागरमोथा और इंद्रजौ इनको गोमूत्रमें औटायके पीवे तो कंठरोगको नाश करे ॥

सन्निपातस्वरभेदनिदान ।

सर्वात्मके भवति सर्वविकारसंपत् तं चाप्यसाध्यमृषयः स्वरभेदमाहुः ॥

अर्थ-सन्निपातके स्वरभेदमें तीनों दोषोंके लक्षण होय हैं, यह स्वरभेद असाध्य है ऐसे ऋषि कहते हैं ॥

अजमोदादिचूर्ण ।

अजमोदां निशां धात्रीं क्षारं वह्निं विचूर्णयेत् ।
मधुसर्पिर्युतं लीढ्वा त्रिदोषस्वरभंगनुत् ॥

अर्थ-अजमोद, हलदी, आंवले, जवाखार और चित्रक इनका चूर्ण सहत और घी डालके चाटे तो सन्निपातके स्वरभंगको नाश करे ॥

फलत्रिकचूर्ण ।

फलत्रिकत्र्यूषणयावशूकचूर्णानि हन्युः स्वरभंगमाशु ।
किं वा कुलित्थं वदनांतरस्थं स्वरामयं हंत्यथ पौष्कर वा ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ मिरच, पीपल और जवाखार इनका चूर्ण अथवा कुलथी अथवा पुहकरमूल ये स्वरभेदके नाशक हैं ॥

निदिग्धिकावलेह ।

निदिग्धिका तुला ग्राह्या तदर्धं ग्रंथिकस्य तु । तदर्धं चित्रकस्यापि दशमूलं च तत्समम् ॥ जलद्रोणद्वये क्वाथ्यं गृह्णीयादाढकं ततः । पूते क्षिपेत्तदर्धं च पुराणस्य गुडस्य च ॥ सर्वमेकत्र

कृत्वा तु लेहवत्साधु साधयेत् । अष्टौ पलानि पिप्पल्यास्त्रिजातकपलं तथा ॥ मरिचस्य पलं चैकं सर्वमेकत्र चूर्णितम् । मधुनः कुडवं दत्त्वा तदश्नीयाद्यथानलम् ॥ निदिग्धिकावलेहोऽयं भिषग्भिर्मुनिभिर्मतः । स्वरभेदहरो मुख्यः प्रतिश्यायहरस्तथा ॥ कासश्वासाग्निमांद्यादीन् गुल्ममेहगलामयान् । आनाहं मूत्रकृच्छ्राणि हन्याद्ग्रंथ्यर्बुदानि च ॥

अर्थ–कटेरी ४०० तोले, पीपरामूल २०० तोले, चित्रक १०० तोले और दशमूल १०० तोले ले २०२८ तोले जलमें डालके औटावे जब २५६ तोले जल रहे तब उतारके कपडेसे छान लेवे इसमें १२८ तोले पुराना गुड डाले फिर मंदाग्नि पर रखके अवलेह बनावे जब तैयार हो जावे तब उतारके शीतल होनेपर ३२ तोले पीपल और दालचीनी, इलायची, पत्रज, मिलायके मिरच ४ तोले और सहत १६ तोले उस अवलेहमें मिलावे फिर सबको एकजीव करके बलाबल विचारके भक्षण करे यह निदिग्धिकावलेह नामसे विख्यात है. वैद्य और ऋषियोंको मान्य है मुख्यकरके स्वरभंगको नाश करे और पीनस, खांसी, श्वास, मंदाग्नि, गोला, प्रमेह, कंठके रोग, अफरा, मूत्रकृच्छ्र, गांठ, अर्बुद इन सब रोगोंको नाश करे ॥

क्षयकृतस्वरभेद और मेदजस्वरभेदनिदान ।

धूम्येत वाक्क्षयकृते क्षयमाप्नुयाच्च सर्वेषु चापि हतवाक्परिवर्जनीयः ।
अंतर्गतस्वरमलक्ष्य पदं चिरेण भेदः क्षयाद्वदति दिग्धगलस्तृषार्त्तः ॥

अर्थ–क्षयीके स्वरभेदवाले पुरुषके बोलते समय मुखसे धूआंसा निकले और वाणीक्षय हो जाय, अर्थात् यथार्थ स्वर नहीं निकले. इस स्वरभेदमें जिस समय वाणी हत हो जाय अर्थात् ओजका क्षय होनेसे बोलनेकी सामर्थ्य नहीं हो तब यह असाध्य होय है और ओजका क्षय (नाश) नहीं होय तौ साध्य है, मेदके सम्बन्धसे कफ अथवा मेद इनसे गला लिप्त होय अथवा मेदसे स्वरके मार्ग रुक जानेसे प्यास बहुत लगे गलेके भीतर बोले और मंद बोले ॥

असाध्यलक्षण ।

क्षीणस्य वृद्धस्य कृशस्य चापि चिरोत्थितो यस्य सहोपजातः ।
मेदस्विनः सर्वसमुद्भवश्च स्वरामयो यो न स सिद्धिमेति ॥

अर्थ–क्षीण पुरुषके, वृद्धके, कृशके, बहुत दिनका, जन्मके संगही प्रगट भया, मोटे पुरुषके और सन्निपातोद्भव ऐसा स्वरभेद रोग साध्य नहीं होय ॥

क्षयज व मेदज स्वरभंगचिकित्सा।

क्षयजे स्वरभेदे तु तत्रोक्तविधिमाचरेत्।
कट्वातिक्तकषायाद्यैर्मेदः स्वरहतिं जयेत्॥

अर्थ-क्षयसे उपन्न स्वरभेद पर क्षयरोग पर जो चिकित्सा कही है वो करे और मेद-जन्य स्वरभेदपर तीखे, कडुए और कषेले इत्यादि औषधियोंसे प्रयत्न करे॥

जातीफलावलेह।

जातीफलैलामधुमातुलिंगैः पत्रैश्च लाजैर्युतपिप्पलीकैः।
कृतोऽवलेहः कुरुते नराणां कंठ ध्वनिं किंनरनादतुल्यम्॥

अर्थ-जायफल, इलायची, सहत, बिजोरा, पत्रज, खील और पीपल इनका अवलेह करके सेवन करे तो किन्नरोंके स्वरके समान मनुष्यके कंठका स्वर करे॥

काकजंघादिधार्य।

काकजंघा वचा कुष्ठं पिप्पलीमधुसंयुतम्।
सप्तरात्रं मुखे धार्यं किन्नरैः सह गीयते॥

अर्थ-काकजंघा, बच, कूठ, पीपल इनके चूर्णको सहतके साथ सेवन करे तो यह प्राणी सात ही दिनमें किन्नरोंके समान गान करे इन औषधोंकी गोली बनायके ७ दिन बराबर मुखमें रखे॥

जातिदलादिलेह।

जातीदलैलापिप्पलिलामज्जकमधुमातुलिंगदललेहः।
सतताभ्यासात्कुरुते किन्नरमधुरस्वरं रुचिरम्॥

अर्थ-चमेलीके पत्ते, इलायची, पीपल, पीला तृण, सहत, बिजोरेकी केशर और तमालपत्र इनका अवलेह बनायके निरंतर सेवन करनेसे किन्नरके समान मधुर और सुंदर स्वरवाला होवे॥

गुडूच्यादिलेह।

गुडूच्यपामार्गविडंगशंखिनीवचा तथा शुंठिशतावरी समम्।
घृतेन लीढं प्रकरोति मानवं त्रिभिर्दिनैः श्लोकसहस्रधारिणम्॥

अर्थ-गिलोय, ओंगा, वायविडंग, संखाहूली, वच, सोंठ और इनके चूर्णको घीमें मिलायके चाटनेसे मनुष्यको तीन दिनमें नित्य हजार श्लोक धारण करनेकी शक्ति होवे॥

बदरीकल्क ।

बदरीपत्रकल्कं वा घृतभृष्टं ससैंधवम् ।
स्वरोपघाते कासे च लेहमेनं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-बेरके पत्तोंके कल्कमें सैंधा निमक डालके घीमें भून लेवे बह अवलेह स्वरोपघात, खांसी इन पर देना चाहिये ॥

आरनालचूर्ण ।

विहितमसृणचूर्णान्यारनालेन सार्धं ।
कलितरुफलकृष्णासैंधवानि प्रलिह्यात् ॥

अर्थ-बहेडा, पीपल और सैंधा निमक इनका चूर्ण कर कांजीमें मिलायके पीवे तो स्वरभंगका नाश होवे इसमें संदेह नहीं है ॥

अभिलषति विजेतुं यः स्वरस्य प्रणाशम् ।
स पिबति सह दुग्धेनामलक्याः फलं वा ॥

अर्थ-जिस प्राणीको स्वरभंग जीतनेकी इच्छा होवे वह औटे हुए दूधमें बारीक आंवलोंका चूर्ण डालके पीवे ॥

खदिरधार्य ।

तैलाक्तं स्वरभेदे वा खादिरं धारयेन्मुखे ।
पथ्या पिप्पलियुक्तं वा संयुक्तं नागरेण वा ॥

अर्थ-सरसोंके तेलमें कत्थेको भिगोय मुखमें रक्खे अथवा हरड और पीपल इनके चूर्णमें सोंठका चूर्ण मिलायके मुखमें रखे तो स्वर स्वच्छ होवे ॥

गोरक्षवटी ।

रसभस्मार्कलोहस्य भावितस्य त्रिसप्तधा । क्षुद्राफलरसैर्मुद्गतुल्या कार्या वटी शुभा ॥ मुखस्था हरते सर्वं स्वरभंगमसंशयम् । गोरक्षनाथैर्गदिता स्वरामायि कृपालुभिः ॥

अर्थ-पारेकी भस्म, तामेकी भस्म और लोहभस्म इन तीनोंको एकत्र करके कटेरीके फलोंके रसकी भावना देकर मूंगके बराबर गोली बनावे इसमेंसे एक गोली मुखमें रक्खे और उसके रसको चूसता रहे तो निःसंदेह स्वरभेदको हरण करे यह गोरखनाथ सिद्धने कृपा करके प्राणियोंके अनुग्रहके वास्ते यह स्वरभेद पर गुटिका कही है॥

ब्राह्म्यादिचूर्ण ।

ब्राह्मी मुंडी वचा शुंठी पिप्पली मधुसंयुता ।
सेविता सप्तरात्रेण जायते किंकिणिध्वनिः ॥

अर्थ-ब्राह्मी, गोरखमुंडी, वच, सोंठ और पीपल इनके चूर्णको सहतके साथ चाटे तो यह चूर्ण मनुष्यके स्वरको कोकिलाके स्वर समान करे ॥

वचादिचूर्ण ।

ब्राह्मी वचाभया वासा पिप्पली मधुसंयुता ।
अस्य प्रयोगात्सहसा किंनरैः सह गीयते ॥

अर्थ-ब्राह्मी, वच, हरड, अडूसा और पीपल इनके चूर्णको सहतमें मिलायके चाटे तो किन्नरके समान उत्तम स्वर होय ॥

दुग्धामलकपान ।

दुग्धं प्रयुक्तामलकं नराणां नष्टस्वराणां सुखमातनोति ।
यथा मृगाक्षी सुरकिंनराणां कंदर्पदर्पप्रतिपीडनं च ॥

अर्थ-आंवलेके चूर्णको दूधमें डालके पीवे तो स्वरभंगरोगवालेको सुख होता है जैसे मृगाक्षी सुरकिन्नरोंको कामदेवका दलन सुख देता है ॥

पथ्य ।

स्वेदो बस्तिर्धूमपानं विरेकः कवलग्रहः । नस्यं भालशिरावेधो यवा लोहितशालयः ॥ हंसाटवीताम्रचूडकेकीमांसरसाः सुराः । गोकंटकः काकमाची जीवंतीबालमूलकम् ॥ द्राक्षा पथ्या मातुलिंगं लशुनं लवणार्द्रकम् । तांबूलं मरिचं सर्पिः पथ्यानि स्वरभेदिनाम् ॥

अर्थ-स्वेदन, बस्तिकर्म, धूमपान, विरेचन, औषधोंका कवल बनाकर मुखमें रखना, नास, मस्तककी नसका वेधना, जो, लाल चांवल, हंस, वनका मुरगा, मोर इनके मांसका रस, दारू, गोखरू, मकोय, जीवंती (डोडी) का साग, नवीन मूली, दाख, हरड, बिजोरा, लहसन, निमक मिला अदरख, पानकी बीडी, काली मिरच और घी ये स्वरभेद (आवाजका मंद हो जाना) रोगवालेको पथ्य कहे हैं ॥

स्वरभेदपर अपथ्य ।

आम्रः कपित्थं बकुलं शालूकं जांबवानि च । तिंदुकानि कषायाणि वमिं स्वप्नं प्रजल्पताम् ॥ अन्नपानं विरुद्धं च स्वरभेदे विवर्जयेत् ॥

अर्थ—आम, कच्चा कैथ, मोलसिरी, भसीडा, जामुन, तेंदूके फल और कषेले रस, वमन, सोना, वहुत बोलना तथा विरुद्ध अन्न पान ये सब स्वरभेदरोगीको वर्जित हैं ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे स्वरभंगरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता।

अरुचिकर्मविपाकः ।

श्रद्धाहीनो धनी अदाता दानरतिर्वा तामसगुणान्वितो यः ॥ सोऽरुचिमान् शूली वा जायते ॥ तस्य प्रायश्चित्तम्॥ कृच्छ्रमतिकृच्छ्रं चांद्रायणं व्यस्तं समस्तं वा व्याधितारतम्येन कुर्यात् अत्राशक्तो धनी च नित्यं पंचाशद्ब्राह्मणभोजनं प्रतिदिनं मिष्टान्नेन कारयेत् ॥ अत्राप्यशक्तौ ॥ जपं होमं तथा तीर्थस्नानं वापि समाचरेत् । तीव्रवैराग्यसंयुक्तः कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥

अर्थ—जो प्राणी धनाढ्य होकर श्रद्धाहीन, अदाता अथवा दान करे तोभी तामसी दान करे उस प्राणीके अरुचि (नफरत) का रोग अथवा शूलरोग होय इसका प्रायश्चित्त कहता हूं. उसको कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, चांद्रायणव्रत ये संपूर्ण अथवा इनमेंसे कोईसा एक व्याधिके तारतम्य करके प्रायश्चित्त करे. यदि इन प्रायश्चित्तोंके करनेमें अशक्त होवे और धनाढ्य होय तो नित्यप्रति पचास ब्राह्मणोंको मिष्टान्न भोजन करावे. यदि यहभी न होसके तो जप, होम तथा तीर्थ स्नान ये करे' तथा तीव्र वैराग्य धारण तथा ब्राह्मणभोजन करावे. तो रोगसे छूट जावे ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय तत्प्रतीकार ।

अतिपरिभूतक्षपणः सहजयुतो मानवो भवति । जीवे मंदाग्निविजितो दुश्चित्तको पापकर्मा च ॥ दुश्चिकित्स्यस्थानस्थितगुरोः प्रागुक्तजपहोमस्नानादिकं विदध्यात ॥

अर्थ—जिस प्राणीके जन्मसमयमें सहजस्थान (तीसरे घरमें) क्रूर ग्रह होवे किंवा

बृहस्पति सहज स्थानमें क्रूरग्रयुक्त हो तो मंदाग्नि युक्त, पापकर्ता, शत्रुओंसे जीता और दुश्चित्त ऐसा उत्पन्न होवे तिसने दुश्चिकित्स्यस्थान गुरुदोष जानेके वास्ते पीछे कहे हुए जप होमादि करे ॥

अरोचकनिदान ।

परीक्ष्य संमुखे चान्नं जंतुर्न स्वादते मुहुः । अरोचकः स विज्ञेयो भक्तद्वेषमथो शृणु ॥ चिंतयत्यथ मनसा दृष्ट्वा दृष्ट्वा तु भोजनम् । द्वेषमायाति यो जंतुर्भक्तद्वेषः स उच्यते ॥ यस्यान्ने नभवेच्छ्रद्धा स भक्तच्छंद उच्यते । कुपितस्य भयार्तस्य ज्वरितस्य विरोधकः ॥

अर्थ-वारंवार मुखमें अन्न डालने पर मनुष्यको स्वाद नहीं आता उसको अरोचक कहते हैं और अन्नके सुननेसे स्मरणसे, दर्शनसे और स्पर्शसे जो मन खिन्न हो जाय उस विकारको अन्नद्वेष कहते हैं और जिस विकारसे अन्नकी इच्छा न हो उसको भक्तच्छंद कहते हैं वह कुपित, भयार्त और ज्वरित ऐसे रोगीका असाध्य समझना ॥

अरोचककारण ।

वातादिभिः शोकभयातिलोभक्रोधैर्मनोघ्नाशनरूपगंधैः ।
अरोचकाः स्युः परिहृष्टदंतः कषायवक्त्रस्य नरोऽनिलेन ॥

अर्थ-पृथक् वातादि दोष करके ३ सन्निपातसे, १ शोकसे, १ भयसे, १ अतिलोभसे तथा १ अतिक्रोधसे ऐसे ८ प्रकारका अरोचक (अरुचि) रोग है. वह मनको क्लेश देनेवाले अन्न, रूप और गंध इन कारणोंसे प्रगट होय हैं परंतु सुश्रुत और अन्य ग्रन्थोंके मतसे पांच ही प्रकार मुख्य माने हैं, भय, लोभ, क्रोधकी अरुचिको शोककी ही अरुचिके अन्तर्गत मानते हैं. वादीकी अरुचिसे दांत खट्टे हों और मुख कषेला होय ॥

सामान्यशास्त्रार्थ ।

बास्तिः समीरणे पित्ते विरेको वमनं कफे ।
सर्वजे सर्वकामार्थं हर्षणं स्यादरोचके ॥

अर्थ-वादीसे यदि अरुचिका रोग होवे तो बस्तिकर्म देवे. पित्तसे होय तो रेचन (जुल्लाब) देवे. कफसे होय तो वमन करावे और त्रिदोषसे होवे तो त्रिदोषके नाश करनेवाले तथा मनको प्रसन्न करनेवाले उपचार करे ॥

अरुचौ कवलग्राहो धूमो मुखधावनम् ।
मनोज्ञमन्नपानं वा हर्षणाश्वासनानि च ॥

अर्थ—अरुचिरोगमें सामान्यता करके कवलग्रह (मुखमें औषधोंकी गोली रखना) धूमपान करना तथा औषधके जलको मुखमें धर खुलखुलायके कुल्ले करना, उत्तम स्वच्छ अन्न और जल तथा अंतःकरणको हर किसी उपायसे प्रसन्न करना और आश्वासन देना ये उपचार करने चाहिये ॥

सात्म्यान्स्वदेशरचितान्विविधांश्च भक्ष्यान्पानानि मूलफलखांडवरागलेहान् । सेवेद्रसांश्च विविधान्विविधप्रयोगैर्भुंजीत चापि लघुरूक्षमनःसुखानि ॥

अर्थ—अपनी प्रकृतिके अनुकूल अपने देशमें बने ऐसे अनेक प्रकारके भक्ष्य पदार्थ कहिये लड्डू, पेडा, बरफी, खुरचन, मेवावाटी इत्यादि पक्वान्न, सरबत, पने, कंद, अनार, सेव, अंगूर, चटनी, मुरब्बा, अवलेह, पंचामृत, गुलाबजल, श्रीखंड, रायता इत्यादिक पदार्थ, हलके, रूक्ष, अंतःकरणको सुखकारी ऐसे पदार्थ सेवन करे तो मुखमें रुचि प्रगट होवे ॥

वचादिस्नेहपान ।

वांतो वचाद्भिरनिले विधिवत्पिबेत्तु स्नेहोऽम्लतोयमदिरान्यतमेन चूर्णम् । कृष्णाविडंगयवभस्महरेणुभार्ङ्गीरास्नैलहिंगुलवणोत्तमनागराणाम् ॥ पैत्ते गुडांबुमधुकैर्वमनं प्रशस्तं लेहः ससैंधवसितामधुसर्पिरिष्टः । निंबांबुना कृतवमेः कफजेऽनुपानं राजद्रुमांबु मधुना सह दीप्यकाढ्यम् ॥ चूर्णं तदुक्तमथ वानिलजे तदेव सर्वैस्तु सर्वकृतमेनमुपक्रमेत ॥

अर्थ—वादीसे जो अरुचि होय उसपर वचके काढेसे वमन करायके फिर स्नेह, खट्टे रस अथवा मद्य इनमेंसे किसी एकके साथ पीपल, वायविडंग, जवाखार, रेणुक, भारंगी, रास्ना, इलायची, हींग, सैंधा निमक और सोंठ इनके चूर्णको खाय. पित्तकी अरुचिमें गुड, जल और मुलहटी इनकी वमन देवे. सैंधा निमक, मिश्री, सहत और घी इनका अवलेह बनायके देवे, कफकी अरुचिपर नीमके रससे वमन करायके फिर अमलतासके काढेमें सहत और अजमायनका चूर्ण डालके पीवे. अथवा वादीकी अरुचि पर जो चिकित्सा कही है वो सब करे तथा सर्व दोषोंसे उत्पन्न अरुचिमें तीनों दोषों पर जो उपचार कहे हैं वो सब करे ॥

सामान्यचिकित्सा।

इच्छाविनाशभयजेषु च बाधकेषु भावान्भवाय वितरेत्खलु साध्यरूपान्। अर्थेषु चातिपतितेषु पुनर्भवाय पौराणिकैः श्रुतिपथैरनुमानयेत्तम्॥

अर्थ-इच्छानाश अथवा भयसे उत्पन्न अरुचि पर सुख होनेके वास्ते इच्छित पदार्थ जो मिल सकें वो देवे और उसके भयको दूर करे और द्रव्यनाशके होनेसे जो अरुचि प्रगट हुई पुराण (भागवत वेदांत आदि शास्त्रोंको) सुने जिससे ज्ञान प्रगट होवे॥

पित्तजन्यअरोचकनिदान।

कट्वम्लमुष्णं विरसं च पूति पित्तेन विद्याल्लवणं च वक्त्रम्।

अर्थ-पित्तकी अरुचिसे कडुआ, खट्टा, गरम, विरस, दुर्गंधयुक्त ऐसा मुख होय॥

कफजन्य अरोचकनिदान।

माधुर्यपैच्छिल्यगुरुत्वशैत्यविबद्धसंबद्धयुतं कफेन॥

अर्थ-कफकी अरुचिसे खारा, मीठा, पिच्छल, भारी, शीतल मुख होय है और मुख बंधा सरीखा अर्थात् खाय नहीं और आंत कफसे लिप्त होय॥

अरोचके शोकभयातिलोभक्रोधाद्यहृद्याऽशुचिगंधजे स्यात्। स्वाभाविकं चास्यमथारुचिश्च त्रिदोषजे नैकरसं भवेत्तु॥ हृच्छूलपीडनयुतं पवनेन पित्ततृड्दाहशोषबहुलं सकफप्रसेकम्। श्लेष्मात्मकं बहुरुजं बहुभिश्च विद्याद्वैगुण्यमोहजडताभिरथापरं च॥

अर्थ--शोक, भय, अतिलोभ, क्रोध, अहृद्य (अर्थात् मनको बूरी लगे ऐसी वस्तु) अपवित्र वास इनसे प्रगट हुई अरुचिमें मुख स्वाभाविक रहे अर्थात् वातजादिकोंके सदृश कसेला, खट्टा आदि नहीं होय. सन्निपातकी अरुचिमें अन्नसे अरुचि तथा मुखमें अनेक रस मालूम हो. वातकी अरुचिसे हृदयमें शूल और वेदना होती है. पित्तसे प्यास, दाह और चूषनेके सदृश पीडा ये लक्षण होते हैं. कफकी अरुचिमें मुखसे कफ गिरे, सन्निपातकी अरुचिमें पीडा अत्यन्त होय, वैगुण्य कहिये मनकी व्याकुलता, मोह, जडत्व इना लक्षणोंसे अपर कहिये आगंतुज अरोचक जाने. भूँख होय परंतु खानेकी सामर्थ्य न होन इसको अरुचि कहते हैं. आपको प्रियभी अन्न किसीने दिया हो परंतु खाय नहीं उसको

अन्नाभिनन्दन कहते हैं. अन्नके स्मरण, श्रवण, दर्शन और वास इनसे जिसके त्रास होय, उसको भक्तद्वेष कहते हैं इस प्रकार ये रोग तीन प्रकारका है. इसी वास्ते चरक सुश्रुतने अरोचक शब्दकरके संग्रह करा है ॥

गंडूष।

किंचिल्लवणसंयुक्तमारनालं विपाचयेत्।
तेन गंडूषमात्रेण आस्यवैरस्यमृच्छति ॥

अर्थ–कांजीमें थोडासा निमक डालके औटावे फिर इसके कुल्ले करे तो मुखकी विरसता अर्थात् जायकेका न आना दूर होवे ॥

कवलग्राह।

सिताव्योषकपित्थानां चूर्णं क्षौद्रेण तद्वटी।
सर्वारोचकशांत्यर्थं धारयेद्वदनांबुजे ॥

अर्थ–मिश्री, सोंठ, मिरच, पीपल और कैथ इनका चूर्ण करके सहतमें गोली बनावे इसको मुखमें रखे तो अरुचि दूर होवे ॥

विडंगचूर्ण।

विडंगचूर्णकर्षैकं क्षौद्रैश्चतुर्गुणैर्युतम्।
असाध्यमपि संहन्यादरुचिं वक्त्रधारणात् ॥

अर्थ–वायविडंगका चूर्ण १ तोला, सहत ४ तोले डालके गोली बनावे तो असाध्य भी अरुचि होवे तौ उसकाभी नाश होय ॥

अम्लिकाकवल।

अम्लिकागुडतोयं च त्वगेलामरिचान्वितम्।
अभक्तच्छंदरोगेषु शस्तं कवलधारणम् ॥

अर्थ–जिस प्राणीकी अन्न पर अरुचि होवे उसको इमलीके पत्तेमें गुड, जल, दालचीनी, इलायची और मिरच इनका चूर्ण डालके पीवे तो अरुचि दूर हो ॥

कुष्ठादिकवल।

कुष्ठसौवर्चलाजाजीशर्करामरिचं बिडम्। धान्यैलापद्मकोशीर-
पिप्पलयश्चंदनोत्पलम् ॥ लोध्रतेजोवती पथ्या त्र्यूषणं सयवा-
ग्रजम्। आर्द्रदाडिमनिर्यासः साजाजीशर्करायुतम् ॥ सतैल-

माक्षिका ह्येते चत्वारः कवलग्रहाः । चतुरो रोचकान् घ्नंति वाताद्येकजसर्वजान् ॥

अर्थ—कूठ, संचर निमक, जीरा, मिश्री, काली मिरच और बिडनिमक इनका चूर्ण तथा धनिया, इलायची, पद्माख, खस, पीपल, चंदन सपेद, कमल इनका चूर्ण, लोध, मालकांगनी, हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार इनका चूर्ण अदरख, अनारदान इनके रसमें जीरा और मिश्री मिलावे ये चार योग सरसोंका तेल और सहतके साथ खाय तो कवल यानी गस्से खानेकी शक्ति हो. और वात, पित्त, कफ और सन्निपात इनसे उत्पन्न ४ प्रकारकी अरुचिको नाश करे ॥

नींबूका पना ।

भागैकं निंबुजं तोयं षड्भागं शर्करोदकम् । लवंगमरिचोन्मिश्रं पानकं पानकोत्तमम् ॥ निंबूरसभवं पानमत्यम्लं वातनाशनम् ॥ वह्निदीप्तिकरं रुच्यं समस्ताहारपाचकम् ॥

अर्थ—नींबूका रस १ भाग, मिश्रीका सरबत ६ भाग लेकर उसमें लौंगका और काली मिरचोंका चूर्ण डालके पना करे यह सब पनोंमें उत्तम है. यह नींबूका पना अत्यंत खट्टा, वादीनाशक, अग्नि प्रदीप्त करता, रुचिकारक तथा सर्व आहारका पाचक है ॥

मुखधावन ।

अजाजीमरिचं कुष्ठं बिडं सौवर्चलं तथा ।
मधुकं शर्करा तैलं वातिके मुखधावनम् ॥

अर्थ—जीरा, काली मिरच, कूठ, बिडनिमक, संचरनिमक मुलहटी, मिश्री और सरसोंका तेल इन सबको एकत्र करके मुखको धोवे अर्थात् कुल्ले करे तो वादीकी अरुचि दूर हो॥

दूसराप्रकार ।

कारंजं दंतकाष्ठं च विधेयमरुचौ सदा । किंचिल्लवणसंयुक्तमारनालं विपाचयेत् ॥ तेन गंडूषकं कुर्यादास्यवैरस्यशांतये ॥

अर्थ—मुखकी रुचि चली गई हो तो कंजेकी दांतनसे दांतोंको घिसे अर्थात् दांतन करे तथा कांजीमें थोडा निमक मिलायके कुल्ले करे तो फिर रुचि हो जावे ॥

तीसरा प्रकार ।

त्रिर्यूषणानि त्रिफलारजनीद्वयं च चूर्णीकृतानि यवशूकविमि-

श्रितानि । क्षौद्रान्वितानि वितरेन्मुखधावनार्थमन्यानि तिक्तकटुकानि च भेषजानि ॥

अर्थ—दालचीनी, इलायची, पत्रज, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, हलदी, दारु हलदी, जौके कांटे इनका चूर्ण सहतमें मिलायके मुखको धोवे तथा यह कडुवी चरपरी औषध लेवे तो अरुचि इनका नाश होवे ॥

शर्करादिभक्ष ।

शर्करा दाडिमं चाथ द्राक्षा खर्जूरमेव च । केसरं मातुलिंगस्य सिंधुना मधुनापि वा ॥ आस्यवैरस्यशमनं भक्षयेत्कर्षसंमितम् ॥

अर्थ—मिश्री, अनारदाना, मुनक्का, खजूर, बिजोरेकी केशर, सैंधा निमक अथवा सहतसे युक्त इनमेंके किसी एकके साथ तोले भर भोजन करनेसे मुखमें रुचि होवे ॥

पानक ।

पक्वाम्लिका सिता शीतवारिणा वस्त्रगालितम् । एलालवंगकर्पूरमरीचैरवधूलितम् ॥ पानकस्यास्य गंडूषं धारयित्वा मुखेतुरः । अरुचिं नाशयत्येव पित्तं प्रशमयेद्यथा ॥

अर्थ—पकीहुई इमलीको जलमें भिगोकर मसल कर छान लेवे फिर इसमें मिश्री, शीतल जल, इलायची, लौंग, कपूर और मिरच इनका चूर्ण डालके पना बनावे इसको मुखमें धारण करनेसे अरुचिका नाश होवे तथा पित्त शांत हो ॥

तालीसादिचूर्ण ।

तालीसं मरिचं शुंठी पिप्पली वंशरोचना । एकद्वित्रिचतुःपंच कर्षैर्भागान् प्रकल्पयेत् ॥ एलात्वचोऽस्तु कर्षार्धं प्रत्येकं भागमावहेत् । मृतं वंगं मृतं ताम्रं समभागानि कारयेत् ॥ द्वात्रिंशत्कर्षतुलिता प्रदेया शर्करा बुधैः । तालीसाद्यमिदं चूर्णं रोचनं पाचनं स्मृतम् ॥ कासश्वासज्वरहरं छर्द्यतीसारनाशनम् । शोषाध्मानहरं प्लीहाग्रहणीपांडुरोगजित् ॥

अर्थ--तालीसपत्र १ तोला, काली मिरच २ तोले, सोंठ ३ तोले, पीपल ४ तोले, वंशलोचन ५ तोले, इलायची, दालचीनी ये दोनों छः छः मासे लेवे. वंगकी भस्म और तामेकी भस्म दोनों आठ आठ तोले. मिश्री ३२ तोले इसको कूट पीस चूर्ण बनावे

उसमें पूर्वोक्त मिश्रीको मिलायके सेवन करे तो मुखमें रुचि प्रगट हो तथा अन्न पचे तथा खांसी, श्वास, ज्वर, वमन, अतिसार, शोष, पेटका फूलना, कामला, संग्रहणी और पांडुरोग ये दूर होंय ॥

खांडवचूर्ण ।

तुल्यं तालीसचव्योषणलवणगजाह्विःकणाग्रंथ्यजातीवृक्षाम्लाग्नित्वचं त्रिर्घनबदरधनैलाजमोदाम्लविश्वम् । सार्धश्वेताग्निसारो तिसृतिकृमिवमीखांडवोरुच्यजीर्णे गुल्माध्मानानलास्योदरगलगुदहृन्मृद्भदश्वासकासे ॥

अर्थ–तालीसपत्र १, चव्य १, मिरच १, सैंधानिमक १, नागकेशर १, पीपल २, पीपरामूल २, जीरा २, इमली २, चित्रक २, दालचीनी २, नागरमोथा ३, सुखेबेर ३, धनिया ३, इलायची ३, अजमोद ३, अमलवेत ३, सोंठ और मिश्री १९ तोले लेवे तथा अनारदाना ९॥ तोले इन सब औषधोंका बारीक चूर्ण करके अनुपानके साथ अतिसार, कृमि, वांति, अरुचि, अजीर्ण, गोला, पेटका फूलना, मंदाग्नि, मुखरोग, उदररोग, गलरोग, बवासीर, हृदयरोग, मृत्तिकाजन्य रोग, श्वास और खांसी इनपर देवे ॥

यवानीखांडवचूर्ण अरोचकादि पर ।

यवानी दाडिमं शुंठी तिंतिडीकाम्लवेतसौ । बदराम्लं च कुर्वीत चतुःशाणमितानि च ॥ सार्धद्विशाणं मरिचं पिप्पली दशशाणिका । त्वक्सौवर्चलधान्याकं जीरकं द्विद्विशाणकम् ॥ चतुःषष्टिमितैः शाणैः शर्करामत्र योजयेत् ॥ चूर्णितं सर्वमेकत्र यवानीखांडवाभिधम् ॥ चूर्णं जयेत्पांडुरोगं हृद्रोगं ग्रहणीज्वरम् । छर्दिशोषातिसारांश्च प्लीहानाहविबंधताम् ॥ अरुचिं शूलमंदाग्निमर्शोजिह्वागलामयान् ॥

अर्थ– अजमोद, अनारदाना, सोंठ, इमली, अमलवेत, बेरकी खटाई, ये छः औषध चार चार शाण लेवे, काली मिरच २॥ शाण, पीपल १० शाण, दालचीनी, संचरनिमक, धनिया, जीरा ये प्रत्येक दो दो शाण लेवे. मिश्री ६४ शाण, इन सब औषधोंको कूट पीसके चूर्ण करे इस चूर्णको यवानीखंड कहते हैं इस चूर्णके सेवन करनेसे पांडुरोग, हृदयरोग, संग्रहणी, ज्वर, छर्दि (वमन), शोष, अतिसार, प्लीहा, अफरा, मलका रुकना, अरुचि, शूल, मंदाग्नि, बवासीर, जीभ और गलेके विकार इन सबको दूर करे ॥

कारव्यादिगुटिका ।

कारव्यजाजीमरिचं द्राक्षावृक्षाम्लदाडिमम् । सौवर्चलं गुडः क्षौद्रमेषां कार्या वटी शुभा ॥ बदरास्थिमिता सास्ये धार्यारोचकनाशिनी ॥

अर्थ–कलौंजी, जीरा, काली मिरच, दाख, अमलवेत, अनारदाना, संचरनिमक, गुड और सहत ये सबको एकत्र खरल करके बेरकी गुठलीके बराबर गोली बनायके मुखमें रखे तो अरुचि रोग दूर होय ॥

खंडार्द्रकयोग ।

आर्द्रकस्य सितायाश्च द्विगुणाष्टपलानि च । निष्कद्वादशकं तीक्ष्णमष्टनिष्का च मागधी ॥ अष्टनिष्कं च तन्मूलं पंचानिष्कं च नागरम् । जातीफलैलादहनवंशाख्याः पंच निष्ककाः ॥ सर्वाण्येतानि शुष्काणि चूर्णं कृत्वा पृथक् पृथक् । आर्द्रकं खंडशः कृत्वा गोघृतेऽष्टपले पचेत् ॥ शर्करापूर्णचूर्णं च आर्द्रकं सह मेलयेत् । मंडलं सेवयेन्नित्यं महापित्तविनाशनम् ॥ अम्लपित्तं निहंत्याशु सर्वपित्तविकारजित् । सर्वारुचिं वातरोगं मंदाग्निं च नियच्छति ॥

अर्थ–अदरख ६४ तोले, मिश्री ६४ तोले, काली मिरच ४ तोले, पीपल ३ तोले, पीपरामूल ३ तोले, सोंठ १॥ तोला, जायफल, इलायची, चित्रक, वंशलोचन ये प्रत्येक डेढ २ तोला लेवे इन सूखी हुई औषधोंका पृथक् २ चूर्ण करे फिर अदरखके टुकडे बारीक करके ३२ तोले घीमें गेरके तल लेवे फिर मिश्री और सब चूर्णको खटाईमें मिलाय नित्यप्रति ४० दिनपर्यंत सेवन करे तो यह खंडार्द्रक लेह घोर पित्तका नाश करनेवाला है. अम्लपित्तको बहुत जल्दी दूर करे और सर्वपित्तके विकारोंको नष्ट करे तथा सर्व प्रकारकी अरुचि, वादीके रोग, मंदाग्नि इन सबको नष्ट करे ॥

राजिकादिशिखरिणी ।

राजिका जीरको कुष्ठो भृष्टहिंगु च नागरम् । सैंधवं दधि गोः सर्वं वस्त्रपूतं प्रकल्पयेत् ॥ तावन्मानं क्षिपेत्तत्र यथा स्याद्रुचिरुत्तमा । तक्रमेतद्भवेत्सद्यो रोचनं वह्निदीपनम् ॥

अर्थ--राई, जिरा, कूट, भुनी हुई हींग, सोंठ, सैंधा निमक और गौका दही ये सब पदार्थ यथायोग्य एकत्र कर वस्त्रमें डालके छान लेवे यह छाछ अरुचिको नाश करे और जठराग्निको दीपन करे है यह राजिकादि शिखरन कहाती है ॥

आर्द्रकयोग ।

धौतं खंडितमार्द्रकं च सलिलैः क्षिप्तं सुतप्ते घृते सिंधूत्थं मरिचं सुजीरयुगुलं चूर्णीकृतं प्राक्षिपेत् । चूर्णं भृष्टयवोद्भवं च वितुषं हिंग्वाज्यधूमे दहेदित्थं दोषविहीनमार्द्रकवरं सुस्वादुसंजायते ॥

अर्थ--अदरखको जलसे धोय स्वच्छ करके उसके टुकडे २ कर लेवे फिर घीको कढाईमें चढाय उसमें इस अदरखको डालके परिपक्क करे. फिर सैंधानिमक, काली मिरच, जीरा, काला जिरा इनका चूर्ण उसमें डालके कुछ गरम करे फिर जौओंको भूनके उनके चूनको घीमें हींग डालके भून लेवे और सबमें मिलाय देवे. इस प्रकार बना हुआ अदरख दोषहीन, स्वादिष्ठ और अरुचिनाशक होता है ॥

ताम्राशिखरणी ।

गव्यमावर्तितं दुग्धं निबद्धं दधि माहिषम् । एकीकृत्य पटे घृष्टं शुभ्रशर्करया शुभम् ॥ एलालवंगकर्पूरमरिचैश्च समन्विता । ताम्रा शिखरिणी कुर्याद्रुचिं सकलवल्लभा ॥

अर्थ--गौका दूध, भैंसका दही इन दोनोंको एकत्र करके कपडेमें डाल और सपेद बूरा मिलायके धीरे २ हाथसे मलके छान लेवे उसमें इलायची, लौंग, कपूर और काली मिरच ये पदार्थ यथायोग्य डालके सिखरन बनावे. इसका नाम ताम्राशिखरिणी है. यह रुचिको उत्पन्न करे तथा सर्व प्राणियोंको प्यारी है ॥

आमलकादि चूर्ण ।

आमलं चित्रकः पथ्या पिप्पली सैंधवं तथा । चूर्णितोऽयं गणो ज्ञेयः सर्वज्वरविनाशनः ॥ भेदी रुचिकरः श्लेष्मजेता दीपनपाचनः ॥

अर्थ--आंवले १, चित्रक २, छोटी हरड ३, पीपल ४, सैंधानिमक ५ इन पांच औषधोंको समान समान भाग लेकर चूर्ण करे यह सर्वज्वरोंको दूर करे तथा मलादिकको भेदन करे और रुचिदाई तथा कफ दूर होय, अग्नि प्रदिप्त होय और अन्न पचे ॥

कर्पूरादिचूर्ण ।

कर्पूरचोचकंकोलजातीफलदलैः समैः । लवंगं नागमरिचं कृष्णा शुंठी विवर्धिताः ॥ चूर्णं सितासमं ग्राह्यं रोचनं क्षयकासजित् । वैस्वर्यश्वासगुल्मार्शश्छर्दिकंठामयापहम् ॥ प्रयुक्तं चान्नपानेषु भिषजा रोगिणां हितम् ॥

अर्थ-कपूर, दालचीनी, कंकोल, जायफल और पत्रज ये सब प्रत्येक एक २ तोला लेवे, लौंग २ तोले, नागकेशर ३ तोले, काली मिरच ४ तोले, पीपल ५ तोले और सोंठ ६ तोले इस प्रकार लेके चूर्ण करे फिर मिश्री मिलायके सेवन करे तो रुचि करे, खांसी, स्वरभेद, श्वास, गोला, बवासीर, छर्दि, कंठरोग इनको नाश करे, इसको भोजनमें मिलायके अथवा जलमें मिलायके देवे ॥

चव्यादिचूर्ण ।

चव्याम्लवेतसकटुत्रयातिंतिडीकतालीसजीरकतुगादहनैः समांशैः । चूर्णं गुडप्रमुदितं त्रिसुगंधियुक्तं वैस्वर्यपीनसकफारुचिषु प्रशस्तम् ॥

अर्थ-चव्य, अम्लवेत, सोंठ, मिरच, पीपल, अमलवेत, तालीसपत्र, जीरा, वंशलोचन, चित्रक, दालचीनी, पत्रज, इलायची इनका चूर्ण गुडमें मिलायके देवे तो स्वरभेद, पीनस, कफ, अरुचिको नष्ट करे ॥

आर्द्रकमातुलुंगावलेह ।

आर्द्रकस्वरसं प्रस्थं तदर्धांशं गुडं क्षिपेत् । कुडवं बीजपूराम्लं गालयित्वा विचक्षणः ॥ सर्वं मंदाग्निना पक्त्वा तत्रेमानिविनिः-क्षिपेत् । त्रिजातकं त्रिकटुकं त्रिफलायाः समेव च ॥ चित्रकं ग्रंथिकं धान्यं जीरकद्वयमेव च । कर्षांशं श्लक्ष्णचूर्णं तु मेलयित्वा तु भक्षयेत् ॥ अरोचकक्षयहरमग्निदीप्तिकरं परम् । कामलापांडु-शोकघ्नं कासश्वासहरं परम् ॥ आध्मानोदरगुल्मांश्च प्लीहं शूलं च नाशयेत् ॥

अर्थ-६४ तोले अदरखका रस, गुड ३२ तोले, बिजोरेका रस १६ तोले इन सबको मंदाग्निपर पचावे फिर इसमें दालचीनी, पत्रज, इलायची, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, धमासा, चित्रक, पीपरामूल, धनिया, जीरा इन प्रत्येकका चूर्ण तोले २ भर लेवे सबको पूर्वोक्त रसमें मिलायके खाय तो अरुचि, मंदाग्नि, कामला, पांडुरोग, शोष, खांसी, श्वास, अफरा, उदर, गोला, प्लीहा और शूल इनको नष्ट करे ॥

जीरकादिघृत ।

पिष्ट्वाजाजी सधान्याकं घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
कफपित्तारुचिहरं मंदानलवमिं जयेत् ॥

अर्थ-जीरा और धनिया इनका कल्क ६४ तोले घीमें डालके घृतको पक्क करे यह घृत कफपित्तसे हुई अरुचिको नाश करे तथा मंदाग्नि और वमन इनको नष्ट करे है ॥

सूतादिगुटिका ।

सूतं गंधाभ्रमगधाम्लीकामगधसैंधवैः ।
गुटिकारोचकहरी जिह्वावदनशुद्धिकृत् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, अभ्रकभस्म, पीपल, इमली,, पीपरामूल और सैंधा निमक इन सबकी गोली बनायके मुखमें रक्खे तो अरुचिको नष्ट करे तथा जिह्वा और मुखकी शुद्धि करे ॥

लघुचुक्रसंधान ।

गुडक्षौद्रारनालानि समस्तानि यथोत्तरम् । शंसति द्विगुणा-न्भागान्सम्यक् सूक्तस्य सिद्धये ॥ यन्मस्त्वादिशुचौ भांडे सक्षौद्रं गुडकांजिकम् । त्रिरात्रं धान्यराशिस्थं सूक्तं चुक्रं तदुच्यते ॥

अर्थ-गुड १ भाग, सहत २ भाग और कांजी ४ भाग इस प्रकार लेकर चिकने बासनमें भरके धानकी राशीमें तीन दिन रख देवे इसको सूक्तचुक्र कहते हैं, यह सर्व प्रकारकी अरुचिरोगको नाश करे ॥

केसरादिलेह ।

केसरं मातुलुंगस्य सैंधवं मधुनापि वा ।
आस्यवैरस्यशमनं भक्षयेत्कर्षसंमितम् ॥

अर्थ-बिजोरेकी केसरको सैंधानिमक अथवा सहत इनके साथ एक तोला खाय तो मुखकी विरसता (बुरा स्वाद) दूर होवे ॥

शमयति केसरमरुचिं सलवणघृतमाशु मातुलुंगस्य ।
दाडिमचर्वणमथवा चरको रुचिकारि सूचयामास ॥

अर्थ–बिजोरेकी केसर, सैंधा निमक इनको सहतमें मिलायके सेवन करे तो अरुचिको दूर करे अथवा अनारका चवाना रुचि करता है इस प्रकार चरक ऋषिने कहा है ॥

आर्द्रकदाडिमयोग ।

जिह्वाकंठविशोधनं तदनु च स्याच्छृंगबेरान्वितं सिंधूत्थं हितमत्र चाथ मधुना शस्तो रसो दाडिमः । अभ्युद्बोधकराण्यजीर्णशमनान्याहुस्तथा भेषजान्यन्नारोचकहृत्प्रयोगमसकृत्तत्तत्प्रदेयानि च ॥

अर्थ–प्रथम जिह्वा और कंठ इनको शुद्धि करनेवाली औषध लेकर फिर अदरख और सैंधा निमक खाय अथवा अनारदाना और सहत खाय तथा अग्नि प्रदीप्त करनेवाली और अजीर्णनाशक औषध सेवन करनेसे अरुचि रोग दूर होय ॥

दाडिमचूर्ण ।

द्वे पले दाडिमादष्टौ खंडाद्व्योषात्पलत्रयम् । त्रिसुगंधिपलं चैकं चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ दीपनं रोचनं हृद्यं पीनसश्वासकासजित् ॥

अर्थ–अनारदाना ८ तोले, मिश्री ३२ तोले, सोंठ, मिरच, पीपल ये चार २ तोले, दालचीनी, इलायची और पत्रज ये ४ तोले इन सबको एकत्र चूर्ण करके खाय. यह दीपन, रोचन और हृदयको हितकारी है तथा पीनस, श्वास और खांसी इनको नाश करे ॥

पिप्पल्यादि चूर्ण ।

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः । मरिचं दीप्यकं चैव वृक्षाम्लं साम्लवेतसम् ॥ एलालवंगशालूककपित्थं चाति कार्षिकम् । प्रदेयं चातिशुद्धायाः शर्करायाश्चतुःपलम् ॥ चूर्णमग्निप्रसादः स्यात्परमं रुचिवर्धनम् । प्लीहकार्श्यमथार्शांसि श्वासं शूलं ज्वरं वमिम् ॥ निहंति दीपयत्यग्निं बलवर्णरुचिप्रदम् । वातानुलोमनं हृद्यं जिह्वाकंठविशोधनम् ॥

अर्थ–पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, काली मिरच, अजमायन, अमलवेत, डासरा, इलायची, लौंग, जायफल और कैथ ये एक एक तोला, मिश्री १६ तोले इनको कूट पीस चूर्ण बनावे यह अग्निको प्रदीप्त करता, रुचिकारी तथा प्लीह, कार्श्य

(कृशता), बवासीर, श्वास, शूल, ज्वर और वमन इनको दूर करे तथा वायुका अनुलोमन करे अर्थात् बिगडी हुई वायुको शुद्ध करे और हृदय, जीभ और कंठ इनको शुद्ध करे है ॥

छत्रादिचूर्ण ।

छत्राबीजं तिन्तिडीकं द्राक्षा दाडिमजीरकम् ।
सौवर्चलं गुडं क्षौद्रं सर्वारोचकनाशनम् ॥

अर्थ-आंवले, इमली, दाख, अनारदाना, जीरा, संचरनिमक, गुड और सहत इन सबको एकत्र करके सेवन करे तो अरुचिको नाश करे ॥

अम्लिकादिपेय ।

सौवर्चलं गुडं क्षौद्रं सर्वारोचकनाशनम् ॥

अर्थ-संचरनिमक, गुड और सहत इन सबको मिलायके सेवन करे तो सर्व प्रकारके अरुचिरोग दूर हो ॥

शुंठ्यादिचूर्ण ।

त्रुटित्वक्केसरं पुष्पं वल्लिजं सकणौषधम् । समखंडं भागवृद्धं
चूर्णितं भक्षयेद्गदी ॥ श्वासकासप्रसेकेषु हृत्पार्श्वरुचिजे गदे ।
गलामये प्रशस्तं च मुखपाकविधौ हितम् ॥

अर्थ-इलायची, दालचीनी, नागकेशर, लौंग, काली मिरच, पीपर और सोंठ ये पदार्थ एकसे दूसरा वृद्धिके क्रमसे लेवे. तथा सब चूर्णके समान मिश्री मिलावे इस चूर्णको सेवन करे तो श्वास, खांसी, मुखसे पानीका छूटना और हृदय, पार्श्व, अरुचि, गलेका रोग और मुखपाक (छाले) इन सब रोगोंको दूर करे ॥

त्र्यूषणादिवटी ।

त्र्यूषणकापित्थशर्करारोचकेन च साधयेद्वटी ।
सेविता च सा जायते जरो भीमसेनवद्भक्षयेद्धालसः ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, कैथ, मिश्री और संचरनिमक इनकी गोली बनायके खाय तो वृद्धावस्था दूर हो तथा भीमसेनके समान भूख लगे ॥

अमृतप्रभावटी ।

मरिचं पिप्पलीमूलं लवंगं च हरीतकी । यवानी तिन्तिडीकं च
दाडिमं लवणत्रयम् ॥ एतानि पलमात्राणि मागधीक्षारचित्र-

कम्। त्रिजाजीनागरं धान्य एला धात्रीफलं समम्॥ एतान्द्वि-पलिकान् भागान् भावयेद्बीजपूरकैः। भावनात्रितयं दत्त्वा गुटिकां कारयेद्बुधः॥ छायाशुष्कां प्रकुर्वीत अजीर्णस्य प्रशांतये। अग्निं च कुरुते घोरं गुटिका चामृतप्रभा॥

अर्थ–मिरच, पीपलामूल, लौंग, हरड, अजवायन, इमली, अनारदाना, बिडनिमक, कचिया निमक और साम्हर ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. इन सबका चूर्ण करके इसमें बिजोरेके रसकी तीन भावना देकर गोली बनायले इनको छायामें सुखायके देवे तो अजीर्णको नष्ट करे. तथा अग्निको बढावे इसको अमृतप्रभा गुटिका कहते हैं॥

आकल्लकादिचूर्ण।

आकल्लकं सैंधववह्निशुंठीधात्र्यूषणं दीप्यसमांशपथ्या। रसेन भाव्यं फलपूरकेन मंदानलत्वे ह्यमृतप्रभेयम्॥ कासे गलामये श्वासे प्रातिश्याये च पीनसे। अपस्मारे तथोन्मादे सन्निपाते सदा हिता॥

अर्थ–अकरकरा, सैंधानिमक, चीता, सोंठ, आंवले, काली मिरच, अजमायन और हरड ये बराबर लेवे इन सबका चूर्ण करके बिजोरेके रसकी भावना देवे तो यह मंदाग्नि रोगपर अमृतप्रभा चूर्ण बने यह खांसी, कंठके रोग, श्वास, सरेकमा, पीनस, अपस्मार (मृगी), उन्माद और सन्निपात रोग इनपर सदैव हित है॥

लवणार्द्रकयोग।

भोजनादौ सदा पथ्यं लवणार्द्रकभक्षणम्।
रोचनं दीपनं वह्नेर्जिह्वाकंठविशोधनम्॥

अर्थ–भोजन करनेके थोडी देर पहले सैंधानिमक और अदरखको खानेसे रुचि करे, अग्निको दीपन करे तथा जीभ और कंठको शोधन करे॥

शृंगवेरादिलेह।

शृंगवेररसं चापि मधुना सह योजयेत्।
अरुचिश्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफापहम्॥

अर्थ–अदरखके रसमें सहत डालके देवे तो अरुचि, श्वास, खांसी, पीनस और कफके विकारोंको नष्ट करे॥

त्वङ्मुस्तादिचूर्ण ।

त्वङ्मुस्तमेलाधान्यानि मुस्तामामलकत्वचा । त्वक् च दार्वी यवान्याश्च पिप्पली तेजवत्यपि ॥ यवानी तिंतिडीकं च पंचैते मुखशोधनाः । श्लोकपादैरभिहिताः सर्वारोचकनाशनाः ॥

अर्थ-दालचीनी, नागरमोथा, इलायची, धनिया अथवा नागरमोथा, आंवले, दालची- -नी, दारुहलदी, अजमायन अथवा पीपर और जलपीपर अथवा अजमायन और इमली ये पांच योग मुखकी शुद्धि और अरुचि इनको नाश कर ॥

दाडिमरस ।

विडंगचूर्णसंयुक्तो रसो दाडिमसंभवः ।
असाध्यामपि संहन्यादरुचिं वक्त्रधारितः ॥

अर्थ-अनारदानेके रसमें वायविडंगका चूर्ण डालके इस रसको मुखमें रखे तो असाध्यभी अरुचिका रोग नष्ट होवे ॥

जीरकादिचूर्ण ।

अजाजिनिष्कमात्रं च कर्षकं सितशर्करा ।
पलं क्षौद्रेण संयुक्तं पीतं रुचिकरं मुखे ॥

अर्थ-जीरा ४ मासे और मिश्री १ तोला दोनोंको एकत्र करके और सहत ४ तोले मिलायके मुखमें रखे तो यह रुचिको प्रगट करे ॥

कपित्थादिचूर्ण ।

कपित्थमज्जात्रिकटुचूर्णं क्षौद्रसितायुतम् ।
अरोचकेषु सर्वेषु प्रशस्तं धारयेन्मुखे ॥

अर्थ-कैथका गूदा, सोंठ, मिरच, पीपल इनका चूर्ण सहत और मिश्राम मिलायके मुखमें रखे तो सर्व अरुचि पर उत्तम है ॥

शुंठ्यादिगुटी ।

शुंठ्येकभागा द्विगुणा च कृष्णा निशोऽत्र पथ्या त्रिगुणा तथा च । सार्ध्यैकभागामलकी च तीक्ष्णं चतुर्गुणं सैंधवमम्लमर्द्यम् ॥ शाणैकमात्रा गुटिका निषेव्या निहंति मंदानलजं प्रकोपम् ॥

अर्थ-सोंठ १, पीपल २, निसोथ ३, हरड ३, आंवला १॥, मिरच ४ और सैंधा निमक ४ भाग लेवे. इन सबका चूर्ण करके नींबूके रसमें खरल करे फिर चार २ मासेकी गोली बनावे यह गोली मंदाग्निको नष्ट करे है और रुचि प्रगट करे ॥

अरुचिरोगमें पथ्य ।

बस्तिर्विरेको वमनं यथाबलं धूमोपसेवा कवलग्रहस्तथा । तिक्तानि काष्ठानि च दंतघर्षणे चित्रान्नपानानि हितैः कृतान्यपि ॥ गोधूममुद्गाढकिशालिषष्टिका मांसं वराहाविशशैणसंभवम् । वेगो झषांडं मधुरालिकेलिशः प्रोष्ठी खलेशः कवची च रोहितः ॥ कर्कारुवेत्राग्रनवीनमूलकं वार्त्ताकसौभांजनमोचदाडिमम् । भव्यं पटोलं रुचकं पयो घृतं बालानि तालानि रसोनसूरणम् ॥ द्राक्षा रसालं ललदंबु कांजिकं मद्यं रसालां दधि तक्रमार्द्रकम् । कंकोलखर्जूरप्रियालतिंदुकं पक्कं कपित्थं बदरं विकंकतम् ॥ तालास्थिमज्जाहिमवालुकासितापथ्यायवानीमरिचानि रामठम् । स्वाद्वम्लतिक्तानि च देहमार्जनं वर्गोऽयमुक्तोऽरुचिरोगिणां हितः ॥

अर्थ—रोगीके बलानुसार बस्तिकर्म, विरेचन, वमनका करना तथा धूमपान, मुखमें औषधका कवल रखना तथा कडुए काष्ठकी दांतन करना और अनेक प्रकारके हितकारा ऐसे अन्न, पान, गेहूँ, मूंग, अरहर, शालीधान, सांठी चावल और सूअर, बकरा, शशा, काला मृग इनका मांस, चेकु जातकी मछली, झषांड, मधुरालिका, इलिश, प्रोष्ठी, खलेश, कवची और रोहू इतने प्रकारकी मछली, लाल जातकी घीया, वेतकी आगेकी कोंपल, नई कोमल मूली, बैंगन, सहजना, केला, अनार, भव्य, परवल, सैंधानिमक, दूध, घी, कोमल तालके फल, लहसन, जमीकंद, दाख, आँम, खसका अथवा झरनेका बहता हुआ जल, कांजी, मदिरा (दारू) सिखरन, दही, छाछ, अदरख, कंकोल, खजूर, चिरौंजी, तेंदू (अथवा ढेडसका साग) पका कैथका फल, बेर, विकंकत (कटाई), ताडके भीतरकी गिरी, शीतल वालु, मिश्री, हरड, अजमायन, काली मिरच, हींग, स्वादिष्ठ (मीठे), खट्टे और कडुए रस तथा स्नान ये सब अरुचिरोगवालेको पथ्यवर्ग कहा है ॥

अरुचिपर अपथ्य ।

तृष्णोद्गारक्षुधानेत्रवारिवेगविधारणम् । अहृद्यान्नमसृङ्मोक्षं क्रोधं लोभं भयं शुचम् ॥ दुर्गंधारूपसेवां च न कुर्यादरुचौ नरः ॥

अर्थ-प्यास, डकार, भूंख और रुदन इनके वेगको रोकना, अप्रिय अन्नका भोजन, फस्त खोलना, क्रोध, लोभ, भय, शोक, दुर्गंध और कुरूप पदार्थोंका देना ये अरुचि-रोगवालेको सेवन नहीं करने चाहिये ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे अरुचिरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

छर्दिरोगकर्मविपाकः ।

यो ब्राह्मणाय केशकीटकाकसारमेयाद्युपहतमन्नम् ।
जानन्नेव प्रमादात्प्रयच्छति स च्छर्दिमानन्यजन्मनि ॥

अर्थ-जो प्राणी ब्राह्मणके अर्थ बाल, कीट, कौआ, कुत्ता इनसे बिगडे हुए अन्नको अर्थात् निषिद्ध अन्नको उन्मत्तपनेसे जानकर जो देता है वह दूसरे जन्ममें वमन रोग करके पीडित होय ॥

अन्यच्च ।

विश्वासघातकी च्छर्दियुक्तो भवति तदुपशांतये पंचाशद्ब्राह्मणभोजनं कारयेत् । अन्नदानं च यथा-शक्त्या आज्ययुक्तं च कुर्यात् । तेनोपशांतिर्भवति ॥

अर्थ-जो प्राणी विश्वासघात करे है वह वमनरोगसे पीडित होता है उसको उस दोषके दूर करनेको पचास ब्राह्मणोंको भोजन करावे और घृतयुक्त अन्नका दान करे तो यह रोग शांत होय ॥

ज्योतिषशास्त्राभिप्राय ।

रिपुस्थाने यदा स्यातां चंद्रशुक्रौ ततो भवेत् । छर्दिमान्मनु-जस्तृष्णापक्षं वा इव लोकिते ॥ क्षीणचंद्रावलोकी तु षष्ठस्थान-स्थितो बुधः ॥ शुक्रबाधोपशांतये बुधस्य पूर्वोक्तमेव सकलं जपादि विदध्यात्

अर्थ-जन्मके समय छठे स्थानमें चंद्रमा और शुक्र पडे होवें अथवा इनकी दृष्टि होवे तो वह वमनरोगी होय अथवा तृष्णा (प्यास) रोगी होवे अथवा छठे स्थान-में बुध पडा होवे और उसको क्षीणचंद्रमा पूर्ण दृष्टिसे देखता होय तो वांति अथवा तृष्णारोगी होय उसको शुक्र और बुध इनकी शांति करनेको पूर्वोक्त जपादिक संपूर्ण करे ॥

छर्दिनिदान संप्राप्ति व लक्षण ।

दुष्टैर्दोषैः पृथक् सर्वैर्बीभत्सालोकनादिभिः । छर्दयः पंच विज्ञेयास्तासां लक्षणमुच्यते ॥ अतिद्रवैरतिस्निग्धैरहृद्यैर्लवणैरपि । अकाले चातिमात्रैश्च तथा सात्म्यैश्च भोजनैः ॥ श्रमाद्भयात्तथोद्वेगादजीर्णात्कृमिदोषतः । नार्याश्चापन्नसत्वायास्तथातिद्रुतमश्नतः ॥ बीभत्सैर्हेतुभिश्चान्यैर्द्रुतमुत्क्लेशितो बलात् । छादयन्नाननं वेगैरर्दयन्नङ्गभञ्जनैः ॥ निरुच्यते छर्दिरिति दोषो वक्त्रं प्रधावति ॥

अर्थ—दुष्ट हुए पृथक् और सब दोषों करके तथा दुष्ट वस्तुके देखनेसे आदिशब्दकरके दुष्ट गंधके सूंघनेसे पांच प्रकारकी छर्दि जाननी अर्थात् जिसको रद्द वमन, उलटी कहते हैं उसके लक्षण आगे कहते हैं. अत्यन्त पतले अथवा चिकने अहृद्य (अप्रिय) वस्तु, खारके पदाथ इनके सेवन करनेसे, कुसुमय भोजन करनेसे, अथवा अत्यन्त भोजन करनेसे, अथवा जो न पचे ऐसे भोजन करनेसे, श्रम, भय, उद्वेग, अजीर्ण, कृमिदोष इन कारणोंसे, गर्भिणी स्त्रीके गर्भकी पीडासे तथा जल्दी भोजन करनेसे और बीभत्स (खोटे) कारणोंसे जैसे विष्ठा, राध, आदिका देखना इनसे तीनों दोष कुपित हो बलसे मुखको आच्छादन करे और अंगोंको पीडा कर मुखद्वारा भोजन हुआ सब निकाल देय इसको (छर्दि) उलटी ऐसें मनुष्य कहते हैं. इस जगह उदान वायु वमन कराती है ॥

पूर्वरूप ।

हृल्लासोद्गारसंरोधैः प्रसेको लवणस्तनुः ।
द्वेषोऽन्नपाने च भृशं वमीनां पूर्वलक्षणम् ॥

अर्थ—हृदयसे खारा, खट्टा, प्रथमही निकले अथवा सूखी रद्द होय, डकार आवे नहीं, लार गिरे, खारी मुख हो जाय, अन्न और पानीसे अत्यन्त अरुचि होय छर्दि (छाट) के पूर्वरूप हैं ॥

वातछर्दिलक्षण ।

हृत्पार्श्वपीडामुखशोषशीर्षनाभ्यार्तिकासस्वरभेदतोदैः उद्गारशब्दं प्रबलं सफेनं विभिन्नकृष्णं तनुकं कषायम् ॥ कृच्छ्रेण चाल्पं महता च वेगेनार्तोऽनिलाच्छर्दयतीह दुःखम् ॥

अर्थ-हृदय और पसवाडेमें पीडा होय, मुखशोष, मस्तक और नाभि इनमें शूल होय, खांसी, स्वरभेद, सुई चुभनेकीसी पीडा होय, डकारका शब्द प्रबल होय, वमनमें झाग आवे, ठहर २ कर वमन होय, तथा थोडी होय, वमनका रंग काला होय, पतली, और कसेली होय, वमनका वेग बहुत होय, परंतु वमन थोडा होय और वेगके प्रभावसे दुःख बहुत होय ये लक्षण वायुकी छर्दिके हैं ॥

सैंधवयोग ।

सैंधवं सर्पिषा पीतं वातच्छर्दिनिवारणम् ॥

अर्थ-घीमें सैंधा निमक डालके पीवे तो वादीकी छर्दि रोग दूर हो ॥

लवणत्रययोग ।

लवणत्रयसंयुक्तं संयुक्तं लवणेन वा ।
हन्यात्क्षीरोदकं पीतं छर्दिं पवनसंभवाम् ॥

अर्थ-सैंधानिमक, बिडनिमक, कचियानिमक इनके साथ अथवा केवल निमकको दूध और जलमें मिलायके पीवे तो वादीसे प्रगट हुई छर्दिको नष्ट करे ॥

धान्याकयूष ।

धान्याकविश्वदशमूलकषायसिद्धान् यूषान् रसान् पवनवम्यरुचिप्रशांत्यै । पीत्वा सुखानि लभते मधुमिश्रितं वा शंखाह्वयास्वरसमूषणचूर्णयुक्तम् ॥

अर्थ-धनिया, सोंठ और दशमूल इनके काढे, मंड अथवा रस ये वादीकी छर्दि तथा वादीकी अरुचि इनकी शांति करनेको लेय तो सुख होय अथवा शंखाहूलीके रसमें सहत और काली मिरचोंका चूर्ण डालके देवे तो सुख होय ॥

पित्तच्छर्दिलक्षण ।

मूर्च्छापिपासामुखशोषमूर्धताल्वक्षिसंतापतमोभ्रमार्तः ।
पीतं भृशोष्णं हरितं सतिक्तं धूम्रं स पित्तेन वमेत्सदाहम् ॥

अर्थ-मूर्च्छा, प्यास, मुखशोष, मस्तक, तलुआ, नेत्र सन्ताप अर्थात् तपायमान रहें, अंधेरा आवे, चक्कर आवे, रोगी पीला गरम हरा कडुआ धूआंके रंगका और दाहयुक्त ऐसा पित्तको वमन करे यह पित्तकी छर्दिका लक्षण है ॥

तंदुलजलपान ।

पित्तच्छर्दिंर्व्रजेद्दूर्वातंदुलोदकदानतः ।
धात्रीरसेन वा पीताः सितालाजाश्च घ्नंति ताम् ॥

अर्थ-चावलके धोवनके जलके जलमें दूबका रस डालके पीवे तो अथवा आँवलेका रस, मिश्री और खील इनको एकत्र करके सेवन करे तो पित्तकी छर्दि दूर हो ॥

लाजादियूष ।

लाजामसूरयवमुद्गकृता यवागूश्छर्द्यां हिता मधुयुता बहुपित्तजायाम् । यूषाः सुगंधिमधुतिक्तरसाः प्रयुक्ता मृल्लोष्टभवमंबु हितं तृषायाम् ॥

अर्थ-खील, मसूर, जौ और मूंग इनकी यवागू बनाय उसमें सहत डालके पीवे तो अत्यंत पित्तसे जो छर्दि होती है वह दूर होय अथवा सुगंधित पदार्थ, सहत और कडुए रस इन करके युक्त जो मंड वहभी उत्तम है तथा मिट्टीके डेलेको अग्निमें डाल करके जलमें बुझाय देवे यह जल प्यासमें उत्तम है ॥

पर्पटादिकाढा ।

क्राथः पर्पटजः पीतः सक्षौद्रः शिशिरीकृतः ।
पित्तच्छर्दिशिरस्तापचक्षुर्दाहानपोहति ॥

अर्थ-पित्तपापडेके काढेको शीतल कर सहत डालके पीवे तो पित्तकी छर्दि, मस्तककी गरमी, नेत्रोंका दाह इनको दूर करे ॥

मक्षिकाविडवलेह ।

सिताचंदनमध्वाढ्यं विलिहेन्माक्षिकाशकृत् ।
सोपद्रवा पित्तभवा च्छर्दिरेतेन शाम्यति ॥

अर्थ-मिश्री, चंदन और सहत इनके बराबर मक्खीकी वीट लेवे सबको एकत्र करके चाटे तो उपद्रवयुक्तभी पित्तकी छर्दि शांत होवे ॥

गुडूच्यादिकाढा ।

गुडूचीत्रिफलारिष्टपटोलैः क्वथितं जलम् ।
क्षौद्रयुक्तं निहंत्याशु च्छर्दिं पित्तसमुद्भवाम् ॥

अर्थ-गिलोय, त्रिफला, नीमकी छाल और पटोलपत्र इनके काढेमें सहत डालके पीवे तो पित्तकी छर्दिका नाश होवे ॥

लाजसक्तुपान ।

सर्पिः क्षौद्रसितोपेता लाजसक्तून् लिहेत्ततः ।
पित्तच्छर्दिश्च तेनाशु प्रशाम्यति सुदुस्तरा ॥

अर्थ-खीलोंका चूर्ण, घी, मिश्री और सहत इन सबको एकत्र करके चाटे तो घोर दुस्तर पित्तकी छर्दि शांत होवे ॥

कफछर्दिलक्षण ।

तंद्रास्यमाधुर्यकफप्रसेकं संतोषानिद्राऽरुचिगौरवार्त्तः।
स्निग्धं घनं स्वादु कफाद्विशुद्धं सरोमहर्षोऽल्परुजं वमेत्तु ॥

अर्थ-तन्द्रा, मुखमें मिठास, कफका पडना, संतोष, निद्रा, अन्नमें अरुचि, भारीपना इनसे पीडित हो, चिकना, गाढा, मीठा, सफेद ऐसे कफको वमन करे, जब रद्द करे तब पीडा थोडी होय, रोमांच होय ये कफकी छर्दिके लक्षण हैं ॥

सामान्यचिकित्सा ।

छर्द्यां कफोद्भवायां तु वमनं कारयेद्भिषक् । तोयैः सर्षपासिंधू-
त्थराठानिंबकणायुतैः ॥ शस्यंते शालिगोधूमयवमुद्गमकुष्ठकाः ।
षष्टिकास्तत्र यूषश्च पटोल्याद्याश्च भोजनम् ॥

अर्थ-कफसे उत्पन्न हुई छर्दिरोगपर सरसों, सैंधानिमक, मैनफल, नीमकी छाल और पीपल इनके काढेसे वमन करावे और शालिचावल, गेहूं, जौ, मूंग, मोठ और साठी चावल इनके बने पदार्थ और मंड, परवल इत्यादिक भोजनमें देवे ॥

शालिभक्त ।

आरक्तशालिभक्तं गोदधिशर्कराविमिश्रं च ।
कुर्याद्भोजनमेतत्कफच्छर्दिच्छिदं जंतोः ॥

अर्थ-लाल चावलोंका भात, गौका दही और मिश्री इनका भोजन करे तो उपद्रव-युक्त कफकी छर्दि शांत होवे ॥

विडंगादिचूर्ण ।

विडंगत्रिफलाव्योषचूर्णं मधुयुतं लिहेत् ।
शाम्यत्यनेन कफजा छर्दिः सोपद्रवा नृणाम् ॥

अर्थ-वायविडंग, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच ,पीपल इनके चूर्णको सहतमें मिलायके चाटे तो उपद्रवयुक्त भी कफकी छर्दि शांत होवे ॥

जांबवादियोग ।

सजांबवं बादरचूर्णमम्लं मुस्तायुतं कर्कटकं सशृंगि ।
दुरालभा वा मधुना च युक्ता लिह्यात्कफच्छर्दिविनिग्रहार्थम् ॥

अर्थ–जामुन, बेर, बिजौरा और नागरमोथा इनका चूर्ण ईखके रसमें मिलायके देवे अथवा काकडासिंगी और धमासा इनका चूर्ण सहतमें मिलायके चाटे तो कफकी छर्दिको बंद करे ॥

सन्निपातच्छर्दिलक्षण।

शूलाविपाकारुचिदाहतृष्णाश्वासप्रमोहप्रबलाप्रसक्तम्।
छर्दिस्त्रिदोषाल्लवणाम्लनीलं सांद्रोष्णरक्तं वमतां नृणां स्यात् ॥

अर्थ–शूल, अजीर्ण, अरुचि, दाह, प्यास, श्वास, मोह इन लक्षणोंसे प्रबल हुई जो वमन सो सन्निपातसे होय है. रद्द करनेवालेकी वमन खारी, खट्टी, नीली, संघट्ट (जिसको देशवारी मनुष्य जाडी कहे हैं) गरम, लाल ऐसी होय है ॥

बिल्वादिकाढा।

बिल्वत्वचो गुडूच्या वा क्वाथः क्षौद्रेण संयुतः।
जयेत्रिदोषजां छर्दिं पर्पटः पित्तजां तथा ॥

अर्थ–बेलकी छालका अथवा गिलोयका काढा सहत डालके पीवे तो त्रिदोषकी छर्दिको नाश करे अथवा पित्तपापडेके काढेको पीवे तो पित्तकी छर्दि दूर हो ॥

कोलाद्यवलेह।

कोलामलकमज्जानौ मक्षिकाविट् सिता मधु।
सकृष्णातंदुलो लेहश्छर्दिमाशु व्यपोहति ॥

अर्थ–बेर और आंवला इनकी मज्जा (गुठली), मक्खीकी विष्ठा, मिश्री, सहत, पीपल, चांवलोंका धोवन इनकी बनी हुई अवलेह छर्दिको तत्काल दूर करे ॥

सुरसापान।

सुरसास्वरसैर्युक्ता त्रुटिका मर्दिता भृशम्।
वांतिं शमयति क्षिप्रं वातपित्तकफोद्भवाम् ॥

अर्थ–तुलसीके स्वरसमें छोटी इलायचीका चूर्ण डालके पीवे तो इस प्राणीकी वातपित्तकफकी वांति शमन होवे ॥

मनःशिलादियोग।

मनःशिलामागधिकोषणानां चूर्णं कपित्थाम्लरसेन युक्तम्।
लाजैः समांशैर्मधुनावलीढं छर्दिं प्रसक्तामसकृन्निहंति ॥

अर्थ--मनसील, पीपल और काली मिरच ये समान भाग ले और इनको बराबर ३ भाग खीलोंका चूर्ण ले सबको एकत्र कर कैथके और बिजौरेके रसमें सहत मिलायके चाटे तो तत्काल छर्दिको बंद कर देवे ॥

अश्वत्थवल्कलादियोग ।

अश्वत्थवल्कलं शुष्कं दग्धं निर्वापितं जले ।
तज्जलं पानमात्रेण छर्दिं जयति दुर्जयाम् ॥

अर्थ- पीपलकी छालको जलायके भस्म कर लेवे. फिर इस राखको जलमें गेर निता-रके छान लेवे. इस जलके पीते ही दुर्जय छर्दिभी नष्ट होय ॥

लाजादियोगत्रय ।

लाजाकपित्थमधुमागधिकोषणानां क्षौद्राभयात्रिकटुधान्यकजी-रकाणाम् । पथ्यामृतामरिचमाक्षिकपिप्पलीनां लेहास्त्रयः स-कलवम्यरुचिप्रशांत्य ॥

अर्थ-खील, कैथ, सहत, पीपल और काली मिरच इनका अवलेह उसी प्रकार सहत, हरड, त्रिकुटा, धनिया और जीरा इनका अवलेह तथा हरड, गिलोय, काली मिरच, सहत और पीपल इनका अवलेह ये तीन योग सर्व प्रकारकी वमन और अरुचि इनको शांत करनेवाले हैं ॥

धात्रिफलपान ।

पिष्ट्वा धात्रीफलं द्राक्षां शर्करां च पलोन्मिताम् । दत्त्वा मधु-पलं चैव कुडवं सलिलस्य च ॥ वाससा गालितं पीतं हंति छर्दिं त्रिदोषजाम् ॥

अर्थ--आंवले, दाख, मिश्री और सहत ये प्रत्येक चार२ तोले लेवे इनको ६४ तोले जलमें डालके खूब मसलके कपडेमें छानले फिर इसको पीवे तो त्रिदोषकी छर्दि दूर होवे॥

मसूरसक्तु ।

मसूरसक्तवः क्षौद्रमर्दिता दाडिमांभसा ।
पीता निवारयंत्याशु छर्दिं दोषत्रयोद्भवाम् ॥

अर्थ-मसूर और सत्तू तथा सहत इनको अनारके रसमें मिलायके देवे तो त्रिदोषकी छर्दिको निवारण करे ॥

एलाद्यचूर्ण ।

एलालवंगगजकेसरकोलमज्जालाजाप्रियंगुघनचंदनपिप्पलीनाम् । चूर्णं सितामधुयुतं मनुजो विलिह्य छर्दिं निहंति कफमारुत-पित्तजाताम् ॥

अर्थ–इलायची, लौंग, नागकेशर, बेरकी गुठली, खील, फूलप्रियंगु, नागरमोथा, चंदन और पीपल इनके चूर्णमें मिश्री और सहत मिलायके चाटे तो कफ, वादी और पित्तकी छर्दिको दूर करे ॥

पद्मकादिघृत ।

पद्मकामृतनिंबानां धान्यचंदनयोः पचेत् ।
कल्के क्वाथे च हविषः प्रस्थं छर्दिनिवारणम् ॥

अर्थ–पद्माख, गिलोय, नीमकी छाल, धनिया और चंदन इनके काढेमें अथवा कल्कमें ६४ तोले घी मिलायके सिद्ध करे तो यह घी छादको दूर करे ॥

चंदनादिपान ।

चंदनं च मृणालं च वालकं नागरं वृषम् ।
सतंदुलोदकक्षौद्रैः पातिः कल्को वमिं जयेत् ॥

अर्थ–चंदन, कमलकंद, नेत्रवाला, नागरमोथा और अडूसा इनको चावलोंके जलमें पीसके और उसमें सहत डालके पीवे तो छर्दि (उलटी) का होना दूर होवे ॥

उदीच्यजल ।

सोदीच्यगैरिकं देयं सेव्यं वा तंदुलांबुना । जातीपत्र-रसं कृष्णा मरिचं शर्करान्वितम् ॥ एतानि मधुयुक्तानि घ्नंतिछर्दिं चिरोद्भवाम् ॥

अर्थ–नेत्रवाला और गेरु इनको चावलके धोवनमें पीस सहत डालके पीवे अथवा चमेलीके पत्तोंके रसमें पीपल, मिरच इनका चूर्ण, सहत और मिश्री डालके पीवे तो बहुत दिनकी छर्दि दूर होवे ॥

चंदनपान ।

चंदने ह्यक्षमात्रे च संयोज्यामलकीरसम् ।
पिबेन्माक्षिकसंयुक्तं छर्दिस्तेन निवार्यते ॥

अर्थ-१ तोले चंदनका चूर्ण कर उसमें आंवलेका रस और सहत डालके पीवे तो यह होती हुई वमनको बंद कर देवे ॥

मुद्गकाढा ।

कषायो भृष्टमुद्गानां सलाजमधुशर्करः ।
छर्द्यतीसारदाहघ्नो ज्वरघ्नः संप्रकाशितः ॥

अर्थ--भूने हुए मूंगोंका काढा, खील और सहत तथा मिश्री मिलायके पीवे तो वमन अतिसार, दाह और ज्वर इनको दूर करे ॥

कोलमज्जा ।

कोलमज्जाकणाबर्हिपक्षभस्म सशर्करम् ।
मधुना लेहयेच्छर्दिहिक्काकोपस्य शांतये ॥

अर्थ-बेरकी गुठलीकी मिंगी, पीपल, मोरके पंखकी राख, मिश्री, सहत इन सबको एकत्र करके चाटे तो वमनका होना और हिचकी इनके कोपको शांत करे ॥

बीजपूरादिपुटपाक ।

बीजपूराम्रजंबूनां पल्लवानि जटाः पृथक् । विपचेत्पुट-
पाकेन क्षौद्रयुक्तश्च तद्रसः ॥ छर्दिं निवारयेत्सद्यः सर्व-
दोषसमुद्भवाम् ॥

अर्थ-बिजौरा, आम, जामुन इनके पत्ते अथवा इनकी जडको पुटपाक विधिसे पक्व करके इनका रस सहतयुक्त सन्निपातकी छर्दिको शीघ्र निवारण करे ॥

हरीतकीचूर्ण ।

हरीतकीनां चूर्णं तु लिह्यान्माक्षिकसंयुतम् ।
अधोभागीकृते दोषे छर्दिस्तेन निवार्यते ॥

अर्थ-हरडके चूर्णको सहतमें मिलायके चाटे तो दोष (वात कफ) के अधोभाग जानेसे वमनका होना बंद होय ॥

मृद्भृष्टलोष्टप्रभवं सुशीतं सलिलं पिबेत् ॥

अर्थ-मिट्टीके डेलेको आगमें तपायके जलमें बुझावे जब वह जल शीतल हो जावे तब पीवे तो छर्दि बंद होय ॥

जंब्वाम्रपल्लवरस।

जंब्वाम्रपल्लवोशीरवटशृंगावरोहजः। क्काथः क्षौद्रयुतः शीतः पीतो वा विनियच्छति॥ छर्दिं ज्वरमतीसारं मूर्च्छां तृष्णां च दुर्जयाम्॥

अर्थ–जामुन, आम इनके नवीन पल्लव (पत्ते), खस, वडकी कली, अथवा पल्लव इनका काढा करे जब शीतल हो जावे तब शीतल करके सहत मिलायके पीवे तो वमन, ज्वर, अतिसार, मूर्च्छा और तृषा ये दुर्जय होंय तो भी इनका नाश होय॥

हिंग्वादिपान।

हिंगुना सारिवामूलं सर्ववांतिहरं परम्।
जातीफलं वमौ शोषे जागरे विप्रयोजयेत्॥

अर्थ–सारिवाकी जडको हींगमें मिलायके पीसे इसके सेवनसे सर्व प्रकारकी वमन नाश करे अथवा जायफल वमन, शोष और जागरण इन पर उत्तम है॥

उग्रगंधादियोग।

उग्रगंधारनालेन पीता छर्दिं निवारयेत्॥

अर्थ–वचको पीसके कांजीमें मिलायके पीवे तो छर्दिको बंद करे॥

सामान्यचिकित्सा।

आमाशयोत्क्लेशभवा हि सर्वाः स्युश्छर्दयो लंघनमेव तस्मात्।
प्रकारयेन्मारुतजां विना तु संशोधनं वा कफपित्तहारि॥

अर्थ–आमाशयके उत्क्लेशित होनेसे संपूर्ण वांति उत्पन्न होती है; इस वास्ते लंघन करे. परंतु वातजन्य वांतीके विना लंघन करे अथवा वमन विरेचन द्वारा देहको शुद्ध करे तो यह कफ और पित्तका नाश करे॥

हितं न लंघनं पुरा वमीषु मारुताभिधे।
अथापि वामयेदमुं विरेचयेद्यथार्हतः॥

अर्थ–वादीकी वमन पर प्रथम लंघन नहीं करने. किंतु उस रोगीको उलटी करानेवाली और दस्त लानेवाली औषध देवे॥

जातीपत्रचूर्ण।

जातीपत्ररसं कृष्णा मरिचं शर्करान्वितम्।
एतानि मधुयुक्तानि घ्नंति छर्दिं चिरोद्भवाम्॥

अर्थ-चमेलीके पत्तोंका रस, पीपल, काली मिरच, मिश्री और सहत इनको एकत्र करके देवे तो बहुत दिनकी भी वांतिका नाश होय ॥

असाध्यच्छर्दिलक्षण ।

विट्स्वेदमूत्रांबुवहानि वायुः स्रोतांसि संरुद्ध्य यदोर्ध्वमेति । उत्पन्नदोषस्य समाचितं तं दोषं समुद्धूय नरस्य कोष्ठात् ॥ विण्मूत्रयोस्तत्समगन्धवर्णं तृट्श्वासकासार्तियुतं प्रसक्तम् । प्रच्छर्दयेद्दुष्टमिहातिवेगात्तयार्दितश्चाशु विनाशमेति ॥

अर्थ-जिस समय यह वायु पुरीष, पसीना, मूत्र और जल इनके वहनेवाली नाडीके मार्गको रोककर ऊपर आवे तब ऊपर आनेवाला दोष (मलमूत्रादि) को कोठेसे बाहर निकाल वमन करावे, उस वमनमें मलमूत्रकीसी दुर्गंध आवे तथा वर्णभी मलमूत्रके सदृश होय, प्यास, श्वास, खांसी और शूल ये होंय और यह वमन वारंवार बडे वेगसे होय है इस वमनसे पीडित मनुष्य थोडे कालमें नाशको प्राप्त हो, यहभी सन्निपातकी है ऐसे कोई आचार्य कहते हैं और अन्य आचार्य कहते हैं कि सब छर्दि प्रबल हैं परंतु ऐसी छर्दि असाध्य है ॥

आगंतुकच्छर्दिलक्षण ।

बीभत्सजा दौर्हृदजाऽमजा च याऽसात्म्यजा वा क्रिमिजा च या हि । सा पंचमी ताश्च विभावयेत्तु दोषोच्छ्रयेणैव यथोक्तमादौ ॥ शूलहृल्लासबहुला क्रिमिजा च विशेषतः । क्रिमिहृद्रोगतुल्येन लक्षणेन च लक्षिता ॥

अर्थ--बीभत्स पदार्थ कहिये मल, राध रुधिर आदि अपवित्र वस्तुके देखनेसे, गंधसे, स्वादसे, स्त्रीके गर्भ रहनेसे, आमसे, असमान भोजनसे अथवा क्रिमिरोगसे इन कारणोंसे प्रगट भई, आगंतुज पांचवीं छर्दि होय है. उसमें पूर्वोक्त लक्षणोंमेंसे जिस दोषके अधिक लक्षण मिलें उसी दोषको प्रबल जाने. क्रिमिकी छर्दिमें शूल, खाली रद्द ये विशेष होते हैं और बहुधा क्रिमि और हृदयरोग इनके लक्षण सदृश लक्षण जानने. जैसे पिछाडी कह आये हैं. "उत्क्लेदः ष्ठीवनं तोदः शूलं हृल्लासकस्तमः । अरुचिः श्यावनेत्रत्वं शोषश्च क्रिमिजे भवेत् ॥ "

असाध्यलक्षण ।

क्षीणस्य या च्छर्दिरतिप्रसक्ता सोपद्रवा शोणितपूययुक्ता । सचंद्रिकां तां प्रवदेदसाध्यां साध्यां चिकित्सेन्निरुपद्रवां च ॥

अर्थ-क्षीण पुरुषकी अथवा वारंवार एकसी होनेवाली और कासादि उपद्रवयुक्त और रुधिर राध मिली मोरचंद्रिकाके समान ऐसी छर्दि असाध्य है और जो उपद्रवरहित हो उसको साध्य समझकर उपाय करे ॥

उपद्रव ।

कासश्वासौ ज्वरो हिक्का तृष्णा वैचित्यमेव च ।
हृद्रोगस्तमकश्चैव ज्ञेयाश्छर्देरुपद्रवाः ॥

अर्थ-खांसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, प्यास, बेचेत, हृदयरोग, अंधेरा आना ये छर्दि-रोगके उपद्रव हैं ॥

सामान्यचिकित्सा ।

बीभत्सजामबीभत्सैर्हेतुभिः संहरेद्वमिम् ।
दौर्हृदोत्थां वमिं हृद्यैः कांक्षितैर्वस्तुभिर्जयेत् ॥

अर्थ-प्राणियोंको घिनानेसे अथवा दुष्ट पदार्थके देखनेसे अथवा दुर्गंधके सूंघनेसे जो वमन होती होय उसको उत्तम स्वच्छता और पवित्रता आदि कारणोंसे दूर करनी चाहिये और स्त्रियोंके जो दोर्हृदके कारण होती है उसको उत्तम हृदयको प्रिय सुंदर पदार्थोंके देने करके जीते ॥

लंघनैर्वमनैर्वापि सात्म्यैर्वासात्म्यसंभवाम् ।
कृमिहृद्रोगवच्चापि साधयेत्कृमिजां वमिम् ॥

अर्थ-जो वस्तु अप्रिय अर्थात् न रुचे उससे हुए छर्दिरोगको लंघन, वमन और अपनी प्रकृतिको रुचे ऐसे पदार्थों करके जीते तथा कृमिरोग होनेसे जो छर्दि होवे वह कृमि और हृदयरोग इनके ऊपर जो उपचार कहे हैं उन उपचारोंसे बंद करे ॥

यथादोषं च विचरेच्छस्तं विधिमनंतरम् ।
पवनघ्नी चिरोत्थासु प्रयोज्या छर्दिषु क्रिया ॥

अर्थ-कहे हुए उपचार जैसे २ दोष होवें उसी २ के अनुसार विचारपूर्वक यत्न करे और जो बहुत दिनोंका छर्दिरोग है उसपर वातनाशक उपचार करने चाहिये ॥

आम्रास्थिकाढा ।

आम्रास्थिबिल्वनिर्व्यूहः पीतः समधुशर्करः ।
निहंति च्छर्द्यतीसारं वैश्वानर इवाहुतिम् ॥

अर्थ-आमकी गुठली और बेलगिरी इनके काढेमें सहत और मिश्री डालके देवे तो छर्दि, अतिसार इनको नष्ट करे जैसे अग्नि होमी हुई आहुतिको नष्ट करे ॥

जंबूपल्लवादिकाढा ।

जंब्वाम्रपल्लवशतं क्षौद्रं दत्त्वा सुशीतलं तोयम् ।
लाजैरवचूर्ण्य पिबेच्छर्द्यतिसारे परं सिद्धम् ॥

अर्थ-जामुन और आम इन दोनोंके सौ कोमल २ पत्ते लेवे उनका काढा कर उसमें खीलोंका चूर्ण और सहत डालके पीवे तो वमन और अतिसार इन पर हितकारी होय ॥

मयूरपक्षभस्मावलेह ।

मयूरपक्षं निर्दग्ध्वा तद्भस्म मधुमिश्रितम् ।
लीढं निवारयत्याशु च्छर्दिं सोपद्रवामपि ॥

अर्थ-मोरकी पांख जलायके भस्म करे इस भस्मको सहतमें मिलायकर चाटे तो उपद्रवयुक्त भी छर्दि नष्ट होवे ॥

गोण्याद्यभस्मयोग ।

पुराणगोणिभस्मांभो मधुयुक्तं निपीय तु ।
छर्दिं छिनत्ति मनुजस्तृणान्येव हुताशनः ॥

अर्थ-पुरानी टाटकी गोन (थैली) को जलाय ले इस भस्मको जलमें मिलायके छान ले फिर सहत डालके पीवे तो छर्दिको नाश करे जैसे अग्नि तृणोंको नाश करे ॥

पटोलाद्यघृत ।

पटोलशुंठ्योः कल्काभ्यां केवलं कुलकेन वा ।
घृतप्रस्थं विपक्तव्यं कफपित्तवमिं हरेत् ॥

अर्थ-परवल और सोंठ इनके कल्कके साथ अथवा केवल परवलके कल्कके साथ ६४ तोले घीको औटावे जब कल्क जलकर केवल घी मात्र शेष रहे तब उतारके पीवे तो कफपित्तसे प्रगट हुई वांति बंद होवे ॥

दधित्थरसादिलेह ।

दाधित्थरससंयुक्तं पिप्पलीमाक्षिकं तथा ।
मुहुर्मुहुर्नरो लिह्याच्छर्दिभ्यः प्रतिमुच्यते ॥

अर्थ–कैथके रसमें सहत और पीपल डालके वारंवार चाटे तो छर्दिरोगसे छूट जावे ॥

रंभाकंदयोग ।

रंभाकंदरसो वापि मधुना छर्दिनाशकृत् ॥

अर्थ–केलेके कंदके रसमें सहत डालके पीवे तो यह छर्दिनाशक है

करंजादिलेह ।

कोमलकरंजपत्रं सलवणमम्लेन संयुक्तम् ।
यः खादति दीनवदनो च्छर्दिकफौ तस्य कुत्रेह ॥

अर्थ–करंजके कोमल २ पत्ते, बिजोरा और सैंधा निमक इनका कल्क करके खाय तो जो उलटी करते २ दीनवदन हो गया हो उसके छर्दि और कफ कदाचित् नहीं रहे ॥

करंजबीजादियोग ।

ईषद्भृष्टं करंजस्य बीजं खंडीकृतं पुनः ।
मुहुर्मुहुर्नरो भुक्त्वा छर्दिं जयति दुस्तराम् ॥

अर्थ–करंजके बीजोंका कुछ भूनके टुकडे २ करके वारंवार खाय तो दुस्तर छर्दिको निवारण करे ॥

शंखपुष्पीरसादिपान ।

शंखपुष्पीरसं टंकद्वयं समरिचं मुहुः ।
सक्षौद्रं मनुजः पीत्वा छर्दिभ्यः किल मुच्यते ॥

अर्थ–संखाहूलीका रस दो तोले सहत और काली मिरचका चूरा डालके पीवे तो छर्दिरोगसे निश्चय मुक्त होवे ॥

जीरकादिधूप ।

जीरान्वितं पट्टवस्त्रं वर्तिं कृत्वाथ धूपयेत् ।
आघ्राणाद्विलयं यांति सर्वाच्छर्द्यश्चिरोद्भवाः ॥

अर्थ–पट्टवस्त्र (पीतांबर) में जीरा बांधके बत्ती बनावे फिर इसकी धूनी देवे इस धूनीके सूंघते ही बहुत दिनकीभी सर्व प्रकारकी छर्दि नष्ट होवे ॥

वांतिहृद्रस ।

अयः शंखवली सूतः खल्वे तुल्यं विमर्दयेत् । कन्याकनकचांगेरीः

रसैर्गोलं विधाय च ॥ तप्तमृत्कर्पटैर्लिप्त्वा पुटितो वांतिहृद्रसः । द्विवल्लः कृमिरोगोऽपि साजमोदः सवेल्लकः ॥ वांतिहारेण मुनिना प्रोक्तोऽयं मधुना युतः । पिप्पलक्षारपानीयं पाययेद्वांतिहृद्भिषक् ॥

अर्थ-लोहचूर्ण, शंखका चूर्ण, गंधक, पारा, ये सब समान भाग लेवे खरलमें डाल घीगुवारके रसमें धतूरा और चूका इनके रसमें पृथक् २ खरल करके गोला बनावे उस गोलेके चारों तरफ सात कपडामिट्टी करके गजपुटमें रखके फूंक देवे तो यह वांतिहाररस बने इसमेंसे ४ रत्ती रस अजमोदा और वायविडंग इनके साथ कृमिरोगमें और सहतके साथ वांति पर देवे तथा पीपल वृक्षके खारका पानी ऊपरसे पिलावे तो वांतिको नष्ट करे यह रस वांतिहार नामक ऋषिने कहा है ॥

जातीरसपान ।

जात्या रसः कपित्थस्य पिप्पलीमरिचान्वितः ।
क्षौद्रेण युक्तः शमयेल्लेहोऽयं छर्दिमुल्बणाम् ॥

अर्थ-चमेलीका रस, कैथका रस, पीपल और काली मिरच इनका अवलेह भीतर सहत डालके देवे तो घोर उग्रवांतिको नाश करे ॥

यष्ट्यादिपान ।

यष्ट्याह्वा चंदनोपेतं सम्यक् क्षीरेण पेषितम् ।
तेनैवालोड्य पातव्यं रुधिरच्छर्दिनाशनम् ॥

अर्थ-मुलहटी और चंदन इन दोनोंको दूधमें पीसे और दूधमेंही मिलायके पी जावे तो रुधिरकी उलटी होना बंद होवे ॥

गुडूच्यादिहिम ।

गुडूच्यारचितं हंति हिमं मधुसमान्वितम् ।
दुर्निवारामपि च्छर्दिं त्रिदोषजनितां बलात् ॥

अर्थ-गिलोयका हिम करके उसमें सहत डालके देवे तो दुर्निवार वांतिका नाश होवे॥

पारदादिचूर्ण ।

रसबलिघनसारकोलमज्जामरकुसुमांबुधराप्रियंगुलाजाः । मलयजमगधात्वगेलपत्रं दलितमिदं परिभाव्य चंदनाद्भिः ॥ मधुमरिचयुतं रजोस्य माषं जयति वमिं प्रबलां विलिह्य मर्त्यः ॥

अर्थ–पारा, गंधक, कपूर, बेरकी, गुठली, लौंग, नागरमोथा, फूलप्रियंगु, खील, काली अगर, पीपल, दालचीनी, इलायची और तमालपत्र इनके चूर्णको चंदनके काढेमें भावना देकर फिर सहत और काली मिरचोंका चूर्ण डालके १ मासा नित्य सेवन करे तो घोर प्रबल वमनका नाश होवे ॥

जीरकादिरस ।

अजाजीधान्यपथ्याभिः सक्षौद्रैः सकटुत्रिकैः ।
एतैः सार्धं सूतभस्म सद्यो वांतिं विनाशयेत् ॥

अर्थ–जीरा, धनिया, हरड और त्रिकुटा, (सोंठ, मिरच, पीपल), इनका चूर्ण और सहत इनके साथ पारेकी भस्म सेवन करे तो तत्काल रद्द होनेको बंद कर देवे ॥

वमनामृतयोग ।

गंधकः कमलाक्षश्च यष्टीमधु शिलाजतु । रुद्राक्षष्टंकणश्चैव सारंगस्य च शृंगकम् ॥ चंदनं च तवक्षीरी गोरोचनमिदं समम् । बिल्वमूलकषायेण मर्दयेद्याममात्रकम् ॥ मात्रां चैव प्रकुर्वीत वल्लस्यैव प्रमाणतः । नानाविधानुपानेन च्छर्दिं हंति त्रिदोषजाम् ॥ वमनामृतयोगोऽयं कमलाकरभाषितः ॥

अर्थ–गंधक, कमलाक्ष, मुलहटी, शिलाजीत, रुद्राक्ष, सुहागा, हिरनका सींग, चंदन, तवाखीर और गोरोचन ये सब समान भाग लेके चूर्ण करे फिर बेलकी जडके काढेमें एक प्रहर खरल करे पश्चात् २ रत्तीकी मात्रा अनेक प्रकारके अनुपानोंके साथ देवे तो त्रिदोषकी छर्दि नष्ट होय. इसको वमनामृत योग कहते हैं. यह योग कमलाकर नामक आचार्यने कहा है ॥

छर्दिपथ्य ।

विरेचनं छर्दनलंघनानि स्नानं जपो लाजकृतश्च मंडः। पुरातना शालिकषष्टिमुद्गा कलायगोधूमयवा मधूनि ॥ शशाहिभुक्तित्तिरिलावकाद्या मृगाद्विजा जांगलसंज्ञिताश्च । मनोज्ञनानारसगंधरूपा रसाश्च यूषा अपि खांडवाश्च ॥ गवां जलं कांबलिकाः सुरा च वेत्राग्रकुस्तुंबरिनारिकेरम् । जंबीरधात्रीसहकारकोलद्राक्षाकपित्थानि पचेलिमानि ॥ हरीतकीदाडिमबीजपूरं

जातीफलं बालकनिंबवासा । शिताशताह्वाकरिकेशराणि भक्ष्या मनःप्रीतिकरा हिताश्च ॥ भुक्तस्य वक्रे शिशिरांबुसेकः कस्तूरिकाचंदनमिंदुपादाः । मनोज्ञगंधान्यनुलेपनानि पानानि पुष्पाणि फलानि चापि ॥ रूपाणि शब्दाश्च रसाश्च गंधाः स्पर्शाश्च योज्याः स्वमनोनुकूलाः । दाहश्च नाभेस्त्रिकपार्श्वपृष्ठे शस्तं हि पथ्यं वमनातुरस्य ॥

अर्थ-विरेचन (जुलाब), वमन, लंघन, स्नान, जप, खीलोंका मंड तथा पुराने सांठी चावल और लाल चावल, मूंग, मटर, गेहूँ, जौ ये सब पुराने, सहत, शशा, मोर, तीतर, लवा इत्यादि, जंगली जीवेंमें मृग और पक्षी इनका मांस तथा उत्तम २ अनेक प्रकारके रस तथा सुगंधित रस, यूष रागखांडव, गोमूत्र और कांबलिक (मूल और फलकी पेज बनायके उसमें समान तिलके फूलेंकी खटाई डाले वह), मद्य, बाँसकी कोंपल, धनिया, नारियल, जंभीरी, आमले, आम, बेर, दाख, पका हुआ कैथ, हरड, अनार, बिजौरा, जायफल, नेत्रवाला, नीम, अडूसा, खांड, सोंफ, नागकेशर और मनको प्रीति करता पदार्थ तथा हितकारी पदार्थ सेवन करे. भोजन करनेके उपरांत मुखमें शीतल जलका भरना, कस्तूरी, चंदन, चांदनी, उत्तम अतर आदिकी सुगंध तथा मनको अनुलोमन करता पान और फल फूल, मनको प्रिय ऐसे शब्द, स्पर्श, रूप; रस, गंध ये देवे तथा नाभी, त्रिकस्थान पसवाडे और पीठमें दाहकर्म करना ये संपूर्ण वस्तु वांतिरोगवालेको पथ्य कही हैं ॥

अपथ्य ।

नस्यं बस्तिस्वेदनं स्नेहपानं रक्तस्रावं दंतकाष्ठं द्रवान्नम् । बीभत्सेच्छाभीतिमुद्वेगमुष्णं स्निग्धासात्म्यं हृद्यवैरोचकान्नम् ॥ रम्भा (लंबा) बिंबीकोशवत्यौ मधूकं चित्रामलीसर्षपदेवदाली । व्यायामं वा सात्म्यदुष्टान्नपानं छर्द्यां सद्यो वर्जयेदप्रमत्तः ॥

अर्थ-नस्य, बस्तिकर्म, पसीने निकालना, स्नेहपान, रक्तस्राव, दांतन करना, पतला अन्न, बीभत्स पदार्थको देखना, भय, उद्वेग, गरम, स्निग्ध, असात्म्य, अप्रिय, अरुचिकारी ऐसे अन्न, केला, घीया कंदूरी, तोरई, मुलहटी वा महुआ, मजीठ, इलायची, सरसों, बंदाल, दंड कसरत, अहित तथा दुष्ट अन्न जलका सेवन इन सबको छर्दिरोगमें प्रमादरहित होके त्याग कर देवें ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे छर्दिरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

तृष्णाकर्मविपाकः ।

पथि चाध्वपरिश्रांतं ब्राह्मणं गामथापि वा ।
न पाययेज्जलं यस्तु स तृष्णामूर्च्छितो भवेत् ॥

अर्थ-जो प्राणी ब्राह्मण अथवा गौको मार्ग (रास्ते) में थककर तृषासे पीडित-को जल नहीं पिलावे उसके तृष्णारोग उत्पन्न होता है ॥

शांति ।

पानीयं पायसं भुक्त्वा शर्करा घृतसंयुता ।
इदमावश्यतो देयं मूर्च्छातृष्णोपशांतये ॥

अर्थ-जल, दूध अथवा घी और खांड ये पदार्थ ब्राह्मणको अवश्य देवे और आपभी भक्षण करे तो तृष्णाजनित मूर्च्छाका नाश होय ॥

तृष्णानिदान ।

भयश्रमाभ्यां बलसंक्षयाद्वाप्यूर्ध्वं चितं पित्तविवर्धनैश्च । पित्तं
सवातं कुपितं नराणां तालुप्रपन्नं जनयेत्पिपासाम् ॥

अर्थ-भयसे, श्रमसे, बलके क्षयसे और पित्तके बढानेवाले क्रोध उपवासादिकोंसे अपने स्थानमें संचित हुआ जो पित्त और वात ये कुपित होकर ऊपर तालुए (पिपासास्थान) में जाय तृष्णा (प्यास) को उत्पन्न करे. इस जगह तालुका तो उपलक्षणमात्र है तालुके कहनेसे क्लोमस्थान (हृदयमें जो प्यासका स्थान है उसका भी ग्रहण है क्यों कि वह भी प्यासका स्थान है) सो चरकमें लिखा है ॥

तृष्णार्दितका स्वरूप ।

सततं यः पिबेत्तोयं न तृप्तिमधिगच्छति ।
पुनः कांक्षति तोयं च तं तृष्णार्दितमादिशेत् ॥

अर्थ-जो आदमी वारंवार जल पीनेसे तृप्त नहीं होता और वारंवार जल पीनेकी इच्छा करता है उसको तृषारोगी कहते हैं ॥

तृष्णासंप्राप्ति ।

स्रोतःस्वपांवाहिषु दूषितेषु दोषैश्च तृष्णा भवतीह जंतोः । ति-
स्रः स्मृतास्ताः क्षतजा चतुर्थी क्षयात्तथा ह्यामसमुद्भवा च ॥
भक्तोद्भवा सप्तमिकेति तासां निबोध लिंगान्यनुपूर्वशश्च ॥

अर्थ–जलके वहनेवाली नसके दूषित होनेसे दोष (अन्न, कफ और आम) इनसे तृष्णा रोग होय है सो तीन है और चौथी क्षतज तृष्णा जो व्रणवाले पुरुषके होती है, पांचवीं क्षयसे होती है, छठी आमसे होय है, सातवीं अन्नसे होय है, उन्होंके लक्षण क्रमसे कहता हूं, इनमें पहिली चार तृष्णा सुखसाध्य हैं और बाकी-की तीन कष्टसाध्य हैं. शंका–क्योंजी इस श्लोकमें स्रोतःसु यह बहुवचन क्यों धरा ये विरुद्ध है क्योंकि सुश्रुतमें तो जलके वहनेवाली दो ही नाडी मानी हैं. उत्तर–अन्न कफ, आमको दुष्ट करनेसे तथा दुष्ट रोगोंके सम्बन्ध होनेसे अन्न, आम, कफको दोषत्व ग्रहण है यह गयदासका मत है अथवा दोषके कहनेसे वात, पित्त, कफका ही ग्रहण करना चाहिये ॥

वातजतृष्णानिदान ।

क्षामास्यता मारुतसंभवायां तोदस्तथा शंखशिरःसु चापि ।
स्रोतोनिरोधो विरसं च वक्त्रं शीताभिरद्भिश्च विवृद्धिमेति ॥
ताल्वोष्ठकंठस्य च तोददाहसंतापमोहभ्रमविप्रलापाः । पूर्वाणि
रूपाणि भवंति तासामुत्पत्तिकालेषु विशेषतो हि ॥

अर्थ–वातकी तृषा (प्यास) से मुख उतर जाय अथवा दीन होय, कनपटी और मस्तक इन ठिकाने नोचनेके समान पीडा होय, रस और जल वहनेवाली नाडियों-का मार्ग रुक जाय, मुखसे स्वाद जाता रहे और शीतल जलके पीनेसे प्यास बढे ये अनुपशयके लक्षण हैं चकारसे निद्राका नाश होय और तालु, होंठ और कंठ इनमें शूल व दाह और संताप, मोह, भ्रम और प्रलाप इत्यादि वाततृष्णाका लक्षण समझना ॥

वाततृष्णाजयप्रकार ।

वातघ्नमन्नपानमिष्टं लघु शीतं च वाततृष्णायाम् ।
स्याज्जीवनीयसिद्धं क्षीरघृतं वातजे तर्षे ॥

अर्थ–वातनाशक, हलके और शीतल ऐसे अन्न, पान और जीवनीय गण करके सिद्ध करे हुए दूध और घी ये वाततृष्णा पर उत्तम हैं ॥

दूसरा प्रकार ।

वातोद्भवायां तृष्णायां पानान्नं वातमुद्धतम् ।
स्वर्णरूप्यैरग्नितप्तैर्लोष्टैः सोष्टाजलं तथा ॥

अर्थ–वादीकी तृष्णा पर वातनाशक जल, अन्न अथवा सुवर्णके लोष्ट (मिट्टीका

डेला) अथवा चांदीको अग्निपर गरम करे हुएको जलमें बुझायके पिलावे तो वादीकी तृषा दूर होवे ॥

तेल ।

देयं सुगंधि तैलं शिरसि च गात्रेषु सर्वेषु ॥

अर्थ–मस्तक पर और संपूर्ण अंगोंमें सुगंधित तेलकी मालिस करे तो वादीकी तृष्णा दूर हो ॥

जल ।

सुवर्णरौप्यादिभिरग्नितप्तैर्लोष्टैः कृतं वा सिकतोत्करैर्वा ।
जलं सुखोष्णं शमयेत्तु तृष्णां सशर्करं क्षौद्रयुतं जलं वा ॥

अर्थ–सुवर्ण, रूपा, मिट्टीका डेला और (वालु) रेत इनमेंसे किसी एकको आगमें तपायके जलमें बुझाय देवे. इस जलको कुछ गरम २ पीवे अथवा जलमें सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो तृषा शांत होय ॥

पित्ततृष्णानिदान ।

मूर्च्छान्नविद्वेषविलापदाहरक्तेक्षणत्वं प्रततश्च शोषः ।
शीताभिनंदा मुखतिक्तता च पित्तात्मिकायां परिदूयनं च ॥

अर्थ–पित्तकी तृषामें मूर्च्छा, अन्नमें अरुचि, बडबड, दाह, नेत्रोंमें लाली, अत्यंत शोष, शीत पदार्थकी इच्छा, मुखमें कडुवाट और सन्ताप ये लक्षण होते हैं ॥

पित्ततृष्णाचिकित्सा ।

पित्तजायां सितायुक्तः पक्कोदुंबरजो रसः ॥

अर्थ–यदि पित्तजन्य तृषा होवे तो पके हुए गूलरका रस मिश्री मिलायके पीवे तो शांति हो ॥

स्वादु तिक्तं द्रवं शीतं पित्ततृष्णापहं परम् ।
आतपात्संश्रृतं पथ्यमुदकं लाजसक्तुभिः ॥

अर्थ–मिष्ट, कडुए, पतले और शीतल ऐसी जो वस्तु हैं वो सब तृष्णा नाशक हैं तथा धूपमें तपे हुए जलमें खीलोंका चूरा मिलायके पीवे तो हितकारी होय ॥

तंदुलोदकपान ।

जीर्णे भुक्ते पिबेद्वापि सक्षौद्रं तंदुलोदकम् ॥

अर्थ–भोजन पचनेके पश्चात् तृषा लगे तो चावलोंके धोवनमें सहत डालके पीवे ॥

मधुकादिफांट।

मधूकपुष्पं गंभारी चंदनोशीरधान्यकैः। द्राक्षया च कृतः फांटः शीतः शर्करया पुनः॥ तृष्णापित्तहरः प्रोक्तो दाहमूर्छा-भ्रमान् जयेत॥

अर्थ-महुएके फूल, कंभारी, चंदन, खस, धनिया और दाख इनके फांटको शीतल करके उसमें मिश्री मिलायके पीवे तो तृषा, पित्त, दाह, मूर्च्छा, भ्रम इनको नष्ट करे॥

कफतृष्णानिदान।

वाष्पावरोधात्कफसंवृतेऽग्नौ तृष्णाबलांशेन भवेत्तथातु।
निद्रा गुरुत्वं मधुरास्यता च तृष्णार्दितः शुष्यति चातिमात्रम्॥

अर्थ-अपने कारणसे कुपित कफ करके जठराग्नि आच्छादित होय, तब अग्निकी गरमी अधोगत जलके वहनेवाली नाडियोंको सुखाय कफकी तृषाको प्रगट करे केवल कफसे तृष्णाको प्रगट होना असंभव है केवल कफ बढे भयेका द्रवीभूत धर्म पतला होनेसे प्यासकर्तृत्व असंभव है और वात पित्तको तृषा करनेवाले होनेसे होय है सो ग्रंथांतरमें लिखा भी है. इसीसे चरकाचार्यने कफकी तृष्णा नहीं कही, सुश्रुतने चिकित्सामें भेद होनेसे कही है और हारीतने भी सपित्त कफकी तृषा मानी है, केवल कफकी नहीं मानी, इस तृषामें निद्रा, भारीपना, मुखमें मिठास यह लक्षण होते हैं इस तृषासे पीडित पुरुष अत्यन्त सूख जाय है॥

कफतृष्णासामान्यचिकित्सा।

तिक्तं द्रवं कदुष्णं च कफतृष्णानिवारणम्।
अन्नपानौषधं सर्वं प्रदद्यात्कफतृड्युते॥

अर्थ-कडुए, पतले किंचित् उष्ण, कफ और तृषानिवारक ऐसे अन्नपान और औषध कफकी तृष्णापर देवे॥

बिल्वादिकाढा।

बिल्वाढकीधातकिपंचकोलदर्भेषु सिद्धं कफजां निहंति।
हितं भवेच्छर्दनमेव चात्र तप्तेन निंबप्रसवोदकेन॥

अर्थ-बेलगिरी, अरहर, धायके फूल, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, डाभकी जड इनका काढा करके देवे और नीमके काढेका वमन देवे तो कफकी वमन नष्ट होय॥

कफतृष्णा प्रयोग ।

यथोक्तं कफतृष्णायां छर्द्यां तथैव कार्यं स्यात् । स्तंभारुच्य-विपाकालस्यच्छर्दिषु कफानुगां तृष्णाम् ॥ ज्ञात्वा मधुदधित-र्पणलवणेन जलैर्वमनमइलक्ष्णम् । दाडिममम्लफलं वा न्यास-कषायमवलेहम्॥पयोऽथ वा प्रदद्याद्रजनीमधुशर्करायुक्तम् ॥

अर्थ–जैसी कफकी छर्दिमें औषधि कही है वही कफ तृष्णा पर देवे तथा स्तंभ, अरुचि, अजीर्ण, आलस्य और छर्दि इनमें जो तृषा होती है वह कफसंबंधी होती है इस वास्ते सहत और दही ऐसे तृप्ति करती वस्तु देवे तथा निमक और जल इनसे वमन करावे और अनार, कोकम अथवा और जो कषेले पदार्थ हैं उनको चटावे अथवा हलदी और मिश्री डालके दूध पिलावे ॥

क्षतजन्यतृषानिदान ।

क्षतस्य रुक् शोणितनिर्गमाभ्यां तृष्णा चतुर्थी क्षतजा मता तु ॥

अर्थ–शस्त्रादिकके लगनेसे घाव होय तब उस पुरुषके पीडा और रुधिरका स्राव होनेसे जो तृष्णा होय यह चौथी क्षतज तृष्णा जाननी ॥

क्षतजतृष्णाचिकित्सा ।

क्षतोद्भवां रुग्विनिवारणेन जयेद्रसानामसृजश्च पानैः ॥

अर्थ–घावके कारण जो प्यास लगती है उसको घाव दूर करनेसे दूर करे तथा औष-धीय रसोंके पत्रों करके खूनको रोके ॥

क्षयजतृष्णानिदान ।

रसक्षयाद्या क्षयसंभवा सा तथाभिभूतस्तु निशादिनेषु । पेपी-यतेंभः स सुखं न याति तां सन्निपातादिति केचिदाहुः ॥ रस-क्षयोक्तानि च लक्षणानि तस्यामशेषेण भिषग्व्यवस्येत् ॥

अर्थ–रसक्षयसे जो तृष्णा होय उसमें जो लक्षण होय हैं सो सब क्षयजतृष्णामें होते हैं, तिससे पीडित पुरुष रात्रि दिन वारंवार पानी पीवे, परंतु संतोष नहीं होय. कोई आचारी इसको सन्निपातसे प्रगट कहते हैं. रसक्षयके जो लक्षण कहे वे सब होते हैं सो वैद्योंको जानने चाहिये (रसक्षयलक्षण सुश्रुतमें कहे हैं) सो इस प्रकार रसक्षय होनेसे हृदयमें पीडा, कंप, शोष, बधिरता (बहरापना) और प्यास होय है ॥

क्षयजतृष्णा।

क्षयोत्थितां क्षीरजलं निहन्यान्मांसोदकं वा मधुकोदकं वा ॥

अर्थ-क्षयजन्य तृषाको उसको दूध और जलके काढेसे अथवा मांसरसों करके अथवा मुलहटीके काढेसे शांत करे ॥

आमजतृष्णानिदान।

त्रिदोषलिंगाऽमसमुद्भवा तु हृच्छूलनिष्ठीवनसादकर्त्री ॥

अर्थ-आमज कहिये अजीर्णसे जो तृष्णा होय इसमें तीनों दोषोंके लक्षण होते हैं सो सुश्रुतमें लिखाभी है और हृदयमें शूल, लारका गिरना, ग्लानि ये सब होय हैं ॥

आमजतृष्णा।

आमोद्भवां बिल्ववचायुतानां जयेत्कषायैरपि दीपनानाम्।
उल्लेखनैर्गुर्वशनप्रजातां जयेत्क्षतोत्थां तु विना पिपासाम् ॥

अर्थ-आमांशसे जो तृषा होती है वह बेलगिरी और वच इन करके युक्त जो दीपन काढे उनसे जीते तथा भारी पदार्थोंके खानेसे जो तृषा होवे उसको लेखन पदार्थ देकर जीते परंतु वह क्षतजन्य न होवे ॥

अन्नजातृष्णानिदान।

स्निग्धं तथाम्लं लवणं च भुक्तं गुर्वन्नमेवाशु तृषां करोति ॥

अर्थ--चिकना, खट्टा, खारा (चकारसे कडुआ, कषेला आदि जानना) ऐसे भोजनसे तथा मात्राधिक और भारी ऐसा अन्न खानेसे अवश्यही शीघ्र प्यासको प्रगट करे. दृढबल आचारीने पांचही प्रकारकी तृष्णा कही हैं. वातकी, पित्तकी, क्षयकी, आमकी, उपसर्गकी, तहां कफकी आमकी तृषाके अंतर्गत कही है और क्षतजा वातकी तृषाके अंतगर्त जाननी और अन्नजाभी वातकी तृषाके अंतर्गत कही है क्योंकि भोजनसे वातका कोप होय है * शंका-क्योंजी सुश्रुतने मद्यके प्रकरणमें मद्यकी तृष्णा कही है फिर माधवाचार्यने सातही तृष्णा कैसे कही हैं. * उत्तर--दृढबलाचारीके मतसे मद्यकी तृषाको वातकी तृषाके अन्तर्गत होनेसे माधवाचार्यने सातही कही हैं ॥

अन्नजाचिकित्सा।

स्निग्धान्ने भुक्ते या तृष्णा स्यात्तां गुडांबुना शमयेत्।
अतिरूक्षकदुर्बलानां तृषां शमयेन्नृणामिहांबुपयः ॥

अर्थ–स्निग्ध (चिकने) अन्नके सेवनसे जो तृषा होय उसको गुडके पानीसे शांत करे और अतिरूक्ष तथा दुर्बल मनुष्यकी तृषा नेत्रवालेके काढेसे दूर करे ॥

उपद्रव व असाध्यलक्षण तृष्णा ।

दीनस्वरः प्रताम्यन्दीनाननशुष्कहृदयगलतालुः । भवति खलु सोपसर्गा तृष्णा सा शोषिणी कष्टा ॥ ज्वरमोहक्षयकासश्वासाद्युपसृष्टदेहानाम् । सर्वास्त्वतिप्रसक्ता रोगकृशानां वमिप्रसक्तानाम् ॥ घोरोपद्रवयुक्तास्तृष्णा मरणाय विज्ञेयाः ॥

अर्थ–दीनस्वर, मोह, मनमें ग्लानि, होय, मुख दीन हो जाय, हृदय, गला और तालु सूख जाय यह तृष्णाके उपद्रवसे होय है. यह मनुष्यको सुखाय डाले और व्याधिसे शरीर कृश होनेसे यह कष्टसाध्य हो जाय है. वे उपद्रव ये हैं ज्वर, मोह, क्षय, खांसी, श्वास, आदिशब्दसे अतिसारादिकोंका ग्रहण है. ये रोग जिसके होंय उसके तृष्णा कष्टसाध्य जाननी. वातजादि सब प्रकारकी तृष्णा अत्यन्त बढी हुई अथवा रोगसे कृश भया ऐसे पुरुषके जो तृष्णा है सो अथवा छर्दिसे प्रगट भई जो तृषा और जो भयंकर उपद्रव करके युक्त ऐसी तृष्णा मारनेका कारण होय है ॥

जलपाननियम ।

सात्म्यान्नपानभैषज्यैस्तृष्णार्तस्य जयेत्तृषाम् । तस्यां जितायामन्योऽपि व्याधिः शक्यश्चिकित्सितुम् ॥ तृषितो मोहमायाति मोहात्प्राणान्विमुंचति । तस्मात्सर्वास्ववस्थासु न क्वचिद्वारि वार्यते ॥ अन्नेनापि विना जंतुः प्राणान्संधारयेत्क्वचित् । तोयाभावे पिपासार्तः क्षणात्प्राणैर्विमुच्यते ॥

अर्थ–अपनी प्रकृतिको जो रुचे ऐसे अन्न, पान और औषध इनसे तृषार्त्त रोगीकी तृषा जीते. यह तृषाके जीतनेसे और दूसरी व्याधि सहजमें जीती जाती है. अन्यथा तृषावाला मनुष्य मोहको प्राप्त होताहै और मोहसे प्राणोंको छाड देता है इसी वास्ते किसी अवस्थामें जलका देना बंद न करे विना अन्नके एक घडी जी सक्ता है परंतु जलके विना यह प्राणी एक क्षणमात्रभी नहीं जीवे इस वास्ते प्यासेको जल पिलाना ही चाहिये ॥

गंडूष ।

पटोली मूलिका सार्द्रा तुवरी मधुयष्टिका । क्रमुकं चिक्कणं

कंदश्छल्ली च खदिरान्विता ॥ कटुकीखराजोत्थक्काथोऽमी-
षां सुशीतलः । गंडूषधारणाद्धंति गलशोषं सुदारुणम् ॥

अर्थ--परवल, हरेंकी जड, अरहर, मुलहठी चिकनी सुपारी, तृषा बंद करनेवाला कंद, खैर तथा कुटकी, गठोना इनका काढा करके शीतल करे इसको मुखमें रखे तो दारुण गलशोष (गलेका सूखना) इनको नष्ट करे ॥

गंडूष ।

श्रीखंडं पद्मकं मुस्तधान्यकं निंबवल्कलम् । कूष्मांडं खदिरो
दूर्वामूलं कितवराजकम् ॥ अष्टावशेषितोऽमीषां क्काथः शीतल-
तां गतः गंडूषकरणाद्धंति रोगिणः शोकमुल्बणम् ॥

अर्थ--चंदन, पद्माख, नागरमोथा, धनिया, नीमकी छाल, पेठा, खैर, दूबकी जड, गठोना, इनका अष्टावशेष काढा करके शीतल कर लेवे. फिर इस काढेके कुले करे तो रोगीके बढे हुए शोषका नाश करे ॥

लेप ।

जलं मलयजं रक्तचंदनं पद्मकेसरम् ।
उशीरेणांचितैर्लेपो मस्तके तृड्‌निवारणः ॥

अर्थ--नेत्रवाला, चंदन, लाल चंदन, कमलकी केशर और खस इनको जलमें पीस मस्तक पर लेप करे तो तृषाको दूर करे ॥

चूर्ण ।

कणा जीरं सिता नागकेसरं दाडिमीफलम् ।
मधुना भक्षणादेषां रोगो गच्छति रोगिणः ॥

अर्थ--पीपल, जीरा, मिश्री, नागकेशर और अनारदाना इनका चूर्ण करके सहतमें मिलायके चाटे तो तृषा जाती रहे ॥

कुष्ठादिचूर्ण ।

कुष्ठं कासोद्भवं मूलं मधुकं पिष्टमंजसा ।
भक्षितं तं द्रुतं हंति पिपासां चिरकालजाम् ॥

अर्थ--कूठ, कसौंदीकी जड और मुलहठी इनको जलमें पीसके देय तो बहुत दिनोंकी भी तृषा शीघ्र शांत होय ॥

चूर्ण ।

कुशः कुष्ठजतुर्यष्टी लाजातप्तेन वारिणा ।
पीतश्चूर्णस्तृषां हंति शोकसंतापसंभवाम् ॥

अर्थ–कुशा, कूठ, लाख, मुलहठी और खील इनके चूर्णको गरम जलके साथ पीवे तो शोक और संतापके कारणसे प्रगट तृषाको शांत करे ॥

वटाद्यवलेह ।

वटबाला शिवा कृष्णा मधुकं मधुना सह ।
अवलेहः कृतोऽमीषां तृषारोगो विनश्यति ॥

अर्थ--वडकी कोंपल, नेत्रवाला, हरड, पीपल और मुलहटी इनका अवलेह बनाय उसमें सहत मिलायके सेवन करे तो तृषारोग नष्ट होय ॥

दूसरा प्रकार ।

वटशृंगा सिता लोध्रं दाडिमं मधुकं मधु ।
पिबेत्तंदुलतोयेन तृष्णाच्छर्दिनिवारणम् ॥

अर्थ--वडकी कोंपल, मिश्री, लोध, अनारदाना और मुलहठी इनका काढा कर शीतल होने पर सहत डालके पीवे और चावलोंके धोवनमें मिलायके पिलावे तो प्यास और वमनका होना ये बंद होवे ॥

अवलेह ।

अर्धावर्तितपानीयं सलाजैः शीतलं मधु ।
तवराजयुता द्राक्षा मुखे क्षिप्ता तृषां जयेत् ॥

अर्थ–जलमें खीलोंको डालके औटावे जब आधा जल रहे तब उतारके शीतल करे फिर सहत मिलायके देवे अथवा दाख और मिश्री मिलायके गोली बनाय ले इसको मुखमें रखे तो तृषानाश होवे ॥

ताम्रादिरस ।

ताम्रं चक्रिकया बद्धं सूतं तालं सतुत्थकम् ।
वटांकुररसैर्मर्द्यं तृष्णानुलवमात्रया ॥

अर्थ–तामेकी भस्म, पारा, हरताल और लीलाथोथा इनको वडकी कोंपलके रसमें खरल कर टिकिया बनायके संपुटमें धरके फूंक देवे इसमेंसे लवमात्रकी मात्रा देय तो प्यास दूर होय ॥

श्रीखंडयोग ।

अर्धाढकं रुचिरपर्युषितस्य दध्नः खंडस्य षोडश पलानि शशिप्रभस्य । सर्पिः पलं मधु पलं मरिचं द्विकर्षं शुंठ्या पलार्धमपि चार्धपलं तृटेश्च ॥ श्लक्ष्णे पटे ललनया मृदुपाणिघृष्टे कर्पूरधूलिसुरभीकृतचारुभांडे । एषा वृकोदरकृता सुरसा रसाला सुस्वादिता भगवता मधुसूदनेन ॥

अर्थ–पहले दिनका जमा हुआ गाढा २ सुंदर चिकना दही दो सेर लेय बहुत सफेद बूरा १ सेर, घी ४ तोले, सहत ४ तोले, काली मिरच २ तोले, सोंठ २ तोले तथा छोटी इलायचीके दाने २ तोले इतने पदार्थोंको उस दहीमें मिलायके पतले कपडेमें डाल और कपूरके चूर्ण करके सुगंधित ऐसे पात्रमें स्त्री अपने कोमल हाथोंसे उसे छाने, इसको श्रीखंड कहते हैं. इसके सेवन करनेसे मनुष्योंकी तृषा शांत होय इसको कोई रसाला अथवा सिखरन भी कहते हैं इस प्रकार श्रीखंड प्रथम भीमसेनने बनाई उसको श्रीकृष्णने बडे स्वादपूर्वक भोग लगाई ॥

आमलक्यादिगुटिका तृष्णादिघ्न ।

आमलं कमलं कुष्ठं लाजाश्च वटरोहकम् । एतच्चूर्णस्य मधुना गुटिकां धारयेन्मुखे ॥ तृष्णां प्रवृद्धां हंत्येषा मुखशोषं च दारुणम् ॥

अर्थ–आंवले, कमल, कूठ, खील, वडकी कोंपल इन पांच औषधोंका चूर्ण करके सहतमें मिलायके गोली बनावे. इसको मुखमें रखे तो बहुत प्यासका लगना तथा मुखका अत्यन्त सूखना इन दोनोंको दूर करे ॥

वटी ।

उत्पलं मधु लाजाश्च वटरोहो गदस्तथा ।
एतैः कृता वटी नित्यं तृष्णां नाशयति क्षणात् ॥

अर्थ–नीला कमल, सहत, खील, वडके अंकुर और कूठ इनको कूट पीसके गोली बनावे. इस गोलीको मुखमें रखे तो क्षणमात्रमें तृषाका नाश करे ॥

गुटी ।

खर्जूरमृद्वीकमधुः सखंडं पृथक् पलं मागधिका त्रिगंधे । तथार्धबिल्वे मधुना गुटीयं तृण्मोहपित्तास्रजयेति शस्ता ॥

अर्थ–खजूर, दाख, मुलहठी, मिश्री ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. पीपल, दालचीनी, पत्रज और इलायची ये दो २ पल लेवे इन सबको कूट पीस सहतसे गोली बनावे यह तृषा, मोह और रक्तपित्त इनको नाश करे ॥

काश्मर्यादिकाढा ।

काश्मर्यशर्करायुक्तं चंदनोशीरपद्मकम् ।
द्राक्षामधुकसंयुक्तं पित्ततृष्णो जलं पिबेत् ॥

अर्थ–कंभारीके फल, मिश्री, चंदन, खस, पद्माख, मुनक्का और मुलहटी इनका काढा पित्तजन्य तृषावालेको हितकारी है ॥

जीरकादिचूर्ण ।

सजीरधन्याद्रकशृंगवेरसौवर्चलान्यर्धपरिप्लुतानि ।
मद्यानि हृद्यानि च गंधवंति पीतानि सद्यः शमयंति तृष्णाम् ॥

अर्थ–जीरा, धनिया, अदरख, बांस, संचरनिमक इनके चूर्णको आधा भीगे इतना मद्य (दारु) डालकर उत्तम सुगंध युक्त पीनेसे तृषाकी शांति होवे ॥

आम्रादिकाढा ।

आम्रजंबूकषायं वा पिबेन्माक्षिकसंयुतम् ।
छर्दिं सर्वां प्रणुदति तृष्णां चैवापकर्षति ॥

अर्थ–आम और जामुनकी छालका काढा सहत मिलायके पीनेसे सब प्रकार वांति तृषा इनको शमन करे ॥

द्राक्षादिनस्य ।

गोस्तनीक्षुरसक्षीरयष्टीमधुमधूत्पलैः ।
नियतं नस्यतो पीतैस्तृष्णा शाम्यति तत्क्षणात् ॥

अर्थ–काली दाख, ईख, दूध, मुलहठी, सहत और कमल इनका नस्य लेनेसे नियमपूर्वक उसी क्षणमें तृषा शांत होवे ॥

जीरकादिकाढा ।

जीरकुस्तुंबरीद्राक्षाचंदनोत्पलशीतलम् ।
शीतलेन समं दद्यात्तृष्णां हन्त्यतिशीतलम् ॥

अर्थ-जीरा, धनिया, मुनक्का दाख, चंदन, कमल, कपूर ये सब पीस शीतल जलके साथ पीनेसे तृषाका नाश होय ॥

कोष्ठादियोग।

रुग्लाजाब्दवटप्ररोहमधुकैर्मध्वन्वितैः कल्पिताग्यु-
ग्रामाशु तृषां भृशं प्रशमयेदास्यांतरस्था गुटी ॥

अर्थ-कूठ, खील, नागरमोथा, वडके अंकुर, मुलहठी और सहत इन सबको एकत्र पीस गोली बनायके मुखमें रखे तो अत्यंत तृष्णा भी होवे तो शीघ्र शांत होवे ॥

तप्तलोष्टादियोग।

निर्वापितं तप्तलोष्टकपालसिकतादिभिः।
तृष्णायां वमनोत्थायां सगुडं दधि शस्यते ॥

अर्थ-मिट्टीका डेला, खीपडा और वालू (रेत) मेंसे किसी एकको अग्निमें गरम करके दहीमें बुझाँ ले. फिर इसमें गुड डालके पीवे तो वमनके होनेसे जो तृषा उत्पन्न हुई वह शांत होवे ॥

मंदादियोग।

आतपात्ससितं मंथं यवकोलजसक्तुभिः।
सर्वाण्यंगानि विलिपेत्तिलपिण्याककांजिकैः ॥

अर्थ-यदि धूपमें रहनेसे तृषा लगी होवे तो छाछमें मिश्री, सत्तू और बेरका चूर्ण इनको मिलायके पीवे. तथा सब देहमें तिलके खलका और कांजीका लेप करे ॥

रोगोपसर्गजातायां धान्यांबु ससिता मधु। वटप्ररोहयष्ट्याह्वक-
णामधुकृता वटी ॥ मुखस्था चिरकालोत्थां तृष्णां हन्यात्सु-
दुस्तराम् ॥

अर्थ-रोगके कारण यदि प्यास लगे तो धनियेका जल, सहत और मिश्री डालके पीवे और बहुत देरकी प्यास लगकर दुःसाध्य होवे तो वडके पल्लव अथवा कोमल अंकुर, मुलहठी, पीपल और सहत इनकी गोली बनायके मुखमें रखे ॥

रसादिगुटी।

रसरजतगुटीं पटीयसीं यो वदनसरोरुहमध्यगां दधाति।
स जयति तृषितस्तृषां मनुष्यो भृशमघामिव त्रिमार्गगांभः ॥

अर्थ-पारा और चांदी इन दोनोंको खरल करके गोली बनावे इसको मुखमें रखे तृषित मनुष्य अपनी तृषाको दूर करे जैसे त्रिपथगा गंगाजी पापोंको नष्ट करे है ॥

रसादिचूर्ण ।

रसगंधककर्पूरैः शैलोशीरमरीचकैः । रासितैः क्रमवृद्धैश्च सूक्ष्मं कृत्वा त्वहर्मुखे ॥ त्रिगुंजाप्रमितं खादेत्पिबेत्पर्युषितांबु च । भृशं तृष्णां निहंत्येवमाश्विभ्यां च प्रकाशितम् ॥

अर्थ-पारा १, गंधक २, कपूर ३, शिलाजीत ४, खस ५, काली मिरच ६ और मिश्री ७ भाग, इस प्रकार लेकर बारीक चूर्ण करे इसमेंसे तीन रत्तीके अनुमान प्रातःकाल सेवन करे फिर शीतल जल पीवे तो अत्यंत तृषाका नाश होवे यह अश्विनीकुमारने प्रकाश करा है ॥

लेप ।

अरुणचंदनचंदनवालकैर्नलदपद्मकतुल्यकृतांशकैः ।
शिरसि लेपनमाचरतां नृणां तृडपयात्युपशांतिमसंशयम् ॥

अर्थ-लाल चंदन, चंदन, नेत्रवाला, खस, पद्माख ये समान भाग लेवे सबको जलमें पीसके मस्तकपर लेप करे तो निश्चय तृषा शांत होय ॥

गुटी ।

नीलांबुजाब्दमधुलाजवटावरोहैः श्लक्ष्णीकृतैर्विरचिता गुटिका मुखस्था । तृष्णां निवारयति तत्क्षणमेव तीव्रां मृत्योः स्पृहामिव यतेः परमार्थचिंता ॥

अर्थ-नीला कमल, नागरमोथा, सहत, खील और बडके अंकुर इन सबको पीसके गोली बनावे इसको मुखमें रखे तो तत्क्षण तृषा दूर होवे जैसे संन्यस्त (संन्यासी) परमार्थविषयमें चिंता, मृत्युकी इच्छा निवारण करे उसी प्रकार ॥

उपसर्गतृष्णासामान्यविधि ।

तृष्णातिवृद्धावुदरे च पूर्णे संछर्दयेन्मागधिकोदकेन ।
विलोमसंचाररहितं विधेयं स्याद्दाडिमाम्रातकमातुलिंगैः ॥

अर्थ-यदि प्यास अधिक बढ गई हो और जल पीते २ पेट अफर गया होवे तो पीपलके काढेसे उलटी करावे और वायुका अनुलोम संचार होय ऐसे हितकारी अनार, अंबाडा और बिजोरा इनको सेवन करे, अभ्यंजन और सेंक करे ॥

अभ्यंजन और स्नान ।

मधुरैः संजीवनीयैः शीतैश्च सतिक्तकं शृतम् ।
क्षीरं पानाभ्यंजनसेके त्विष्टं मधुशर्करायुक्तम् ॥

अर्थ-मधुर, जीवनीयगण, शीतल पदार्थ, कुटकी इन करके तैयार करे हुए दूधमें सहत और मिश्री डालके मालिस करे तथा सेक (तरडा देना) ये तृषारोगमें हितकारी हैं ।

कसेर्वादिकाढा ।

कसेरुशृंगाटकपद्मबीजबिसेक्षुसिद्धं ससितं च वारि ।
तृष्णां क्षतोत्थामपि पित्तजातां निहंति पीतं शिशिरीकृतं च ॥

अर्थ-कसेरू, सिंघाडे, कमलाक्ष, कमलकंद और ईख इनका शीतल हुआ काढा कर उसमें खांड डालके पीवे तो क्षतसे अथवा पित्तसे प्रगट हुई तृषा नाश होवे ॥

मधुयुक्तं जलं शीतं पिबेदाकंठमातुरः ।
पश्चाद्वमेदशेषं तत्तृष्णा तेन प्रशाम्यति ॥

अर्थ-जल और सहत मिलायके कंठपर्यंत खूब पीवे फिर ऊंगली गलेमें डालके उस जलकी उलटी कर देवे तो इस कर्मके करनेसे तृषा शांत होय ॥

क्षौद्रादिगंडूष ।

सक्षौद्रमाम्रजंबूत्थं पिबेत्क्वाथं सुपाचितम् ।
सतृष्णो मधुना कुर्याद्गंडूषान् शिशिरस्थितम् ॥

अर्थ-आम और जामुनकी छालके काढेमें सहत मिलायके शीतल करके पीवे और सहत तथा जलको मिलायके कुल्ले करे तो तालुशोष और तृषा शांत होवे ॥

क्षीरेक्षुरसमृद्वीकाक्षौद्रसिंधुगुडोदकैः ।
सह वृक्षाम्लगंडूषस्तालुशोषतृडंतकृत् ॥

अर्थ-दूध, ईखका रस, मुनक्का दाख, सहत, सेंधानिमक, गुड, डासरा और जल इन सबको एकत्र करके कुल्ले करे तो तालुशोष और तृषा इनको नष्ट करे ॥

लेप ।

दाडिमदधिकपित्थलोध्रैः सविदारीबीजपूरकैः शिरसः ।
लेपो गौरामलकैः शृतारनालयुतैः सहितैः ॥

अर्थ–अनारदाना, दही, कैथ, लोध, विदारीकंद, बिजोरा, कमलकी केशर, आंवले इन सबको पीस कांजीमें मिलायके मस्तकपर लेप करे तो प्यास शांत होवे ॥

दूसरा प्रकार ।

दाडिमं बदरं लोध्रं कपित्थं बीजपूरकम् ।
पिष्ट्वा लेपः शिरस्येषां पिपासादाहनाशनः ॥

अर्थ–अनारदाना, बेर, लोध, कैथ और बिजोरा इनको एकत्र पीसके मस्तकपर लेप करे तो प्यास और दाह ये शांत होवें ॥

पानात्ययजतृष्णा ।

छागमांसरसं साज्यं शीतं समधुशर्करम् ।
पीत्वा जयति दुर्दाहमूर्च्छाछर्दिमदात्ययान् ॥

अर्थ–बकेरके मांसका रस, घी, मिश्री और सहत मिलायके पीवे तो दुस्तर दाह, मूर्च्छा, वमन और मदात्यय इनको जीते ॥

तृष्णारोगपर पथ्य ।

शोधनं वमनं निद्रा स्नानं कवलधारणम् । कोद्रवाः शाल्यः पेयविलेपी लाजसक्तवः ॥ अन्नमंडो धन्वरसः शर्करारागखां-डवेः । भृष्टमुद्गैर्मसूरैर्वा चणकैर्वा कृतो रसः ॥ रंभापुष्पं तक्रकूर्चं द्राक्षापर्पटवल्लकम् । कपित्थं मालिकाकोलं कूष्मांडकमुपो-दिका ॥ खर्जूरं दाडिमं धात्री कर्कटी ललदंबु च । जंबीरं करमर्द-श्च बीजपूरो गवां पयः ॥ मधूकपुष्पं ह्रीबेरं तिक्तानि मधुरा-णि च । बालतालांबु शीतांबु पयः पेयं प्रपानकम् ॥ माक्षिक सरसी तोयं शताह्वा नागकेशरम् । एला जातीफलं पथ्या कु-स्तुंबुरुकुचंदनम् ॥ घनसारो गंधसारः कौमुदी शिशिरोऽनिलः । चंदनार्द्रप्रियाश्लेषो मुक्ताभरणधारणम् ॥ गाढनं लेपनं चास्य पथ्यमेतत्तृषातुरे ॥

अर्थ–शोधन, वमन, निद्रा, स्नान, मुखमें कवल धारण, कोदों, शाली चावल, पेया, विलेपी, खील और सत्तू, चौदह गुने पानीमें चावलोंका बना हुआ मंड, जंगली

जीवोंके मांसका रस, खांडव, मिश्री, रागखांडव (सहत, मीठा दही इन दोनोंको मिलायके बनाया हुआ पदार्थ) तथा मूंगका, मसूरका अथवा चनेका रस, केलेके फूल, छाछ (तैल), कूर्च, दाख, पित्तपापडा, बेल, कैथ, कमरख, बेर, पेठा, पोईका साग, खजूर, अनार, आंवले, ककडी, बहता जल, जँभीरी, कमरख, बिजोरा, गौका दूध, महुएके फूल, नेत्रवाला, कडुए रस, मीठे रस, छोटे २ तालफलोंका जल अथवा खस और ताडीरस, शीतल जल, दूध, पना, सहत, तालावका जल, सतावर, नागकेशर, इलायची, जायफल, हरड, धनिया, लालचंदन, कपूर, कपूरकचरी, चाँदनी, शीतलपवन, चंदन लगाए हुए स्त्री, मोतीके आभूषण, नदीमें स्नान करना तथा लेपन ये तृषा (प्यास) रोगवालेको पथ्यमें देवे ॥

तृषारोगमें अपथ्य ।

स्नेहांजनं स्वेदनधूमपानं व्यायामनस्यातपदंतकाष्ठम् । गुर्वन्न-मम्लं लवणं कषायं कटुत्रिकं दुष्टजलानि तीक्ष्णम् ॥ एतानि सर्वाणि हिताभिलाषी तृष्णातुरो नैव भजेत्कदाचित् ॥

अर्थ-स्नेहन, अंजन, स्वेदन धूमपान, दंड कसरत, नस्यकर्म, धूपका सेवन, दांतन करना, भारी अन्न, खट्टा, निमकीन, कषेला ऐसे रस, त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल), दूषित जल, तीक्ष्ण पदार्थ, इन संपूर्ण पदार्थोंको हितकी इच्छा करनेवाला तृषा (प्यासका) रोगी कदाचित् सेवन न करे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे तृष्णारोगस्य निदानाचिकित्सा समाप्ता ।

मूर्च्छाभ्रमनिद्रासंन्यासनिदानम् ।

क्षीणस्य बहुदोषस्य विरुद्धाहारसेविनः । वेगाघातादभिघाता-द्धीनसत्वस्य वा पुनः ॥ करणायतनेषूग्रा बाह्येष्वाभ्यंतरेषु च । निविशंते यदा दोषास्तदा मूर्च्छंति मानवाः ॥

अर्थ-तृषामें मोह होय है, इसीसे तृषाके अनन्तर मूर्छाको कहते हैं. क्षीण पुरुषके बहुत दोषके संचय होनेसे, विरुद्ध आहार क्षीर मत्स्यादिके सेवन करनेसे, मलमूत्रादि वेगके धारण करनेसे, लकडी आदिके चोट लगनेसे अथवा जिस पुरुषका सतोगुण क्षीण हो गया होय, ऐसे पुरुषकी बाहरकी और भीतरकी मनके बहनेवाली नाडियोंमें दोष प्रवेश करे तब मनुष्यको मूर्च्छा आती है ॥

संप्राप्ति।

संज्ञावहासु नाडीषु पिहितास्वनिलादिभिः। तमोभ्युपैति सहसा सुखदुःखव्यपोहकृत्॥ सुखदुःखव्यपोहाच्च नरः पतति काष्ठवत्। मोहो मूर्च्छेति तामाहुः षड्विधा सा प्रकीर्तिता॥ वातादिभिः शोणितेन मद्येन च विषेण च। षट्स्वप्येतासु पित्तं तु प्रभुत्वेनावतिष्ठते॥

अर्थ–अर्थात् संज्ञाके वहनेवाली नाडियोंमें वातादि दोषों करके आच्छादित होनेसे सुखदुःखका ज्ञान नष्ट होय, तब मनुष्य पृथ्वीपर काष्ठकीसी तरह गिरे इस रोगको मूर्च्छा अथवा मोह ऐसे कहते हैं अथवा बाहरकी इन्द्रिय नेत्र, कान आदि कर्मेन्द्रिय और बुद्धीन्द्रिय इनमें बलवान् दोष (वात, पित्त, कफ) प्रवेश कर संज्ञाकी वहनेवाली जो नाडी तिनको वह वात, पित्त, कफ रोक अंधकारको प्रगट करे तब मनुष्य काष्ठकी भांति पृथ्वीपर गिरे उसको मूर्च्छा कहते हैं अथवा मोह कहते हैं सो मूर्च्छा छः प्रकारकी है, वात, पित्त कफसे तीन प्रकारकी और रुधिर, विष और मद्य इन भेदोंसे तीन प्रकारकी. इन तीनों मूर्च्छामें पित्त है सो मुख्य (प्रधान) है अथवा व्यापक है॥

पूर्वरूप।

हृत्पीडा जृंभणं ग्लानिः संज्ञानाशो बलस्य च। सर्वासां पूर्वरूपाणि यथास्वं तं विभावयेत्॥

अर्थ–हृदयमें पीडा, जंभाई, ग्लानि, भ्रांति ये मूर्च्छाके पूर्वरूप हैं. आगे उस मूर्च्छाके वातादि भेद जानने. यह प्रगट अवस्थाके पूर्वरूप अवस्थाके भेद नहीं यह जैय्यटाचार्यका मत है॥

वातादिमूर्च्छालक्षण।

नीलं वा यदि वा कृष्णमाकाशमथवाऽरुणम्। पश्यंस्तमः प्रविशति शीघ्रं च प्रतिबुद्ध्यते॥ वेपथुश्चांगमर्दश्च प्रपीडा हृदयस्य च। कार्श्यं श्यावारुणाच्छाया मूर्च्छांगे वातसंभवे॥

अर्थ–जो मनुष्य नीले रंगका अथवा काले रंगका तथा लाल रंगका आकाश देखे पीछे मूर्च्छाको प्राप्त होय और जलदी होश हो जाय, देहमें कंप, अंगोंका टूटना, हृदयमें पीडा होय, शरीर कृश हो जाय शरीरका रंग काला लाल पड जाय, उसको वातकी मूर्च्छा जाननी॥

पित्तमूर्च्छानिदान।

रक्तं हरितवर्णं वा वियत्पीतमथापि वा। पश्यंस्तमः प्रविशति सस्वेदश्च प्रबुद्ध्यते ॥ सपिपासःससंतापो रक्तपीताकुलेक्षणः। ज्ञातमात्रे च पतति शीघ्रं च प्रतिबुध्यते ॥ संभिन्नवर्चाः पीताभो मूर्च्छांगे पित्तसंभवे ॥

अर्थ-जिसको आकाश लाल, हरा, पीला दीखे पीछे मूर्च्छा आवे और सावधान होते समय पसीना आवे, प्यास होय, संताप होय, नेत्र लाल, पीले होंय, मल पतला होय, देहका वर्ण पीला होय ये लक्षण पित्तकी मूर्च्छाके हैं ॥

कफमूर्च्छा।

मेघसंकाशमाकाशमावृतं वा तमोघनैः। पश्यंस्तमः प्रविशति चिराच्च प्रतिबुद्ध्यते ॥ गुरुभिः प्रावृतैरंगैर्यथैवार्द्रेण चर्मणा। सप्रसेकः सहृल्लासो मूर्च्छांगे कफसंभवे ॥

अर्थ-कफकी मूर्च्छामें आकाशको मेघके समान अथवा अंधकारके समान अथवा बादल इनसे व्याप्त देखकर मूर्च्छागत होय, देरमें सावधान होय, भारी बोझासा देहपर भार मालूम होय अथवा गीला चमडा धारण करासा मालूम होय, मुखसे पानी गिरे रह होयगी ऐसा मालूम होय ॥

संनिपातमूर्च्छानिदान।

सर्वाकृतिः सन्निपातादपस्मार इवापरः।
स जंतुं पातयत्याशु विना बीभत्सचेष्टितैः ॥

अर्थ-सन्निपातकी मूर्च्छामें सब दोषोंके लक्षण होते हैं, ये रोग दूसरा अपस्मार (मृगी) जानना चाहिये. परन्तु अपस्मारमें दातोंका चबाना, मुखसे झागका गेरना, नेत्रोंका हाल और ही प्रकारका हो जाना, इत्यादिक लक्षण होते हैं सो इस रोगमें नहीं होते, इतना ही भेद है. * शंका-क्योंजी पूर्व तो छः प्रकारकी मूर्च्छा कह आये फिर सन्निपातकी मूर्च्छा कैसे कही. * उत्तर-चरककी अष्टोत्तरीयाध्यायमें लिखा है जैसे अपस्मार चार प्रकारका है. वातका, पित्तका, सन्निपातका, उसी प्रकारका मूर्च्छारोग भी चार प्रकारका है इसी मतको ग्रहण कर माधवाचार्यने सन्निपातकी मूर्च्छा कही है ॥

रक्तमूर्च्छानिदान।

पृथिव्यापस्तमारूप रक्तगंधश्च तन्मयः। तस्माद्रक्तस्य गंधेन

मूर्च्छंति भुवि मानवाः ॥ द्रव्यस्वभाव इत्येके दृष्ट्वा यदि च मूर्च्छंति ॥

अर्थ—पृथ्वी और जल ये दोनों तमोगुणविशिष्ट हैं सो सुश्रुतमें लिखा है. और रुधिरकी गंध भी उन दोनोंसे अर्थात् पृथ्वी और जलसे प्रगट है. तो रुधिरकी गंध भी तमोगुण विशिष्ट हुई इसीसे जो तामसी पुरुष हैं सो रुधिरकी गंधीसे मूर्च्छित होते हैं और जो राजसी, सात्विकी पुरुष हैं सो मूर्च्छित नहीं होते + शंका—क्योंजी चंपक (चम्पा) पुष्पकी गंधसे भी मूर्च्छा होनी चाहिये क्योंकि उसमें भी पार्थिव अर्थात तामसगुणविशिष्ट गंध है इस वास्ते कहते हैं. (द्रव्यस्वभावमित्येके) अर्थात् कोई आचार्य कहते हैं कि ये द्रव्यका ही स्वभाव है अर्थात् रुधिरका यही स्वभाव है कि जिसकी गंधसेही मनुष्य मूर्च्छित होय है. अब प्रभावको और भी दृढ करते हैं (दृष्ट्वा यद्यभिमुह्यति) अर्थात् रक्तके देखनेसे भी मूर्च्छित होय है सो लिखा है ॥

विषमद्यमूर्च्छानिदान।

गुणास्तीव्रतरत्वेन स्थितास्तु विषमद्ययोः।
त एव तस्माद्धाभ्यां तु मोहौ स्यातां यथेरितौ ॥

अर्थ—तैलादिकोंमें जो दश गुण हैं वे ही गुण विष और मद्यमें अत्यंत तीव्रता-से रहते हैं. इसीसे विष और मद्यके सेवन करनेसे मोह होय है, इसमें भी मद्यमें तीव्र रहे और विषमें तीव्रतर रहे इसीसे विषका मोह स्वयं शांत नहीं होय. क्योंकि विष अपाकी है और मद्यका मोह, मद्यके नसा उतरे पर शांत हो जाय है यह भेद विष और मद्यमें रहता है ॥

रक्तादिमूर्च्छाओंके लक्षण।

स्तब्धांगदृष्टिस्त्वसृजा गूढोच्छ्वासश्च मूर्च्छितः। मद्येन विलपञ्छेते नष्टविभ्रांतमानसः ॥ गात्राणि विक्षिपेन्भूमौ जरां यावन्न याति तत्। वेपथुस्वप्नतृष्णाः स्युस्तमश्च विषमूर्च्छिते ॥ वेदितव्यं तीव्रतरैर्यथास्वं विषलक्षणैः ॥

अर्थ—रुधिरकी मूर्च्छामें अंग और नेत्र निश्चल हो जांय और श्वास अच्छे प्रकार आवे नहीं. बहुत मद्यके पीनेसे जो मूर्च्छा हो उसके ये लक्षण हैं. बहुत बके, सोय जाय, संज्ञा जाती रहे, भ्रमयुक्त होय और जबतक मद्य न पचे तबतक पृथ्वीमें हाथ,

पैर, पटके. विषजन्य मूर्च्छामें कांपे, सोवे, प्यास लगे और अंधेरी आवे, एवं मूल, पत्र, दूध इनके भेदकर जो विषभक्षणसे लक्षण होते हैं सो सब लक्षण होते हैं ॥

मूर्च्छाभेदकारण विशेषकरके कहता हूं।

मूर्च्छा पित्ततमः प्राया रजः पित्तानिलाद्भ्रमः । तमोवातकफात्तंद्रा निद्रा श्लेष्मतमोभवा ॥ इंद्रियार्थेष्वसंवृत्तिर्गौरवं जृंभणं क्लमः । निद्रार्तस्येव यस्यैते तस्य तंद्रा विनिर्दिशेत् ॥ योनायासः श्रमो देहे प्रवृद्धश्वासवर्जितः । क्लमः स इति विज्ञेयो इंद्रियार्थप्रबोधकः ॥

अर्थ-मूर्च्छामें पित्त और तमोगुण अधिक रहे हैं. रजोगुण पित्त और वायु इनसे भ्रम होय है तमोगुण वायु और कफ इनसे तन्द्रा और कफ तथा तमोगुण इनसे निद्रा उत्पन्न होती है इन्द्रिय अपने अपने विषयको ग्रहण न करे, देह भारी हो जाय अर्थात् सुस्त हो जाय, जंभाई और क्लम होय, ये लक्षण निद्रार्त पुरुषके सदृश जिसके होंय उसको तन्द्रा कहते हैं. इसमें आधे नेत्र खुले रहते हैं निद्रामें इन्द्रिय और मनको मोह होय है, तन्द्रामें केवल इन्द्रियोंको ही मोह होय है. निद्रा और भ्रम प्रसिद्ध ये दोनों अति प्रसिद्ध होनेसे माधवाचार्यने नहीं कहे, परंतु चरकमें कहे हैं. सो इस प्रकारकी जिस समय मन और इन्द्रिय खेदको प्राप्त होय और अपने अपने विषय (शब्द; स्पर्श, रूप, रस, गंध) को त्याग देय, तब यह मनुष्यको निद्रा आती है और शरीरके आयास विना देहको श्रम होवे और अन्य आयासमें जो बडा श्वास होता है वह नहीं होता और विषयमें इंद्रियोंकी प्रवृत्ति होती है इसको क्लम कहते हैं ॥

संन्यासकथन ।

दोषेषु मदमूर्च्छाद्यागतवेगेषु देहिनाम् ।
स्वयमेवोपशाम्यंति संन्यासो नौषधैर्विना ॥

अर्थ-दोषोंके वेग नष्ट होनेसे मदमूर्च्छादिक अपने आप शांत हो जाय हैं परंतु संन्यास यह औषधके विना शांत नहीं होय है ॥

संन्यासलक्षण ।

वाग्देहमनसां चेष्टा आक्षिप्यातिबलान्मलाः । संन्यस्यंत्य[illegible] जंतुं प्राणायतनमाश्रिताः ॥ स ना संन्याससंन्यस्तः काष्ठीभूतो मृतोपमः । प्राणैर्विमुच्यते शीघ्रं मुक्त्वा सद्यः फलां क्रियाम् ॥

अर्थ-अत्यंत बलिष्ठ भये जो दोष, सो वाणी, देह और मन इनके व्यापारको बंद कर हृदयमें प्राप्त हो निर्मल मनुष्यको मूर्च्छित करे, वह संन्याससे पीडित मनुष्य काष्ठकी भांति पृथ्वी पर गिरे उसकी सद्यःफल चिकित्सा अर्थात् सुईसे छेदना, तीखे अंजनका लगाना, अनामिकाको पीडित करना, कौंचकी फली लगाना, दाह देना, नास देना इत्यादिक क्रिया न करे तौ वह रोगी प्राणवियुक्त कहिये मरणको प्राप्त हो, अन्यथा बचे है ॥

मूर्च्छा ।

मूर्च्छा मोहो द्विधा स्यात्प्रभवति सहजागंतुभेदेन भिन्नस्त-
त्रागंतुस्त्रिधा स्याद्रुधिरविषसुराजन्मभेदाद्विभिन्ना । प्रत्येकं
दोषभेदाद्भवति च सहजा सा त्रिधा षट्सु पित्तं प्राधान्येनेह ति-
ष्ठेदभिदधाति च तां द्वंद्वजां सन्निपातात् ॥

अर्थ-मूर्च्छासंबंधसे मोह दो प्रकारका होता है सहज और आगंतुक इनमेंसे आगंतुक रक्त, विष और मद्य इनसे तीन प्रकारका है और सहज मूर्च्छामें पित्त प्रधान होता है और यह मूर्च्छा द्वंद्वज और सन्निपात इनसे भी होती है ॥

चिकित्साक्रम ।

सेकावगाहा मणयः सहाराः शीताः प्रदेहा व्यजनानिलाश्च ।
शीतानि पानानि च गंधवंति सर्वासु मूर्च्छास्वनिवारितानि ॥

अर्थ-अंग पर जलका तरडा देना, स्नान करना, रत्न और रत्नोंके हार धारण करना, शीतल चंदनादिक लेप करना, पंखेसे पवन करना, सुगंधित और शीतल पने ये उपचार संपूर्ण मूर्च्छा पर अबाध हैं ॥

दुरालभादिकाढा ।

दुरालभाकषायस्य घृतयुक्तस्य सेवनात् ।
भ्रमः शाम्यति गोविंदचरणस्मरणादिव ॥

अर्थ--धमासेका काढा कर उसमें घी डालके देवे तो भ्रमकी शांति होय जैसे गोविं-दचरणस्मरणसे पाप नष्ट होते [illegible]

[illegible]ऊकाढा ।

पंचमूलकष[illegible] [illegible] मधुना सितया पिबेत् ।
ज्वरघ्नांस्तु कषायाश्च तान्यथास्वं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-मूर्च्छा पर पंचमूल काढा, सहत और मिश्री मिलायके देवे और जो ज्वरनाशक काढे हैं वहभी यथादोष देखकर देवे ॥

क्षुद्रादिकाढा ।

क्षुद्रामृताग्रंथिकनागराणां मूर्च्छां जयेद्दारुणकाकषायः ॥

अर्थ-कटेरी, गिलोय, पीपरामूल, सोंठ और बरना इनका काढा मूर्च्छाका नाश करे है ॥

द्राक्षादिकाढा ।

द्राक्षासितादाडिमलाजवंति कह्लारनीलोत्पलपद्मवंति ।
पिबेत्कषायाणि च शीतलानि पित्तज्वरं यानि च यापयंति ॥

अर्थ-दाख, मिश्री, अनारदाना, लजालू, लाल कमल, नीले कमल और कमल इनका काढा करके देवे अथवा जो पित्तज्वर पर काढा देना चाहिये सो इसपर देवे ॥

रक्तजादिका मूर्च्छापर शास्त्रार्थ ।

रक्तजायां च मूर्च्छायां हितः शीतक्रियाविधिः । मद्यजायां वमेन्मद्यं निद्रां सेवेद्यथासुखम् ॥ विषजायां विषघ्नानि भेषजानि प्रदापयेत् ॥

अर्थ-रुधिरके कारण मूर्च्छा होवे तो शीतल औषध हितकारी होती है मद्य पीनेके कारण मूर्च्छा होय तो मद्यको रद्द करके निकाल देवे और सोय जावे. यदि विषभक्षणसे मूर्च्छा होवे तो विषनाशक औषध सेवन करे ॥

कोलादियोग ।

कोलमज्जाकणोशीरकेसरं शीतवारिणा ।
पीतं मूर्च्छां जयेल्लीढ्वा कृष्णां वा मधुसंयुताम् ॥

अर्थ-बेरकी गुठलीकी मिंगी, पीपल, खस, नागकेशर इनको जलमें पीसके पीवे, अथवा सहतमें मिलायके पीपलका चूर्ण सेवन करे तो मूर्च्छा दूर होय ॥

त्रिफलादियोग ।

मधुना हंत्युपयुक्ता त्रिफला रात्रौ गुडार्द्रकं प्रातः ।
सप्ताहात्पथ्यभुजो मदमूर्च्छाकासकामलामोहान् ॥

अर्थ-रात्रिके समय सहतमें हरड,बहेडा, आँवला इनके चूर्णको मिलायके खाय और गुड, अदरख मिलायके प्रातःकाल खाय,पथ्यसे रहे इस प्रकार सात दिन करे तो मद, मूर्च्छा, कामला और मोह इनका नाश होवे ॥

महौषधामृताद्राक्षापोष्करग्रंथिकोद्भवम् ।
पिबेत्कणायुतं क्वाथं मूर्च्छायां च मदेषु च ॥

अर्थ–सोंठ, गिलोय, मुनक्का, पोहकरमूल और पीपरामूल इनके काढेमें पीपलका चूर्ण डालके पीवे तो मूर्च्छा और मद इनको दूर करे ॥

दुरालभादिकाढा ।

पिबेद्दुरालभाक्वाथं सघृतं भ्रमशांतये ।
अंजनान्यपि पीडाश्च धूमाः प्रधमनानि च ॥

अर्थ–धमासेके काढेमें घी मिलायके पीवे अथवा तीव्र अंजन लगावे तथा रोगीको (नोचने आदिसे) पीडा करना, धूमपान अथवा प्रधमन नस्य देवे तो मूर्च्छा शांत होवे ॥

सामान्य ।

सूचिभिस्तोदनं शस्तं दाहपीडा नखांतरे ।
लुंचनं नखलोम्नां च दंतैर्दंशनमेव च ॥

अर्थ–मूर्च्छारोगीको सुईसे चोटना, दाहकर्म करना, नख आदिको खूब दबाना, बाल और नखोंको खेंचना तथा दांतोंसे काटना ये सब कर्म मूर्च्छारोग पर हितकरी हैं ॥

आत्मगुप्तादियोग ।

आत्मगुप्तावघर्षश्च हितस्तस्यावबोधने ॥

अर्थ–मूर्च्छावाले रोगीके देहमें कौंचकी फली घिस देवे तो उसको होश हो जावे ॥

नारिकेलादियोग ।

नारिकेलांबुना पीताः सक्तवः समशर्कराः ।
पित्तहृत्कफतृण्मूर्छाभ्रमादीन्हंति दारुणान् ॥

अर्थ–नारियलके जलमें सत्तू और खांड मिलायके पीवे तो पित्त, हृदयका कफ, तृष्णा, मूर्च्छा, भ्रम ये यदि भयंकर भी होवें तो भी इनका नाश होय ॥

प्रकारांतर ।

अंडयोर्घर्षणं चापि हितमेतैर्विबाधनम् । नासावदनरोधेन
नस्यैर्मरिचनिर्मितैः ॥ नरं जागरयेद्भ्रमौ मूर्च्छितं मंदमारुतैः ॥

अर्थ-अंडकोशोंमें कौंचकी फली आदिका लगाना मूर्च्छारोगमें हितकारी है. मूर्च्छा आनकर पृथ्वीमें गिरे हुए मनुष्यको मिरचोंकी नस्य देकर उसके मुख और नाकको बंद कर देवे अर्थात् श्वास रोक देवे तो मूर्च्छावाला रोगी तत्काल जाग उठे ॥

मृणालाद्यवलेह ।

शीतेन तोयेन भृशं मृणालं कृष्णा च पथ्या मधुनावलिह्यात् ।
कुर्याच्च नासावदनावरोधं क्षीरं पिबेद्वाप्यथ मानुषीणाम् ॥

अर्थ-शीतल जलसे कमलकंद, पीपल और हरड इनको पीस सहत डालके चाटे अथवा मुख, नाक इनमें वायुका कुछ प्रतिबंध करे अर्थात् इनको रोक देवे अथवा किसी स्त्रीका दूध देवे तो मूर्च्छित मनुष्य जाग उठे ॥

अंजन ।

शिरीषबीजं गोमूत्रं कृष्णामरिचसैंधवैः ।
अंजनं स्यात्प्रबोधाय सरसोनशिलावचैः ॥

अर्थ-सिरसके बीज, पीपल, काली मिरच और सैंधानिमक इनको गोमूत्रमें पीस इसका अथवा लहसन, मनसिल और वच इनको पीसके अंजन करे तो मूर्च्छित मनुष्य जागे ॥

दूसरा प्रकार ।

अंजनं सम्यगारब्धं मधुसिंधुशिलोषणैः ।
प्रमोहद्रोहि भवति भाषितं भिषजां वरैः ॥

अर्थ-सहत, सैंधानिमक, मनसिल और काली मिरच इनका अंजन करे तो मोहको नाश करे ऐसा उत्तम वैद्योंने कहा है ॥

सामान्य उपचार अंजन ।

धूमांजनप्रधमनान्यवपीडनानि निस्तोददाहकचलोमविलुंठनानि । संदंशितानि दशनैः कपिकच्छुघर्षश्चैतद्धितं सकलमोहविनाशनाय ।

अर्थ-धूम और अंजन नाकमें तथा कानम फूंकना, पीडा देना, दुखाना, दाग देना, केश (बाल) लोम (रुआं) का उखाडना, दांतोंसे काटना, काछकी फलीका लगाना इत्यादिक उपचार मोहनाश करनेमें अर्थात् मूर्च्छा दूर करनेमें हितकारी होते हैं ॥

स्विन्नामलकादिलेह ।

स्विन्नमामलकं पिष्ट्वा द्राक्षया सह संसृजेत् । विश्वभेषजसंयुक्तं मधुना सह लेहयेत् ॥ तेनास्य शाम्यते मूर्च्छा कासः श्वासस्तथैव च ॥

अर्थ—औटायके नरम करे हुए आंवलोंको पीस दाख और सोंठ तथा सहत मिलायके चाटे तो मूर्च्छा, खांसी और श्वास ये शांत होवें ॥

पथ्यादिघृत मदजन्यमूर्च्छापर ।

पथ्याक्वाथेन संसिद्धं घृतं धात्रीरसेन वा ।
सर्पिः कल्याणकं वापि मद मूर्च्छापहं पिबेत् ॥

अर्थ--हरडके काढेसे अथवा आंवलेके रससे सिद्ध करा हुआ घी अथवा कल्याण घृत पीवे तो यह मद और मूर्च्छाका नाश करे ॥

रस ।

कणामधुयुतं सूतं मूर्च्छायामनुशीलयेत् ।
शीतसेकावगाहादि सर्वं वा पीडनं हितम् ॥

अर्थ—पीपल, सहत और पारा इनको एकत्र खरल करके सेवन करे तथा शीतल जल अंग पर छिडके तथा नेत्रों पर छिडका देना इत्यादिक पीडा हितकारी है ॥

ताम्रादिचूर्ण ।

ताम्रचूर्णसमोशीरं केसरं शीतवारिणा ।
पीतं मूर्च्छां द्रुतं हन्याद्वृक्षमिंद्राशनिर्यथा ॥

अर्थ--लाल चंदन, खस और नागकेशर इनका चूर्ण करके शीतल जलके साथ पीवे तो शीघ्र मूर्च्छाका नाश करे जैसे वज्र वृक्षका नाश करे ॥

शुंठ्यादिगुटी ।

शुंठीकणशताह्वानां साभयानां पलं पलम् ।
गुडस्य षट् पलान्येषां गुटिका भ्रमनाशिनी ॥

अर्थ—सोंठ, पीपल, सतावर और हरड इन प्रत्येकको चार २ तोले लेके चूर्ण करे और गुड २४ तोले मिलायके गोली बनावे. इसको सेवन करे तो भ्रमको निवारण करे ॥

मूर्च्छारोगमें पथ्य ।

धूमोऽञ्जनं नावनरक्तमोक्षो दाहश्च सूचीपरितोदनानि । राम्णां कचानामपि लुंचनानि नखांतपीडा दशनोपदंशः ॥ नासामुखद्वारमरुन्निरोधो विरेचनं छर्दनलंघनानि । क्रोधो भयं दुःखकरी च शय्या कथा विचित्रा सुमनोहराश्च ॥ छाया नभोम्भः शतधौतसर्पिर्मृदुश्च तिक्तानि च लाजमंडः । जीर्णा यवा लोहितशालयश्च कौंभं हविर्मुद्गसतीनयूषाः ॥ धन्वोद्भवा मांसरसाश्च रागाः सखांडवा गव्यपयः सिता च । पुराणकूष्मांडपटोलमोचहरीतकी दाडिमनारिकेरम् ॥ मधूकपुष्पाणि च तंदुलीयस्तुषोदकान्नानि लघूनि वापि । निरंतरं चंदनचर्चनं च कर्पूरनीरं हिमवालुका च ॥ अत्युच्चशब्दोद्भुतदर्शनानि गीतानि वाद्यान्यपि चोत्कटानि । श्रमः स्मृतिश्चिन्तनमात्मबोधो धैर्यं च मूर्च्छावति पथ्यवर्गः ॥

अर्थ-जलके छींटे देना, स्नान, मणियोंका और हारोंका पहनना, शीतल लेप, पंखेकी पवन, शीतल और सुगंधित पानवस्तु, धारागृह अर्थात् जिसमें फौवारे लगे हुए ऐसा मकान, चंद्रमाकी किरण, धूमपान, अंजन, नस्य, रक्तमोक्ष, दागना, सुईका चुभाना, छोटे २ बाल और बडे २ बालोंका उखाडना, नख (नाखुन) को दबाना, दांतोंसे काटना, नाक, मुख इनसे निकलनेवाली पवनका रोकना, दस्त, वमनका कराना, लंघन, क्रोध कराना, भय (डरपाना), दुःख देनेवाली सेज पर सुलाना, चित्रविचित्र और मनोहर कहानियोंका कहना, छाया, वर्षाका जल, सौ वार धुला हुआ घी, नरम और तीखे खीलोंके मंड [अथवा नरम और कडुए खीलोंके मंड], पुराने जौ, लाल चावल, घडेका घी, मूंग और मटर इनका यूष, जंगली जीवोंके मांसका रस, रागखांडव, गौका दूध, मिश्री, पुराना पेठा, परवल, केला, हरड, अनार, नारियल, महुएके फूल, चौलाई, तुषोदक, हल्के अन्न, नदीतीरका जल, सपेद चंदन, कपूर, नेत्रवाला, शीतल बालू रेत, अत्यंत ऊंचे स्वरसे पुकारके बोलना, अद्भुत पदार्थका देखना, उत्तम गीत, उत्तम बाजे, उत्कट कर्मोंका करना, परिश्रमका न करना, भूलका सोचना, आत्मज्ञान और धीरजका धारण करना इत्यादिक मूर्च्छारोगीको पथ्य पदार्थोंका वर्ग कहा है ॥

मूर्च्छाअपथ्य ।

तांबूलं पत्रशाकानि दंतघर्षणमातपम् । विरुद्धान्यन्नपानानि व्य-
वायं स्वेदनं कटु ॥ विण्मूत्रवेगरोधं च तक्रं मूर्च्छामयी त्यजेत् ॥

अर्थ–तांबूल (पानका बीडा), पत्तोंका साग, दांतोंका घिसना, धूप खाना, विरुद्ध अन्न पानोंका सेवन, मैथुन करना, पसीने निकालना, चरपरे पदार्थोंका सेवन, मलमूत्र आदि वेगोंका रोकना (तृषा, निद्रा, इनके वेगोंको धारण करना) छाछ पीना इतनी वस्तु मूर्च्छारोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे मूर्छारोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

पानात्ययपरमदपानाजीर्णपानविभ्रमनिदानम् ।

ये विषस्य गुणाः प्रोक्तास्तेपि मद्ये प्रतिष्ठिताः ।
तेन मिथ्योपयुक्तेन भवत्युग्रो मदात्ययः ॥

अर्थ--विषके जो गुण कहे हैं सोई गुण मद्यमें हैं अर्थात् यही मद्य अविधिसे सेवन करा भया घोर भयंकर मदात्यय रोग प्रगट करे हैं ॥

किंतु मद्यं स्वभावेन यथैवान्नं तथा स्मृतम् ।
अयुक्तियुक्तं रोगाय युक्तियुक्तं तथाऽमृतम् ॥

अर्थ--कोई ऐसी शंका करे कि विषके गुण मद्यमें हैं इससे विषके समान मद्यको सेवन न करे इस विषयमें कहते हैं मद्य यह स्वभावसेही जैसे अन्न देहधारक है ऐसाही है, परंतु वह मद्य अविधिसे पीवे तौ रोगकारक होय है और विधिसे सेवन करे तौ अमृतके समान गुण करे ॥

प्राणाः प्राणभृतामन्नं तदयुक्तं तु हंत्यसून् ।
विषं प्राणहरं यत्तु युक्तियुक्तं रसायनम् ॥

अर्थ--मनुष्य आदि सब जीव अन्नके आश्रयसे रहते हैं इससे "प्राणाः अन्नं" अर्थात् प्राणही अन्न है परंतु वह अन्न अप्रमाण सेवन करनेसे प्राणका नाश करता है. वस्तुतः विष प्राणनाशक है परंतु यथाशास्त्र सेवन करनेसे रसायन होता है ॥

मद्यका सेवनप्रकार ।

विधिना मात्रया काले हितैरन्नैर्यथाबलम् । प्रहृष्टो यः पिबेन्मद्यं

तस्य स्यादमृतं यथा ॥ स्निग्धैः सदन्नैर्मांसैश्च भक्ष्यैश्च सह सेवितम् ॥ भवेदायुःप्रकर्षाय बलायोपचयाय च ॥

अर्थ-विधिपूर्वक प्रमाणके संग योग्य कालमें, चिकना आदि अच्छे अन्नके संग, बलाबलके अनुसार, अत्यंत हर्षके साथ, जो मद्यपान करे, उसको अमृतके तुल्य गुण करै इसके पीनेकी विधि मदात्ययके दूसरे श्लोककी टिप्पणीमें लिख आये हैं तथा और ग्रन्थान्तरोंमें विधि तथा मात्रा कालका नियम लिखा है अर्थात् शुद्धशरीर होकर प्रातः-काल सोपदंश (अर्थात् मद्यपान करनेके बाद जो चटनी आदि पदार्थ खाये जांय हैं सो) करके सहित सो दो पल पीवे, मध्याह्नको चार पल पीवे, तदनंतर चिकना पदार्थ भोजन करे और सायंकालको आठ पल पीवे इस जगह पल नाम जैपुरसाई १ टका पक्केको कहते हैं अथवा चिकने अन्नके साथ, मांसके साथ अथवा और भक्ष्य हैं उनके साथ मद्यको सेवन करे तौ मनुष्यकी आयुष्य बढे, बल बढे तथा देह पुष्ट होय, इस श्लोकमें "स्निग्धैः सदन्नैः" यह जो पद धरा सो स्निग्धका एक उपलक्षण मात्र है अर्थात् जो मद्यसे विपरीत गुण रखते हैं जैसे तीक्ष्णादि दश गुण हैं उनसे विपरीत होय उसके साथ मद्य पीना चाहिये सो तीक्ष्णादि दश गुण ग्रंथान्तरोंमें लिखे हैं और विशेष देखना होय तो भावप्रकाशमें देख लेवे, इस स्थलमें ग्रन्थविस्तारभयसे हमने त्यागे हैं॥

विधिसे मद्य पीनेके दूसरे गुण ।

काम्यता मनसस्तुष्टिस्तेजो विक्रम एव च ।
विधिवत्सेव्यमाने तु मद्ये सन्निहिता गुणाः ॥

अर्थ-मद्यको विधिपूर्वक पीनेसे सुन्दर स्वरूप, मनको संतोष, उत्साह, दूसरेको जीतनेकी सामर्थ्य इत्यादि हितकारक गुण होय हैं कही हुई विधिसे विरुद्ध मद्यपान करनेसे मदात्यय रोग होय है सो मदात्यय तीन प्रकारका है, पूर्वमद मध्यमद और अन्त्य मद ॥

शुद्धकायः पिबेत्प्रातः सोपदंशं पलद्वयम् । मध्याह्ने द्विगुणं तच्च स्निग्धाहारेण पाययेत् ॥ प्रदोषेऽष्टपलं तद्वन्मात्रामद्य-रसायने ॥

अर्थ-प्रातःकालमें दँतौन आदी शरीरशुद्धि करके ८ तोले मद्य सेवन करना, दुपहरमें स्निग्ध पदार्थोंके साथ द्विगुणित अर्थात् सोलह तोले और सायंकालमें चौगुना अर्थात् ३२ तोले सेवन करनेसे रसायन होता है ॥

त्रिविधमदके लक्षण ।

**बुद्धिस्मृतिप्रीतिकरः सुखश्च पानान्ननिद्रारतिवर्धनश्च ।
संपाठगीतस्वरवर्द्धनश्च प्रोक्तोऽतिरम्यः प्रथमो मदो हि ॥**

अर्थ–बुद्धि, स्मरण और प्रीति इनको करे, सुख करे । पान (पीना), अन्न, निद्रा और रति इनको बढावे, सुन्दर पाठ और गीत गानेको बढावे. ऐसा, प्रथम मद अति रमणीय कहा है * शंका–क्योंजी मद तो मनमें विकार उत्पन्न करे है फिर आप इसको रमणीय कैसे कहते हो ? * उत्तर–आपने कहा सो ठीक है परंतु दुःखको दूर करनेसे इसको रमणीयता है, इसी कारण सुश्रुतने हर्षको मनके विकारोंमें कहा है ॥

मध्यममदके लक्षण ।

**अव्यक्तबुद्धिस्मृतिवाग्विचेष्टः सोन्मत्तलीलाकृतिरप्रशांतः ।
आलस्यनिद्राभिहतो मुहुश्च मध्येन मत्तः पुरुषो मदेन ॥**

अर्थ--मध्यम मदसे मतवाले पुरुषकी बुद्धि, स्मरण और वाणी यथार्थ नहीं होय, विरुद्ध चेष्टा करे और बावलेकीसी चेष्टा करे, प्रचंड हो जाय, वारंवार आलस और निद्रासे पीडित हो जाय ॥

तृतीयमदके लक्षण ।

**गच्छेदगम्यां न गुरूंश्च मन्येत्खादेदभक्ष्याणि च नष्टसंज्ञः ।
ब्रूयाच्च गुह्यानि हृदि स्थितानि मदे तृतीये पुरुषोऽस्वतंत्रः ॥**

अर्थ–तीसरे मदसे पुरुष मदके स्वाधीन होकर अगम्या (गुरुकी स्त्री आदि) से गमन करे, बडोंका तिरस्कार करे, जो वस्तु खानेके योग्य नहीं है उसको खाय, संज्ञा जाती रहे और जो गुप्त बात हृदयमें है उनको कहने लगे ॥

चतुर्थमद लक्षण ।

चतुर्थे तु मदे मूढो भग्नदारुविनिष्क्रियः कार्याकार्यविभागज्ञो मृतादप्यपरो मृतः ॥ को मदं तादृशं गच्छेदुन्मादमिव चापरम् । बहुदोषमिवारूढः कांतारं स्ववशः कृती ॥

अर्थ–चतुर्थ मदसे मनुष्य मूढ होकर टूटे वृक्षके समान क्रियारहित होय, कार्य (करने योग्य), अकार्य (नहीं करने योग्य) इनको न समझे, वह पुरुष मरेसेभी अधिक मरा भया है कौन ऐसा स्ववश अथवा सुकृती पुरुष ऐसे निंद्य मद (अमल) का

सहनशील होय है किंतु कोई नहीं होय कैसे कि जैसे सिंह व्याघ्रादि हिंसक पशु जिस वनमें बहुत हैं ऐसे निर्जन वनमें मार्गमें कौन चतुर मनुष्य जायगा. * शका-चरक, विदेह, वाग्भट आदि आचार्योंने तौ चतुर्थ मद कहाही नहीं है और सुश्रुतने कहा है इनमें विरोध क्यों है ? * उत्तर-चरकमें जो दूसरे और तीसरेमें अन्तर कहा है सोई सुश्रुतने तृतीयमदको मानकर उसके लक्षण कहे ह आर जो चरकमें तृतीय मदके लक्षण कहे हैं सो सुश्रुतने चतुर्थ मदके लक्षण कहे हैं ऐसे विरोध नहीं है वास्तवमें तीन ही मद हैं * शंका-क्योंजी एक मद्यसे ३ प्रकारके मद होय हैं इसमें क्या कारण हैं ? * उत्तर-मद्य यह अग्निके समान है जैसे अग्निमें सुवर्ण (सोना) तपानेसे उत्तम, मध्यम, अधमकी परिक्षा होय है. ऐसेही मद्य भी सतोगुण, रजोगुण, तमोगुणवाले पुरुषोंकी प्रकृतिसूचक है अर्थात् सतोगुणवाले पुरुषको प्रथम मद, रजोगुणवाले पुरुषको दूसरा मद, तमोगुणवाले पुरुषको तीसरा मद प्राप्त होय है. सो चरकमें लिखा है ॥

अविधिसे सेवित मद्यके अन्य विकारोंको कहता हूं ।

निर्भुक्तमेकान्तत एव मद्यं निषेव्यमाणं मनुजेन नित्यम् ।
आपादयेत्कष्टतमान्विकारानापादयेच्चापि शरीरभेदम् ॥

अर्थ-जिस पुरुषने अन्नरहित निरंतर मद्यपान करा होय, वे अत्यंत दुःखदायक विकार (पानात्ययादिक) उत्पन्न करे है और शरीरका विनाश करे है ॥

अन्नके साथ मद्यपान करनेके विकार ।

क्रुद्धेन भीतेन पिपासितेन शोकाभितप्तेन बुभुक्षितेन । व्यायामभाराध्वपरिक्षतेन वेगावरोधाभिहतेन चापि ॥ अत्यम्लभक्ष्यावततोदरेण साजीर्णभुक्तेन तथाऽबलेन । उष्णाभितप्तेन च सेव्यमानं करोति मद्यं विविधान्विकारान् ॥

अर्थ-क्रोधयुक्त, भयसे पीडित, प्यासा, शोकवान, क्षुधायुक्त, दंड कसरत और भारसे जो क्षीण हो गया होय, मलमूत्र आदि वेगसे पीडित हो, अत्यंत अम्लर खानेसे जिसका पेट भर रहा होय, अजीर्णमें भोजन करनेवाले पुरुषके, निर्बल पुरुषके, गरमीसे तपायमान ऐसे मनुष्यके मद्य सेवन करनेसे अनेक विकार उत्पन्न होते हैं ॥

उन विकारोंको कहते हैं ।

पानात्ययं परमदं पानाजर्णिमथापि वा ।
पानविभ्रममुग्रं च तेषां वक्ष्यामि लक्षणम् ॥

अर्थ-पानात्यय, परमद, पानाजीर्ण और पानविभ्रम इत्यादिक भयंकर विकार होते हैं उनके लक्षण कहता हूं ॥

वातादिसंबंधमदात्ययलक्षण ।

हिक्काश्वासशिरःकंपपार्श्वशूलप्रजागरैः ।
विद्याद्बहुप्रलापस्य वातप्रायं मदात्ययम् ॥

अर्थ-हिचकी, श्वास, मस्तकका कंप होना, पसवाडोंमें पीडा, निद्राका नाश और अत्यंत बकवाद ये लक्षण जिसमें होंय उसको वातप्रधान मदात्यय जानना ॥

पित्तजन्यमदात्ययनिदान ।

तृष्णादाहज्वरस्वेदमोहातीसारविभ्रमैः ।
विद्याद्धरितवर्णस्य पित्तप्रायं मदात्ययम् ॥

अर्थ-प्यास, दाह, ज्वर, पसीना, मोह, अतीसार, विभ्रम (कुछ कुछ ज्ञान होय), देहका वर्ण हरा होय इन लक्षणोंसे पित्तप्रधान मदात्यय जानना ॥

कफमदात्ययनिदान ।

छर्द्यरोचकहृल्लासतन्द्रास्तैमित्यगौरवैः ।
विद्याच्छीतपरीतस्य कफप्रायं मदात्ययम् ॥

अर्थ-वमन (रद्द), अन्नमें अरुचि,' खाली रद्द (ओकारी), तन्द्रा, देह गीली और भारी और शीत लगे, इन लक्षणोंसे कफप्रधान मदात्यय जानना ॥

त्रिदोषमदात्ययनिदान ।

ज्ञेयस्त्रिदोषजश्चापि सर्वलिंगैर्मदात्ययः ॥

अर्थ-जिसमें तीनों दोषोंके लक्षण मिलते हों उसको सन्निपातप्रधान मदात्यय जानना ॥

परमदलक्षण ।

श्लेष्मोच्छ्रयोऽङ्गगुरुता मधुरास्यता च विण्मूत्रसक्तिरथ तंद्रिररोचकश्च । लिंगं परस्य तु मदस्य वदंति तज्ज्ञास्तृष्णा रुजा शिरसि संधिषु चातिभेदः ॥

अर्थ-कफका कोप (यह नासास्रावादिक जानना), देहका जड होना, मुखमें मिठास, मलमूत्रका अवरोध, तन्द्रा, अरुचि, प्यास, मस्तकमें पीडा और संधिमें कुठारीसे तोडने सरीखी पीडा होय, ये परमदके लक्षण जानने ॥

वातमदात्ययमें सौवर्चलादि ।

मद्यं सौवर्चलं व्योषयुक्तं किंचिज्जलान्वितम् ।
जीर्णमद्याय दातव्यं वातपानात्ययापहम् ॥

अर्थ-मद्य (दारु), संचर निमक और त्रिकुटेका चूर्ण इनको एकत्र करके थोडासा जल मिलायके जिसके मद्य पिया हुआ जीर्ण हो गया हो उसको देवे तो वातपानात्ययका नाश होय ॥

सूक्तशृंग्यादि ।

सूक्तं सौवर्चलं शृंगीत्र्यूषणार्द्रकदीपकैः ।
मद्यं पीत्वा जयत्युग्रं पवनोत्थं मदात्ययम् ॥

अर्थ-कांजी, संचर निमक, कांकडासिंगी, त्रिकुटा, अदरख और चित्रक इनके साथ मद्य पीवे तो वातपानात्ययको नाश करे ॥

आम्लस्निग्धादि ।

आम्लं स्निग्धोष्णलवणं रसा जांगलजा हिताः ।
पानकानि च मद्यानि हन्युर्वातमदात्ययम् ॥

अर्थ-खटाई, चिकने, गरम, निमक, जांगलदेशज जीवोंका मांस, पने और मद्य ये वातमदात्ययको दूर करते हैं ॥

पित्तमदात्यय ।

पित्तपानात्यये पेयं वटशृंगं हिमांबुना ।
सशर्करं पुनर्मद्यं हन्युर्वातमदात्ययम् ॥

अर्थ-पित्तके पानात्यय रोगमें वडके कोंपलको पीस शीतल जलमें छान पीवे तथा मिश्री मिलाय दारु पीवे तो वातमदात्यय दूर होय ॥

क्षुद्रामलकादिपान ।

क्षुद्रामलकखर्जूरपरूषकहिमं पिबेत् ।
सिताविमिश्रितं पीतं पानात्ययविकारनुत् ॥

अर्थ-कटेरी, आमले, छुहारे, फालसे इनको शीतल जलमें छान मिश्री मिलायके पीवे तो सर्व पानात्ययोंको दूर करे ॥

सामान्य ।

पित्तोत्थे तु हितं मद्यं मधुरौषधिसाधितम् ।
उल्लिखेदथवा मद्यं पीत्वेक्षुरससंयुतम् ॥

अर्थ–पित्तजन्य मदात्ययमें मिष्ट औषधों करके बना मद्य पीना हितकारी है अथवा ईखके रसको मिलायके मद्य पीवे फिर उसको उलटी कर देवे ॥

कफमदात्ययसामान्य ।

पानात्यये कफोत्थे तु तत्पीत्वोल्लेखनं चरेत् ।
यथाबलं लंघनं च दीपनीयौषधानि च ॥

अर्थ–कफके पानात्ययमें मद्य पीकर वमन कर देवे तथा बलाबलके अनुसार लंघन करावे तथा दीपनीय औषधोंको सेवन करे ॥

अष्टांगलवण ।

सौवर्चलमजाजी च वृक्षाम्लं साम्लवेतसम् । त्वगेलामरिचा-
र्धांशं शर्कराभागयोजितम् ॥ एतल्लवणमष्टांगमग्निसंदीपनं परम् ।
मदात्यये कफोत्थे तु दद्यात्स्रोतोविशोधनम् ॥

अर्थ–संचर निमक, जीरा, तिंतडीक, अमलवेत, तज, इलायची और काली मिरच प्रत्येक तोले २ लेवे और मिश्री २ तोले ले, यह अष्टांगलवण अग्निको दीपन करे इसको कफमदात्ययमें स्रोतःशुद्धिके लिये देवे ॥

सुपारीके मदपर ।

पूगान्मदः प्रशमयत्यचिरेण जंतोराघ्राय शंखरजसः प्रबलस्य
गंधम् । पानेन वा शिशिरपुष्करणीजलस्य संसेवितैरातिहितै-
र्व्यजनानिलैश्च ॥

अर्थ–सुपारीके खानेसे प्रगट मद छोटे शंखके चूर्णकी प्रबल धूनीके सूंघनेसे नष्ट होवे अथवा शीतल पुष्करणीके जल पीनेसे अथवा अत्यंत हितकारी पंखेकी पवन करके तत्काल शांत होय ॥

दूसरा प्रकार ।

अवघ्राणेन धूमस्य सितालवणभक्षणात् ।
शर्करा केवला हंति दुःसहां पूगजां रुजम् ॥

अर्थ-सुपारीके मदपर नासिका द्वारा धूंआ पीवे अथवा मिश्री अथवा निमक खाय अथवा केवल मिश्रीके खानेसे सुपारीका दुःसह मद दूर होवे ॥

कोद्रवधत्तूर ।

कूष्मांडरसः सगुडः शमयति मदमाशु कोद्रवजः ।
धत्तूरजं च दुग्धं सशर्करं पानयोगेन ॥

अर्थ-पेठेके रसमें गुड डालके पीवे तो कोदों अन्नका मद नष्ट होवे और धतूरेके मदपर दूधमें मिश्री मिलायके पीवे तो धतूरेका मद तत्काल नष्ट होय ॥

जायफलके मदपर ।

जातीफलेषु नवनीतसिताप्रयुक्तां पत्रीं तथा मसृणचंदनशर्करां वा ।
रंभाजलेन मदिरां विषमुष्टिगव्यं हन्यान्मदं सकलशीघ्रमिदं प्रयुक्तम्॥

अर्थ-जायफलके उन्माद पर मक्खन, मिश्री और जावित्री खाय अथवा मक्खन, चंदन और मिश्री खानेको देवे तथा मद्य (दारू) के मदमें केलेका निकाला हुआ जल पिलावे और कुचलेके नसे दूर करनेको गौका मक्खन देवे तो बुद्धिगत यह मद तत्काल दूर हो ॥

दूसरा प्रकार ।

जातफिलमदं शीघ्रं हंति पथ्या निषेविता ।
शीततोयावगाहश्च शर्करा दधियोजिता ॥

अर्थ-जायफलके मदपर हरड भक्षण करे तो मद शीघ्र दूर हो अथवा शीतल जलसे स्नान करे अथवा दही बूरा मिलायके भक्षण करे तो जायफलका मद शीघ्र दूर हो ॥

कज्जलीरस ।

धात्री स्वरसनिपीता रसगंधककज्जली सितासहिता ।
हरति मदात्ययरोगान् गरुत्मानिवोरगान् सहसा ॥

अर्थ-आँवलेके रसमें पारे और गंधककी कजली करके देय उपरसे मिश्रीका सरबत पीवे तो मदात्यय रोगका नाश करे; जैसे गरुड सर्पका नाश करे है ॥

सामान्य ।

सर्वजे सर्वमेवेदं प्रयोक्तव्यं चिकित्सितम् ।
आभिः क्रियाभिः सिद्धाभिः शांतिं याति मदात्ययः ॥

अर्थ–त्रिदोषजन्य मदात्यय पर ये पूर्वोक्त सर्व कर्म करे, ये सर्व क्रिया सिद्ध होनेसे मदात्यय शांतिको प्राप्त होवे ॥

पानाजीर्णके लक्षण।

आध्मानमुग्रमथवोद्गिरणं विदाहः पाने त्वजीर्णमुपगच्छति लक्षणानि। ज्ञेयानि तत्र भिषजा सुविनिश्चितानि पित्तप्रकोपजनितानि च कारणानि ॥

अर्थ–अत्यंत पेटका फूलना, वमन अथवा डकारका आना, जलन होना, ये लक्षण जब मद्याजीर्ण होय हैं तब होते हैं. इसका कारण पित्तप्रकोप है ऐसा वैद्योंने जानना

पानविभ्रमलक्षण।

हृद्गात्रतोदकफसंस्रवकंठधूममूर्च्छावमिज्वरशिरोरुजनप्रदाहाः। द्वेषः सुरान्नविकृतेष्वपि तेषु तेषु तं पानविभ्रमसुशंत्यखिलेन धीराः॥

अर्थ–हृदय और गात्र इनमें सुई चुभानेकीसी पीडा होय, कफका स्राव होय, कंठसे धूंआसा निकलनेकीसी पीडा, मूर्च्छा, वमन, ज्वर, सिरमें पीडा मुख कफसे लिहसासा होय. अनेक प्रकारकी मैरेय, पैष्टिक इत्यादि सुराविकृति और लड्डू पेडा आदि अन्नविकृति इनमें द्वेष होय, ये सर्व लक्षणसे इस रोगको पानविभ्रम ऐसे कहते हैं. सन्निपातके अंतर्गत होनेसे ये परमदादिक तीनों चरकने नहीं कहे और पूर्वोक्त मदात्ययके लक्षणोंसे विलक्षण होनेसे सुश्रुतने उक्त त्रिदोषज मदात्ययको पृथक् कहा है ॥

असाध्य लक्षण।

हीनोत्तरौष्ठमतिशीतममन्ददाहं तैलप्रभास्यमतिपानहतं त्यजेत्तु। जिह्वौष्ठदंतमसितं त्वथवापि नीलं पीते च यस्य नयने रुधिरप्रभे वा ॥

अर्थ–ऊपरके होठसे नीचेका होठ कुछ लम्बा होय देहके बाहर अति शीतलगे और भीतर अत्यन्त दाह होय, तेलसे लिप्त सदृश मुख हो, जीभ, होठ, दांत ये काले अथवा नीले हो जांय, नेत्र पीले अथवा रुधिरके समान लाल होंय ऐसा अतिपानसे अर्थात् अतिमद्य पीनेसे नष्ट मनुष्यको वैद्य त्याग देय. (चरकमें) ध्वंसक-विक्षेपक दो मद्यविकार और कहे हैं ॥

पानोपद्रव ।

हिक्काज्वरौ वमथुवेपथुपार्श्वशूलाः ।
कासभ्रमावपि च पानहतं त्यजेत्तम् ॥

अर्थ-हिचकी, ज्वर, वमन, कम्प, पसवाडोंमें पीडा होय, खांसी, भ्रम ये उपद्रव जिसके होय उसको वैद्य त्यागदे परन्तु जैज्जट आचारी कहतेहैं कि असाध्य लक्षणसे पृथक् पाठ होनेसे यह लक्षण होनेसे रोगी कृच्छ्रसाध्य जानना, असाध्य न जानना ॥

मथिततैल ।

मथितं गोदधिसहितं तैलं कर्पूरसंमिश्रम् ॥
आस्वाद्य पीतमाशु क्षपयति पानात्ययं रोगम् ॥

अर्थ-गौका दही और तेल दोनोंको एकत्र करके मथ लेवे. फिर इसमें कपूर मिलायके धीरे २ स्वाद ले लेकर चाटे तो पानात्यय रोगका तत्काल नाश करे ॥

मद्योपशम ।

मद्यं पीत्वा यदि वा तत्क्षणमेव लेह्या शर्करा सघृता ।
मदयति न जातु मद्यं मनागपि प्रथितवीर्यमपि ॥

अर्थ-मद्य पीकर फिर घी मिश्री मिलायके चाटे तो चढी हुईभी दारुहो तथापि कदाचित् उसका मद नहीं आवे ॥

कृष्णादिपने ।

कृष्णाधान्यपरूषकामरतृटीजीरैः सनागोषणैः संपन्नं ससितं मधूकसहितं युक्तं दधित्थद्रवैः । कर्पूरेण सुवासितं मदगदान्पीतं जयेत् पानकं हृद्यं रोचनमग्निदीपनमिदं पूर्वैर्भिषग्भिः स्मृतम् ॥

अर्थ-पीपल, धनिया, फालसा, देवदारु, इलायची, जीरा, नागकेशर, काली मिरच, मिश्री, मुलहठी और कैथका रस इनका पना करके उसको कपूरसे वासित करके पीवे तो यह पना हृदयको प्रिय, रोचक, दीपक और मदनाशक है इस प्रकार प्राचीन वैद्योंने कहा है ॥

सर्वजमदात्ययमें त्रिफलादिपान ।

मधुना हंत्युपयुक्ता त्रिफला रात्रौ गुडार्द्रकं प्रातः ।
सप्ताहात्पथ्यभुजो मदमूर्च्छाकामलोन्मादान् ॥

अर्थ–त्रिफलेके चूर्णको सहतमें मिलायके रात्रिके समय खाय और अदरख, गुड, प्रातःकाल खावे इस प्रकार सात दिन खाय और पथ्य भोजन करे तो यह मद, मूर्च्छा और कामला इनको जीते ॥

दुःस्पर्शादियोग ।

दुःस्पर्शेन समुस्तेन मस्तपर्पटकेन वा । जलमुस्तैः शृतं वापि दद्याद्दोषविपाचनम् ॥ एतदेव च पानीयं सर्वत्रापि मदात्यये । निरंतरं पीयमानं पिपासाज्वरनाशनम् ॥

अर्थ–धमासे और नागरमोथेका काढा अथवा नागरमोथा और पित्तपापडा इनका काढा अथवा केवल नागरमोथेका काढा दोषोंके पचानेको देवे और जल पीनेके एवजमें इसी काढेको मदात्यय रोगमें पिलावे. इसको निरंतर पीनेसे प्यास और ज्वर इनका नाश होय ॥

चव्यादिचूर्ण ।

चव्यं सौवर्चलं हिंगु पूरकं विश्वभेषजम् ।
चूर्णं मद्येन पातव्यं पानात्ययरुजापहम् ॥

अर्थ–चव्य, संचर निमक, हींग, बिजोरा और सोंठ इनका चूर्ण मद्यके साथ पीवे तो पानात्यय व्याधिको नाश करे

शतावरीपुनर्नवाघृत ।

शतावरीरसक्षीरयष्टीकल्कैः शृतं घृतम् ।
पुनर्नवाक्काथपयो पानात्ययमपोहति ॥

अर्थ–शतावरका काढा दूध और मुलहठीका चूर्ण इनके साथ सिद्ध करा हुआ घी अथवा पुनर्नवाके काढेके साथ औटे हुए दूधको पीवे तो पानात्यय रोग दूर हो ॥

माषघृत ।

कट्फलमुस्तगुडूचीमाषैः क्रमवर्धितैश्च तत्सर्वैः ।
घृतमर्दितैर्माषघृतं हन्याद्गंधं सुराभवं सपदि ॥

अर्थ–कायफल १, नागरमोथा २, गिलोय ३ और उडद ४ भाग इस प्रकार सबको लेकर घीमें खरल करे तो इसे माषघृत कहते हैं यह मद्यकी दुर्गंधको दूर करनेवाला है॥

सामान्यशास्त्रार्थ ।

अहानि सप्त चाष्टौ वा नृणां पानात्ययः स्मृतः। पानं हि मज्ज-ते जीर्णमत ऊर्ध्वं विमार्गगम् ॥ पानाजीर्णविनाशाय कुर्यात्क-फहरं विधिम् ॥

अर्थ-मनुष्यको पानात्यय सात दिन अथवा आठ दिन होता है. आठ दिनके बाद पानाजीर्ण होकर अंगोंमें प्रवेश होवे और कुत्सित मार्गमें जाता है. उसको पानाजीर्ण कहते हैं. इस पानाजीर्णके दूर करनेको कफहरणकारी क्रिया करनी चाहिये॥

खर्जूरादिमंथ ।

मंथः खर्जूरमृद्वीकावृक्षाम्लाम्लीकदाडिमैः ।
परूषकैः सामलकैर्युक्तो मद्यविकारनुत ॥

अर्थ-खजूर, दाख, अमलवेत, जलवेत, अनारदाना, फालसा और आँवले इनसे बना हुआ मंथ सरवतके समान होता है. यह मद्यविकारोंको नाश करे ॥

मदात्ययपथ्य ।

संशोधनं संयमनं स्वपनं लंघनं श्रमः। संवत्सरसमुत्पन्नाः शाल्यः षष्टिका यवाः ॥ मुद्गाश्च माषगोधूमा लावतित्तिरका-दयः। वेसवारो विचित्रान्नं हृद्यं मद्यं पयः सिता ॥ तंदुलीयं पटोलं च मातुलुंगं परूषकं । खर्जूरं दाडिमं धात्री नारिकेरं च गोस्तनी॥सर्पिः पुराणं कर्पूरं प्रतीरं शिशिरोऽनिलः।धारा-गृहं चन्द्रपादा मणयो मित्रसंगमः॥क्षौमांबरं प्रियाश्लेषो गीतं वादित्रमुद्धतम् । शीतांबु चंदनं स्नानं सेव्यमेतन्मदात्यये ॥

अर्थ-मदात्यय रोग होनेसे उसको दस्त करावे, वेगोंका नियमन, निद्रा, लंघन, श्रम, (श्रम), एक वर्षके पुराने चावल, सांठी चावल, जौ, मूंग, उडद, गेहूं, लवापक्षी, तीतरआदि [मटर, रागखांडव, काला हिरण, बकरा, मुर्गा, मोर, और शशा इनका मांस], वेसवार (गरम मसाला), चित्र विचित्र अन्न, प्रियमद्य, दूध, खांड, चौलाई, परवल, बिजोरा, फालसे, खिजूर (छुहारे), अनार, आंवले, नारियल, मुनक्का दाख, पुराना घी, कपूर, नदी सरोवर आदिका तट, शीतल, पवन, फव्वारेवाला घर, चंद्रमाकी चांदनी, मणियोंका धारण, इष्टमित्रोंसे मिलाप,

रेसमी वस्त्रोंका धारण, प्यारी स्त्रीका आलिंगन करना, गीत गाना, अत्यंत बाजे बजाना शीतल जल, चंदन और स्नान ये उपचार करे, ये मदात्ययनाशक हैं ॥

मदात्ययमें अपथ्य ।

स्वेदोऽञ्जनं धूमपानं नावनं दंतघर्षणम् ।
तांबूलं चाप्यपथ्यं स्यान्मदात्ययविकारिणाम् ॥

अर्थ–पसीने निकालना, अंजन, धूमपान, नस्य, दातोंका घिसना, बीडा चबाना ये सब मदात्ययरोगवालेको अपथ्य जानना ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे पानात्ययरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

दाहरोगकर्मविपाकः ।

पुनरग्नौ ष्ठीवति तं कपिलनामग्रहो गृह्णाति । तत्क्षणाज्ज्वरशूलसर्वांगदाहपीतनयनश्च भवति ॥ बलिं च निशि चतुष्पथे पिष्टलाजपिण्याकरुधिरतिलाश्वगंधपुष्पैर्मिश्रेण दद्यात् । गृह्णीष्व च बलिं चेमं कपिलाख्यमहाग्रह । आतुरस्य सुखं सिद्धिं प्रयच्छ त्वं महाबल ॥

अर्थ–जो प्राणी अग्निमें थूकता है उसको कापिल नामक ग्रह पीडा करे है तथा तत्क्षण ज्वर, शूल, सर्वांगमें दाह और नेत्रोंमें पीलापन ये उपद्रव होते हैं उन उपद्रवोंके दूर करनेको चौराहेमें रात्रिके समय चून, खील, खल, रुधिर, तिल, असगंध और फूल इनको एकत्र करके 'गृह्णीष्व च बलिं चेमम्' इस मंत्र करके बलिदान देवे तो दाहरोग शांत होवे ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय ।

तनौ भवति भूपुत्रो रंध्रे भवति भास्करः ।
जन्मकाले यदा यस्य स दाहज्वरवान्भवेत् ॥

अर्थ–जिसके जन्मलग्नमें मंगल और अष्टम स्थानमें सूर्य बैठा होय वह प्राणी दाह और ज्वररोगी होता है ॥

दाहनिदान ।

त्वचं प्राप्तः समानोष्मा पित्तरक्ताभिमूर्च्छितः ।
दाहं प्रकुरुते घोरं पित्तवत्तत्र भेषजम् ॥

अर्थ-दाहरोग सात प्रकारका है. तिसमें प्रथम मद्यजन्य दाहके लक्षण कहते हैं, मद्यपान करनेसे कुपित भया जो पित्त उस पित्तकी उष्णता पित्तरक्तको बढाय भयंकर दाहरोग उत्पन्न करे. इसमें पित्तके समान औषध करे ॥

सामान्यचिकित्सा ।

उत्तुंगकुचसंसर्गवीणानां हरिणीदृशाम् । गायनं सुकुमारीणां दाह-मुत्सादयेद् द्रुतम् ॥ रसौषधसमुद्भूते तापेऽपि सकले हितम् ॥

अर्थ-उठे हुए कठोर कुचोंका संबंध जिस वीणाको है उस वीणाको लेकर गान करनेवाली सुकुमार स्त्रीके गान करके, रस और औषधसे उत्पन्न हुआ सर्व प्रकारका ताप दूर होय ॥

कोलामलकयुक्तैर्वा धान्याम्लैरपि बुद्धिमान् । छादयेत्तस्य सर्वांगमारनालार्द्रवाससा ॥ लामज्जकेन युक्तेन चंदनेनानुलेप-येत् । चंदनांबुकणस्यंदितालवृंतोपवीजनम् ॥

अर्थ-बेर, आँवले इनकरके युक्त खटाईको अंगमें लगानेसे अथवा इस खटाईको वस्त्रमें लगायके उस वस्त्रसे सब देहको लपेट देवे अथवा कांजीमें भीगे हुए कपडेसे सब देहको ढक देवे अथवा रोहिस तृण और चंदन इसका लेप देहमें करे अथवा चंदनके जलको छिडकके उस पंखेकी पवन करे तो दाहरोग दूर हो ॥

दूसरा प्रकार ।

सुप्याद्दाहार्दितो भोजकदलीदलसंस्तरे । परिषेकावगाहौ च व्यजनानां च सेवनम् ॥ शस्यते शिशिरं तोयं दाहतृष्णोप-शांतये ॥

अर्थ--दाहपीडित मनुष्यको कमलके केलेके पत्तोंकी शय्या बनाकर उस पर शयन करावे अंगोंमें जल छिडके, जलमें गोते मारे, पंखेकी पवन करावे तथा शीतल जल पीवे तो दाह और तृषारोग शांत होवे ॥

रक्तजदाहलक्षण ।

कृत्स्नदेहानुगं रक्तमुद्रिक्तं दहति ध्रुवम् । संचूष्यते तृष्यते वा ता-म्राभस्ताम्रलोचनः ॥ लोहगंधांगनयनो वह्निनेवावकीर्यते । पि-त्तज्वरसमः पित्तात्स चाप्यस्य विधिः स्मृतः ॥

अर्थ-सर्व देहका रुधिर कुपित होकर अत्यन्त दाह करे और वह रोगी अग्निके समीप रहनेसे जैसा तपे है ऐसा तपे; प्यासयुक्त ताम्रके रंगसदृश देहका रंग होय, और नेत्रभी लाल होंय, तथा मुखसे और देहसे तप्त लोहेपर जल डालनेकीसी गंध आवे और अंगोंमें मानो किसीने अग्नि लगाय दीनी ऐसी वेदना होय, पित्तसे जो दाह होय उसमें पित्तज्वरकेसे लक्षण होते हैं. उसपर पित्तज्वरकी चिकित्सा करनी चाहिये. पित्तज्वरमें और पित्तके दाहमें इतना अन्तर है कि पित्तज्वरमें अग्नि और आमाशयका दुष्ट होना होय है और पित्तके दाहमें नहीं होय और सब लक्षण होते हैं ॥

रसादिगुटी।

रसबलिघनसारचंदनानां सनदलसेव्यपयोदजीवनानाम्। अपहरति गुटी मुखस्थितेयं सकलसमुत्थितदाहमाश्रयेत्ताम् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, कपूर, चंदन, खस, नागरमोथा और घी इनकी गोली बनायके मुखमें रखे तो त्रिदोषजन्य दाहको नाश करे ॥

चंद्रकलारस।

गगनदरदयुक्तं शुद्धसूतं च गंधं प्रहरमधुसुपिष्टं वल्लयुग्मं नरोऽद्यात्। ज्वरहरगदसिंहः शृंगवेरोदकेन प्रथमजनितदाहं तक्रभक्तं च भोज्यम् ॥

अर्थ-अभ्रक भस्म, हिंगलू, पारा और गंधक इन सबको एकत्र कर सहतमें १ प्रहर खरल करे फिर इसमेंसे दो वल्लके अनुमान अदरखके रससे चाटे तो वादीके कोपसे हुआ दाह शांत हो. इस प्राणीको छाछ भात पथ्यमें देवे. यह ज्वरनाशकभी है इस रसको गदसिंहरस कहते हैं ॥

तृष्णानिरोधजदाहलक्षण।

तृष्णानिरोधादब्धातौ क्षीणे तेजः समुद्धतम्। सबाह्याभ्यंतरं देहं प्रदहेन्मंदचेतसः ॥ संशुष्कगलताल्वोष्ठो जिह्वां निष्कृष्य वेपते ॥

अर्थ-प्यासके रोकनेसे जलरूप धातु क्षीण होकर तेज कहिये पित्तकी गरमीको बढावे तब वह गरमी देहके बाहर और भीतर दाह करे, इस दाहसे रोगी बेसुध होय और गला, तालू, होठ यह अत्यंत सूखें और जीभको बाहर काढदे, कांपे ॥

तृष्णानिरोधजदाह।

सशर्करं सेंदुशैलं शीतमंभः पिबेन्नरः। तृष्णानिरोधजं दाहं हंति तोयमिवानिलम् ॥

अर्थ-मिश्री, कपूर, शिलाजीत इनका चूर्ण शीतल जलमें मिलायके पीवे तो तृषाके निरोधसे उत्पन्न हुए दाहका नाश करता है जैसे पानी अग्निका नाश करता है ॥

यवादिमंथ ।

पाचितैः शीतनीरेण सघृतैर्यवसक्तुभिः ।
नातिसांद्रद्रवैर्मंथस्तृषादाहार्तिपित्तहा ॥

अर्थ-जौके सत्तूको शीतल जल और घीमें मिलायके पचावे फिर इसको बहुत गाढा न होवे ऐसे मंथ करके पीवे तो तृषा, दाह और पित्तको दूर करे ॥

मृतसंजीवनीगुटी ।

यष्टीमधुलवंगं च शिलाकल्कं त्रुटिस्तथा । सहस्रभावनाः कार्या नवतंदुलवारिणा ॥ याममात्रं दृढं मर्द्य वटी कोलसमा स्मृता । कृष्णकार्पासनीरेण तृष्णादाहज्वरान् जयेत्॥ मूर्च्छाद्यमुग्ररोगं च वातं पित्तं च नाशयेत् । मृतसंजीवनी प्रोक्ता पूज्यपादैरुदीरिता ॥

अर्थ-मुलहठी, लौंग, शिलाजीत और इलायची इनके चूर्णको नवीन चांवलोंके धोवनकी हजार भावना देवे फिर एक प्रहर उत्तम खरल करके बेरके बराबर गोली बनावे फिर इस गोलीको काले कपासके जलमें मिलायके सेवन करे तो तृषा, दाह, ज्वर, मूर्च्छादि उग्ररोग तथा वातपित्त इत्यादि रोगोंको नाश करे, इसको मृतसंजिविनी गोली श्रेष्ठ पुरुषोंने कही है ॥

रक्तपूर्णकोष्ठजदाह ।

असृजः पूर्णकोष्ठस्य दाहोऽन्यः स्यात्सुदुस्तरः ॥

अर्थ-शस्त्र कहिये तलवार आदिके लगनेसे प्रगट रुधिर उस रुधिरसे कोष्ठ कहिये हृदय भर जाय तब दाह अत्यन्त दुःसह प्रगट होय ॥

रक्तपूर्णकोष्ठजदाह ।

धान्याकधात्रीवासानां द्राक्षापर्पटयोर्हिमः ।
रक्तपित्तं ज्वरं दाहं तृष्णां शोषं च नाशयेत् ॥

अर्थ-धनिया, आँवले, अडूसा, दाख और पित्तपापडा इनका हिम रक्तपित्त, ज्वर, दाह, तृषा और शोष इनको नाश करे ॥

दूसरा प्रकार ।

पीत्वा वेणुत्वचः क्वाथं सक्षौद्रं शिशिरं नरः ।
रक्तसंपूर्णकोष्ठोत्थदाहं जयति दुस्तरम् ॥

अर्थ–बांसकी त्वचाका काढा करके शीतल करे और उसमें सहत डालके पीवे तो रुधिरसे संपूर्ण कष्टसे उत्पन्न घोर दाह दूर होवे ॥

दशसारचूर्ण ।

यष्टीधात्रीफलाद्राक्षाएलाचंदनवालकम् । मधूकपुष्पं खर्जूरं दाडिमं पेषयेत्समम् ॥ सर्वतुल्या सिता योज्या पलार्धं भक्षयेत्सदा दशसारमिदं ख्यातं सर्वपित्तविकारनुत् ॥

अर्थ–मुलहठी, आंवला, मुनक्का, इलायची, चंदन, नेत्रवाला, महुएके फूल, खजूर, अनारदाना इसको समभाग लेकर चूर्ण करे फिर इस चूर्णके बराबर मिश्री मिलाय सबको मिलाय दो तोलेके प्रमाण सेवन करे इसको दशसार चूर्ण कहते हैं. यह सर्व पित्तविकारोंको दूर करे ॥

धातुक्षयजन्यदाह ।

धातुक्षयोत्थो यो दाहस्तेन मूर्च्छातृषान्वितः ।
क्षामस्वरः क्रियाहीनः स सीदद्भृशपीडितः ॥

अर्थ–धातुके क्षय होनेसे जो दाह होय उससे रोगी मूर्च्छा प्यास इनसे युक्त होय, स्वरभंग और चेष्टाहीन होय और इस दाहसे पीडित होकर यदि चिकित्सा न करावे तो वह रोगी मरणको प्राप्त होय ॥

खर्जूरादिचूर्ण ।

खर्जूरामलबीजानि पिप्पली च शिलाजतु । एलामधुकपाषाण-चंदनैर्वारुबीजकम् ॥ धान्यकं शर्करायुक्तं पातव्यं ज्येष्ठवारिणा । अंगदाहं लिंगदाहं गुदजं क्षीणशुक्रजम् ॥ शर्कराश्मरिशूलघ्नं वृष्यं बलकरं परम् । नाशयेन्मूत्ररोगांश्च तथा शुक्रभवानपि ॥

अर्थ–खजूर, आंवले, पीपल, शिलाजीत, इलायची, मुलहठी, पाषाणभेद, चंदन, काकडीके बीज, धनिया और मिश्री इनका चूर्ण मुलहठीके काढेके साथ पीवे तो अंगोंका दाह, लिंगदाह, गुददाह, क्षीणशुक्रदाह, शर्करा, पथरी और शूल इनका नाश होवे. तथा यह वृष्य तथा बलका देनेवाला है और मूत्ररोग, शुक्रसे उत्पन्न हुए रोग इनको नाश करे ॥

धातुक्षयजदाह ।

धातुक्षयोत्थं दाहं तु जयेदिष्टार्थसाधनैः ।
क्षीरमांसरसाहारैर्विधिनोक्तेन तत्र च ॥

अर्थ-धातुक्षयसे जो दाह होता है वह इष्टसाधनों करके अथवा क्षीर, मांसरस इनका आहार इत्यादि विधिसे जीते ॥

पित्तदाह ।

पित्तज्वरहरः सर्वो पित्तदाहे विधिर्मतः ॥

अर्थ-पित्तदाहपर संपूर्ण पित्तज्वरनाशक विधि करनी चाहिये ॥

औदुंबरस्य निर्यासः सितया दाहनाशनः ॥

अर्थ-गूलरका दूध मिश्री डालके देवे तौ दाहका नाश करता है ॥

छिन्नासारः सितायुक्तः पित्तज्वरनिषूदनः ॥

अर्थ-गिलोयके सत्त्वको मिश्रीमें मिलायके खाय तो पित्तज्वरको दूर करे ॥

क्षतजदाह ।

क्षतजोऽनश्नतश्चान्यः शोचतो वाप्यनेकधा ।
तेनांतर्दह्यतेऽत्यर्थं तृष्णामूर्च्छाप्रलापकम् ॥

अर्थ-क्षत (घाव) के होनेसे जो दाह होय उससे आहार थोडा रह जावे और अनेक प्रकारके शोक कर दाह होय और इस दाहकरके अभ्यन्तर दाह होय, तथा प्यास, मूर्च्छा और प्रलाप (बकवाद) ये लक्षण होंय ॥

चंदनादिचूर्ण ।

चंदनोशीरकुष्ठाब्दधात्रीचोरकमुत्पलम् । मधुकं मधुपुष्पं च द्राक्षा खर्जूरकं तथा ॥ चूर्णं कृत्वा समसितं प्रातः शीतांबुना पिबेत् । रक्तपित्तं तथा श्वासं पैत्तं गुल्मं समुद्धरेत् ॥ अंगदाहं शिरोदाहं शिरोविभ्रममेव च । कामलां च प्रमेहांश्च पैत्तज्वरविनाशनम् ॥ चंदनाद्यमिदं चूर्णं पूज्यपादेन भाषितम् ॥

अर्थ-चंदन, खस, कूठ, नागरमोथा, आंवले, गठोना, कमल मुलहठी, महुएके फूल, दाख और खजूर इनका चूर्णकर चूर्णके बराबर मिश्री मिलावे. प्रातःकाल शीतल जलके साथ खाय तो रक्तपित्त, श्वास, पित्तजन्य गोला, अंगोंका दाह, मस्तकदाह, मस्तकका घूमना, कामला, प्रमेह और पित्तज्वर इनको दूर करे । इसको चंदनाद्य चूर्ण कहते हैं यह श्रेष्ठ पुरुषने कहा है ॥

रक्तजदाहपर ।

शाखाश्रयां यथान्यायं रोहिणीं व्यधयेच्छिराम् ।
रक्तजातस्ततो दाहः प्रशाम्याति न संशयः ॥

अर्थ–हाथमें रोहिणी नामकी (नस) है उसको शस्त्रसे छेदकर रुधिर निकाले तो रक्तजन्य दाह शांत होवे. इसमें संशय नहीं है॥

चंदनादिकाढा ।

चंदनं पर्पटोशारनीरनीरदनीरजैः । मृणालमिसिधान्याकपद्म-
कामलकैः कृतः॥अर्धशिष्टः सितासीतः पीतः क्षौद्रसमन्वितः ।
क्वाथो विपोथयेद्दाहं तत्क्षणं परमोल्बणम् ॥

अर्थ–चंदन, पित्तपापडा, खस, नेत्रवाला, नागरमोथा, कमल, भसीडा, सौंफ, धनिया, पद्माख और आंवले इनका काढा करे जब जल दो भाग जल जावे अर्थात् आधा रहे उसमें मिश्री मिलाय जब शीतल हो जावे तब सहत डालके पीवे तो तत्क्षण बडे भारी बढे हुए दाहका नाश करे ॥

योग ।

रसौषधिसमुद्भूते तापेऽपि सकले हितम् । पानायामलकी द्राक्षा
नारिकेलेक्षुशर्करा ॥ सेवनाय हिता तापे कोमलं मूत्रलं फलम् ॥

अर्थ–रस सेवनसे अथवा औषधके खानेसे यदि दाह प्रगट हुआ होवे तो उसके दूर करनेको जल, आंवले, दाख, नारियल, ईख, मिश्री अथवा ककडी ये पदार्थ सेवन करे तो हित होवे ॥

लाजादिकाढा ।

लाजाह्वचंदनोशीरक्वाथोऽन्तःशर्करान्वितः ।
शीतः पीतो निहंत्याशु दाहं पित्तज्वरं नृणाम् ॥

अर्थ–नेत्रवाला, लालचंदन और खस इसका काढा करके उसमें मिश्री मिलायके पीवे तो दाह और पित्तज्वर इनको दूर करे ॥

शीतांबुचंदनसुगंधिकषाययुक्तमाश्लिष्य चार्द्रवसनोपहृतांबु-
पूर्णाः । तैलैर्मधूककुसुमारुकचंदनाद्यैर्द्रोणीं प्रपूर्य शिशिरैरव-
गाहयेत्तम् ॥

अर्थ–दाहवाले रोगीको शीतल जल, चंदन और सुगंधित पदार्थ इनके काढेमें भीगे हुए कपडेको ओढे तथा जलमें अथवा महुएके फूल, आरुक (आडू) और चंदन इत्यादिकोंके काढेमें अथवा तैलोंसे हौदको भरके उसमें स्नान करे ॥

कमलादिपान ।

पाययेत्कमलस्यांभः शर्करांभः पयोऽपि वा ।
क्षीरमिक्षुरसं वापि कारयेत्पित्तबुद्धिभिः ॥

अर्थ–जिस प्राणीका पित्त बढ रहा हो उसको कमलोंकी सुगंधका पानी अथवा मिश्रीका सरबत अथवा दूध अथवा ईखका रस ये पदार्थ सेवन करे तो पित्तकी शांति हो ॥

कोष्ठपूर्णरक्तदाह ।

धृत्वा पात्रे कांस्यजे ताम्रजे वा नाभौ पुंसां दाहरोगातुरस्य ।
धारापातैः शीतलं तत्र तोयं निक्षेप्तव्यं कोष्ठदाहोपशांत्यै ॥

अर्थ–रोगीके कोठेमें दाह होवे तो उसके नाभी (टूंडी) पर कासेका पात्र रखके अथवा तामेका पात्र धरके उसमें शीतल जलकी धारा ऊपरसे गेरे तो दाह शांत होय॥

दाहरोगतैल ।

कुशादिशालिपर्णी च जीवकर्षभसाधितम् ।
तैलं घृतं वा दाहघ्नं वातपित्तविनाशनम् ।

अर्थ–कुशादिगण, शालपर्णी, जीवक और ऋषभक इनके कल्कसे अथवा काढेसे सिद्ध करे हुए तेल अथवा घी दाह, वादी और पित्त इनको नाश करे ॥

तिलतैल ।

तिलतैलं भवेत्प्रस्थं तत्षोडशगुणाशनैः ।
कांजिके विपचेत्तस्माद्दाहज्वरहरं परम् ॥

अर्थ–तिलका तेल ६४ तोले लेकर तिसमें तिसके सोलह गुणा कांजी डालके सिद्ध करे तो दाह और ज्वर इनका नाश करता है ॥

पुनर्नवादितैल ।

श्वेतं पुनर्नवामूलं पलं शतमितं शुभम् । कृष्णाज्यदुग्धमध्ये च पेषयेदाढके भिषक् ॥ तत्समं तिलतैलं च पृथग्द्रव्याणि योज-

येत् । धूपं षोडशभागं च मरीचाष्टवराळकम् ॥ कचोरमुशिरं श्वेतं कृष्णोशीरस्तथैव च । मंजिष्ठं रंगचूर्णं च श्रीगंधं रक्तचंदनम् ॥ कृष्णागुरुं च रुद्राक्षान् पलमेकं प्रयोजयेत् । तच्चूर्णं तैलमध्ये च निक्षिपेत्पाचयेत्सुधीः ॥ मेहारिकाष्ठयुक्तेन पाचयेत्कोमलाग्निना । सुपक्वं तैलमुद्धृत्य रात्रावंगं च मर्दयेत् ॥ अंगशूलमंगदाहान्नेत्ररोगान्सपीनसान् । पांडुकामलमुष्णानि सूतिकासन्निपातजित् ॥ करदाहान्पाददाहान् तंद्रां कटिसमीरजान् । क्षयकुष्ठादिकंडूश्च गजकर्णादिकं तथा ॥ शिरोरोगान् भ्रमान् पित्तं नेत्राणां दृष्टिगोचरम् । अमृत मात्रतश्चैव ज्वराणां जीर्णिनामपि ॥ अस्थिगतं ज्वरं चैव मेहज्वरप्रशांतये । सर्वांगे मर्दनं चैव मंगलस्नानमाचरेत् ॥ शिवोदितमिदं तैलमश्विभ्यां गोचरीकृतम् । सर्वरोगहरं चैव दुर्लभं भिषजैर्भुवि ॥ साधयेद्गुरुमुखेनैव सिद्धिर्भवति नान्यथा ॥

अर्थ-श्वेत पुनर्नवा अर्थात् विषखपराकी जड ४०० तोलेको काली गौके २५६ तोले घी और दूधमें पीसे तथा ४०० तोले तिलोंका तेल और धूप १६ कालीमिरच आर राल ८ भाग, कचूर, खस, नेत्रवाला, मजीठ, कत्था, चंदन, लालचंदन, काली अगर और रुद्राक्ष ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे इन सबके चूर्णको उस तेलमें डालके मेहारी नामक लकडीकी अग्निके योगसे मंदाग्निपर पचन करे जब तैल सिद्ध हो जावे तब उसको उतार लेवे इस तेलको रात्रिमें देहमें मालिस करे तो देहका शूल, अंगदाह, नेत्ररोग, पीनस, पांडुरोग, कामला, गरमी, प्रसूतके रोग, संनिपात, हाथ पेरोंका दाह, तंद्रा, कमरकी वादी, क्षय, कृच्छ्र, खुजली, गजकर्ण, मस्तकरोग, भ्रम (भौर), पित्त, नेत्ररोग, दृष्टिरोग, जीर्णज्वर, आस्थिज्वर, और मेहज्वर इन रोगोंमें इस तेलको सब देहमें मालिस करके मंगलस्नान करे. यह तैल प्रथम शिवने कहा है आर आश्विनीकुमारोंने प्रसिद्ध करा है, यह संपूर्णरोगनाशक है. यह वैद्योंको पृथ्वीपर दुर्लभ है इस तेलको सिद्ध करनेसे प्राणी सिद्ध होता है. इसको गुरुके बताये हुए मार्गसे बनावे तो सिद्ध होय और विना गुरुके बताये इसकी सिद्धी नहीं होवे इसमें संदेह नहीं है ॥

तंदूलीयकमूलादिपान ।

तंदुलीयकमूलानि धान्यजीरकजं पयः ।
तुलसीस्वरसं टंकं तापेऽपि पिबतो हितम् ॥

अर्थ-चौलाईकी जड और धनिया तथा जीरा इनके जल तथा तुलसीका रस इन सबको मिलाय एक तोला पिलावे तो यह दाहपर और संतापपर परम हितकारी है ॥

लेप ।

फलिनीलोध्रसेव्यांबु हेमपत्रं कुटंनटम् ।
कालीयकरसोपेतं दाहे शस्तं प्रलेपनम् ॥

अर्थ-मेहँदी, लोध, नेत्रवाला, खस, धतूरेके पत्ते, मोथा और पीला चंदन ये समान भाग लेकर जलसे पीस लेप करे तो दा शांत होवे ॥

स्न ।

ह्रीबेरपद्मकोशीरचंदनक्षोदवारिणा ।
संपूर्णामवगाहेत द्रोणीं दाहार्दितो नरः ॥

अर्थ-नेत्रवाला, कमल, खस और चंदन इनके चूर्णको पानीमें घोर उस पानीसे भरे हुए हौदमें या पीपा आदिमें रोगी गोता मारे तो दाह दूर हो ॥

बदरीपल्लवोत्थेन फेनेनारिष्टकस्य वा ।
सुरा मंडांबु दध्यम्लं मातुलिंगरसो मधु ॥

अर्थ-बेरके कोमल २ पत्तोंका झाग अथवा नीमके पत्तोंका झाग, मद्यका ऊपरल जल, दहीका तोड और बिजोरेका रस तथा सहतमेंसे किसी एकका देहमें मालिस करे तो दाह नष्ट होवे ॥

दाहहरणकर्त्ता योग ।

वाप्यः कमलहासिन्यो जलयंत्रगृहाः शुभाः ।
नार्यश्चंदनदिग्धांग्यो दाहदैन्यहरा मताः ॥

अर्थ-जिन बावडी (पुष्करणी) आदिमें कमल खिल रहे हों तथा जिनमें अनेक फुहारे बने हों ऐसे घर तथा जिनके देहमें चंदन लग रहा हो ऐसी स्त्रियें दाहके क्लेशके हरण करनेवाली हैं ॥

धान्यहिम ।

प्रातः पर्युषितं धान्यं लुलितं सितया युतम् ।
अंतर्दाहं हरेत्पीतं दुःखं मृत्युंजयो यथा ॥

अर्थ–रात्रिमें कोरे कुल्हडेमें कटे हुए धनियेको भिगोय देवे प्रातःकाल उसको मलके कपडेमें छान लेवे इस जलमें मिश्री मिलायके पीवे तो देहके भीतरका दाह नष्ट होवे जैसे मृत्युंजयके स्मरणसे दुःख ॥

घृतलेप ।

सहस्रधौतेन घृतेन दिग्धदेहस्य दाहः कृशतां बिभर्ति ।
अन्यांगनासंगमसादरस्य स्वीयेषु दारेषु यथाभिलाषः ॥

अर्थ–हजारवार धुले हुए घीकी मालिस देहमें करे तो दाह नष्ट होवे. इसमें दृष्टांत है कि जैसे परस्त्रीसे जिसका मन लगा है उसका अपनी घरकी स्त्रीमें जैसे इच्छा नष्ट हो जाती है ॥

निंबप्रवाललेप ।

तृड्दाहमोहाः प्रशमं प्रयांति निम्बप्रवालोत्थितफेनलेपात् ।
यथा नराणां धनिनां धनानि समागमाद्वारविलासिनिनाम् ॥

अर्थ–नीमके कोमल २ पत्तोंको पीस जलमें गेरके रईसे मथ डाले उसमें जो झाग उठे उनका लेप देहमें करे तो तृषा, दाह और मोह ये दूर हों. जैसे वेश्यागामी धनी मनुष्यका धन चला जाता है ॥

दाहेऽतिशिशिरं तोयं क्रिया कार्या सुशीतला ॥

अर्थ–अतिशीतल जल पीवे और शीतलही उपचार करे तो दाह शांत होवे ॥

अन्य उपाय ।

सर्वांगे चंदनालेपश्चंद्रकस्तूरिकायुतः ।
सितनीरजलेपो वा धारागारनिवेशनम् ॥

अर्थ–कपूर और कस्तूरीयुक्त चंदनका सर्व देहमें लेप करे अथवा सपेद कमलको पीसके लेप करे ओर तलगृह (तहखाने) में रहे तो दाहशांति होय ॥

बालआलिंगन ।

सहजस्नेहसोत्साहमुग्धमंजुललापिनाम् ।
बालकानां समाश्लेषस्तापं निर्वापयेन्नवात् ॥

अर्थ-स्वाभाविक प्रीतियुक्त और उत्साह करके भोरे और मनोहर बोलनेवाले बालकोंके आलिंगन करनेसे ताप शांत होय ॥

उशीरागारशयनं तालवृंतानुवर्तनम् ।
साहित्यसरसा वाणी कवीनां तापहृत्त्रयम् ॥

अर्थ-खसखसके पडदे पडे हों ऐसे घरमें शयन करना तथा ताडके पंखेकी पवन, कविके साहित्ययुक्त वचन, सुरस भाषण ये तीनों वस्तु तापको शमन करे हैं ॥

पानीयामलकी द्राक्षा नारिकेलं सुशर्करम् ।
गायनं सुकुमारीणां दाहमूर्च्छां हरेद्‍ द्रुतम् ॥

अर्थ-जलआंवला और दाख इनका रस पीवे. अथवा नारियलका जल मिश्री मिलायके पीवे. सुकुमार स्त्रियोंका गान सुनना ये सब ताप मूर्च्छा इनको हरण करे ॥

सेवनाय हितं तापे कोमलं मूत्रलं फलम् ॥

अर्थ-जिसके अधिक दाह होता होवे यह मूत्रकारी (खीरा, ककडी आदि) फलोंका सेवन करे ॥

दूसरा चंद्रकलारस ।

प्रत्येकं तोलमादाय सूतं ताम्रं तथाभ्रकम् । द्विगुणं गंधकं चैव कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ॥ मुस्तादाडिमदूर्वोत्थैः केतकीस्तनजद्रवैः । सहदेव्याः कुमार्याश्च पर्पटस्यापि वारिणा ॥ रामशीतलिकातोयैः शतावर्या रसेन च । भावयित्वा प्रयत्नेन दिवसे दिवसे पृथक् ॥ तिक्तागुडूचिकासत्वं पर्पटोशीरमाधवी । श्रीगंधं सारिवा चैषां समानं सूक्ष्मचूर्णितम् ॥ द्राक्षादिककषायेण सप्तधा परिभावयेत् । ततो धान्याश्रयं कृत्वा वटचः कार्याश्चणोपमाः ॥ अयं चंद्रकलानाम्ना रसेंद्रः परिकीर्तितः । सर्वपित्तगदध्वंसी वातपित्तगदापहः ॥ अंतर्बाह्यमहादाहविध्वंसनमहाघनः । ग्रीष्मकाले शरत्काले विशेषेण प्रशस्यते ॥ कुरुते नाग्निमांद्यं च महातापज्वरं हरेत् । भ्रमं मूर्च्छां हरत्याशु स्त्रीणां रक्तं महास्रुतिम् ॥ ऊर्ध्वाधोरक्तपित्तं च रक्तवांतिं विशेषतः । मूत्रकृच्छ्राणि सर्वाणि नाशयेन्नात्र संशयः ॥

अर्थ–पारा, तामेकी भस्म और अभ्रककी भस्म ये प्रत्येक एक २ तोला लेय गंधक २ तोले इनकी बारीक कजली करके फिर नागरमोथा, अनार, दूब, केतकी, सहदेई, घीगुवार, पित्तपापडा, आराम शीतला और शतावर इनके रसोंकी एक २ दिन पृथक् २ भावना देय. फिर कुटकी, पित्तपापडा, नेत्रवाला, माधवी, चंदन, सारिवा इनका चूर्ण और गिलोयका सत्त्व इनको समान भाग लेकर भावना दिये हुए औषधेंमें मिलाय फिर द्राक्षादि काढेकी सात भावना देवे फिर इसको धानकी राशिमें रख देवे जब गाढी हो जावे तब निकालके गोली चनेके समान बनाय लेवे. यह चंद्रकलानामक सर्वरसोंका राजा है. यह सब पित्तके विकारोंको तथा वातपित्तके विकारोंको अंतर्दाह और बाहरका दाह इन सबको नष्ट करे. इसको गरमियोंमें और शरदृतुमें सेवन करे. यह मंदाग्नि नहीं करे, घोरज्वरके तापको हरण करे. भ्रम, मूर्छा, स्त्रियोंके रुधिरका जाना, ऊर्ध्वगामी और अधोगामी रक्तपित्त, वमन और सर्व प्रकारके मूत्रकृच्छ्र इन सब रोगोंको नष्ट करे इसमें संदेह नहीं है ॥

मर्माभिघातज दाह ।

मर्माभिघातजोऽप्यस्ति सोऽसाध्यः सप्तमो मतः ॥

अर्थ–मर्मस्थान (हृदय, शिर, बस्ति) में चोट लगनेसे जो दाह होय सो सातवां असाध्य है अर्थात् और जो छः दाह हैं सो साध्य हैं ॥

असाध्य लक्षण ।

सर्व एव च वर्ज्याः स्युः शीतगात्रस्य देहिनः ॥

अर्थ–सब दाहोंमें शीतल देहवाला रोगी त्याज्य है ॥

दाहरोगमें पथ्य ।

शालयः षष्टिका मुद्गा मसूराश्चणका यवाः । धन्वमांसं रसा-लाजमंडं वै सक्तुवासिता ॥ शतधौतं घृतं दुग्धं नवनीतं पयोद्भवम् । कूष्मांडं कर्कटी मोचा पनसः स्वादुदाडिमम् ॥ पटोलं पर्पटी द्राक्षा धात्रीफलपरूषकम् । बिंबी तुंबी पयःपेटी खर्जूरं धान्यकं मिशी ॥ बालतालं प्रियालं च शृंगाटं च कसेरुकम् । मधूकपुष्पं ह्रीबेरं पथ्या तिक्तानि सर्वशः ॥ शीताः प्रदेहा भूवेश्म सेकोऽभ्यंगोऽवगाहनम् । फुल्लोत्पलदलक्षौमशय्याशीतलकाननम् ॥ कथा विचित्रा गीतानि वाद्यं मंजुलभाषणम् ।

उशीरचंदनो लेपः शीतांशुः शिशिरोऽनिलः ॥ धारागृहं प्रियास्पर्शः प्रतीरं हिमवालुकम् । सुधांशुरश्मयः स्नानं मणयो मधुरो रसः ॥ पुरो यानि विधेयानि पित्तहारीणि तानि च । इति दाहवतां नृणां पथ्यवर्ग उदाहृतः ॥

अर्थ-शाली धान्य, साँठी चावल, मूंग, मसूर, चने, जौ, जगली जीवोंके मांसका रस, खील, सत्तू [खांड], वासित (सुगंधित) मंड, सौ वार धुला हुआ घृत, दूध, दूधका मक्खन, पेठा, ककडी, केला, फनस, मीठा अनार, परवल, पापडी, दाख, आंवले, फालसे, कंदूरी (गुलकांख), तुंबी, नारियलका जल, खिजूर, धनिया, सौंफ, छोटा ताडफल, चिरोंजी, सिंघाडे, कसेरू, महुएका फूल, नेत्रवाला, हरड, कुटकी ये सब पदार्थ तथा शीतल चंदनादि लेप और मालिस, तहखानेमें रहना, स्नान, उवटना, जलमें धसके स्नान, फूले कमलके पत्ते, रेसमी कपडे, शीतल सेज, शीतलही वन, चित्र विचित्र कथा, गीत (गान), मनोहर बाजे और सुंदर मिष्ट भाषण, खस, चंदनका लेप, कपूर [शीतजल शीतल] पवन, फुहारोंका घर, प्यारीका स्पर्श, नदीका तीर, शीतल बालुका, शीतल चंद्रमाकी चांदनी, स्नान, हीरा आदि मणि, मिष्ट रस और जो पहले पित्तहरणकर्त्ता पदार्थ कह आये ये सब दाहरोगवालेको पथ्य कहा है ॥

दाहरोगमें अपथ्य ।

विरुद्धान्यन्नपानानि क्रोधो वेगविधारणम् । श्रमं व्यवायमाध्मानं क्षारं पित्तकराणि च ॥ व्यायाममातपं तक्रं तांबूलं मधु रामठम् । व्यवायं कटुतिक्तोष्णं दाहवान् परिवर्जयेत् ॥

अर्थ-विरुद्ध अन्न पान, क्रोध, वेगोंका धारण करना, परिश्रम, मैथुन, अफरा करन वाले पदार्थ, खारके पदार्थ, पित्तकारी पदार्थ, व्यायाम, धूप, छाछ, तांबूल, सहत, हींग, चरपरे, कडुए और गरम पदार्थ ये सब दाहरोगवालेको वर्जित कहे हैं ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे दाहरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

उन्मादरोगकर्मविपाकः ।

मोहयित्वा परान्यस्तु भुंक्ते वस्तु विगर्हितम् । सोन्मादवातयुक्तः स्यात्कृच्छ्रं चांद्रायणं तथा ॥ कुर्यात्सारस्वतं नाम जपेद्ब्राह्मणतर्पणम् ॥

अर्थ-जो प्राणी दूसरेको मोहित (बेहोश) करके निंद्य वस्तु (जो नहीं खाने योग्य है उस) को खाय वह उन्माद तथा वायु इन करके पीडित होता है. इस पापके दूर करनेके वास्ते चांद्रायण और कृच्छ्रचांद्रायण प्रायाश्चित्त करे अथवा सरस्वतीमंत्रका जप करे और ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥

उन्माद व भूतोन्मादनिदान ।

मदयंत्युद्गता दोषा यस्मादुन्मार्गमाश्रिताः ।
मानसोऽयमतो व्याधिरुन्माद इति कीर्त्यते ॥

अर्थ--दोष कहिये (वात, पित्त, कफ) बढकर अपने अपने मार्गको छोड अन्य मार्ग अर्थात् मनोवह धमनियोंमें प्राप्त होकर मनको उन्मत्त करे और यह व्याधि मानसी है अत एव इसको (उन्माद) ऐसे कहते हैं ॥

उन्मादभेद व निदानके हेतु कहते हैं ।

एकैकशः सर्वशश्च दोषैरत्यर्थमुच्छ्रितैः मानसेन च दुःखेन स पंचविध उच्यते ॥ विषाद्भवति षष्ठश्च यथास्वं तत्र भेषजम् ।
स चाप्रवृद्धस्तरुणो मदसंज्ञां बिभर्ति च ॥

अर्थ-अत्यन्त कुपित भये पृथक्‌ पृथक्‌ दोषोंसे ३ सान्निपात और मानसिक दुःखसे यह रोग पांच प्रकारका और विष खानेसे ६ छठा इनमें यथादोषानुसार औषध देनी चाहिये, जबतक यह रोग बढे नहीं और जबतक तरुण रहे तबतक इस रोगको मद ऐसे कहते हैं ॥

विरुद्धदुष्टाशुचि भोजनानि प्रधर्षणं देवगुरुद्विजानाम् ।
उन्मादहेतुर्भयहर्षपूर्वो मनोविघातो विषमाश्च चेष्टाः ॥

अर्थ-विरुद्ध दुष्ट कहिये जहर मिला अन्न आदि, अशुचि चांडालादिसे स्पर्श करा ऐसा भोजन, देवता, गुरु, ब्राह्मण इनका तिरस्कार करनेसे भय और हर्षके होनेसे मनका बिगडा, सब चेष्टा विपरीत करे (अर्थात् टेढा तिरछा चले, बलवान्‌से वैर करे बकने लगे) इस श्लोकमें पूर्व शब्द करणका है और चकारसे काम, क्रोध, लोभादिक भी उन्माद रोगके कारण हैं यह जैयटका मत है ॥

संप्राप्तिकथन ।

तैरल्पसत्त्वस्य मलाः प्रदुष्टा बुद्धेर्निवासं हृदयं प्रदुष्य ।
स्रोतांस्यधिष्ठाय मनोवहानि प्रमोहयंत्याशु नरस्य चेतः ॥

अर्थ--इनमें कहे जो कारणोंसे अल्प (थोडा) मल गुण पुरुषके वातादिक दोष कुपित होकर बुद्धिका निवासस्थान (रहनेका ठिकाना) को हृदय कहिये मन उसको बिगाड मनके वहनेवाली नसोंमें प्राप्त हो मनुष्यके अंतःकरणको मोहित करे ॥

उन्मादका रूप ।

धीविभ्रमः सत्वपरिप्लवश्च पर्याकुला दृष्टिरधीरता च ।
अबद्धवाक्यं हृदयं च शून्यं सामान्यमुन्मादगदस्य चिह्नम् ॥

अर्थ--बुद्धिमें भ्रम, मनका चञ्चल होना, दृष्टिका सर्वत्र चलना, अधीरजपना (डरपना) कुछका कुछ बोलना, हृदय शून्य हो जाय (अर्थात् विचार शक्तिका नाश होना) ये उन्मादरोगके सामान्य लक्षण हैं ॥

वातोन्मादलक्षण ।

रूक्षाल्पशीतान्नविरेकधातुक्षयोपवासैरनिलोऽतिवृद्धः । चिंतादिदुष्टं हृदयं प्रदुष्य बुद्धिं स्मृतिं चाप्युपहंति शीघ्रम् ॥ अस्थानहासस्मितनृत्यगीतवागंगविक्षेपणरोदनानि । पारुष्यकार्श्यारुणवर्णता च जीर्णे बलं चानिलजस्वरूपम् ॥

अर्थ--रूखा, थोडा और 'शीतल' ऐसा अन्न 'विरेक' इस शब्दसे इस जगह दस्त और वमन जानना, धातुक्षय और उपवास इन कारणोंसे अत्यन्त बढी जो वायु सो चिन्ता शोकादि करके युक्त होकर हृदय (मनको) अत्यंत दुष्ट कर, बुद्धि और स्मरण इनका शीघ्र नाश करे और हँसनेके कारण विना हंसे, मंद मुसकान करे, नाचे, विना प्रसंगके गीत और बोलना करे, हाथोंको सर्वत्र चलावे, रोवे और शरीर रूखा तथा कृश और लाल हो जाय और आहारका परिपाक भयेपर ज्यादा जोर होय, यह वातज उन्मादके लक्षण हैं ॥

पित्तोन्मादनिदान ।

अजीर्णकट्वम्लविदाह्यशीतैर्भोज्यैश्चितं पित्तमुदीर्णवेगम् । उन्मादमत्युग्रमनात्मकस्य हृदि स्थितं पूर्ववदाशु कुर्यात् ॥ अमर्षसंरंभविनग्नभावाः संतर्जनाभिद्रवणौष्ण्यदोषाः । प्रच्छायशीतान्नजलाभिलाषाः पीतास्यता पित्तकृतस्य लिंगम् ॥

अर्थ--अधकची, कडवी, खट्टी, दाह करनेवाली और गरम ऐसा भोजन करनेसे संचित भया जो पित्त सो तीव्र वेग होकर अजितेंद्रिय पुरुषके हृदयमें प्रवेश कर

पूर्ववत् अति उग्र उन्माद तत्काल उत्पन्न करे. इस उन्मादसे असहनशील, हाथ पैरोंको पटकना, नग्न हो जाय, डरपे, भाजने लगे, देह गरम हो जाय, क्रोध करे, छायामें रहे, शीतल अन्न और शीतल जल इनकी इच्छा, पीला मुख हो जाय, यह लक्षण पित्तज उन्मादके हैं ॥

कफोन्माद।

सम्पूरणैर्मन्दविचेष्टितस्य सोष्मा कफो मर्मणि संप्रवृद्धः। बुद्धिं स्मृतिं चाप्युपहन्ति चित्तं प्रमोहयन्संजनयेद्विकारम् ॥ वाक्चेष्टितं मंदमरोचकश्च नारी विविक्तप्रियताऽतिनिद्रा । छर्दिश्च लाला च बलं च भुंक्ते नखादिशौक्ल्यं च कफात्मके स्यात् ॥

अर्थ–मंद भूखम पेटभर भोजन कर कुछ परिश्रम न करे, ऐसे पुरुषके पित्तयुक्त कफ हृदयमें अत्यन्त बढकर बुद्धि, म(ण और चित्त इनकी शक्तिका नाश करे और मोहित कर उन्मादरूप विकारका उत्पन्न करे, उस विकारसे वाणीका व्यापार कहिये बालना इत्यादि मन्द होय, अरुचि होय, स्त्री प्यारी लगे, एकांत वास करे, निद्रा अत्यंत आवे, वमन होय, मुखसे लार बहे, भोजन करे पिछाडी इस रोगका जोर हो, नख, आदिशब्दसे त्वचा, मूत्र नेत्रादिक यह सफेद होंय यह लक्षण कफके उन्मादके हैं ॥

सन्निपातज उन्मादनिदान।

यः सन्निपातप्रभवोऽतिघोरः सर्वैः समस्तैरपि हेतुभिः स्यात् । सर्वाणि रूपाणि बिभर्ति तादृक् विरुद्धभैषज्यविधिर्विवर्ज्यः ॥

अर्थ–जो उन्माद वातादिक दोषकरके अथवा तीनों दोषोंके कारणकरके होय वह सन्निपातजन्य उन्माद बहुत भयंकर होय है. उसमें सब दोषोंके लक्षण होते हैं. इसमें विरुद्ध औषधकी विधि वर्जित है. यह उन्माद वैद्योंकरके त्याज्य है कारण कि यह असाध्य है ॥

दुःखोन्मादलक्षण।

चौरैर्नरेन्द्रपुरुषैररिभिस्तथान्यैर्वित्रासितस्य धनबांधवसंक्षयाद्वा । गाढं क्षते मनसि च प्रियया रिरंसोर्जायेत चोत्कटतमा मनसो विकारः ॥ चित्रं ब्रवीति च मनोनुगतं विसंज्ञो गायत्यथो हसति रोदिति चापि मूढः ॥

अर्थ-चोरोंने, राजाके मनुष्योंने अथवा शत्रुओंने, उसी प्रकार सिंह व्याघ्र हाथी आदि किसीने त्रास दिया होय, अथवा धन, बंधुके नाश होनेसे, ऐसे पुरुषका अन्तःकरण अत्यन्त दूखे, अथवा प्यारी स्त्रीसे संभोग करनेकी इच्छावाले पुरुषके मनमें भयंकर विकार उत्पन्न होय, वह पुरुष गुप्त बातकोभी कहने लगे और अनेक प्रकारका बोले, विपरीत ज्ञान होय वह गावे, हंसे और रोवे तथा मूर्ख हो जाय ॥

विषजउन्मादलक्षण ।

रक्तेक्षणो हतबलेन्द्रियभःसुदीनः श्यावाननो विषकृतेन भवेद्विसंज्ञः।

अर्थ-विषसे प्रगट उन्मादमें नेत्र लाल होंय, बल इन्द्री और शरीरकी कान्ति नष्ट हो जाय, अति दीन हो जाय, उसके मुखपर कालोंच आ जाय और संज्ञा जाती रहे॥

असाध्यलक्षण ।

अवाङ्मुखस्तून्मुखो वा क्षीणमांसबलो नरः ।
जागरूको ह्यसन्देहमुन्मादेन विनश्यति ॥

अर्थ-जिसका मुख नीचेको होय अथवा ऊपरको होय और जिसका मांस और बल क्षीण हो गया होय, तथा जिसकी निद्रा जाती रही हो, ऐसा मनुष्य निश्चय इस उन्मादकरके नाशको प्राप्त हो ॥

उन्मादशास्त्रार्थ ।

कामशोकभयक्रोधहर्षेर्ष्यालोभसंभवात् ।
परस्परप्रतिद्वंद्वैरेभिरेव शमं नयेत् ॥

अर्थ-काम, शोक, भय, क्रोध, हर्ष, ईर्षा, लोभ इनसे प्रगट हुए उन्माद (बावलेपने) को उसके विपरीत जो कामशांति आदि उपायोंसे निवारण करे जैसे कामज्वरमें कामशांति होनेसे चला जाता है उसी प्रकार शोकको हर्षादिक कर्मोंसे दूर करे ॥

सामान्य उपचार ।

वातिके स्नेहपानं प्राग्विरेकः पित्तसंभवे ।
कफजे वमनं कार्यं परो बस्त्यादिकः क्रमः ॥

अर्थ-वादीके उन्मादमें प्रथम स्नेहपान, पित्तोन्माद पर विरेचन (जुलाब देना) और कफोन्माद पर वमन और जो उन्माद हैं उनपर बस्तिक्रिया इत्यादि कर्म करे ॥

सामान्यचिकित्सा ।

यच्चोपदिश्यते किंचिदपस्मारे चिकित्सितम् ।
उन्मादे तच्च कर्तव्यं सामान्याद्दोषदूष्ययोः ।

अर्थ-जो कायाचिकित्सा अपस्मार (मृगीरोग) पर कही है वह सब उन्मादरोग पर करे इसका यह कारण है कि इन दोनों रोगोंमें दोष और दूष्य पदार्थ एक ही हैं इस वास्ते दोनोंपर एकसा यत्न करे ॥

सामान्य उपचार ।

स्नेहादिना क्रमेणादावुन्मादे समुपाचरेत् ।
बस्तिभिः स्नेहकल्कैश्च निरूहैः स्वेदनांजनैः ॥

अर्थ-स्नेहपानादिक क्रम करके, वस्ति, स्नेह और कल्क निरूहबास्ति पसीने निकालना तथा अंजन इत्यादि उपचार करना उन्मादरोग पर हितकारी है ॥

शास्त्रार्थ ।

आश्वासयेत्सुहृद्वाक्यैर्ब्रूयादिष्टविनाशनम् ।
दर्शयेदद्भुतं कर्मताडयेच्च कशादिभिः ॥

अर्थ-जो प्राणी बावला हो गया हो उसको मीठे २ हितभरे वाक्योंको कहकर आश्वासन (दिलासा) देवे तथा उसीकी प्यारी वस्तुका नाश कहे अथवा अद्भुत चेष्टा तथा कोडोंस पीटना इत्यादि उपचार करे ॥

सुबद्धं विजने गेहे त्रासयेदाहिभिर्धिया ।
बद्धं सर्षपतैलाक्तं न्यसेदुत्तानमातपे ॥

अर्थ-उन्मादी (बावले) मनुष्यको एकांत स्थानमें बांधके त्रास देवे. सर्प दिखायके डरावे तथा देहमें सरसोंका तेल लगायके धूपमें चीता लेटावे तो उन्माद दूर हो ॥

कपिकच्छ्वाथ वा तप्तलोहतैलजलैः स्पृशेत् ।
वक्राभिधाने कूपे वा सततं च निवेशयेत् ॥

अर्थ-बावले मनुष्यको कौंछकी फली अथवा तपाये हुए लाल लोहकी सलाई, गरमतेल, जल इनका स्पर्श करावे अथवा मुखमें तपे हुए लोहादिक डालनेका भय दिखावे तो रोगी अच्छा होवे ॥

सततं धूपयेच्चैनं गोमांसैश्च सपूतिभिः ।
कामशोकभयक्रोधहर्षेर्ष्यालक्षसंभवात् ॥

अर्थ-उन्मादरोगीको गौके मांसकी तथा दूषित मांसकी धूनी देवे तथा काम, शोक, भय, क्रोध, हर्ष और ईर्षा इत्यादि मनोविकार उत्पन्न करावे तो यह रोग दूर होय ॥

परस्परप्रतिद्वंद्वैरेभिरेव शमं नयेत् । जलाग्निद्रुमशैलेभ्यो विषमेभ्यश्च तं सदा ॥ रक्षेदुन्मादिनं चैव सद्यः प्राणहरं हि तत् ॥

अर्थ-ऊपर कही हुई परस्पर विरुद्ध चेष्टाओं करके उसको अपने आधीन कर लेना और जल, अग्नि, वृक्ष, पर्वत तथा विषमस्थान (पहाड चोटी आदि) इनसे उस बावले मनुष्यका संरक्षण करे. क्योंकि ये स्थान तत्काल उन्मादरोगीके प्राण हरण कर्ता हैं ॥

लशुनादिघृत ।

लशुनस्य विनष्टस्य तुलार्धं निस्तुषीकृतम् । तदर्धं दशमूल्यास्तु चाढके वा विपाचयेत् ॥ पादशेषे घृते प्रस्थं लशुनस्य रसं तथा । कोलामलकवृक्षाम्लमातुलिंगार्द्रकै रसैः ॥ दाडिमांबु सुरा मस्तु कांचिकाम्लैस्तदर्धकैः । साधयेत्रिफलादारुलवणव्योषदीप्यकैः ॥ यवानीचव्यहिंग्वाम्लवेतसैश्च पलार्धकैः । सिद्धमेतत्पिबेच्छूलगुल्मार्शोजठरापहम् ॥ व्रणपांड्वामयप्लीहयोनिदोषकृमिज्वरान् । वातश्लेष्मामयं चान्यमुन्मादं चापकर्षति ॥

अर्थ-उत्तम लहसन छिली हुई २०० तोले और दशमूल १०० तोले दोनोंको एकत्र कर १०२४ तोले जलमें डालके चतुर्थांश काढा करे, फिर इसको छानके इसमें घी और लहसनका रस प्रत्येक ६४ तोले तथा बेर, आंवले, अमलवेत, बिजोरा, अदरख और अनार इनका रस प्रत्येक ३२ तोले तथा त्रिफला, देवदारु, निमक, सोंठ, मिरच, काली पीपल, अजमोद, अजमायन, चव्य, हींग और अमलवेत ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे, सबका कल्क करके डाले फिर घृत सिद्ध करे. इस घृतके खानेसे शूल, गोला, बवासीर, उदर, व्रण, पांडुरोग, प्लीहा, योनिदोष, कृमि, ज्वर और वायु तथा कफ इनके रोग और उन्माद इनको नाश करे ॥

चंदनादितैल ।

चंदनांबु नखं याव्यं यष्टीशैलेयपद्मकम् । मंजिष्ठा सरलं दारु षड्बला पूतिकेसरम् ॥ पत्रं तैलवं सुरामांसी कंकोलं वनितांबुदम् । हारिद्रे सारिवा तिक्ता लवंगागरुकुंकुमम् ॥ त्वग्रेणुनलि-

काश्चेति तैलाम्मस्तु चतुर्गुणम्। लाक्षारसं समं सिद्धं ग्रहघ्नं परमं मतम् ॥ अपस्मारहरोन्मादकृत्यालक्ष्मीविनाशनम्। आयुःपुष्टिकरं चैव वशीकरणमुत्तमम् ॥

अर्थ–चंदन, नेत्रवाला, नख (सुगंधद्रव्य), जवाखार, मुलहठी, शिलाजीत, पद्माख मंजीठ, सरल, देवदारु, षट्बला (छः प्रकारकी बला), जवाद, नागकेशर, पत्रज, लोध, मुरा, जटामांसी, कंकोल, प्रियंगु, नागरमोथा, हलदी, दारुहलदी, सारिवा, कुटकी, लौंग, अगर, केशर, दालचीनी, पित्तपापडा, नलिका और तिलीका तेल तथा तलेस चौगुनी छाछका जल और लाखका रस इन सबको डालके तेल बनावे. यह ग्रह, अपस्मार, कृत्या, उन्माद, अलक्ष्मी इनको नाश करे और आयुष्य, पुष्टि तथा लोकको वशीभूत करे है ॥

अंजन।

त्र्यूषणं हिंगु लवणवचाकटुकरोहिणी। शिरीषनक्तमालानां बीजं श्वेताश्च सर्षपाः ॥ गोमूत्रपिष्टैरेतैस्तु वर्तिर्नेत्रांजने हिता। चातुर्थिकमपस्मारमुन्मादं च नियच्छति ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, सैंधानिमक, वच, कुटकी, सिरस, कंजेके बीज तथा सपेद सरसों इन सबको गोमूत्रमें पीस उसमें बत्तीको भिगोयके उस बत्तीसे नेत्रोंमें अंजन करे तो चातुर्थिक ज्वर, अपस्मार और उन्माद इनको दूर करे ॥

शिरीषादिनस्य।

शिरीषं लशुनं हिंगु नागरं मधुकं वचा।
कुष्ठं च बस्तमूत्रेण पिष्टं स्यान्नावनांजनम् ॥

अर्थ–सिरसके बीज, लहसन, हींग, सोंठ, मुलहटी, वच और कूठ इन सबको बकरेके मूत्रमें पीसके नस्य अथवा अंजन करे तो उन्मादरोग दूर हो ॥

व्योषाद्यंजन।

तद्वद्व्योषं हरिद्रे द्वे मंजिष्ठा गौरसर्षपाः।
शिरीषबीजमुन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥

अर्थ–उसी प्रकार सोंठ, मिरच, पीपल, हलदी, दारुहलदी, मँजीठ, सफेद सरसों और सिरसके बीज इनको पीसके अंजन करे तथा नस्य देवे तो उन्माद, ग्रह और अपस्मार इनको नाश करे ॥

धूप ।

कर्पासास्थिमयूरपिच्छबृहतीनिर्माल्यपिंडीतकत्वङ्मांसीवृषदंश-विट्तुषवचाकेशाहिनिर्मोचनैः । नागेंद्रद्विजशृंगहिंगुमरिचैस्तुल्यै-स्तु धूपः कृतः स्कंदोन्मादपिशाचराक्षससुरावेशज्वरघ्नः स्मृतः ॥

अर्थ-कपासके बीज (बिनोले), मोरकी पांख, कटेरी, शिवनिर्माल्य, मैनफल, दालचीनी, जटमांसी, बिल्लीकी सूखी विष्ठा, तुस, वच, मनुष्यके बाल, सांपकी कांचली; हाथीदांत, साबरसींग, हींग और काली मिरच समान भाग लेके धूप बनावे. इस धूनी-से स्कंदोन्माद, पिशाचोन्माद, राक्षसोन्माद देवोन्माद, तथा ज्वर इन सबका नाश होवे ॥

पर्पटीरस ।

कृष्णाधत्तूरजैर्बीजैः पंचभिः पर्पटीरसः ।
साज्यो योज्यः प्रशांत्यर्थमुन्मादस्य शुभानने ॥

अर्थ-पीपल, धतूरेके पांच बीज और पर्पटीरस इनको घीमें मिलायके देवे तो हे शुभानने ! उन्माद रोगका नाश करे ॥

शिरीषाद्यंजन ।

सिद्धार्थकवचाहिंगुकरंजो देवदारु च । मंजिष्ठा त्रिफला श्वेता कटभी त्वक् कटुत्रिकाः ॥ समांशं च प्रियंगुश्च शिरीषो रजनी-द्वयम् । बस्तमूत्रेण पिष्टिदमगदं पानमंजनम् ॥ नस्यमालेपनं चैव स्नानमुद्वर्तनं तथा । अपस्मारविषोन्मादकृत्यालक्ष्मीज्वरा-पहम् ॥ भूतेभ्यश्च भयं हंतिं राजद्वारे च शस्यते । सर्पिरेतेन सिद्धं वा सगोमूत्रं तदर्थकृत् ॥

अर्थ-सपेद सरसों, वच, हींग, कंजेके बीज, देवदारु, मँजीठ, हरड, बहेडा, आँवला, फिटकरी, छोटी कांगनी, दालचीनी, सोंठ, मिरच, पीपल, प्रियंगु, सिरसके बीज, दारुहलदी इन सबको बकरेके मूत्रमें पीसके पीवे तथा अंजन, नस्य, लेप और स्नान करे तथा अंगमें लगावे तो अपस्मार, विष, उन्माद, कृत्या, दुर्दशा, ज्वर और भूत-बाधा इनका नाशक है और राजाके सन्मुख जाय तो इस योगको करे इन्ही औषधोंसे सिद्ध करा हुआ घी गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे गुण करे है ॥

ब्राह्म्यादिरस ।

ब्राह्मीकूष्मांडबिलषड्ग्रंथाशंखपुष्पिकास्वरसाः ।
दृष्टा उन्मादहराः पृथगेते कुष्ठमधुमिश्राः ॥

अर्थ-ब्राह्मी, पेठा, वच और शंखाहूली इनकी पृथक् रस कूठ और सहत इनमें मिलायके सेवन करे तो उन्मादको दूर करे ॥

ब्राह्म्यादिकल्क ।

ब्राह्मीरसः स्यात्सवचः सकुष्ठः सशंखपुष्पः ससुवर्णचूर्णः । उन्मा-
दिनामुन्मदमानसानामपस्मृतो भूतहतात्मनां हि ॥ नस्येंजने
पानविधौ च शस्तो ब्राह्मीरसोऽयं सवचादिचूर्णः ॥

अर्थ-ब्राह्मीके रसको वच, कूठ, शंखाहूली और नागकेशर, इनके चूर्ण करके युक्त कर उसके नस्य, अंजन किंवा पीना इनमें देवे तो उन्माद,अपस्मार और भूतोन्माद ये रोग दूर हों ॥

सितकुसुमबलादियोग ।

सितकुसुमबलायाः सार्धकर्षत्रयं यः शिखरिचरणकेन क्षीरपा-
केन पक्वम् । पिबति तदनु नित्यं प्रातरुत्थाय शीतं जयति
झटिति घोरं व्याधिमुन्मादसंज्ञम् ॥

अर्थ-सपेद फूलका बरियारा ३॥ तोलेका चूर्ण करके दूधमें डाल उस दूधको ओंगाकी जडके साथ औटावे. जब शीतल हो जावे तब नित्य प्रातःकाल पीवे, तो उन्मादरोगको तत्काल पराजय करे ॥

दशमूलादियोग ।

दशमूलांबु सघृतं युक्तं मांसरसेन वा ।
ससिद्धार्थकचूर्णं वा केवलं नावनं घृतम् ॥

अर्थ-दशमूलका काढा घृतयुक्त अथवा मांसरस युक्त उन्मादपर हितकारक है अथवा सपेद सरसोंका चूर्ण घीमें मिलायके नस्य देवे तो हितकारि होय ॥

उन्मादशांतये पेयो रसो वा कालशाकजः ।
प्रयोज्यं सार्षपं तैलं नस्याभ्यंजनयोः सदा ॥

अर्थ-उन्मादरोग शांत करनेको शंखपुष्पीका रस पीवे अथवा सरसोंके तेलकी नस्य और देहमें मालिस करे ॥

भूतोन्मादलक्षण ।

अमर्त्यावग्विक्रमवीर्यचेष्टाज्ञानादिविज्ञानबलादिभिर्यः ।
उन्मादकालो नियतश्च यस्य भूतोत्थमुन्मादमुदाहरेत्तम् ॥

अर्थ-वाणी, पराक्रम, शक्ति, देहका व्यापार, तत्त्वज्ञान, शिल्पादि ज्ञान अथवा ज्ञान कहिये शास्त्रज्ञान और विज्ञान नाम तदर्थ निश्चय आदिशब्दसे स्मृत्यादिक ये जिसकी मनुष्यकीसी न होय और जिसका उन्मत्त होनेका काल निश्चय होय, ऐसे उन्मादको भूतोन्माद कहते हैं. भूतशब्दसे यहां आगे कहेंगे सो देवता जानने ॥

देवजुष्टउन्मादलक्षण ।

सन्तुष्टः शुचिरतिदिव्यमाल्यगंधो निस्तंद्रिस्त्ववितथसंस्कृतप्रभाषी । तेजस्वी स्थिरनयनो वरप्रदाता ब्रह्मण्यो भवति नरः स देवजुष्टः ॥

अर्थ-सदा संतोषयुक्त रहे, पवित्र रहे, देहमें दिव्य पुष्पके समान सुगंध,नेत्रोंके पलक लगे नहीं, सत्य और संस्कृतका बोलनेवाला हो, तेजस्वी स्थिरदृष्टि, वरका देनेवाला, (तेरा कल्याण हो ऐसे वर देय) ब्राह्मणसे प्रीति राखे, ऐसा मनुष्य (देवग्रह पीडित जानना, देवशब्दसे गण मातृकादि ग्राह्य है सो विदेहने कहा भी है ॥

असुरउन्माद ।

संस्वेदी द्विजगुरुदेवदोषवक्ता जिह्माक्षो विगतभयो विमार्गदृष्टिः ।
संतुष्टो न भवति चान्नपानजातैर्दुष्टात्मा भवति स देवशत्रुजुष्टः ॥

अर्थ--पसीने युक्त देह, ब्राह्मण, गुरु और देव इनमें दोषारोपण करनेवाला टेढी दृष्टीसे देखनेवाला, निर्भय, वेदविरुद्ध मार्गका चलनेवाला और बहुत अन्न जलसे भी जिसको संतोष न होय और दुष्टबुद्धी, ऐसा मनुष्य दैत्यग्रह पीडित जानना ॥

गंधर्वजुष्टउन्माद ।

हृष्टात्मा पुलिनवनांतरोपसेवी स्वाचारः प्रियपरिगीतगंधमाल्यः । नृत्यन्वै प्रहसति चारु चाल्पशब्दं गंधर्वग्रहपरिपीडितो मनुष्यः ॥

अर्थ–गंधर्व ग्रहसे पीडित मनुष्य प्रसन्नचित्त, पुलिन और बाहर बगीचामें रहनेवाला, अनिंदित आचारका करनेवाला, गान, सुगंध और पुष्प, ये जिसको प्यारे लगें वह पुरुष नाचे हंसे, सुन्दर बोले, थोडा बोले ॥

यक्षग्रस्त उन्मादलक्षण ।

ताम्राक्षः प्रियतनुरक्तवस्त्रधारी गम्भीरो द्रुतगतिरल्पवाक् सहिष्णुः । तजस्वी वदति च किं ददामि कस्मै यो यक्षग्रहपरिपीडितो मनुष्यः ॥

अर्थ–यक्षग्रहसे पीडित मनुष्यके नेत्र लाल हों, सुंदर बारीक ऐसे रक्त वस्त्रका धारण करनेवाला, गंभीर, बुद्धिवान् जलदी चलनेवाला, प्रमाणका बोलनेवाला, सहनशील, तेजस्वी, किसको क्या देऊं ऐसे बोलनेवाला ऐसा होय ॥

पितृग्रहग्रस्त उन्मादलक्षण ।

प्रेतानां स दिशति संस्तरेषु पिंडान्भ्रान्तात्मा जलमपि चापसव्यवस्त्रः । मांसेप्सुस्तिलगुडपायसाभिकामस्तद्भक्तो भवति पितृग्रहाभिजुष्टः ॥

अर्थ–कुशाके ऊपर प्रेतों (पितरों) को पिंड देय, चित्तमें भ्रांति रहे और उत्तरीय वस्त्र अपसव्य करके तर्पणभी करे, मांस खानेकी इच्छा होय, तथा तिल, गुड, खीर, इनपर मन चले (इस कहनेका प्रयोजन यह है कि जिसकी जिस पदार्थपर इच्छा होय उसको उसी पदार्थकी बली देनेसे उस ग्रहकी शांति होती है ऐसेही सर्वत्र जानना) ये डल्हनका मत है, और वह मनुष्य पितरोंकी भक्ति करे ये लक्षण पितृग्रहपीडित मनुष्यके हैं ॥

सर्पग्रहग्रस्त उन्मादलक्षण ।

यस्तूर्व्यां प्रसरति सर्पवत्कदाचित्सृक्किण्यौ विलिहति जिह्वया तथैव । क्रोधालुर्मधुगुडदुग्धपायसेप्सुर्विज्ञेयो भवति भुजंगमेन जुष्टः ॥

अर्थ–जो मनुष्य सर्पके समान पृथ्वीपर लोटा करे, अर्थात् छातीके बल चले, तथा सर्पके समान अपने ओष्ठप्रांत (होठोंको) चाटा करे, सदा क्रोधी रहे, सहत, गुड, दूध और खीरकी इच्छा रहे वह सर्पग्रहग्रस्त जानना ॥

राक्षसजुष्ट उन्मादलक्षण ।

मांसासृग्विविधसुराविकारलिप्सुर्निर्लज्जो भृशमतिनिष्ठुरोऽति-

शूरः । क्रोधालुर्विपुलबलो निशाविहारो शौचद्विट् भवति च राक्षसैर्गृहीतः ॥

अर्थ-जो मनुष्य मांस, रुधिर, नानाप्रकारके मद्य पीनेकी इच्छा करे और निर्लज्ज अतिनिष्ठुर, अत्यन्त शूर, क्रोधी, बडा बली, रात्रिमें, डोलनेवाला, अपवित्र ऐसा होय वह राक्षस करके ग्रस्त जानना ॥

ब्रह्मराक्षस उन्मादलक्षण ।

देवविप्रगुरुद्वेषी वेदवेदांगनिंदकः ।
आशु पीडाकरोऽहिंस्रो ब्रह्मराक्षससेवितः ॥

अर्थ--देव, ब्राह्मण, गुरुसे द्वेषकर्त्ता, वेद और वेदके अंग (शिक्षा, कल्प व्याकरणादि) का निंदक, शीघ्र पीडाका कर्त्ता, हिंसा करे नहीं ये लक्षण ब्रह्मराक्षस सेवी मनुष्यके हैं ॥

पिशाचजन्य उन्माद लक्षण ।

उद्धस्तः कृशपरुषश्चिरप्रलापी दुर्गंधो भृशमशुचिस्तथाऽतिलोलः । बह्वाशी विजनवनांतरोपसेवी व्याचेष्टन्भ्रमति रुदन्पिशाचजुष्टः ॥

अर्थ-जो अपने हाथ ऊपरको करे, उद्धस्त्र, ऐसाभी पाठ है, उस जगह उद्धस्त्र नाम (नंगा हो जाय), तेजरहित, बहुत देरपर्यंत बकनेवाला, जिसके देहमें दुर्गंध आवे, अपवित्र, तथा अति चंचल कहिये सब अन्नपानमें इच्छा करनेवाला, खानेको मिले तो बहुत भोजन करे, एकांत वनांतरोंमें रहनेवाला, विरुद्ध चेष्टा करनेवाला, रुदन करता, डोलनेवाला ऐसा मनुष्य पिशाचग्रस्त जानना ॥

असाध्य लक्षण ।

स्थूलाक्षो द्रुतमटनः सफेनलेही निद्रालुः पतति च कंपते च योऽति । यश्चाद्रिद्विरदनगादिविच्युतः स्यात्सोऽसाध्यो भवति तथा त्रयोदशेऽब्दे ॥

अर्थ-नेत्र भयानक हो जाँय, शीघ्र चले, मुखमें जो झाग हैं उनको चाटनेवाला और जिसको निद्रा बहुत आवे, तथा गिर पडे, काँपे और जो पर्वत, हाथी, अथवा नग नाम वृक्ष आदिशब्दसे भीति, मन्दिर आदि जानने, इनसे गिरकर ग्रहग्रस्त होय, वह असाध्य

हैं, तैसे ही तेरहवें वर्षमें सर्व देवादि उन्मादी असाध्य जानने, (विदेह) ने विशेष लक्षण कहे हैं सो ग्रन्थान्तरोंसे जान लेने ॥

देवादीनामावेशसमयः ।

देवग्रहाः पौर्णमास्यामसुराः संध्ययोरपि ।
गन्धर्वाः प्रायशोऽष्टम्यां यक्षाश्च प्रतिपद्दिने ॥

अर्थ--देवग्रह पूर्णमासीको प्रवेश करते हैं, असुरग्रह सायंकालमें अपिशब्दसे पूर्णमासीकोभी प्रवेश करते हैं, गंधर्वग्रह बहुधा अष्टमीको, प्रायःशब्दसे संध्याको भी गंधर्वग्रह प्रवेश करते हैं, यक्ष ग्रह पडवाको ॥

पितृग्रहास्तथा दर्शे पंचम्यामपि चोरगाः ।
रक्षांसि रात्रौ पैशाचाश्चतुर्दश्यां विशंति हि ॥

अर्थ-पितृग्रह अमावास्याको सर्पग्रह पंचमीको अपिशब्दसे अमावास्याको भी प्रवेश करते हैं, राक्षस रात्रिमें और पिशाच चतुर्दशीको, मनुष्यके देहमें प्रवेश करते हैं, तिथि कहनेका यह प्रयोजन है कि जिस जिस तिथिको जो ग्रह मनुष्यको ग्रस्त करे उसको उसी उसी तिथिमें शांतिके निमित्त बलिदानादिक कराने चाहिये । * शंका क्यौंजी जब ग्रहग्रस्त मनुष्योंको उन्माद होता है तौ वह ग्रह मनुष्यकी देहमें प्रवेश करते क्यों नहीं दीखते हैं इस वास्ते कहते हैं ॥

दर्पणादीन्यथा छाया शीतोष्णं प्राणिनो यथा । स्वमणौ भास्करांशुश्च यथा देहं च देहधृक् ॥ विशंति न च दृश्यंते ग्रहास्तद्वच्छरीरिणाम् ॥

अर्थ-जैसे दर्पणमें मनुष्यका प्रतिबिंब पडे है, आदिशब्द इस जगह प्रकारवाची है, अर्थात् जल, तैल आदिमें जैसे छाया पडती है और सरदी, गरमी जैसे मनुष्योंके लगती है अथवा जैसे सूर्यकिरण सूर्यकान्तमणि (आतसीकाच) में प्रवेश करे है अथवा जैसे जीव देहमें प्रवेश करे है, इसी प्रकार सब ग्रह मनुष्यके शरीरमें प्रवेश करते हैं परंतु दीखते नहीं हैं, इस श्लोकके पोषक दृष्टांत जयट आचारीने बहुत दीने हैं, परंतु हमने ग्रन्थ बढनेके भयसे नहीं लिखे. इस उन्मादरोगमें सर्वत्र देवशब्दकरके देवतोंकेसे आचरणवाले देवतोंके अनुचर (दास) जानने चाहिये, क्योंकि देवतोंको मनुष्यके अपवित्र देहमें प्रवेश होना असंभव है सो (सुश्रुत) में लिखा हैं ॥

निशादिघृत ।

निशायुक्त्रिफलाश्यामावचासिद्धार्थहिंगुभिः । शिरीषकटाभि-

श्वेतामंजिष्ठाव्योषदारुभिः ॥ समैः कृतं घतं मूत्रे सिद्धमुन्माद-नाशनम् ॥

अर्थ—हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आँवला, सारिवा, वच, सपेद सरसों, हींग, सिरस, मालकांगनी, सपेद कचनार, मँजीठ, सोंठ, मिरच, पीपल और देवदारु ये सब समान भाग ले गोमूत्रमें डाल इसमें घी डालके सिद्ध करे यह निशादिघृत उन्मादरोगको नाश करे ॥

कल्याणघृत ।

विशाला त्रिफला कौन्ती देवदार्व्येलवालुकम् । स्थिरानंता हरिद्रे द्वे सारिवे द्वे प्रियंगुका॥नीलोत्पलैलामंजिष्ठा दंती दाडिमवल्क-लम् ॥ विडंगं पृश्निपर्णी च कुष्ठचंदनपद्मकैः ॥ तालीसं बृह-तीपत्रं मालत्याः कुसुमं नवम् । एतैः कर्षसमैः कल्कैर्विंशत्य-ष्टाभिरेव च ॥ चतुर्गुणं जलं दत्त्वा घृतप्रस्थं विपाचयेत् । अपस्मारे ज्वरे शोषे कासे मंदानले क्षये ॥ वातरक्ते प्रतिश्याये तृतीयकचतुर्थके । वातार्शे मूत्रकृच्छ्रे च विसर्पोपहतेषु च ॥ कंडूपांड्वामयोन्मादविषमेहगदेषु च । भूतोपहतचित्तानां गंड-दानामचेतसाम् ॥ शस्तं स्त्रीणां च वंध्यानां धन्यमायुर्बलप्र-दम् । अलक्ष्मीपापरक्षोघ्नं सर्वग्रहनिवारणम् ॥ कल्याणकमिदं सर्पिः श्रेष्ठं पुंस्त्वप्रदं नृणाम् ॥

अर्थ--इन्द्रायन, हरड, बहेडा, आँवला, रेणुकबीज, देवदारु, एलवालुक, सालपर्णी, धमासा, हरदी, सपेद कोयल, कोयल, फूलप्रियंगु, नीलाकमल, इलायची, मंजीठ, दंतीकी जड, अनारकी छाल, वायविडंग, पृष्ठपर्णी, कूठ, चंदन, पद्माख, तालीसपत्र, कटेरी, पत्रज और चमेलीके ताजे फूल ये प्रत्येक तोले२ लेवे सबका कल्क कर और कल्कसे चौगुना जल डाल, उसमें ६४ तोले घी डालके औटावे. जब सब रसादिक जलके घृतमात्र शेष रहे तब उतारले. यह अपस्मार, ज्वर, शोष, खांसी, मंदाग्नि, क्षय, वातरक्त, पीनस, तृतीयक, चातुर्थिकज्वर, वादीकी बवासीर, मूत्रकृच्छ्र, विसर्प, खुजली, पांडुरोग, उन्माद, विष, प्रमेह, भूतोन्माद इत्यादि रोगोंका नाशक तथा वंध्या स्त्रीको संतानका देनेवाला, आयुष्य और बलको देवे, तथा दरिद्र, पाप और राक्षसादि सर्व ग्रह इनको दूर करे इसको कल्याणघृत कहते हैं यह बहुत श्रेष्ठ है पुरुषार्थ देता है ॥

हिंग्वादिघृत।

हिंगुसौवर्चलव्योषद्विपलांशैर्घृतं शृतम्।
चतुर्गुणे गवां क्षीरे सिद्धमुन्मादनाशनम्॥

अर्थ–हींग, संचरनिमक और त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल) सब मिलायके ८ तोले लेवे और घी तथा घीसे चौगुना गौका दूध लेवे इन सबको एकत्र करके घी सिद्ध करे यह हिंग्वादिघृत उन्मादको दूर करे॥

सारस्वतघृत।

त्रिफला लक्ष्मणानंता समंगा सारिवा वचा। ब्राह्मी पाठा बृहतिका द्विः स्थिरा द्विः पुनर्नवा॥ सहदेवी सूर्यवल्ली वयस्था गिरिकर्णिका। तोयकुंभे पचेदेतत्पलांशं पादशेषिते॥ न तं कौंति वचा कुष्ठं कृष्णा सैंधवसर्षपम्। नीरुक् सवर्णवत्सायाः संसिद्धं पयसा च गोः॥ पुष्ययोगे घृतप्रस्थं सुस्नेहकलशे स्थितम्। पानाभ्यंजनतो मेधास्मृत्यायुःपुष्टिवर्धनम्॥ रक्षोघ्नं च विषघ्नं च सारस्वतमिदं घृतम्॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आँवला, लक्ष्मणा (सपेद कटेरी), धमासा, मंजीठ, सारिवा, वच, ब्राह्मी, पाढ, छोटी कटेरी, बडी कटेरी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, सपेद पुनर्नवा, लाल पुनर्नवा, सहदेई, सूर्यवल्ली, हरड, सपेद कोयल इन सबको चार २ तोले लेवे १ घडे जलमें काढा करे जब चतुर्थांश रहे तब उतार लेवे. इसको कपडेमें छान लेवे. फिर छड, रेणुक, वच, कूठ, पीपल, सैंधा निमक, सरसों और रोगरहित तथा जीवित बछडेवाली एक वर्ण गौका दूध डालके उसमें ६४ तोले घी डालके पुष्य नक्षत्रमें इस घीको बनावे और चिकने पात्रमें भरके रख देवे. फिर इसको पीवे अथवा लगावे तो वाणी, बुद्धि, स्मृति, आयुष्य और पुष्टि इनको बढावे. तथा राक्षसबाधा और विषबाधा इनको नाश करे इसको सारस्वत घृत ऐसे कहते हैं॥

उन्मादगजकेसरीरस।

सूतगंधं शिलातुल्यं स्वर्णबीजं विचूर्ण्य च। भावयेदुग्रगंधायाः क्वाथे मुनिदिनं पृथक्॥ रास्नाक्वाथेन सप्तैव भावयित्वा विचूर्णयेत्। रसः संजायते नूनमुन्मादगजकेसरी॥ अस्य माषः

सर्सापिष्को लीढो हंति हठाद्गदम् । उन्मादाख्यमपस्मारं भूतो-न्मादमपि ज्वरम् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, मनसिल और इन सबकी बराबर धतूरेके बीज इन सबको एकत्र खरल करके वच और रास्ना इनके काढेकी पृथक् २ सात २ भावना देवे फिर सुखायके चूर्ण कर लेवे तो उन्मादगजकेसरी नामक रस बने इसको घीमें मिलायके १ मासेके अनुमान चाटे तो घोर उन्माद, अपस्मार, भूतोन्माद और ज्वर इनको हठ-पूर्वक दूर करे ॥

उन्मादे पर्पटीं दद्यात्सा चाविपयसान्विताम् ।
अपस्मामारेऽपि तत्प्रोक्तमेतत्पाराशरेण च ॥

अर्थ-उन्मादरोग पर पर्पटीरसके बकरीके दूधमें देवे तो मृगी और उन्माद-रोग (बावलापना) नाश होवे ॥

विगतोन्मादलक्षण ।

प्रसादश्चेंद्रियार्थानां बुद्ध्यात्ममनसामपि । धातूनां प्रकृतिस्थत्वं विगतोन्मादलक्षणम् ॥ यच्चोपदेशतः किंचिदपस्मारे चिकित्सि-तम् । उन्मादे तच्च कर्तव्यं दोषसामान्यदूष्ययोः ॥

अर्थ-अपस्मार और उन्माद इन दोनोंके दोष और दूष्य एकसे हैं इस वास्ते अपस्मारको जितने यत्न कहे हैं वह सब उन्मादरोग पर करने चाहिये ॥

भूतोन्मादपर अंजन व नावन ।

शिरीषपुष्पं लशुनं शुंठी सिद्धार्थकं वचा । मंजिष्ठरजनी कृष्णा बस्तमूत्रेण पेषयेत् ॥ वटी छायासु शुष्का या सा हिता ना-वनांजने ॥

अर्थ-सिरसके फूल, लहसन, सोंठ, सपेद सरसों, वच, मँजीठ, हलदी और पीपर इन सबको बकरेके मूत्रमें पीसके गोली बनावे और छायामें सुखाले इसको नस्य अथवा अंजन रसविषयमें योजना करे तो हितकारी होवे ॥

भूतभैरवरस ।

रसः सतालः सशिलः सलोहः स्रोतोंजनं सार्कमिदं हि गंधम् । पिष्ट्वाजमूत्रेण समं समस्ताद्देयो द्विभागोऽथ बलिः पचेच्च ॥ लो-हेक्षणं हंतिघृतेन माषोऽपस्मारमस्योन्मदमानसत्वम् । पिबेदनु-

त्र्यूषणहिंगुयुक्तं सर्पिर्नृमूत्रं रुचकेन सार्द्धम् ॥ भूतोन्मादेषु सर्वेषु रसोऽयं भूतभैरवः । स्वर्णजैः पंचभिर्बीजैर्देयः सर्पिर्विमिश्रितः॥

अर्थ–पारा, हरताल, मनासिल, लोहेका भस्म, सुरमा, तामेकी भस्म और गंधक इन सबको समान भाग लेके बकरेके मूत्रमें खरल करे और सबसे दूनी गंधक लोहेके पात्रमें डालके और इन सब औषधोंको मिलायके अग्निपर रखके थोडी देर पचावे फिर एक मासे भर ले घीके साथ खाय तो अपस्मार और उन्माद इनको नाश करे यह औषध सेवन करके त्रिकुटा और हींग इनका चूर्ण घीमें मिलायके खाय अथवा मनुष्यके मूत्रमें संचरनिमक डालके पिलावे. यह सर्वभूतोन्मादोंपर भूतभैरवरस धतूरेके पांच बीजोंका चूर्ण और घी इनके साथ खाय ॥

भूतरावघृत ।

फलत्रिकव्योषकलिंगजोग्रा निशाद्वयैला चविका सुराह्वा । तुत्थं प्रियंग्वामपकालमेषी मनःशिलापद्मककंटकार्याः ॥ यवाह्वयष्टीकटुकुंकमांभोरिष्टाह्वसिद्धार्थपुगच्छदानि । रसांजनं ग्रंथिमधूकसारं बला रसोनाह्वनतानि चूर्णात् ॥ एषामजामूत्रदधिप्रयुक्तात्संजातमाज्यं ननु भूतरावम् । लोकेषु नाम्ना विदितं समस्तैर्वैद्यैः समुक्तं जगतां हिताय ॥ पानेन नस्येन च मर्दनेनानेकोग्रभूतग्रहजातिपीडाम् । निहंति रक्षांसि च डाकिनीनां मंत्रा यथा तारकनामधेयम् ॥

अर्थ–हरड,बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, इन्द्रजौ, वच, हलदी, दारुहलदी, इलायची, चविका, सुराह्व (देवदारु), लीलाथोथा, फूलप्रियंगु, कूठ, मँजीठ, मनसिल, पद्माख, कटेरी, धमासा, मुलहठी, परवल, केशर, नेत्रबाला, रीठा, सपेद सरसों, रसोंत, पीपरामूल, महुएके फूल, कत्था, वरियारा, लहसन और तगर इनके चूर्ण और बकरीका मूत्र और दही इनको एकत्र कर तथा इसमें घी मिलाके पाक करे. जब सिद्ध हो जावे तब इसे भोजन नस्य और मर्दन इत्यादि प्रयोगोंमें देवे तो भूत ग्रहजाति, राक्षस और डाकिनी इनकी पीडाको नाश करे यह वैद्योंने संसारके कल्याण करनेको प्रसिद्ध करा है और यह अनुभव करा हुआ है ॥

धूप ।

ऋक्षजंबुकरोमाणि शल्लकीलसमं तथा । हिंगु मूत्रं च बस्तस्य धूपमस्य प्रयोजयेत् ॥ धूपेन शाम्यति क्षिप्रं बलवानपि यो ग्रहः ॥

अर्थ-रीछ, स्यार इनके बाल, सेहके कांटे, हींग और बकरेका मूत्र इनकी धूनीसे तत्कल बलवान्भी ग्रह शांत होवे ॥

ये च स्युर्भुवि गुह्यकाश्च प्रमथास्तेषां समाराधनम् ।
देवब्राह्मणपूजनं च शमयेदुन्मादमागंतुकम् ॥

अर्थ-इस पृथ्वीमें गुह्यक, प्रमथ इत्यादिकोंके आराधन तथा देव, ब्राह्मण इनका पूजन करे तो उनका आगंतुक उन्मादकी शांति शीघ्र होवे ॥

शिरीषनक्तमालानां बीजानि मधुसर्पिषा ।
भक्ष्याश्च सर्वे सर्वेषां सामान्यो विधिरुच्यते ॥

अर्थ-सिरसके बीज और कंजाके बीज इनको सहत और घीके साथ खाय और भक्ष्य पदार्थ संपूर्ण आरोग्य करते हैं यह सामान्य विधि है ॥

भूतोन्मादचिकित्साशास्त्रार्थ ।

बुद्ध्वा दोषं वयः सात्म्यं देशं कालं बलाबलम् ।
चिकित्सितमिदं कुर्यादुन्मादे भूतदोषजे ॥

अर्थ-वैद्यको उचित है कि भूतोन्माद रोगीका दोष अवस्था और प्रकृतिको माने ऐसे देश, काल, बल और अशक्तता इनको विचारके भूतोन्मादकी चिकित्सा करे ॥

देवर्षिपितृगंधर्वैरुन्मत्तेषु च बुद्धिमान् । त्यजेन्नस्यांजनादीनि
तीक्ष्णानि क्रूरकर्म च ॥ सर्पिः पानं सूर्यजपहोममंत्रादिरिष्यते ॥

अर्थ-देव, ऋषि, पितर और गंधर्व इनकी बाधासे उत्पन्न हुए मनुष्यको नस्य और अंजन इत्यादि क्रूर कर्म कदाचित् न करे. उसको घृतपान करावे तथा सूर्यका जप, होम गायत्रीमंत्र इत्यादिक कर्म करे ॥

पूजाबल्युपहारशांतिविषयो होमेष्टिमंत्रक्रियादानं स्वस्त्ययनं
व्रतादिनियमः सम्यग् जपो मंगलम् । प्रायश्चित्तविधानमंजलि-
रथो रत्नौषधीधारणं भूतानामधिपस्य विष्टरपतेर्गौरीपतेरर्चनम् ॥

अर्थ-पूजा बलि (भेंट), नैवेद्य शांतिनिमित्त होम, मंत्र, दान, पुण्याहवाचन, व्रत, नियम, जप, मंगल, प्रायश्चित्त, नमस्कार, मणि और औषधी इनका धारण विष्णु और शिवका पूजन इत्यादि भूतोन्माद पर उपचार करे ॥

महापैशाचिकघृत।

जटिला पूतना केशी चारटी मर्कटी वचा। त्रायमाणा जया वीरा चोरकं कटुरोहिणी॥ कायस्था सूकरी छत्रा सातिपत्रा पलंकषा। महापुरुषदंता च वयस्था नाकुलीद्वयम्॥ कटंभरा वृश्चिकाली स्थिरा चैतैर्घृतं पचेत्॥ तत्तु चातुर्थिकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम्। महापैशाचिकं नाम घृतमेतद्यथामृतम्। बुद्धिमेधास्मृतिकरं बालानां चांगवर्धनम्॥

अर्थ–जटामासी, सुगंध जटामांसी, छोटी नीली, कौंछके बीज, वच, त्रायमाण, सेंती, भूयआवला, मडोता, कुटकी, हरड, बाराहकंद, सोंफ, सालवृक्ष, गोखरू, बडी सतावर, ब्राह्मी, दो प्रकारकी नाकुली, कटंभरा, छोटी किंवाच और सालपर्णी इन सबके कल्कमें घी डालके सिद्ध करे यह चातुर्थिक ज्वर, उन्माद, ग्रहबाधा और अपस्मार इनको नाश करे यह महापैशाचघृत अमृतके समान है यह बुद्धि, मति और स्मृतिको उत्पन्न करे तथा बालकोंके देहको पुष्ट करे है॥

कल्याणकघृत।

कल्याणकं प्रयुंजीत महद्वा चोत्तमं घृतम्।
तैलं नारायणं वापि बृहन्नारायणं तथा॥

अर्थ–कल्याण घृत अथवा नारायण तैल अथवा बृहन्नारायण तैल ये उन्मादरोग पर देने चाहिये॥

उन्मादपथ्य।

गोधूममुद्गारुणशालयश्च धारोष्णदुग्धं शतधौतसर्पिः। घृतं नवीनं च पुरातनं च कूर्मामिषं धन्वरसा रसाला॥ पुराणकूष्मांडफलं पटोलं ब्राह्मीदलं वास्तुकतंदुलीयम्। द्राक्षा कपित्थं पनसं च वैद्यैर्विधेयमुन्मादगदेषु पथ्यम्॥

अर्थ–गेहूं, मूंग, लाल चावल, धारोष्ण अर्थात् तत्कालका दुहा हुआ दूध, सौ बार धुला हुआ घी, नवीन घी अथवा पुराना घी, कछुएका मांस, जंगली जीवोंका मांसरस, सिखरन, पुराना पेठा, पटोलपत्र, ब्राह्मीके पत्ते, बथुएका साग, चौलाईका साग, दाख, कैथ, कटहर, सब फल वैद्योंने उन्मादरोगोंमें पथ्य कहे हैं॥

उन्माद अपथ्य ।

मद्यं विरुद्धाशनमुष्णभोजनं निद्राक्षुधातृट्कृतवेगधारणम् ।
तिक्तानि तीक्ष्णानि भिषक्समाशेदुन्मादरोगेषु विगर्हितानि ॥

अर्थ-मद्य, विरुद्ध पदार्थ भोजन, उष्ण पदार्थ भोजन, निद्रा, भूँख, प्यास इनके वेगोंको रोकना, चरपरे पदार्थ सब उन्मादरोगमें वर्जित कहे हैं ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे उन्मादरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

अपस्मारकर्मविपाकः ।

गुरौ स्वामिनि वस्ते यः प्रतिकूलं समाचरेत् ॥
सोपस्मारी भवेत्तत्र कुर्याच्चांद्रायणं नरः ॥

अर्थ-जो प्राणी गुरु और स्वामी इनके समीप रहकर इनके प्रतिकूल कार्य करे अर्थात् इनकी आज्ञा पालन न करे किंतु इनका अहित करे है उसको अपस्मार (मृगी) रोग होता है इसके दूर करनेको चांद्रायण व्रत करे ॥

ब्राह्मणश्वासरोधेन ह्यपस्मारी भवेन्नरः ।
वक्ष्ये तस्य प्रतीकारं दानहोमक्रियाविधिः ॥

अर्थ-जो प्राणी ब्राह्मणकी श्वास रोकता है वह अपस्मार रोगी होता है उसके दूर करनेको यत्न और दान होम आदि क्रिया कहता हूं ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय ।

शनिभूसुतदिननाथ निधनस्था यस्य जन्मकाले स्युः । नानाव्याधिवधाद्यैः पीडां चापस्मारसंभवां तस्य ॥ अष्टमस्थानस्थशनिमंगलसूर्यजनितापस्मारशांतये ग्रहप्रीतये पूर्वोक्तमेव सकलं जपादि कुर्यात् ॥

अर्थ-जिसके जन्मकालमें शनि, मंगल और सूर्य ये अष्टमस्थानमें पडे हों तो उसके अनेक प्रकारकी व्याधि किंवा अपस्मार इनमेंसे कोई पीडा हो उस प्राणीको अष्टमस्थानस्थ शनि, मंगल और सूर्य इनसे उत्पन्न हुए अपस्मारकी शांति करनेको तथा ग्रहोंकी प्रसन्नताके अर्थ पूर्वोक्त जपादिक सर्व उपचार करे ॥

अपस्मारनिदान ।

तमःप्रवेशः संरंभो दोषोद्रेकहतस्मृतिः ।
अपस्मार इति ज्ञेयो गदो घोरश्चतुर्विधः ॥

अर्थ–अन्धकारमें प्रवेश करनेके समान ज्ञानका नाश होना, नेत्र ठेढे बांके फिरें, दोषोंके बढनेसे ज्ञानका नष्ट होना, ये लक्षण जिस रोगमें होंय ऐसा यह भयंकर (अपस्मार) रोग चार प्रकारका है इसको लौकिकमें मिरगी ऐसे कहते हैं ॥

पूर्वरूप ।

हृत्कंपः शून्यता स्वेदो ध्यानं मूर्च्छा प्रमूढता ।
निद्रानाशश्च तस्मिंस्तु अपस्मारे भविष्यति ॥

अर्थ–जब अपस्मार होनेवाला होय है तब ये लक्षण होते हैं हृदय कांपे और शून्य पड जाय (कुछ सूझे नहीं), चिंता, मूर्च्छा, पसीना आवे, ध्यानं लग जाय, मूर्च्छा कहिये मनका मोह और प्रमूढता कहिये इन्द्रियका मोह होय, निद्रा जाती रहे ॥

वातजन्य अपस्मार ।

कंपते प्रदशेद्दंतान्फेनोद्वामी श्वसत्यपि ।
परुषारुणकृष्णानि पश्येद्रूपाणि चानिलात् ॥

अर्थ–वातके अपस्मारसे रोगी कांपे, दांतोंको चबावे, मुखसे झाग गेरे और श्वास भरे तथा कर्कश अरुणवर्ण और काले वर्ण मनुष्योंको देखे अर्थात् कोई नीलवर्णका मनुष्य मेरे पास दौडा आता है. इसी प्रकार पित्तसे पीले वर्णका पुरुष दौडा आता है और कफमें सपेद रंगका पुरुष मेरे सामने दौडा आता है ऐसे जानना ॥

पैत्तिक अपस्मार ।

पीतफेनांगवक्त्राक्षः पीतासृग्रूपदर्शनः ।
सतृष्णोष्मानिलव्याप्तलोकदर्शी च पैत्तिकः ॥

अर्थ–पित्तकी मिरगीवालेके झाग, देहमुख और नेत्र पीले होते हैं और वह पीले रुधिरके रंगकीसी सब वस्तु देखे, प्यासयुक्त और गरमीके साथ अग्निसे व्याप्त भया ऐसा सब जगत्को देखे ॥

कफापस्मार ।

शुक्ले फेनांगवक्त्राक्षः शीतहृष्टांगजो गुरुः ।
पश्येच्छुक्लानि रूपाणि मुच्यते श्लैष्मिकाश्चिरात् ॥

अर्थ–कफकी मृगीवालेके झाग, अंग, मुख और नेत्र सपेद होंय, देह शीतल होय, तथा देहके रोमांच खडे रहें, भारी होय और सब पदार्थ सपेद दीखें यह अपस्मार (मिरगी) रोग देरमें छोडे इससे यह सूचना करी कि वातपित्तकी मृगी जलदी रोगीको छोड देती है ॥

सन्निपातापस्मारनिदान ।

सर्वैरेतैः समस्तैश्च लिंगैर्ज्ञेयस्त्रिदोषजः ।
अपस्मारः स चासाध्यो क्षीणश्चानश्चतश्च यः ॥

अर्थ–जिसमें तीनों दोषोंके लक्षण मिलते हों वो त्रिदोषज अपस्मार जानना यह असाध्य है और जो क्षीण पुरुषके होय वहभी असाध्य है तथा पुराना पड गया होय वहभी अपस्मार (मिरगी) रोग असाध्य है ॥

असाध्य लक्षण ।

प्रस्फुरंतं च बहुशः क्षीणं प्रचलितभ्रुवम् ।
नेत्राभ्यां च विकुर्वाणमपस्मारो विनाशयेत् ॥

अर्थ–वारंवार कंपयुक्त होय, क्षीण हो गया हो, भ्रुकुटी (भौंह) को चलानेवाला और नेत्र टेढे बांके करनेवाला ऐसा अपस्मारी रोगी जीवे नहीं ॥

अपस्मारका कालनियम कहते हैं ।

पक्षाद्वा द्वादशाहाद्वा मासाद्वा कुपिता मलाः ।
अपस्माराय कुर्वन्ति वेगं किंचिदथोत्तरम् ॥

अर्थ–कोपको प्राप्त भये जो दोष सो पंद्रहवें दिन अथवा बारहवें दिन अथवा महीनेभरमें मिरगी रोग प्रगट करे, तिनमें पैत्तिक १५ दिन, वातिक १२ दिन और श्लैष्मिक ३० दिनमें आती है. इस जगह बारहवें दिनके पिछाडी पक्ष कहना ठीक था फिर पहिले पक्ष धरनेका यह प्रयोजन है कि अधिक काल करकेही दोष वेग करते हैं यह कहा. 'किंचिदथोत्तरम्' इस पदसे यह सूचना करी है कि जिस जिस दोषका जो जो काल कहा है उससे पहिलेभी दोषोंके तारतम्यसे मिरगी रोग होय है ऐसे जानना. शंका–वेग उत्पन्न करे अपस्मारके प्रगट कर्त्ता दोष देहमें सदा रहते हैं, फिर वह सर्वकालमें वेग क्यों नहीं करते द्वादशादि दिनमें क्यों करते हैं ? इस विषयमें दृष्टांतरूप समाधान कहते हैं ॥

देवे वर्षत्यपि यथा भूमौ बीजानि कानिचित् ।
शरदि प्रतिरोहंति तथा व्याधिसमुच्छ्रयः ॥

अर्थ--जैसे चातुर्मासमें इन्द्र वर्षे भी है परंतु कोई जौ गेहूं चना आदि बीज शरदृतुमें ही उगते हैं तैसेही सर्व रोगके बीजरूप वातादिक दोष कदाचित् किसी अपस्मारादि व्याधिविशेषके निदानादिकका संगम होनेसे उस रोगको प्रगट करते हैं अथवा इसका मुख्य प्रयोजन यह है कि बीजके अंकुर फूटनेमें तेज वायु, पृथ्वी, जल ये सहायक भी हैं परंतु वे सब कालविशेषकी प्रतीक्षा (इच्छा) करते हैं. अंकुर आनेको काल ही सहाय चाहिये अर्थात् जिस कालमें जिस अंकुरका बीज आता है वह उसी कालमें आवेगा बीचमें कभी नहीं आनेवाला यही न्याय चातुर्थिक ज्वरादिकोंमें भी जानना ॥

मधुकघृत ।

मधूकद्विपले कल्के द्रोणे चामलकीरसे ।
तस्मिन् सिद्धं घृतप्रस्थं पित्तापस्मारभेषजम् ॥

अर्थ--आठ तोले मुलहठीका चूर्ण और १०२४ तोले आंवलेका रस इसमें ६४ तोले घृतको मिलाके पक्क करे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके छान लेवे. यह पित्तके अपस्मार रोगको नाश करे ॥

काशघृत ।

काशक्षीरेक्षुरसयोः काश्मर्यष्टगुणे रसे । कार्षिकैर्जीवनीयैश्च सर्पिः-
प्रस्थं विपाचयेत् ॥ वातपित्तोद्भवं क्षिप्रमपस्मारं नियच्छति ॥

अर्थ--काससंज्ञक तृणका काढा और ईखका रस इनसे अठगुना कंभारीका रस ले इनमें जीवनीयगणोक्त प्रत्येक औषधका चूर्ण २ तोले भर मिलावे. फिर इसमें ६४ तोले घी डालके औटावे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके सेवन करे. यह वातापित्तसे प्रगट हुए अपस्मार रोगको तत्काल नाश करे ॥

कफअपस्मारपर वचाद्यघृत ।

वचाशम्याककैडर्यत्र्यस्थाहिंगुचोरकैः ।
सिद्धं पलं कषायुक्तं वातश्लेष्मात्मिकं घृतम् ॥

अर्थ--वच, अमलतास, कैडर्य (कंजाका भेद), आंवला, हींग, गठोना और और छोटे गोखरू इनके कल्कके साथ सिद्ध करा हुआ घी अपस्मार नाशक है ॥

मधुवचायोग ।

यः खादेत्क्षीरभक्ताशी माक्षिकेन वचारजः ।
अपस्मारं महाघोरं सुचिरोत्थं जयेद्ध्रुवम् ॥

अर्थ-दूधभातका भोजन करनेवाला मनुष्य यदि वचके चूर्णको सहतमें मिलायके चाटे तो बहुत दिनका घोर अपस्मार निश्चय दूर हो परंतु वचको देखके ले इधर मथुरा आदि देशमें नहीं मिलती. इसमें सुगंध आती है और रंगमें कुछ२काली होती है ॥

मुस्तकमूलयोग ।

उत्तरदिग्गतमुस्तकमूलं बुद्ध्या समुद्धृतं पेष्य ।
पीतं पयसा हन्यादपस्मृतिं गोः सवर्णवत्सायाः ॥

अर्थ-नागरमोथेके उत्तरके तरफकी जडको बछेरेवाली और एकरंगकी गौके दूधमें पीसके पीवे तो अपस्मार (मृगी) का नाश करे ॥

कूष्मांडकादियोग

कूष्मांडकगिरोत्थेन रसेन परिपेषितम्
अपस्मारविनाशाय यष्टयाह्वं स पिबेत्र्यहम् ॥

अर्थ-कुह्मडेके गीरके रसमें जेठीमध घिसके पीवे तो तीन दिनमें अपस्मारका नाश होता है ॥

भैरवरसायन ।

वचामृताव्योषमधूकसाररुद्राक्षसिंधूद्भवबार्हतानि । फलं समुद्रस्य रसोनकल्कं ध्मातं हि नासापुटमध्यदेशे ॥ अपस्मृतिश्लेष्ममरुच्छिरोरुक्प्रलापतंद्राभ्रमजाड्यमोहान् । ससंनिपातश्रुतिक्षाक्षिभंगान् सपीनसं हंति हलीमकं च ॥ रसायनं भैरवनामधेयं ज्ञातं विचारात्कविविट्ठलेन ॥

अर्थ-वच, गिलोय, सोंठ, मिरच, पीपल, महुएका गोंद, रुद्राक्ष, सैंधानिमक, कटेरीके फल, समुद्रफल और लहसन इन सबको पीसके कल्क कर लेवे. इसको नाकमें टपकावे तो अपस्मार रोग नष्ट होय तथा वादी, कफ, मस्तकपीडा, प्रलाप, तंद्रा, भ्रम, जडता, मोह, सन्निपात, कर्णरोग, नेत्रभंग, पीनस और हलीमक इन सबको नास करे इसको भैरवरसायन ऐसे कहते हैं उसको विट्ठलवैद्यने विचार करके जाना है ॥

स्मृतिसागररस ।

रसगंधकतालानां सशिलाताम्रभस्मनाम् । शुद्धानां मूर्च्छितानां च चूर्णं भाव्यं वचामृतैः ॥ एकविंशतिधा पश्चाद्ब्राह्मी

वारा तथैव च। कटभीबीजतैलेन भावयेदेकवारकम् ॥ स्मृतिसागरनामायं रसोऽपस्मारनाशनः ॥ सर्पिषा माषमात्रोऽयं भुक्तो हन्यादपस्मृतिम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, हरताल, मनसिल और तामेकी भस्म ये शुद्ध मूर्च्छित कर इनके चूर्णमें वच और ब्राह्मी इन प्रत्येककी इक्कीस २ भावना देवे. फिर मालकांगनीके तेलकी एक भावना देय तो यह स्मृतिसागर नामक रस अपस्मार नाशक बने इसको १ मासेके अनुमान घीके साथ नित्य भक्षण करे तो अपस्मार रोग निवारण होवे ॥

पानियकल्याणघृत अपस्मारादिकों पर।

त्रिफला द्वे निशे कौंती सारिवे द्वे प्रियंगुका। शालपर्णी पृष्ठपर्णी देवदार्व्येलवालुकम् ॥ नतं विशाला दंती च दाडिमं नागकेशरम्। नीलोत्पलैलामंजिष्ठा विडंगं कुष्ठपद्मकम् ॥ जातीपुष्पं चंदनं च तालीसं बृहती तथा। एतैः कर्षसमैः कल्कैर्जलं दत्त्वा चतुर्गुणम् ॥ घृतप्रस्थं पचेद्धीमानपस्मारे ज्वरे क्षये ॥ उन्म दे वातरक्ते च कासे मंदानले तथा। प्रतिश्यायकटीशूले तृतीयकचतुर्थके ॥ मूत्रकृच्छ्रे विसर्पे च कंडूपांड्वामये तथा ॥ विषद्वये प्रमेहेषु सर्वथैवोपयुज्यते ॥ वंध्यानां पुत्रदं भूतयक्षरक्षोहरं स्मृतम् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आँवला, हलदी, दारुहलदी, रेणुकबीज, सारिवा, कालीसर, फूल प्रियंगु, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, देवदारु, एलवालुक, तगर, इन्द्रायनकी जड, अनारकी छाल, दंतीकी जड, नागकेशर, नीला कमल, इलायची, मँजीठ, वायविडंग, कूठ, पद्माक, चमेलीके फूल, चंदन, तालीसपत्र और कटेरी ये प्रत्येक एक एक तोले लेकर कल्क करे और कल्कसे चौगुणा जल ले तथा घी ६४ तोले डाले सबको एकत्र कर मंदाग्निसे पचावे. जब जल जर जावे केवल घृत रहे तब उतार ले. वह मृगी, ज्वर, क्षई, उन्माद, वातरक्त, खांसी, मंदाग्नि, पीनस, कमरका शूल, तृतीय और चातुर्थिक ज्वर, मूत्रकृच्छ्र, विसर्प, खुजली, पांडुरोग, सर्पादिक जगम विष और बच्छनागादिक स्थावर विष और प्रमेह ये सब रोग दूर हों. वंध्यास्त्रियोंको संतान देवे तथा भूत, यक्ष, राक्षसके दोषको हरण करे है ॥

शंखपुष्पीघृत।

शंखपुष्पीवचाकुष्ठैः सिद्धं ब्राह्मीरसे घृतम्।
पुराणं हंत्यपस्मारं मेध्यमुन्मादनाशनम् ॥

अर्थ-संखाहूली, वच, कूठ और ब्राह्मीका रस इनके कल्कमें घृत मिलायके बनावे. यह पुराने अपस्मारको नष्ट करे बुद्धि बढावे और उन्माद रोगको दूर करे ॥

सैंधवादि घृत ।

घृतसैंधवहिंगुभ्यो कर्षैर्वातैश्चतुर्गुणैः ।
मूत्रैः सिद्धमपस्मारं हृद्ग्राहग्रामनाशनम् ॥

अर्थ-घृत, सैंधा निमक और हींग ये एक एक तोला और गोमूत्र बारह तोले ले सबको एकत्र कर सिद्ध करे जब मूत्र जल जावे तब उतारले. यह घी अपस्मार रोग और हृदय रोग इनका नाश करे ॥

ब्राह्मीघृत ।

ब्राह्मीरसे वचाकुष्ठशंखपुष्पीभिरेव च ॥
पक्कं पुरातनं सर्पिरपस्मारहरं घृतम् ॥

अर्थ-ब्राह्मीके रसमें वच, कूठ, संखाहूली, पुराना घी मिलायके सिद्ध करे. यह घी अपस्माररोगको हरण करता है ॥

कूष्मांडघृत ।

कूष्मांडकरसे सर्पिरष्टादशगुणे पचेत् ।
यष्ट्याह्वकल्कैस्तत्पानादपस्मारविनाशनम् ॥

अर्थ-एक भाग घी और अठारह भाग पेठेका रस इस प्रकार लेकर अग्निपर पक्का करे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके मुलहठीके चूर्णसे भक्षण करे तो अपस्मारको नाश करे ॥

पंचगव्यघृत ।

गोशकृद्रसदध्यम्लक्षीरमूत्रैः समं घृतम् ।
सिद्धं चातुर्थिकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥

अर्थ-गौके गोबरका पानी, दही खट्टा, दूध और गौका मूत्र तथा इन सबकी बराबर गौका घी लेवे सबको मिलायके अग्निपर घी सिद्ध करे तो यह चातुर्थिक ज्वर, उन्माद, ग्रह और अपस्मार रोग इनको दूर करे ॥

अपस्मारनस्य ।

अरण्यत्रपुसीचूर्णं नस्येनापस्मृतिं जयेत् ॥

अर्थ-वनके खीरेके चूर्णकी नस्य लेनेसे मृगीरोग दूर होवे ॥

निर्गुंडीभवमक्रूरं नावनांजनयोगतः ।
उपैति सहसा नाशमपस्मारो न संशयः ॥

अर्थ-निर्गुंडीके रसमें अखरोटको पीस नस्य अथवा अंजन करनेसे तत्काल अपस्माररोगको नाश करे इसमें संशय नहीं है ॥

श्वशृगालबिडालानां कपिलानां गवामपि ।
पित्तातिनस्यतो हन्युरपस्मारं पृथक् पृथक् ॥

अर्थ-कुत्ता, स्यार, बिलाव, कपिला गौ इन प्रत्येकके पित्तको पीसके नस्य देवे तो अपस्मार नाश होय परंतु इन सबको एक न करे ॥

अंजन ।

पुष्योद्धृतं शुनः पित्तमपस्मारघ्नमंजनम् ।
तदेव सर्पिषा युक्तं धूपनं परमं हितम् ॥

अर्थ-पुष्यनक्षत्रमें कुत्तेका पित्त निकालके अंजन करे अथवा घी मिलायके धूनी देवे तो अपस्मारको नाश करे ॥

मनोह्वा तार्क्ष्यकं चैव शकृत्पारावतस्य च ।
अंजनं हंत्यपस्मारमुन्मादं च विशेषतः ॥

अर्थ-मनसिल, रसौंत और कबूतरकी वीट इनका अंजन अपस्मार और उन्मादरोग इनको नाश करे ॥

यष्टिहिंगुवचावज्रीशिरीषलशुनामयैः ।
साजमूत्रैरपस्मारे सोन्मादे नावनांजने ॥

अर्थ-मुलहठी, हींग, वच, थूहरका दूध, सिरसके बीज, लहसन और कूठ इनको बकरेके मूत्रमें पीस अंजन और नस्य देवे तो अपस्मार और उन्मादरोग दूर हो ॥

करंजदारुसिद्धार्थकठभी रामठं वचा । समंगा त्रिफला व्योषाप्र-
यंगुश्च समांशकः ॥ बस्तमूत्रेण संपिष्टा नस्यपानांजनादिषु ।
योज्यो योगोऽयमुन्मादेऽपस्मारे भूतरोगिषु ॥

अर्थ-कंजा, देवदारु, सपद सरसों, मालकांगनी, हींग, वच, मँजीठ, हरड, बहेडा, आँवला, सोंठ, मिरच, पीपल, फूलप्रियुंग ये सब समान भाग लेवे. सबको बकरेके मूत्रमें पीसके पीवे तो वा नस्य करे अथवा अंजन करे तो ग्रहयोग, अपस्मार, उन्माद तथा भूतोन्माद इन पर देवे ॥

नकुलोलूकमार्जारगृध्रकीटाहिकाकजैः ।
तुंडैः पक्षैः पुरीषैश्च धूपनं कारयेद्भिषक् ॥

अर्थ-नौला, घूघू, बिलाव, गीध, कीडा, सांप और कौआ इनके मुख, पाँख और विष्ठाकी धूनी अपस्माररोगनाशक है ॥

दुश्चिकित्स्यो ह्यपस्मारश्चिरकारी महागदः । तस्माद्रसायनैरेतैः प्रायशः समुपाचरेत् ॥ हृत्कंपोऽक्षिरुजा यस्य स्वेदो हस्तादिशीतता । दशमूलीजलं तस्य कल्याणाज्यं च योजयेत् ॥

अर्थ-अपस्माररोग कष्टसाध्य, बहुत दिन रहनेवाला है. इसी वास्ते अपस्मार रोग प्रकरण पर जो जो रसायन कही है उनको बहुधा उपचार करे तथा हृदयका कंप, नेत्रोंकी पीडा, देहमें पसीने, हाथ पैरोंका ठंडा होना ऐसे लक्षण होवें उसको दशमूलका काढा और कल्याणघृत पीनेको देवे ॥

त्रिकत्रयलेह ।

त्रिकत्रयसमायुक्तं जीवनीययुतं तथा ।
हंत्यपस्मारमुन्मादं वातव्याधिं सुदुस्तराम् ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आँवला, सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची, पत्रज और जीवनीयगणकी सब औषध इनका अवलेह करे तो अपस्मार; उन्माद और दुस्तर वातरोग इनका नाश करे ॥

कल्याणचूर्ण ।

पंचकोलं समरिचं त्रिफलाबिडसैंधवम् । कृष्णा विडंगपूतीकयवानीधान्यजीरकम् ॥ पीतमुष्णांबुना चूर्णं वातश्लेष्मामयापहम् । अपस्मारे तथोन्मादे दुर्नामग्रहणीगदे ॥ एतत्कल्याणकं चूर्णं नष्टस्याग्नेश्च दीपनम् ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपलामूल, चव्य, चित्रककी छाल, त्रिफला, बिड निमक, सैंधा निमक, पीपल, वायविडंग, कंजा, अजमायन, धनिया, और जीरा इन सबका चूर्ण गरम जलके साथ पीवे तो वातकफका रोग, अपस्मार, उन्माद, बवासीर, संग्रहणी इनको नाश करे और अग्निदीपक है इसको कल्याणचूर्ण कहते हैं ॥

लेप व दाग ।

गोमूत्रयुक्तैः सिद्धार्थैः प्रलेपोद्वर्तनं हितम् ।
धूमस्तीक्ष्णानि नस्यानि दाहः सूच्या कपोलयोः ॥

अर्थ-अपस्माररोगवालेके गोमूत्रमें सपेद सरसों पीसके देहमें लेप करे अथवा मालिस करे अथवा धूप, तीक्ष्णनस्य अथवा कपोल (गालों) के ऊपर सूईका दाग देना ये उपचार करने चाहिये॥

द्वौ कीटमेषौ विधिवद्गृह्णीय रविवासरे।
कंठे भुजे वा संधार्य जयेदुग्रामपस्मृतिम्॥

अर्थ-मेंढाके बालमेंसे दो कीडोंको रविवारके दिन ले उनको कंठमें अथवा भुजामें यंत्रमें रखके बांधे तो वे अपस्मार रोगको जीतते हैं॥

चंदनादि अवलेह।

चंदनं तगरं कुष्ठं त्रिसुगंधी च वास्तुकम्। मंजिष्ठाभीरुमृद्वीकापाठाश्यामाप्रियंगुभिः॥ स्वयंगुप्ता पीलुपर्णी विषराम्ना गवादनी। कंकोली जीवको मेदपुष्करं घनवालकम्॥ शाल्मली तस्य निर्यासस्तुगा कालीयकं तथा। तिंतिडीकं च वृक्षाम्लं त्रिफला काश्मरीफलम्॥ जातीफलं तु गोक्षीरी कृष्णागरु च नागरम्। खर्जूरं च समांशानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्॥ भावितं बजिपूरस्य स्वरसेन च सप्तधा। समशर्करया युक्तमाटरूषरसेन तु॥ भावितं सप्तधा तत्तु नात्र कार्या विचारणा। एष लेहः सदा शस्तो ह्यपस्मारे सुदारुणे॥ उन्मादे कामलारोगे पांडुरोगे हलीमके। रक्तपित्ते राजरोगे पित्तातीसारपीडिते॥ रक्तातिसारशोथे च शिरोरोगे सदाज्वरे। तमके स्तन्यरोगे च च्छर्दौ दाहे मदात्यये॥ अष्टादशसु मेहेषु कासे श्वासे सपीनसे। बालानां च हितं तच्च शृणु मात्रामतः परम्॥ उत्तमा कर्षमात्रा तु पादहीना तु मध्यमा। बलवीर्यकरी प्रोक्ता सद्यः सर्वगुणा भवेत्॥ नरकुंजरवाहानां चोपयुक्तो हितो मतः। चंदनाद्यो महायोगः कृष्णात्रेयेण पूजितः॥

अर्थ-चंदन, तगर, कूठ, दालचीनी, इलायची, पत्रज, बथुआ, मंजीठ, सतावर, दारव, पाढ, हरड, फूलप्रियंगु, कौंचके बीज, मूर्वा, अतीस, रास्ना, इन्द्रायन, कंकोल, जीवक,

मेदा, पुहकरमूल, नागरमोथा, नेत्रवाला, सेमरका गोंद, मोचरस, वंशलोचन, दारुहलदी, तिंतडीक, अमलवेत, त्रिफला, कंभारीका फल, जायफल, तवाखीर, काली अगर, सोंठ और खजूर ये समान भाग लेवे सबका बारीक चूर्ण कर बिजोरेके रसकी सात भावना, अडूसेके रसकी सात भावना देवे परंतु सब चूर्णके समान मिश्री मिलायके भावना देवे. यह अवलेह दारुण अपस्मार रोग, उन्माद, कामला, हलीमक, रक्तपित्त, राजरोग, पित्तातिसार, रक्तातिसार, शोथ, मस्तकरोग, सदैव रहनेवाला ज्वर, तमक श्वास, स्त्रीके दूधका विकार, छर्दि, दाह, मदात्यय, अठारह प्रकारका कुष्ठरोग, प्रमेह, खांसी, श्वास, पीनस इनको दूर करे है. यह बालकोंको हितकारी है इसकी उत्तम मात्रा १० मासेकी है७ ॥ मासेकी मध्यम है यह मात्रा बलवीर्य करे तत्काल सर्वगुणदायक है. यह मनुष्य, हाथी, घोडे इन सबको परमोपयोगी है, यह चंदनादि अवलेह कृष्णात्रेय महर्षि करके पूजित है ॥

द्राक्षाद्यवलेह ।

द्राक्षादारुनिशायुतं समधुकं कृष्णा विशाला त्रिवृत्पृथ्वीका त्रिफला विडंगकटुकं श्रीचंदनं बालकम् । चातुर्जातकनिंबकांचनतुगातालीसपत्रं घनं मेदौ द्वौ सुरदारुकुष्ठकमलं धात्री समंगा बला ॥ भार्ङ्गी कोलकदाडिमाम्लसहितं काश्मर्यशृंगाटकं काचाह्वामलघंटिकालघुतरा क्षुद्रा च रास्ना युतम् । चूर्णं शर्करया समं मधु घृतं खर्जूरकैः संयुतं लिह्यात्कर्षमिदं समस्तबलवान् हन्यादपस्मारकम् ॥ उन्मादं च सुदारुणं क्षयमथो गुल्मं सपांडुं तथा कासश्वासमसृक्प्रवाहमुदरं स्त्रीणां हितं शस्यते ॥

अर्थ—दाख, दारुहलदी, मुलहठी, पीपल, इन्द्रायन, निसोथ, इलायची, हरड, बहेडा, आंवला, वायविडंग, कुटकी, चंदन, नेत्रवाला, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, नीमकी छाल, कचनारकी छाल, वंशलोचन, तालीसपत्र, नागरमोथा, मेदा, महामेदा, देवदारु, कूठ, कमल, आँवले, मंजीठ, खिरेटी, भारंगी, बेर, अनार, कंभारी, सिंघाडे, हलदी, कपूर, सन, बडा सन, कटेरी और रास्ना ये सब पदार्थ समान भाग लेके चूर्ण करे और चूर्णके समान मिश्री मिलावे तथा सहत, घी और खजूर मिलायके अवलेहके समान करके धर रखे. उसमेंसे १० मासे खानेको देवे तो बलवान् अपस्मार, उन्माद, क्षय, गोला, पांडुरोग, खांसी, श्वास, प्रदर, उदर और प्रदररोग इनको दूर करे ॥

शास्त्रार्थ ।

पूर्वं युंज्यादपस्मारे बुद्धिमान् छर्दनादिकम् । वातिकं बस्तिभिः प्रायः पैत्तिकीयं विरेचनैः॥ कफजं वमनप्रायैरपस्मारमुपाचरेत्॥

अर्थ—अपस्माररोग पर प्रथम बुद्धिमान् वैद्यको वमनादिकर्म कर्त्तव्य है. वातिक अपस्मार पर बस्तिकर्म करे. पैत्तिक अपस्मारमें विरेचन देवे और कफके अपस्मारमें वमन प्रायः देना चाहिये ॥

पलंकषातैल ।

पलंकषावचापथ्यावृश्चिकाल्यर्कसर्षपैः । जटिला पूतना केशी लांगली हिंगुरोचकैः ॥ लशुनातिरसश्चित्रः कुष्ठैरेभिश्च पक्षिणाम् । मांसाशिनां यथालाभ बस्तमूत्रे चतुर्गुणे ॥ सिद्धमभ्यंजनं तैलमपस्मारविनाशनम् ॥

अर्थ—लाख, वच, पथ्या, कौंच, आक, सरसों, जटामांसी, सुगंध जटामांसी, कलियारी, हींग, संचरनिमक, लहसन, मूर्वा, चित्रक और कूठ इनका काढा वा कल्क करके तथा मांस खानेवाला पक्षियोंका मांसरस और बकरीका मूत्र सबसे चौगुणा मिलाय उसमें तेल डालके सिद्ध करे तो अपस्मारको नाश करे ॥

कटभ्यादितैल ।

कटभीनिंबकट्वंगमधुशिग्रुत्वचारसे ।
सिद्धं मूत्रयुतं तैलमभ्यंगार्थं प्रशस्यते ॥

अर्थ—मालकांगनी, नीमकी छाल, सहजना मीठा और दालचीनी इनके काढे तथा गोमूत्र इनमें तेल डालके सिद्ध करे तो यह तेल अपस्मार रोगपर मालिस करने पर उत्तम है॥

शिग्रुतैल ।

शिग्रुकुष्ठवचाजाजिलशुनव्योषहिंगुभिः ।
बस्तमूत्रे शृतं तैलं नावनं स्यादपस्मृतौ ॥

अर्थ—सहजना, कोष्ठ, वचा, जीरा, लहसन, त्रिकटु (सोंठ, मिरच, पीपल,) हींग, ये सब समभाग लेकर मेंढेके मूत्रमें तेल औटावे इस तेलका नस्य करनेसे अपस्मार दूर होता है ॥

तैलप्रस्थं घृतप्रस्थं जीवनीयैः प्रलेपनैः ।
क्षीरद्रोणे पचेत्सिद्धमपस्मारविमोक्षणम् ॥

अर्थ-तेल अथवा घी ६४ तोले लेकर जीवनीय गणोक्त औषधोंके साथ १०२४ तोले दूधमें औटायके सिद्ध करे तो यह अपस्मार रोगको दूर करे ॥

अभ्यंगे सार्षपं तैलं बस्तमूत्रे चतुर्गुणे ।
सिद्धं स्याद्गोशकृन्मूत्रे स्नानाच्छादनमेव च ॥

अर्थ-सरसोंके तेलको बकरेके मूत्रमें अथवा गौके गोबरमें अथवा गोमूत्रके साथ पचायके सिद्ध करे फिर इसकी मालिस करे तो अपस्मारको नष्ट करे ॥

अपस्मार पथ्य ।

लोहिताः शालयो मुद्गा गोधूमाः प्रतनं हविः । कूर्मामिषं धन्वरसो दुग्धं ब्राह्मीजलं वचा ॥ पटोलं वृद्धकूष्मांडं वास्तुकं स्वादु दाडिमम् । सोभांजनं पयः पेटी द्राक्षा धात्री परूषकम् ॥ अपस्मारे गदे नृणां पथ्यमेतदुदीरितम् ॥

अर्थ-लाल चांवल, मूंग, गेहूं, पुराना घी, कछुएका मांस, धमासेका जल, दूध, ब्राह्मी, खस, वच, परवल, पुराना, कुम्हडा, चाकवत, अनारदाना, सहजना, पयःपेटी, दाख, आंवला और फालसा यह अपस्माररोग पर पथ्य कहा है ॥

अपस्मारमें अपथ्य ।

चिंताशोकभयक्रोधमद्भुतं दर्शनानि च । मद्यमत्स्यविरुद्धान्नं तीक्ष्णोष्णगुरुभोजनम् ॥ अतिव्यवायमायासं पूज्यपूजाव्यतिक्रमम् । पत्रशाकानि सर्वाणि बिंबीमाषाढकं फलम् ॥ तृषानिद्राक्षुधावेगानपस्मारी नरस्त्यजेत ॥

अर्थ-चिंता, शोक, भय, क्रोध, अद्भुत प्रकारकी वस्तुका दर्शन, मद्यपान, मछली, विरुद्ध अन्न, तीखा, गरम, भारी भोजन, अत्यंत मैथुन, परिश्रम करना, गुरु ब्राह्मण माता पिता आदि पूज्योंकी पूजा न करना और भूत प्रेतादि दुष्ट देवोंका पूजन करना, सब पत्तेके साग, कंदूरी, आषाढ महीनेमें होनेवाले फल, सोने और भूंखके वेगको रोकना ये सब अपस्मार (मृगी) रोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे अपस्माररोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

वातव्याधिकर्मविपाकः ।

देवानां ब्राह्मणानां वा धनापहरणात्तथा ।
स्वामिद्रोहाद्वातरोगी भवेदस्यापि निष्कृतिः ॥

अर्थ–जो प्राणी देवता, ब्राह्मण इनके धनको हरण (चोरी) करे अथवा देव, ब्राह्मण और अपने स्वामीसे द्रोह (वैर) करे उसके इस पापके प्रभावसे वातरोग होता है उसकीभी निष्कृति इस प्रकार करे ॥

वातरोगहर ।

गुरुप्रत्यर्थितां यातो वातरोगी भवेन्नरः ।
नाममंत्रेण कुर्वीत जपं होमं च शांतये ॥

अर्थ–ग्रंथांतरमें लिखा है कि जो अपने गुरुसे द्वेष (वैर) करता है वह वातरोगी होय उसको उस वातरोगके शमन करनेके वास्ते अच्युत, हरि, नारायण इत्यादि नाममंत्रका जप करे अथवा षडक्षरी, अष्टाक्षरी, द्वादशाक्षरी मंत्रसे जप करे और होम करे ॥

धनुर्वातहर ।

अनिच्छंत्यक्षतां यस्तु उपभुंक्ते परस्त्रियम् । बलादाक्रम्य स नरः सर्वसंधिषु वेदनाम् ॥ तीव्रामाप्नोत्यरुचिमान्धनुर्वातयुतो भवेत् । ज्वरी तदुपशांत्यर्थं माहिषीदानमाचरेत् ॥ कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ कुर्वीत चांद्रायणमथापरम् । सूर्यनामजपं चैव शक्त्या ब्राह्मणतर्पणम् ॥ नामत्रयं जपेन्मर्त्यो रोगशांत्यर्थमात्मनः । सहस्रनामकं चापि स्तोत्रं सम्यग्विधानतः ॥ अच्युतानंत गोविंदेत्येतन्नामत्रयं द्विजः । अयुतत्रितयावृत्त्या जपेद्रोगस्य शांतये ॥

अर्थ–विना इच्छा करनेवाली स्त्रीसे जो बलात्कार मैथुन करे अथवा अक्षता योनि (जिसने किसीसे मैथुन न कराया हो)ऐसी परस्त्रीसे जो बलात्कार मैथुन करे उसके सर्व संधियोंमें घोर पीडा और अरुचि धनुर्वायु तथा ज्वर ये रोग होते हैं. उसकी शांतिके अर्थ माहिषीदान, कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र और चांद्रायण व्रतोंका करना तथा सूर्यनारायणके नामका जप, गायत्रीजप, ब्राह्मण भोजन कराना, विष्णुसहस्रनामका पाठ ये विधि-

पूर्वक करे तथा अच्युत,अनंत और गोविंद इन नामोंको तीस हजार जपे तो यह प्राणी वादीके रोगसे मुक्त होय ॥

पक्षवातहर ।

सभायां पक्षपाती च जायते पक्षघातवान् । निष्कत्रयमितं हेम स दद्याच्च द्विजातये ॥ श्राद्धं च वैष्णवं कुर्यादात्मनो हितमिच्छता । सप्त धान्यानि दद्याच्च गोदानं तत्र कारयेत् ॥

अर्थ-जो प्राणी सभामें बैठकर पक्षपात करे, धर्मको न कहे वह पक्षाघातरोगी होता है. उसके दूर करनेको तीन निष्क सुवर्ण वेदसंपन्न ब्राह्मणको दान करे. तथा विष्णुश्राद्ध तथा सप्त धान्य (सतनजा) और गौ दान करे ॥

रक्तवातहर ।

रक्तवस्त्रप्रवालानां हारी स्याद्रक्तवातवान् ।
सवस्त्रां महिषीं दद्यात्पद्मरागसमन्विताम् ॥

अर्थ-जो प्राणी लाल वस्त्र और मूंगा इत्यादिक चुराता है वह वातरक्तरोगी होय वह पद्मराग (पुखराज)के साथ वस्त्रसहित भैंसका दान करे तो वातरक्तरोग दूर हो ॥

रक्तवातपित्तहर ।

सवर्णागमने वातरक्तवान् जायते नरः । सवर्णागमने वातपित्तवानपि जायते ॥ लक्ष्मीनारायणं रूपं सुवर्णेन प्रकल्पयेत् । पलेन वा तदर्धेन तदर्धेनाथ वा पुनः ॥ लक्ष्मीनारायणं रूपं सर्वदा सर्वकामिकम् ॥

अर्थ-अपने जातिकी परस्त्रीसे जो गमन करता है वह वातरक्त अथवा वातपित्तरोगी होता है उसको चार तोले वा दो तोले अथवा एक तोले सुवर्णकी लक्ष्मीनारायणकी मूर्ति बनायके दान करे. तथा यह लक्ष्मीनारायणकी मूर्ति सदैव और सर्वकामनाके देनेवाली है ॥

वातपित्तहर ।

लशुनं गृंजनं तालफलं वाश्नाति यो द्विजः ।
स वातपित्तरोगी च भवेच्चांद्रायणं चरेत् ॥

अर्थ-लहसन गाजर, ताडके फल इनको जो ब्राह्मण खाता है वह वातपित्त रोगी होता है वह चांद्रायण प्रायश्चित्त करे तो यह रोग दूर होय ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्रायेण वातव्याधिनिदान ।

अतिमारुतरोगार्तः परस्वहारी विलोलमतिचेष्टः ।
कर्कटसंस्थे भानौ स्वपुत्रदृष्टे पुमान् पिशुनः ॥

अर्थ-जन्मकालमें सूर्य कर्कराशि पर स्थित हो और शनैश्चर देखता होय तो वह प्राणी पिशुन (चुगल) अत्यंत वादीसे पीडित पराये धनका चुरानेवाला और चंचल मतिवाला होता है ॥

वातपित्तोद्भवा पीडा हीनजैरुग्रविग्रहः ।
विदेशगमनं चापि सौरीमध्ये यदा शिखी ॥

अर्थ-जन्मके समय शनिकी दशामें केतुका अंतर आता है तब इस प्राणीके वात्तपित्तके रोग, हीनजातिसे लडाई, परदेशमें डोलना इत्यादि फल होता है ॥

वायुरायुर्बलं वायुर्वायुर्धाता शरीरिणाम् । वायुर्विश्वमिदं सर्वं प्रभुर्वायुः प्रकीर्तितः॥अशीतिवातजा रोगा जायंते तत्प्रकोपतः। सामान्यं भेषजं तेषां स्नेहनं स्वेदनं तथा ॥ विशेषेण तु यद्दृष्टमुच्यतेऽत्र समासतः ॥

अर्थ-प्राणियोंकी वायु (पवन) आयु है, वायु बल, आधार, पालन पोषणकर्त्ता सर्वविश्वका आत्मा तथा प्रभु (सामर्थ्यवान्) ऐसा है इसी वायुके कुपित होनेसे प्राणियोंकी देहमें अस्सी प्रकारके वातरोग होते हैं उनकी सामान्यचिकित्सा स्नेहन स्वेदन करना है. परंतु मैंने जो विशेष देखा है उसको कहता हूं ॥

वातव्याधिनिदान ।

रूक्षशीताल्पलघ्वन्नव्यवायातिप्रजागरैः । विषमादुपचाराच्च दोषासृक्स्रवणादपि ॥ लंघनप्लवनात्यध्वव्यायामातिविचेष्टनैः । धातूनां संक्षयाच्चिन्ताशोकरोगार्त्तिकर्षणात् ॥ वेगसंधारणादामादभिघातादभोजनात् । मर्मबाधाद्गजोष्ट्राश्वशीघ्रयानादिसेवनात् ॥ देहे स्रोतांसि रिक्तानि पूरयित्वाऽनिलो बली । करोति विविधान्व्याधीन्सर्वांगैकांगसंश्रयान् ॥

अर्थ-रूखा, शीतल, थोडा और हलका ऐसे अन्न खानेसे, अति मैथुन करनेसे, बहुत जागनेसे, विषम उपचार करनेसे दोष (कफ , पित्त, मल, मूत्र इत्यादि) और रुधिर इनके निकलनेसे, अर्थात् वमन विरेचनसे, लंघन, अर्थात् अखाडे आदिमें कला

खेलनेसे, नदी आदिमें तैरनेसे, बहुत चलनेसे, अति दंड कसरत आदि श्रमके करनेसे, अत्यंत विरुद्ध चेष्टा करनेसे, रस रुधिर आदि धातुओंके क्षय होनेसे, चिन्ता, शोक और रोगद्वारा कृश होनेसे मल मूत्रादिकोंके वेग रोकनेसे, आगेसे लकडी आदिकी चोट लगनेसे, उपवास (व्रत) के करनेसे आदि ले सब मर्मस्थानोंमें लगनेसे, हाथी, ऊँट, घोडा इत्यादि जल्दी चलनेवाली सवारीपर बैठनेसे, कोपको प्राप्त भई जो बलवान् वायु सो देहमें खाली जो नस उनमें प्राप्त हो सर्वांग अथवा एक अंगमें व्याप्त होनेवाली ऐसी अनेक प्रकारकी वातव्याधि उत्पन्न करे ॥

वायुका पूर्वरूप ।

अव्यक्तं लक्षणं तेषां पूर्वरूपमिति स्मृतम् ॥

अर्थ-उस वक्ष्यमाण वातव्याधिके जो प्रगट लक्षण उसको पूर्वरूप ऐसे कहते हैं ज्वरादिकोंके सदृश विशिष्ट नहीं है और जो रूप प्रगट होय अर्थात् दोषादि भेदकरके यथार्थ दीखे उसको उस व्याधिका लक्षण जानना ॥

रूपकथन ।

आत्मरूपं तु तद्व्यक्तमपायो लघुता पुनः । संकोचः पर्वणां स्तंभो भंगोऽस्थ्नां पर्वणामपि ॥ लोमहर्षः प्रलापश्च पार्श्वपृष्ठशिरोग्रहः । खाञ्ज्यपांगुल्यकुब्जत्वं शोथोंऽगानामनिद्रिता॥गर्भशुक्ररजोनाशः स्यंदनं गात्रसुप्तता । शिरोनासाक्षिजत्रूणां ग्रीवायाश्चापि हुंडनम् ॥ भेदस्तोदार्तिराक्षेपो मोहश्चायास एव च। एवंविधानि रूपाणि करोति कुपितोऽनिलः ॥ हेतुस्थानविशेषाच्च भवेद्रोगविशेषकृत ॥

अर्थ-अपानवायुके चंचल होनेसे स्तंभ संकोच कंपादिकका कदाचित् अभाव होय है और लघुता (शरीरकी उस वायु करके धातु शोषण करनेसे) अथवा अपायलघुता कहिये सब वातविकारोंका अपाय कहिये अभाव होय और वातविकारोंकी लघुता कहिये अल्पत्वकरके जो स्थिति है सो निःशेष निवृत्ति नहीं होय; अब नानाप्रकारकी व्याधि करे है ये जो कहि आये हैं उसको आगेके श्लोकमें कहते हैं संधियोंका संकोच और स्तंभ हड्डियोंका और संधियोंकी फूटनेकीसी पीडा, रोमांच, वाह्यात् बकना, हाथ पैर और मुख इनका जकड जाना, खंजत्व, पांगुरा होना, कुबडापना, अंगोंका सूजना, निद्राका नाश, गर्भका न रहना, शुक्र और रज (स्त्रीका आर्त्तव)

इनका नाश, कंप, अंगोंमें शून्यता, मस्तक, नाक, मुख, जत्रु और नाड इनका भीतर जाना, अथवा टेढे हो जाँय, भेदसदृश पीडा, नोचनेकीसी पीडा, शूल, आक्षेपरोग जो आगे कहेंगे, मोह, श्रम, कुपित भई जो वायु या प्रकार लक्षण करे हैं, वह वायु हेतु और स्थान इन भेदसे विशिष्ट रोग उत्पन्न करनेवाली होती है. जैसे कफावृत होनेसे मन्यास्तंभ रोग करे यदि पक्वाशयमें वात स्थित होय तो आंतोंका गूंजना इत्यादि रोग करे है ॥

वातचिकित्सोपक्रम ।

अभ्यंगं स्वेदनं बस्तिर्नस्यं लेहो विरेचनम् । स्निग्धाम्ललवणस्वादुवृष्यं वातामयापहम् ॥ स्वाद्वम्ललवणैः स्निग्धैराहारैर्वातरोगिणः । अभ्यंगस्नेहबस्त्याद्यैः सर्वानेवोपपादयेत् ॥ पित्ते सावरणे वातरोगे शीतोष्णभेषजम् । कफसावरणे वायौ रूक्षोष्णं भक्ष्यभेषजम् ॥ केवले पवनव्याधौ स्निग्धोष्णं भक्ष्यभेषजम् । स्निग्धोष्णरूक्षशीताद्यैर्वातजो यो न शाम्यति ॥ विकारास्तत्र विज्ञेया दुष्टशोणितसंभवाः ॥

अर्थ–देहमें तैलादिक लगाना, पसीने निकालना, बस्तिकर्म, नस्य, अवलेह, जुलाब कराना, यह तथा चिकने, खट्टे, खारी और मिष्ट ये रस; वृष्यपदार्थ तथा वातनाशक पदार्थ, मीठे, खट्टे, खारी, और स्निग्ध पदार्थोंका भोजन तथा देहमें तेलकी मालिस स्नेहन तथा बस्ति इत्यादिक उपचार करे और पित्तयुक्त वायु होय तो शीतोष्ण (मातदिल) औषध देवे. यदि वह वातकफाधिक होवे तो रूक्ष और गरम ऐसी औषध और आहार वैद्य देय केवल वातविकारपर स्निग्ध और उष्ण ऐसे अन्न और औषध देवे. जो वातव्याधि स्निग्ध, उष्ण, रूक्ष, शीतल इत्यादि उपचारोंसे शांति नहीं हो तो उसको वैद्य दुष्टरक्ताश्रित विकार जाने ॥

दूसरा प्रकार ।

मधुरलवणमम्लं स्निग्धमस्योष्णनिद्रागुरुरविकरबस्तिस्वेदसंतर्पणानि । दहनदलविशेषाभ्यंगसंमर्दनानि प्रकुपितपवमानं शांतमेतानि कुर्युः ॥

अर्थ–मिष्ट, लवण, खट्टे, स्निग्ध, उष्ण, निद्रा, धूप, बस्ति, पसीने, तर्पण, अग्नि, गरम जल, मालिस और अंगमर्दन ये उपचार कुपितवायुके शांत करनेको करे ॥

तीसरा प्रकार।

वातरोगस्त्वसाध्योऽयं दैवयोगात्सुसिद्ध्यति।
अनुमानेन कुर्वीत वैद्यकं तत्प्रतिज्ञया॥

अर्थ-वादीका रोग असाध्य है यह दैवेच्छासे दूर होता है वैद्य इसका यत्न अनुमान (अंदाजन) से करते हैं कोई प्रतिज्ञापूर्वक औषधी नहीं देते॥

कोष्ठगत वातलक्षण।

वाते कोष्ठाश्रिते दुष्टे निग्रहो मूत्रवर्चसोः।
वर्ध्महृद्रोगगुल्मार्शःपार्श्वशूलं च मारुते॥

अर्थ-कोठेमें स्थित वायु दुष्ट होनेसे मलमूत्रका अवरोध होय. बदरोग, हृदयरोग, गोला, बवासीर, पसवाडोंमें पीडा इतने रोग उत्पन्न करे॥

कोष्ठलक्षण।

स्थानान्यामाग्निपक्वानां मूत्रस्य रुधिरस्य च।
हृदुंडुकः फुप्फुसश्च कोष्ठ इत्यभिधीयते॥

अर्थ-आमाशय, पक्वाशय, अग्न्याशय, मूत्राशय, रुधिराशय, हृदय, उंदुक (पेट) और फुप्फुस इनकी कोष्ठ ऐसी संज्ञा है॥

आमाशयोक्त।

अत्र द्वितीयं दिनमारभ्य षड्दिनपर्यंतमामाजयोक्तषट्चरण-
योगो देयः॥

अर्थ-दूसरे दिनसे लेकर इस व्याधिपर आमाशयोक्त षट्चरणयोग देना चाहिये॥

कोष्ठवातचिकित्साक्रम।

विशेषतस्तु कोष्ठस्य वाते क्षीरं पिबेन्नरः। व्योषसौवर्चलाजाजीपथ्यालवणपंचकम्॥ सारिवा बृहती पाठा कलिंगाग्नियवाग्रजम्। चूर्णीकृतं दधिसुरातन्मंडोष्णांबुकांजिकैः॥ पिबेदग्निविवृद्ध्यर्थं कोष्ठवातहरं परम्॥

अर्थ-कोष्ठगत वातविकारके होनेसे विशेषता करके दूध पिलावे और सोंठ, मिरच, पीपल, संचरनिमक, जीरा, हरड, निमक, सुहागा, सैंधानिमक, विडनोन, संचरनोन, सारिवा, कटेरी, पाढ, इन्द्रजौ, चित्रक और जवाखार इनका चूर्ण दही, मद्य दहीका

तोर, गरम जल और कांजी इनसे किसी एकके साथ पीवे तो अग्निकी वृद्धि करे और कोष्ठाश्रित वायुका नाश करे है ॥

चिकित्सा ।

पाचनीयै रसैर्युक्तैरन्यैर्वा पाचयेन्मलान् ।
विशेषतः पिबेत्क्षीरं नरः कोष्ठगतेऽनिले ॥

अर्थ–पाचन करनेवाले रसोंमेंसे कोईसी पाचन औषध देकर मलको पचावे. परंतु कोष्ठाश्रित वातविकार होय तो विशेषता करके दूध पिलावे ॥

आमाशयगतलक्षण ।

हृत्पार्श्वोदरनाभिरुक्तृष्णोद्गारविषूचिकाः ।
कासः कंठास्यशोषश्च श्वासश्चामाशयेऽनिले ॥

अर्थ--आमाशयगत वातविकार होवे तो हृदय, पार्श्वभाग, उदर और नाभि इनमें पीडा, तृषा, डकार, जुलाब, खांसी, गला और मुख इनमें शोथ और श्वास ये विकार होते हैं ॥

आमाशयलक्षण ।

नाभिस्तनांतरं जंतोराहुरामाशयं बुधाः ।

अर्थ–नाभि और स्तन इनमें आमाशय रहता है ऐसा पंडित लोग कहते हैं ॥

आमाशयगतवातचिकित्सा ।

आमाशयस्थे त्वनिले प्रशस्तं प्राग्भोजनं दीपनपाचनं च ।
प्रच्छर्दनं तीक्ष्णविरेचनं च मुद्गा यवाः शालियुताः पुराणाः॥

अर्थ–आमाशयगत वायुपर भोजनके पूर्व दीपन और पाचन औषध देवे और वांति तथा तीक्ष्ण रेचक औषध देय तथा पुराने मूंग, जौ और पुराने चावल इत्यादि पदार्थ भोजन करनेको देय ॥

आमाशयगतवात ।

आमाशयगते वाते छर्दिः स्वापो यथाक्रमम् ।
देयः षट्चरणो योगः सप्तरात्रमथांबुना ॥

अर्थ–आमाशयाश्रित वादीके होनेसे वांति और निद्रा इत्यादि उपचार करे किंवा षट्चरणयोग जो आगे लिखा है वह सात दिन पर्यंत जलके साथ देवे ॥

षट्चरणयोग ।

चित्रकेंद्रयवा पाठा कटुकातिविषाभया ।
महाव्याधिप्रशमनो योगः षट्चरणः स्मृतः ॥

अर्थ-चित्रककी छाल, इन्द्रजौ, पाढ, कुटकी, अतीस और हरड यह षट्चरणयोग महान् व्याधिको शमन करे है ॥

तीन काढे ।

भूतीकपथ्याशठिपुष्कराणि बिल्वामृतादारुकनागराणि ।
उग्रा विषा मागधिका बिडानि क्काथास्त्रयः सामसमीरणघ्नाः ॥

अर्थ-अजमायन, हरड, कचूर और पुहकरमूल इनका अथवा बेलगिरी, गिलोय, देवदारु और सोंठ इनका अथवा वच, अतीस, पीपल और बिडनोन इनका काढा देवे. ये तीन काढे आमवातनाशक है ॥

प्रातः पिबेदुष्णजलेन यत्नाच्छिन्नामरीचं हृदयानिलघ्नम् ।
गुडेन वा नागरदारुचूर्णं हृद्वातपीडापरिपीडितस्तु ॥

अर्थ-गिलोय और काली मिरच इनके चूर्णको प्रातःकाल गरम जलके संग पीवे अथवा सोंठ, देवदारु इनका चूर्ण गुडके साथ खाय तो हृदय वायुकी पीडाको नाश करे ॥

पक्काशयवायु ।

पक्काशयस्थोऽन्त्रकूजं शूलाटोपौ करोति च ।
मूत्रकृच्छ्रपुरीषत्वमानाहं त्रिकवेदनाम् ॥

अर्थ-वायु पक्काशयमें होय तौ आंतोंका गूंजना, शूल, आटोप (गुडगुडाशब्द) मलमूत्र कष्टसे निकले, अफरा, त्रिकस्थानमें पीडा इन लक्षणोंको करे है ॥

चिकित्सा ।

वह्नेः संवर्धनं कार्यं कर्मौदावर्तिकं तथा ।
देयः स्नेहविरेकश्च पक्काशयगतेऽनिले ॥

अर्थ-पक्काशयगत वायुके कुपित होनेसे अग्निको प्रदीप्त करके उदावर्त्तरोगपर जो उपचार कहे हैं वे करने चाहिये तथा स्निग्ध विरेचन देवे ॥

वाते जठरगे दद्यात्क्षारचूर्णादिदीपनम् ।
शुंठीकुटजबीजाग्निचूर्णं कोष्णांबु कुक्षिगे ॥

अर्थ–उदरका वायु कुपित होनेसे क्षार चूर्णादिक दीपन औषध देवे तथा कुक्षिगत वादीके कुपित होनेसे सोंठ, इन्द्रजौ और चित्रक इनके चूर्णको गरम जलके साथ पीवे ॥

पक्काशयगते वाते हितं स्नेहैर्विरेचनम् ।
बस्तयः शोधनीयाश्च प्राश्याश्च लवणोत्तराः ॥

अर्थ–पक्काशयगत वादीके कुपित होनेसे स्निग्ध, विरेचन, शोधन करनेवाले, बस्ती और लवणयुक्त प्राश्यसंज्ञक औषध देवे ॥

हृदयवात।

हृदयानिलनाशाय गुडूचीं मरिचान्विताम् ।
पिबेत्प्रातः प्रयत्नेन सुखतप्तांभसा सह ॥

अर्थ–हृदयकी वादी दूर करनेको गिलोय, काली मिरच इनके चूर्णको गरम जलके साथ प्रातःकाल पीवे तो पीडा दूर हो ॥

पिबेदुष्णांभसा पिष्टं साश्वगंधं बिभीतकम् ।
गुडयुक्तं प्रयत्नेन हृदयानिलनाशनम् ॥

अर्थ–असगंध, बहेडा और गुड इनको गरम जलमें पीसके पीवे तो हृदयमें रहनेवाले दुष्ट वायु नष्ट होवे ॥

देवदारुसमायुक्तं नागरं परिपेषितम् ।
हृद्वातवेदनायुक्तः पीत्वा सुखमवाप्नुयात् ॥

अर्थ–देवदारु और सोंठ इनके चूर्णको गरम जलके साथ पीवे तो हृदयमें रहनेवाले दुष्ट वायुकी पीडा दूर होकर सुख पावे ॥

सर्वांगवातलक्षण।

सर्वांगपवने क्रुद्धे गात्रस्फुरणभंजनम् ।
वेदनाभिः परीतस्य स्फुटंतीवास्य संधयः ॥

अर्थ–सब अंगकी वायु कुपित होनेसे अंगोंका फरकना, जंभाई और संधि वेदना युक्त हो, फूटनेकीसी पीडा होय ॥

चिकित्सा।

सर्वांगगतमेकांगगतं वास्य समीरणम् ।
तैलावगाहनं हंति तोयवेगमिवाचलः ॥

अर्थ-दुष्ट वात सर्वांगमें होय अथवा एकांगमें होय उसपर देहमें तेलकी मालिस करायके गरम जलसे स्नान करे तो सर्वांग तथा एकांगवादी दूर हो. जैसे पर्वत जलके वेगको रोक देता है ॥

अवशिष्टवात ।

प्रलापे भीरुतापे च प्रसुप्तौ चित्तवैकृते ।
स्वेदनाशे बलक्षैण्ये कौशिकः सघृतो हितः ॥

अर्थ-प्रलाप (बकवाद), भीरु (डरना), ताप (ज्वर), प्रसुप्ति (सो जाना), चित्तकी विकृति, स्वेदनाश तथा बलक्षीणता इन रोगोंपर घृतयुक्त शुद्ध गूगलका सेवन करना हितकारी है ॥

शब्दाज्ञतामये चापि लेहः कल्याणको हितः । शीततां रोमहर्षं च शिरापूरणमेव च ॥ कटुतिक्तैर्जयेद्द्रव्यैः स्नेहस्वेदनमर्दनैः ॥

अर्थ-शब्दको न जानना इस रोगपर पूर्वोक्त कल्याणावलेह हितकारी है और शीतका लगना, रोमहर्ष, शिरापूरण इनपर कटु (चरपरा), तिक्त (कडुआ) ऐसे स्नेह और स्वेदन इत्यादि औषधी तथा मर्दन ये उपचार करे ॥

वाताप्रवृतिरुद्गारमंत्रकूजनमेव च ॥
निरूहबस्तिनाथांगकाठिन्यं स्नेहगाहनात् ॥

अर्थ-अधोवायुका न निकलना, डकारोंका आना और आंतोंका बोलना इनपर निरूहबस्ति देवे. तथा शरीरकी कठिनता स्निग्धपदार्थोंसे स्नान करके दूर करे ॥

कुरंटकादिकाढा ।

सहचरामरदारु सनागरं क्वथितमंभसि तैलविमिश्रितम् ।
पवनपीडितदेहगतिः पिबन् द्रुतविलंबितगो भवतीच्छया ॥

अर्थ-पियावांसा, देवदारु और सोंठ इनके काढेमें अंडीका तेल मिलायके पीवे तो जिसका देह वादीसे जकड गया हो वह तत्काल खुल जावे और शीघ्र अथवा मंद जैसी इच्छा हो ऐसा चलने लगे ॥

महारास्नादिकाढा ।

रास्नैरंडामृतोग्रासहचरचविकारामसेनाब्दभार्ङ्गीदीप्यानंतायवानी वृकिसुरकृमिजिच्छृंगिशुंठीबलाभिः । मूर्वातिक्तासमंगाद्विविषशठिवरापिप्पलीयावशूकै रक्तश्रीखंडकारग्वधकटुकफलैर्वत्स-

वृश्चीकयुक्तैः ॥ सर्वैरेतैर्दशांशप्रयुतसमलवैः साधितोऽष्टावशेषः क्वाथो रास्नादिरादौ महदुपपदवान्कौशिकोक्तो निहंति । सर्वांगैकांगवातान् श्वसनकसनहृत्स्वेदशैत्यातितंद्राशूलं तूनीं प्रतूनीं गलगदानिखिलांगव्यथाकंपखल्लीः ॥ विश्वाचीश्लीपदामानिलनिखिलमहासूतिकारोहसुप्तिर्जिह्वास्तंभापतानं स्फुटनविमथनः क्लीबताक्षेपकौब्जम् । शोभाटोपापतंत्रार्दितखुडनहनुग्रध्रसीपादशूलं वायुं श्लेष्मोत्थरोगानपि गिरितनयावल्लभेनोपदिष्टः ॥

अर्थ–रास्ना, अंडकी जड, गिलोय, वच, पीयावांसा, चव्य, कौंचके बीज, नागरमोथा, भारंगी, किरमानी अजमायन, धमासा, अजमायन, पाढ, देवदारु, वायविडंग, काकडासिंगी, सोंठ, खिरेटी, मूर्वा, कुटकी, मंजीठ, काली और सपेद अतीस, कचूर, हरड, बहेडा, आंवला, पीपल, जवाखार, लाल चंदन, अमलतासका गूदा, कायफल, इन्द्रजौ, लालघंटाली और दशमूल ये सब समान भाग ले जलमें डालके अष्टमांश काढा करे यह महारास्नादि क्वाथ कौशिकऋषिने कहा है यह सर्वांगवात, एकांगवात, श्वास, खांसी, पसीना, शीतका लगना, अतितंद्रा, शूल, तूनी, प्रतूनी, गलेका रोग, सर्वांगकी पीडा, कंपवात, खल्लीवात, विश्वाची, श्लीपद, आमवात संपूर्ण प्रसूतके रोग, सुप्तिवात, जिह्वास्तंभ, अपतान वायु, हडफूटन, मथनेकीसी पीडा क्लीबवात, आक्षेपक, कुब्जवात सूजन, आटोप, अपतंत्र, अर्दित, खुडवात, हनुग्रह, गृध्रसी, पादशूल और वातश्लेष्मव्याधि इनको नाश करे इस प्रकार श्रीशिवने कहा है ॥

दूसरा प्रकार ।

रास्ना द्विगुणभागा स्यादेकभागास्तथापरे । धन्वयासबलैरंडदेवदारुशठी वचा ॥ वालको नागरं पथ्या चव्यमुस्ता पुनर्नवा । गुडूची वृद्धदारुश्च शतपुष्पा च गोक्षुरः ॥ अश्वगंधा प्रतिविषा कृतमालः शतावरी । कृष्णा सहचरश्चैव धान्याकं बृहतीद्वयम् ॥ एभिः कृतं पिबेत्क्वाथं शुंठीचूर्णेन संयुतम् । कृष्णाचूर्णेन वा योगराजगुग्गुलुनाथवा ॥ अजमोदादिना वापि तैलैनैरंडजेन वा । सर्वांगकंपे कुब्जत्वे पक्षाघातेऽवबाहुके ॥ गृध्रस्यामामवाते च श्लीपदे चापतानके । अंत्रवृद्धौ तथाध्माने जंघाजानुगदे-

ऽर्दिते ॥ शुक्रामये मेढ्रवाते वंध्यायोन्यामयेषु च । महारास्नादि-राख्यातो ब्रह्मणा गर्भधारणे ॥

अर्थ-रास्ना २ भाग, धमासा १ भाग, खिरेटी, अंडकी जड, देवदारु, कचूर, वच' अडूसा, सोंठ, हरड, चव्य, नागरमोथा, पुनर्नवा, गिलोय, विधायरा, सोंफ, गोखरू, असगंध, अतीस, अमलतास, सतावर, पीपल, पियावाँसा, धनिया, कटेरी और बडी कटेरी ये सब समानभाग लेवे अर्थात् एक २ भाग लेवे. सब कूट करके काढा करे जब अष्टमांश रहे तब उतारके छान ले फिर इसमें सोंठका अथवा पीपलका चूर्ण अथवा योगराज गूगल; अजमोदादि चूर्ण, किंवा अंडका तेल डालके पीवे तो सर्वांगकंप, कुब्ज-वात, पक्षाघात, अपबाहुक, गृध्रसी, आमवात, श्लीपद, अपतानवायु, अंत्रवृद्धि, अफरा, जंघाकी वादी, जानुकी वादी, अर्दित (लकवा), शुक्रदोष, मेढ्रवात, वंध्याके योनिरोग इनपर यह महारास्नादि काढा कहा है यह गर्भधारक है इस प्रकार ब्रह्मदेवने कहा है ॥

महाबलादिकाढा ।

महाबलामूलमहौषधाभ्यां क्वाथं पिबेन्मिश्रितपिप्पलीकम् ।
शीतं सकंपं परिदाहयुक्तं विनाशयेत् द्वित्रिदिनप्रयुक्तः ॥

अर्थ-कंगही की जड और सोंठ इनके काढेमें पीपलका चूर्ण डालके पीवे तो शीत-वात, कंपवात और दाह ये दो तीन दिनमें नष्ट हो जाँय ॥

पंचमूलादियोग ।

पंचमूलीकृतः क्वाथो दशमूलीकृतोऽथ वा ।
रूक्षस्वेदस्तथा नस्यं मन्यास्तंभे प्रशस्यते ॥

अर्थ--पंचमूलका काढा अथवा दशमूलका काढा, रूक्ष स्वेद तथा नस्य ये मान (गरदन) के जकड जानेपर यत्न करे ॥

वाजिगंधादि काढा ।

वाजिगंधाबलास्तिस्रो दशमूली महौषधम् ।
गृध्रनख्यौ च रास्ना च गणो मारुतनाशनः ॥

अर्थ-असगंध, खिरेटी, कंगही, गंगेरन, दशमूल, सोंठ गृध्रनखी, छोटा बेर, रास्ना इनका काढा वादीका नाश करनेवाला है ॥

समीरदावानल ।

भल्लातकानां शकलानि कृत्वा त्रिकोलमानं परिगृह्य वैद्यः । चतुःपलं तोयसमन्वितोऽयं क्राथो चतुर्थांशमितं प्रगृह्य ॥ सिता हविर्गोपयमिश्रितं च कोलं पलार्धं पलमेकयुक्तम् । क्रमेण पीतो खलु हंति वातान् समीरदावानलनामधेयः ॥

अर्थ–भिलाएके टुकडे १॥ तोला और जल ४ तोले इनका काढा चतुर्थांश रहनेपर उतारले. इस काढेमें मिश्री छः मासे, घी २ तोले, गौका दूध ४ तोले डालके फिर औटावे फिर इसमें पंचकोलका चूर्ण डालके पीवे तो सर्ववात नाश करे, इसको समीरदावानल अवलेह कहते हैं ॥

गुदास्थितवायुकाय ।

ग्रहो विण्मूत्रवातानां शूलाध्मानाश्मशर्कराः ।
जंघोरुत्रिकहृत्पृष्ठरोगशोफो गुदे स्थिते ॥

अर्थ–वायु गुदामें स्थित होनेसे मल मूत्र और वायुका रुकना, शूल, अफरा, पथरी, जंघा ऊरू त्रिकस्थान हृदय पीठ इनमें पीडा और सूजन ये रोग होते हैं ॥

चिकित्सा ।

वाते गुदाश्रिते दुष्टे कर्मौदावर्तिकं हितम् ॥

अर्थ–गुदाश्रित वादीके दुष्ट होनेपर जो उदावर्तरोगमें चिकित्सा कही है वह चिकित्सा करे ॥

चिकित्सा ।

दशमूलीकषायेण मातुलुंगरसेन वा ।
पिबेदेरंडतैलं वा बस्तिकुक्षिगुदे श्रिते ॥

अर्थ–दशमूलके काढेसे अथवा बिजोरेके रसके साथ अंडीका तेल पीवे तो बस्ति, कांख और गुदाकी दूषित पवनको नष्ट करे ॥

श्रोत्रादिगतलक्षण ।

श्रोत्रादिष्विन्द्रियवधं कुर्यात्क्रुद्धः समीरणः ॥

अर्थ–कर्णादिक इन्द्रियोंमें क्रुद्ध हुई वायु इन्द्रियोंका नाश करे ॥

चिकित्सा ।

श्रोत्रादिष्वनिले दुष्टे कार्यो वातहरः क्रमः ।
स्नेहाभ्यंगोपनाहश्च मर्दनालेपनानि च ॥

अर्थ-कर्णादिक इन्द्रियोंमें दुष्ट हुई वायुपर वातनाशक उपचार करे जैसे स्नेहपान, अभ्यंग, उपनाह, मर्दन और लेप इत्यादिक जानो ॥

जृंभा (जंभाई)।

पीत्वैकं श्वासमालिनः पुनस्त्यजति वेगवान्।
आलस्यनिद्रायुक्तश्च स जृंभ इति कथ्यते ॥

अर्थ-एकदफे श्वास लेके वह शांत हुआ न हुआ इतनेमें दूसरा श्वास आ जावे तिससे रोका हुआसा छोड देवे और आलस्य, निद्रा इनसे युक्त हो उसको जृंभा कहते हैं ॥

चिकित्सा।

शुंठी पिप्पल्यूषणं दीप्यकश्च सिंधूद्भूतं चेति सर्वं पृथग्वा।
तद्रूपं वा सूक्ष्मचूर्णीकृतं वा जृंभाभंगस्तत्कृतस्यात्तदैव ॥

अर्थ-सोंठ, पीपल, मिरच, अजमायन, सैंधानिमक ये सब अथवा एक २ का चूर्ण कर सबका सेवन करे तो तत्काल जृंभा (जंभाई) के वेगको नाश करे ॥

जृंभावेगे समुत्पन्ने शोभने शयने नरम्।
स्वापयेत्तेन नियमाज्जृंभावेगः प्रशाम्यति ॥

अर्थ-जृंभा वेगके उत्पन्न होनेपर उस प्राणीको उत्तम शय्यापर सुलावे तो निश्चय करके जंभाईका वेग शांत होवे ॥

जृंभाचिकित्सा।

जृंभावेगः क्षयं याति कटुतैलेन मर्दनात्।
भोजनात्स्वादुभोज्यानां तथा तांबूलभक्षणात् ॥

अर्थ-सरसोंके तेलकी देहमें मालिस करनेसे जंभाइयोंका आना दूर होवे. अथवा स्वादु पदार्थोंके भोजनसे अथवा तांबूल (पानकी वीडी) खानेसे जंभाई दूर हो ॥

प्रलापक।

स्वहेतुकुपिताद्वातादसंबद्धं निरर्थकम्।
वचनं यन्नरो ब्रूते स प्रलापः प्रकीर्तितः ॥

अर्थ-अपने हेतुओंसे कुपित भई जो वात तिससे असंबद्ध (अर्थरहित) वार्ण बोले, अर्थात् बकवाद करे अथवा बडबड शब्द करे उसको प्रलाप कहते हैं ॥

चिकित्सा ।

सतगरवरातिक्ता रेवतांभोदतिक्ता नलदतुरगगंधा भारती हारहूराः । मलयजदशमूलाशंखपुष्प्यः सुपक्काः प्रलपनमतिहन्युः पानतो नातिदूरात् ॥

अर्थ–तगर, पित्तपापडा, अमलतास, नागरमोथा, कुटकी, नेत्रवाला, असगंध ब्राह्मी, दाख काली, चंदन, दशमूल और शंखाहुली इनका काढा लेय तो तत्काल प्रलापकका नाश करे ॥

रसाज्ञाननिदान ।

भुंजानस्य नरस्यान्नं मधुरप्रभृतीन्रसान् ।
रसना यन्न जानाति रसाज्ञानं तदुच्यते ॥

अर्थ–जो मनुष्य भोजन करे उसकी जीभको मधुर (मीठा) खट्टा इत्यादिक रसोंका ज्ञान न होय उस रोगको रसाज्ञान कहते हैं ॥

चिकित्सा ।

घर्षेज्जिह्वां जडां सिंधुत्र्यूषणैः साम्लवेतसैः । आम्लवेतसकाभावे चुक्रं दातव्यमीरितम् ॥ किराततिक्तकः कट्वी कुटकस्य फलं त्वचा । ब्राह्मी फलं च पालाशं राजिकां कृष्णजीरकम् ॥ पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रं नागरमूषणम् । एषां कल्कैर्मुहुर्घर्षेज्जिह्विकामार्द्रिकारसैः ॥ तेन सम्यग्विजानाति रसना सकलान् रसान् ॥

अर्थ–जीभके जकडने पर सैंधा निमक, त्रिकुटा और अमलवेत इनके चूर्णसे जीभको रगडे. यदि अमलवेत न मिले तो चूका लेवे. अथवा कडुआ किरायता, कुटकी, इन्द्रजौ, कुडाकी छाल, ब्राह्मी, पलासपापडा, राई, काला जीरा, पीपल, पीपरामूल, चित्रक, सोंठ और काली मिरच इनके चूर्णसे अथवा कही हुई औषधोंका अदरखके रसमें कल्क करके उससे वारंवार जीभको घिसे तो जिह्वा सब रसोंको जानने लगे ॥

किरातादिकल्क ।

कल्कः किराततिक्तादिर्जिह्वायाः शून्यतां हरेत् ॥

अर्थ–किराततिक्तादि कल्क जो पिछाडी कह आये हैं वह जिह्वाकी शून्यताको हरण करे हैं ॥

त्वक्शून्यतानिदान ।

स्पृश्यमाना त्वचा या तु शीतोष्णं मृदु कर्कशम् ।
न जानाति बुधैस्त्वक्सा शून्येति परिकीर्त्यते ॥

अर्थ-त्वचाको स्पर्श करनेसे शीत, गरम, मृदु और कठीन इनका ज्ञान नहीं होता इसको त्वक्शून्यता कहते हैं ॥

चिकित्सा ।

सुप्तवाते त्वसृङ्मोक्षं कारयेद्बहुशो भिषक् ।
दिह्याच्च लवणागारधूमैस्तैलसमन्वितैः ।

अर्थ-सुप्त वातपर वारंवार रुधिरको निकलवावे और सैंधानिमक घरका धुंआ और तेल इनको मिलायके लेप करे ॥

रसगतवायुके लक्षण ।

त्वग्रूक्षा स्फुटिता सुप्ता कृशा कृष्णा च तुद्यते ।
आतन्यते सरागा च मर्मरुक्त्वग्गतेऽनिले ॥

अर्थ-वायु त्वग्गत अर्थात् धातुरूप त्वचामें प्राप्त होनेसे त्वचा रूखी और फटी, शून्य, पतली और काली हो जाय और उसमें चमका चले, तथा तन जाय, कुछ तांबेके समान लाल रंग हो जाय और हृदयादि मर्मोंमें पीडा होय ॥

रक्तगतवायुके लक्षण ।

रुजस्तीव्राः ससंतापा वैवर्ण्यं कृशताऽरुचिः ।
गात्रे चारूंषि भुक्तस्य स्तंभश्चासृग्गतेऽनिले ॥

अर्थ-वायु रुधिरामिश्रित होनेसे सन्तापयुक्त तीव्र वेदना होय, देहका विवर्ण होय, कृशता, अरुचि और देहमें फोडा तथा भोजन करनेके उपरांत देहका जकड जाना ये लक्षण हैं ॥

मांसगत वायु ।

गुर्वंगं तुद्यते स्तब्धं दंडमुष्टिहतं यथा ।
सरुक् स्तिमितमत्यर्थं मांसमेदोगतेऽनिले ॥

अर्थ-मांस और मेदमें वायुके पहुँचनेसे अंग भारी हो जाय, चोटनेके समान पीडा होय, अथवा निश्चल हो जाय अथवा मुक्का मारनेकीसी तथा लकडी मारनेकीसी पीडा होय ॥

मेदाश्रितवातलक्षण ।

तथा मेदाश्रितः कुर्याद्ग्रंथीन् मंदरुजो व्रणान् ॥

अर्थ--वायु मेदगत हुआ हो तो अंगपर गांठ अथवा अल्प दुःख देनेवाले व्रणको उत्पन्न करे है ॥

अस्थिवातलक्षण ।

मेदोऽस्थिपर्वणां सन्धिशूलं मांसबलक्षयः ।
अस्वप्नं संततारुक् च मज्जास्थिकुपितेऽनिले ॥

अर्थ--मज्जा और हड्डी इन ठिकानेंपर वायु कोप होनेसे हडफूटनी हो, संधिसंधिमें पीडा होय मांस और बल ये क्षीण हो जाय, निद्रा आवे नहीं और निरन्तर पीडा होय इस जगह सुश्रुतने कुछ विशेष लिखा है ॥

मज्जागत वातलक्षण ।

वाते मज्जागते पीडा न कदाचित्प्रशाम्यति ॥

अर्थ--दुष्ट वात मज्जाश्रित हुआ हो तो अंगकी वेदना कभी शांत नहीं होती है ॥

शुक्रगत वातलक्षण ।

क्षिप्रं मुंचति बध्नाति शुक्रं गर्भमथापि वा ।
विकृतिं जनयेच्चापि शुक्रस्थः कुपितोऽनिलः ॥

अर्थ--शुक्रस्थानकी वायुका कोप होनेसे वह शुक्रको जल्दी पतन करे और बंधन करे, अथवा गर्भको जल्दी छोडे और बंधन करे और गर्भका अथवा शुक्रका विकार प्रगट करे ॥

सप्तधातुगत वातचिकित्सा ।

वायौ त्वगाश्रिते स्नेहाऽभ्यंगः स्वेदश्च कारयेत् ।
रक्तस्थे शीतलाँल्लेपान्विरेकं रक्तमोक्षणम् ॥

अर्थ--त्वचागत वायुके दुष्ट होनेसे स्नेहपान, अभ्यंग और पसीने निकालना ये उपचार करे, रक्तगतवातपर शीतल लेप, विरेचन और रक्तमोक्ष ये उपचार करे ॥

मांसमेदोगत ।

मांसमेदोगते वाते सविरेकं निरूहणम् ॥

अर्थ--मांसगत और मेदोगत वायु कुपित होनेसे विरेक, निरूहबास्ति ये उपचार करे ॥

अस्थिमज्जागत ।

अस्थिमज्जागते स्नेहं बहिरंतश्च योजयेत् ॥

अर्थ--अस्थिगत तथा मज्जागत वायु कुपित होनेसे स्नेहपान तथा स्नेहमर्दन ये उपचार करने चाहिये ॥

केतकादि तैल ।

केतकनागबलातिबलानां यद्बहुलेन रसेन विपक्कम् ।
तैलमनल्पतुषोदकसिद्धं मारुतमस्थिगतं विनिहंति ॥

अर्थ--केतकी खिरेटी और गगेरन इनका पुष्कल रस और तुसोंके पुष्कल (बहुतसा) जलमें तेल डालके सिद्ध करे यह तेल अस्थिगत वायुका नाश करे ॥

शुक्रगत ।

हर्षोंन्नपानं शुक्रस्थे बलशुक्रकरं हितम् ॥

अर्थ--शुक्रगत वायु कुपित होनेसे हर्षोत्पादन और बल तथा धातु इनके बढानेवाले ऐसे अन्न और पान देवे तो हितकारी होय ॥

शिरागतवायु ।

कुर्याच्छिरागतः शूलं शिराकुंचनपूरणम् ।
स बाह्याभ्यंतरायामं खल्लीं कुब्जत्वमेव च ॥

अर्थ--वायु शिरा (नाडी) गत होनेसे शूल नाडीका संकोच और स्थूलत्व करे और बाह्यायाम आभ्यंतरायाम, खल्ली और कुबडापना इन रोगोंको उत्पन्न करे ॥

चिकित्सा ।

स्नेहाभ्यंगोपनाहांश्च मर्दनालेपनानि च ।
वाते शिरागते कुर्यात्तथा चासृग्विमोक्षणम् ॥

अर्थ--शिरागत वायु पर स्नेहपान, अंगमें तेलकी मालिस, उपनाह, मर्दन, लेप और रुधिर निकालना ये उपचार करे ॥

स्नायुगत वातलक्षण ।

शूलमाक्षेपकः कंपः स्तंभः स्नाय्वनिले भवेत् ॥

अर्थ--स्नायुगत वातमें शूल वातरोग, कंप और स्तंभ यह लक्षण होते हैं ॥

सर्वांगैकांगरोगांश्च कुर्यात्स्नायुगतोऽनिलः ॥

अर्थ--वायु स्नायुगत होनेसे सर्वांग और एकांग रोगोंको करे ॥

चिकित्सा ।

स्वेदोपनाहाग्निकर्मबंधनोन्मर्दनानि च ।
क्रुद्धे स्नायुगते वाते कारयेत्कुशलो भिषक् ॥

अर्थ-स्नायुगत वायुपर पसीने निकालना, उपनाह, दाग देना, बांधना, मर्दन करना ये संपूर्ण उपचार करे ॥

संधिगतवातनिदान ।

हंति संधिगतः संधीन् शूलशोथौ करोति च ॥

अर्थ-संधिगत होनेसे संधिका विश्लेष (जुदा जुदा होना) और संधिका जकड जाना तथा शूल और सूजन इन रोगोंको प्रगट करे ॥

सामान्यचिकित्सा ।

कुर्यात्संधिगते वाते दाहस्वेदोपनाहनम् ॥

अर्थ-संधिगत वादीपर दागना, पसीने निकालना तथा उपनाहन कर्म करना चाहिये॥

इंद्रवारुणिचूर्ण ।

इंद्रवारुणिकामूलं मागधीगुडसंयुतम् ।
भक्षयेत्कर्षमात्रं तत्संधिवातं व्यपोहति ॥

अर्थ-इन्द्रायनकी जड, पीपल और गुड इनको एकत्र कर इसमेंसे एक तोलेभर सेवन करे तो संधिवातको नष्ट करे ॥

पित्तकफाश्रित प्राण ।

प्राणे पित्तावृते छर्दिर्दाहश्चैवोपजायते ।
दौर्बल्यं सदनं तंद्रा वैरस्यं कफकावृते ॥

अर्थ-प्राणवायु पित्तसंयुक्त होनेसे वमन और दाह उत्पन्न हो और कफसंयुक्त होनेसे दुर्बलपना, ग्लानि, तंद्रा और मुखमें विरसता ये होंय ॥

पित्तकफाश्रित उदान ।

उदाने पित्तयुक्ते तु दाहो मूर्च्छा भ्रमः क्लमः ।
अस्वेदहर्षौ मंदाग्निः शीतता च कफावृते॥

अर्थ-उदानवायु पित्तयुक्त होनेसे दाह, मूर्च्छा, भ्रम, अनायास श्रम ये होंय और कफयुक्त होय तौ पसीना नहीं आवे, रोमांच अग्नि मंद होय और शीत लगे ॥

पित्तकफाश्रित समान।

स्वेददाहौष्ण्यमूर्च्छाः स्युः समाने पित्तसंयुते ॥
कफेन संगो विण्मूत्रे गात्रहर्षश्च जायते ॥

अर्थ-समानवायु पित्तयुक्त होनेसे पसीना दाह, गरमी और मूर्च्छा ये होते हैं. पित्तकफयुक्त होनेसे मलमूत्रका रुकना और रोमांच होय ॥

पित्तकफाश्रित अपान।

अपाने पित्तयुक्ते तु दाहौष्ण्यं रक्तमूत्रता।
अधःकाये गुरुत्वं च शीतता च कफावृते ॥

अर्थ-अपानवायु पित्तयुक्त होनेसे दाह, उष्णता और लाल मूत्र होय तथा कफयुक्त होनेसे कमरके नीचेके भागमें भारीपना और सरदीका लगना होते हैं ॥

पित्तकफाश्रित व्यान।

व्याने पित्तावृते दाहो गात्रविक्षेपणं क्लमः।
स्तंभनो दंडकश्चापि शोथशूलौ कफावृते ॥

अर्थ-व्यानवायु पित्तयुक्त होनेसे दाह, गात्रोंका विक्षेप अर्थात् इधर उधरको फेरना और श्रम होय, कफयुक्त होनेसे शरीर लकडीके समान स्तंभ होय, सूजन और शूल होय, इस जगह प्राणादि पंच वायुके परस्पर मिलनेसे बीस प्रकारके आवर्ण चरकोक्त जान लेने और वाग्भटके मतसे आवर्ण बाईस प्रकारके हैं हमने ग्रंथके विस्तारभयसे छोड दिये हैं ॥

चिकित्सा।

वाते सपित्ते कुर्वीत वातपित्तहरीं क्रियाम्।
सकफे तत्र कुर्वीत वातश्लेष्महरीं क्रियाम् ॥

अर्थ-पित्तयुक्त वातका कोप होनेसे वातपित्तनाश क्रिया करे और वही वायु कफाश्रित दुष्ट होनेसे वातकफनाश चिकित्सा करनी चाहिये ॥

आक्षेपके सामान्य लक्षण।

यदा तु धमनीः सर्वाः कुपितोऽभ्येति मारुतः। तदाक्षिपत्याशु मुहुर्मुहुर्देहं मुहुश्चरः ॥ मुहुर्मुहुस्तदाक्षेपादाक्षेपक इति स्मृतः ॥

अर्थ-जिस कालमें वायु कुपित होकर सब धमनी (नाडी) में जायकर प्राप्त होय, तब उस जगह वह वारंवार संचार करके देहको वारंवार आक्षिप्त करती है

अर्थात् हाथीपर बैठनेवाले पुरुषके समान सब देहको चलायमान करे उस देहके वारं-वार चलानेको आक्षेपक रोग कहते हैं ॥

आक्षेपके चार भेद ।

पित्तश्लेष्माचितो वायुर्वायुरेव च केवलः ।
कुर्यादाक्षेपकं चान्यश्चतुर्थमभिघातजः ॥

अर्थ-पित्तवात, श्लेष्मवात और केवल वात इनसे उत्पन्न भये तीन आक्षेप और चौथा अभिघातसे उत्पन्न हुआ ऐसे चार आक्षेप हैं ॥

केवल वातजाक्षेप ।

पाणिपादशिरःपृष्ठश्रोणीः स्तभ्नाति मारुतः ।
दंडवत् स्तब्धगात्रस्य दंडकः सोऽनुपक्रमः ॥

अर्थ-हाथ, पांव, पीठ, शिर, कमर इनको वायु स्तब्ध करता है और दंडके माफिक अंगको ऐंठाता है यह दंडक नाम आक्षेप चिकित्सा करने योग्य है ॥

सामान्य चिकित्सा ।

आक्षेपके शिरां विध्येत्कुर्याद्वातहरीं क्रियाम् ॥
तीक्ष्णैः प्रधमनैर्नस्यैस्तथा संज्ञां स विंदति ॥

अर्थ-आक्षेपक वायुपर फस्त खोले वातनाशक तथा तीक्ष्ण ऐसी औषधी नाकमें फूंके तथा प्रधमन नस्य करे तो उसको संज्ञा हो आवे ॥

आक्षेपकचिकित्सा ।

बलामूलकषायस्य दशमूलीशतस्य च । यवकोलकुलित्थानां क्वाथस्य पयसस्तथा ॥ अष्टावष्टौ स्मृता भागास्तैलादेक-स्तदेकतः । पचेदवाप्य मधुरं गणं सैंधवसंयुतम् ॥ तथागुरुं सर्जरसं सरलं देवदारु च । मंजिष्ठां पद्मकं कुष्ठमेलां कालां च सारिवाम् ॥ मांसीं शैलेयकं पत्रं तगरं सारिवां वचाम् । शता-वरीमश्वगंधां शतपुष्पां पुनर्नवाम् ॥ तत्साधु सिद्धं सौवर्णे रा-जते मृन्मयेऽपि वा । प्रक्षिप्य कलशे सम्यक् स्वनुगुप्तं निधाप-येत् ॥ एतन्महाबलातैलं प्रयुक्तमविलंबितम् । सर्वानाक्षेपका-दींस्तु वातव्याधीन्व्यपोहति ॥ हिक्कां श्वासमधीमंथं गुल्मं कासं

सुदुस्तरम् । षण्मासादुपयुक्तं तदंत्रवृद्धिं च नाशयेत् ॥ यथाब-
लमलं मात्रां सूतिकाये प्रदापयेत् । याच गर्भार्थिनी नारी क्षीण-
शुक्रश्च यः पुमान् ॥ वातक्षीणे मर्महते मथितेऽभिहते तथा ।
भग्ने श्रमाभिपन्ने च सर्वथैतत्प्रयुज्यते ॥ एतद्धि राज्ञा कर्तव्यं
कर्तव्यं राजपूजितैः । सुखिभिः सुकुमारैश्च धनिभिर्मानवैः सदा ॥

अर्थ–खिरेटीकी जडका काढा, दशमूलका काढा, जौ, बेर और कुलथी इनके काढे और दूध ये सब आठ २ भाग लेवे. तेल १ भाग, मधुर गण, सैंधा निमक, अगर, राल, सरल, देवदारु, मंजीठ, पद्माख, कूठ, इलायची, नागबला, सारिवा, जटामांसी, शिलाजीत, तमालपत्र; तगर, कालीसर, वच, शतावर, असगंध, सोंफ, पुनर्नवा ये प्रत्येक एक २ तोला लेवे. इन सबका काढा करके मिलावे. फिर इसमें तेल डालके पचावे जब तेल सिद्ध हो जावे तब उतारके इसको सुवर्णके अथवा चांदीके अथवा मिट्टीके चिकने बरतनमें भरके रख देवे इस महाबलादितैलके सेवन करनेसे तत्काल संपूर्ण आक्षेपकं वायु तथा वातव्याधि इनको नाश करे तथा हिचकी, श्वास, अधिमंथ, गोला और घोर खांसी इनको दूर करे इसको छः महीने पर्यंत मालिस करनेसे अंत्रवृद्धिको नाश करे. तथा प्रसूता स्त्रीका बल और दोष काल विचारके मात्रा दे वे जिस स्त्रीको गर्भकी इच्छा होवे और क्षीणवीर्य पुरुष किंवा वायुसे क्षीण हुआ, मर्मस्थानमें जिसके चोट लगी हो, जिसकी हड्डी मुड गई हो तथा परिश्रमी इन सबको यह तेल देवे, यह तैल राजाओंको अथवा राजपुरुष हैं उनको तथा सुखी, पुरुष सुकुमार, धनवाले इत्यादिको देना चाहिये ॥

आक्षेपके भेद अपतंत्रक ।

क्रुद्धः स्वैः कोपनैर्वायुः स्थानादूर्ध्वं प्रवर्तते । पीडयन् हृदयं
गत्वा शिरःशंखौ च पीडयेत् ॥ धनुर्वन्नामयेत् गात्राण्याक्षिपे-
न्मोहयेत्तथा । स कृच्छ्रादुच्छ्वसेच्चापि स्तब्धाक्षोऽथ निमी-
लकः ॥ कपोत इव कूजेच्च निःसंज्ञः सोऽपतंत्रकः ॥

अर्थ–रूक्षादि स्वकारणोंसे कोपको प्राप्त भई जो वायु सो अपने स्वस्थानको छोड ऊपर जायकर प्राप्त हो और हृदयमें जायकर पीडा करे, मस्तक और कनपटी इनमें पीडा करे और देहको धनुषके समान नवाय देवे और चले तो मूर्च्छित कर दे, वह रोगी बडे कष्टसे श्वास लेय, नेत्र मिच जावें, अथवा टेढे हों जाय कबूतरके समान गूंजे, तथा बेहोस होय, इस रोगको अपतंत्रक कहते हैं ॥

चिकित्सा ।

अथापतंत्रकेनार्तमातुरं नापतर्पयेत् । निरूहबस्तिं वमनं सेवयेन्न कदाचन ॥ श्वसनाः कफवाताभ्यां रुद्धास्तस्य विमोक्षयेत् । तीक्ष्णैः प्रधमनैः संज्ञां तासु मुक्तासु विंदति ॥

अर्थ–अपतंत्र वातसे पीडित मनुष्यको रेचन, निरूहवस्ति और वमन ये कदाचित् न करावे कफ वायुसे रुके हुए श्वासके वहनेवाले मार्गोंको तीक्ष्ण नस्य आदिसे शुद्ध करे जब श्वास लेनेके मार्ग खुल जाते हैं तब इस प्राणीको होस होता है ॥

हरीतक्यादि लेह ।

हरीतकी वचा रास्ना सैंधवं साम्लवेतसम् । घृतमार्द्रकसंयुक्तमपतंत्रकनाशनम् ॥ अम्लवेतसकाभावे चुक्रं दातव्यमीरितम् ॥

अर्थ–हरड, वच, रास्ना, सैंधानिमक, अमलवेत और घी॰ तथा अदरख इनका अवलेह अपतंत्रक वायुको नाश करे है यदि अमलवेत न मिले तो चूका डाले ॥

मरीचादि चूर्ण ।

**मरिचं शिग्रुबीजानि विडंगं च फणिज्जकम् ।
एतानि सूक्ष्मचूर्णानि दद्याच्छीर्षविरेचनम् ॥**

अर्थ–काली मिरच, सहजनेके बीज, वायविडंग और फणिज्जग इनका चूर्ण मस्तकरेचनार्थ देवे ॥

दंडापतानक ।

**कफान्वितो यदा वायुर्धमनीष्वेव तिष्ठति ।
स दंडवत्स्तंभयाति कृच्छ्रो दंडापतानकः ॥**

अर्थ–वायु अत्यंत कफयुक्त होकर सब धमनी (नाडी) में प्राप्त होय तब सब देहको दंड (लकडी) के समान तिरछा करदे यह दंडापतानक कष्टसाध्य है ॥

अपतानक ।

दृष्टिं संस्तभ्य संज्ञां च हत्वा कंठेन कूजति । हृदि मुक्ते नरः स्वास्थ्यं याति मोहं वृते पुनः ॥ वायुना दारुणं प्राहुरेके तमपतानकम् ॥

अर्थ-दृष्टीका स्तंभन हो जाय, संज्ञा जाती रहे, गलेमें घुरघुर शब्द होय, वायु जब हृदयको छोडे तब रोगीको होश होय और वायु हृदयको व्याप्त करै तब फेर मोह हो जाय इस भयंकर रोगीको कोई अपतानक ऐसे कहते हैं ॥

असाध्यत्व कहते हैं ।

गर्भपातनिमित्तश्च शोणितातिस्रवाच्च यः ।
अभिघातनिमित्तश्च न सिद्ध्यत्यपतानकः ॥

अर्थ-गर्भपातके होनेसे अथवा अतिरक्तस्रावके होनेसे अथवा अभिघात कहिये दंडादिकोंकी चोट लगनेसे जो प्रगट अपतानक रोग सो असाध्य है ॥

चिकित्सा ।

अथापतानकेनार्तमस्रस्ताक्षमवेपनम् ।
अखट्वापातिनं चैव त्वरया समुपाचरेत् ॥

अर्थ-जो रोगी अपतानकवायुसे व्याप्त तथा जिसके नेत्र शिथिल और कंपरहित तथा जो खाटमें न पडा हो ऐसे रोगीका बहुत जल्दी यत्न करे देरी करनेसे रोगी असाध्य हो जाता है ॥

अपतानकिने शस्तं दशमूलीशृतं जलम् ।
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तं जीर्णे मांसरसौदनम् ॥

अर्थ-अपतान रोगपर दशमूलके काढेमें पीपलका चूर्ण डालके पीवे जब काढा पच जावे तब मांसरस पथ्यमें देवे तो अपतानवायु नष्ट हो ॥

चिकित्साप्रक्रिया ।

तैलेन मर्दनं स्वेदस्तथा तीक्ष्णेन नावनम् ।
स्रोतोविशोधनं पश्चात्सर्पिः पानं हितं स्मृतम् ॥

अर्थ-अपतानवाले रोगीके तेलका मर्दन करे, पसीने निकाले. तीक्ष्ण औषधोंकी नस्य देवे. फस्त खोले फिर घृतपान करावे ॥

हंत्यभुक्तवता पीतमम्लं दध्यपतानकम् ।
मरीचेन समायुक्तं स्नेहबास्तिरथापि च ॥

अर्थ-भोजनके प्रथम खट्टे दहीमें कालीमिरचोंका चूर्ण डालके पीवे. किंवा स्नेहबस्ती करे तो अपतानक वायु नष्ट होवे ॥

धनुस्तंभलक्षण ।

धनुस्तुल्यो नमेद्यस्तु स धनुस्तंभसंज्ञितः । विवर्णबद्धवदनः स्रस्तांगो नष्टचेतनः ॥ प्रस्विद्यंश्च धनुस्तंभी दशरात्रं न जीवति ॥

अर्थ-धनुके समान टेढे होनेको धनुस्तंभ कहते हैं. उसमें वर्णका बदलना, दांतोंका जकडना, अंग शिथिल होना, मूर्च्छित होना और खेद ये विकार होते हैं. धनुस्तंभ रोगी दश दिनतक बचता नहीं. इसमें अंतरायाम और बाह्यायाम इनके लक्षण न होनाही पहलेसे विशेष कहा है ॥

दूसरा प्रकार ।

कंठावरोधो धनुराकृतिः स्याद्धृदि व्यथा दंतनिबंधनं च ।
मुखस्य शोषः शिशिरस्य कांक्षा यस्मिन् धनुर्वायुरुदाहृतः सः ॥

अर्थ-कंठका अवरोध, धनुके समान टेढा होना, हृदयमें शूल, दांतोंका जकडना, मुखशोष और ठंडीकी इच्छा ये लक्षण जिसमें हों वह धनुर्वात कहलाता है ॥

कुब्जलक्षण ।

हृदयं यदि वा पृष्ठमुन्नतं क्रमशः सरुक् ।
क्रुद्धो वायुर्यदा कुर्यात्तदा तं कुब्जमादिशेत् ॥

अर्थ-वायु कुपित होकर जब हृदय या पीठको वेदनाके साथ ऊंचा करे तब वह कुब्ज कहलाता है ॥

वातघ्नैर्दशमूल्या च नवं कुब्जमुपाचरेत् ।
स्नेहैर्मांसरसैश्चापि प्रवृद्धं तं विवर्जयेत् ॥

अर्थ-वातनाशक औषध, दशमूलका काढा स्नेहपान और मांसरस इत्यादिक उपचार करे. परंतु जो अत्यंत बढा होवे उसका यत्न न करे ॥

अंतरायामलक्षण ।

अंगुलीगुल्फजठरहृद्वक्षोगलसंश्रितः । स्नायुप्रतानमनिलो यदा क्षिपति वेगवान् ॥ विष्टब्धाक्षः स्तब्धहनुर्भग्नपार्श्वः कफं वमन् । अभ्यंतरं धनुरिव यदा नमति मानवः ॥ तदासोऽभ्यन्तरायामं कुरुते मारुते बली ॥

अर्थ-पैरकी ऊंगली, घोंटू, हृदय, पेट, उरःस्थल और गला इन ठिकानोंमें रहे जो वायु वो वेगवान् होकर जो वहां नसोंके जाल उसको सुखाय बाहर निकाल दे,

उस मनुष्यके नेत्र स्थिर हो जांय, मेंडो रहिजाय, पसवाडोंमें पीडा होय, मुखसे कफ गिरे और जिस समय मनुष्य धनुषके सदृश नीचेको नमजाय तब वह बली वायु (अंतरायाम) रोगको करे ॥

बाह्यायामलक्षण ।

महाहेतुर्बली वायुः शिराः सस्नायुकंडराः । मन्यापृष्ठाश्रिता बाह्याः संशोष्यानामयेद्बहिः ॥ यत्र तं बहिरायामं प्रवदंति भिषग्वराः । तमसाध्यं बुधाः प्राहुर्वक्षःकट्यूरुभंजनम् ॥

अर्थ-बडे कारणोंसे कुपित हुआ वायु कंधरा और पीठ इनके स्नायु और कंडरोंको सुखाकर टेढा करता है. इसीसे वैद्यलोग इस वायुको बहिरायाम कहते हैं; यह उर, कमर और जंघा इनको नष्ट करता है. यह असाध्य है ॥

सामान्य ।

बाह्यायामेंतरायामे विधेयार्दितवत् क्रिया ॥

अर्थ-बाह्यायाम और अंतरायाम वायु पर अर्दितवायु पर जो चिकित्सा कही है वह करे॥

दूसरा प्रकार ।

बाह्यायामांतरायामपार्श्वशूलकटिग्रहान् ।
खल्लींदंडापतानौ च स्नेहस्वेदपुरैर्जयेत् ॥

अर्थ-बाह्यायाम, अंतरायाम, पसवाडेका शूल, कटिग्रह (कमरका रह जाना) खल्लीवात और दंडापतानक इनको स्नेहन तथा पसीने निकालना इत्यादि उपायोंसे जीते ॥

चिकित्सा ।

बाह्यायामेंतरायामे धनुस्तंभे च कुब्जके । योज्यं प्रसारिणीतैलं तेन तेषां शमो भवेत् ॥ वातव्याधिषु सामान्या याः क्रियाः कथिताः पुरा । कर्तव्या एव ताः सर्वास्तैलमेताद्विशेषतः ॥

अर्थ-बाह्यायाम, अंतरायाम, धनुस्तंभ और कुब्जकवात इन पर आगे कही प्रसारणीतैलकी मालिस करे तो इनकी शांति होवे. तथा वातव्याधिकी सामान्य चिकित्सा जो पहले लिख आये हैं वह करे, परंतु प्रसारणी तैलकी मालिस विशेष करके करनी चाहिये ॥

सर्जतैल ।

धनुर्वायुः शमं याति सर्जतैलस्य मर्दनात् ।
दशमूलीकषायो वा पाने नस्ये च शस्यते ॥

अर्थ–रालसे बने हुए तेलकी मालिस करनेसे धनुर्वात दूर हो, अथवा दशमूलके काढेको पीवे अथवा दशमूलके काढेकी नस्य देवे तो धनुर्वात दूर हो ॥

एरंडादिकाढा ।

एरंडबिल्वं बृहतीद्वयं च सौवर्चलं व्योषविरामठं च ।
समातुलुंगीलवणोत्तमं च क्वाथं धनुर्वातहरं प्रशस्तम् ॥

अर्थ–अंडकी जड, बेलगिरी, छोटी कटेरी, बडी कटेरी, संचरनिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, बिज़ोरेकी जड और सैंधानिमक इनका काढा करके पीवे तो धनुर्वात दूर होवे ॥

पक्षवध ।

गृहीत्वार्धं तनोर्वायुः शिराः स्नायूर्विशोष्य च । पक्षमन्यतरं हंति संधिबंधान्विमोक्षयन् ॥ कृत्स्नोऽर्धकायस्तस्य स्यादकर्मण्यो विचेतनः । एकांगरोगं तं केचिदन्ये पक्षवधं विदुः ॥

अर्थ–वायु आधे शरीरको पकड सब शरीरकी नसोंको सुखायकर दहने अंगको अर्धनारीश्वरके समान कार्य करनेको असामर्थ्य कर दे और संधिके बंधनोंको शिथिल कर दे, पीछे उस रोगीके सब वा आधे अंग हलें चलें नहीं और उसको थोडाभी देखनेका स्पर्शआदिका ज्ञान नहीं रहे इसको एकांगरोग कहते हैं । दूसरे पक्षवध कहते हैं इसीको पक्षाघा कहते हैं ॥

सर्वांगरोगलक्षण ।

सर्वांगरोगं तं केचित्सर्वकायस्थितेऽनिले ॥

अर्थ–तद्वत् कहिये शिरास्नायुविशोष्य इत्यादि सम्प्राप्तिलक्षण इससे जानने, सर्व शिरा (नाडी) में वायु प्राप्त होनेसे उसको सर्वांगरोग कोई कहते हैं. अब साध्यासाध्यके ज्ञानार्थ और दोषोंका सम्बन्ध कहते हैं ॥

दाहसंतापमूर्च्छाः स्युर्वायौ पित्तसमन्विते । शैत्यशोथगुरुत्वानि तस्मिन्नेव कफान्विते ॥ शुद्धवातहतं पक्षं कृच्छ्रसाध्यतमं विदुः । साध्यमन्येन संसृष्टमसाध्यं क्षयहेतुकम् ॥ गर्भिणीसूतिकाबालवृद्धक्षीणेष्वसृक्स्रुतौ । पक्षाघातं परिहरेद्वेदनारहितो यदि ॥

अर्थ-पक्षवधकी वायु कफपित्तयुक्त होय तौ दाह, संताप और मूर्च्छा होय औ वही वायु कफयुक्त होय तौ शीत, सूजन, भारीपन ये लक्षण होंय और केवल वायुसे प्रगट पक्षाघात अत्यंत कष्टसाध्य होय है और दोषोंसे संसृष्ट होनेसे साध्य होय है। क्षयसे प्रगट भया पक्षाघात असाध्य होय है । गर्भिणी, बालक, वृद्ध और क्षीण इनके भया तथा रुधिरके स्रावसे प्रगट पक्षाघात पीडारहित, होय तौ उसको वैद्य त्याग दे अर्थात् असाध्य जानकर चिकित्सा न करे ॥

माषादि काढा ।

माषात्मगुप्तावातारिवाट्यालकजलाश्रितम् । हिंगुसैंधवसंयुक्तं पक्षाघातं विनाशयेत् ॥ माषके हिंगुसिंधूत्थे जरणाद्यास्तु शाणिकाः ॥

अर्थ-उडद, कौंचके बीज, अंडकी जड और खिरेटीकी जड इनका काढा करके उनमें हींग और सैंधानिमक डालके पीवे तो पक्षाघातका नाश करे इसमें हींग और सैंधानिमक ये एक २ मासा तथा जीरा और जीरे आदि तीन २ मासे डाले. (परंतु मूलमें जीरे आदिका नामभी नहीं है) ॥

ग्रंथिकादि तैल ।

ग्रंथिकाग्निकणाशुंठीरास्नासैंधवकल्कितम् ।
माषक्वाथाश्रितं तैलं पक्षाघातं व्यपोहति ॥

अर्थ-पीपरामूल, चित्रक, पीपल सोंठ, रास्ना और सैंधानिमक इनका कल्क करके उडदोंके काढेसे अथवा पूर्वोक्त कल्कमें तेल सिद्ध करे इसको देहमें लगावे तो पक्षाघात वायुको नष्ट करे ॥

माषादि तैल ।

माषात्मगुप्तातिविषाऋबूकरास्नाशताह्वालवणैः सुपिष्टैः ।
चतुर्गुणे माषबलाकषाये तैलं शृतं हंति हि पक्षघातम्

अर्थ-उडद, कौंचके बीज, अतीस, अंडकी, जड, रास्ना, शतावर, सैंधानिमक, उडद और खिरेटी इनके काढेमें चतुर्थांश तेल डालके सिद्ध करे तो वह पक्षाघातको दूर करे ॥

माषादि सप्तक ।

माषबलाशूकविंबीकट्तृणरास्नाश्वगंधोरुबूकाणाम् । क्वाथः प्रातः पीतो रामठलवणान्वितः कोष्णः ॥ अपनयति पक्षघातं मन्यास्तंभं सकर्णनादरुजम् । दुर्जयमर्दितवातं सप्ताहाज्जयति चावश्यम् ॥

अर्थ-उडद, खिरेटी, कौंचके बीज, रोहिष तृण, रास्ना, असगंध और अंडकी जड इनका काढा हींग और सैंधानिमक डालके प्रातःकाल पीवे तो पक्षाघात मन्यास्तंभ कर्णनाद तथा अर्दितवायु इनको सात दिनमें जीत लेवे ॥

माषतैल।

ग्रंथिकाग्निकणारास्नाकुष्ठं नागरसैंधवम्।
माषं क्वाथेन तत्तैलं पक्षाघातविनाशनम् ॥

अर्थ-पीपरामूल, चित्रककी छाल, पीपल, रास्ना, कूठ, सोंठ. सैंधानिमक और उडद इनके काढेमें सिद्ध करा हुआ तेल पक्षाघात नाश करे ॥

कपिकच्छ्वादि काढा।

कपिकच्छुबलैरंडमाषनागरसाधितम्। ससैंधवं पिबेत्काथं ना-
सारंध्रेण मानवः॥ पक्षाघातं निहंत्याशु शिरोरोगं हनुग्रहम्।
अर्दितं संधिवातं च मन्यास्तंभं सुदारुणम् ॥

अर्थ-कौंचके बीज, खिरेटी, अंडकी जड, सोंठ, उडद इनका काढा सैंधानिमक डालके नाकके द्वारा पीवे तो पक्षाघात, मस्तकरोग, हनुग्रह, अर्दित, संधिवात और दारुण मन्यास्तंभ इनको नाश करे ॥

गुग्गुल पक्षाघातपर।

कृष्णाजटानागरचव्यवह्निपाठाविडंगेंद्रयवैः समांशैः। हिंगूग्र-
गंधाद्विजयष्टिकौंतीमातंगकृष्णातिविषान्वितश्च ॥ ससर्षपाजा-
जियुगाजमोदान्वितैः समस्तैस्त्रिफला द्विभागा। एभिः समो
गुग्गुलुराजमिश्रो भुक्तो हरेत्पक्षभवानिलार्तिम् ॥

अर्थ-पीपरामूल, सोंठ, चव्य, चित्रक, पाढ, वायविडंग, इन्द्रजौ, हींग, वच, भारंगी, रेणुकबीज, गजपीपल, अतीस, सरसों, जीरा, काला जीरा और अजमोद ये सब समान भाग लेवे और सब औषधोंसे दूना त्रिफला, तथा सबके समान गूगल मिलायके गोली बनाय लेवे इसको बलाबल विचारके देवे तो पक्षाघातवायुको नष्ट करे ॥

रालतैल।

समुद्धरेत्सर्जतैलं यंत्रे च नलिकाभिधे।
विमर्दनं तेन तनो पक्षाघातं विनाशयेत् ॥

अर्थ-रालका चूर्ण करके उसका नलिकायंत्रद्वारा तेल निकाल लेवे और देहमें मालिस करे तो पक्षावात वायुको नाश करे ॥

पक्षाभिघाते कटुतुंबिबीजं तैलं तथा निंबफलोद्भवं च ।
गोमायुपारावतकुक्कुटानां पित्तैः प्रलेपः प्रशमाय वायोः ॥

अर्थ-पक्षाघात वादी पर कडुए सपेद (तुंबाके) बीजोंको पीस उनका अथवा निबोरीके तेलका अथवा स्यारिया, कबूतर और मुरगा इनके पित्तेका लेप करे तो पक्षाघात दूर होवे ॥

शुंठीचूर्ण ।

लघुशुंठीकृतं चूर्णं पलसप्तमितं बुधैः । तत्समं गोघृतं दत्त्वा भर्जयित्वा ततो बुधः ॥ शुंठीसमं रसोनं च पिष्ट्वा तत्र विनिक्षिपेत् । पक्षाघातं हनुस्तंभं कटिभंगं तथैव च ॥ बाहुपीडां जयेत्तीव्रां वातरोगं च नाशयेत् ॥

अर्थ-सोंठका चूर्ण २८ तोले, गौका घी २८ तोले डालके उस सोंठको भून लेवे. फिर लहसनको छील और पीसके ३८ तोले ले, उस सोंठमें मिलाय देवे फिर बलाबल विचारके खानेको देवे तो यह सोंठ पक्षाघात, हनुस्तंभ, कटिभंग, बाहुपीडा और वातरोग इनको नाश करे ॥

अर्दितनिदान ।

उच्चैर्व्याहरतोऽत्यर्थं खादतः कठिनानि च । हसतो जृंभमाणस्य विषमाच्छयनाशनात् ॥ शिरोनासौष्ठचुबुकललाटेक्षणसंधिगः । अर्दयत्यनिलो वक्रमर्दितं जनयेत्ततः ॥ वक्री भवति वक्रार्धं ग्रीवा चास्यात्प्रवर्त्तते । शिरश्चलति वाक्स्तंभो नेत्रादीनां च वैकृतम् ॥ ग्रीवाचुबुकदंतानां तस्मिन्पार्श्वे सवेदना । तमर्दितमिति प्राहुर्व्याधिं व्याधिविशारदाः ॥ वातात्पित्तात्कफाच्चास्यात्त्रिविधं तं समासतः ॥

अर्थ-ऊंचे स्वरसे वेदादिकका पाठ करनेसे अथवा कठिन पदार्थ सुपारी आदिके खानेसे, बहुत हँसनेसे, बहुत जंभाईके लेनेसे, ऊंचे नीचे स्थानमें सोनेसे, विषमाशन (भोजन) के करनेसे कोपको प्राप्त भई जो वायु मस्तक, नाक, होठ, ठोडी, ललाट और नेत्र इनकी सन्धियोंमें प्राप्त हो मुखमें पीडा करे

अर्थात् अर्दित रोगको उत्पन्न करे उस पुरुषका मुख आधा टेढा हो जाय, उसकी नाड मुडे नहीं, मस्तक हिला करे अच्छी तरह बोला जाय नहीं, नेत्र भृकुटी, गाल इनकी विकृति कहिये पीडा, फरकना, टेढा होना इत्यादि होय. और जिस तरफ अर्दित रोग होय उस तरफ नार, ठोडी और दांत इनमें पीडा होय. व्याधि जाननेमें जो कुशल वैद्य है वह इस व्याधिको अर्दितरोग ऐसे कहते हैं. शंका-क्योंजी अर्दितरोगमें और पक्षाघातमें क्या भेद है ? उत्तर-अर्दितसे गर्भमेंभी पीडा होय है कभी नहीं होय है और पक्षाघातमें सदा पीडा होती है । अर्दितरोग चार प्रकारका है ॥

वातार्दित ।

लालास्रावो व्यथा कंपः स्फुरणं हनुवाग्ग्रहः ।
ओष्ठयोः श्वयथुः स्थूलश्चार्दिते वातजे भवेत् ॥

अर्थ-लार गिरना, पीडा होना, कंप फुरफुरना, ठोडी और भाषण इनका प्रतिबंध व ओष्ठको बहुत सूजन इतने लक्षण वातार्दितके जानने ॥

पित्ताश्रित व कफाश्रित अर्दितलक्षण ।

पीतमास्यं ज्वरस्तृष्णा पित्तजे मोहधूपने ।
गंडे शिरसि मन्यायां शोथः स्तंभः कफात्मके ॥

अर्थ-पित्ताधिक अर्दितवायुमें मुखको पीलापन, ज्वर, तृषा, मोह और कफ ये विकार होते हैं और कफात्मक अर्दितमें गाल, मस्तक और गरदन इनपर सूजन और स्तंभ ये विकार होते हैं ॥

चिकित्सा ।

स्नेहपानानि नस्यं च भोज्यान्यनिलहंति च ।
उपनाहाश्च शस्यंते स्वेदनं च तथार्दिते ॥

अर्थ-स्नेहपान, नस्य, वातनाशक भोजनके पदार्थ तथा पसीने निकालना इत्यादिक उपचार अर्दितवादी पर करे ॥

दशमूलीकषायेण मातुलुंगरसेन वा ।
बलायाः पंचमूल्या वा क्षीरं वातात्मके हितम् ॥

अर्थ-दशमूलके काढेके साथ अथवा बिजोरेके रसके साथ अथवा खिरेटीके काढेके साथ अथवा पंचमूलके काढेके साथ दूध पीवे तो वातात्मक अर्दित रोगपर हित करे ॥

पिष्टं माषकृतं जग्ध्व नवनीतेन सोऽर्दिती ।
क्षीरं मांसरसैर्भुक्त्वा दशमूलीरसं पिबेत् ॥

अर्थ-उडदका चून मक्खनके साथ खाकर अथवा मांसरसके साथ दूध पीकर दशमूलका काढा पीवे तो आर्दितवातपर परमोत्तम है ॥

पित्तार्दित ।

आर्दिते पित्तजे शीतान्स्नेहोत्थांश्चैव निर्दिशेत् ।
घृतबस्तिप्रसेकं च रक्तस्रावं तथैव च ॥

अर्थ-पित्तजन्य आर्दितवातपर स्निग्ध पदार्थोंसे उत्पन्न हुए शीतल उपचार करे और घृतसे बस्ति तथा सिंचन अथवा रक्तस्राव करे ॥

जिह्मीभूताननो मूको दाहवान्योऽर्दिती भवेत् ।
कुर्यात्प्रतिक्रियां तस्य वातपित्तविनाशिनीम् ॥

अर्थ-आर्दितवात करके जिसका मुख टेढा हो गया हो और गूंगा हो गया हो तथा दाह होता हो इन उपद्रवोंके नाश करनेको वातापित्तनाशक उपचार करे ॥

कफार्दित ।

श्लेष्मभागे क्षयं नीते बृंहणैः समुपाचरेत् ।
अर्दिते शोथसंयुक्ते वमनं च प्रशस्यते ॥

अर्थ-अर्दितवायुकरके कफ क्षीण होनेसे बृंहण उपचार करे और शोथयुक्त आर्दितवातपर वमन कराना उत्तम है ॥

रसोनकल्कं तिलतैलमिश्रं खादेन्नरो योऽर्दितरोगयुक्तः ।
तस्यार्दितं नाशमुपैति शीघ्रं वृंदं घनानामिव वायुवेगात् ॥

अर्थ-लहसनके कल्कमें तिलका तेल मिलायके खाय तो आर्दित वायु नष्ट हो जैसे मेघोंका समुदाय पवनके वेगसे नष्ट होता है ॥

फलत्रिकं निंबफलो रसश्च वासापटोलीक्वथितं तु सर्वम् ।
सकौशिकं रात्र्यवसानकाले पीतं भवेदर्दितवातहारि ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला, निबोरीका रस, अडूसा और पटोलपत्र इनका काढा करके उसमें गूगल मिलायके प्रातःकाल देवे तो अर्दितवायुका नाश होय ॥

अर्दितसाध्यासाध्य ।

क्षीणस्याऽनिमिषाक्षस्य प्रसक्ताव्यक्तभाषिणः ।
न सिद्ध्यत्यर्दितं गाढं त्रिवर्षं वेपनस्य च ॥

अर्थ–क्षीण पुरुषके, पलक नहीं लगें ऐसे पुरुषके, अत्यंत शुद्ध बोले नहीं ऐसे पुरुषके, अर्दित रोगको प्रगट भये तीन वर्ष व्यतीत हो गये हों, अथवा त्रिवर्ष कहिये मुख, नाक और नेत्र इन तीनोंका स्राव होय ऐसा और कंपयुक्त पुरुषका अर्दित रोग साध्य नहीं होय ॥

गते वेगे भवेत्स्वास्थ्यं सर्वेष्वाक्षेपकादिषु ॥

अर्थ–सब आक्षेपकादि वायुमें वातका वेग न्यून होनेसे रोगी स्वस्थ अर्थात् प्रसन्न होता है ॥

दूसरा प्रकार ।

नवनीतेन संयुक्तां खादेन्माषेंडरीं नरः ।
दुर्वारमर्दितं हंति सप्तरात्रान्न संशयः ॥

अर्थ–मक्खनके साथ उडदके बडा खाय तो दुर्निवार अर्दितरोग सात दिनमें दूर होवे इसमें संदेह नहीं है ॥

लशुनविधि ।

पलमर्धपलं वापि रसोनस्य सुकुट्टितम् । हिंगुजीरकसिंधूत्थसौवर्चलकटुत्रिकैः ॥ चूर्णितैर्माषकोन्मानैरवचूर्ण्य विलोडितम् । यथाग्निभक्षितं प्रातः रुबुक्काथानुपानतः ॥ दिने दिने प्रयोक्तव्यं मासमेकं निरंतरम् । वातामयं निहंत्येव मर्दितं चापतंत्रकम् ॥ एकांगरोगिणां रोगं तथा सर्वांगरोगिणाम् । ऊरुस्तंभं गृध्रसीं च शूलद्वंद्वं कृमीनपि ॥ कटिपृष्ठामयं हन्याज्जाठरं च समीरणम् ॥

अर्थ–चार तोले अथवा दो तोले लहसनके रसमें हींग, जीरा, सैंधानिमक, संचरनिमक और त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल) ये प्रत्येक एक एक मासा ले चूर्ण करके डाले, फिर यथाशक्ति भक्षण करे इसका अनुपान अंडकी जडका काढा है यह प्रातःकाल नित्य एक महीने पर्यंत सेवन करनेसे सामान्य वातरोग, अर्दित, अपतंत्रक, एकांगवात, सर्वांगवात, ऊरुस्तंभ, गृध्रसी, शूल, द्वंद्वजरोग, कृमि, कमरका रोग, पीठका रोग तथा पेटका वायु इनको नाश करे ॥

हनुग्रहनिदान ।

जिह्वानिर्लेखनाच्छुष्कभक्षणादाभिघाततः । कुपितो हनुमूलस्थः स्रंसयित्वाऽनिलो हनुम् ॥ करोति विवृतास्यत्वमथवा संवृतास्यताम् । हनुग्रहः स तेन स्यात्कृच्छ्राच्चर्वणभाषणम् ॥

अर्थ–जिह्वाके अतिघर्षण करनेसे, चना आदि सूखी वस्तुके खानेसे अथवा किसी प्रकार चोटके लगनेसे, हनुमूल (कपोल) के अर्थात् डाढकी जडमें रहे जो वायु सो कुपित होकर हनुमूलको नीचे कर मुखको खुलाही रखदे अथवा मुखको बंद करदे. उससे हनुग्रहरोग कहते हैं तब उस मनुष्यको खाना, बोलना, कठिनतासे होय ॥

हनुग्रहे हनुस्तंभे मन्यास्तंभेऽर्दिते पिबेत् ।
दशमूल्या समा कृष्णा अश्वत्थस्वरसेन च ॥

अर्थ--हनुग्रह, हनुस्तंभ, गरदनका रह जाना और अर्दित वायु इन पर दशमूल और पीपल इनका काढा देवे. अथवा पीपलके वृक्षके छालके काढेमें पीपलका चूर्ण डालके देवे ॥

चिकित्सा ।

संवृतं चुबुकं स्निग्धं स्विन्नमुन्नमयेद्भिषक् ।
विवृतं नमयित्वा तु कुर्यात्प्राप्तामिह क्रियाम् ॥

अर्थ–मिचे हुए मुखको वैद्य स्निग्धपदार्थोंको चुपडकर बफारा देकर उघाड देवे और यदि रोगीका मुख खुला रह गया हो तो पूर्वोक्त उपचारोंसे उसके मुखको दाग देवे अर्थात् बंद करे ॥

पिप्पली चार्द्रकं चापि संचर्व्य च मुहुर्मुहुः ।
निष्ठीवेत्तत्ततोयेन शोधयेद्वदनांतरी ॥

अर्थ–पीपल और अदरख इनको वारंवार चाबकर थूक देवे तथा गरम जलसे मुखको धोवे तो मुखका खुलना बंद होना ठीक २ होने लगे ॥

हनुग्रह चिकित्सा ।

निष्कुष्य लशुनं सम्यक् संक्षुद्य तिलतैलके ।
सैंधवेनांचितं खादेद्धनुस्तंभार्दितो नरः ॥

अर्थ–लहसनको छीलके तिलके तेलमें पीस सैंधानिमक मिलायके खाय तो हनुस्तंभ रोग दूर होवे ॥

रसोनवटक ।

रसोनगुटिकां माषविदलं परिषेच्य च । योजयेत् पिष्टिकां कांतां सैंधवार्द्रकहिंगुभिः ॥ ततस्तु वटकान्कृत्वा तिलतैले पचेच्छनैः । भक्षयेत्तान्यथावह्नि हनुस्तंभी सुखी भवेत् ॥

अर्थ—लहसनका गोला और उडदकी पीसी हुई दाल इनको एकत्र करके उसमें सैंधानिमक, हींग और अदरख डालके तेलमें बडे बनावे ये बडे खानेसे हनुस्तंभ ठोडीका जकड जाना) नाश होय ॥

अभ्यंजन ।

अभ्यज्य पक्वतैलेन स्वेदयेन्मृदुनाग्निना ।
बस्तिं विधारयेन्मूर्ध्नि तैलेन परिपूरयेत् ॥

अर्थ—औटाये हुए तेलसे देहमें मालिस करे और मंद २ सेंके अर्थात् पसीने निकाले और शिरोबस्ति देवे तो हनुस्तंभ दूर हो ॥

प्रसारणीतेल वातकफजन्यवायुपर ।

प्रसारणीपलशतं जलद्रोणेन पाचयेत् । पादाशिष्टः शृतो ग्राह्यस्तैलं दधि च तत्समम् ॥ कांजिकं च समं तैलात्क्षीरं तैलाच्चतुर्गुणम् । तैलात्तथाष्टमांशेन सर्वकल्कानि योजयेत् ॥ मधुकं पिप्पलीमूलं चित्रकः सैंधवं वचा । प्रसारणी देवदारु रास्ना च गजपिप्पली ॥ भल्लातः शतपुष्पा च मांसी चैभिर्विपाचयेत् । एतत्तैलं वरं पक्वं वातश्लेष्मामयान् जयेत् ॥ कौब्जत्वं खंजपंगुत्वं गृध्रसीमर्दितं तथा । हनुपृष्ठशिरोग्रीवाकटिस्तंभं च नाशयेत् ॥ अन्यांश्च विषमान्वातान् सर्वानाशु व्यपोहति ॥

अर्थ—प्रसारणी १०० पलको एक द्रोण जलमें डालके औटावे जब काढा चौथाई रहे तब उतारके उसको कपडेमें छान लेवे. फिर इसमें तेल, दही और कांजी काढेके समान मिलायके तेलसे चौगुना गौका दूध मिलावे फिर इसमें कल्क करके डालनेकी जो औषध हैं उनको मैं लिखताहूं. मुलहठी, पीपरामूल, चित्रककी छाल, सेंधानिमक, प्रसारणी, देवदारु, रास्ना, गजपीपल, भिलाये, सोंफ और जटामांसी ये बारह औषध तेलसे अष्टमांश ले कल्क करके उस तेलमें मिलाय देवे फिर तेलको अग्निपर चढाके मंद २ अग्निसे तेलमात्र शेष करे फिर इसको उतारके छान लेवे और उत्तम शीशी आदिमें

भरके धर रखे. इसके लगानेसे वातश्लेष्मजन्य विकार, कुब्जवायु, पंगुवायु, गृध्रसी, अर्दित, हनुस्तंभ पीठकी वायु, मस्तक, ग्रीवा, कमर इनकी वायुको नाश करे इसके सिवाय दूसरे जो विषम छोटे बडे वादीके रोग हैं वे सब इस तेलके लगानेसे दूर होते हैं ॥

मन्यास्तंभ ।

दिवा स्वप्नाशनस्नानविकृतोर्ध्वनिरीक्षणैः ।
मन्यास्तंभं प्रकुरुते स एव श्लेष्मणा युतः ॥

अर्थ-दिनमें सोनेसे, अन्न, स्नान, ऊंचेको विकृतिपूर्वक देखनेसे इन कारणोंसे कोपको प्राप्त भई जो वात सो कफयुक्त होकर मन्या (नाडी) स्तंभन करे इस रोगको मन्यास्तंभन रोग कहते हैं ॥

चिकित्सा ।

दशमूलीकृतं क्वाथं पंचमूल्यापि कल्पितम् ।
रूक्षं स्वेदं तथा नस्यं मन्यास्तंभे प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-दशमूलका अथवा पंचमूलका कल्क देवे और रूक्ष पदार्थोंसे स्वेदन कर्म करे, नस्य देवे. ये उपाय मन्यास्तंभ (गरदनका जकड जाने) पर करने चाहिये ॥

तैलेनाज्येन वा ग्रीवामभ्यज्यार्कदलैरथ ।
एरंडपत्रैर्वाच्छाद्य स्वेदयेद्बहुशो भिषक् ॥

अर्थ-गरदनपर तेल अथवा घी लगाय आकके पत्ते अथवा अंडके पत्तोंको आगपर सेंकके बहुतवार सेंके तो मन्यास्तंभ दूर हो ॥

कुक्कुटांडद्रवैरुष्णैः सैंधवाज्यसमान्वितैः ।
ग्रीवां संमर्दयेत्तेन मन्यास्तंभः प्रशाम्यति ॥

अर्थ-मुरगेके अंडेका रस, सैंधानिमक और घी इनको गरम करके गर्दनपर मले तो मन्यास्तंभ दूर होवे ॥

जिह्वास्तंभ ।

वाग्वाहिनी शिरासंस्थो जिह्वां स्तंभयतेऽनिलः ।
जिह्वास्तंभः स तेनान्नपानवाक्येष्वनीशता ॥

अर्थ-वायु वाणीके वहनेवाली नाडियोंमें प्राप्त हो जिह्वाका स्तंभन करदे, उसको जिह्वास्तंभरोग कहते हैं. यह अन्नपानकी तथा बोलनेकी सामर्थ्यका नाश करे ॥

चिकित्सा ।

जिह्वास्तंभे यथावस्थं वातव्याधिचिकित्सितम् ।
सामान्योक्ताः क्रियाश्चात्रार्दितस्यापि हिता मताः ॥

अर्थ-जिह्वास्तंभपर जैसे दोष होवें उसीको विचारके वातव्याधिके ऊपर जो चिकित्सा कही है वह करे और वातव्याधिपर तथा अर्दित वादीपर जो सामान्य क्रिया कही है वह हितकारी है ॥

दूसरा प्रकार ।

जिह्वास्तंभे क्रिया श्रेष्ठा सामान्योक्ता तु यार्दिते ॥

अर्थ-जो अर्दितवायुपर सामान्य क्रिया कही वह जिह्वास्तंभपर श्रेष्ठ है ॥

कल्याणकावलेह ।

सहरिद्रा वचा कुष्ठं पिप्पली विश्वभेषजम् । अजाजी चाजमोदा च यष्टीमधुयुतं घृतम् ॥ एकविंशतिरात्रेण भवेच्छ्रुतधरो नरः । मेघदुंदुभिनिर्घोषो मत्तकोकिलनिःस्वनः ॥ जडवागादिमूकत्वं लेहो कल्याणको जयेत् ॥

अर्थ-हलदी, वच, कूठ, पीपल, सोंठ, जीरा, अजमोद, मुलहठी और घी इनका अवलेह २१ दिन सेवन करे तो बहरापना, तोतलापना और गूंगापना दूर होय तथा मेघके समान अथवा दुंदुभी (नौबत) के समान गंभीर तथा कोकिलके समान प्रिय बोलनेवाला होय और सर्वशास्त्रोंका धारणकर्त्ता होवे ॥

शिरोग्रह ।

रक्तमाश्रित्य पवनः कुर्यान्मूर्धधराः शिराः ।
रूक्षाः सवेदनाः कृष्णाः सोऽसाध्यः स्याच्छिरोग्रहः ॥

अर्थ-वायु रुधिरका आश्रय कर मस्तकके धारण करनेवाली नाडीको रूखी पीडायुक्त और काली कर दे यह शिराग्रहरोग असाध्य है. शिरोग्रह ऐसा भी पाठ है ॥

चिकित्सा ।

शिरोग्रहे तु कर्तव्या शिरागतमरुत्क्रिया । दशमूलीकषायेण मातुलुंगरसेन च ॥ शतेन तैलेनाभ्यंगः शिरोबस्तिश्च युज्यते ॥

अर्थ-शिरोग्रह वायुपर शिरागत वायुका उपचार करे और दशमूलका काढा तथा बिजोरेका रस इनके साथ तेलको औटायके उसकी मालिश अथवा शिरोबस्ति करे ॥

गृध्रसीलक्षण ।

स्फिक्पूर्वाकटिपृष्ठोरुजानुजंघापदं क्रमात् । गृध्रसीस्तंभरुक्तोदैर्गृह्णाति स्पंदते मुहुः ॥ वाताद्वातकफात्तन्द्रा गौरवारोचकान्विता

अर्थ-प्रथम स्फिक् कहिये कमरके नीचेका भाग जिसको कूला कहते हैं उसको स्तंभित कर दे, पीछे क्रमसे कमर, पीठ, ऊरू, जानू, जंघा और पग इनको स्तंभित करदे अर्थात् ये रह जांय, वेदना और तोद कहिये चोंटनेकीसी पीडा होय और वारंवार कम्प होय, यह गृध्रसीरोग वादीसे होय है और वातकफसे होय तौ इसमें तंद्रा और भारीपना और अरुचि ये विशेष होंय इस प्रकार गृध्रसी रोग दो प्रकारका है ॥

वातज गृध्रसीनिदान ।

वातजायां भवेत्तोदो देहस्यातीव वक्रता ।
जानुजंघोरुसंधीनां स्फुरणं स्तंभता भृशम् ॥

अर्थ-वातजगृध्रसीमें वेदना, देहकी वक्रता, जंघा, पींडरी और ऊरु इनके संधिमें स्फुरण और स्तब्धता होती हैं ॥

वातश्लेष्मजगृध्रसीनिदान ।

वातश्लेष्मोद्भवायां तु गौरवं वह्निमार्दवम् ।
तंद्रा मुखप्रसेकश्च भक्तद्वेषस्तथैव च ॥

अर्थ-कफसे उत्पन्न गृध्रसीमें भारीपन, अग्निमांद्य, तंद्रा, लारका गिरना, अन्नका द्वेष ये लक्षण होते हैं ॥

गृध्रसीचिकित्सा ।

गृध्रस्यां तु नरं सम्यग्रेकेण वमनेन वा ।
ज्ञात्वा निरामं दीप्ताग्निं बस्तिभिः समुपाचरेत् ॥

अर्थ-गृध्रसीरोगवालेको प्रथम रेचन और वमन देवे जब वमन विरेचनसे दीप्ताग्नि हो जावे तब बस्त्यादिक उपचार करने चाहिये ॥

नादौ बस्तिविधिः कुर्याद्यावदूर्ध्वं न शुद्धयति ।
स्नेहो निरर्थकः स स्यात् भस्मन्येव हुतं तथा ॥

अर्थ-गृध्रसीरोगमें जबतक ऊर्ध्वभागकी शुद्धि न होवे तबतक बस्तिकर्म न

करे यदि प्रमाद वैद्य करै तो स्नेहबस्ति निरर्थक होती है जैसे भस्ममें हवन करा हुआ व्यर्थ जाता है ॥

एरंडतैलयोग ।

तैलमेरंडजं प्रातर्गोमूत्रेण पिबेन्नरः ।
मासमेकं प्रयोगोऽयं गृध्रस्यूरुग्रहापहः ॥

अर्थ–गोमूत्रमें अंडीका तेल डालके प्रातःकाल १ महीने पर्यंत नित्य पीवे तो गृध्रसी तथा ऊरुस्तंभ इनको नाश करे ॥

तैलं घृतं सार्द्रकमातुलुंगं रसं सचुक्रं सगुडं पिबेद्वा ।
कट्यूरुपृष्ठत्रिकशूलगुल्मगृध्रस्युदावर्तहरः प्रयोगः ॥

अर्थ–तेल अथवा घी इनमेंसे कोई एकके साथ अदरख और बिजोरेका रस अमलबेत और गुड इन सबको एकत्र करके पीवे तो कमर, जांघ, पीठ, त्रिकस्थान इनमें होनेवाला दर्द, गोला, उदावर्त्त और गृध्रसी वायु इनको नष्ट करे ॥

निष्कुष्यैरंडबीजानि पिष्ट्वा क्षीरे विपाचयेत् ।
तत्पायसं कटीशूले गृध्रस्यां परमौषधम् ॥

अर्थ–अंडियोंको छीलके कूट डाले. फिर इसको दूधमें डालके औटावे जब लपसी हो जाय तब सेवन करे तो कमरका शूल और गृध्रसी इन पर उत्कृष्ट औषधी है ॥

गृध्रसीहरतैल ।

द्वे पले सैंधवात्पंच शुंठ्या ग्रंथिकचित्रकात् । द्वे पले भल्लकास्थीनि विंशति द्वे तथाढके ॥ आरनाले पचेत्प्रस्थं तैलस्यैतैरपत्यदम् । गृध्रस्यूरुग्रहाशींतःसर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ–सैंधानिमक ८ तोले, पीपरामूल और चित्रक ये प्रत्येक २० तोले भिलाएकी गुठली ८ तोले, कांजी ८८ तोले और तेल ६४ तोले सबको एकत्र करके तेल सिद्ध करे. इसको यथाशक्ति पीवे तो यह संतान देवे तथा गृध्रसी, ऊरुस्तंभ, बवासीर और सर्ववातके विकारोंको नाश करे ॥

शिरावेध गृध्रसीपर ।

विध्येच्छिरां मेद्रबस्तेरधस्ताच्चतुरंगुले ।
यदि नोपशमं गच्छेद्दहेत्पादकनिष्ठिकाम् ॥

अर्थ–लिंगबस्तिके नीचे चार अंगुलपर शिरावेध करे तो गृध्रसी नष्ट होय यदि नष्ट न होवे तो पैरकी छोटी उंगलीमें दाग देवे तो गृध्रसी अवश्य दूर हो ॥

निंबकल्क ।

महानिंबजटाकल्को गृध्रसीनाशनः स्मृतः ॥

अर्थ-बकायनके पत्तोंका कल्क गृध्रसीवातनाशक है ॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं भल्लातकफलानि च ।
एतत्कल्कश्च सक्षौद्र ऊरुस्तभनिवारणः ॥

अर्थ-पीपल, पीपरामूल और भिलाए इनका कल्क सहतके साथ सेवन करे तो ऊरुस्तंभको दूर करे ॥

पंचमूलीकषायं तु सुखोष्णं त्रिवृतायुतम् ।
गृध्रसीं गुल्ममूलं च सद्यः पीतो नियच्छति ॥

अर्थ-पंचमूलके काढेमें निसोथका चूर्ण डालके पीवे तो गृध्रसी और गोलेके रोग इनको तत्काल नाश करे ॥

गृध्रसीचिकित्सा ।

एरंडमूलं बिल्वं च बृहती कंटकारिका । कषायो रुचकोपेतः
पीतो वृषणबास्तिजम्॥गृध्रसीजं हरेच्छूलं चिरकालानुबंधि च ॥

अर्थ-अंडकी जड, बेलकी जड, कटेरी बडी, कटेरी छोटी इनके काढेमें संचर निमक डालके पीवे तो वृषण (अंडकोश), बस्ति, गृध्रसीवात इनमें होनेवाले बहुत दिनके दर्दको नाश करे ॥

गोमूत्रैरंडतैलाभ्यां कृष्णाचूर्णं पिबेन्नरः ।
दीर्घकालस्थितां हंति गृध्रसीं कफवातजाम् ॥

अर्थ-गोमूत्र, अंडीका तेल और पीपलका चूर्ण सबको एकत्र करके पीवे तो बहुत दिनकी कफवातजन्य गृध्रसीको नाश करे ॥

सिंहास्यदंतीकृतमालकानां पिबेत्कषायं ऋभुतैलमिश्रम् ।
यो गृध्रसीनष्टगतिः प्रसुप्तः स शीघ्रगः स्याद्धि किमत्र चित्रम् ॥

अर्थ-अडूसा, दंती और अमलतास इनका काढा करके उसमें अंडीका तेल मिलायके पीवे तो जिसका चलना हलना बंद हो गया हो, स्पर्श प्रतीत न हो ऐसा गृध्रसीक रोगी शीघ्र गमन करनेवाला होवे इसमें आश्चर्य नहीं ॥

बृहन्निंबतरोः सारो वारिणा परिपेषितः ।
स पीतो नाशयेत्क्षिप्रमसाध्यामपि गृध्रसीम् ॥

अर्थ-बकायनके सारको जलमें पीसके पीवे तो असाध्यभी गृध्रसी रोग शीघ्र नष्ट होय ॥

शेफालिकादलैः क्काथो मृद्वग्निपरिपाचितः।
दुर्वारं गृध्रसीरोगं पीतमात्रः प्रणाशयेत् ॥

अर्थ-काली निर्गुंडीके पत्तोंका काढा मंदाग्निपर करके पीवे तो दुर्निवार गृध्रसी रोग तत्क्षण दूर हो ॥

रास्नागुग्गुलु।

रास्नायास्तु पलं चैकं पंचकर्षाणि गुग्गुलोः।
सर्पिषा वटिकां कृत्वा भक्षयेद्गृध्रसीहरीम् ॥

अर्थ-रास्ना ४ तोले और गूगल ५ तोले दोनोंको खरलमें कूट गोली करके शक्ति प्रमाण खाय तो गृध्रसीरोगको नष्ट करे ॥

रास्नाकाढा।

रास्नामृतारग्वधदेवदारुत्रिकंटकैरंडपुनर्नवानाम्।
क्काथं पिबेन्नागरचूर्णमिश्रं जंघोरुपृष्ठत्रिकपार्श्वशूली ॥

अर्थ-रास्ना, गिलोय, अमलतास, देवदारु, गोखरू, अंडकी जड और पुनर्नवा इनके काढेमें सोंठका चूर्ण डालके पीवे तो जंघा, ऊरु, पीठ, त्रिकस्थान इनके शूलको दूर करे ॥

पथ्यागुग्गुलु।

पथ्याबिभीतामलकीफलानां शतं क्रमेण द्विगुणाभिवृद्धम्। प्रस्थेन युक्तं च पलं कषाणां द्रोणे जले संस्थितमेकरात्रम् ॥ अर्धावशेषं क्कथितं कषायं भांडे पचेत्तत्पुनरेव लोहे। अमूनि वह्नेरवतार्य दद्याद् द्रव्याणि संचूर्ण्य पलार्धकानि ॥ विडंगदंतीत्रिफलागुडूचीकृष्णात्रिवृन्नागरकोषणानि। यथेष्टचेष्टस्य नरस्य शीघ्रं हिमांबुपानानि च भोजनानि ॥ निषेव्यमाणो विनिहंति रोगान् सगृध्रसीं नूतनखंजतां च। प्लीहानमुग्रं जठराणि पंगुपांडुत्वकंडूवमिवातरक्तम् ॥ पथ्यादिको गुग्गुलुरेष नाम्ना ख्यातः क्षितावप्रतिमप्रभावः। बलेन नागेंद्रसमं मनुष्यं जवेन

कुर्यात्तुरगेन तुल्यम् ॥ आयुःप्रकर्षं विदधाति चक्षुर्बलं तथा पुष्टिकरो विषघ्नः । क्षतस्य संधानकरो विशेषाद्रोगेषु शस्तः सकलेषु तज्ज्ञैः ॥

अर्थ–हरड १००, बहेडा २००, आंवले ४००, शुद्ध गूगल ६४ तोले इनको १०२४ तोले जलमें रात्रिके समय भिगो देवे. प्रातःकाल चूल्हेपर चढायके औटावे. जब जल आधा रहे तब इस काढेमें वायविडंग, दंती, त्रिफला, गिलोय, पीपल, निसोथ, सोंठ और काली मिरच, इन प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले डाले जब गाढा हो जावे तब घीसे गूगलको कूटके गोली बनाय लेवे तो यह गूगल तैयार हो यह यथेष्ट आचरण तथा यथेष्ट भोजन करनेवाले मनुष्यके सेवन करनेसे रोग नाश करे. यह गृध्रसी, नवीन खंजताका रोग, प्लीहा, उग्रजठर, पंगुता, पांडुत्व, कंडू, वमन और वातरक्त इनको नाश करनेवाला है. पथ्यादि गुग्गुल पृथ्वीपर अद्वितीय सामर्थ्य रखनेवाला है और बलमें हाथीके समान, वेगमें घोडेके समान मनुष्यको करे. आयुष्य, चक्षुर्बल और पुष्टिको करे. तथा विषनाशक, घावको भरनेवाला तथा सर्व रोगोंपर उत्तम है ऐसा वैद्योंने कहा है ॥

तुरंगगंधा सितखंडयुक्ता घृतेन भुक्ता कटिपृष्ठहन्त्री ॥

अर्थ–असगंध और मिश्री इनका चूर्ण घृतके साथ देनेसे कटिशूलका नाश करता है ॥

एरंडतैलयोग।

वाजिगंधा बला विश्वा दशमूलं विसाधितम् ।
गृध्रस्यां तैलमेरंडं बस्तौ पाने च शस्यते ॥

अर्थ–असगंध, खिरेटी, सोंठ और दशमूल इनके काढेमें अथवा कल्कमें अंडीका तेल डालके सिद्ध करे यह गृध्रसीवायुपर बस्तीविषयमें किंवा पीनेमें उत्तम है ॥

विश्वाचीलक्षण।

तलं प्रत्यंगुलीनां याः कंडरा बाहुपृष्ठतः ।
बाह्वोः कर्मक्षयकरी विश्वाचीतीह सोच्यते ॥

अर्थ–बाहुके पिछाडीसे लेकर हाथके ऊपरले भागपर्यंत प्रत्येक उंगलीके नीचे मोटी नसे हैं उनको दुष्ट कर हाथसे लेना, देना पसारना, मुट्ठी मारनी इत्यादिक कार्योंका नाशकर्त्ता जो रोग होय उसको विश्वाची रोग कहते हैं ॥

चिकित्सा ।

दशमूलीबलामाषक्वाथं तैलाज्यमिश्रितम् ।
सायं भुक्त्वा चरेन्नस्यं विश्वाच्यामपबाहुके ॥

अर्थ-दशमूल, खिरेंटी और उडद इनका काढा, तेल अथवा घी मिलायके सायंकालके समय भोजन करनेके पश्चात् नस्य देवे तो विश्वाची तथा अपबाहुक इनको नाश करे ॥

माषतैल ।

माषसिंधुबलारास्नादशमूलकहिंगुभिः । वचाशतजटाख्याभिः सिद्धं तैलं सनागरम् ॥ ऊर्ध्वं भक्ताशनाद्धन्याद्वाहुशोषावबाकौ । विश्वाचीमुद्धतां चापि पक्षाघातं तथार्दितम् ॥

अर्थ-उडद, सैंधानिमक, खिरेंटी, रास्ना, दशमूल, हींग, वच और शतावर इनके काढेके साथ सिद्ध करा हुआ तेल सोंठके साथ भोजन करके सेवन करे तो बाहुशोष, अपबाहुक, विश्वाची, पक्षाघात और अर्दितवायु इनको नष्ट करे ॥

क्रोष्टुशीर्षलक्षण ।

वातशोणितजः शोथो जानुमध्ये महारुजः ।
ज्ञेयः क्रोष्टुकशीर्षस्तु स्थूलः क्रोष्टुकशीर्षवत् ॥

अर्थ-वातरक्तसे जानु, घोंटू इन दोनोंकी संधिमें अत्यंत पीडाकारक सूजन हो और स्यारके मस्तकसमान मोटी हो उसको क्रोष्टुशीर्ष ऐसे कहते हैं ॥

चिकित्सा ।

गुग्गुलं क्रोष्टुशीर्षे तु गुडूचीं त्रिफलांभसा ।
क्षीरेणैरंडतैलं वा पिबेद्वा वृद्धदारुकम् ॥

अर्थ-क्रोष्टुशीर्षपर गिलोय और त्रिफला इनके काढेमें गूगल डाल पीवे अथवा ४ तोले दूधमें १ तोला अंडीका तेल डालके पीवे अथवा वृद्धदारुकका चूर्ण सेवन करे॥

सामान्याचिकित्सा ।

रसैस्तित्तिरिमांसस्य पीतैर्गुग्गुलुसंस्थितैः ।
वातरक्तक्रियाभिश्च जयेज्जंबुकमस्तकम् ॥

अर्थ-तीतरके मांसरसमें गूगल डालके पीवे तथा वातरक्त पर जो उपाय कहे हैं वह इसपर करे तो क्रोष्टुशीर्ष नाश होय ॥

खंज व पंगुके लक्षण ।

वायुः कट्याश्रितः सक्थ्नः कंडरामाक्षिपेद्यदा ।
खंजस्तदा भवेज्जंतुः पंगुः सक्थ्नोर्द्वयोर्वधात् ॥

अर्थ-कमरमें रहे जो वात सो जंघाकी नसोंको ग्रहण कर एक पगको स्तंभित कर देय, उसको खोडारोग कहते हैं और दोनों जंघाकी नसोंको पकड दोनों पैरोंको स्तंभित करदे उसको पांगुला कहते हैं ॥

चिकित्सा ।

उपाचरेदभिनवं खंजं पंगुमथापि वा ।
विरेकस्थापनस्वेदगुग्गुलुस्नेहबस्तिभिः ॥

अर्थ-खंज और पंगु यदि नवीन होवे तो विरेचन आस्थापन करावे, पसीने निकाले, गूगल, स्नेहपान और बस्ति इत्यादिक उपचार करे ॥

कलायखंजलक्षण ।

कंपते गमनारंभे खंजन्निव च लक्ष्यते ।
कलायखंजं तं विद्यान्मुक्तसंधिप्रबंधनम् ॥

अर्थ-जो पुरुष चलते समय थरथर कांपे और खंज अर्थात् एक पैरसे हीन मालूम होय, इस रोगमें संधिके बंधन शिथिल होते हैं इस रोगको कलायखंज कहते हैं ॥

चिकित्सा ।

क्रमः कलायखंजस्य खंजपंग्वोरिव स्मृतः ।
विशेषात्स्नेहनं कर्म कार्यमत्र विचक्षणैः ॥

अर्थ-कलायखंजपर खंज और पंगुपर जो चिकित्सा कही है वह करे तथा विचक्षण वैद्यको विशेषकरके स्निग्ध उपचार करे ॥

चिकित्साक्रम ।

जयेत्कलायखंजं तु हेतुत्यागरसोनतः ॥

अर्थ-कलायखंजवादीबालेको निदान परिवर्जन करे अर्थात् जिस कारणसे हुआ होवे उसको त्याग देवे. तथा लहसन भक्षणसे जीतें ॥

वातकंटकनिदान ।

रुक्पादे विषमे न्यस्ते श्रमाद्वा जायते यदा ।
वातेन गुल्फमाश्रित्य तमाहुर्वातकंटकम् ॥

अर्थ-उंची नीची जगहमें पैर पडनेसे अथवा श्रमके होनेसे वायु कुपित टकनोंमें प्राप्त होकर पीडा करे तौ इस रोगको वातकंटक ऐसे कहते हैं ॥

चिकित्सा ।

रक्तावसेचनं कुर्यादभीक्ष्णं वातकंटके ।
पिबेदेरंडतैलं वा दहेत्सूचीभिरेव च ॥

अर्थ-वातकंटक रोग वारंवार रुधिरको निकाले, अंडीका तेल पीवे तथा सुईसे दाग देना चाहिये यह उपाय वातकंटक रोगके नाश करनेवाले हैं ॥

पाददाहलक्षण ।

पादयोः कुरुते दाहं पित्तासृक्सहितोऽनिलः ।
विशेषजश्चंक्रमणात् पादहर्षं तमादिशेत् ॥

अर्थ-जिसके पैर हर्षयुक्त (कहिये झनझनाहट पीडायुक्त) होय और अत्यंत सोय जावे, उसको पादहर्ष रोग कहते हैं यह कफवातके कोपसे होय है ॥

चिकित्सा ।

वातरक्तक्रमं कुर्यात्पाददाहे विशेषतः । मसूरविदलैः पिष्टैः शृतशीतेन वारिणा ॥ चरणौ लेपयेत्सम्यक् पाददाहप्रशांतये । नवनीतेन संलिप्तौ वह्निना परितापितौ ॥ मुच्येते चरणौ क्षिप्रं परितापात्सुदारुणात् ॥

अर्थ-पाददाहपर विशेषताकरके वातरक्तका क्रम करे और मसूरकी दालको औटायके शीतल करे हुए जलमें पीसके पैरोंपर लेप करे अथवा पैरोंमें मक्खनको चुपडके अग्निसे तपावे तो एक क्षणमात्रमें पैरोंका दाह शांत होय ॥

पाददाहपर लेप ।

गुडूच्येरंडबीजानि दध्ना पिष्ट्वा प्रलेपयेत् ।
पाददाहे हितं प्रोक्तं महानिंबफलानि च ॥

अर्थ-गिलोय और अंडीके बीजोंको दहीमें पीसके इनका अथवा बकायनके फलोंको जलमें पीसके पैरोंमें लेप करे तो पाददाह शांत होवे ॥

पादहर्षलक्षण।

हृष्येते चरणौ यस्य भवतश्च प्रसुप्तकौ।
पादहर्षः स विज्ञेयः कफवातप्रकोपजः॥

अर्थ-चरण रोमांचयुक्त होके स्पर्श न समझा जाय उसको पादहर्ष कहते हैं वह कफवातके कोपसे होता है॥

चिकित्सा।

पादहर्षे तु कर्तव्यः कफवातहरो विधिः॥

अर्थ-पादहर्ष रोगपर वातकफनाशक यत्न करने चाहिये॥

बाहुशोषनिदान।

अंसदेशे स्थितो वायुः शोषयेदंसबंधनम्।
शिराश्चाकुंच्य तत्रस्थो जनयेदपबाहुकम्॥

अर्थ-कंधामें रहे जो वायु सो कुपित होकर उसके बंधनको सुखायदे, तब अंसशोषरोग प्रगट होय और कंधामें रहे जो वायु सो नसोंको संकोच करके अपबाहुकरोग प्रगट करे॥

चिकित्सा।

बाहुशोषे पिबेद्भुक्त्वा सर्पिः कल्याणकं महत्। बलामूलशृतं तोयं सैंधवेन समान्वितम्॥ बाहुशोषकरे वाते मन्यास्तंभे च शस्यते॥

अर्थ-बाहुशोष रोग होनेपर भोजन करके पश्चात् बृहत्कल्याणक घृत पीवे अथवा खिरेटीके जडका काढा करके उसमें सैंधानिमक मिलायके पीवे यह बाहुशोष और मन्यास्तंभ नामक वादीपर उत्तम है॥

रसोनकल्क।

क्षीरेण तैलेन घृतेन वापि मांसेन सार्धं लशुनानि खादेत्। शाल्योदनेनापि च षाष्टिकेन पलार्धवृद्ध्या दिवसानि सप्त॥ वातोत्थरोगान् विषमज्वरांश्च शूलान् सगुल्मान् दहनस्य मांद्यम्। प्लीहानमुग्रं भुजपार्श्वशूलं शिरोव्यथां कृंतति शुक्रदोषान्॥

अर्थ-दूध, तेल, घी अथवा मांस इनमेंसे किसी एकके साथ अथवा सांठी चांवलके भातके संग दो दो तोले लहसनको चाटे इस प्रकार सात दिन भक्षण करे तो वादीसे हुए रोग, विषमज्वर इनका शूल, गोला, मंदाग्नि, प्लीहा और भुजा, पीठ और मस्तक इनका शूल और शुक्रदोष इनको नाश करे ॥

बाहुशोषचिकित्सा।

बलामूलभवक्काथः सैंधवेन समन्वितः।
बाहुशोषगदं नस्याद्धन्यान्माषरसोऽथ वा ॥

अर्थ-खिरेटीके जडका काढा करके उसमें सैंधानिमक डालके देवे. अथवा उडदोंके काढेकी नस्य देवे तो बाहुशोषवातको नष्ट करे ॥

अपबाहुकलक्षण।

शिराः संकोच्य बाहुस्थः स कुर्यादपबाहुकः ॥

अर्थ-बाहुका आश्रय करके जो शिराओंका संकोचन करता है उसको अपबाहुक कहते हैं ॥

चिकित्सा।

परमौषधमपबाहुकमन्यास्तंभोर्ध्वजत्रुगतरोगे ।
शीतलजलेन नस्यं तदुपशमे जिंगिनी च पुरः ॥

अर्थ-अपबाहुक, मन्यास्तंभ और हसलीके ऊपरके रोग इनपर मंजीठ और गूगलको शीतल जलमें पीसके उसकी नस्य देवे. यह उत्तम औषधी है ॥

मूलं बलायास्त्वथ पारिभद्रात्तथात्मगुप्तास्वरसं पिबेद्वा।
युंजीत यो माषरसेन नस्यं भवेदसौ वज्रसमानबाहुः ॥

अर्थ-खिरेटीकी जड और नीमकी छाल इनका काढा अथवा कौंचका रस पीवे. अथवा उडदोंके काढेकी नस्य देवे तो वज्रके समानभी बाहुशोषको नष्ट करे ॥

माषतैल।

माषातसीयवकुरंटककंटकारिगोकंटटुंटुकजटाकपिकच्छुतोयैः। कार्पासकास्थिशणबीजकुलत्थकोलक्काथेन बस्तपिशितस्य रसेन चापि ॥ शुंठ्या समागधिकया शतपुष्पया च सैरंडमूलकपुनर्नवया हरण्या । रास्नाबलामृतलताकटुकैर्विपक्कं माषाख्यमेतदपबाहुहरं हि तैलम् ॥

अर्थ-उडद, अलसी, जौ, पीयावांसा, कटेरी, गोखरू, वेंटू, जटामांसी, कौंछ, नेत्र-वाला, कपासके बीज (बिनोला), सनके बीज, कुलथी और बेर इनका काढा बकरे-के मांसका रस, सोंठ, पीपल, सोंफ, अंडकी जड, पुनर्नवा, हरणवेल, रास्ना, खिरेटी, गिलोय और कुटकी इनका कल्क करे. इस कल्कमें तेल डालके सिद्ध करे तो यह माषा-ख्यतैल अपबाहुक हरण करे. इसको तैल बनानेकी क्रियासे वैद्य बनावे ॥

अतसीवाह्लिविश्वरजोगुडेन संमर्द्य मोदको भुक्तः ।
अपहरत्यवश्यमपबाहुकृतकौतुकं नात्र संदेहः ॥

अर्थ-अलसी, देवदारु और सोंठ इनका चूर्ण गुडमें मिलायके इसकी गोली करके खाय तो अवश्य अपबाहुक वादीका नाश करे यह कौतुक (तमासा) है इसमें संदेह नहीं ॥

माषतैलादिमर्दन ।

माषतैलरसोनाभ्यां बाह्वोश्च परिमर्दनात् ।
दशांघ्रिमाषक्काथेन जयेद्वैद्योपबाहुकम् ॥

अर्थ-पूर्वोक्त माषतैल और लहसन इनको एकत्र कर भुजा (हाथ) पर मालिस करे अथवा दशमूल और उडद इनका काढा पीवे तो अपबाहुकका नाश होय ॥

मूक मिम्मिण व गद्गदानिदान ।

आवृत्य वायुः सकफो धमनीः शब्दवाहिनीः ।
नरान्करोत्यक्रियकान्मूकामिम्मिणगद्गदान् ॥

अर्थ-कफयुक्त वायु शब्दके वहनेवाली नाडीमें प्राप्त होकर मनुष्योंका वचन क्रिया-रहित मूक, मिम्मिण और गद्गद, ऐसा करदे मूक कहिये जिससे बोला न जाय, मिम्मिण कहिये गिनगिनायकर नाकसे बोले और गद्गद बोलते समय बीचके पद और व्यंजनों-को न बोले और मंद बोले इन रोगोंके कारण सदृश होकर रोगोंके भिन्न भिन्न प्रकार होते हैं वह दोषोंके उत्कर्षकरके अथवा प्रारब्धवशसे होते हैं ऐसा जानना ॥

सारस्वतघृत ।

प्रस्थं घृतस्य पलिकैः शिग्रुवचाब्जघातकीलोध्रैः । आजे प-यसि विपक्वं सिद्धं सारस्वतं नाम्ना ॥ विधिवदुपयुज्यमानं जड-गद्गदमूकतां क्षणाज्जित्वा । स्मृतिमतिमेधाप्रतिमाः कुर्यात्स स्पष्टवाग्भवति ॥

अर्थ-घी ६४ तोले और सहजना, वच, सैंधानिमक, धायके फूल और लोध ये प्रत्येक ४ तोले ले सबको कूट पीसके घीमें डाले तथा घीकी बराबर बकरीका दूध डालके पक करे तो यह सारस्वत घृत सिद्ध होय. इसको यथाविधि सेवन करनेसे सर्ववाणीके दोष दूर करके बुद्धि, स्फूर्त्ती तथा स्पष्ट भाषणको करे॥

दशमूलस्य निर्यूहो हिंगुपुष्करचूर्णितः।
शमयेत्परिपीतस्तु वाणीं मिम्मिणसंज्ञिताम्॥

अर्थ-दशमूलके काढेमें हींग और पुहकरमूल इनका चूर्ण मिलायके पीवे तो वाणीका मिम्मणता दोष (गिनगिनायके बोलना) दूर होय॥

तूनीलक्षण।

अधो या वेदना याति वर्चोमूत्राशयोत्थिता।
भिन्दतीव गुदोपस्थं सा तूनी नामतो मता॥

अर्थ-पक्वाशय और मूत्राशयसे उठी जो पीडा सो नीचे जायकर प्राप्त हो और गुदा तथा उपस्थ कहिये स्त्रीपुरुषोंके गुह्यस्थान इनमें भेद करे, अर्थात् पीडा करे उसको तूनीरोग कहते हैं॥

प्रतूनीलक्षण।

गुदोपस्थोत्थिता चैव प्रतिलोमं विधाविता।
वेगैः पक्वाशयं याति प्रतूनी चेह सोच्यते॥

अर्थ--गुदा और उपस्थ इनसे उठी जो पीडा उलटी ऊपर जायकर प्राप्त हो और जोरसे पक्वाशयमें प्राप्त हो और तूनीके समान पीडा करे उसको प्रतूनी कहते हैं॥

इन दोनोंपर चिकित्सा।

तून्यां च प्रतितून्यां च प्रशस्ताः स्नेहबस्तयः। पिबेद्वा स्नेहलवणं पिप्पल्यादिमथांबुना॥ उष्णेन रामठक्षारप्रगाढमथवा घृतम्॥

अर्थ-तूनी और प्रतूनी वादीपर स्नेहबस्ति देवे. अथवा निमक और घी ये पीवे अथवा पीपलके चूर्णको पानीके साथ पीवे अथवा गरम जलके साथ हींग और सैंधानिमक सेवन करे अथवा घृत पीना चाहिये॥

आध्मानलक्षण।

साटोपमत्युग्ररुजमाध्मातमुदरं भृशम्।
आध्मानमिति जानीयाद्धोरं वातनिरोधजम्॥

अर्थ-गुडगुड शब्दयुक्त अत्यंत पीडायुक्त ऐसा उदर (पक्वाशय) अत्यंत फूल अर्थात् वादीसे मरकर चामकी थैलीके समान हो जाय इस भयंकर रोगको आध्मानरोग कहते हैं. यह वातके रुकनेसे होय है ॥

चिकित्सा ।

आध्माने लंघनं पूर्वं दीपनं पाचनं ततः ।
फलवर्तिक्रियां कुर्याद्वस्तिकर्म च शोधनम् ॥

अर्थ-अफरा इस रोगमें प्रथम लं करे फिर दीपन और पाचन देवे तथा फलवर्त्ती बस्तीकर्म तथा दस्त करावे ये उपाय करना चाहिये ॥

नाराचचूर्ण ।

कर्षमात्रा भवेत्कृष्णा त्रिवृता स्यात्पलोन्मिता । खंडादपि पलं ग्राह्यं चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ मधुनाक्षमितं लिह्याच्चूर्णमाध्माननाशनम् ॥

अर्थ-पीपल १ तोला, निसोथ ४ तोले, मिश्री ४ तोले इस प्रकार ले चूर्ण करके तीन मासेके अनुमान सहतके साथ सेवन करे तो पेटका फूलना दूर होय ॥

दारुषट्कलेप ।

दारुहैमवतीकुष्ठशताह्वाहिंगुसैंधवैः ।
लिंपेत्कोष्णैरम्लपिष्टैः शूलाध्मानयुतोदरम् ॥

अर्थ-देवदारु, चोक, कूठ, सतवार, हींग और सैंधानिमक ये पदार्थ निंबूके रसमें पीस गरम करके पेटपर लेप करे तो शूल और पेटका फूलना इनको नाश करे ॥

महानाराचरस ।

अभयारग्वधो धात्री दंती तिक्ता स्नुही त्रिवृत् । मुस्ता प्रत्येकमेतानि ग्राह्याणि पलमात्रया ॥ तानि संक्षुद्य सर्वाणि जलाढकयुगे पचेत् । तत्र तोयेऽष्टमं भागं कषायमवशेषयेत् ॥ निस्त्वग्जैपालबीजानि नवानि पलमात्रया । तनुवस्त्रधृतान्येव तस्मिन्क्वाथे शनैः पचेत् ॥ ज्वालयेदनलं मंदं यावत् क्वाथो घनो भवेत् । ततः खल्वे क्षिपेद्भागानष्टौ जैपालबीजतः ॥ भागांस्त्रीन्नागराद्द्वौ च मरिचाद्द्वौ च पारदात् । गंधकाद्द्वौ च तानीह यावद्यामं विमर्दयेत् ॥ रसो नाराचनामायं भक्षितो

रत्तिकामितः । जलेन शीतलेनैव रोगानेतान्विनाशयेत् ॥ आध्मानं शूलमानाहं प्रत्याध्मानं तथैव च । उदावर्तं तथा गुल्ममुदराणि हरत्यसौ ॥ वेगे शांते च भुंजीत शर्करासहितं दधि । ततस्तत्सैंधवेनापि ततो दध्योदनं मनाक् ॥

अर्थ–हरड, अमलतासका गूदा, आमले, जमालगोटा, कुटकी, थूहर, निसोथ और नागरमोथा ये प्रत्येक चार २ तोले ले सबको कूटके ५१२ तोले जलमें डालके काढा करे जब अष्टावशेष काढा हो जावे तब उतारके छान लेय. फिर इस काढेमें जमालगोटेके बीज छिले हुए ४ तोले कपडेकी पोटलीमें बांधके दोलायंत्रकी विधिसे लटकाय देवे और मंद २ अग्निसे सिजावे जबतक काढा गाढा होवे तबतक औटावे. फिर खरलमें इन जमालगोटेके ८ भाग, सोंठ ३ भाग, काली मिरच, पारा और गंधक ये दो दो भाग लेवे. सबको एकत्र करके एक प्रहर खरल करे. यह नाराचरस शीतल जलके साथ एक रत्ती सेवन करे तो अफरा, शूल, वादीका अवरोध, प्रत्याध्मान, उदावर्त्त, गोलेका रोग तथा सर्व प्रकारके उदररोग इनको नाश करे जब दस्त हो चुके तब दहीभात भोजन करे अथवा दहीभात और सैंधानिमक ये पथ्यमें थोडे देवे. जब दस्त बंद करने होंय तो गरम जल पिलाय देवे ॥

प्रत्याध्माननिदान ।

विमुक्तपार्श्वहृदयं तदेवामाशयोत्थितम् ।
प्रत्याध्मानं विजानीयात्कफव्याकुलितानिलम् ॥

अर्थ–और वही आध्मान रोग आमाशयमें उत्पन्न होय तौ उसको प्रत्याध्मान कहते हैं. इसमें पसवाडे और हृदय इनमें पीडा नहीं होय और वायु कफकरके व्याकुल हो ॥

चिकित्सा ।

प्रत्याध्माने समुत्पन्ने कुर्याद्वमनलंघने ।
दीपनादीनि युंजीत पूर्ववद्बस्तिकर्म च ॥

अर्थ–प्रत्याध्मान रोग उत्पन्न होनेसे वमन और लंघन करे. फिर दीपनादिक उपचार तथा बस्ति इत्यादिक उपचार करे ॥

वाताष्ठीलानिदान ।

नाभेरधस्तात्संजातः संचारी यदि वाऽचलः । अष्ठीलावद्घनो ग्रंथि-

रूर्ध्वमायत उन्नतः ॥ वाताष्ठीलां विजानीयाद्बहिर्मार्गावरोधिनीम् ॥

अर्थ-नाभीके नीचे उत्पन्न भई और इधर उधर फिरे, अथवा अचल अष्ठीला (गोल पाषाण) के समान कठिन और ऊपरका भाग कुछ लंबा होय और आडी कुछ ऊंची होय और बहिर्मार्ग कहिये अधोवायु मल मूत्र. इनका अवरोध कहिये (रुकना) हो ऐसी गांठको वाताष्ठीला कहते हैं ॥

प्रत्यष्ठीला ।

एतामेव रुजोयुक्तां वातविण्मूत्ररोधिनीम् ।
प्रत्यष्ठीलामिति वदेज्जठरे तिर्यगुत्थिताम् ॥

अर्थ-वाताष्ठीला अत्यंत पीडायुक्त वात मूत्र मलके रोध करनेवाली और जो तिरछी प्रगट भई होय उसको प्रत्यष्ठीला कहते हैं ॥

हिंग्वादिचूर्ण ।

हिंगुग्रंथिकधान्यजीरकवचाचव्याग्निपाठाशठीवृक्षाम्लं लवणत्रयं त्रिकटुकं क्षारद्वयं दाडिमम् । पथ्यापौष्करवेतसाम्लहपुषाजाज्यस्तदेभिः कृतं चूर्णं भावितमेतदार्द्रकरसैः स्याद्वीजपूरद्रवैः ॥

अर्थ-भूनी हींग, पीपरामूल, धनिया, जीरा, वच, चव्य, चित्रककी छाल, पाढ, कचूर, इमली, सैंधानिमक, बिडनिमक, काला निमक, सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जीखार, जवाखार, अनारदाना, हरड, पुहकरमूल, अमलवेत, हाऊबेर और जीरा इनके चूर्णमें अदरखके रसकी तथा बिजोरेके रसकी भावना देवे और यथायोग्य अनुपानके साथ अष्ठीलारोग पर वैद्य देवे ॥

प्रत्यष्ठीलादिचिकित्सा ।

प्रत्यष्ठीलाष्ठीलकयोर्गुल्मेऽभ्यंतरविद्रधौ ।
क्रिया हिंग्वादिचूर्णं च शस्यतेऽत्र विशेषतः ॥

अर्थ-प्रत्यष्ठीला, अष्ठीला, गुल्म और अंतरविद्रधि इनपर हिंग्वादि चूर्ण जो ऊपर लिख आये हैं सो देय. विशेषता करके यही क्रिया उत्तम है ॥

दूसरा प्रकार ।

हिंग्वाम्लात्रिकटूग्रषट्कटुशठीवृक्षाम्लदीप्यालकापाठाजाज्यजगंधमूलहपुषाद्विक्षारसाराभया । हिध्माध्मानाविबंधवर्ध्मकसनश्वासाग्निसादारुचिप्लीहाशोंखिलशूलगुल्मगदहृद्रोगाश्मपांडुप्रणुत ॥

अर्थ–भूनी हींग, अमलवेत, सोंठ, मिरच, पीपल, वच, षट्कटू (सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, चित्रक, पीपरामूल), कचूर, चूक, अजमायन, कंकोल, पाढ, जीरा, असगंध, पुहकरमूल, हाऊबेर, सज्जीखार, जवाखार, चिरौंजी और हरड इनका समान भाग चूर्ण करे इसके सेवनसे हिचकी, अफरा, मलबद्धता, बद, खांसी, श्वास, मंदाग्नि, अरुचि, प्लीहा, बवासीर, गोलेका रोग, हृदयरोग, पथरी और पांडुरोग इन सबको दूर करे ॥

हिंग्वादियोग ।

हिंगूग्रगंधाबिडशुंठ्यजाजहिरीतकीचित्रकमूलकुष्ठम् ।
भागोत्तरं चूर्णितमेतदिष्टं गुल्मोदराष्ठीलविषूचिकासु ॥

अर्थ–भूनी हींग, वच, बिडनोन, सोंठ, जीरा, हरड, चीतेकी छाल और कूठ ये सब औषध भागोत्तर वृद्धिसे लेके चूर्ण करे यह गोला, उदर, अष्ठीला और विषूचिका इन-पर हितकारी है ॥

नादेयादिकाढा ।

नादेयीकुटजार्कशिग्रुबृहतीस्नुग्बिल्वभल्लातकव्याघ्रीकिंशुक-पारिभद्रकरजोपामार्गनीपाग्निकान् । वासामुस्तकपाटलासल-वणान् जग्ध्वा रसं पाचितं हिंग्वादिप्रतिवापमेतदुचितं गुल्मा-दराष्ठीलिषु ॥

अर्थ–भूयजामुन, कूडेकी छाल, आक, सहजना, कटेरी बडी, थूहर, बेलगिरी, भिलाए, छोटी कटेरी, पलासपापडी, नीमकी छाल, पित्तपापडा, ओंगा, कदंब, चित्रक, अडूसा, नागरमोथा, पाढ इनका काढा करके इसमें सैंधानिमक और हींग डालके पीवे। यह गोला, उदर और अष्ठीला इन पर उत्तम है ॥

विडंगासव ।

विडंगं पिप्पलीमूलं पाठा धात्र्येलवालुकम् । कुटजत्वक्फलं रास्ना भार्ङ्गी पंचपलोन्मितान् ॥ अष्टद्रोणेऽभसः पक्त्वा द्रोण-शेषं तु कारयेत् । पूते शीते क्षिपेत्तस्मिन् माक्षिकस्य शत-त्रयम् ॥ धातक्या विंशतिपलं चूर्णं कृत्वा तु दापयेत् । व्यो-षस्य च तुलान्वाष्टौ त्रिजातं द्विपलं तथा ॥ फलिनीहेमतोयानां सलोध्राणां पलं पलम् । घृतभांडे समाधाय मासमेकं विधा-

रयेत् ॥ एष योगो हरत्येव प्रत्यष्ठीलाभगंदरान् । ऊरुस्तंभाश्मरीमेहगंडमालां सविद्रधिम् ॥ आढ्यवातं हनुस्तंभं विडंगाख्यो महासवः ॥

अर्थ—वायविडंग, पीपरामूल, पाढ, आँवले, एलवालुक, कूडेकी छाल, इन्द्रजौ, रास्ना, भारंगी ये प्रत्येक बीस २ तोले लेवे. उसमें १४ मन १३ सेर जल डालके औटावे जब ३६ सेर १६ तोले जल बाकी रहे तब उतारके छान लेय. फिर इसमें ३०० तोले सहत, धायके फूल ८० तोले, सोंठ, मिरच, पीपल ये ३२०० तोले तथा दालचीनी, इलायची, पत्रज ये प्रत्येक आठ२ तोले लेके और फूलप्रियंगु, धतूरेके बीज, नेत्रवाला और लोध ये प्रत्येक चार २ तोले डालके इन सबको घीके चिकने बासनमें भरके एक महीनेपर्यंत दाबके धरा रहने दे. यह प्रयोग प्रत्यष्ठीला, भगंदर, ऊरुस्तंभ, पथरी, प्रमेह, गंडमाला, विद्रधि, आढ्यवात और हनुस्तंभ इनको नाश करे. इसको विडंगासव कहते हैं ॥

बस्तिवातलक्षण ।

मारुते विगुणे बस्तौ मूत्रं सम्यक्प्रवर्त्तते ।
विकारा विविधाश्चापि प्रतिलोमे भवंति हि ॥

अर्थ—बस्ती (मूत्रस्थान) में वायु अनुलोमगतिसे गमन करे तौ मूत्र अच्छी रीतिसे उतरे ऐसे प्रतिलोमसे गमन करे तौ अनेक प्रकारके पथरी मूत्रकृच्छ्रादि विकार उत्पन्न होय ॥

चिकित्सा ।

बलामूलत्वचश्चूर्णं ससितं कर्षसंमितम् ।
पिबेत्कुडवदुग्धेन मुहुर्मूत्रेण शांतये ॥

अर्थ—खिरेंटीकी जडकी छालका चूर्ण एक तोला और मिश्री एक तोला इनको १६ तोले दूधके साथ पीवे तो वारंवार मूतना दूर होय ॥

हरीतक्यादिचूर्ण ।

पथ्याबिभीतधात्रीणां चूर्णं चूर्णं मृतायसः ।
मधुना सह संलीढं मुहुर्मूत्रस्य शांतिकृत् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आँवला इनका चूर्ण करके इसमें लोहभस्म मिलाय सहतमें मिलायके चाटे तो वारंवार मूतनेको बंद करे ॥

यवक्षारचूर्ण ।

यवक्षारस्य चूर्णं तु संयोज्य सितया सह ।
भक्षयेन्नियतं तस्य प्रशाम्येन्मूत्रनिग्रहः ॥

अर्थ–जवाखारके चूर्णमें मिश्री मिलायके सेवन करे तो मूत्रग्रह (मूत्रका रुकना) शांत होवे ॥

कूष्मांडबीजयोग ।

कूष्मांडस्य तु बीजानि बीजानि त्रपुसस्य च ।
बस्तौ संधारयेत्तेन प्रशाम्येन्मूत्रनिग्रहः ॥

अर्थ–पेठेके बीज और काकडीके बीज इन दोनोंको एकत्र पीसके बस्ती (मसाने) पर लगावे तो मूत्रकी रुकावट दूर हो ॥

आमलक्यादि योग ।

आमलक्याश्च कल्केन बस्तिभागं प्रलेपयेत् ।
तेन प्रशाम्यति क्षिप्रं नियमान्मूत्रनिग्रहः ॥

अर्थ-आंवलेका कल्क करके बस्तीपर गाढा २ लेप करे तो निश्चय करके मूत्रकी रुकावट दूर होय ॥

चंदनादिवर्ति ।

मेहनस्याथ वा योनेर्मुखस्याभ्यंतरे शनैः ।
घनसारयुतां वर्तिं धारयेन्मूत्रनिग्रहे ॥

अर्थ–मूत्रकी रुकावट दूर करनेको लिंगमें अथवा योनिके मुखमें चंदनमें भीगी हुई बत्तीको धारण करे तो मूत्र उतरे ॥

बस्तिगतवायुचिकित्साक्रम ।

अथ बस्तिगते वाते कार्यो बस्तिविशोधनः ॥

अर्थ–बस्तिगत वात कुपित होनेसे बस्तीका शोधन करे ॥

कंपवायु ।

सर्वांगकंपः शिरसो वायुर्वेपथुसंज्ञकः ॥

अर्थ–सब अंगोंको और मस्तकको जो कंपाये उस वायुको वेपथु (कंप) वायु कहते हैं ॥

खल्लीके लक्षण।

खल्ली तु पादजंघोरुकरमूलावमोटनी ॥

अर्थ-और जो वायु पैर, जंघा, ऊरू और हाथके मूलमें कंपन करे उसको खल्ली (मूलामना) रोग कहते हैं ॥

चिकित्सा।

कुष्ठसैंधवयोः कल्कश्चुक्रतैलसमन्वितः ।
सुखोष्णो मर्दने योज्यः खल्लीशूलनिवारणः ॥

अर्थ-कूट और संधानिमक इनका कल्क चुक्रतैल (जो पीछे लिख आये हैं) उसके साथ मिलाय गरम करके सुहाता २ लगायके मालिस करे तो खल्ली वात और शूल इनको दूर करे ॥

स्थान नाम लक्षण वातव्याधिनिदान।

स्थाननामानुरूपैश्च लिंगैः शेषान्विनिर्दिशेत् ।
सर्वेष्वेतेषु संसर्ग पित्तादेरुपलक्षयेत् ॥

अर्थ-स्थान और नाम इनके अनुरूप कहिये तुल्य वैसे लक्षणोंसे शेष वातव्याधि जाननी. स्थानानुरूप कहिये जैसे कुक्षिशूल, नखभेद इत्यादिक. नामानुरूप कहिये जैसे शूलके कहनेसे कीलनिखातवत् पीडा जाननी उसी प्रकार तोदभेदादिक करकेभी पीडा विशेष जाननी चाहिये और पित्त, कफ, रुधिर इनके संसर्गसे द्विदोषजव्याधि जाननी चाहिये॥

प्रथमं ह्रस्वकेशत्वं ततो वाचालतापि च । आटोपः पार्श्वशूलं च पुरीषस्यातिगाढता ॥ तथा मलाप्रवृत्तिश्च कंपः स्तंभश्च रूक्षता । कार्श्यं कार्ष्ण्यं च शैत्यं च लोमहर्षो व्यथा तथा ॥ तोदो भेदः शिरास्फूर्तिरंगमर्दोऽगशुष्कता । संकोचश्चांगविभ्रंशो मोहश्चंचलचित्तता ॥ निद्रानाशः स्वेदनाशो बलहानिश्च भीरुता । शुक्रक्षयो रजोनाशो गर्भनाशः परिश्रमः ॥ एवंविधानि रूपाणि करोति कुपितोऽनिलः । हेतुस्थानविशेषेण भवेद्रोगविशेषकृत् ॥

अर्थ-अब वातभेद कहता हूं.. केश छोटे होना, बकवाद करना, गुडगुड शब्द, पार्श्वशूल; मल दृढ हो जाना, मलका अवरोध, कंप, निश्चल रहना, रूखापन,

कृशपन, कालेपन, शीत होना, रोमांच, बेदना, शूल, भेद, शिराओंका फुरना, अंगका मर्दन, अंग सूख जाना, अंग सकोडना, अंगभ्रंश, मोह, मनकी चंचलता, निद्राका, नाश, पसीनेका नाश, बलकी हानि, भय पाना, वीर्यक्षय, शुक्रक्षय, गर्भका नाश, श्रम इस प्रकार वायु कुपित होनेसे हेतु और स्थान इनके योगसे अनेक प्रकारकी व्याधि उत्पन्न करता है ॥

चिकित्सा ।

सामान्यवातरोगाणां या चिकित्सा प्रवर्तते ।
एषां सैव विधातव्या ततस्ते यांति संक्षयम् ॥

अर्थ-सामान्यवातरोगों पर जो चिकित्सा कही है वोही चिकित्सा हस्वकेशादि वातोंपर करे तो इन सबका नाश होय ॥

लशुनसेवन ।

अन्नप्रकारैः पललप्रकारैर्गोधूमकैर्वा यवसक्तुभिर्वा ।
दुग्धेन तैलेन घृतेन चापि युक्तानि शीते लशुनानि खादेत् ॥

अर्थ-भोजन करनेके जो पदार्थ (रोटी, दाल, भात, इत्यादिक) अथवा मांसके पदार्थोंसे किंवा गेहूं, जौ, सत्तू, दूध, तेल और घी इनके साथ शीत दूर करनेको लहसन भक्षण करे ॥

शुंठ्यादिकाढा ।

विश्वैरंडशिफादारुगुडूचीसहचरास्तथा ।
एतत्काथोस्ति संधिस्थं वातं हंति निषेवितः ॥

अर्थ-सोंठ, अंडकी जड, देवदारु, गिलोय और पियाबांसा इनका काढा सेवन करनेसे अस्थिगत और संधिगत वायुको नाश करे ॥

दशमूलादिकाढा ।

दशमूलीकषायेण पिबेद्वा नागरांभसा ।
कटिशूलेषु सर्वेषु तैलमेरंडसंभवम् ॥

अर्थ-दशमूलके काढेसे अथवा सोंठके काढेसे अंडीका तेल पीवे तो कमरमें जो दर्द होता है वह सब नष्ट होय ॥

कटिवातपर लड्डू ।

आलिवं खाखसं खाद्यं खर्जूरं मेथिका तिलाः । मिशिद्वयं च

भल्लास्थि वातामं बब्बुलं तथा ॥ सारं चैव पलं ग्राह्यं गुडो द्विकुडवस्तथा। घृतं द्विकुडवं चैव लड्डुकान् कारयेद्भिषक् ॥ द्विकर्षं भक्षयेत्प्रातः कटिवातविनाशनम्। धातुस्तंभं धातुवृद्धिं कुरुते नात्र संशयः ॥

अर्थ-आलिव, खसखस, खजूर, मेथी, तिल, सोंफ, बडीसोंफ, भिलाएकी गुठली, बदाम, गोंद और चिरोंजी प्रत्येक चार २ तोले लेवे. गुड और घी ये प्रत्येक ३२ तोले डाले. सबको एकजीव कर दो दो तोलेके लड्डू बनावे. इसमेंसे प्रातःकाल एक भक्षण करे तो कमरकी वायुको नाश करे तथा धातुका स्तंभन करे और धातुकी वृद्धि करे इसमें संदेह नहीं है ॥

ऊरुस्तंभपर सामान्यविशेषचिकित्सा।

ऊरुस्तंभं जयेद्रूक्षस्वेदमर्दनकौशिकैः। पिप्पली पिप्पलामूलं भल्लातकफलानि च ॥ एतत्कल्कश्च सक्षौद्र ऊरुस्तंभनिवारणः ॥

अर्थ-ऊरुस्तंभ व्याधिको रूक्षस्वेद, मर्दन और गूगल सेवन करना इन उपायोंसे शमन करे. तथा पीपल, पीपरामूल और भिलाए इनके कल्कको सहतके साथ देवे तो ऊरुस्तंभको दूर करे ॥

सामान्यसंज्ञा।

वामनत्वांगसंकोचभंगभेदग्रहव्यथाः। मर्दनैर्बस्तिभिः क्वाथैः स्वेदनैश्च भिषक् जयेत् ॥ अपतानव्रणायामौ स्नेहैर्व्रणक्रियैतैः। अंगरौक्ष्यस्तंभकंपकार्श्यं कपिशतोदनैः ॥ दौर्बल्यस्फुरणे भ्रंशे स्नेहैर्मर्दनमिष्यते। शुक्रकार्श्ये शुक्रनाशे शुक्रस्यातिप्रवर्तने ॥ विड्ग्रहे बद्धविट्के च स्नेहपानं हितं मतम् ॥

अर्थ-वामन (बौनापना), अंगोंका संकोच (कुबडापना), देहमें पीडा तथा अंगोंका जकड जाना इत्यादिकोंको मर्दन, बस्ति, काढे इत्यादिक देना पसीने निकालना इत्यादि उपायोंसे जीते और अपतान, तथा व्रणायाम इनको स्नेह और व्रणचिकित्सा करके दूर करे तथा अंगोंकी रूक्षता, अंगस्तंभ, कंप, कृशता, देहकी कालैाच, पीडा, दुर्बलता, अंगस्फुरण और अंगभ्रंश इनपर स्नेहादिकका मर्दन करे और धातुक्षीण, धातुनाश, धातुका अत्यंत गिरना, विड्ग्रह और बद्धविट्क इनपर स्नेहपान हितकारी तथा मान्य है ॥

ऊर्ध्ववातलक्षण ।

अधः प्रतिहतो वायुः श्लेष्मणा मारुतेन च ।
करोत्युद्गारबाहुल्यमूर्ध्ववातः स उच्यते ॥

अर्थ–कफवात करके पीडित नीचेकी वायु डकार बहुत लावे उस वातको ऊर्ध्व कहते हैं, परंतु टोडरानंदने कुछ विलक्षण लिखा है ॥

शुंठ्यादिचूर्ण ।

भागा दश विश्वायास्तत्तुल्या वृद्धदारुकस्यापि । पथ्यात्र पंचभागा चतुरंशं हिंगु संभृष्टम् ॥ एकः सैंधवभागस्तत्तुल्यं चित्रकं चात्र । संवृद्धमूर्ध्ववातं हंत्येतच्चूर्णितं भुक्तम् ॥

अर्थ–सोंठ और विधायरा दोनों दश दश तोले, हरड पांच तोले, भूनी हींग चार तोले, सैंधानिमक और चित्रक एक २ तोला इन सबका चूर्ण तैयार करके सेवन करे तो अत्यंत बढी हुई ऊर्ध्ववात (बहुत डकारोंका आना) नाश होय ॥

शामामूलं क्षीरपिष्टं निपीतं वासायुक्तं नाशयेदूर्ध्ववातम् ॥

अर्थ–पीपराके मूलको दूधमें पीसके उसमें अडूसेका रस डालके देवे तो ऊर्ध्ववातका नाश करे ॥

त्रिकशूललक्षण ।

स्फिक्सक्थ्नोः पृष्ठवंशास्थ्नोर्यः संधिस्तत्त्रिकं स्मृतम् ।
तत्र वातेन या पीडा त्रिकशूलं तदुच्यते ॥

अर्थ–गलेके समीप और कटिके त्रिकमें जो वायुसे शूल होता है उसको त्रिकशूल कहते हैं ॥

चिकित्सा ।

कारयेद्वालुकास्वेदं त्रिकशूली प्रयत्नतः ।
खट्वाधस्तत्करीषाग्निं धारयेत्सततं नरः ॥

अर्थ–त्रिकशूल रोगवाले रोगीके वालूसे सेंक करे और खाटके नीचे अग्नि रखका होवे कि जिससे कमरमें सेंक पहुँचे इस प्रकार करनेसे त्रिकपीडा दूर होय ॥

आभादित्रयोदशांगगुग्गुलु ।

आभाश्वगंधा हपुषा गुडूची शतावरी गोक्षुरकश्च रास्ना । श्यामा शताह्वा च शठी यवानी सनागरा चेति समं विचूर्ण्य ॥

सर्वैः समं गुग्गुलुमत्र दद्यात्क्षिपेदिहाज्यं च तदर्धभागम् । तद्भ-क्षयेदर्धपिचुप्रमाणं प्रभातकाले सुरयाऽथ यूषैः ॥ मद्येन वा को-ष्णजलेन वाथ क्षीरेण वा मांसरसेन वापि । त्रिकग्रहे जानुहनुग्रहे च वाते भुजस्थे चरणस्थिते च ॥ संधिस्थिते चास्थिगते च तस्मिन्मज्जास्थिते स्नायुगते च कोष्ठे । रोगान् हरेद्वातकफानु-विद्धान्वातेरितान्हृद्ग्रहयोनिदोषान् ॥ भग्नास्थिविद्धेषु च खंज-तायां सगृध्रसीके खलु पक्षवाते । महौषधं गुग्गुलुमेतमाहुस्त्र-योदशांगं भिषजः पुराणाः ॥

अर्थ-बबूरके बीज, असगंध, हाउबेर, गिलोय, सतावर, गोखरू, रास्ना, पीपल, सोंफ, कचूर, अजमायन, और सोंठ इन सबका समान भाग चूर्ण करे और सब चूर्ण-के बराबर शुद्ध करी हुई गूगल डाले और गूगलसे आधा घी डाले तो यह सिद्ध होय. इसमेंसे एक २ तोलेकी गोली बनावे. एक गोली प्रातःकाल सुरा (मद्य) के साथ अथवा यूषके साथ अथवा मद्यके साथ गरम जल, दूध अथवा मांसरस इनमेंसे किसी एकके साथ सेवन करे तो त्रिकपीडा, जानुग्रह (घोटुओंका रह जाना), भुजकी वात, चरणकी वात, स्नायुगत, कोष्ठगत और वातकफसे उत्पन्न व्याधि, वातजन्य हृदयका शूल, योनिदोष, भग्नास्थि, टूटी हुई हड्डी, खंजवात, गृध्रसी, पक्षवात इन सबको नाश करे यह त्रयोदशांग गूगल महौषधी है. ऐसे पूर्वाचार्योंने कहा है ॥

रसोनाष्टक ।

रसोनपक्वकंदस्य गुलिका निस्तुषीकृताः। पाटयित्वा च मध्यस्थं दूरीकुर्यात्तदंकुरम् ॥ निश्युग्रगंधनाशाय दध्ना संनीय रक्षयेत् । ततः प्रक्षाल्य संशोष्य शिलायां परिपेषयेत् ॥ कल्कस्य पंचमं भागं चूर्णमेषां विनिःक्षिपेत् । सौवर्चलं यवानी च भर्जितं हिंगु सैंधवम् ॥ कटुत्रिकं जीरकं च समभागं विचूर्णयेत् । तिलतैलं च कल्कस्य तुर्यांशं तत्र मिश्रयेत् ॥ खादेत्कर्षमितं प्रातः किंवा दोषाद्यपेक्षया । अनुपानं प्रकुर्वीत वातारिशृतमन्वहम् ॥ सर्वांगैकांगजं वातमर्दितं चापतंत्रकम् । अपस्मारं तथोन्मादमूरुस्तंभं च गृध्रसीम् ॥ उरः पृष्ठकटीपार्श्वकुक्षिपीडां कृमीन्ह

रेत् । मद्य मांसं तथाम्लं च रसं सेवेत नित्यशः ॥ व्यायाममातपं रोषमतिनीरं गुडं स्त्रियम् । रसोनमश्नन्पुरुषस्त्यजेदेतान्निरंतरम् ॥ वर्जयेत्तदतीसारी प्रमेही पांडुरोगवान् । अरोचकी गर्भिणी च मूर्च्छार्शोरोगसंयुतः ॥ रक्तपित्ती च शोषी च यक्ष्मी छर्द्यर्दितो नरः । पित्ते तु पथ्यया कुर्यात् प्रयोगांते विरेचनम् ॥ अन्यथा तस्य जायंते कुष्ठपांड्वामयादयः । स्त्रीस्तन्यांतीरतं दद्याद्बालानामप्यनिच्छताम् ॥ तथापि लभते सिद्धिं महावीर्याद्रसोनतः ॥

अर्थ–पकी हुई लहसनकी गांठके छिलके दूर कर टुकडे करे और भीतर जो उनके अंकुर हैं उसको निकालके फेंक देवे. फिर इसकी घोर गंध नाश करनेको रात्रिके समय दहीमें भिगोय देवे. प्रातःकाल धोय स्वच्छ करके पोंछ लेवे. फिर इसको शिलापर पीसके कल्क कर लेवे. इस कल्कमें संचरनिमक, अजमायन, भूनी हुई हींग, सैंधानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल और जीरा इनका समान भाग चूर्ण करके कल्कका पंचमांश मिलावे. तथा तिलका तेल कल्कका चतुर्थांश डालके. सबको एकत्र करके प्रातःकाल एक तोला भक्षण करे अथवा दोष और बल विचार करके मात्रा देवे. और ऊपरसे अंडकी जडका काढा पीवे तो सर्वांग तथा एकांगगत वात, आर्दित अपतंत्रक, अपस्मार, उन्माद, ऊरुस्तंभ, गृध्रसी, उर, पीठ, कमर, पसवाडा और कूख, इनकी, पीडा तथा कृमिरोग इनका नाश करे. इस औषधके सेवन करनेवालेको मद्य, मांस, अम्ल (खट्टा) रस ये जरूर २ सेवन करने चाहिये और व्यायाम, धूप, क्रोध, बहुत जलका पीना, गुड, स्त्रीसेवन ये लहसन खानेवालेको कदाचित् नहीं करने चाहिये. यह औषध अतिसारी, प्रमेही, पांडुरोगी, अरोचकी, गर्भिणी, मूर्च्छावान्, अर्शरोगी, रक्तपित्तवान्, क्षयरोगी, शोषवाला, वमनका रोगी इनको कदाचित् नहीं खानी चाहिये. यदि इस औषधके सेवन करनेसे पित्तकी प्रबलता होवे तो छोटी हरड खायकर दस्त करावे. यदि बढे हुए पित्तमें यदि दस्त न लेवे तो कुष्ठ और पांडु इत्यादि रोग होते हैं स्त्रीके दूधसे जो बालक न पीता हो उसको पिलावे. इस रसोनाष्टक औषध सेवन करनेसे रोगशांत होय ॥

व्रणायाम कहते हैं।

मर्माश्रितं व्रणं प्राप्य वायुर्यः सर्वदेहगः ।
वेगैरानामयेद्देहं व्रणायामं तु तं त्यजेत् ॥

अर्थ-सर्वशरीरगत बात मर्मस्थानके व्रणमें जाकर अपने वेगसे देहको नम्र करता है तिसको व्रणायाम कहते हैं. वह असाध्य समझना ॥

हृदयं यदि वा पृष्ठमुन्नतं क्रमितः सह ।
क्रुद्धो वायुर्यदा कुर्यात्तदा तं कुब्जमादिशेत् ॥

अर्थ-हृदय वा पीठ ये क्रुद्ध होके ऊंचे होते हैं उसको कुब्ज कहते हैं ॥

कृच्छ्रसाध्यत्व ।

हनुस्तंभार्दिताक्षेपपक्षाघातापतानकाः । कालेन महता वाता यत्नात्सिध्यंति वा न वा ॥ नवान्बलवतस्त्वेतान्साधयेन्निरुपद्रवान् ॥

अर्थ-हनुस्तंभ, अर्दित, आक्षेप, पक्षाघात, अपतानक ये वातव्याधि बहुत दिनमें बडे परिश्रमसे और यत्नसे साध्य होती हैं. अथवा कभी साध्य नहीं होय. परंतु बलवान् पुरुषके ये वातव्याधि नई प्रगट भई हो और उपद्रवरहित होय तो उसकी चिकित्सा करनी चाहिये ॥

वातरोगके असाध्यत्व ।

विसर्पदाहरुक्संगमूर्च्छारुच्यग्निमार्दवैः । क्षीणमांसबलं वाता घ्नंति पक्षवधादयः ॥ शूनं सुप्तत्वचं भग्नं कंपाध्मानानिपीडितम् । रुजार्तिमंतं च नरं वातव्याधिविनाशयेत् ॥ अव्याहतगतिर्यस्य स्थानस्थः प्रकृतिस्थितः । वायुः स्यात्सोऽधिकं जीवेद्वीतरोगः समाः शतम् ॥

अर्थ-विसर्परोग, दाह, शूल, मलमूत्रका निरोध, मूर्च्छा, अरुचि, मंदाग्नि इन लक्षणयुक्त जो होय और बलक्षीण होय ऐसे पुरुषोंको पक्षवधादिक विकार मारक अर्थात् प्राणके हरणकर्त्ता होते हैं ॥ सूजनवाला, जिसकी त्वचा सोइ गई होय अर्थात् जिसको स्पर्श होनेका ज्ञान न होय, जिसकी हड्डी टूट गई होय, कंप और अफरा इनसे अत्यन्त पीडित होय, रुजा और आर्त्ति कहिये शूलयुक्त ऐसे मनुष्यको यह वातव्याधिरोग नाश करता है जिस पुरुषकी वायु अव्याहतगति और अपने आश्रयसे रहनेवाली और प्रकृतिस्थित कहिये न वृद्ध न क्षीण होय, वह पुरुष निरोगी होकर (अधिकं समाः शतं) कहिये एकसो बीस वर्ष और पांच दिन पर्यंत जीवे ॥

बत्तीसीकाढा ।

रास्ना गुडूची ह्येरंडो देवाह्वा चाभया सठी । बलोग्रगंधा पाठा च शतपुष्पा पुनर्नवा ॥ पंचमूली विषा मुंडी सौर्यकश्च दुरालभा । यवानी पौष्करं मूलमश्वगंधा प्रसारिणी ॥ गोक्षुरं चाटरूषं च वपुषा वृद्धदारुकम् । शतावरी तथा ब्राह्मी गुग्गुली क्षीरकंचुका ॥ समभागैरिमैः सर्वैः कषायमुपकल्पयेत् । कृष्णाचूर्णेन वा योगराजगुग्गुलुनाथ वा ॥ अजमोदादिना वापि तैलेनैरंडजेन वा । वातरोगेषु सर्वेषु कफशोषेऽपतानके ॥ मन्यास्तंभे तथा शोषे पक्षाघाते सुदारुणे । अर्दिताक्षेपकुब्जे च हनुग्रहस्वरग्रहे ॥ आढ्यवाते तथा मूके खंजे चैवाववाहुके । गृध्रस्यां जानुभेदे च गुल्मे शूले कटिग्रहे ॥ सामे चैव निरामे च सप्तधातुगतेऽनिले । आवृते चानावृते च वातरक्ते विशेषतः ॥ एष द्वात्रिंशकः क्काथः कृष्णात्रेयेण भाषितः ॥

अर्थ–रास्ना, गिलोय, अंडकी जड, देवदारू, हरड, कचूर, खिरेटी, वच, पाढ, सौंफ, पुनर्नवा, पंचमूल, अतिविष (अतीस), गोरखमुंडी, विजयसार, धमासा, अजमायन, पोहकरमूल, असगंध, प्रसारणी, गोखरू, अडूसा, कांटेदार खिरनी, बिधायरा, शतावर, ब्राह्मी, गूगल और क्षीरकंचुका इन सबको समान भाग लेकर क्काथ बनावे, इसमें पीपलका चूर्ण अथवा योगराजगूगल अथवा अजमोदादि चूर्ण अथवा अंडीके तेलके साथ पीवे. यह संपूर्णवादीके रोग, कफशोष, प्रतानकवायु, मन्यास्तंभ, शोष, घोरपक्षाघात, अर्दितरोग, आक्षेपक, कुब्ज, हनुग्रह, स्वरग्रह, आढचवात, मूक, खंज, अवबाहुक, गृध्रसी, घोटुओंकी पीडा, गोलेका रोग, शूलरोग, कमरका दर्द, साम और निराम ऐसी सप्तधातुगत वायु, आवृत, अनावृत और वातरक्त इनपर देवे तो सबको नष्ट करे. यह द्वात्रिंशक काढा कृष्णात्रेयनामक ऋषिने कहा है ॥

लघुरास्नादिकाढा ।

रास्नागुडूचीवातारिदेवदारुमहौषधैः ।
पिबेत्सर्वांगिके वाते समज्जास्थिसमांसगे ॥

अर्थ–रास्ना, गिलोय, अंडकीजड, देवदारू और सोंठ इनको समान भाग ले काढा करके पीवे तो सर्वांगवात, मज्जागत वात, अस्थिगत वात और मांसगत वातको दूर करे ॥

दूसरा प्रकार।

रास्नैरंडशिफा दारु वचा शुंठी दुरालभा । अभयातिविषा मुस्ता शतमूली वृषा तथा ॥ अमीषां क्वाथपानेन कासामश्लेष्म-संधिगः । मज्जास्थिस्नायुसर्वांगवायुर्नश्यति निश्चितम् ॥

अर्थ–रास्ना, अंडकी जड, देवदारू, वच, सोंठ, धमासा, हरड, अतीस, नागरमोथा' शतावर और अडूसा इनका काढा पीनेसे खांसी, आमवात, श्लेष्मवात, संधिवात और मज्जा, अस्थि और स्नायु इनकी वायु और सर्वांगवायु ये सब निश्चय दूर हों ॥

रास्नादिचूर्ण ।

रास्ना कुष्ठनतद्रुषट्कटुशठी पाठा वचा सारिवा भूनिंबात्रिफला तथा दशजटा निर्गुंडिकैरंडकम् । हिंग्वाम्लार्द्रकबस्तगंधकबरी क्षारौ पटूनां त्रयं चूर्णं पुष्करतैलयुक्तमखिलान्वातानशीतिं जयेत् ॥

अर्थ--रास्ना, कूठ, छड, सोंठ, मिरच, चव्य, चित्रक, पीपरामूल, कचूर, पाढ, वच, सारिवा, चिरायता, त्रिफला, दशमूल, निर्गुडी, एरंडकी जड, हींग, अमलवेत, अदरख, बनतुलसी, बबूर, जवाखार, सुहागा, सैंधानिमक, बिडनिमक और काला निमक इन सबके चूर्णको पुष्करमूलके काढेसे सिद्ध करे तेलके साथ सेवन करै तो अस्सी प्रकार-की वादी नष्ट होवे ॥

आभादिचूर्ण ।

आभा रास्ना गुडूची च शतावर्यौ महौषधम् । शतपुष्पाश्वगंधा च हपुषा वृद्धदारुकम् ॥ यवानी चाजमोदा च समभागानि कारयेत् । सूक्ष्मचूर्णमिदं कृत्वा बिडालपदकं पिबेत् ॥ मद्ये-र्मांसरसैर्यूषैस्तक्रैरुष्णोदकेन वा । सर्पिषा वा पिबेद्यस्तु दधि-मंडेन वा पुनः ॥ अस्थिसंधिगतं वायुं स्नायुमज्जाश्रितं च यत् । कटिग्रहं गृध्रसीं च मन्यास्तंभं हनुग्रहम् ॥ ये च कोष्ठगता रोगास्तान् च सर्वान्विनाशयेत् । आभाद्यो नाम चूर्णोऽयं सर्व-व्याधिनिबर्हणः ॥

अर्थ–बबूरके बीज, रास्ना, गिलोय, शतावर, सोंठ, सोंफ, असगंध, हौउबेर, विधा-यरा, अजमायन, अजमोद ये सब समानभाग लेवे. सबका चूर्ण कर मद्य मांस-

रस, यूष, छाछ, गरम जल, घी, दहीका पानी इनमेंसे किसी एकके साथ २ तोले पीवे तो अस्थि, संधि, स्नायु, मज्जा और कमर इन स्थानकी वायु, गृध्रसी, मन्यास्तंभ, हनुग्रह और कोष्ठगत रोग इन सबको नाश करे इसको आभादिचूर्ण कहते हैं ॥

रास्नादिचूर्ण ।

रास्ना शतावरी दारु कंकोलं लांगली कणा । रक्तचंदनमंजिष्ठा वृद्धिसैंधवपद्मकः ॥ अश्वगंधामृता पाठा मुस्तैला शालिपर्णिका । शतपुष्पाजमोदा च शुंठी कुष्ठं समांशतः ॥ संघृष्टं चूर्णमेतेषां भक्षितं तप्तवारिणा । त्वगस्थिस्नायुसंभूतं मारुतं हंति वेगतः ॥

अर्थ–रास्ना, शतावर, देवदारु, कंकोल, कालियारी, पीपल, लालचंदन, मँजीठ, वृद्धि, सैंधानिमक, पद्माख, असगंध, गिलोय, पाढ, नागरमोथा, इलायची, सालिपर्णी, सोंफ, अजमोद, सोठ, कूठ ये सब समान भाग लेवे सब एकत्र कर चूर्ण करे गरम जलके साथ देवे तो त्वचा, अस्थि और स्नायु इनमें जो वातव्याधिका वेग है उसको नाश करे ॥

शिग्रुमूलादिचूर्ण ।

शिग्रुमूलं कणा रास्नी शुंठी गोक्षुरसैंधवम् । वह्निश्चैरंडमूलं च अमीषां चूर्णसंभवा ॥ गुटिकां प्रत्यहं तासामेकैकामदति ध्रुवम् । सर्वांगकुपितो वायुः शमं यात्यतिवेगतः ॥

अर्थ–सहजनेकी जड, पीपल, रास्ना, सोंठ, गोखरू, सैंधानिमक, चीतेकी छाल, अंडकी जड इनका चूर्ण करके गोली बनाय लेवे. इसमेंसे नित्यप्राति एक भक्षण करे तो संपूर्ण अंगमें वातके कोपको दूर करे ॥

अजमोदादिचूर्ण ।

अजमोदा कणा रास्ना गुडूची विश्वभेषजम् । शतपुष्पाश्वगंधा च शतमूली समांशतः ॥ सुश्लक्ष्णं चूर्णमेतेषां भक्षितं सर्पिषा सह । हृत्कुक्षिकोष्ठकंठस्थं मारुतं हंति वेगतः ॥

अर्थ–अजमोद, पीपल, रास्ना, गिलोय, सोंठ, सोंफ, असगंध, शतावर ये समान भाग लेके चूर्ण करे इसको घीके साथ सेवन करे तो हृदय, कूख, कोठा और कंठ इन स्थानोंमें कुपित हुई वातको शीघ्र नष्ट करे ॥

कुष्ठादिचूर्ण ।

कुष्ठकेंद्रयवा पाठा पावकोऽतिविषा निशा ।
एतेषां चूर्णमुष्णांबुपीतं हंत्यनिलान्बहून् ॥

अर्थ-कूठ, इंद्रजौ, पाढ, चित्रककी छाल, अतीस और हलदी इनका बारीक चूर्ण करके गरम जलके साथ पीवे तो अनेक प्रकारकी वायु दूर करे ॥

शुंठ्यादिचूर्ण ।

शुंठीमरिचदारूणां चूर्ण क्काथस्य पानतः ।
सर्वे वाता विनश्यंति देहोपद्रवकारिणः ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच और देवदारू इनका चूर्ण कर इन्हींके काढेके साथ देवे तो देहमें उपद्रव करनेवाले संपूर्ण वादियोंको नष्ट करे ॥

रास्नादिचूर्ण ।

रास्ना पुनर्नवा शुंठी गुडूच्येरंडजं शृतम् ।
सप्तधातुगते वाते वाते सर्वांगगे पिबेत् ॥

अर्थ-रास्ना, पुनर्नवा, सोंठ, गिलोय और अंडकी जड इनका काढा सप्तधातुगत वात, आमवात और सर्वांगवात इनपर देवे ॥

द्वात्रिंशकगुग्गुलु ।

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडंगं चव्यचित्रको । वचैला पिप्पलीमूलं हपुषा सुरदारु च ॥ तुंबरुं पौष्करं कुष्ठं विषा च रजनीद्वयम् । बाष्पिका जरिकं शुंठी शतपत्रा दुरालभा ॥ सौवर्चलं विडंगं च क्षारौ द्विरदपिप्पली । सैंधवं च समानेन तुल्यं दत्त्वा च गुग्गुलुम् ॥ साधयित्वा विधानेन कोलमात्रां वटीं चरेत् । घृतेन मधुना वापि भक्षयेत्तामहर्मुखे ॥ आमं हन्यादुदावर्तमंत्रवृद्धिं गुदक्रमीन् । महाज्वरोपसृष्टानां भूतोपहतचेतसाम् ॥ आनाहोन्मादकुष्ठानि पार्श्वशूलहृदामयान् । गृध्रसीं च हनुस्तंभं पक्षाघातापतानकान् ॥ शोफप्लीहानमत्युग्रं कामलामपचीं तथा । नाम्ना द्वात्रिंशको ह्येष गुग्गुलुः कथितो महान् ॥ धन्वंतरिकृतो योगः सर्वरोगनिकृंतनः ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा, वायविडंग, चव्य, चित्रक, दालचीनी, इलायची, पीपरामूल, हाऊबेर, देवदार, तुंबरू, पोहकर मूल, कूठ, अतीस, दारुहलदी, हलदी, बबूर, जीरा, सोंठ कमल, धमासा, संचरनिमक, वायविडंग, सज्जीखार, जवाखार, गजपीपल और सैंधानिमक ये सब एक २ भाग लेवे और सबकी बराबर गूगल लेय सब विधिपूर्वक सिद्ध करके बेरके गुटिका समान करके इसको घृत अथवा सहतके संग प्रातःकाल खाय तो आम, उदावर्त्त, अंत्रवृद्धि, गुदाकी कृमि इनको नाश करे तथा महाज्वरसे पीडित, भूतबाधावाला, अनाह, उन्माद, कोढ, पसवाडेका शूल, हृदयरोग, गृध्रसी, हनुस्तंभ, पक्षाघात, अपतानक, शोफ, प्लीहा, कामला और अपची इन सब रोगवालोंको हितकारी है इसको बडा द्वात्रिंशनामा गुग्गुल कहते हैं. यह धन्वंतरिका करा हुआ है ॥

योगराजगुग्गुल वातादिरोगोंपर ।

नागरं पिप्पली चव्यं पिप्पलीमूलचित्रकैः । भृष्टं हिंग्वजमोदं च सर्षपा जीरकद्वयम् ॥ रेणुकेंद्रयवाः पाठा विडंगं गजपिप्पली । कटुकातिविषा भार्ङ्गी वचा मूर्वेति भागतः ॥ प्रत्येकं शाणिकानि स्युर्द्रव्याणीमानि विंशतिः ॥ द्रव्येभ्यः सकलेभ्यश्च त्रिफला द्विगुणा भवेत् ॥ एभिश्चूर्णीकृतैः सर्वैः समो देयस्तु गुग्गुलुः । वंगं रौप्यं च नागं च लोहसारं तथाभ्रकम् ॥ मंडूरं रससिंदूरं प्रत्येकं पलसंमितम् । गुडपाकसमं कृत्वा इमं दद्याद्यथोचितम् ॥ एकपिंडं ततः कृत्वा धारयेद्घृतभाजने । गुटिकाः शाणमात्रास्तु कृत्वा ग्राह्या यथोचिताः ॥ गुग्गुलुर्योगराजोऽयं त्रिदोषघ्नो रसायनः । मैथुनाहारपानानां त्यागो नैवात्र विद्यते ॥ सर्वान्वातामयान्कुष्ठानर्शांसि ग्रहणीगदम् । प्रमेहं वातरक्तं च नाभिशूलं भगंदरम् ॥ उदावर्तं क्षयं गुल्ममपस्मारमुरोग्रहम् ॥ मंदाग्निश्वासकासांश्च नाशयेदरुचिं तथा ॥ रेतोदोषहरः पुंसां रजोदोषहरः स्त्रियाम् । पुंसामपत्यजनको वंध्यानां गर्भदस्तथा ॥ रास्नादिक्काथसंयुक्तो विविधं हंति मारुतम् ॥ काकोल्यादिशृता त्पित्तं कफमारग्वधादिना ॥ दार्वीशृतेन मेहांश्च गोमूत्रेणैव पां-

ङ्गुताम् । मेदोवृद्धिं च मधुना कुष्ठं निंबश्टतेन वा ॥ छिन्नाक्काथेन वातास्रं शोथं शूलं कणाश्रितात् । पाटलाक्काथसहितो विषं मूषकजं जयेत् ॥ त्रिफलाक्काथसहितो नेत्रार्तिं हंति दारुणाम् । पुनर्नवादेः क्काथेन हन्यात्सर्वोदराण्यपि ॥

अर्थ-सोंठ, पीपल, चव्य, पीपरामूल, चित्रक, भुनी हींग, अजमोद, सरसों, दोनों जीरे, रेणुक, इन्द्रयव, पाढ, वायविडंग, गजपीपल, कुटकी, अतीस, भारंगी, वच, मूर्वा, ये बीस औषध एक एक शाण लेवे. और सब औषधोंसे दूना त्रिफला लेवे. इन सबका चूर्ण करे तथा सब चूर्णके बराबर शुद्ध हुआ गूगल मिलाके सबको बारीक करके गुडके पाकके समान पतला करके पूर्वोक्त चूर्ण मिलायदे. फिर वंगभस्म, रौप्यभस्म, नागभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, मंडूरभस्म और रससिंदूर ये सात भस्म एक एक पल लेवे. सबको उस गूगलमें मिलाय देवे फिर सबको कूटके एक जीवकर गोला बनाय लेवे फिर उसमेंसे एक एक शाणकी गोली बनावे इनको घीके चिकने बरतनमें भरके रख देवे इसका योगराज गूगल ऐसे कहते हैं. इस गूगलके सेवन करनेसे त्रिदोष दूर होवे तथा यह रसायन है. इसपर मैथुन और खाने पीनेका निषेध नहीं है. विना पथ्यकेभी गुण करे है इससे सर्व प्रकारके वादीके रोग, कुष्ठ, बवासीर, संग्रहणी, प्रमेह, वातरक्त, नाभीका शूल, भगंदर, उदावर्त्तवायु, क्षयरोग, गोला, अपस्मार, उरोग्रह, मंदाग्नि, खांसी, श्वास और अरुचि ये रोग दूर हों यह योगराज गुगूल पुरुषोंकी धातुविकारोंको दूर करे स्त्रियोंके रजदोषको दूर करे पुरुषोंकी धातु बढायके पुत्र देता है. बांझ स्त्रियोंको गर्भ देय है रास्नादि काढेके साथ खाय तो अनेक प्रकारकी वादी दूर हो. काकोल्यादि काढेके साथ सेवन करे तो पित्तरोग दूर हो, आरग्वधादि काढेके साथ पांडुरोग दूर हो, शरीरमें मेद दुष्ट होकर शरीर बढनेसे सहतमें मिलायके देवे, कुष्ठरोगमें नींबके काढेके साथ देवे, रक्तवातपर गिलोयके काढेसे । शूल और सूजन इनपर पीपलके काढेसे, मूषेके विषपर पाढलके काढेमें देवे, नेत्ररोगपर त्रिफलाके काढेसे, पुनर्नवादि काढेके साथ संपूर्ण उदररोगपर सेवन करे इस प्रकार अनुपान जानना ॥

षडशीतिगुग्गुल ।

सैर्यकासविषा दारु व्याघ्रीयुक् चविका वृषः । कृष्णाब्दोग्राघनाभीरुवात्व्यालमिशिवल्लरी ॥ पथ्या शुंठी छिन्नरुहा शठ्यारग्वधगोक्षुरम् । विशाखा मोदकी तिक्तग्रंथिभार्ङ्गी विदारिका ॥

अलंबुषा हस्तिकर्णी बस्तगंधा विषाणिका । शिवाक्षं मुसली कौंती काकोली दीप्ययुग्मकम् ॥ त्रिवृद्दंती शिखी शृंगी कोकिलाक्षो दुरालभा । पंचमूलं महद्भीरतरुः कुष्ठं च जोंगकम् ॥ जातिपत्रीफलैलं च केसरं त्वक् किरातकम् । कुंकुमं देवकुसुमं विशाला निशिसैंधवम् ॥ मंदारमूलं कृमिजिद्धेमदुग्धा रविप्रिया । गजापिप्पल्यपामार्गवानरी नक्रमूलकम् ॥ एतैः समा रसा चाभा द्विगुणा तैः पुरः समः । सूतगंधकाहिंगूलं टंकणं लोहमभ्रकम् ॥ शुल्बं वंगं सूतभस्म नागं ताप्यमयोरजः । मीलितं पुरपादं च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ पचेच्चतुर्गुणे क्वाथे पुरं षट्कटुजे पुरा । तुर्यांशशोषिते क्वाथे पूते चात्र विनीक्षिपेत् ॥ चूर्णानि पुरमुख्यानि पाचयेन्मृदुवह्निना । यावद्घनतरं तावद्वटिकाः कारयेत्ततः ॥ स्वर्णप्रमाणाः सेव्यास्ता मधुसर्पिःसमन्विताः । सप्तधातुगतान्वातान् शिरास्नाय्वस्थिसंधिगान् ॥ सामान्निरामान्संसृष्टान् श्लेष्मजान् हंति केवलान् । यक्ष्माणमाग्निमांद्यं च ज्वरं धातुगतं तथा ॥ गुल्मजानूरुकटयूरादेरहृत्कुक्षिकक्षगान् । अंसमन्याहनुश्रोत्रभ्रूललाटाक्षिशंखगान् ॥ प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रं च शूलमाध्मानमश्मरिम् । किं पुनर्भेदकान्वातान्प्रत्यंगस्थान् जयत्यलम् ॥ गुग्गुलुः षडशीतिर्वै नाम्ना भोजेन कीर्तितः । क्षीयमाणेन शिष्येण प्रार्थितेन पुनः पुनः ॥ स एष राजयोगोऽयं न देयो यस्य कस्यचित् । वत्सरेणास्य योगेन षंढोऽपि प्रमदाप्रियः ॥ वाजीकरणमन्यच्च परं नास्माद्विशेषतः । गुणोऽस्य सेवनान्नित्यं यः स्यात्स स्याद्ब्रवीमि किम् ॥

अर्थ–सपेद पियावांसा, धमासा, अतीस, देवदारु, कटेरी, बडी कटेरी, चव्य, अडूसा, पीपल, नागरमोथा, वच, धनिया, शतावर, कंगही, सोंफ, देवदारु, हरड, सोंठ, गि-

लोध, कचूर, अमलतासका गूदा, गोखरू, पुनर्नवा, मोदकी, कुटकी, पीपरामूल, भारंगी, विदरीकंद, मुंडी, कासालू, अजमोद, काकडासिंगी, आंवला, मूसली, रेणुकबीज, काकोली, अजमायन, खुरासानी अजमायन, निसोथ, दंती, चित्रक, काकडासिंगी, तालमखाना, लाल धमासा, बडा पंचमूल, बेलतर, कूठ, काली अगर, जावित्री, जायफल, इलायची, नागकेशर, दालचीनी, चिरायता, केशर, लौंग, इंद्रायन, हलदी, सैंधानिमक, मंदारमूल, वायविडंग, चोक, पवाँड, गजपीपल, ओंगाकी जड, कौंचके बीज, कंजाकी जड, सब औषध समान भाग लेवे और सबके बराबर रास्ना, बबूरके बीज सबसे दूने और इन सबकी बराबर गूगल, पारा, गंधक, हिंगूल, सुहागा, लोहेकी भस्म, अभ्रकभस्म, ताम्र, वंग, रससिंदूर, शीशा, सुवर्णमाक्षिक, मंडूर इन सबकी भस्म गूगलकी चतुर्थांश इस प्रकार सबको एकत्र कर षट्कटूके काढेमें गूगल शोधकर उस काढेको जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इसमें ऊपरकी संपूर्ण औषधोंके चूर्णको डालके मंद २ अग्निपर पचन करे. जब गाढा हो जाय तब उतारके गोली बनाय लेवे. फिर इनको बलाबल विचारके सहत और घी इनके साथ देवे तो सप्तधातुगत वात, शिरा, स्नायु, अस्थि और संधि इनकी वायु, सामवात, निरामवात, सन्निपातजन्य वात, केवल स्नेहवात, क्षय, मंदाग्नि, धातुगत ज्वर, गोला, जानु, ऊरू, कमर, उर, हृदय, कूख, कंधा, मन्या, हनु, कान, भृकुटि, ललाट, नेत्र, कनपटी, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शूल, अफरा और पथरी इनको नाश करे. तथा यह भेद करनेवाली वातको जीते. तथा प्रत्यंग वातको जीते इसमें संशय नहीं है. यह षडशीति नामक गूगल भोजराजेने अपने शिष्य क्षीण होनेवालेकी प्रार्थनासे रचा है, यह राजयोगरूप औषध जिस किसीको नहीं देनी चाहिये। एक वर्षपर्यंत सेवन करे तो नपुंसक भी स्त्रियोंको प्रिय होय । इससे परे दूसरा प्रयोग वाजीकरण करता नहीं है । इस औषधके सेवन करनेसे जो गुण होते हैं उनको मैं क्या कहूं कहे नहीं जावे ॥

विश्वाद्यगुग्गुलु ।

विश्वैरंडशिफाशुंठीदारुकुष्ठं ससैंधवम् । रास्नामृतोद्भवं चूर्णं गुग्गुलुर्द्विगुणस्तथा ॥ एकैका गुटिका तस्य प्रत्यहं भक्षिता सती । पथ्याशिनोतिवेगेन हंति विभ्रममारुतम् ॥

अर्थ- सोंठ, अंडकी जड, सोंठ, देवदार, कूठ, सोंठ, रासना और गिलोय ये सब समान लेवे. तथा गूगल दूनी लेवे सबको एकत्र कर तोले २ की गोली बनावे। एक गोली नित्य भक्षण करे और पथ्य सेवन करे तो तत्काल विभ्रमसंज्ञक वातको दूर करे॥

दूसरा प्रकार ।

शुंठीकणा कणामूलं विडंगं दारु सैंधवम् रास्ना वह्निर्यवानी च मरिचोग्रभया समम् ॥ द्विगुणं गुग्गुलोश्चूर्णमाज्ययुक्तं निहंति तान् । वातं विषूचिकां गुल्मं शूलं कंपं च गृध्रसीम् ॥

अर्थ–सोंठ, पीपरामूल, वायविडंग, देवदार, सैंधानिमक, रासना, चीतेकी छाल, अजमायन, काली मिरच, वच और हरड ये समान भाग ले और सबसे दूनी गूगल ले सबको घीमें सानके अनुमानमाफिक सेवन करे तो वादी, विषूचिका (हैजा), गुल्म पांच प्रकारका शूल और गृध्रसी इनको दूर करे ॥

रास्नादिगुग्गुलु ।

रास्नामृतैरंडसुराह्वविश्वं तुल्येन गाढं पुरुणा विमर्द्य ।
खादेत्समीरी सशिरोगदी च नाडीव्रणी चापि भंगदरी च ॥

अर्थ–रास्ना, गिलोय, अंडकी जड, देवदारु और सोंठ समान भाग ले सबकी बराबर शुद्ध गूगल डालके खरल करे इसको वादीवाला, मस्तकरोगी, नासूर और भगंदर रोगी खाय तो आराम होवे ॥

दूसरी योगराजगुटी ।

नागरं पिप्पलीमूलं चव्यमूषणचित्रकम् । भृष्टहिंग्वाजमोदा च सर्षपा जीरकद्वयम् रेणुकेंद्रयवा पाठा विडंगं गजपिप्पली । कटुकातिविषा भार्ङ्गी वचा मूर्वा च पत्रकम् ॥ देवदारु वचा कुष्ठं रास्ना मुस्ता च सैंधवम् । एला त्रिकंटकः पथ्या धान्यकं च बिभीतकम् ॥ धात्री च त्वगुशीरं च यवक्षारस्तिलान्यपि । एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ यावंत्येतानि सर्वाणि तावद्देयोऽत्र गुग्गुलुः । संमर्द्य सर्पिषा पश्चात्सर्वं संमिश्रयेच्च तत् ॥ एकपिंडं ततः कृत्वा धारयेद्घृतभाजने । गुटिकाष्टंकमात्रास्तु खादेत्ताश्च यथोचिताः ॥ गुग्गुलुर्योगराजोऽयं महान् मुख्यो रसायनम् । मैथुनाहारपानानां नियमो नात्र विद्यते ॥ सर्वान् वातामयान् हन्यादामवातमपस्मृतिम् । वातरक्तं तथा कुष्ठं तथा दुष्टव्रणानपि ॥ अर्शांसि ग्रहणीरोगं प्लीह-

गुल्मोदराण्यपि । आनाहमग्निमांद्यं च श्वासं कासमरोचकम्॥ प्रमेहं नाभिशूलं च कृमिक्षयमुरोग्रहम् । शुक्रदोषमुदावर्तभगंदरविनाशनः ॥ आदौ शाणोन्मितं खादेत्ततः कर्षार्धमात्रकम् । ततः कर्षमिदं खादेद्गुग्गुलुं क्रमतो नरः ॥ दिनानां सप्तकं पूर्वं गुग्गुलुः शाणमावहेत् । द्वितीये कर्षमर्धं तु पूर्णकर्षं ततः परम् ॥ रास्नादिक्वाथसंयुक्तो सर्ववातामयान् हरेत् । कांकोल्यादिशतात्पित्तं कफमारग्वधादिना ॥ दार्वीशतेन मेहांश्च गोमूत्रेण च पांडुताम् मधुना मेदसो वृद्धिं कुष्ठं निंबशृतेन च ॥ छिन्नाक्काथेन वातास्रं शूलं मूलकजं शृतम् । पाटलाक्काथसहितो विषं मूषकसंभवम् ॥ त्रिफलाक्काथसंयुक्तो दारुणा नेत्रवेदना । पुनर्नवादिक्काथेन हांति सर्वोदराण्यपि ॥

अर्थ–सोंठ, पीपरामूल, चव्य, काली मिरच, चित्रक, भुनी हुई हींग, अजमोद, सरसों, सपेद जीरा, काला जीरा, रेणुक बीज, इन्द्र जौ, पाढ, वायंविडंग, गजपीपल, कुटकी, अतीस, भारंगी, वच, मूर्वा, पत्रज, देवदारु, वच, कूठ, रास्ना, नागरमोथा, सैंधानिमक, इलायची, गोखरू, हरड, धनिया, बहेडा, आंवले, दालचीनी, खस, जवाखार और तिल, ये सब समानभाग लेके बारीक चूर्ण करे और सबकी बराबर शोधा हुआ गूगल लेवे. सबको घी डालके कूट लेवे. सब एकजीव हो जावे तब एक चार २ मासेकी गोली बनायके घीके चिकने बासनमें भरके रख देवे. इसको यथोचित भक्षण करे. यह योगराजगूगल महान् मुख्य रसायन है. इसपर मैथुन करना, खट्टा, चरपरा खाने पीनेकी मनाही नहीं है. यह संपूर्ण वातके विकार, आमवात, अपस्मार, वातरक्त, कोढ, दुष्टव्रण, बवासीर, संग्रहणी, प्लीह, गोला, उदररोग, अफरा, मंदाग्नि, श्वास, खांसी, अरुचि, प्रमेह, नाभीशूल, कृमिरोग क्षय उरोग्रह, शुक्रके दोष, उदावर्त्त, और भगंदर, इनको नाश करे. प्रथम इसको ७ दिन चार २ मासे खाय फिर ७ दिन छः मासे फिर एक एक तोला सेवन करे । यह इसके खानेका क्रम है । इसको रास्नाके काढेसे खाय तो सर्व वातविकारोंको दूर करे कांकोल्यादि काढेके साथ सेवन करे तो पित्तरोगोंको, अमलतासके काढेसे कफके रोगोंको, दारुहलदीके काढेके साथ संपूर्ण प्रमेहोंको, गोमूत्र द्वारा पांडुरोगको, सहतके साथ मेदरोगको, नीमके काढेसे कोढको, गिलोयके काढेसे वातरक्तको, मूलीके काढेसे शूल रोगको, पाढलके काढेसे सेवन करे

तो मूषेका विष दूर होवे. त्रिफलके काढेके साथ पीवे तो दारुण नेत्रकी पीडाको शमन करे और पुनर्नवादि काढेके साथ सर्व उदरके विकारोंको नष्ट करे है ॥

रसोनसंधान ।

रसोनस्य तु तत्क्षुण्णं तदर्धं लुंचितास्तिलाः । पादे तु तक्रे गव्यस्य पृष्ठे द्रव्यैस्तु संक्षिपेत् ॥ त्रिकटु धान्यकं चव्यं चित्रको हस्तिपिप्पली । त्वगेला ग्रंथिकं पत्रं तालीसं च पलांशकम् ॥ शर्करायाः पलान्यष्टौ, पंचाजाज्याः पलानि च । कृष्णाजाज्याश्च चत्वारि मधूकस्य गुडस्य वा ॥ आर्द्रस्य च चत्वारि सर्पिषोष्टौ प्रकल्पयेत् । तिलतैलस्य तावंतः सूक्तस्यापि च विंशतिः ॥ सिद्धार्थकस्य चत्वारि राजिकायास्तथैव च । कर्षप्रमाणं दातव्य रामठं लवणानि च ॥ एकीकृत्य दृढे भांडे धान्यराशौ विनिःक्षिपेत् । द्वादशाहं समुद्धृत्य ततः खादेद्यथाबलम् ॥ सुरा सौवरिकं चैव मधुरं च पिबेदनु । जीर्णे यथेप्सितं भोज्यं दधिपिष्टविवर्जितम् ॥ एकमासप्रयोगेण सर्ववातान् व्यपोहति । अशीतिं वातजान् रोगान् चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥ विंशतिश्श्लेष्मजांश्चैव प्रमेहानां च विंशतिम् ॥ श्वयथौ योनिशूले च सर्वान्वातान् व्यपोहति ॥ च्युतसंधेश्च भग्नस्य संधानकरणं भवेत् । बलवर्णकरं हृद्यं वृष्यं बीजविवर्धनम् ॥

अर्थ–लहसनको छालके पीस लेवे फिर लहसनसे आधे धुले हुए तिल मिलावे और उसका चतुर्थांश गौकी छाछ मिलावे फिर इनमें सोंठ, मिरच, पीपल, धानिया, चव्य, चित्रक, गजपीपल, तज, इलायची, पीपरामूल, पत्रज और तालीसपत्र ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे, मिश्री ३२ तोले ले, जीरा २० तोले ले, काला जीरा, मुलहठी, गुड और अदरख प्रत्येक १६ तोले लेवे, घी ३२ तोले, तिलोंका तेल ३२ तोले, कांजी ४० तोले, सपेद सरसों १६ तोले, राई १६ तोले और हींग तथा सब निमक एक तोला डाले सबको एकत्र कर किसी चिकने बासनमें भरके धानकी राशिमें गाड देवे जब १२ दिन बीत जावें तब निकाल अग्निबलविचारके खानेको देय और इनके ऊपर मद्य अथवा कांजी अथवा मधुर रस पीवे जब यह पच जावे तब दही और पिठीके पदार्थोंको त्यागके जो इच्छा होवे सो खाय इस प्रकार एक महीने पर्यंत सेवन करनेसे

संपूर्ण वादीके रोग नष्ट होवें, तथा अस्सी प्रकारके वातरोग, चालीस प्रकारके पित्तरोग, और वीस प्रकारके कफरोग, बीस प्रकारकी प्रमेह, सूजन, योनिशूल और संपूर्ण वातों को नाश करे तथा छूटी हुई संधी, टूटी हुई हड्डी आदि इनको अच्छा करे बल वर्ण इनको उत्पन्न करे तथा हितकारक है तथा यह धातुओंको बढाता और वृष्य है ॥

भुजंगीगुटिका ।

एषा कर्षमिता वटी सुघटिता जीर्णे गुडे युक्तितो द्विघ्नं दीप्यतुषं पलद्वयमितं शुंठी तथा तेजनी । भक्ष्यैकानिलरोगिणा घृतयुता पथ्याशिना तत्वतो वातव्रातविनाशिनी सुमतिभिः ख्याता भुजंगी वटी ॥

अर्थ-अजमायनका फूल १६ तोले तथा सोंठ और तेजबल ८ तोले इनका चूर्ण करके उसकी पुराने गुडसे युक्तिके साथ १० मासेकी गोली बनावे यह वातरोगीको घीके साथ खानी चाहिये और पथ्यसे रहे तो यह वादीके समूहको नाश करे; इसको पंडितजन भुजंगीवटी कहते हैं ॥

दूसरा प्रकार ।

तेजोह्वाप्रस्थमेकं पयसि गजगुणे पाकयुक्त्या विपाच्य व्योषं पथ्या शताह्वा क्रिमिरिपुमनलं ग्रंथिकं चाजमोदाम् । उग्रा कुष्ठाश्वगंधौ सुरतरुममृतं पालिकानि प्रदद्यात्सर्वान्वातान्वटीयं घृतमधुसहिता नास्ति भावान्करोति ॥

अर्थ-तेजबल ६४ तोले और दूध ५१२ तोले दोनोंको मिलायके पाकके समान खोहा करे. उसमें सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, शतावर, वायविडंग, चित्रकं, पीपरामूल, अजमोद, वच, कूठ, असगंध, देवदार और घी ये प्रत्येक चार २ तोले डालके उसकी गोली बनावे इनको सहत और घी इनके साथ बलाबल विचारके देवे तो सर्व वातव्याधियोंका नाश करे ॥

निर्गुंड्यादिवटी ।

निर्गुंडी दीप्यकं वह्निर्हरिद्रा विश्वभेषजम् ।
तक्रकांजिकसंपक्वं वातघ्नं वह्निवर्धनम् ॥

अर्थ-निर्गुंडी, अजमायन, चित्रक, हलदी और सोंठ इनको छाछ और कांजीमें पचायके सेवन करे तो यह वातनाशक और अग्निवर्द्धक है ॥

कणादिगुटी।

कणामूलं कणा दारु विडंगं वह्निसैंधवम्। सपुष्पा ह्यजमोदा च मरीचं समचूर्णकम् ॥ गुडाचितस्य तस्याथ गुटिका एकविंशतिः। भक्षितास्तास्त्रिसप्ताहं मारुतं घ्नंति सर्वतः ॥

अर्थ—पीपरामूल, पीपल, देवदारु, वायविडंग, चित्रक सैंधानिमक, अजमायनका फूल, अजमोद और मिरच ये समान भाग लेवे, चूर्ण करके गुड मिलाय एकजीव करके २१ गोली कर लेवे, नित्यप्रति एक गोली भक्षण करे तो सब वातव्याधिको नाश करे ॥

अमरसुंदरवटी।

त्रिकटु त्रिफला चैव ग्रंथिका रेणुकानलम्। मृतलोहं चतुर्जातं पारदं गंधकं विषम् ॥ विडंगा कल्हकं मुस्ता सर्वेभ्यो द्विगुणो गुडः। चणकप्रमाणगुटिका नाम्ना अमरसुंदरी ॥ अपस्मारे सन्निपाते श्वासे कासे गुदामये। अशीतिवातरोगेषु उन्मादेषु विशेषतः ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, पीपरामूल, रेणुकबीज, चित्रक, लोहेकी भस्म, पत्रज, इलायची, दालचीनी नागकेशर पारा, गंधक सिंगियाविष, वायविडंग, अकरकरा और मोथा सब समान भाग ले और सबसे दूना गुड डाले फिर चनेके प्रमाण गोली बनाले यह अमरसुंदरी गुटिका अपस्मार, सन्निपात, श्वास, खांसी, गुदाके रोग, अस्सी प्रकारकी वादी और उन्मादरोग इन सबको दूर करे ॥

अजमोदादिवटी।

अजमोदा कणा वेल्लं शतपुष्पा सनागरम्। मारिचं सैंधवादेव भागैकं च पृथक् पृथक्॥ पंचभागा हरीतक्याः शुंठी च दशभागिका। वृद्धदारुर्दशांशः स्यात्षट्त्रिंशद्गुडभागिकाः॥ गुडपाकेर्वटीं कृत्वा मात्रा कर्षप्रमाणतः। संधिवाते प्रदेयं तदामवाते सुदारुणे ॥ उष्णोदकानुपानेन सर्ववातान्नियच्छति। आढ्यवाते हनुस्तंभे शिरोवातापतानके ॥ भ्रूशंखकर्णनासाक्षिजिह्वा-

स्तंभे च दारुणे । कलायखंजतापंगुसर्वांगैकांगमारुते ॥ अर्दिते पादहर्षे च पक्षाघाते प्रशस्यते ॥

अर्थ--अजमायन, पीपल, वायविडंग, साफ, नागरमोथा, मिरच और सैंधानिमक ये प्रत्येक एक एक भाग, हरड ५ भाग, सोंठ १० भाग, विधायरा १० भाग और भारंगी ३६ भाग इस प्रकार सब औषधी लेकर चूर्ण करके गुडके पाकमें मिलायके गोली बनाय लेवे इस गोलीको गरम जलके साथ सेवन करे तो संधिवात, आमवात, संपूर्णवात, आढ्यवात, हनुस्तंभ शिरोवात, अपतानक वात तथा भृकुटि, कनपटी, कान, नाक, नेत्र और जीभ इनका स्तंभ, कलायखंज, पंगुवात, सर्वांगवात, एकांगवात, अर्दितवात, पादहर्ष और पक्षाघात इनके दूर करनेमें श्रेष्ठ है ॥

लघुराजमृगांक ।

घृततीक्ष्णयुतः सुरसास्वरसो लघुराजमृगांक इति प्रथितः ।
अपहंत्यनिलान् सबलान् बहलान्निजभक्तमलानिव चक्रधरः ॥

अर्थ-काली मिरचोंका चूर्ण, घी और तुलसीका रस इसको लघुराज मृगांक कहते हैं, यह संपूर्ण वातरोगोंको नाश करे जैसे भगवान् अपने भक्तके पातक दूर करे इसी प्रकार यह रोगोंको नाश करे ॥

चूर्णाः कषाया गुटिका घृतानि तैलानि भाग्येन वियोजितानाम् ।
विलासिनां वातविनाशनाय विलासिनीनां परिरंभणानि ॥

अर्थ-चूर्ण, क्वाथ, गोली, घृत और तेल इनकी योजना करनेसे न बन सके तो यह विलासी पुरुषोंके वातव्याधि नाश करनेको सुंदररूपवती स्त्रियोंका आलिंगन करना ही ठीक है ॥

दूसरा एरंडपाक ।

निस्तुषं बीजमेरंडं पयस्यष्टगुणे पचेत् । तस्मिन् पयसि संशोष्य तद्बीजं परिपेषयेत् ॥ पश्चाद्धृतेन संयुक्तं संपचेन्मृदुवह्निना । पटुत्रिकं लवंगं च एलात्वक् पत्रकेसरम् ॥ अश्वगंधा शिफा रास्ना षड्ग्रंथा रेणुका वरी । लोहं पुनर्नवा श्यामा उशीरं जातिपत्रकम् ॥ जातीफलमभ्रकं च सूक्ष्मचूर्णं तु कारयेत् । शीतीभूतेवलेहोऽयं तस्मिन् खंडसमोदयम् ॥ वातारिपाकनामाऽयं प्रातरुत्थाय भक्षयेत् । अशीतिवातरोगांश्च

चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥ उदराणि तथा चाष्टौ स्वयं रोगान्निहंति च । विंशतिं मेहजान् रोगान् षष्टिनाडीव्रणानि च ॥ हंत्यष्टादश कुष्ठानि क्षयरोगांश्च सप्त च । पंचैव पांडुरोगांश्च पंच श्वासान् प्रणाशयेत् ॥ चतुरो ग्रहणीरोगान् दृष्टिरोगं गल-ग्रहम् । अनेकवातरोगांश्च तान् सर्वांश्च विनाशयेत् ॥ शुक्र-पाकमिदं ख्यातं सर्वरोगनिवारकम् ॥

अर्थ–छीले हुए अंडीके बीजोंको अठगुने दूधमें औटावे. जब दूधका खोहा हो जावे तब उतारके उन बीजोंको पीस डाले. फिर इनको घीमें डालके मधुरी अग्निसे पचावे और सोंठ, मिरच, पीपल, लौंग, इलायची, दालचीनी, पत्रज, नागकेशर, असगंध, सस्ना, षड्गंधा, रेणुकबीज, सतावर, लोहभस्म, पुनर्नवा, हरड, खस, जावित्री, जायफल, अभ्रककी भस्म इन सबको मिलायके बारीक चूर्ण कर उस पाकमें डाल देवे फिर अग्निपरसे उतारले जब शीतल हो जावे तब उस खोहेको अलग धरले और खोहेकी बराबर मिश्रीकी चासनी कर इसमें पूर्वोक्त खोहा मिलायके पाक बनाय लेवे. यह वातारिपाक प्रातःकाल उठके नित्य भक्षण करे तो अस्सी प्रकारके वातरोग, चालीस प्रकारके पित्तरोग, आठ प्रकारके उदर, बीस प्रकारकी प्रमेह, साठ प्रकारके नाडी व्रण, अठारह प्रकारके कुष्ठ, सात प्रकारके क्षयरोग, पांच प्रकारके पांडुरोग और श्वासरोग, चार प्रकारकी संग्रहणी, दृष्टिरोग, गलग्रह अनेक प्रकारके वातरोग इन सबको यह दूर करे. इसको शुक्रपाक कहते हैं ॥

एरंडपाक ।

वातारिबीजं प्रस्थं तु सुपक्वं निस्तुषीकृतम् । क्षीरद्रोणार्द्धसंयुक्तं भिषग्मदाग्निना पचेत् ॥ घृतप्रस्थार्द्धयुक्तं पक्वं खंडप्रस्थद्वयं क्षिपेत् । त्र्यूषणं सचतुर्जातं ग्रंथिकं वह्निचव्यकम् ॥ शत्रा मिशी शठी बिल्वदीप्यौ जीरे निशायुगम् । अश्वगंधा बला पाठा हपुषा वेल्लपुष्करम् ॥ श्वदंष्ट्रारुग्वरा दारुवेल्लर्या वालुकावरी । एतानि पिचुमात्राणि चूर्णितानि विनिक्षिपेत् ॥ वातव्याधिं च शूलं च शोफं वृद्धिं तथोदरम् । आनाहं बस्तिरुग्गुल्ममामवातं कटिग्रहम् ॥ ऊरुग्रहं हनुस्तंभं नाशयेदपि योगतः ॥

अर्थ-६४ तोले अंडीके बीज लेकर छील लेवे फिर उनको ५१२ तोले दूधमें डालके मंदाग्निसे पचन करे फिर इसमें ३२ तोले घी डालके भून लेवे और १२८ तोले मिश्रीकी चासनी करके उस खोहेमें मिलाय देवे तथा सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, चित्रक, चव्य, सोंठ, कचूर बेलगिरी, अजमायन, जीरा, काला जीरा, हलदी, दारुहलदी, असगंध. खिरेटी, पाढ, हाउबेर, वायविडंग, पुहकरमूल, गोखरू, कूठ, त्रिफला, देवदारु, विधायरा और सतावर ये सब एक एक तोला लेवे. सबका चूर्ण करके उसी पाकमें डाल देवे. इस पाकके सेवन करनेसे वातव्याधि, शूल, सूजन, अंत्रवृद्धि, उदरविकार, अफरा, बास्तिशूल, गोला, आमवात, कमरकी पीडा, ऊरुग्रह और हनुस्तंभ इन सबको यह नष्ट करे ॥

रसोनपाक ।

तेषूग्रगंधनाशाय रात्रौ तक्रे विनिःक्षिपेत् । प्रातर्निष्कास्य तत्पिष्ट्वा ततो दुग्धे विपाचयेत् ॥ निस्तुषं लशुनं प्रस्थं क्षीरं प्रस्थचतुष्टयम् । विपाच्य सांद्रीभूतेऽस्मिन् सर्पिषः कुडवं क्षिपेत् ॥ रास्ना वटी वृषा छिन्ना शठी विश्वा सुरद्रुमम् । वृद्धदारुकदीप्याग्निशताह्वा सपुनर्नवा ॥ पलत्रयं पिप्पली च कृमिघ्नः कर्षसम्मितम् । विचूर्ण्य शीते मधुनः कुडवं तत्र योजयेत् ॥ सितया भक्षयेन्मात्रामाढ्यवाते हनुग्रहे । आक्षेपकादिभग्ने च कट्यूरुस्तंभहृद्ग्रहे ॥ सर्वांगे संधिभंगे च वातजाशीतिरोगिणः । पथ्यो लशुनपाकोऽयं वर्णायुःपुष्टिकारकः ॥

अर्थ-लहसनको छील टुकडे करे उनकी गंध दूर करनेको रात्रिमें छाछमें भिगोय देवे प्रातःकाल निकालके स्वच्छ जलसे धोयके पीस डाले. फिर उसको गौके घीमें तल लेवे इस प्रकार भूनी हुई लहसन ६४ तोले होवे तो दूध २५६ तोलेमें डालके औटावे जब गाढा हो जावे तब १६ तोले घी और रास्ना, शतावर, अडूसा, गिलोय, कचूर, सोंठ, देवदारु, विधायरा, अजमायन, चीतेकी छाल, शतावर, पुनर्नवा, हरड, बहेडा, आंवला, पीपल और वायविडंग ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे. सबका चूर्ण करके उसमें मिलाय देवे. तथा शीतल होने पर १६ तोले सहत डाले. फिर इसको थोडी मिश्रीके संग भक्षण करे तो आढ्यवात, हनुग्रह, आक्षेपक, भग्नवात, कटिवात, ऊरुस्तंभ, हृदयरोग, सर्वांगवात, संधिभंगवात और अस्सी प्रकारकी वात इन सबको नष्ट करे वह पथ्यरूप लहसनपाक वर्ण, आयुष्य और पुष्टि इनको करे है ॥

कुबेरपाक ।

कुबेरं प्रस्थनीरे च क्षिप्त्वा रात्रौ चतुर्गुणम् । क्षीरे प्रातः पचेत्सम्यग्घृतेन मृदुवह्निना ॥ शीतं कृत्वा सुनिष्पन्नं मध्ये मधुनि योजयेत् । चातुर्जातं त्रिकटुकं जातिपत्रफलं तथा ॥ देवपुष्पं विडंगं च मिशी जीरं घनं बला । निशाद्वयं तथा लोहं शुल्बं वंगं पलार्धकम् ॥ प्रत्येकं चूर्णितं क्षिप्त्वा भक्षयेच्च पलं बुधः । सर्वान्वातमयान्हंति अग्निमांद्यं बलक्षयम् ॥ प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रं च अश्मरीगुल्मपांडुनुत् । पीनसं ग्रहणीदोषमतीसारमरोचकम् ॥ मधुपक्वः कुबेरोऽयं भक्षयेन्नितरां बुधः । कामवृद्धिकरस्तस्य धातुवृद्धिश्च जायते ॥ कांतिपुष्टिकरो बल्यः कुबेराख्यो रसोत्तमः ॥

अर्थ—लताकरंजको रात्रिके समय जलमें भिगोय देवे. प्रातःकाल उनको फोडके भीतरकी मिंगी निकाल लेवे. उनसे चौगुना दूध लेके और घी डालके धीरे २ मंद २ अग्निसे पचावे. जब शीतल हो जावे तब उसमें शहत, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, सोंठ, मिरच, पीपर, जावित्री, जायफल, लौंग वायविडंग, सौंफ, जीरा, नागरमोथा, खिरेंटी, हलदी दारुहलदी, लोहेकी भस्म, तामेकी भस्म और वंगभस्म ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे सबको उसी पाकमें डालके पाक तैयार कर लेवे इसमेंसे चार तोले नित्य भक्षण करे तो सम्पूर्ण वादीके रोग, मंदाग्नि, बलक्षय, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, गोला, पांडुरोग, पीनस, संग्रहणी, अतिसार और अरुचि इनको नाश करे यह मधुपक्व कुबेरपाक भक्षण करनेसे कामवृद्धि, धातुवृद्धि, कांति, पुष्टि और बल इनको करे है ॥

लशुनपाक ।

निस्तुषं लशुनं प्रस्थं क्षीरकुंभे पचेत्सुधीः । घृतं पलचतुष्कं च पचेच्च मृदुवह्निना ॥ सुनिष्पन्नो मधुनिभो खंडं प्रस्थद्वयं क्षिपेत् । त्र्यूषणं च चतुर्जातं ग्रंथिकं चव्याचित्रकम् ॥ विडंगं रजनीयुग्मं हपुषा वृद्धदारुकम् । पौष्करं दीप्यपुष्पं च सुरदारु पुनर्नवा ॥ श्वदंष्ट्रा निंबरास्ना च शतपुष्पा वरी सठी ।

अश्वगंधात्मगुप्ता च द्रव्याणि पिचुमात्रया ॥ शुक्रे यथाबलं सेव्यं रसोनाख्यं रसायनम् । सर्वान्वातामयान् शूलमपस्मार-मुरःक्षतम् ॥ गुल्मोदरवमिप्लीहवर्ध्मवृद्धिकृमीन् जयेत् । विबं-धानाहशोफांश्च वह्निमांद्यं बलक्षयम् ॥ हिक्कां श्वासं च कासांश्च अपतंत्रकमेव च । धनुर्वातं तथा यामं पक्षघातापतानकम् ॥ अर्दिताक्षेपकं कुब्जं हनुग्रहशिरोग्रहम् । विश्वाची गृध्रसी खल्ली पंगुवातं च संधिजम् ॥ बाधिर्यं सर्वशूलं च नाशयेदतिवेगतः । वातव्याधिगजेंद्रस्य केसरीव कृतः शुभः । कफव्याधिप्रशमनो बलपुष्टिकरः स्मृतः ॥

अर्थ-उत्तम प्रकारसे छीली और कतरी हुई लहसन ६४ तोलेको १०२४ तोले दूधमें १६ तोले घी डालके मंद २ अग्निपर पचावे जब इसका उत्तम पाक हो जावे अर्थात् लाल रंग हो जावे तथा १२८ तोले मिश्री मिलावे और सोंठ, मिरच, पीपल, दाल-चीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, वायविडंग, हलदी, दारु-हलदी, हाउबेर, विधायरा, पुहकरमूल; अजमायन, लौंग, देवदारु, पुनर्नवा, गोखरू, नीम, रास्ना, सौंफ, शतावर, कचूर, असगंध कौंछके बीज ये प्रत्येक तोले २ ले चूर्ण करके उसमें डाल पाक सिद्ध करे. यह रसोनाख्य पाक अग्नि और बलको देखकर सेवन करे तो संपूर्ण वातरोग, शूल, अपस्मार, उरक्षत, गोला, उदर, वमन, प्लीह, बद, अंडवृद्धि, कृमिरोग, विबंध, अफरा, सूजन, मंदाग्नि, बलक्षय, हिचकी, श्वास, खांसी, अपतंत्रकवात, धनुर्वात, अन्तरायाम, पक्षवात, अपतानक वायु, अर्दित वायु, आक्षेपक वायु, कुब्जवात, हनुग्रह, शिरोग्रह, विश्वाची, गृध्रसी, खल्लीवात, पंगुवात, संधिवात, बधिरत्व और संपूर्ण शूल इनको बहुत जल्दी नाश करे यह लहसन पाक वातव्याधि-रूप हाथीको सिंहके समान नाश करे है और कफ व्याधिको शांत करे तथा बल और पुष्टि इनको करे है ॥

लेप ।

प्रच्छित्त्वा च क्षुरेणांगं केवलानिलपीडितः । तत्र प्रदेहं दद्याच्च पिष्ट्वा गुंजाफलैः कृतम् ॥ तेनापबाहुजा पीडा विश्वाची गृ-ध्रसी तथा । अन्यापि वातजाः पीडाः प्रशमं यांति वेगतः ॥

अर्थ–जिस जगे वादिका उपद्रव होता होय उस जगेपर छुरेसे पछना लगायके उसपर घूंघचीनको पीसके उसका लेप करे तो अपबाहुक, विश्वाची, गृध्रसी और अन्य वातसबंधी रोग तत्काल शांत होवे ॥

मर्दन व नस्य ।

यवानीचूर्णसंमिश्रः शृंगवेररसस्तनौ ।
मर्दनान्नस्यतो हंति कुपितं मारुतं द्रुतम् ॥

अर्थ–अदरखके रसमें अजमायनका चूर्ण मिलायके देहमें मालिस करे और नास देवे तो कुपितवातको तत्काल नष्ट करे ॥

स्वेदविधि ।

कार्पासास्थिकुलत्थकातिलयवैश्चैरंडमाषातसीवर्षाभूशणबीजकांजिकयुतैरेकीकृतैर्वा पृथक् । स्वेदः स्यादतिकूर्परोदरहनुस्फिक्पाणिपादांगुलीगुल्फस्तंभकटीरुजो विजयते सामाः समीरोद्भवाः॥

अर्थ–बिनोले, कुलथी, तिल, जौ, अंड, उडद, अलसी, पुनर्नवा और सनके बीज इनको कांजीमें पीसके अथवा दूसरे योगसे पसीने निकाले तो कूर्पर (पहुँचेके ऊपरका भाग), पेट, हनु, नितंब, हाथ, पैर इनकी उंगली और गुल्फका स्तंभ, कटिशूल और आमाश्रित वायु इनको नाश करे ॥

पेंड बंधाना ।

रास्ना शताह्वा सुरदारु कुष्ठं माषार्द्रकं तैलवचाकुलत्थाः।
एतैः प्रदेहोनिलरोगिणां हितः स्नेहैश्चतुर्भिर्दशमूलयुक्तैः ॥

अर्थ– रास्ना, शतावर, देवदारु, कूठ, उडद, अदरख,, तैल वच, कुलथी, और दशमूल इनको पीस गरम करके गाढा लेप करे तो वातरोगीको हितकारी होय ॥

स्वेद व लेप ।

उष्णोष्णमत्स्यादिकवेसवारैः स्वेदस्तथा वातविनाशनः स्यात् ।
फणिज्जकोत्थेन रसेन वातं ग्रस्तं प्रदेशं परिलेपयेत्तु ॥

अर्थ–गरम २ मछली और वेसवार इनको सेंककर मनुष्यकी देहसे पसीने निकाले तो वादीको नाश करे. अथवा फणिज्जकके रससे वातयुक्त स्थानपर लेप करे तो वादी जाय ॥

लेप व स्वेद।

सारं नवं सैंधवकृष्णबोलं विषं समुद्रस्य फलानि कुष्ठम्। जेपालमज्जा त्वहिजो बला च जंबीरनीरेण विमर्दनीयम्॥ संस्वेद्य तल्लेपनमात्रकेण अशीतिवातान् सहजान्निहंति॥

अर्थ-नौसदर, सैंधानिमक, काला बोल, विष, समुद्रफल, कूठ, जमालगोटेकी मींगी, अफीम और खिरेटीकी जड इनके चूर्णको जंभीरी नींबूके रसमें खरलकर गरम करके उसका लेप करे तो अस्सी प्रकारकी वादीको सहजमें ही नाश करे॥

शतपुष्पादिलेप।

शतपुष्पसुरद्रुदिनेशपयो गदरामठसिंधुभवं हराति।
अपि लेपनतोऽस्थिगतं मरुतं कटिसंधिभवं त्रिदिनात्सततम्॥

अर्थ-सौंफ, देवदारु, कूठ और सैंधा निमक इनके चूर्णको आकके दूधमें भिगोके लेप करे तो आस्थिगत वात, कटिवात और संधिवात इनको तीन दिनमें नाश करे॥

लेप।

सुरतरुरामठशुंठीशतपुष्पासैंधववचार्कपयसा।
अस्थिगतानपि वातान् निहंति चैकेन लेपेन॥

अर्थ-देवदारु, हींग, सोंफ सोंठ सैंधा निमक और वच इनके चूर्णको आकके दूधसे पीसके लेप करे तो अस्थिगत वादीको नाश करे॥

वातहा पोटली।

पुन्नागैरंडनिंबैर्बकुलधवनटं नारिकेलैः करंजैः कार्पासैः शिग्रुडोलाफलसुनिषणकैः सर्षपाकोलबीजैः।रास्नाकुष्ठैः कुलित्थैस्तिलरशुनवचाहिंगुसिद्धार्थविश्वैः सर्वैः स्नेहैः कृतं तत्सकलपटुयुतैः पोटली वातभंजी॥

अर्थ-पुंनाग, अंडकी जड, नीमकी छाल, मौलसिरी, धौर और अशोक इनकी छाल, नारियल, कंजा, बिनौले, सहजनेकी छाल, दोलाफल, चौपतिया, सरसों, अंकोलफल, रास्ना, कूठ, कुलथी, तिल, लहसन, वच, हींग, सपेद सरसों और सोंठ इन सबका चूर्ण कर इनमें निमक डालके घी अथवा तेलमें मिलायके उसकी पोटली बांधके देवे तो यह वादीको नष्ट करे॥

महाशाल्वणयोग ।

कुलित्थमाषगोधूमैरतसीतिलसर्षपैः । शतपुष्पादेवदारुशेफालीस्थूलजीरकैः ॥ एरंडबिल्वमूलैश्च रास्नामूलैश्च शिग्रुभिः । मिशीकृष्णाकुठेरैस्तु लवणैरम्लसंयुतैः ॥ प्रसारण्यश्वगंधाभ्यां बलाभिर्दशमूलकैः । गुडूचीवानरीबीजैर्यथालाभं समाहृतैः ॥ क्षुण्णैः स्विन्नैश्च वस्त्रेण बद्धैः संस्वेदयेन्नरम् । महाशाल्वणसंज्ञोऽयं योगः सर्वानिलार्तिजित् ॥

अर्थ–कुलथी, उडद, गेहूं, अलसी, तिल, सरसों, सोंफ, देवदारु, निर्गुंडी, कलौंजी, अंडकी जड, बेलकी जड, रास्नाकी जड, सहजना, जटामांसी, पीपल, कुठेर, सैंधानिमक, समुद्रलवण, बिडनिमक, संचरनिमक, अमलवेत, प्रसारणी, असगंध, खिरेटी, कंगही, गंगेरन, दशमूल, गिलोय और कौंचके बीज इनमेंसे जो जो वस्तु मिले उनको लेकर कूटकर जलमें औटावे. फिर इनकी पोटली बांधके गरम २ सेंके इसको महाशाल्वण योग कहते हैं. यह संपूर्ण वातपीडानाशक है ॥

कढी ।

प्रियंगु पिप्पलीमूलं चंदनं चव्यदीपकम् । वरालं चंपकं कुष्ठं मंजिष्ठामिशिसर्षपाः ॥ निर्गुंडी दीप्यकं वह्निर्हरिद्रा विश्वभेषजम् । तक्रकांजिकसंपक्कं वातघ्नं वह्निवर्धनम् ॥

अर्थ–फूलप्रियंगू, पीपरामूल, चंदन, चव्य, चित्रक, लौंग, चंपा, कूठ, मंजीठ, सोंफ, सरसों, निर्गुंडी, अजमायन, नींबू, हलदी, सोंठ, छांछ और कांजी इनमें ऊपर लिखे पदार्थोंको डालके औटावे तो यह कढी वातनाशक तथा वह्निदीपक है ॥

स्वेदलेपविधि ।

एरंडार्ककरंजमोरटबलातर्कारिसोमस्नुहीनिर्गुंडीतलपोटाशिग्रुलवणास्फोताश्वगंधादिजैः । पत्रैः कांजिकमूत्रचुक्रसहितैः स्विन्नैर्घटस्थैः कृतः स्वेदः क्रुद्धसमीरणार्तवपुषां सद्यः सुखोत्पादकः ॥

अर्थ–अंड, आक, कंजा, मूर्वा, खिरेटी, अरनी, लालचंदन, थूहर, निर्गुंडी, ताड, नरसल, सहजना, चूका, सपेद अपराजिता और असगंध इन औषधोंके पत्ते ले कांजी, गोमूत्र, चूका ये एकत्र करके पीस उन पत्तोंपर लेप करे उनको एक गगरेमें भरके

चूल्हेपर रखके अग्नि देवे जब गरम हो जावे तब उन पत्तोंसे सेंक करे तो वात कोप शांत होकर रोगीको तत्काल सुख होय ॥

लेप।

निर्गुंड्या चोपनाहं च सकरंजैः सपित्तलैः ।
भेषजैः सेकलेपादि अभिषेकादिकं चरेत् ॥

अर्थ-निर्गुंडीका लेप करे अथवा करंज और पित्तकर्त्ता औषध इनसे सेचन, लेप और स्नान इत्यादिक उपचार करे ॥

दूसरा रसोनकल्क वातरोगके ऊपर।

पक्वकंदरसोनस्य लिका निस्तुषिका कृता। पाटयित्वा च मध्यस्थं दूरीकुर्यात्तदंकुरम् ॥ तदुग्रगंधनाशाय रात्रौ तक्रे विनिःक्षिपेत्। अपनीय च तन्मध्याच्छिलायां पेषयेत्ततः ॥ तन्मध्ये पंचमांशेन चूर्णमेषां विनिःक्षिपेत्। सौवर्चलं यवानी च भर्जितं हिंगु सैंधवम् ॥ कटुत्रिकं जीरकं च समभागानि चूर्णयेत्। एकीकृत्य ततः सर्वं कल्कं कर्षप्रमाणतः ॥ खादेदग्निबलापेक्षी ऋतुदोषाद्यपेक्षया। अनुपानं ततः कुर्यादेरंडसृतमन्वहम् ॥ सर्वांगैकांगजं वातमर्दितं चापतंत्रकम्। अपस्मारगदोन्मादमूरुस्तंभं च गृध्रसीम् ॥ उरःपृष्ठकटीपार्श्वकुक्षिपीडां कृमीन् जयेत्। अजीर्णमातपं रोषमतिनीरं पयो गुडम् ॥ रसोनमश्नन्पुरुषस्त्यजेदेतन्निरंतरम्। मद्यं मांसं तथाम्लं च रसं सेवेत नित्यशः ॥

अर्थ-उत्तम पकी हुई लहसनके ऊपरका छिलका दूर कर और उसको चीरके भीतरके अंकुरोंको निकाल डाले फिर उस लहसनकी वास निकालनेको रात्रिको छाछमें भिगो देवे. प्रातःकाल उसको निकालके सिलपर बारीक पीस डाले इस प्रकार कल्क करके फिर संचर निमक, अजमोद, भूनी हींग, सैंधा निमक, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा इन आठ औषधोंका चूर्ण उस लहसनके कल्कका पांचवां हिस्सा लेकर उस कल्कमें मिलावे. सबको एकत्र करके फिर अंडकी जडके काढेमें इस कल्कको एक तोला मिलायके पीवे. तथा अपनी शक्ति और ऋतु कौनसी है यह देखके जैसा अपनेको हित होवे उसी प्रकार पीवे तो सर्वांगवायु, तथा एकांगवायु, मुखका टेढा

होना, ऐसी अर्दितवायु और धनुर्वायु, अपस्मार और उन्मादरोग तथा ऊरुस्तंभवायु और गृध्रसी वायु तथा उर, पीठ, कमर और कूख इनका शूल तथा कृमिरोग ये दूर हों. लहसन खानेवालेको अजीर्ण, धूप, क्रोध, अत्यन्त जलका पीना, दूध, गुड ये त्याग देने चाहिये । और मद्य, मांस तथा खट्टे पदार्थ सदा सेवन करने चाहिये ॥

रसोनकल्क वायु वा विषमज्वर ऊपर ।

शुद्धकल्को रसोनस्य तिलतैलेन मिश्रितः ।
वातरोगान् जयेत्तीव्रान् विषमज्वरनाशनः ॥

अर्थ--लहसनका कल्क करके उसमें तिलका तेल डालके पीवे तो दारुण वादीके रोग और विषमज्वर ये दूर होवें ॥

चौथा लहसनकल्क ।

पिष्ट्वा तु सूक्ष्मं लशुनं घृतेन विलिह्य हन्यात्पवनोत्थरोगान् ।
तथेंद्रबीजाग्निमहौषधानां चूर्णं हरेद्वातभवान् विकारान् ॥

अर्थ-लहसनको पीसके घीके साथ खाय अथवा इन्द्रजौ, चित्रक और सोंठ इनका चूर्ण घीके साथ खाय तो संपूर्ण वातके विकारोंको नाश करे ॥

स्वच्छंदभैरवरस ।

शुद्धसूतं मृतं लोहं ताप्यं गंधकतालकम् । पथ्याग्निमंथनिर्गुंडीत्र्यूषणं टंकणं विषम् ॥ तुल्यांशं मर्दयेत्खल्वे दिनं निर्गुंडिकाद्रवैः । मुंडीद्रावैर्दिनैकं तु द्विगुंजं वटकीकृतम् ॥ भक्षयेद्वातरोगार्तो नाम्ना स्वच्छंदभैरवः । रास्नामृतादेवदारुशुंठीवातारिजं शृतम् ॥ सगुग्गुलुं पिबेत्कोष्णमनुपानं सुखावहम् ॥

अर्थ-शुद्ध पारा, लोहभस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, गंधक, हरताल, छोटी हरड, अंडकी जड, निर्गुंडी, सोंठ, मिरच, पीपल, सुहागा, सिंगिया विष ये सब समान भाग लेवे सबको १ दिन निर्गुंडीके रसमें खरल करके फिर १ दिन गोरखमुंडीके रसमें खरल करके दो रत्तीकी गोली बनावे. यह स्वच्छन्दभैरवरस है. यह भैरवरस रास्ना, गिलोय, देवदारु, सोंठ और अंडकी जड इन पांच औषधोंके काढेमें गूगल डालके पीवे तौ संपूर्ण वादीके रोग दूर हों ॥

समीरपन्नग ।

अभ्रगंधविषव्योषरसटंकान् समांशकान् । भावयेत्सप्तधा भृंगर-

सेन स्यात्समीरहा ॥ आर्द्रद्रवेण वल्ली वा खंडव्योषेण योजितः ।
महावातान् जयत्याशु नासाध्मातः सुसंज्ञकृत् ॥

अर्थ-अभ्रकभस्म, गंधक, सिंगियाविष, सोंठ, मिरच, पीपर, पारा और सुहागा ये सब समान भाग लेकर खरलमें डालके भांगरेके रसकी सात भावना देवे. तो यह वातनाशक रस सिद्ध होय इसको अदरखके रससे अथवा मिश्री और त्रिकुटाके चूर्णसे एक एक वल्ल खाय तो घोर वादीको एक क्षणमात्रमें जीत लेवे. नास देनेसे संज्ञाकारक है॥

वातविध्वंसन ।

रसं गंधकं नागवंगं च लोहं तथा ताम्रजं व्योम निश्चंद्रिकं च ।
कणा टंकणं त्र्यूषणं नागरं वै पृथक् भागमेकं विमर्द्यैकयामम्॥
ततो वत्सनाभं चतुःसार्धभागं दृढं मर्दयेद्भावना व्योषजास्त्रिः ।
वराचित्रकैर्मार्कवैः कुष्ठजास्त्रिस्त्रिभिर्भावयेन्निर्गुंडीभानुदुग्धैः ॥
महाधात्रिजैश्चार्द्रकैर्निंबुनीरैः समं भावयेद्वातविध्वंसनो यत् । स-
मीरे च शूले महाश्लेष्मरोगे ग्रहण्यां तथा सन्निपाते च मौढये ॥
स्त्रियाः सूतिकावातरोगेषु दद्यान्निषेवेत गुंजाद्वयं सूतमेनम् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, शीशेकी भस्म, वंगभस्म, लोहभस्म, तामेकी भस्म, निश्चंद्र अभ्रककी भस्म, पीपल, सुहागा, सोंठ, मिरच, पीपल और सोंठ ये प्रत्येक एक एक भाग ले एक प्रहर खरल करके इसमें सिंगियाविष ४॥ भाग मिलायके फिर अधिक खरल करे. पश्चात् इसमें त्रिकुटा, त्रिफला, चित्रक और भांगरा तथा कूठ इन प्रत्येकके काढेकी तीन २ भावना देवे और निर्गुंडीके रसकी तीन, आकके दूधकी तीन, बडे आंवले, अदरख और नींबू इनके रसकी पृथक् २ भावना देवे तो यह वातविध्वंसरस बने यह दो रत्तीके प्रमाण वादी, शूल, कफरोग, संग्रहणी, संनिपात, मौढचवात और प्रसूतरोग इनपर देवे ॥

वातराक्षस ।

मृतं सूतं तथा गंधं कांतं चाभ्रकमेव च । ताम्रभस्म कृतं सम्यङ्
मर्दयित्वा समांशकम्॥पुनर्नवा गुडूच्याग्निसुरसा त्र्यूषणं तथा ।
एतेषां स्वरसेनैव भावयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥ दत्त्वा लघुपुटं सम्यक्
स्वांगशीतं समुद्धरेत् । वातराक्षसनामायं वातरोगे प्रयोजयेत्॥

तत्तद्रोगानुपानेन द्विगुंजामात्रसेवनात् । ऊरुस्तंभं वातरक्तं गात्रभंगं तथैव च ॥ आमवातं धनुर्वातं वेदनावातमेव च । पक्षाघातं कंपवातं सर्वसंधिगतं तथा ॥ सुप्तवातं वातशूलमुन्मादं च विनाशयेत् । तत्तद्रोगानुपानेन वाताशीतिविनाशनः ॥

अर्थ–पारेकी भस्म, गंधक, कांतभस्म, अभ्रकभस्म और ताम्रभस्म ये समान भाग लेकर एकत्र कर खरल करे फिर पुनर्नवा, गिलोय, चित्रक, तुलसी, त्रिकुटा इनके स्वरसमें तीन दिन भावना पृथक् २ देवे फिर लघुपुट देवे जब शीतल हो जावे तब निकाल लेय. इसे वातराक्षस रस कहते हैं इसको वातरोगपर देवे पृथक् रोगके अनुपानके साथ दो रत्ती देवे तो ऊरुस्तंभ, वातरक्त, गात्रभंग, आमवात, धनुर्वात, वेदनावात, पक्षवात, कंपवात, सर्वसंधिगत वात, सुप्तवात, वातशूल और उन्माद इनको नाश करे अलग २ अनुपानोंके साथ देवे तो अस्सी प्रकारके वातरोगोंको दूर करे ॥

वातारिरस ।

रसो गंधो वरावह्निगुग्गुलुः क्रमवर्धितः । तत्रैकभागः सूतः स्याद्गंधको द्विगुणस्ततः ॥ त्रिभागा त्रिफला योज्या चतुर्भागस्तु चित्रकः । गुग्गुलुः पंचभागः स्याद्रुबुतैलेन मर्दितः ॥ क्षिप्त्वा तत्रोदितं चूर्णं तेन तैलेन मर्दयेत् । गुटिकां कर्षमात्रां तु भक्षयेत्प्रातरेव हि ॥ नागरैरंडमूलानां कषायं प्रपिवेदनु । अभ्यज्यैरंडतैलेन स्वेदयेत्पृष्ठदेशकम् ॥ विरेकपरिणामेन स्निग्धमुष्णं च भोजयेत् । वातारिसंज्ञको ह्येष रसो निर्वातसेवितः ॥ मासेन मरुतो रोगान्हरेत्सुरतवर्जितः ॥

अर्थ–पारा १, गंधक २, त्रिफला ३, चित्रक ४, गूगल ५ इस प्रकार भाग लेकर चूर्ण करे फिर इसको अंडीके तेलमें खरल कर एक २ तोलेकी गोली बनावे एक गोली नित्य प्रातःकाल भक्षण करे और ऊपरसे सोंठ और अंडकी जडका काढा पीवे. तथ पीठपर अंडीके तैलको लगायके सेंक देवे. ऐसा करनेसे रोगीको दस्त होते हैं जब दस्त हो चुके तब इसको स्निग्ध और गरम भोजन करावे. यह वातारिसंज्ञकरस सेवन करनेवाला हवा न खाय, मैथुन न करे तो एक महीनेभरमें संपूर्ण वातरोग हरण करे ॥

समीरगजकेसरी।

नवाहिफेनं कुचिलं नवानि मरिचानि च। समभागानि सर्वाणि रक्तिकाप्रमितानि च॥ देयात्समीरे चैतानि पुनस्तांबूलचर्वणम्। कुब्जे च खंजवाते च सर्वजे गृध्रसीग्रहे॥ अवबाहौ प्रयोक्तव्यः शोफे कंपे प्रतानके। विषूच्यामरुचौ देयमपस्मारे विशेषतः॥

अर्थ-नई अफीम, कुचलाके बीज, नवीन काली मिरच इनको समान भाग लेकर चूर्ण करे फिर एक २ रत्तीकी गोली बनाय लेवे एक गोली रोगीको देय और इसको खायके ऊपरसे बीडी खाय तो कुब्जवात, खंजवात, सर्वजवात, गृध्रसी, अवबाहुक, सूजन, कंप, प्रतानकवायु, विषूचिका, अरुचि और अपस्मार इनको नाश करे॥

मृतसंजीवनीरस।

म्लेच्छस्य भागाश्चत्वारो तदर्धं विषसंयुतम्। टंकणं दंतिबीजं च आर्द्रकस्य रसेन वै॥ एतत्सर्वं क्षिपेत्खल्वे मर्द्यं यामद्वयं भिषक्। भानुदुग्धैर्महोदर्या द्विगुंजं भक्षयेत्सदा॥ वातव्याधिमुरुस्तंभमामवातं विशेषतः। ग्रहण्यर्शोविकारेषु ज्वरमष्टविधं तथा॥ निहंति तत्क्षणादेव तमः सूर्योदयो यथा। मृतसंजीवनो नाम प्रख्यातो रससागरः॥

अर्थ-हिंगुल ३ भाग, सिंगिया विष २ भाग, सुहागा और जमालगोटा एक एक भाग लेवे. इस प्रकार सबको एकत्र करके उसको अदरखके रसमें दो प्रहर खरल करे. फिर आकका दूध और सतावरके रसकी उसको भावना देवे. यह रस दो रत्तीके प्रमाण देनेसे वातरोग, ऊरुस्तंभ, आमवात, संग्रहणी, बवासीर और आठ प्रकारके ज्वर इनको नाश करे. इसको मृतसंजीवन रस कहते हैं यह रससागरग्रंथमें लिखा है॥

वातारिरस।

सूतहाटकवज्राणि ताम्रं लोहं च माक्षिकम्। तालं नीलांजनं तुत्थमहिफेनं समांशकम्॥ पंचानां लवणानां च भागमेकं विमर्दयेत्। वज्रक्षीरैर्दिनैकं तु रुद्ध्वा तं भूधरे पचेत्॥ माषे-

कमार्द्रकद्रावैर्लेहयेद्वातनाशनम् । पिप्पलीमूलजं क्वाथं सकृष्ण-
मनुपानकम् ॥ सर्ववातविकारांस्तु निहन्यात्क्षेपकादिकान् ।
रसः सर्वत्र विख्यातो नाम्ना वातारि च स्मृतः ॥

अर्थ—पारा, सुवर्ण, हीरा, तामा, लोहा, सुवर्णमाक्षिक, हरताल इनकी भस्म, सुरमा, लीलाथोथा और अफीम ये समान भाग लेवे; और पांचों निमक मिलाकर एक भाग लेवे. इस प्रकार सबको एकत्र कर थूहरके दूधमें एक दिन खरल करे, फिर संपुटमें रख कपडमिट्टी करके भूधरयंत्रमें रखके फूंक दवे यह वातारिरस १ मासे अदरखके रससे देवे और पीपरामूलके काढेमें पीपरका चूर्ण डालके ऊपरसे पीवे तो संपूर्ण वातके विकार, आक्षेपकादिकोंको नाश करे यह वातारिरस सर्वत्र प्रसिद्ध है ॥

वातगजांकुश ।

मृतं सूतं मृतं लोहं गंधं तालं च माक्षिकम् । पथ्या शृंगी विषं त्र्यूषमग्निमंथं च टंकणम् ॥ तुल्यं खल्वे दिनं मर्द्यं मुंडीनिर्गुं-डिजैर्द्रवैः । द्विगुंजां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशांतये ॥ साध्या-साध्यं निहंत्याशु रसो वातगजांकुशः ॥

अर्थ—पारेकी भस्म, लोहभस्म, गंधक, हरताल, स्वर्णमाक्षिकभस्म, हरड, काकडासिंगी, विष, सोंठ, मिरच, पीपल, अरनी, सुहागा ये सब समान भाग ले चूर्ण करे फिर गोरखमुंडी और निर्गुंडी इनके रसमें एक २ दिन खरल कर दो दो रत्तीकी गोली बनावे. इनको खाय तो सर्ववादीके रोग शांत होवें. यह वातगजांकुशरस साध्यासाध्यरोगोंको दूर करे ॥

व्याधिगजकेसरी ।

पारदं गंधकं तालं विषं त्र्यूषणकं समम् । त्रिफलाटंकणक्षारं प्रत्येकं शाणमात्रकम् ॥ दंतिबीजं च टंकैकं सूक्ष्मचूर्णानि का-रयेत् । भृंगराजरसेनैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ काकमाचीरसेनैव निर्गुंडीरसकं तथा । मरिचाभा वटी कार्या दोषमापेक्ष्य दाप-येत् ॥ क्षीरेण सह दातव्या चाष्टज्वरनिवृत्तये । अशीतिर्वात-जान्हंति निर्गुंडीवस्तुकेन वा ॥ गुडेन सह दातव्या चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् । अनुपानेन संयुक्तस्तत्तद्रोगहरः स्मृतः ॥

अर्थ-पारा, हरताल, सिंगियाविष, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, सुहागा ये प्रत्येक आधा २ तोला और जमालगोटा १ तोला लेवे. सबका बारीक चूर्ण करके उसको भांगरा, काकमाची (मकोय), निर्गुंडी इनके रसमें सात २ दिन खरल करे. फिर मिरचके बराबर गोली बनावे और दोषोंको विचारके देवे जैसे आठ प्रकार ज्वरोंमें दूधके साथ, अस्सी प्रकारकी वायुपर निर्गुंडी और नागरमोथा इनके काढेसे, चालीस प्रकारके पित्तव्याधिपर गुडके साथ और सर्वव्याधिपर योग्य-अनुपानके साथ देनेसे उसी २ व्याधिका नाश करे ॥

सूर्यप्रभा गुटी ।

चित्रकं त्रिफला निंबं पटोलं मधुयष्टिका । वरांगं केसरं चैव यवानी चाम्लवेतसम् ॥ भूनिंबकं च दार्व्येला मुस्ता पर्पटकं तथा । तुत्थकं कटुका भार्ङ्गी चव्यपद्मकदीप्यकैः ॥ पिप्पली मरिचं दंती शठी शुंठी सपुष्करम् । विडंगं पिप्पलीमूलं जीरकं देवदारु च ॥ पत्रकं कुटजं रास्ना दुरालंभामृता त्रिवृत् । लता-रुष्करताली संवृक्षाम्लं लवणत्रयम् ॥ धान्यकं चाजमोदा च कारवी धातुमाक्षिकम् । जातीफलं तुगाक्षीरी वाजिगंधा सदा-डिमम् ॥ कंकोलकमुशीरं च द्विक्षारं मरिचं तथा । एतानि पलमात्राणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ गिरिजस्य पलान्यष्टौ द्वे पले चैव गुग्गुलोः प्रस्थमेकं सितायाश्च घृतस्य कुडवं तथा ॥ गिरिजस्य समं लोहं प्रस्थार्धं माक्षिकस्य च । सर्वमेकत्र सं-मिश्य स्निग्धभांडे निधापयेत् ॥ वातव्याधिमुरुस्तंभमर्दितं गृध्रसीं तथा । विद्रधिं श्लीपदं गुल्मं पांडुरोगं हलीमकम् ॥ कासं पंचविधं घोरं मूत्रकृच्छ्रं गलग्रहम् । आनाहमश्मरीव-ध्मंग्रहणीमपबाहुकम् ॥ अरोचकं पार्श्वशूलमुदरं सभगंदरम् । हृद्रोगं शूलमुत्कंपविषमज्वरनाशनम् ॥ उरःक्षते च ये दोषा मुखरोगे च दारुणे । प्राशयेद्गुटिकां चापि चूर्णं पाणितलोन्मि-तम् ॥ विविधान्नानि भुंजीत यथेष्टं च यथासुखम् । गुटिका भास्करी नाम्ना सृष्टा देवेन शंभुना ॥ प्रमेहं रक्तपित्तं च पांडु

रोगं सकामलम् । अग्निसंदीपनं हृद्यं दीर्घायुः पुष्टिदो भवेत् ॥ ये वातप्रभवा रोगा ये च पित्तसमुद्भवाः । कफरोगाश्च ये केचिद् द्वंद्वजाः सान्निपातिकाः ॥ ते सर्वे प्रशमं यांति भास्करेण तमो यथा । रोगविद्राविणी कार्या गुटिका सूर्यवत्प्रभा ॥

अर्थ–चित्रक, हरड, बहेडा, आंवला, नीमकी छाल, पटोलपत्र, मुलहटी, दालचीनी, नागकेशर, अजमायन, अमलवेत, चिरायता, दारुहलदा, इलायची, नागरमोथा, पित्तपापडा, नीला थोथा, कुटकी, भारंगी, चव्य, पद्माख, खुरासानी अजमायन, पीपल, मिरच, दंती, सोंठ, पुहकरमूल, वायविडंग, पीपरामूल, जीरा, देवदारु, पत्रज, कूडेकी छाल, धमासा, गिलोय, निसोथ, कौंचके बीज, तालीसपत्र, चूका, सैंधानिमक, बिडनिमक, कचियानिमक, धनिया, अजमोद, सोंफ, सुवर्णमाक्षिक, जायफल, वंशलोचन, असगंध, अनारकी छाल, कंकोल, खस, जवाखार, सज्जीखार और काली मिरच ये प्रत्येक चार २ तोले और शिलाजीत ३२ तोले, गूगल शुद्ध ८ तोले, लोहेकी भस्म ३२ तोले, सुवर्णमाक्षिक भस्म ८ तोले इन सबका एकत्र चूर्ण कर इसमें मिश्री ६४ तोले और घी १६ तोले डाले सबको एकत्र मिलाय घीके चिकने बासनमें भरके रख देवे. इसमेंसे १ तोला अथवा बलाबल विचारके न्यूनाधिक मात्रा देवे तो वातव्याधि, ऊरुस्तंभ, गृध्रसी, विद्रधि, श्लीपद, गोला, पांडुरोग, हलीमक, पांच प्रकारकी खांसी, मूत्रकृच्छ्र, गलग्रह, अफरा, पथरी, बदका रोग, संग्रहणी, अवबाहुक, अरुचि, पसवाडेका शूल, उदर, भगंदर, हृदयरोग, शूल, कंप, विषमज्वर, उरक्षत, मुखके रोग, प्रमेह, रक्तपित्त, पांडुरोग, कामला, वादीके रोग, पित्तजन्य रोग, कफके रोग, द्वंद्वज, सन्निपातजन्य रोग इत्यादिक रोग इस सूर्यप्रभागुटिकाके प्रभावसे नष्ट होंय. रोगोंको भगानेवाली इसका प्रभाव सूर्यके समान है. एक तोलेकी गोली बनावे अथवा एक तोला इसके चूर्णकोही भक्षण करे इसके ऊपर अनेक प्रकारके यथेष्ट अन्न भोजन करने चाहिये इसको श्रीशिवने निर्माण करी है ॥

लघुवातविध्वंसमात्रा

पारदष्टंकणो गंधपाषाणभिद्वत्सनागो वराटस्तथा तालकश्च । त्र्यूषणं हेमनीरेण तन्मर्दयेद्रक्तिकाभा वटी वातविध्वंसकः ॥ सन्निपातके मारुते कफे शीतमांद्यके श्वाससंभवे । संग्रहाभिधे शूलजे गदे काससंसृतौ योजयेत्सदा ॥

अर्थ–पारा, सुहागा, गंधक, पाषाणभेद, वत्सनागविष, कौडीकी भस्म, हरताल, सोंठ, मिरच, पीपल इन सबका चूर्ण करके धतूरेके रससे खरल करे और एक २

रत्तीकी गोली बनावे इसको वातविध्वंसनी कहते हैं. यह सन्निपात, कफ, वायु, शीत, मंदाग्नि, श्वास, संग्रहणी, शूल और खांसी इनपर देनी चाहिये ॥

वह्निकुमार ।

टंकणः पारदो गंधशंखौ कपर्दः समौ वत्सनाभास्त्रिभागस्तथा । वह्निजं अष्टभागं वह्निपूर्वः कुमारः स्मृतो भृंगनीरेण संमर्दितः ॥ वातरोगेषु सर्वेषु श्वसने वह्निमांद्यके । कफामये प्लीहकासे शूले त्वग्निकुमारकः ॥

अर्थ-सुहागेका चूर्ण, पारा, गंधक, शंखभस्म और कौडीकी भस्म ये समान लेवे तथा सिंगियाविष ३ भाग और काली मिरच ८ भाग सबको एक करके भांगरेके रसमें खरल करे इसको वह्निकुमाररस कहते हैं. यह संपूर्ण वातरोग, श्वास, मंदाग्नि, कफ, प्लीहा, खांसी और शूल इनपर देवे ॥

वातविध्वंस ।

रसं गंधं विषं चैव ताम्रं लोहं समाक्षिकम् । एतत्सर्वं समं योज्यं विषं च द्विगुणं भवेत् ॥ जेपालं तालकं चैव रसेन सह योजयेत् । त्र्यूषणं च समं योज्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ निर्गुंडीसूरणद्रावैर्भानोश्च पयसस्तथा । तर्कारी भृंगराजश्च तथोन्मत्तरसस्य च ॥ भावना खलु दातव्या सप्तसप्तक्रमादितः । द्विगुंजं भक्षयेत्प्रातर्मरिचैश्च समन्वितम् ॥ जानुजंघाकटिस्थूणपादगुल्फोष्ठशीर्षकम् । मन्यास्तंभं हनुस्तंभं त्रिकस्तंभं च शुष्ककम् ॥ जिह्वास्तंभं बाहुभवं त्रिकस्तंभं च पादजम् । अधोभागे च ये वाताः सर्वांगे विचरंति ये ॥ सर्वान्वातान् जयेदाशु दैन्यं नारायणो यथा ॥

अर्थ-पारा १, गंधक १, बच्छनाग विष २, तामेकी भस्म १, लोहेकी भस्म १, सुवर्णमाक्षिककी भस्म १, जमालगोटा १, हरताल १, सोंठ, मिरच, पीपल सब मिलायके १ माग लेवे. इन सब औषधोंको एकत्र करके इसमें निर्गुंडी, जमीकंद, आक, अरनी, भांगरा और धतूरा इन प्रत्येककी सात २ भावना देवे. यह वातविध्वंसन दो रत्तीके अनुमान काली मिरचोंके चूर्णके साथ देवे तो जानु, जंघा, कमर, पीठ, पैर, होंठ मस्तक और गरदन इनका स्तंभ, हनुस्तंभ, त्रिकस्तंभ,

शुष्कवात, जिह्वास्तंभ, बाहुस्तंभ, पादस्तंभ और अधोभागमें होनेवाली वादी तथा सर्वांगमें संचार करनेवाली वायु इस प्रकार संपूर्ण वातरोगोंका नाश करे जैसे भगवान् भक्तोंकी दीनताको हरण करते हैं ॥

दूसरा समीरपन्नग ।

सुतं तालकमाक्षिकायसरजो गंधं समांशं कृतं पथ्या त्र्यूषण-वह्निमंथसुरसाशृंगी विषं टंकणम् । क्षिप्त्वा खल्वतले च वारि सुरसामुंडीरसे मर्दितं मात्रा वल्लमिता ससैंधवयुता शुंठ्या तथा चित्रकैः ॥

अर्थ-पारा, हरताल, सुवर्णमाक्षिकभस्म, लोहभस्म, गंधक, हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, अरनी, रास्ना, कांकडासिंगी, विष, सुहागा ये समान भाग ले सबको तुलसी और गोरखमुंडीके रसमें खरल कर इसकी दो दो रत्तीकी गोली करे. इसको सैंधानिमक, सोंठ और चित्रकके साथ वादी पर देवे ॥

वातारिरस ।

रसभस्म च भागेकं गंधको द्विगुणो भवेत् । त्रिगुणं च विषं ग्राह्यं कणा चैव चतुर्गुणा ॥ वृंताकत्रयं तथा प्रोक्तं सर्वमेकत्र कारयेत् । गुंजा मात्रा प्रदातव्या सर्ववातविकारिणाम् ॥

अर्थ-पारेकी भस्म १ भाग, गंधक २ भाग, सिंगिया विष ३ भाग, पीपल ४ भाग और रेणुकबीज ३ भाग ये सब पदार्थ एकत्र करके चूर्ण करे इसको वादीके विकारों पर १ रत्ती देय ॥

दूसरा प्रकार ।

भागेकं च विषं चैव द्विभागं टंकणं तथा । चतुर्भागं च मरिचं सहैकत्र प्रयोजयेत् ॥ आर्द्रकस्य रसैर्मर्द्य वल्लमेकं प्रमाणतः । मरिचैश्च समायुक्तं सर्ववातनिकृंतनम् ॥

अर्थ-सिंगिया विष १ भाग सुहागा २ भाग और काली मिरच ४ भाग ले सबको एकत्र कर अदरखके रसमें खरल कर इसमेंसे २ रत्ती रस मिरचोंके साथ देवे तो सर्व वायुके रोग नाश करे ॥

रसेंद्रचिंतामणि ।

सूतात्पंचार्कतश्चैकं कृत्वा पिष्टं सगंधकम् । सूतांशं नागव-

ल्याश्च द्रवैः पिष्ट्वा प्रलेपयेत् ॥ ताम्रपृष्ठे प्रलिप्यैतां रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् । द्विगुंजं त्र्यूषणेनार्धं वपुवातं सकंपकम् निहंति दाहसंतापं मूर्च्छापित्तसमान्विताः ॥

अर्थ-पारा ५ भाग, तांबेके पत्र १ भाग और गंधक ५ भाग इनकी कजली करके नागरबेलके पानके रसमें खरल कर तामेके पत्रोंपर लेप कर एकके ऊपर दूसरा जमाय संपुटमें रख गजपुटमें रखके फूंक देवे. इस भस्मको २ रत्ती ले और सोंठ, मिरच, पीपल इनके चूर्णसे देवे तो अर्धांगवात, कंपवात, दाह, संताप, मूर्च्छा और पित्त इनको नाश करे ॥

कालकंटकरस ।

वज्रसूताभ्रहेमार्कतीक्ष्णमंडं क्रमोत्तरम् । मारितं मर्दयेदम्लवर्गेण दिवसत्रयम् ॥ त्रिक्षारं पंचलवणं मर्दितस्य समं समम् । दत्त्वा निर्गुंडिकाद्रावैर्मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ शुष्कमेतद्विचूर्ण्याथ विषं चास्याष्टमांशतः । टंकणं विषतुल्यांशं दत्त्वा जंबीरजैर्द्रवैः ॥ भावयेद्दिनमेकं तु रसोऽयं कालकंटकः । दातव्यः सर्वरोगेषु सन्निपाते विशेषतः ॥ द्विगुंजमार्द्रकद्रावैर्घृतैर्वा वातरोगिणाम् । निर्गुंडीमूलचूर्णं तु माहिषाख्यं च गुग्गुलम् ॥ समांशं मर्दयेदाज्ये तद्वटी कर्षसंमिता । अनुयोज्या घृतैर्नित्यं स्निग्धमुष्णं च भोजनम् ॥ मंडलान्नाशयेत्सर्वान्वातरोगान्न संशयः । सन्निपाते पिबेच्चानु रविमूलकषायकम् ॥

अर्थ-हीरा, पारा, अभ्रक, सुवर्ण, तांबा, खेडीलोह और मुंडलोह इनकी भस्म एक से दूसरी अधिक २ के क्रमसे लेवे फिर इसको तीस दिन अम्लवर्गकी भावना देवे. फिर तीनों क्षार और पांचों निमक ये उक्त भस्मोंके समान मिलायके फिर निर्गुंडीके रसमें उसको तीन दिन खरल करे जब सूख जावे तब अष्टमांश सिंगियाविष और सुहागा डालके नींबूके रसमें १ दिन खरल करे इसको कालकंटकरस कहते हैं यह संपूर्ण रोगोंपर देवे परंतु विशेषकरके सन्निपातपर देना चाहिये अदरखके रससे अथवा घीके साथ दो रत्ती वातरोगपर देवे निर्गुंडीकी जडका चूर्ण और भैंसा गुग्गुल ये समान ले घीसे खरल करके एक तोलेकी गोलीके साथ देवे और स्निग्ध तथा उष्ण भोजन करे

तो यह ४० दिनमें संपूर्ण वातके रोगोंको नाश करे तथा इस रसको खायके ऊपरसे आककी जडका काढा पीवे तो सन्निपातको नष्ट करे ॥

त्रिगुणाख्यरस ।

गंधकाष्टगुणं सूतं शुद्धं मृद्वग्निना क्षणम् । पक्त्वावतार्य संचूर्ण्य चूर्णतुल्याभयायुतम् । सप्तगुंजमिदं खादेद्वर्धयेच्च दिने दिने। गुंजैकैकं क्रमेणैव यावत्स्यादेकविंशतिः ॥ क्षीराज्यशर्करामिश्रं शाल्यन्नं पथ्यमाचरेत् । कफवातप्रशांत्यर्थं निर्वाते निवसेत्सदा ॥ त्रिगुणाख्यो रसो नाम त्रिपक्षात्कफवातनुत् ॥

अर्थ—गंधक आठ भाग लेकर उसको मंदाग्निपर पतली कर लेवे फिर इसमें पारा१ भाग मिलावे थोडी देर अग्निपर रहनेदे फिर पारे गंधककी बराबर हरडका चूर्ण मिलायके प्रथम दिन सात रत्ती देवे और २१ रती होनेपर्यंत नित्यप्रति एक २ रत्ती बढाता जावे और दूध, घी,खांड और भात ये पथ्यमें देवे और पवनमें रहे नहीं तो यह त्रिगुणाख्यरस तीनपक्षमें कफ वादीको नाश करे ॥

अर्केश्वर ।

रसस्य गंधं द्विगुणं विमर्द्य ताम्रस्य चक्रेण सुतापितेन । आच्छादयित्वा च ततः प्रयत्नाच्चक्रे विलग्नं च ततः प्रगृह्य ॥ संचूर्ण्य च द्वादशधार्कदुग्धैः पुटेत वह्नित्रिफलाजलेन । संभावितार्केश्वर एष सूतो गुंजाद्वयं चास्य फलत्रयेण ॥ ददेत मानत्रितयेन सुप्तिवाताद्विमुक्तो हि भवेद्धिताशी । क्षारं सुतिक्ष्णं दधिमांसमाषं वृंताकमध्वादि विवर्जनीयम् ॥

अर्थ—पारा १ भाग और गंधक २ भाग दोनोंको एकत्र करके तामेके पात्रको गरम करके उसमें घोटे फिर ढक देवे. फिर तामेके चक्रमें लगे उसको निकास लेवे फिर खरलमें डालके उसको आकके दूध और चित्रक तथा त्रिफला इनके काढेकी दश दश भावना देवे इसको अर्केश्वररस कहते हैं. यह दो रत्ती त्रिफलाके साथ देवे और पथ्य हितकारी अन्न भोजन करे तथा खारी, तीक्ष्ण, दही, मांस, उडद, बैंगन और सहत ये पदार्थ खाय नहीं तो सुप्तिवात दूर होय ॥

एकांगवीर ।

शुद्धगंधं मृतं सूतं कांतं वंगं च नागकम् । ताम्रं चाभ्रं मृतं

तीक्ष्णं नागरं मरिचं कणा ॥ सर्वमेकत्र संचूर्ण्य भावयेच्च पृथक् त्रयम् । वराव्योषकनिर्गुंडीवह्निमार्द्रकजैर्द्रवैः ॥ शिग्रुकुष्टद्रवेणापि ततो धात्र्या द्रवेण च । विषमुष्टयार्कहाटेश्च आर्द्रकस्य रसैस्तथा ॥ रसश्चैकांगवीरोसौ सुसिद्धो रसराड् भवेत् । पक्षघातं चार्दितं च धनुर्वातं तथैव च ॥ अर्धांगं गृध्रसीं चापि विश्वाचीमपबाहुकम् । सर्वान्वातामयान्हंति सत्यं सत्यं न संशयः ॥

अर्थ-शुद्ध गंधक, पारेकी भस्म, कांतलोह, वंग, शीशा, तामा, अभ्रक, पोलाद लोह इनकी भस्म, सोंठ, मिरच, पीपल इन सबको एकत्र चूर्ण करके त्रिफलाका काढा, त्रिकुटेका काढा, निर्गुंडी, अदरख, चित्रक, सहजना, कूठ, आंवले, कुचला, आक, थूहर और अदरख इन प्रत्येककी तीन तीन भावना देवे तो यह एकांग-वीर रस सिद्ध होय. यह पक्षाघात, धनुर्वात, अर्धांगवात, गृध्रसी, विश्वाची, अपबाहुक और सर्व प्रकारके वातरोग इनको नाश करे इसमें संशय नहीं है ॥

वातरक्तपर रस ।

पारदं च क्रियाशुद्धं तत्तुल्यं शुद्धगंधकम् । अभ्रकं तु द्वयोस्तुल्यं त्रिभिस्तुल्यं तु गुग्गुलम् ॥ सर्वांशममृतासत्वं भावयेदौषधैः पृथक् । निर्गुंडीगोक्षुरच्छिन्नाकोकिलाख्यांघ्रिजै रसैः सप्तवारं ततो युंज्याद्वातरक्ते त्रिवल्लकम् । कोकीलाख्यस्य मूलानां पानीयमनुपाययेत् ॥

अर्थ-पारा शुद्ध गंधक समान भाग ले और दोनोंकी बराबर अभ्रकभस्म तीनोंकी बराबर गूगल और सबकी बराबर गिलोयसत्व इन सबको एकत्र कर निर्गुंडी, गोखरू, गिलोय, काकोली इनके काढेकी सात २ भावना देवे फिर इसमेंसे ६ रत्तीकी मात्रा वातरक्तरोग पर देवे और ऊपरसे काकोलीकी जडका काढा पीवे ॥

तालकभस्म ।

तालं रसं तुवरिकां नयनेंदुबाणभागैर्विशुद्धवसुजातरसे विमर्द्य । दत्त्वा शरावयुगले प्रविधाय मुद्रां दद्याद्गजाह्वपुटमस्य भवेत्सुभस्म ॥ दृष्ट्वाकृतिं प्रकृतिमप्यखिलामवस्थां दृष्ट्वा पुनश्च बहुधा बहुधा विचार्य । दद्याच्च तंदुलमितां हरितालमात्रां विद्या मया यतिवरादियमाप यत्नात् ॥

अर्थ-हरताल ३, पारा १ और फिटकरी ५ भाग ये शुद्ध ले सबको एकत्र करके सपेद पुनर्नवाके रसमें खरल करे. जब सूख जाय तब इसकी टिकिया बनाय ले इसको खिपडेकी पैंदीमें रखके उसके ऊपर दूसरा औंधा खिपडा ढक देवे फिर संधीलेप करके गजपुटमें फूंक देवे तो सुंदर भस्म होय. यह हरतालकी मात्रा जिस रोगीको देनी होय उसकी आकृति, प्रकृति और रोगकी सर्व अवस्था वारंवार विचारके चावलके बराबर देवे. यह विद्या मैंने एक महान् संन्यासीके पाससे बडे यत्नसे सीखी है ॥

गंधक रसायन ।

शुद्धो बलिर्गोपयसा विभाव्य ततश्चतुर्जातगुडूचिकाभिः । पथ्याक्षधात्र्योषधभृंगराजैर्भाव्योष्टवारं पृथगार्द्रकेण ॥ सिद्धे सितां योजय तुल्यभागां रसायनं गंधकपूर्वकं स्यात् । कर्षोन्मितं सेवितमेति मर्त्यो वीर्यं च पुष्टिं दृढदेहवह्निम् ॥ कुष्ठं सकंडुं विषदोषमुग्रं मासद्वयं योजयती च योगः । घोरातिसारं ग्रहणीगदं च सवातरक्तं सहशूलयुक्तम् ॥ जीर्णज्वरं मेहगणं च तीव्रं वातामयानां ग्रहणे समर्थः । प्रज्ञाकरं केशमतीव कृष्णं ससोमरोगं सहमुष्कवृद्धिम् ॥ हरति सकलरोगान् गंधकाख्योतियोगो मृतसदृशनराणां प्राणदो दीर्घमायुः । तदनुविहितयोगं भस्म सूतं सहेम रमयति त्रिदशानां दीतिरूपं सुखं च ॥

अर्थ-शुद्ध गंधकको गौका दूध, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, गिलोय, हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, भांगरा और अदरख इन प्रत्येककी आठ २ भावना, देवे. जब सिद्ध हो जावे तब बराबरकी मिश्री मिलाय ले इसको गंधकरसायन कहते हैं. यह दश मासे नित्य सेवन करनेसे वीर्यपुष्टी, देहकी दृढता, अग्निदीप्ति इनको करे तथा कुष्ठ, खुजली, विषदोष, घोर अतिसार, संग्रहणी, वातरक्त, शूल,जीर्णज्वर, सर्व प्रमेह, तीव्रवातव्याधि, अंडवृद्धि, सोमरोग और संपूर्ण रोगोंका नाश करे है. तथा बुद्धि, आयुष्य, केशोंका कालापना और सर्व रोगोंको नाश करे. यह मनुष्योंको प्राण और आयुष्य, देनेमें समर्थ है और इसमें पारेको भस्म । योग करनेसे कांति करे और अनेक स्त्रियोंके भोगनेकी सामर्थ्य करे ॥

लघुविषगर्भतैल ।

तैलाढकं समतुषांबुहयारिहेमनिर्गुंडिभास्कराशिफासृतया तु

सिद्धम् । धत्तूरकुष्ठफलिनीविषहेमदुग्धारास्ना हयारिकटभी मरिचोपचित्रा ॥ मांसी वचा दहनसर्षपदेवदारु दार्वी निशा ऋबुजतुत्रिफला समंगा । पिष्ट्वा क्षिपेत्पलमितां विषगर्भमेतत्तैलं समस्तपवनामयनाशनं स्यात् ॥

अर्थ–२५६ तोले तेलमें इसके बराबरको तुषकी कांजी और कनेर, धतूरा, निर्गुंडी और आककी जडका काढा डालके तेल सिद्ध करे. फिर धतूरेके बीज, कूठ, कलियारी, सिंगिया विष, गूलर, रास्ना, कनेर, मालकांगनी, मिरच बडी दंती, जटामांसी, वच, चित्रक, सरसों, देवदारु, दारुहलदी, अंडकी जड, लाख, त्रिफला, मंजीठ ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे सबका चूर्ण करके उस तेलमें डाल देवे तो यह विषगर्भतैल बने. यह सर्व वातरोगनाशक है ॥

दूसरा प्रकार ।

धतूरस्य रसस्य पंच कुडवं तैलं तथा कांजिकं प्रस्थानां च चतुष्टयं गदवचाचित्रात्परं शाणकाः । हृद्धात्रीमरिचात्पृथङ्नवविषात्षट् स्वर्णबीजात्पटोः स्युः सप्ताधिकविंशतिः परिमितं तीव्रानिलध्वंसनम् ॥ पक्षाघातं हनुस्तंभं मन्यास्तंभं कटिग्रहम् । पृष्ठत्रिकशिरःकंपं सर्वांगग्रहणं तथा ॥

अर्थ–धतूरेका रस ८० तोले, तेल ८० तोले, कांजी ८० तोले, कूठ, वच, चित्रक ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे. हितवल्ली, मिरच, दोनों नौ नौ तोले ले, सिंगिया विष ६ तोले, धतूरेके बीज २७ तोले और सैंधानिमक २७ तोले इन सबको एकत्र करके तेल सिद्ध करे. यह तीव्र वादी, पक्षाघात, हनुस्तंभ, गर्दनका स्तंभ, कटिग्रह, पीठ, त्रिक और मस्तक इनका कंप और सर्वांगग्रह वात इनको नाश करे ॥

महाविषगर्भतैल ।

कनकं तु च निर्गुंडी तुंबिनी च पुनर्नवा । वातारिश्चाश्वगंधा च प्रपुन्नाटं सचित्रकम् ॥ शोभांजनं काकमाची कलिकारी च निंबकम् । महानिंबेश्वरी चैव दशमूलं शतावरी ॥ कारवेल्ली सारिवा च श्रावणी च विदारिका । वन्ध्यकौं मेषशृंगी च करवीरद्वयं वचा ॥ काकजंघा त्वपामार्गबला चातिबलाद्वयम् ॥ व्याघ्री महाबला वासा सोमवल्ली प्रसारिणी ॥ पलोन्मितानि

चैतानि द्रोणेंऽभसि विनिःक्षिपेत् । पचेत्पादावशेषेऽस्मिन्कल्कस्य कुडवं क्षिपेत् ॥ त्रिकटुं विषतिंदुं च रास्ना कुष्टं विषं घनम् । देवदारुर्वत्सनाभो द्वौ क्षारौ लवणानि च ॥ तुत्थकं कट्फलं पाठा भार्ङ्गी च नवसागरम् । त्रायंती धन्वयासं च जीरकं चंद्रवारुणी ॥ तैलप्रस्थं समादाय पाचयेन्मृदुवह्निना । विषगर्भमिदं नाम्ना सर्वान्वातान्व्यपोहति ॥ वक्षोरुकटिजंघानां संधानं श्रेष्ठमेव च । गृध्रसीं च महावातान्सर्वांगग्रहणं तथा ॥ दंडापतानकं चैव कर्णनादं च शून्यताम् । वनमध्ये यथा सिंहात्पलायंते यथा मृगाः ॥ यथाश्वगजभग्नानां नराणां च चतुष्पदाम् । नाशयेन्नात्र संदेहो विषगर्भप्रलेपनात् ॥

अर्थ–धतूरा, निगुडी, सपेद तूंबी, पुनर्नवा, अंड, असगंध, पवांड, चित्रक, सहजना, मकोय, बहेडा, नीमकी छाल, बकायन, वांझ ककोडी, दशमूल, शतावर, करेला, सारिवा, सपेद कोयल, मुंडी, विदारीकंद, थूहर, आक, मेढासिंगी, लाल और सपेद कनेर, वच, काकजंघा, भंगा, बला, अतिबला, नागबला, कटेरी, महाबला, अडूसा, सोमवल्ली और प्रसारणी ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. सबको जौकूट करके १०२४ तोले जलमें औटायके जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेवे और इसमें त्रिकुटा, कुचला, रास्ना, कूठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, सिंगिया विष, जवाखार, सुहागा, सैंधानिमक, बिडनिमक, संचरनिमक, समुद्रनिमक, लीलाथोथा, कायफल, पाढकी जड, नौसद्दर, त्रायमाण, धमासा, जीरा और इन्द्रायण इनका चूर्ण प्रत्येक १६ तोले डालके इसमें ६४ तोले तेल डाल मंदाग्निपर पक्क करे. इसको विषगर्भतैल कहते हैं. यह सब वातरोगोंको नाश करे और ऊरु, वक्षस्थल, जंघा तथा संधि इन ठिकानेकी वायु, आढयवात, गृध्रसी, महावात, सर्वांगवात, दंडापतानक, कर्णनाद तथा शून्यता इनको नाश करे, और जैसे वनमें सिंहसे मृग डरकर भाग जाते हैं उसी प्रकार घोडा और हाथी इनसे गिरनेसे टूटे हुए हाड अथवा पशु इनकी व्याधिको नाश करे इसमें संदेह नहीं है ॥

प्रसारिणीतैल ।

समूलपत्रां पुष्पाढ्यां जातसारां प्रसारिणीम् । कुट्टयित्वा पलशतं कटाहे समधिश्रयेत् ॥ दध्नस्तत्राढकं दद्यात् द्विगुणं चा-

म्लकांजिकम् । भेषजानि तु पेष्याणि तत्रेमानि समावपेत् ॥ शुंठी पलानि पंचैव रास्नायाश्च पलद्वयम् । प्रसारिणीपले द्वे च द्वे पले मधुकस्य च ॥ एतत्सर्वं समालोड्य शनैर्मृद्वग्निना पचेत् । एतत्प्रभंजने श्रेष्ठ नस्यकर्मणि शस्यते ॥ एकांगग्रहणं वापि सर्वांगग्रहणं तथा । अपस्मारं तथोन्मादं विद्रधिं मंदवह्निताम् ॥ त्वग्गताश्चापि ये वाताः शिरासंधिगताश्च ये । अस्थिसंधिगता ये च ये च शुक्रार्त्तवे स्थिताः ॥ सर्वान्वातामयान्नूनं नाशयत्येव सर्वथा । हयं नरं गजं वापि वातजर्जरितं भृशम् ॥ सद्यः प्रशमयेत्तैलमेतन्नात्र विचारणा । इंद्रियस्य प्रजननं वंध्यानां च प्रजाकरम् ॥ वृद्धानां बालकानां च स्त्रीणां राज्ञां हितं परम् । पंगुर्वा पीठसर्पिर्वा पीत्वैतत्संप्रधावति ॥

अर्थ-जड, पत्ता और फूलसहित तथा जिसमें सत्त्व हो गया हो ऐसी प्रसारणी ४०० तोलेको कूट एक कडाहीमें सिजावे, उसमें २५६ तोले दही, ५१२ तोले खट्टी कांजी डालके फिर सोंठ २० तोले, रास्ना ८ तोले, प्रसारणी ८ तोले, मुलहठी ८ तोले इस प्रकार उसमें डालके मिलाय देवे. फिर इसमें तेल डालके मंदाग्निपर पक्क करे यह बादीपर नस्य करनेमें उत्तम है. एकांगग्रहण, सर्वांगग्रहण, अपस्मार, उन्माद, विद्रधि, मंदाग्नि, त्वचा, मस्तक, शिरा, अस्थि, शुक्र, आर्तव इतने ठिकानेकी पवन, सर्व बादीके रोग इनको निश्चय करके नाश करे. तथा घोडा, हाथी, मनुष्य इनमेंसे कोईभी बादीसे जर्जरित होवे तो तत्काल यह तेल आरोग्य करे. इसमें संशय नहीं है. इन्द्रियजनक, वंध्यास्त्रीके संतान देनेवाला, वृद्ध, बालक, स्त्री और राजा इनको हितकारी है. तथा पांगुला किंवा कूखको टेढा करके चलनेवाला ऐसा मनुष्य इस तेलको पीकर दौडने लगे ॥

नारायणतैल ।

बिल्वोऽग्निमंथः स्योनाकपाटलापारिभद्रकाः । प्रसारिण्यश्वगंधा च बृहती कंटकारिका ॥ बला चातिबला चैव श्वदंष्ट्रा सपुनर्नवा । एषां दश पलान् भागान् चतुर्द्रोणांभसा पचेत् ॥ पादशेषं परिस्राव्य तैलपात्रे प्रदापयेत् । शतपुष्पा देवदारु मांसी

शैलेयकं वचा ॥ चंदनं तगरं कुष्ठमेलापर्णीचतुष्टयम् । रास्ना तुरगगंधा च सैंधवं सपुनर्नवम् ॥ एषां द्विपलिकान् भागान् पेषयित्वा विनिःक्षिपेत् । शतावरीरसं चैव तैलतुल्यं प्रदापयेत् ॥ आजं वा यदि वा गव्यं क्षीरं दत्त्वा चतुर्गुणम् । पाने बस्तौ तथाभ्यंगे भोज्ये नस्ये प्रयोजयेत् ॥ अश्वो वा वातभग्नो वा गजो वा यदि वा नरः । पंगुर्वा भग्नहस्तो वा भग्नपादोऽथ वा नरः ॥ अधोभागे च ये वाताः शिरामध्यगताश्च ये । दंतशूले हनुस्तंभे मन्यास्तंभेऽपतंत्रके ॥ एकांगग्रहणे वापि सर्वांगग्रहणे तथा । क्षीणेंद्रिया नष्टशुक्रा ज्वरक्षीणाश्च ये नराः ॥ लालजिह्वाश्च बधिरा विखरा मंदमेधसः । मंदप्रजा च या नारी या च गर्भं न विंदति ॥ वातार्तौ वृषणौ येषामंत्रवृद्धिश्च दारुणा । एतत्तैलं वरं तेषां नाम्ना नारायणं स्मृतम् ॥

अर्थ–बेलगिरी, अरनी, टेंटू, पाढ, नीमकी छाल, प्रसारिणी, असगंध, बडी कटेरी, छोटी कटेरी, बला, अतिबला, गोखरू, पुनर्नवा ये प्रत्येक चालीस २ तोले लेकर ४०९६ तोले जलमें डालके औटावे जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके जलको छान लेवे और इसको तेलके पात्रमें डाल देवे फिर इसमें सोंफ, देवदारु, जटामांसी, शिलाजीत, वच, चन्दन, तगर, कूठ, इलायची, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, रास्ना, असगंध, सेंधानिमक, सपेद पुनर्नवा इन प्रत्येकको आठ २ तोले चूर्ण करके डाले तथा तेलकी बराबर शतावरका रस डाले. बकरीका अथवा गौका दूध तेलसे चौगुना डाले इस प्रकार सबको एकत्र करके तेलको सिद्ध करे यह सिद्ध हुआ तैल पान, बस्ती, मालिस, भोज्य पदार्थके साथ सेवन तथा नस्य इनमें योजना करनेसे घोडा, हाथी, मनुष्य, पंगुल अथवा हाथ पैर जिसके मुड गये हों वह अच्छा होय और अधोभागकी वादी, शिरामध्यगत, दंतशूल, हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ, अपतंत्रक, एकांगग्रहण, सर्वांगग्रहण, क्षीणेन्द्रिय, नष्टशुक्र, ज्वरसे क्षीण, लालजिह्व, बहरे, बुरे स्वरवाले, अल्पबुद्धि, अल्पप्रजा स्त्री, वन्ध्या स्त्री, वृषणवात, अन्त्रवृद्धि इन पर यह नारायण तैल अतिहितकारी है ॥

दूसरा प्रकार ।

अश्वगंधा बला बिल्वं पाटला बृहतीद्वयम् । श्वदंष्ट्रातिबला निंबः

स्योनाकं च पुनर्नवा ॥ प्रसारिणीमग्निमंथः कुर्याद्दशपलं पृथक् । चतुर्द्रोणे जले पक्त्वा पादशेषं सृतं नयेत् ॥ तैलाढकेन संयोज्य शतावर्या रसाढकम् । क्षिपेत्तत्र च गोक्षीरं तैलात्तस्माच्चतुर्गुणम्॥शनैर्विपाचयेदेभिः कल्कैर्द्विपलिकैः पृथक् । कुष्ठैला चंदनं मूर्वा वचा मांसिससैंधवैः ॥ अश्वगंधा बला रास्ना शतपुष्पेंद्रदारुभिः । पर्णीचतुष्टयेनैव तगरेणैव साधयेत् ॥ तत्तैलं नावनेभ्यंगे पाने बस्तौ च योजयेत् । पक्षाघातं हनुस्तंभं मन्यास्तंभं गलग्रहम् ॥ खल्लत्वं बधिरत्वं च गतिभंगं गलग्रहम् । गात्रशोषेंद्रियध्वंसे असृक्शुक्रे ज्वरे क्षये ॥ अंडवृद्धिकुरंडं च दंतरोगं शिरोग्रहम् । पार्श्वशूलं च पांगुल्यं बुद्धिं हानिं च गृध्रसीम् ॥ अन्यांश्च विषमान्वातान् जयेत्सर्वांगसंश्रयान् । अस्य प्रभावाद्वंध्यापि नारी पुत्रं प्रसूयते ॥ मर्त्यो गजो वा तुरगस्तैलाभ्यंगात्सुखी भवेत् । यथा नारायणो देवो दुष्टदैत्यविनाशनः ॥ तथैवं वातरोगाणां नाशनं तैलमुत्तमम् ॥

अर्थ—असगंध, खिरेटी, बेलगिरी, पाठ, कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू, आतिबला,नीमकी छाल, टेंटू, पुनर्नवा, प्रसारिणी, अरनी ये तेरह औषध दश दश पल लेवे. जौ कूटकर चार द्रोण जलमें डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेय और तिलका तेल इसमें एक आढक डाले तथा सतावरका स्वरस एक आढक तथा गौका दूध चार आढक उस तेलमें डालके इसमें कल्क करके डालनेकी दवाई इस प्रकार डाले कूठ, इलायची, सपेद चंदन, वच, जटामांसी, सैंधानिमक, असगंध, खिरेंटीकी जड, रास्ना, सौंफ, देवदारु,सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी,माषपर्णी, ताम्रपर्णी और तगर ये सत्रह औषधि दो दो पल लेवे. सबका कल्क करके उस काढेमें डाल देवे. फिर इसको भट्टीपर चढाय मंद अग्निसे परिपक्व करे. जब केवल तेल मात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे. इसको नारायण तैल कहते हैं यह तैल नाकमें डालना, देहमें लगाना तथा पीना और बस्तिकर्म इनमें देना चाहिये. इससे पक्षाघात, हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ और गलग्रह, देहका सूखना, इन्द्रियोंका नाश, रुधिर वीर्यके क्षयमें तथा ज्वरके क्षयमें, खल्ली, बहरा,गतिभंग, गलग्रह, अंडवृद्धि, कुरंड, दंतरोग, शिरोग्रह, पार्श्वशूल, पांगुलापन, बुद्धिकी हानि, गृध्रसी

और जो अन्य विषमवात है उन सबको यह दूर करे इसके प्रभावसे वन्ध्याके पुत्र होय हाथी, घोडे, मनुष्य इस तेलकी मालिस करनेसे सुखी होवे. जैसे नारायण देव दुष्ट दैत्योंका नाश करे है उसी प्रकार यह नारायण तैल सर्व दुष्ट रोगोंका नाश करे है॥

शतावरीतैल।

शतावरी बलायुग्मं पर्ण्यौ गंधर्वहस्तकः । अश्वगंधाश्वदंष्ट्रा च बिल्वः काशः कुरंटकः ॥ एतान् सार्धपलान् भागान् कल्पयेच्च विपाचयेत् । चतुर्गुणेन नीरेण पादशेषं सृतं नयेत् ॥ नियोज्य तैलप्रस्थे च क्षीरप्रस्थं विनिःक्षिपेत् । शतावरीरसप्रस्थं जलप्रस्थं च योजयेत्॥ शतावरी देवदारु मांसी तगरचंदनम् । शतपुष्पा बला कुष्ठमेला शैलेयमुत्पलम् ॥ ऋद्धिर्मेदा च मधुकं कांकोली जीवकस्तथा । एषां कर्षसमैः कल्कैस्तैलगोमयवह्निना ॥ पचेत्तेनैव तैलेन स्त्रीषु नित्यं वृषायते । नारी च लभते पुत्रं योनिशूलं च नश्यति ॥ अंगशूलं शिरःशूलं कामलां पांडुतां गरम् । गृध्रसीं प्लीहशोषांश्च मेहान् दंडापतानकम् ॥ सदाहं वातरक्तं च वातपित्तगदार्दितम् । असृग्दरं तथाध्मानं रक्तपित्तं च नश्यति ॥ शतावरीतैलमिदं कृष्णात्रेयेण भाषितम् ॥

अर्थ–शतावर, खिरेटी, गंगेरन, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, अंडकी जड, असगंध, बेलगिरी, कास, कुश, पियावांसा ये ग्यारह औषध डेढ २ पल लेवे. सब औषधोंसे चौगुना जल डालके काढा करे. जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. इस काढेमें तिलीका तेल १ प्रस्थ मिलावे और गौका दूध १ प्रस्थ तथा शतावरका रस १ प्रस्थ, एवं जल १ प्रस्थ उस तेलमें डालके उसमें कल्क करके डालनेकी औषध आगे लिखी है उनको डाले. जैसे शतावर, देवदारु, जटामांसी, तगर, सपेद चंदन, सोंफ, खिरेटीकी जड, कूठ, इलायची, पत्थरका फूल, कमल, ऋद्धिके अभावमें वाराहीकंद, मेदाके अभावमें मुलहठी, महुआकी छाल, कंकोलीके अभावमें असगंध और जीवक इन सबका तोले २ भर कल्क करके तथा इनसे चौगुना अंडीका तेल लेकर उसमें उस कल्कको डालके पाक करनेके वास्ते कल्कसे चौगुना जल डाले. जब तेल मात्र शेष रहे तब उतारके तैलको छान लेवे, यह तैल जिस मनुष्यके वातरक्त होय उसके देहमें मालिस करे तो वातरक्त दूर होय ॥

माषतैल ।

माषप्रस्थं समावाप्य पचेत्सम्यग्जलाढके । पादशेषे रसे तस्मिन् क्षीरं दद्याच्चतुर्गुणम् ॥ प्रस्थं च तिलतैलस्य कल्कं दत्त्वा-क्षसंमितम् । जीवनीयानि यान्यष्टौ शतपुष्पा ससैंधवा ॥ रास्नात्मगुप्ता मधुकं बला व्योषं त्रिकंटकम् । पक्षघातार्दिते वाते कर्णशूले च दारुणे ॥ मंदश्रुतौ च श्रवणे तिमिरे च त्रिदोषजे । हस्तकंपे शिरःकंपे बाहुशोषेऽवबाहुके ॥ शस्तं कलायखंजे च पानाभ्यंजनबस्तिभिः । माषतैलमिदं श्रेष्ठमूर्ध्वजत्रुगदापहम् ॥

अर्थ–उडद ६४ तोलेंको २५६ तोले जलमें डालके औटावे. जब जल चतुर्थांश रहे, तब उसमें चौगुना दूध तथा तिलोंका तेल ६४ तोले और जीवनीयगणकी आठ औषधी, सोंफ, सेंधानिमक, रास्ना, कौंचके बीज, मुलहठी, खिरेटी, सोंठ, मिरच, पीपल और गोखरू ये तोले २ भर लेवे. सबका कल्क करके उस तेलमें डालके तेल सिद्ध करे. यह पक्षाघात, अर्दितवायु, दारुण कर्णशूल, बहरापना, तिमिररोग, संनिपातज रोग, हस्तकंप, शिरःकंप, बाहुशोष अपबाहुक और कलायखंज इन रोगों पर इस तेलको पीवे तथा लगावे. बस्तिकर्म इनमें योजना करे यह माषतैल संपूर्ण ऊर्ध्वजत्रुके रोगोंका नाश करनेमें श्रेष्ठ है ॥

चौथा विषगर्भतैल ।

तैलं कृष्णतिलोद्भूतं सर्षपैरंडसंभवम् । उभावपि च तुल्यांशं सर्वं द्रोणमितं पचेत् ॥ वक्ष्यमाणौषधीभिस्तु लोहपात्रे क्रमाग्निना । पश्चान्मानद्रवं क्वाथे वस्त्रपूतं विधाय च ॥ गर्भे विषं प्रदातव्यं तस्मात्तद्विषगर्भकात् । धत्तूरकरवीरार्कं लांगल्यं कोष्णवज्रकम् ॥ महानिंबत्रिवृद्दंती देवदाली प्रसारिणी । ज्योतिष्मती शिग्रुमूलं केतकी च पुनर्नवा ॥ कुलित्थमाषकर्पासबीजं भृंगरसान्वितम् । लाक्षारसं छागमांसं शणबीजं समं पृथक् ॥ व्याघ्रवाराहजंबूकवसाप्रस्थद्वयं द्वयम् । विषमष्टपलं ज्ञेयमन्यत्सर्वं पलद्वयम् ॥ प्रत्येकमौषधं ग्राह्यं मांजिष्ठाया द्विप्र-

स्थकम् । त्रिकटु त्रिफला कुष्ठं रास्ना मांसी सठी वचा ॥ चित्रकं देवदारुश्च बाकुचींद्रियवामृता । विडंगं रेणुका मुस्तं पंचकोलं यवानिका ॥ शम्याकं खदिरं सारं मधूकद्रुमबीजयोः । अजमोदा च तगरं सैंधवं रक्तचंदनम् ॥ हरिद्राद्वयसिक्थं च चतुर्जातं सचंदनम् । लोहभस्माभ्रक वंगं पाकं कासीसमेव च ॥ मनःशिला लेदरदकृष्णागरुनखांडिकम् । सिल्हारं रसगोधूमं कुंकुमेदमृगांडजम् ॥ सर्वमेतत्सुगंधार्थं सिद्धतैले विनिःक्षिपेत् ॥ अशीतिर्वातजान्रोगानामवातान्सुदुस्तरान् ॥ वातश्लेष्मसमुद्भूतान् कटिजानूरुजंघजान् । गृध्रसीं च हनुस्तंभं मन्यास्तंभं प्रकंपनम् ॥ पक्षाघातं पंगुतां च नाशयेदवबाहुकम् ॥

अर्थ–काले तिलोंका तेल सरसोंका तेल और अंडीका तेल इन सबको मिलायके १०२४ तोले लेय. फिर उसको लोहके कढावमें डालके उसमें धतूरा, कनेर, आक, कलयारी, कूठ, थूहर, बकायन, निसोथ, जमालगोटा, बंदाल, प्रसारणी, मालकांगनी, सहजनेका कंद, केतकी, पुनर्नवा, कुलथी, उडद, बिनोले ये प्रत्येक आठ २ पल लेवे सबका काढा और भांगरेका रस, लाखका सीरा, बकरेका मांस तथा सनके बीज ये प्रत्येक १२८ तोले तथा बघेरा, सूअर और स्यार इन प्रत्येककी चर्बी १२८ तोले और सिंगियाविष ८ तोले, मंजीठ १२८ तोले और सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, कूठ, रास्ना, जटामांसी, कचूर वच, चित्रक, देवदार, बावची, इंद्रजौ, गिलोय, वायविडंग, रेणुकबीज, नागरमोथा, पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, अजमायन, अमलतासका गूदा, खैरसार, मौएकी छाल, अजमोद, तगर, सैंधानिमक, लालचंदन हलदी, दारुहलदी, मोम, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, सपेद चंदन ये प्रत्येक आठ २ तोले लेवे, इनके काढेमें तेल मिलायके सिद्ध करे. उसमें लोहभस्म, वंगभस्म, सैंधानिमक, हीराकसीस, मनसील, हींगलु, काली अगर, नख, जवाद, शिलारस, गेहूं, केशर और कस्तूरी ये पदार्थ सुगंधार्थ उस सिद्ध तेलमें डाले. यह तैल अस्सी प्रकारकी वादी, आमवात, वातकफ, कमर, जानु, ऊरु, जंघा इनमें रहनेवाली वादी, गृध्रसी, हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ, कंप, पक्षाघात, पांगुला (लंगडा) पना और अपबाहुक इनको नाश करे ॥

लघुनारायणतैल।

एलाबलानतकुचंदनदारुसौम्याशैलेयकुष्ठकुटिलावरुणाशृतेन। तैलं सदुग्धमिति सिद्धमभीरुकंदतोयेन तेन लुलितेन समीरणघ्नम् ॥

अर्थ-इलायची, खिरेटी, तगर, लालचंदन, दारुहलदी, इन्द्रायन, पत्थरका फूल, कूठ, कुलिंजन, मूर्वा और वर्ना इनके काढेसे तिलके तेल दूध मिलायके पकावे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारले. इसमें शतावरके कंदका रस डालके उपयोग करे तो बादीका नाश करे ॥

शतावरी नारायणतैल।

शतावरी चांशुमती पृश्निपर्णी सठी बला। एरंडस्य च मूलानि बृहत्यो पूतिकस्य च ॥ गवेधुकस्य मूलानि तथा सहचरस्य च। एतान्दशपलान्भागान् जलद्रोणे पचेद्बुधः ॥ पादावशेषे पूते च गर्भे चैतान्समावपेत्। पुनर्नवा वचा दारु शताह्वा चंदनागरुः ॥ शैलेयं तगरं कुष्ठं त्रुटी मांसी स्थिरा बला। अश्वाह्वा सैंधवं रास्ना मंजिष्ठा घनचोरकम् ॥ कौंतीप्रियंगुस्थौणेयं पलार्धं कल्पयेत्पृथक्। गव्याजपयसोः प्रस्थौ द्वौ द्वावत्र प्रयोजयेत् ॥ शतावरीरसप्रस्थं तैलप्रस्थं भिषक् पचेत्। लवंगनखकं कोलवेल्लकं जीरकं भिषक् ॥ त्वक्कटूकं च कर्पूरं तुरुष्कश्रीनिवासकम्। स्पृक्का कुंकुमकस्तूरी दद्यादत्रावतारिते ॥ अश्वतैलस्य सिद्धस्य शृणु वीर्यमतः परम्। अश्वानां वातरुग्णानां कुंजराणां तथा नृणाम् ॥ तैलमेतत्प्रयोक्तव्यं सर्ववातविकारनुत्। आयुष्मांश्च नरः पीत्वा निश्चयेन दृढो भवेत् ॥ गर्भमश्वतरी विंद्यात्किं पुनर्मानुषी तथा। हृच्छूलं पार्श्वशूल च तथैवार्धावभेदकम् ॥ अपचीं गंडमालां च वातरक्तं हनुग्रहम्। कामलामश्मरीं पांडुमुन्मादं च नियच्छति ॥ नारायणेन गदितं तैलमेतत्कृपालुना। नारायणमिति ख्यातं नाम्ना तस्मादिदं भुवि ॥

अर्थ-शतावर, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कचूर, खिरेटी, अंडकी जड, कटेरी, बडी कटेरी, कंजा, कसोंदीकी जड, पियावांसेकी जड ये प्रत्येक ४० तोले लेवे. जल ५०२४ तोले

इसमें डालके काढा करे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेय और इसमें पुनर्नवा, वच, दारुहलदी, शतावर, चंदन, काली अगर, शिलाजीत, तगर, कूठ, छोटी इलायची, जटामांसी, तुलसी, खिरेंटीकी जड, असगंध, सैंधानिमक, रास्ना, मंजीठ. नागरमोथा, गठोना, रेणुकबीज, फूलप्रियंगु, स्थौणेय (ग्रंथिपर्णीका भेद) ये प्रत्येक ५ पांच तोले लेवे इनका कल्क, गौका और बकरीका दूध प्रत्येक दो दो सेर, शतावरका रस १ सेर और तेल १ सेर लेवे. इन सबको एकत्र करके तेल सिद्ध करे. फिर उतारके इसमें लौंग, नख, कंकोल, वायविडंग, जीरा, दालचीनी, कुटकी, कपूर, शिलारस, सरलका गोंद, स्पृक्का, केशर, कस्तूरी ये औषध डाले तो यह तेल सिद्ध होवे यह वादीसे पीडित घोडा, हाथी और मनुष्य इनको देनेसे सर्व वातविकार नाश करे. जो पुरुष इसको पीवे तो दीर्घायु होकर बली होय. इस तेलसे घोडीके गर्भ रहे. फिर मनुष्योंकी क्या कहना है यह हृदयशूल, पार्श्वशूल, आधासीसी, अपची, गंडमाला, वातरक्त, हनुग्रह, कामला, पथरी, पांडुरोग, उन्माद इनको नाश करे. यह तेल कृपालु नारायणने कहा है इसी वास्ते इसको नारायणतैल कहते हैं ॥

दूसरा शतावरीतैल ।

रुग्दारु द्रविडी प्रियंगु तगरत्वक्पत्रकौंतीनखैर्मत्सी सर्जरसांबुचंदनवचाशैलेयलामज्जकैः । मंजिष्ठा सरलागुरु द्विपबला रास्ना श्वगंधा वरी वर्षाभूमिसिसिंधुभिश्च सकलैरेभिः पचेत्कल्कितैः॥ तुल्यं गोपयसा वरीरससमं तैलं विपक्कं मृदु स्याद्वातघ्नमिदं नृणामिति वरीतैलं भिषक्पूजितम् ॥

अर्थ—कूठ, दारुहलदी, इलायची, प्रियंगु, तगर, दालचीनी, पत्रज, रेणुकबीज, नख, जटामांसी, सर्जरस, नेत्रवाला, चंदन, वच, शिलाजीत, लामज्जक (पीला सुगंधित तृण), मँजीठ, देवदारु, अगर, नागबला, रास्ना, असगंध, शतावर, पुनर्नवा, सोंफ और सैंधानिमक इनका कल्क करके उसमें शतावरका रस और उतना ही गौका दूध डालके पचन करे तो मनुष्यको उत्तम वातनाशक है. यह वैद्योंकरके पूजित हो गया है ॥

दशमूलादितैल ।

दशमूलकषायविपक्कमथो पयसा च समेन बलाब्दनलैः । त्रुटिचंदनदारुलतानलदेरुणाजतुकुष्ठवचाकुटिलैः ॥ इति

पक्कमिदं तिलजं जयात प्रसभंपवनामयमाशु नृणाम् । बल- शुक्रविभारुचिवह्निकरं नृपवृद्धशिशुप्रमदासु हितम् ॥

अर्थ-दशमूलका काढा और दूध दोनों समान भाग ले. बला, नागरमोथा, तालीसपत्र इलायची, चंदन, दारुहलदी, मालकांगनी, वाला, मँजीठ, लाख, कूठ, वच और तगर, इनका कल्क, तिलोंका तेल इन सबको एकत्र करके पचावे तो तेल सिद्ध होय. यह तेल अपने बलसे संपूर्ण वातरोगोंको नष्ट करे और बल, धातु, कांति, रुचि और अग्नि इनको बढावे तथा राजा, वृद्ध, बाल और स्त्रियोंको हितकारी है ॥

तीसरा प्रसारिणीतेल ।

समूलदलशाखायाः प्रसारण्याः शतत्रयम् । शतमेकं शतावर्या अश्वगंधाशतं तथा ॥ केतकीनां शतं चैकं दशमूलं शतं शतम् । वाटचालकस्यापि शतं शतं सहचरस्तथा॥ जलद्रोण- शतं दत्त्वा शतभागावशेषतः । ततस्तेन कषायेण कषायद्वि- गुणेन च ॥ सुव्यक्तेनारनालेन दधिमंडाढकेन तु । क्षीरशुक्तेक्षु- निर्यासछागमांसरसाढकैः ॥ तैलद्रोणसमायुक्तं दृढे पात्रे निधा- पयेत् । द्रव्याणि यानि क्षेप्याणि तानि वक्ष्याम्यतः परम् ॥ भल्लातकं नतं शुंठी पिप्पली चित्रकं सठी । वचा स्पृक्का प्रसा रिण्या पिप्पलीमूलमेव च ॥ देवदारु शताह्वा च सूक्ष्मेला त्वचफालकम् । कुंकुमं मंदमजिष्ठारुष्करं नखिकागुरु ॥ कर्पूरं कुंदरुनिशालवंगं ध्यामचंदनम् । कंकोलं नलिका मुस्ता का- लियोत्पलपत्रकम् । सठी हरेणुशैलेयं श्रीवासं च सकेतकम् । त्रिफला कच्छुरा भीरु सरलं पद्मकेसरम् ॥ प्रियंगूशीरबलदं जीवकाद्यं पुनर्नवा । दशमूलान गंधं च नागपुष्पं रसांजनम् ॥ कटुका जातिपुन्नागो फलानि सल्लकीरसम् । भागांस्त्रिपलिकान् दत्त्वा शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥ विस्तीर्णे सुदृढे पात्रे पाच्येषा तु प्रसारिणी । प्रयोगः षड्विधश्चात्र रोगार्त्तानां प्रशस्यते ॥ अभ्यं- गात्त्वग्गतं हंति पानात्कोष्ठगतं तथा । भोजनात्सूक्ष्मनाडी-

स्थान्नस्यादूर्ध्वगतांस्तथा ॥ पक्षाश्रयगते बस्तिर्निरूहः सार्वकायिके । एतद्धि बटुकार्तानां किशोराणां यथामृतम् ॥ एतदेव मनुष्याणां कुंजराणां गवामपि । अनेनैव च तैलेन शुष्यमाणा महाद्रुमाः ॥ सिक्ताः पुनः प्ररोहंति भवंति फलशालिनः । वृद्धोप्यनेन तैलेन पुनश्च तरुणायते ॥ न प्रसूयेत या नारी पाययित्वा प्रसूयते । अप्रजाः पुरुषो यस्तु पीत्वाशु लभते सुतम् ॥ अशीतिं वातजान् रोगान् पैत्तिकान् श्लैष्मिकानपि । सन्निपातसमुत्थांश्च नाशयेत्क्षिप्रमेव च ॥ एतेनांधकवृष्णीनां कृतं पुंसवनं महत् । कृत्वा विष्णोर्बलिं चापि तैलमेतत्प्रयोजयेत् ॥

अर्थ–प्रसारणीका पंचांग ३०० तोले, शतावर ४०० तोले असगंध ४०० तोले केतकी ४०० तोले, दशमूलकी औषधि प्रत्येक ४०० तोले, खिरेटी ४०० तोले, पियावांसा ४०० तोले और जल १०० द्रोण लेवे. सबको जलमें डालके काढा करे जब जलका शतांश शेष रहे अर्थात् १०२४ तोले जल बाकी रहे तब उस काढेमें काढेसे दूनी कांजी डाले. दहीका पानी १०२४ तोले, दूध सपेद ईखका रस और बकरेका मांसरस ये प्रत्येक १०२४ तोले और तिलोंका तेल १०२४ तोले डालके फिर उसमें मिलाए, तगर; सोंठ, पीपल, चित्रक, कचूर, वच, मूर्वा, लजालू, पीपरामूल, देवदारु, शतावर, इलायची, दालचीनी, नेत्रवाला, केशर, कस्तूरी, मंजीठ, मिलाए, नखद्रव्य, अगर, कपूर, कुंदरू, हलदी, लौंग, रोहिषतृण, चंदन, कंकोल, नलिका द्रव्य, नागरमोथा, दारुहलदी, कूठ, पत्रज, कचूर, रेणुकबीज, शिलारस, काली अगर, केतकी, हरड, बहेडा आमला, कपूरकचरी, शतावर, सरल, देवदारु, कमलकी केशर, प्रियंगु, खस, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, सपेद मुसली, काली मुसली, पुनर्नवा, दशमूल, लाल बोल, नागकेशर, रसोंत, कुटकी, जाई, पुन्नागके फल, सल्लकीका रस ये प्रत्येक बारह २ तोले लेवे. इन सबका कल्क करके उसमें मिलाय देवे फिर भट्टीपर चढायके मंद २ अग्निसे पचन करे जब सब रस जलके केवल तेलमात्र आय रहे तब उतारके छान लेवे. इसके मालिस करनेसे त्वचागत वात, पीनेसे कोष्ठगत वात, भोजनके साथ सेवन करनेसे नाडीगत, नस्यसे ऊर्ध्वगत, बस्तीद्वारा पक्षाश्रित और निरूहबस्तिद्वारा सर्वांतर्गतवायु इस प्रकार छः प्रकारकी वायुको उपयोगी है. तथा बालक, किशोरोंको अमृतके समान है. तथा यह हाथी घोडा, गौ इनकोभी देवे तथा जो वृक्ष सूख गया हो उसके इसको लगावे तो

फिर उत्तम रीतिसे हरा हो जावे तथा फलपुष्पयुक्त हो. वृद्ध पुरुष इसके लगानेसे तरुण होय. जिसके बालक न होता होय. उसके बालक प्रगट करे. लगानेसे जिसके पुत्र न होता हो वह पीवे तो उसके पुत्र होय, यह वात, पित्त, कफ और सन्निपात संबंधी व्याधिको तत्काल नाश करे. इसी तैलके प्रतापसे अंधक, वृष्णीजातिके याद-वोंको पुत्रोत्पत्ति हुई इस तेलको प्रथम विष्णुबली करके तैयार करे ॥

चौथा प्रसारिणीतैल ।

प्रसारिणीक्राथपयोंबु तक्रं मस्त्वारनालं दधिभिस्तु तैलम् । कल्कीकृतं विश्वघनांबु कुष्ठं मांसी शताह्वामरदारुसेव्यैः ॥ शै-लेन रास्नागुडसारिवाभिः सिंधूत्थबिल्वानिलमंथमोचैः । साम्-ग्लतां सोजपुनर्नवाख्यस्योनाकयष्ट्याह्वकुटंनटेश्च ॥ छिन्नोद्भवा दार्व्यभयाकरंजमेदा निशा द्वे सफलत्रयेश्च । एरंडमेकं कटुजी-विताश्च तत्साधितं हंत्यनिलोत्थरोगान् ॥ सर्वांश्च दीप्तानपि पक्षघातान्वाताश्रितानाहहनुग्रहादीन् । सगृध्रसीविश्वविबाहु-शोषं हृन्मूर्धसंस्थांश्च गदांश्च तांस्तान् ॥ संशुष्कभग्नं प्रबलां-मयाष्टिं योसाध्यतामुल्बणमारुतेन । नीतः पुमांस्तस्य भवेद-वश्यं प्रसारिणीतैलमिदं हिताय ॥

अर्थ-प्रसारणीका काढा, दूध, छाछ, दहीका जल, कांजी, दही और तेल ऐसे एकत्र करे फिर सोंठ, नागरमोथा, नेत्रवाला, कूठ, जटामांसी, शतावर, देवदारु, खस, शिलाजीत, रास्ना, गुड, सारिवा, सैंधानिमक, बेलगिरी, अंडकी जड, मोचरस, मुद्गप-र्णी, पुनर्नवा, रुद्राक्ष, अमलतासका गूदा, मुलहठी, टेंटू, गिलोय, दारुहलदी, हरड, कंजा, मेदा, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आमला, अंडी और चित्रक इनका कल्क करके तेल सिद्ध करे यह वातरोग, संपूर्ण पक्षवात, वातसंबंधी व्याधि, अफरा, हनुग्रह, गृध्रसी, विश्वाची, अपबाहुक, शोष और हृदय मस्तक इनके रोग, शुष्कवात, भग्नवात और मोडनेवाली वात तथा उल्बण वात रोग इन पर हितकारी है ॥

पंचम प्रसारिणीतैल ।

चतुःप्रस्थं प्रसारिण्याः पचेत्तोयार्मणे शुभे । पादे शिष्टे समं तैलं दधि दद्यात्सकांजिकम् ॥ द्विगुणं च पयो दद्यादन्येषां क-ल्ककांस्तथा । चित्रकं पिप्पलीमूलं मधुकं सैंधवं वचा ॥ शत-

पुष्पा देवदारु रास्ना वारणापिप्पली । प्रसारिण्याश्च मूलानि मांसीभल्लातकानि च ॥ पचेन्मृद्वग्निना तैलं वातश्लेष्मामयाञ्जयेत् । अशीतिर्नरनार्युत्थान्वातरोगान्व्यपोहति ॥ कुब्जं स्तिमितपंगुं च गृध्रसीं खंडकार्दितम् । हनुपृष्ठशिरोग्रीवास्तंभं चापि नियच्छति ॥

अर्थ—प्रसारणी २५६ तोलेको १०२४ तोले जलमें काढा करे. जब चतुर्थांश रहे तब उसके समान भाग तेल, दही, कांजी ये मिलायके दूधके काढेसे दूना डाले और चित्रक, पीपरामूल, मुलहठी, सैंधानिमक, सौंफ, देवदारु, रास्ना, गजपीपल, प्रसारणीकी जड, जटामांसी और भिलाए इनका कल्क डालके तैलको सिद्ध करे यह वातके रोग स्त्रियोंके और पुरुषोंके वातके रोग इनको नाश करे ॥

छठा विषगर्भतैल ।

विषं च पुष्करं कुष्ठं वचा भार्ङ्गी शतावरी । शुंठी हरिद्रा लशुनं विडंगं देवदारु च ॥ अश्वगंधाजमोदा च मरिचं ग्रंथिकं बला । रास्ना प्रसारिणी शिग्रु गुडूची हपुषाभया ॥ दशमूलानि निर्गुंडी मिशी पाठा च वानरी । निशाला शतपुष्पा च प्रत्येकं पलिकानिमान् ॥ चतुर्गुणे जले पक्त्वा पादशेषं समुद्धरेत् । पलमेकं विषं चात्र सूक्ष्मं कृत्वा विनिक्षिपेत् ॥ सर्वेषु वातरोगेषु सदाभ्यंगो विधीयते । संधिवाते सन्निपाते त्रिकपृष्ठकटिग्रहे ॥ पक्षाघाते तथार्धांगे गात्रकंपेतिदारुणे । कुब्जके च धनुर्वाते गृध्रस्यां चापतानके ॥ विषगर्भमिदं तैलं योजनीयं सदा बुधैः ॥

अर्थ—सिंगियाविष, पुहकरमूल, कूठ, वच, भारंगी, शतावर, सोंठ, हलदी, लहसन, वायविडंग, देवदारु, असगंध, अजमोद, काली मिरच, पीपरामूल, खिरेटी, रास्ना, प्रसारणी, सहजनेकी छाल, गिलोय, हंसपदी, हरड, दशमूल, निर्गुंडी, कलौंजी, पाढ, कौंचके बीज, इन्द्रायन और सोंफ ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. इनको चौगुने जलमें डालके काढा करे. जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेय. फिर इसमें सिंगिया विष ४ तोलेको बारीक करके डाले और तेल मिलायके सिद्ध करे, इसका संपूर्ण वातरोगोंपर मालिस करे तो संधिवात, सन्निपात, त्रिकग्रह, पृष्ठग्रह, कटिग्रह, पक्षाघात, अर्द्धांग, कंप, कुब्जक, धनुर्वात, गृध्रसी और अपतानक इनको नाश करे, इसको विषगर्भतैल कहते हैं ॥

सातवां विषगर्भतैल ।

निर्गुंडिकारसप्रस्थं प्रस्थमार्कवजाद्रसात् । रसो धत्तूरजः प्रस्थो गोमूत्रं प्रस्थसंमितम् ॥ वचा कुष्ठं हेमबीजं तेजोह्वा कट्फलं तथा । पलार्धांशानि सर्वैस्तु वत्सनागः समो मतः ॥ तैलप्रस्थं पचेद्युक्त्या वातरोगेषु शस्यते । हेमंते हरिणाक्षीणां गाढमालिंगनं तथा ॥

अर्थ–निर्गुंडीका रस, भांगरेका रस, धतूरेका रस, गोमूत्र ये प्रत्येक ६४ तोले लेवे और वच, कूठ, धतूरेके बीज, कांगनीके बीज और कायफल ये प्रत्येक औषध दो दो तोले लेय तथा वच्छनाग विष सबके समान भाग लेकर डाले इनके काढेमें तथा कल्कमें तिलका तैल ६४ तोले डालके युक्तिसे पचावे तो यह वातव्याधिको दूर करे ॥

दार्व्यादितैल ।

दारु कुष्ठं कणा रास्ना विश्वाग्निबृहतीपुरम् । भागोत्तरमिदं सर्वं रंभानिर्यासपाचितम् । संक्वाथ्य दुग्धतैलाभ्यां पक्वस्याभ्यंगतो ध्रुवम् । सर्वे वाता विनश्यंति प्रत्यंगं भंगकारिणः ॥

अर्थ–देवदारु, कूठ, पीपल, रास्ना, सोंठ, चित्रक, कटेरी और गूगल भागवृद्धिके क्रमसे लेकर काढा करे. फिर केलेका रस, दूध और तेल इनको एकत्र करके तैल बनावे. इस तेलकी मालिस करनेसे संपूर्ण वातके रोग दूर होवें ॥

दशमूलतैल ।

श्रीपर्णी वह्निमंथश्च बिल्वः स्योनाकपाटला । गोक्षुरः शालिपर्णी च बृहती कंटकारिका ॥ पृष्ठिपर्णी च एतेषां दशमूलानि तद्युतमम् । तैलं पक्वं प्रलेपेन हंति वातानानेकधा ॥

अर्थ–कंभारी, अरनी, बेल, टेंटू, पाटल, गोखरू, शालपर्णी, बडी कटेरी, छोटी कटेरी और पृष्ठपर्णी इन दश औषधोंकी जडका काढा अथवा कल्कमें तेल डालके सिद्ध करे. इसकी मालिस देहमें करे तो अनेक प्रकारके वायुरोग नाश करे ॥

चरणेरंडवातारिमुंडिशिग्रु शतावरी । कांडवेली बृहत्यो द्वे नागकर्णी शिफा दश ॥ एषां तैलप्रलेपेन त्वगस्थिस्नायुसंभवम् । सर्वांगकुपितो वायुर्विनश्यति हि वेगतः ॥

अर्थ-अंडकी जड, निर्गुंडीका रस, मुंडी, सहजनेकी जड, शतावर, कोडवेल, कटेरी, बडी कटेरी तथा लाल अंडकी जड ये प्रत्येक दश २ तोले लेवे. इनके काढेमें तिलोंका तेल डालके सिद्ध करे. इसकी मालिस करे तो त्वचा, हाड, वायु और सर्वांगमें कुपित वातका नाश होय ॥

ज्योतिष्मती चंद्रसूरा कलाजाजी यवानिका । मेथी तिलांश्च संपिष्य यंत्रे तैलं समुद्धरेत् ॥ अभ्यंगान्मारुतव्याधिं समस्तं संप्रणाशयेत् ॥

अर्थ-मालकांगनी, हालो, काला जीरा, अजमायन, मेथी और तिल इनका चूर्ण करके इसको यंत्रमें डालके तेल काढे और अंगमें लगावे तो सर्व वातव्याधियोंका नाश करे ॥

लघुमाषादितैल ।

माषसिंधुबलारास्नादशमूलकहिंगुभिः ।
वचाशतजटाख्याभिः सिद्धं तैलं सनागरम् ॥

अर्थ-उडद, सैंधानिमक, खिरेटी, दशमूल, हींग, वच, शतावर और सोंठ इन सबका कल्क कर तेल डालके सिद्ध करे तो यह तैल सर्ववातनाशक होय है ॥

विजयभैरवतैल ।

रसं गंधं शिलां तालं सर्वं कुर्यात्समांशकम् । चूर्णयित्वा ततः श्लक्ष्णमारनालेन पेषयेत् ॥ तेन कल्केन संलिप्य सूक्ष्मवस्त्रं ततः परम् । तैलाक्तां कारयेद्वर्तिमूर्ध्वभागे च वापयेत् ॥ वर्त्यधः स्थापयेत्पात्रं तैलं पतति शोभनम् । लेपयेत्तेन गात्राणि भक्षणाय च दापयेत् ॥ नाशयेत्तत्सुखं तैलं वातरोगानशेषतः । बाहुकंपं शिरःकंपं जंघाकंपं ततः परम् ॥ एकांगं च तथा वातं हंति लेपान्न संशयः । रोगशांत्यै प्रदातव्यं तैलं विजयभैरवम् ॥ द्रव्यतस्तिलजं तैलं दातव्यं च चतुर्गुणम् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, मनासिल और हरताल ये सब समान भाग लेकर इनका बारीक चूर्ण करे और कांजीमें पीसके इस कल्कको बारीक वस्त्रपर लेप कर देवे. फिर उस कपडेको सुखायके बत्ती बनावे. उस बत्तीको पारे आदि द्रव्योंसे चौगुने तेलमें डुबोकर औंधी कर देवे और आग जलाय देवे तो उस बत्तीमेंसे तेल टपक २ कर नीचेके

पात्रमें गिरेगा. इस तेलको देहमें मालिस करनेसे अथवा खानेसे अनेक वातव्याधि, बाहुकंप, शिरःकंप, जंघाकंप तथा एकांगवात इनको नाश करे. इसको विजयभैरव तेल कहते हैं ॥

दूसरा प्रसारिणीतैल ।

समूलपत्रामुत्पाद्य शरत्काले प्रसारिणीम् । शतं वाट्यालकांतं द्वे शतावर्याः शतं तथा ॥ बलाश्वगंधात्मगुप्ता केतकीनां शतं शतम् । चतुर्द्रोणेन तोयेन द्रव्यैस्तैलाढकं पचेत्॥ मस्तुमांसरसैर्युक्तं दधि दुग्धं तथाऽकम् । एतैः सर्वैः समायुक्तं पाचयेन्मृदुनाग्निना॥ द्रव्याणां च प्रदातव्या मात्रा चार्धपलोन्मिता । तगरं मदनं कुष्ठं केसरं मुस्तकं वचा ॥ रास्नासैंधवपिप्पल्यो मांसीमंजिष्ठयष्टिका । जीवकर्षभकौ मेदा महामेदा तथा नतम् ॥ शतपुष्पा व्याघ्रनखं शुंठी देवाह्वमेव च । कांकोली क्षीरकांकोली बला भल्लातकं तथा ॥ पेषयित्वा समं चैतान्साधनीया प्रसारिणी । नातिसिद्धं नातिपक्कं सिद्धं पूतं निधापयेत् ॥ यत्र यत्र प्रदातव्यं तन्मे निगदतः शृणु । कुब्जानामथ पंगूनामवतानां तथैव च ॥ यस्य शुष्यति चैकांगं ये च भग्नास्थिसंधिजाः । वातशोणितदुष्टानां वातोपहतचेतसाम् ॥ स्त्रीभिश्च क्षीणशुक्राणां वाजीकरणमुत्तमम् । पाने बस्तौ यथाभ्यंगे भोज्ये चैव प्रदापयेत् ॥ प्रयुक्तं शमयत्याशु वातजान्विविधान् गदान् ॥

अर्थ-शरदृऋतुमें प्रसारणीका पंचाग ४०० तोले लेवे और महाबला ४०० तोले, शतावर ८०० तोले तथा खिरेंटीकी जड, असगंध, कौंचके बीज और केतकी ये प्रत्येक चार २ सौ तोले लेवे. इनको ९०९६ तोले जलमें डालके काढा करे उसमें २५६ तोले तेल और दहीका पानी, मांसरस, दही और दूध ये प्रत्येक २५६ तोले और तगर, मैनफल, कूठ, नागकेशर, नागरमोथा, वच, रास्ना, सैंधानिमक, पीपल, मंजीठ, मुलहठी, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, छड, सोंफ, थूहर, सोंठ, देवदारु, कांकोली, क्षीरकांकोली खिरेंटी और भिलाए ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. सबका कल्क करके उस तेलमें डाल देवे फिर इसको न अधिक पक हो न न्यून ऐसे मध्य प्रकारसे मंदाग्निपर तैल सिद्ध करे यह तैल कुब्जवात, पंगुवात,

धनुर्वात, शुष्कांगवात, संधिभग्नवात, वातरक्त और वादी इनको नाश करे तथा क्षीणशुक्रवालोंको स्त्रीप्रसंगमें उत्तम वाजीकरण करता है. इसको पीना, बस्तिकर्म, मालिस और भोजनमें देवे तो शीघ्र सर्व प्रकारकी वादियोंको शमन करे इसमें संदेह नहीं है ॥

व्याघ्रतैल।

व्याघ्रं शिरः समादाय कुट्टयित्वा जले बहु । क्वाथ्य पादावशेषं तु रसं नीत्वा सुगालितम् ॥ तैलमर्धजलं दत्त्वा छागगव्यपयोन्वितम् । मदिरा मस्तु धान्याम्लं तैलमानेन दापयेत् ॥ दत्त्वा कटाहे सुदृढे पचेत्पाकविधानतः । द्रव्याण्येतानि मतिमान् पादमानेन दापयेत् ॥ देवदारु वचा कुष्ठं तगरं चंदनं घनम् । मंजिष्ठा पौष्करं रास्ना चतुर्जातं च सैंधवम् ॥ पिप्पली मरिचं शुंठी मांसी सहचरं जलम् । अश्वगंधात्मगुप्ता च चित्रकं वंशजं बरी ॥ श्वदंष्ट्रा केतकी मूर्वा यष्टी मधुगिरेर्मृदा । जातीफलं च सुमनः पत्रिकं कटुरोहिणी ॥ ग्रंथिकं शुक्ककंदा च शतपुष्पा पुनर्नवा । जीवनीयो गणश्चैव रालं बोलं सकेसरम् ॥ नखं च कृष्णसारं च वत्सनागं सुचूर्णितम् । अस्य तैलस्य पक्वस्य शृणु वीर्यमतः परम् ॥ अशीतिवातजान् रोगान् हन्यादाशु जरामपि । अश्वानां वातभग्नानां गजानां शुष्यतामपि ॥ वृष्यं तुष्टिप्रदं पुष्टिमेधाग्निबलवर्धनम् । श्रुतिभ्रंशे खंजवाते क्रोष्टुशीर्षे कटिग्रहे ॥ मन्यास्तंभे हनुस्तंभे वाते मेदस्तथांतरे । वंध्यानां पुत्रजननं षंढानां कामवर्धनम् ॥ आश्विभ्यां निर्मितं चैतत्प्रजानां हितकाम्यया । अनेनैव विधानेन मृताक्षं विपचेद्भिषक् ॥

अर्थ-व्याघ्र (बघेरे) के सिरको कूटकर उसको जलमें औटावे फिर उसका चतुर्थांश काढा हो जावे तब उसको छान लेवे फिर जलमें उस जलसे आधा तेल डालके बकरी और गौ इनका दूध, मद्य, दहीका पानी, कांजी ये सब तेलके बराबर मिलावे. फिर कढाईमें चढायके देवदारु, वच, कूठ, तगर, चंदन, नागरमोथा, मंजीठ, पुहकरमूल, रास्ना, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, सैंधानिमक, पीपल, मिरच, सोंठ, जटामांसी, पियावांसा, नेत्रवाला असगंध, कौंचके-

बीज, चित्रक, वंशलोचन, शतावर, गोखरू, केतकी, मूर्वा, मुलहठी, गेरू, जायफल, लौंग, तेजपात, कुटकी, पीपरामूल, सफेद अतीस, सोंफ, पुनर्नवा, जीवनीय गणकी संपूर्ण औषध, राल, बोल, नागकेशर, नख, काली अगर और वच्छनाग, विष इनका कल्क तैलका चतुर्थांश लेवे. सबको एकत्र कर मंदाग्निपर रखके परिपक्क करे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके किसी उत्तम शीशी आदिमें भरके धर रखे. यह अस्सी प्रकारकी वायु तथा वृद्धपना इनको नाश करे. तथा वायुसे जकडे हुए घोडे, सूखे हाथी इनको देवे तो वह वृष्य, तुष्टि, पुष्टि, बुद्धि और अग्निबल इनको बढावे और यह श्रुतिभ्रंश, खंजवात, क्रोष्टुशीर्ष, कटिग्रह, मन्यास्तंभ, हनुस्तंभ, तथा स्वेदगत वायु इन सबको तथा वंध्यास्त्रीको पुत्र देवे. षंढ (नपुंसक) को कामबुद्धि करे, यह व्याघ्र तैल लोकहितार्थ अश्विनीकुमारोंने उत्पन्न करा इसी प्रकार मृत रीछका भी तेल बनावे ॥

महाबलातैल ।

बलामूलकषायस्य दशमूलीशृतस्य च । यवकोलकुलित्थानां क्काथस्य पयसस्तथा ॥ अष्टावष्टौ शुभान्भागान् तैलादन्यं तदेकतः । पचेदावाप्य मधुरं गणं सैंधवसंयुतम् ॥ तथागुरुं सर्जरसं सरलं देवदारु च । मंजिष्ठा चंदनं कोष्ठमेला कोलांजनं वरा ॥ मांसी शैलेयकं पत्रं तगरं सारिवा वचा । शतावरीमश्वगंधं शतपुष्पा पुनर्नवा ॥ तत्साधु सिद्धं सौवर्णे राजते वाथ मृन्मये । प्रक्षिप्य सकलं सम्यक् सुगुप्तं स्थापयेद्बुधः ॥ बलातैलमिदं ख्यातं सर्ववातविकारनुत् । यथाबलं भिषङ्मात्रां सूतिकायै प्रदापयेत् ॥ या च गर्भार्थिनी नारी क्षीणशुक्रश्च यः पुमान् । क्षीणे वाते मर्महते मथिते पीडिते तथा ॥ भग्नेऽस्थिन्यभिपन्ने च सर्वथैव प्रयोजयेत् । सर्वानाक्षेपकादींश्च वातव्याधीन्व्यपोहति ॥ प्रत्युग्रधातुपुरुषो भवेच्च स्थिरयौवनः । राज्ञामेताद्धि कर्तव्यं राजमान्यैस्तथा नरैः ॥

अर्थ-खिरेटीकी जडका काढा तथा दशमूलका काढा और जौ, बेर तथा कुलथी इनका काढा और दूध इन प्रत्येकके आठ २ भाग ले. तैल १, मधुरगण और सैंधानिमक डालके फिर अगर, राल, सरल, देवदारु, मंजीठ, चंदन, कूठ,

इलायची, बेर, अंजनवृक्ष, हरड, बहेडा, आंवला, जटामांसी, शिलारस, तमालपत्र, तगर, सारिवा, वच, शतावर, असगंध, सोंफ और पुनर्नवा इनका कल्क डालके तैलको पचावे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके किसी उत्तम सोने, चांदीके मिट्टीके पात्रमें भरके बडे यत्नसे धर रखे. यह महाबलातैल संपूर्ण वातविकारोंका नाश करे. इसको प्रसूतास्त्रीका बलाबल विचारके मात्रा देवे. तथा धातुक्षीण पुरुष, क्षयी, वमन कराया हुआ, मर्ममें जिसके चोट लगी हो, हत, मथित, पीडित, हड्डी टूटा हुआ ऐसे रोगियोंको देवे. यह संपूर्ण आक्षेपकादि वादियोंको नाश करे, तथा इसका सेवन करनेसे धातुपुष्ट और तरुणता होती है. यह तेल राजाको अथवा राजमान्य पुरुष (सेठ, साहूकारों) को बनावे ॥

दूसरा शतावरीतैल ।

बह्वंघ्रिकामूलरसोऽथ तैलं दुग्धं पलं प्रस्थयुतं क्रमेण । सश्वेतपुष्पा नवदेवदारु शैलेयमांसीमिलितं समांशम् ॥ तैलावशेषं कथितं समस्तं नारायणं तैलमिदं वदंति । नानानिलापीडितमानुषाणामभ्यंगयोगाद्धितमेतदेव ॥

अर्थ–शतावरकी जडका रस, तेल और दूध ये प्रत्येक ६४ तोले लेवे और वरना, टेंटू, देवदारु, शिलाजीत और जटामांसी ये प्रत्येक चार २ तोले ले कल्क करके तेलमें मिलाय तेल सिद्ध करे. इसको नारायण तैल कहते हैं. यह अनेक प्रकारके वातव्याधिपर मालिस करनेसे हितकारी होवे ॥

तीसरा प्रकार ।

दुग्धं प्रस्थद्वयं तैलमेकप्रस्थं तथा रसम् । शतावरी वचा कुष्ठं चंदनं देवदारु च ॥ कांकोली घिंटुला रास्ना मंजिष्ठैलारुदंतिका । शैलेयमश्वगंधा च मांसी चिकणिका खिलम् ॥ अर्धार्धपलमानं स्यात्पक्वं मृद्वग्निना शनैः । एकांगयुग्मभग्नास्थिभग्नसंधिं तृषां तथा ॥ कुब्जवामनपंगूनां पानादभ्यंगतस्तथा । वातान्नानाविधान्हंति तैलमेतन्न संशयः ॥ शतावरीतैलमिदं प्रोक्तं बुद्धिविशारदैः ॥

अर्थ–दूध १२८ तोले, तेल ६४ तोले और शतावरका रस ६४ तोले तथा वच, कूठ, चंदन, देवदारु, काकोली, घिंटुली, रास्ना, मँजीठ, इलायची, रुदंती, शिला-

जीत, असगंध, जटामांसी और खिरेटी ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. इनका काढा अथवा कल्क करके अर्ध २ पल डालके मंदाग्निसे पचन करावे तो एकांगगत वात, सर्वांगगत वात, भग्नास्थि, संधिभग्न, तृषा, कुब्जवात, वामनत्व तथा पंगुवात इनके पीनेसे तथा अभ्यंग करनेसे नाश होय. यह शतावरी तैल अनेक प्रकारके वायुको नाश करे ॥

चौथा प्रकार।

शतावरीजातरसं गृह्णीयाद्यंत्रपीडितम् । प्रभूतं तद्रसं लीढ्वा तैलस्याढकमेव च ॥ दधिक्षीरेण विपचेत् द्रव्याण्येतानि दापयेत् । शतपुष्पा वचा कुष्ठमांसीशैलेयचंदनैः ॥ प्रियंगु पद्मकं मुस्तं ह्रीबेरोशीरकट्फलम् । सैंधवं मधुकं लोध्रं व्रणेयककुचंदनम् ॥ चंडा एला मुरा स्पृक्का नालिकं पद्मकेशरम् श्रीवेष्टकं सर्जरसं जीवकर्षभकौ सठी ॥ पतंगरेणुका दार्वी कर्चूरं सारिवा तथा । मंजिष्ठा मधुकं चैव द्रव्यैरेतैः पलोन्मितैः ॥ मध्यपादं विजानीयात्तत्र तदवतारयेत् । पथ्ये पाने तथाभ्यंगे नस्ये भोज्ये च दापयेत् ॥ पीड्यमाने तथा वायौ पक्षाघाताधिमंथके । अर्दिते कर्णशूले च ऊरुस्तंभे कटिग्रहे ॥ पतने च शिरःकंपे सूतिकायां प्रदापयेत् । मन्यास्तंभे धनुःकंपे अस्थिभंगे च दारुणे ॥ तथा सर्वांगगे वायौ शुष्यमाणेषु धातुषु । अनार्तक्षीणरेतस्सु वंध्यायां गर्भिणीषु च ॥ वृष्यं पुनर्नवकरं बल्यमारोग्यदं महत् । शतावरीतैलमिदं सर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ-शतावरकी जडका यंत्रमें निकाला रस बहुतसा लेकर उसमें २५६ तोले, तेल, दही, दूध और वच, कूठ, जटामांसी, शिलाजीत, चंदन, प्रियंगु, पद्माख, मोथा, नेत्रवाला, खस, कायफल, सैंधानिमक, मुलहठी, लोध, कलियारी, लालचंदन, मूषाकर्णी, इलायची, एकांगीमुरा, स्पृक्का, भसीडा, कमलकी केशर, श्रीवेष्टक (धूप) राल, जीवक, ऋषभक, कचूर, पतंग, रेणुकबीज, दारुहलदी, कचूर, सारिवा, मंजीठ, मुलहठी ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. इनका कल्क अथवा काढेको मिलायके मध्यम भावसे तैल सिद्ध करे. यह तेल वादीकी पीडाको, पक्षाघात, अधिमंथ, अर्दित, कर्णशूल, ऊरुस्तंभ, कटिग्रह, कंपवायु प्रसूत, मन्यास्तंभ, धनुर्वात, कंपवात, अस्थिभंग,

सर्वांगवात, धातुका सूखना, धातु क्षीणत्व तथा वंध्यात्व इनपर पथ्यके साथ पीनेसे देहमें मालिस करनेसे नस्य और भोजन इनमें देवे तथा यह शतावरीतैल वृष्य, वयस्थापकबल और आरोग्यका देनेवाला तथा गर्भिणीको हितकारी है ॥

चंदनादितैल ।

चंदनं पद्मकं कुष्ठमुशीरं देवदारु च । नागकेसरपत्रैलात्वङ्मांसी तगरं जलम् ॥ जातीफलं घोटफलं कुंकुमं जातिपत्रिका । नखं कुंदरु कस्तूरी चंडा शैलेयमार्द्रकम् ॥ पतंगं पुष्करं मुस्ता रक्तचंदनसारिवा । सठा कर्पूरमंजिष्ठा लाक्षा यष्टिप्रियंगुभिः ॥ शतपुष्पा वरी मूर्वा अश्वगंधा महौषधम् । पद्मकेसरश्रीवेष्टरसागरुहरेणुभिः ॥ स्पृक्कालवंगकंकोलद्रव्यैरेभिर्द्विकार्षिकैः । दशमूलकषायस्य षड् भागाः पयसस्तथा ॥ यवकोलकुलित्थानां बलामूलस्य चैकतः । निक्काथ्य काथो भागश्च तैलस्य च चतुर्दश ॥ ततः पक्कं विजानीयात् क्षिप्रं तदवतारयेत् । शुभे पात्रे विनिक्षिप्य्यमौषधैः ससुगंधिभिः ॥ प्रातिवासं ततः कार्यमेषां संयोजने विधिः । प्रायोऽयं सुकुमारीणामीश्वराणां सुखात्मनाम् ॥ स्त्रीणां स्त्रीवृंदगर्भाणामलक्ष्मीकलिनाशनम् । अशीतिं वातजान्रोगान्वातरक्तं विशेषतः ॥ सूतिकाबालमर्मास्थिहतक्षीणेषु पूजितम् । जीर्णज्वरं सदाहं वा शीतं वा विषमज्वरम् ॥ शोषापस्मारकुष्ठघ्नं वंध्यायां च सुखप्रदम् । व्याधितानां हितार्थाय ये तु कंडूतिपीडिताः ॥ विशेषाद्रूक्षदेहानां श्वित्रिणां च विशेषतः । सर्वकालप्रयोगेण कांतिलावण्यपुष्टिदम् ॥ विनिर्मितमिदं तैलमात्रेयेण महर्षिणा । न चास्मात्सहसा रोगः प्रभवत्यूर्ध्वजत्रुजः ॥ अस्य प्रयोगात्तैलस्य जरा न लभते नरम् । चंदनाद्यमिदं तैलं लोकानां च हितं मतम् ॥

अर्थ--चंदन, पद्माख, कूठ, खस, देवदारु, नागकेशर, पत्रज, इलायची, तज, जटामांसी, तगर, नेत्रवाला, जायफल, घोटफल, केशर, जावित्री, नख, कुंदरू, कस्तूरी, अजमा-

यन, पत्थरका फूल, अदरखका रस, पतंग, पुहकरमूल, नागरमोथा, लाल चंदन, सारिवा, कचूर, कपूर, मंजीठ, लाख, मुलहठी, कुटकी, सौंफ, शतावर, मूर्वा, असगंध, सोंठ, कमलकी केशर, श्रीवेष्ट, पाढ, काली अगर, रेणुकबीज, स्पृक्का, लौंग और कंकोल ये प्रत्येक दो दो तोले लेय. इनके काढेमें दशमूलका काढा छः भाग, दूध ६ भाग और जौ, बेर, कुलथी और खिरेटी ये एक एक भाग. तथा काढेका चौथा भाग तेल. डाले सबको एकत्र कर अग्निपर पचन करे तो यह तैल सिद्ध होय. इसको उतारके उत्तम पात्रमें भरके रख देवे बहुधा यह चंदनादि तैल सुकुमार, धनाढ्य (सेठ साहूकार) और सुखी मनुष्योंको, स्त्रियोंको तथा स्त्रियोंके गर्भके विषयमें उत्तम है. यह अस्सी प्रकारके वातरोग, वातरक्त, प्रसूतरोग, बालक, मर्महत, अस्थी जिसकी टूट गई हों और क्षीण इनको हितकारी है, तथा जीर्णज्वर, दाहज्वर, शीतज्वर, विषमज्वर, शोष, मृगी और कुष्ठ इनको नाश करे. तथा वंध्या स्त्रियोंको हितकारी, व्याधि, खुजली, देहकी रूक्षता और सपेद कोढवाला इनको विशेष करके हितकारक है. इसका सर्वकाल उपयोग करनेसे लावण्य और पुष्टि इनको देवे. यह आत्रेय ऋषिने निर्माण करा है इस तेलके सेवन करनेसे गरदनके ऊपरके भागके रोग और बुढापा ये कदाचित् नहीं होते. यह लोकोंको परमाहितकारी है ॥

माषादितैल ।

माषस्यार्द्धाढकं देयं तुलार्द्धं दशमूलतः । पलानि छागमांसस्य त्रिंशद्द्रोणेंऽभसः पचेत् ॥ चतुर्भागावशेषं तं कषायमवतारयेत् । प्रस्थे द्वे तिलतैलस्य पयो दद्याच्चतुर्गुणम् ॥ जीवनीयानि मंजिष्ठचव्यचित्रककट्फलम् । सव्योषं पिप्पलीमूलं रास्नामलकगोक्षुरम् ॥ आत्मगुप्ता तथैरंडः शताह्वा लवणत्रयम् । देवदार्वमृता कुष्ठमश्वगंधा वचा शठी ॥ एतैरक्षमितैः कल्कैः पाचयेन्मृदुनाग्निना । पक्षाघातार्दिते पुंसि हनुस्तंभे तथार्दिते ॥ कर्णशूले शिरःशूले तिमिरे च त्रिदोषजे । पाणिपादशिरोग्रीवाश्रवणे मंद एव च ॥ कलायखंजे पंगौ च गृध्रस्यामपबाहुके । पाने बस्तौ तथाभ्यंगे नस्ये कर्णादिपूरणे ॥ तैलमेतत्प्रशंसंति सर्ववातविकारनुत् । महामाषादिनामेदं भाषितं मुनिभिः पुरा ॥

अर्थ–उडद १२८ तोले, दशमूल ५१२ तोले, मेंढेका मांस १२० तोले इनको १०२४ तोले जलमें डालके काढा करे. जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे.

फिर इसमें तिलीका तेल १२८ तोले, दूध २५६ तोले, जीवनीयगणकी औषधी, मंजीठ, चव्य, चित्रक, कायफल, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपलामूल, रास्ना, आमले, गोखरू, कौंचके बीज, अंडकी जड, शतावर, सैंधानिमक, बिड, कचियानिमक, देवदारु, गिलोय, कूठ, असगंध, वच और कचूर ये प्रत्येक औषध एक २ तोला ले इनका कल्क करके इसको तेलमें मिलाय देवे. फिर इसको मंदाग्निपर रखके पचन करे तो यह तेल सिद्ध होय यह पक्षाघातसे पीडित रोगीको हितकारी है. तथा हनुस्तंभ, अर्दितरोग, कर्णशूल, मस्तकशूल, त्रिदोष, तिमिर, हाथ, पैर, मस्तक, मन्या, कानका बाधिरपना, कलायखंज, पंगुवात, गृध्रसी और अपबाहुक इनपर हितकारी है तथा यह पीनेमें बस्तिकर्म, अभ्यंग, नस्य और कानम डालना इनमें इस तेलकी बहुत प्रशंसा करते हैं यह संपूर्ण वातविकारनाशक है.यह महामाषादिनामक तेल पहले मुनियोंने कहा है॥

महानारायणतैल ।

तिलतैलं समादाय चतुराढकसंमितम् । पंचपल्लवकल्केन शोधयेद्दोषशांतये ॥ तत्राजं दुग्धमथवा गव्यं तैलसमं पचेत् । शतावरीरसं चापि तैलतुल्यं पचेद्भिषक् ॥ दशमूली बला रास्ना शिग्रूत्पलपुनर्नवाः । शेफालिका नागबलातिबला च प्रसारिणी ॥ अश्वगंधासहचरौ दर्भमूलं करंजकः । खादिरश्चंदनो लोध्रं वचाशनपलांशकम् ॥ ककुभैरंडवरुणशाल्युग्मकटंभराः । शिरीषः शिखरी वासा हिंस्राजंबु बिभीतकम् ॥ कांचनारः कपित्थश्च पारिभद्रः प्रियालकम् । पाषाणभेदसंपाकदुग्धिका दाडिमीफलम् ॥ उदुंबरः सप्तला च कन्यका मालती त्वचा । माधवी नरमूलं च यवकोलकुलत्थकम्॥ आत्मगुप्तार्ककार्पासबीजं वत्सादनी स्नुही । केतकी मूलधत्तूरलांगली गर्दभांडकम् ॥ चित्रकं च महानिंबं पंचवल्कलमेव च । मुंडी टंकारिमुसली हंसपादी विशल्यकम् ॥ एषां दश पलान् भागान् वारिण्यष्टगुणे पचेत् । पादशेषं परिस्राव्य तत्र तैलं पुनः पचेत् ॥ छागो मेषश्च हरिण एणश्च बहुशृंगकः । शशः शल्यः शिवा गोधा सिंहो व्याघ्रश्च भल्लुकः ॥ वन्यो वराहः खड्गी च महिषो घोटकस्तथा ।

कपिर्बभ्रुर्बिडालश्च मूषकश्चोरुदर्दुरः ॥ वर्तिकास्तित्तिरिर्लावः खंजरीटश्चकोरकः । उलूको नीलकंठश्च वनकुक्कुट एव च ॥ गृध्रश्च गरुडो हंसश्चक्रः कारंडवोऽपि च । कपोतः सारसः क्रौंचो वन्यः पारावतस्तथा ॥ रोहितो मद्गुरश्चापि शिलींध्रः शृंगकस्तथा । इल्लिसो गर्गरो वर्मिः कथिका कविकापि च ॥ महामत्स्यः कच्छपश्च शिशुमारश्च सांकुचिः । मकरो घंटिकाकारस्तदलाभे तु गोधिका ॥ यथालाभममीषां च क्राथं तैलसमं पचेत् । रास्नाश्वगंधा मिशिदारु कुष्ठपर्णी चतुष्कागुरुकेसराणि ॥ सिंधूत्थमांसी नीद्वयं च शैलेयकं पुष्करचंदनं च । एला सयष्टी तगराब्दपत्रं नृगोष्ठवर्गस्तु वचा पलाशी ॥ स्थौणेयवृश्चीवकचोरकाख्यं मूर्वा त्वचं कट्फलपद्मकं च । मृणालजातीफलकेतकाख्यं सनागपुष्पं सरलं मुरा च ॥ जीवंतिकोशीरवरास्तथैव दुरालभा वानरिका नखश्च । कैवर्तमुस्तार्जुनातिक्तकं च वातामखर्जूरकतुंबराश्च ॥ सधातकीग्रंथिकपर्पटाश्च पटोलहेमाह्वजयंतिका च । त्रायंतिकालंबुषशक्रबीजरसांजनाभात्रिवृतारुणाश्च ॥ द्राक्षाकणाद्रोणपुनर्नवाश्च कौंती कृमिघ्नो हयमारकश्च । नीलोत्पलं पद्मककारवीभ्यां रंभानलो गोक्षुरकः क्षुरश्च ॥ कंकोलकालीयकुसुंभपुष्पं तुरुष्ककाश्मीरकसिक्थकं च । लवंगकर्पूरसपालकांडकस्तूरिकावालकमंबरं च ॥ कल्कानमीषां विपचेत्सुवैद्यः पृथक् पृथक्कर्षयुगोन्मितानाम् । शुभे च नक्षत्रमुहूर्तलग्ने संतोष्य विप्रांश्च भिषग्वरांश्च ॥ संपूज्य नारायणनामधेयं देवं त्रिनेत्रं जगतामधीशम् । पात्रे तु हेम्नः खलु राजते वा ताम्रेऽथ वा लोहमयेपि रक्षेत् ॥ अभ्यंजनेंजने नस्ये निरूहे चावगाहने । पाने चैतद्यथाव्याधि प्रयुंजीत चिकित्सकः ॥ बहुनात्र किमुक्तेन तैलमेतत्प्रयोजितम् । अवश्यं वातजान् व्याधीनाशितीनपि नाशयेत् ॥ एतस्याभ्यासतो जंतोर्जरा जातु

न जायते । पतंति वलयो नांगे पलितं नैव जायते ॥ नेत्रे तेजश्च नितरां गरुडस्येव जायते । नोच्चैः श्रुतिर्न बाधिर्यं कर्णनादो न जायते ॥ पाणिकंपः शिरःकंपः प्रलापश्च न जायते । बुद्धिभ्रंशो न जायेत तस्य स्यात्कर्णपाटवम् ॥ यथा जलेन सिक्तस्य शाखिनः पल्लवादयः । वर्धंते धातवस्तद्वद्देहिनोऽनेन नित्यशः ॥ आमगर्भं त्यजेद्या तु सूतिकास्रवस्रुता च या । या बहुप्रसवक्षीणा ताभ्य एतद्धितं परम् ॥ वंध्या च लभते पुत्रं गर्भपातो न जायते । योनिरोगाः प्रणश्यंति प्रदरश्च प्रशाम्यति ॥ अस्मात्तैलवरादन्यत् कुत्राचिन्नास्ति भेषजम् । बल्यं वृष्यं बृंहणं च रसायनमिदं महत् ॥ पुरा देवासुरे युद्धे दैत्यैरभिहतान्सुरान् । भिन्नान्भग्नास्थिकान्विद्धान्पिच्चितान्व्यथयार्दितान् ॥ दृष्ट्वा हिताय देवानां नराणां चाब्रवीदिदम् । तैलं नारायणो देवो महानारायणाभिधम् ॥

अर्थ--तिल्लीका तेल १०२४ तोले लेकर उसको वड, पीपल, आंब, जामुन और पापरी इनके कल्कसे शुद्ध करे फिर तेलमें गौका अथवा बकरीका दूध शतावरका रस, तेलके बराबर मिलावे तथा दशमूल, खिरेटी, प्रसारणी, रास्ना, सहजना, कमल, पुनर्नवा, निर्गुंडी, नागबला, अतिबला, असगंध, पियावांसा, डाभकी जड, कंजा, खैर, चंदन, लोध, वच, विजयसार, पलास, कोहकी छाल, अंडकी जड, वरनाकी शाल और बडा शाल, कुटकी, सिरस, ओंगा, अडूसा, जटामांसी, जामुन, बहेडा, कचनार, कैथ, नीमकी छाल, चिरोंजी, पाषाणभेद, अमलतास, दुद्धी, अनार, गूलर, थूहरका भेद, सातला, ग्वारपट्ठा, चमेली, दालचीनी, मधुमालती, नरकचूर, जौ, बेर, कुलथी, कौंचके बीज, आक, कपासके बीज (बिनौले), गिलोय, थूहर, केतकीमूल, धतूरेके बीज, कलियारी, पारसपीपल, चित्रक, बकायन, पीपल, बड, पाखर, गूलर और बेत, गोरखमुंडी, टंकारी, मुसली, हंसपदी (छुई मुई), गुलखेटी ये प्रत्येक चालीस २ तोले लेवे. इनका अठगुने जलमें काढा करके जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. इसमें उस तेलको मिलायके बकरा, मेढा, हरिण, काला हरिण, साबरसींग, शशा, सेह, गीदड (स्यार), गोधा, सिंह, बघेरा, रीछ, जंगली सूअर, गेंडा, भैंसा, घोडा, बंदर, नौला, बिलाव, मूषा, बडा मेडका, बटेर, तीतर, लवा, खंजन,

चकोर, घूघू, नीलकंठ, वनमुरगा, गीध, गरुड (गीधका भेद), हंस, चकवा, कारंवड, कपोत (पिंडुकिया), सारस, क्रौंच, वनका कबूतर ये पक्षी, रोहित, मुद्गर, शिलींध्र, सिंगिया, इल्लिस, गर्गर, वर्मि, कथिक, कविक और महामच्छ ये सब जातकी मछली कछुआ, सूस, सांकुची, मगर, घाडियाल (इसके न मिलनेमें गोह लेवे) इनमेंसे जो जो जीव मिले इनके मांसरसको तेलके साथ पचावे. तथा रास्ना, असगंध, सोंफ, दारुहलदी, कूठ, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, अगर, केशर, सैंधानिमक, जटामांसी, हलदी, दारुहलदी, शिलाजीत, पुहकरमूल, चंदन, इलायची, मुलहठी, तगर, नागरमोथा, पत्रज, भांगरा, अष्टवर्गकी सब औषध (जीवक, ऋषभ, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, कांकोली, क्षीरकांकोली), वच, पलास गठिवन, पुनर्नवा, कचूर, मूर्वा, दालचीनी, कायफल, पद्माख, कमलकी जड, जायफल, केतकी, नागदौन, सरल, एकांगी, मुरा, गिलोय, खस, हरड, बहेडा, आंवला, धमासा, कौंछके बीज, नखद्रव्य, बकायन, केवटीमोथा, कोह, चिरायता, बदाम, खजूर, तुंबरू, धायके फूल, पीपरामूल, पित्तपापडा, पटोलपत्र, लाल कमल, हलदी, त्रायमाण, लजालू, इन्द्रजौ, सुरमा, बबूरके बीज, निसोथ, वरना, दाख, पीपल, द्रोणका निमक, पुनर्नवा, रेणुकबीज, वायविडंग, कनेर, नीले कमल, पद्माख, कलौंजी, केलेका कंद, चित्रक, गोखरू, तालमखाने, कंकोल, दारुहलदी, कसूम, शिलारस, केशर, मोम, लौंग, कपूर, पालकांड, कस्तूरी, नेत्रवाला, अंबर ये प्रत्येक औषध दो दो तोले ले इनका कल्क पृथक् २ करके उस तेलमें डालके मंदाग्निसे पचन करे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके वस्त्रमें छान उत्तम दिन (अर्थात् शुभ घड़ी, लग्न, वार, तिथि, नक्षत्र) में देव ब्राह्मण और वैद्य उनका पूजन कर तथा श्रीमन्नारायण और महादेवका पूजन कर इस तेलको सुवर्णके, चांदीके, तांबेके अथवा लोहेके पात्रमें भरके उस पात्रको जापतेसे रक्षणपूर्वक एकांतमें रख देवे. इसको देहमें लगाना, अंजन, नस्य, निरूहवस्ती, स्नान और पीना इनमें जैसी व्याधि होवे. उसीके अनुसार देवे. बहुधा करके इस तेलसे अवश्य ही अस्सी प्रकारके वादीनका नाश होय. इस तेलके निरंतर सेवन करनेसे उसको वृद्धावस्था कदाचित् नहीं, आवे. तथा अंगकी बली (गुजलट) और बाल कभी सपेद नहीं होवे. गरुडके समान नेत्रोंमें तेज होवे. धीरे बोलनेसे सुननेवाला, बहरा नहीं हो. कर्णनाद रोग नहीं हो. हाथ, शिर इनका हिलना कदाचित् नहीं हो. प्रलापक कदाचित् न होवे. बुद्धिभ्रंश न हो, कर्म करनेमें कुशल होवे. जैसे जलके सींचनेसे वृक्षके पत्ते, डाली आदि बढते हैं उसी प्रकार इस तेलके लगानेसे नित्य देहकी धातु बढते हैं,

जिस स्त्रीके गर्भपात होता है. तथा जिस स्त्रीके प्रसूतसमय रुधिर अधिक और जो बहुत बालकोंके होनेसे क्षीण हो गई ऐसी स्त्रियोंको परम हित है. वंध्या स्त्री गर्भको प्राप्त हो और इसके प्रतापसे कदाचित् गर्भपात नहीं होवे. योनिरोग और प्रदर नष्ट होवे. इस तेलसे परे दूसरी उत्तम औषधी नहीं है. यह बल, वृष्य, बृंहण और अत्यन्त रसायन है, पहले देव और दैत्योंके संग्राममें दैत्योंकरके मारे गये जो देवता तथा जिनकी हड्डी टूट गई तथा जो पिच गये और व्यथा करके पीडित उन देवताओंके हितके वास्ते और संपूर्ण प्राणियोंकी दया विचारके श्रीमन्नारायणने यह महानारायण तैल कहा है ॥

दूसरा प्रकार।

बलाश्वगंधा बृहती श्वदंष्ट्रा स्योनाकवाट्यालकपारिभद्रा। क्षुद्रा कठिल्लातिबलाग्निमंथरास्नारणीकः कणिकच्छुराश्च ॥ निर्गुंडिकैरंडकुरंटकानां मूलानि वर्षासरणिगतानि। मूलं विदध्याद्दशपाटलानां संकुट्य पादांशवतोद्धृतानाम् ॥ द्रोणैरपामष्टभिरेव पक्त्वा पादावशेषेण रसेन तेन। तैलाढकाभ्यां समदुग्धमत्र गव्यानि दद्यादथ वाज्यदुग्धम् ॥ दद्याद्रसं चैव शतावरीणां तैलं च तुल्यं पुनरेव तत्र। पक्त्वा दिनैकं कृतवस्त्रपूतं कल्कानि चैषां हि समावपेच्च ॥ रास्नाश्वगंधामिशिदारुकुष्ठपर्णीतुरुष्कागरुकेसराणि। सिंधूत्थमांसी रजनीद्वयं च शैलेयकं पुष्करचंदनानि॥एला सयष्टी तगरांबुपत्रं भृंगाष्टवर्ग्यं च जया पलाशम्। वृश्चीव ऐलेयकचोरकाख्यं मूर्वा त्वचा पुष्करपद्मकं च ॥ मृणालजातीफलकेतकी च सनागपुष्पं सरलं सुरा च। जीवंतिका चंदनकं ह्युशीरं दुरालभा वान्नरिका नखं च ॥ कैवर्तकं तालशिरः सतिक्तं खर्जूरिमुस्तं समभागमेषाम्। एतैः समैः सार्धपलप्रमाणैर्भागानथाष्टौ किल कालमेष्यः॥ एणः कुरंगो हरिणो मयूरो गोधा शशः शक्रकचक्रवाकौ। वर्तीरलावौ वरतित्तिरी च सत्सारचक्रौ चककंबुवर्णः॥ आनूपकूर्मा इह मांसपुष्टाः क्रमात्क्षिपेच्चात्र यथैव लाभम्। रोहीतकोथो शववेत्रनामा

कक्षाढवो मुद्गरशृंगिके च ॥ पाठीनकालीयकतोडिका च सरो-
खरा ये कुरुदादयश्च । ये चापि तोये शिशुमारमुख्या लभ्याश्च
येऽश्व भ्रमता भुजंगाः॥अन्येऽपि ये भूचरखेचराश्च पूर्णा अमीषां
क्रमशोऽत्र योज्याः । सुताम्रपात्रेऽप्यथ मृत्तिका च कर्पूरकाश्मी-
रमृगांडजं वा ॥ दद्यात्सुगंधाय वदंति केचित्प्रक्लेददौर्गंध्यवि-
नाशनाय । वदंति केचिद्द्विपदः समेतं शुभे निधायाथ मुहू-
र्तलग्ने ॥ संतोष्य विप्रान् भिषजोऽर्थिनश्च सुभोजने यज्ञघृतं त-
थैव । पाने च नस्ये च निरूहणे च भोज्यं प्रदेयं तत एव नूनम्॥
अभ्यंगमादौ च सदा प्रशस्तं निर्वाप्यते कर्मसु केषु चिह्नम् ।
उन्मादशोषक्षतरक्तपित्तश्वासाभ्रमूर्च्छादिषु मूर्च्छितेषु ॥ का-
साग्निवाता हनुमूलदंतक्रमीष्ठघुम्रीहिसतोददाहान् । सतालुमूलं
श्रवणाक्षिशूलं बाधिर्यमुच्चज्वरपीडितं च ॥ मंदेंद्रियत्वं च तथा-
ग्निमांद्यं नष्टप्रशुक्रत्वमथांगकंडूः । निहंति सत्वं न गुणप्रभा-
वात्कटिग्रहापस्मृतिगृध्रसीं च ॥ पक्षाभिघातं चरणाभिघातं
हस्ताभिघातं च शिरोग्रहं च । प्रक्षीणमुग्रं सकलप्रमेहान् ना-
साक्षिकर्णप्रभवान् विकारान् ॥ वातादिजातान् किल भूतजा-
तान् कृत्यादिजातान् ग्रथितान्विकारान् । रोगः स नास्त्येव
नरस्य देहे नानेन शांतिं समुपैति मोहः ॥ सद्योव्रणानस्थिवि-
चूर्णितं वा नाडीव्रणान्वापि च योजयित्वा । सुवर्णवर्णं वितनोति
रूपं नारायणाख्योऽखिलतैलराजः ॥ वंध्यः पुमान् वापि वरां-
गना वा सुपुत्रमाप्नोति विलेपतोऽस्य । सिद्ध्यत्यनेनैव नियोजि-
तेन निदाघदग्धः प्रहतोपि वृक्षः ॥ अन्यस्य का का भणितीर्नि-
रस्य रोगस्य जंतोरपरस्य चापि । नारायणोक्तं तदिदं तु तैलं
नारायणं नाम ततः प्रसिद्धम् ॥

अर्थ—बला (खिरेटी, वरियारा) की जड, असगंध, बडी कटेरी, गोखरू, टेंटू, सहदेई, नीम, छोटी कटेरी, करेला, अतिबला (कंगही), अरनी, रास्ना, दूसरी

अरनी, कौंचके बीज, निर्गुंडी, अंडकी जड, पियावांसा, काला जीरा, प्रसारणी, दश-मूल और पाढ इनकी जड इनको कूटकर ८१९२ तोले जलमें उनका काढा करके जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. इसमें ५१२ तोले तेल मिलावे और इतना-ही गौ तथा बकरीका दूध मिलावे. फिर अग्निपर रखके औटावे. जब तेल मात्र शेष रहे तब उतारके छानले और इसमें रास्ना, असगंध, सोंफ, दारुहलदी, कूठ, शाल-पर्णी, शिलारस, काली अगर, नागकेशर, सैंधानिमक, जटामांसी, हलदी, दारुहलदी, पत्थरका फूल, पुहकरमूल, चंदन, इलायची, मुलहठी, तगर, नेत्रवाला, पत्रज, भांगरा, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली,क्षीरकाकोली, जया (अरनी), पलास, पुनर्नवा, एकवालुक, चोरक, मूर्वा, दालचीनी, कमलकंद, पद्माख, कमलकी जड, जायफल, केतकी, नागदौन, देवदारु, सरल, सुरा (चावलोंकी बनी हुई दारु), जीवकशाक, पीला चंदन, खस, धमासा, कौंचके बीज नख, बकायन ताडके मस्तकका गाभा, चिरायता, खजूर, भद्रमोथा ये प्रत्येक छः छः तोले लेय तथा तगर आठ तोले, मंजीठ ८ तोले इन सबका कल्क करे इसको तथा हिरन, कुरंग, कालाहिरन, मोर, गोधा, ससा, शल्लक, चकवा, बटेर, लवा, तीतर, सारस, क्रौंच, बगला और जल समीप रह-नेवाले जीव कछुआ तथा रोहिस, मद्गुर, शवनेत्र, कस आढव, सिंगिया, पाठीन, काली-यक, तोडिका इत्यादि सरोवरकी मछली तथा उस २ स्थानके कुरुदादि मत्स्य तथा सूंससे आदिले मिले जो जलके जीव, बिलमें रहनेवाले जीव, (सर्पादिक) तथा आका-शमें विचरनेवाले पक्षी और पृथ्वीमें विचरनेवाले जीव इनमेंसे जो मिलसके उन सबका मांसरस ले उस तेलमें मिलायके तेल सिद्ध करे जब सिद्धहो चुके तब छानके तांबेके पात्रमें भरके रख देवे. अथवा मिट्टीके चिकने बासनमें भरके रख देवे और उस पात्रमें सुगंध करनेके वास्ते और दुर्गंध दूर करनेको कपूर, केशर और कस्तूरी ये पदार्थ डालके शुभ मुहूर्त देख ब्राह्मण, देवता और याचक जन इनका पूजन करके फिर इस तेलको पान, नस्य, निरूहवास्ति इनमें देवे. यह मालिस करनेमें बहुत श्रेष्ठ है और उन्माद, शोष, क्षत, रक्तपित्त, श्वास, भ्रम, मूर्च्छा, खांसी, अग्निवात, हनुमूल, दंतमूल, कृमि, इष्ठघ्नी, पीडा, दाह, तालुशूल, कर्णशूल, नेत्रशूल, बहरापना, बढा हुआ ज्वर, इन्द्रियोंकी मंदता, धातुक्षय, खुजली, कटिग्रह, अपस्मार, गृध्रसी, अर्धांगवायु, हस्ताभिघात, पादाभिघात, मस्तकशूल, कृशत्व, सर्वप्रमेह, नाक, कान और नेत्र इनकी व्याधि, सर्ववातव्याधि, भूतोन्माद, कृत्याका उन्माद, गांठविकार, सद्योव्रण, अस्थिभंग, नाडीव्रण इत्यादिकोंको नष्ट करे. इस तेलके लगानेसे न जानेवाली असाध्य व्याधिभी दूर होवे तथा यह सुवर्णके समान कांति करे और पुरुष तथा स्त्रियोंका वंध्यापना नष्ट

करे. बहुत कहनेसे क्या है यह तैल गरमीसे जले हुए वृक्षोंको सिंचन करनेसे तथा उनके लगानेसे सजीवन हो जावे, फिर अन्य और ही प्रकारके रोग नाश करे इसमें कहना ही क्या है यह तेल श्रीमन्नारायणने अपने श्रीमुखसे कहा है इसी वास्ते इसकी नारायणतैल नाम करके प्रसिद्धि है ॥

जंबूकाद्यतैल ।

वृद्धं शृगालमादाय पादोक्तोदरमध्यगा । त्यक्त्वा शेषं च संगृह्य दत्त्वा वारि चतुर्गुणम् ॥ चतुर्भागावशेषं च ग्राह्यं तैलसमं पचेत् । अजश्चर्मविनिर्मुक्तो त्यक्त्वा शृंगशिरादिकम् ॥ चरणायुधमांसं च जले द्रोणद्वये पचेत् । तेन पादावशेषं च पाचयेच्च पृथक् पृथक् ॥ शतावरीणां च रसं तैलतुल्यं प्रदापयेत् । छागं गव्यं पयः शुक्तं मस्तु वारुणि चोत्तमम् ॥ पात्रमात्रेण संग्राह्यं ततोऽनंतरमौषधम् । शालिपर्णी पृष्ठपर्णी बला च बहुपुत्रिका ॥ एरंडस्य च मूलानि बृहत्या पूतिकस्य च । गवेधुकस्य मूलानि तथा सहचरस्य च ॥ प्रसारिण्याश्वगंधा च तालमूली पुनर्नवा । रास्ना गोक्षुरकं पाठा पाटला पारिभद्रकम् ॥ अर्कमूलं बृहद्दंती कटभी कांचनारिका । चक्रमर्दमपामार्गमंकोटबैल्वमूलकम् ॥ स्योनाकलक्तमालाब्दवासानंतापटोलकम् । मेगुडी मुंडिका तुंबी लांगली शिग्रु पीलुका ॥ खर्जूरी कासमर्द च गुंजामूलं विधारकम् । अमृता शंखपुष्पी च भृंगराजककुंदरैः ॥ वटश्च कुटजोदीच्यमदनं वान्नरी स्नुही । महानिंबो विशाला च शिरीषः करवीरका ॥ पलं पलं च संगृह्य कषायं साधयेत्सुधीः । चतुर्भागावशेषं तु तैलं तुल्यं च दापयेत् ॥ चंदनं देवकाष्ठं च कुष्टं मांसी पुनर्नवा । पूतीकरास्ना त्रिवृता रेणुका शिग्रुगुग्गुलुः ॥ चातुर्जातकमंजिष्ठा हरिद्रे द्वे च पुस्तकम् । धातकीपुष्पपतंगं तथा क्षारद्वयं वचा ॥ एला शैलेयकं व्योषं लवणानि च पंचकम् । एभिर्द्रव्यैः पलार्द्धं स्याच्छनैर्मृद्वाग्निना पचेत् ॥ सौगंधार्थं

च दातव्यं लवंगं जातिकाफलम् । कस्तूरी घनसारं च सिह्लारं नखवालकम् ॥ कृष्णागरु नतं चैव पत्रकं जातिपत्रिका । यथालाभं च संगृह्य योजयेत्तत्र तद्बुधः ॥ तैलेनानेन नश्यंति सर्वरोगाः समरिणाः । अशीतिर्वातजा रोगाः शोफशूलकटिग्रहाः ॥ कुब्जानामथ पंगूनां वामनानां तथैव च । अधोभागे च ये वाताः शिरोमध्यगताश्च ये ॥ मन्यास्तंभे हनुस्तंभे वातरोगे गलग्रहे । यस्य शुष्यति चैकांगं ये च भग्नास्थिसंधयः ॥ पक्षाघातेषु सर्वेषु अर्दिते च हनुग्रहे । मंदश्रुतौ च श्रवणे तिमिरे च त्रिदोषजे ॥ हृच्छूले पार्श्वशूले च बाधिर्ये मूकमिम्मिणे । कामलापांडुरोगे च खल्लीशूलकटिग्रहे ॥ हस्तकंपे शिरःकंपे गात्रकंपे शिरोग्रहे । कलायखंजगृध्रस्यामवबाहुं च नाशयेत् ॥ बाधिर्ये कर्णनादे च सर्ववातविकारनुत् । दंडापतानकश्चैव मन्यास्तंभे विशेषतः ॥ हनुस्तंभे प्रशस्तं स्यात्सूतिकावातनाशम् । बाल्ये मांसप्रदं चैव शुक्राग्निबलवर्धनम् ॥ अंत्रवृद्धिमंडवृद्धिमपचीं नाशयेत्ततः । योनिशूलमसृग्दोषमाध्मानं विनिहंति च ॥ वातशोणितदुष्टानां वातोपहतचेतसाम् । अश्वानां वातभग्नानां कुंजराणां नृणां तथा । तैलमेतत्प्रयोक्तव्यं सर्ववातविकारनुत् । अस्थिमेदोगता वाता क्षीणाश्चार्शोभगंदराः ॥ भूतग्रहपिशाचाश्च तथा दुष्टग्रहानपि । दद्रुविचर्चिकापामाकुष्ठकंडूव्रणापहम् ॥ शृगालाद्यमिदं ख्यातं बहुपीडां च नाशयेत् । एतत्तैलेन नश्यंति रोगाः सर्वे विशेषतः ॥

अर्थ–एक स्यारको मार उसके हाथ, पैर और पेटकी आंतडी निकालके पटक देवे फिर उस मांसके बारीक २ टुकडे करके उसमें मांससे चौगुना जल डालके उसमेंसे चतुर्थांश रसः छानके लेवे. उसमें उस रसके समान तेल डालके पचावे फिर बकरेका चमडा, मस्तक, पांव निकालके उसके काढेमें और मुरगेके मांसके रसमें अलग २ पचावे. फिर शतावरका रस तैलके समान, भेडका दूध, छाछका पानी, उत्तम मद्य ये सब तैलके समान डालके शालिपर्णी, पृष्ठिपर्णी, बला, छोटी शतावर, अंडकी

जड, बृहती, पूतिक और गवेधुककी जड, सहचरकी जड, प्रसारिणी, अश्वगंधा, काली, मुसली, पुनर्नवा, रास्ना, गोखरु, पाठा, पाटला, नीम, आककी जड, बडी दंती, कटभी, नागकेशर, चक्रमर्द, ओंगा, अंकोट व बेलकी जड, स्योनाक, करंज, नागरमोथा, अडूसा, धमासा, कडुआ परवल, निर्गुंडी, मुंडी, कडुआ कद्दू , लांगली, शिग्रु, पीलुका, खिजूर, कासिवदा, चोंटलीकी जड, विधारक, गिलोय, शंखपुष्पी, भृंगराज, कुंद, वट, कुट, वाला, मदन, कौंच, स्नुही, महानिंब, वृंदावन, शिरीष, करवीर (मनशील) ये प्रत्येक चार २ तोले लेके इनका चतुर्थांश काढा करके तेलके समान डाले, फिर चंदन, देवदारु, कोष्ठ, जटामांसी, पुनर्नवा, करंज, रास्ना, त्रिवृता, रेणुकबीज, शिग्रु, गुग्गलु, दालचीनी, इलायची, तमालपत्र, नागकेशर, मँजीठ, हलदी, दारुहलदी, नागरमोथा, धातकीपुष्प, पतंग, जवाखर, टंकणखार, वच, इलायची, शिलारस, सोंठ, काली मिरच, पीपल, पाचों निमक ये प्रत्येक दो २ तोले लेके इनका कल्क करके उस तेलमें डालके मंदाग्निसे पचाके सिद्ध करे और सुगंधिके वास्ते लौंग, जायफल, कस्तूरी, कपूर, शिलारस, नख, वाला, काला अगर, तगर, तमालपत्र और जायपत्री इनमेंसे जो मिल जाय उस तेलमें डाले. यह तेल सब रोग, अस्सी तरहके वायु, अफरा, शूल, कटिग्रह, कुब्जवात, पांगलपना, वामनवात, अधोभाग गत वातरोग, मस्तकका वातरोग, मन्यास्तंभ, हनुस्तंभ, वातरोग, गलग्रह, एकांगवात, अस्थिभग, संधिभंग, पक्षघात, अर्दित, हनुग्रह, बहरापना, मूकवात, मिम्मिणवात, कामला, पांडुरोग, खल्लीवात, शूल, कटिग्रह, हस्तकंप, शिरःकंप गात्रकंप, मस्तकशूल, कलायखंजवात, गृध्रसी, अवबाहुक, बहरापना, कर्णनाद, संपूर्णवात, दंडापतानक, मन्यास्तंभ, हनुस्तंभ, व स्नातिकावात इनका नाश करता है. बालपनमें देहमें मांसको बढाता है, बल, शुक्र इनको बढाता है, अंडवृद्धि, अंत्रवृद्धि, अपची, योनिशूल, रक्तदोष, आध्मान, वातरक्त, वातरोग, वायुसे बिगडे हुए हाथी, घोडे और गौ इनके वातविकारको नष्ट करता है, अस्थिगत व मेदगतवायु, क्षय, अर्श, भगंदर, भूतबाधा, ग्रहबाधा, पिशाचबाधा, दुष्टग्रह, दद्रुपामा, विचर्चिका, कोढ और व्रण इनका नाश यह शृगालतैल करता है. इस तेलके सेवनसे विशेष करके सब रोग नष्ट होते हैं ॥

तीसरा माषतैल ।

माषक्वाथे बलाक्वाथे रास्नाया दशमूलजे । यवकोलकुलित्थानां छागमांसरसे पृथक् ॥ प्रस्थे तैलस्य च प्रस्थं क्षीरं दद्याच्चतुर्गुणम् । रास्नात्मगुप्तासिंधूत्थशताह्वैरंडमुस्तकैः ॥ जीवनीय-

बलाव्योषपचेदष्टामितैः पृथक् । हस्तकंपे शिरःकंपे बाहुकंपेव-बाहुके ॥ बस्त्यभ्यंजनपानेषु नावने च प्रयोजयेत् । माषतैल-मिदं श्रेष्ठमूर्ध्वजत्रुगदापहम् ॥

अर्थ–उडद, खिरेटी, रास्ना, दशमूल, जौ, बेर और कुलथी इनका पृथक् २६४ तोले काढा करके लेवे. मांसरस ६४ तोले, इन सबमें ६४ तोले तेलको पृथक् २ पक्व करके फिर तेलसे चौगुना दूध डालके रास्ना, कौंचके बीज, सैंधानिमक, शतवार, अंडकी जड, नागरमोथा, जीवनयिगण, खिरेटी और त्रिकुटा इनका तोले २ चूर्ण क-रके गेरे फिर पक्व करके इसको रख लेवे. इसको माषतैल कहते हैं. यह हस्तकंप, बाहु-कंप, अपबाहुक इन रोगोंपर, बस्ति, अभ्यंजन, नस्य और पान इनमें देवे. यह हसली-के ऊपरके रोगोंको नाश करे ॥

रास्नापूतीकतैल ।

दशमूलबला दारु अश्वगंधा शतावरी । वरुणैरंडनिर्गुंडी तर्का-री शिग्रु मोरटम् ॥ सहचरं चित्रमूलं करंजां कोलमूलकम् । पुनर्नवं च भूपीलु अर्कपुंखी दुरालभा ॥ जीवंती विषतिंदुश्च वातारिर्हिंस्रशिग्रुकम् । अलर्कयवकोलं च कुलित्थानां कषायकम् ॥ एतेषां च समं रास्ना पूतीकं च तयोः समम् । अष्टभागावशेषं तु कषायमवतारयेत् ॥ तत्पादं तिलतैलं च अजाक्षीरं च तत्समम् । गुग्गुलं तगरं मांसी त्रिकटु त्रिफ-लानि च ॥ चातुर्जातं कचोरं च विडंगामरदारु च । हिंगु रास्ना वचा तिक्ता पाठा यष्टिकाचित्रकम् ॥ प्रियंगु पिप्पलीमूलं चंदनं चव्यदीपकम् । वरालं चंपकं कुष्ठं मंजिष्ठा मिशिसर्षपाः ॥ जा-तीफलं सुगंधं च पाठोशीरं समांशकम् । एतत्तैलस्य षष्ठांशं कल्कद्रव्याणि दापयेत् ॥ सुमुहूर्ते सुनक्षत्रे नववस्त्रेण पीडयेत्। पानलेपननस्याद्यैः शिरोबास्तिषु योजितम् ॥ धनुर्वातांतरायामं गृध्रसीमपबाहुकम् । आक्षेपके व्रणायामे विष्वाच्यामपतंत्रके ॥ आढ्यवाते हनुस्तंभे शिरावातापतानके । भ्रूशंखकर्णनासा-क्षिजिह्वास्तंभे च दारुके ॥ कलायखंजता पंगु सर्वांगैकांगमा-

रुते। अर्दिते पादहर्षे च पक्षाघाते प्रशस्यते॥ ऊरुस्तंभं सुप्त-
वातं नाशयेन्नात्र संशयः। रास्नापूतीकनामैतत्तैलमात्रेयनिर्मितम्॥

अर्थ-दशमूल, खिरेटी, दारुहलदी, असगंध, शतावर, वरना, अंडकी जड, निर्गुंडी, अरनी, सहजनेकी छाल, ईखकी जड, पियावांसा, चीतेकी छाल, कंजा, बेरकी जड, पुनर्नवा, भूपीलू, अर्कपुंखी, दुरालभा (धमासा), जटामांसी, कुचला, लाल अंड, लाल आक, जौ, बेर और कुलथी इन औषधोंकी बराबर रास्ना लेवे और सबकी बराबर कंजा इस प्रकार सब औषध लेके काढा करे जब जल अष्टमांश शेष रहे तब उतारके उसमें उसका चतुर्थांश तेल मिलावे और इतना ही बकरीका दूध और गूगल, तगर, जटामांसी, त्रिकुटा, त्रिफला, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, कचूर, वायविडंग, देवदारु, हींग, रास्ना, वच, कुटकी, पाढ, मुलहठी, चित्रक, प्रियंगु, पीपरामूल, चंदन, चव्य, अजमायन, लौंग, चंपा, कूठ, मँजीठ, सोंफ, सरसों जायफल, रोहिषतृण, पाढकी जड, खस इन सब औषधोंका चूर्ण तेलसे छठा भाग लेवे इसको तेलमें डालके सबको एकत्र कर मंदाग्नि पर रखके औटावे जब तेल सिद्ध हो जावे तब उतारके उत्तम दिनमें उसे किसी उत्तम पात्रमें भरके धर देवे. इसको पीनेसे लेप, शिरोबस्ति इनमें देवे तो धनुर्वात, अंतरायाम, गृध्रसी, अपबाहुक, आक्षेपक, व्रणायाम, विश्वाची, अपतंत्रक, आढयवात, हनुस्तंभ, शिरावात, अपतानक, भौंह, कनपटी, कान, नाक, नेत्र और जिह्वा इनका स्तंभ, दारुक, कलायखंजता, पंगुता, सर्वांगवात, एकांगवात, अर्दित, पादहर्ष, पक्षाघात, ऊरुस्तंभ और सुप्तवात इन सबको नाश करे. इसमें संदेह नहीं है इसको रास्नापूतिकनामक तेल कहते हैं यह आत्रेयऋषिका निर्माण करा है॥

बलातैल वातादिकोंपर।

बलामूलकषायेण दशमूलशृतेन च। कुलित्थयवकोलानां क्वाथेन पयसस्तथा॥ अष्टाष्टभागयुक्तेन भागमेकं च तैलकम्। गणेन जीवनीयेन शतावर्यैंद्रदारुणा॥ मंजिष्ठाकुष्ठशैलेयतगरागुरुसैंधवैः। वचापुनर्नवामांसीसारिवाह्यपत्रकैः॥ शतपुष्पाश्वगंधाभ्यामेलया च विपाचयेत्। गर्भार्थिनीनां नारीणां पुंसां च क्षीणरेतसाम्॥ व्यायामक्षीणगात्राणां सूतिकानां च युज्यते। राजयोग्यमिदं तैलं सुखिनां च विशेषतः॥ बलातैलमिति ख्यातं सर्ववातामयापहम्॥

अर्थ-खिरेटी आठ प्रस्थको बत्तीस प्रस्थ जलमें डालके औटावे जब चौथाई रहे तब उतारके उस काढेको छान लेवे इसी प्रकार दशमूल ८ प्रस्थमें बत्तीस प्रस्थ जल डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेय तथा कुलथी, जौ, बेरके भीतरकी गुठली, पृथक् २ औषध आठ २ प्रस्थ लेकर एक एकमें बत्तीस प्रस्थ जल डालके पूर्वोक्त क्रमसे पृथक् २ काढा कर लेवे फिर इन पांचों काढोंको एकत्र मिलायके इनमें गौका दूध आठ प्रस्थ डालके तथा तिलका तेल १ प्रस्थ डाले इसमें चूर्ण करके डालनेकी औषधी इस प्रकार लेवे. जीवनीय गणकी औषध, शतावर, मँजीठ, देवदारु, कूठ, पत्थरका फूल, तगर, अगर, सेंधानिमक, वच, पुनर्नवा, जटामांसी, सपेद कोयल, कोयल, पत्रज, सोंफ, असगंध और इलायची ये चौबीस औषध तेलके चतुर्थांश ले कल्क करके उसी तेलमें मिलाय देवे. फिर तेलको अग्निपर रखके औटावे जब तेल मात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे. इसको बलातैल कहते हैं. यह तैल जिस स्त्रीको गर्भकी इच्छा होवे उसकी देहमें मालिस करे और जिस पुरुषकी धातु क्षीण होवे उनको तथा जो बहुत आने जानेसे थक गये हों उनको देना चाहिये तथा प्रसूता स्त्रीको देवे तथा यह तैल विशेष करके राजाओंके और सुखी मनुष्य (सेठ साहूकारों) के योग्य है. इस तेलसे वादीके संपूर्ण विकार दूर होते हैं ॥

माषादितैल ग्रीवास्तंभादिके ऊपर ।

माषा यवातसी क्षुद्रा मर्कटी च कुरंटकः । गोकंटटुंटुकश्चैषां कुर्यात्सप्तदलं पृथक् ॥ चतुर्गुणांबुना पक्त्वा पादशेषं सृतं नयेत् । कार्पासास्थीनि बदरं शणबीजं कुलित्थकम् ॥ पृथक् चतुर्दशपलं चतुर्गुणजले पचेत् । चतुर्थांशावशिष्टं च गृह्णीयात्क्वाथमुत्तमम् ॥ प्रस्थैकं छागमांसस्य चतुःषष्टिपले जले । निःक्षिप्य पाचयेद्धीमान् पादशेषं रसे नयेत् ॥ तैलप्रस्थं ततः क्वाथान् सर्वानेतान् विनिःक्षिपेत् । कल्कैरेभिश्च विपचेदमृताकुष्ठनागरैः ॥ रास्नापुनर्नवैरंडैः पिप्पल्या शतपुष्पया । बलाप्रसारिणीभ्यां च मांसीकटुकया तथा ॥ पृथगर्धपलैरेतैः साधयेन्मृदुवह्निना । हन्यात्तैलमिदं शीघ्रं ग्रीवास्तंभापबाहुकौ ॥ अर्धांगशोषमाक्षेपमूरुस्तंभापतानकौ । शाखाकंपं शिरःकंपं विश्वाचीमर्दितं तथा ॥ माषादिकमिदं तैलं सर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ-उडद, जौ, अलसीके बीज, कटेरी, कौंचके बीज, पियावांसा, गोखरू, टेंटू ये आठ औषध सात २ पल लेय सब औषधोंसे चौगुना जल डालके काढा करे जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. तथा बिनौला, बेरकी गुठली, सनके बीज और कुलथी ये चार औषध चौदह २ पल लेय इनमें चौगुना पानी डालके काढा करके छान ले फिर बकरेका मांस एक प्रस्थमें ६४ पल जल डाल चतुर्थांश जल रहने पर्यंत काढा कर छान लेवे. फिर तिलोंका तेल एक प्रस्थ डालके पूर्वोक्त संपूर्ण काढे मिलाय देवे. फिर गिलोय, कूठ, सोंठ, रास्ना, पुनर्नवा, अंड की जड, पीपल, सोंफ, खिरेटी, प्रसारणी, जटामांसी, कूटकी ये बारह औषध आधा २ पल ले सबका कल्क कर तेलमें मिलाय मंदाग्निसे पचावे फिर तेलको छान लेय इसको माषादितैल कहते हैं. यह तेल देहमें लगानेसे ग्रीवास्तंभ वायु, अपबाहुक वायु, अर्द्धांगवायु,आक्षेपक वायु, ऊरुस्तंभ वायु, अपतानक वायु, हाथपैरोंका कांपना, मस्तककंप, विश्वाची और अर्दित (लकवा) इत्यादि समस्त वायु दूर हों ॥

सुगंधतैल ।

तगरागरुकुंकुमकुंदुरुभिः सलवंगवरांगकुरंगमदैः । सरलामरदारुदलद्रविडीनखकेशरुकुनलिनीनलदैः ॥ सतु रुष्कहरेणुबलाक्कथनैरीति तैलमिदं पयसा विपचेत् । नृपतिप्रमदाशिशुभिः स्थविरैरुपयोज्यमिदं पवनामयाजित् ॥

अर्थ-तगर, अगर, केशर, कुंदरू, लौंग, दालचीनी, कस्तूरी, सरल, देवदारु, इलायची, नख, नागकेशर, कूठ, कमालिनी, नेत्रवाला, शिलारस, रेणुकबीज और खिरेटी, इनका काढा और दूध एकत्र करके तेल बनाय लेवे इसको राजाकी स्त्री, पुत्र और बुड्ढोंको सेवन करावे. यह वातविकारका नाश करे ॥

एलादितैल ।

एलामुरासरलशैलजदारुकौंतीचंडाशठीनलदचंपकहेमपुष्पम् । स्थौणेयगंधरसपूतिदलं मृणालश्रीवासकुंदुरुनखांबु लवंगकुष्ठम् ॥ कालीयकं जलदकर्कटचंदनश्रीजातयाः फलं सविकसं सह कुंकुमेन । स्पृक्का तुरुष्कलघुकांबु तथा विनीय तैलं बलाक्कथनदुग्धदाधिप्रपक्वम् ॥ मंदानलेन हितमेतदुदाहरंति वातामयेषु बलवर्णहुताशकारी ॥

अर्थ—इलायची, मुरा, सरल पत्थरका फूल, देवदारु, रेणुकबीज, गठोना, कचूर, खस और सुवर्णचंपा, थूनेर, लाल बोल, पीली लोध, कमलका कंद, श्रीवास, कुंदरू, नख, नेत्रवाला, लौंग, कूठ, दारुहलदी, नागरमोथा, ईख, चंदन, बेलगिरी, जायफल, लाल पुनर्नवा, केशर, मूर्वा, शिलारस और पीले रंगका खस इनका चूर्ण कर खिरेटीके काढेमें दूध और दही इनसे युक्त मंदाग्नि पर पकाया हुआ तेल वादीके रोगपर हितकारी है, तथा बल, वर्ण, अग्नि इनको बढावे ॥

महालक्ष्मीनारायणतैल ।

दशशतांघ्रिशिवेतरमल्लिका दहननागबला ऋबुबाष्पिका । कितवलांगलकीवनमाल्लिकाकुटजहेंदुवृकीखरशृंगिका ॥ मधुकबीजकचंपकमालतीस्नुहिबलाक्रमिहा प्रपुन्नाटकाः । शतदलाश्ववराहकवासनीऋबुकधन्वनपिप्पलिरक्तिका ॥ अतिबला द्विविषा शकदाडिमी शिखरिशाल्मलिसिंधुकतुंडिका । सुषिरफंगुलकाशसुमर्कटी वरककुंभनिकुंभजयंतिका ॥ कुसरिपिच्छलिका करमर्दिका कसनमर्दककेवणिरूषिका । अतसिवत्सकगृध्रमहीरुहो विदुलकुंजलिका द्वितयोच्चटा ॥ दधिफलप्लववृक्षमृगादनी मधुरसा मगधा जलपत्रिका । रुदंतिका पृथगभ्य जटा सुधी समनुगृह्य दशांघ्रिकम् ॥ मुनितरुमलयतपनापामार्गबीजनक्तमालशृंगाटी । प्रपुंनाटो हेमदुग्धा कलेरुहाणां तु बीजानि ॥ धात्री शिग्रु करंजवञ्जुलमधुष्ठीलेंगुदीनेपतीनीपारग्वधरक्तसारबदरीविस्फूर्जनः कांचनः । चिंचोदुंबरतापसीद्रुमयुगांकालद्वयं सल्लकी गायत्री कलिवृक्षभांडिकदराश्वत्थाभयापादपाः ॥ भल्लीकिंशुकमेषशृंगिकाहिनीभूतांकुशः शल्यकः कोशाम्राजुंनपारिभद्रकमहावृक्षाः कुमार्यासनैः । कुंभी रक्तधनंजयो नियमनो वा तारिमोखाह्वया एतेषां परिगृह्य वल्कलमथो रंभा विदारी वरी ॥ आलूकेक्षिरकंदवाजिसुवहा कर्कोटिका गृष्टिका खर्जूरी सुरसूरणप्रभृतिकान्कंदांश्च साधूनपि । छिन्नाटरूष्ककाशिवप्रियमाषपर्णी ज्योतिष्मती गुग्गुलपर्पटमेषवल्ली ॥ भूपर्णिकासजटि-

कामृगराजमुंडीयुक्तरीकुलकयुग्मफलार्कभक्ता । भूनिंबव-
ह्निदमनो गिरिकर्णिकायुक् चिल्लारका खदिरका विजया
कुमार्यः ॥ गंगावतीयुगकवैष्णविका सुगंधा लंबा सुपर्णलतिका
सहदेविका च । गोपीयुगं मृगखुरी सरणी च कंगुमोर्यश्च
नागदमनी मधुपुष्पिका च ॥ एतानि गृह्य निखिलानि तथा-
ब्दयुग्मं चूतास्थितो तरुरुहो वटसंप्ररोहान् । भूशर्करा मदकरा
कुसुमं च पीलुबर्हिः शिखा कनककेतकिसंप्ररोहान् ॥ व्या-
घ्राटिकांघ्रिकरकं तिनिरोत्थसारं कंडूकपित्थभवलोहजटा गृ-
हीत्वा ॥ मुष्टिप्रमाणं विधिनोद्धृतानि द्रोणैर्जलानां त्रिसृभिर्वि-
पक्त्वा ॥ पादावशेषं परिगृह्य पोतं प्रस्थत्रयं तच्च तिलोत्थ-
तैलम् । हिंस्रा रक्ता वरिष्ठा सुररजनियुगं सैंहलं गंधसारं शृं-
गारं नागपुष्पं पलितकटुफलं रक्तकाष्ठं नतं च ॥ षड्ग्रंथा
जोंगकाश्वा रुचककररुहं रोचना रक्तसारं कोरंजी पालकाह्वं
कृमिरिपुमधुकं सिंधुजं स्निग्धदारु ॥ तालीसं जातिसस्यं मलय-
जममृतं पद्मकं जातिपत्री सेव्यं पद्मं यवानी कतकुतुरवती
केशरं पद्मकस्य । पाठीनो राजपुत्री जलधरचविका सोमवल्को
मधूकं पाक्यः स्वर्जी शताह्वा वनजमगधजा मत्स्यपित्ता शठी
च ॥ कारुंची पुत्रजीवास्तपनकनकजं बीजभृंगाररेची वृक्षाम्लं
देवधूपो जरणरसरसाकल्कराकुट्टिमं च । मृद्वीका साकुरंडं
नियमनधनिका धन्वयासं च ब्राह्मी विश्वं कैरातकेक्षुरकरिक-
णामोदकं बस्तमोदा ॥ शक्राह्वा तिलवलाख्यश्छुरपुरसुषवी
मेथिका शृंगिका च प्रत्येकं संगृहीत्वा पिचुदलतुलिता मुंच-
चासकृत् प्रपिष्टा । ता निःक्षिप्याशु पात्रे शुचि जनविहतं
निर्मलं वैद्यवर्यो गव्यं वा दुग्धमाजं युगपरिगणितं पूर्वमुक्ताच्च
तैलात् ॥ नारायण्यस्वरसकमथो रंगमातारसं च तैलोन्मानं

विपचरावेजे भाजनं प्रत्यहं वा । तस्मिन्पाकं गतवति यथावि-
ध्यनुप्रक्षिपेच्च सौगंधार्थं शिशिरकिरणं कुंकुमं वेधमुख्यम् ॥
गोधूमाख्यं सुसुरभियुतं गंधकर्चूरकं च जातीपुष्पं शतदलसमं
मल्लिकं चंपकं च । लोबानेन त्वतिसुरभिते काचभांड निधाय
तैलं चैतन्नृपतिसदने धारयेद्वैद्यवर्यैः ॥ पाने बस्तौ विहितमशने
नावनाभ्यंजने च मातंगे वा मनुजघनयोर्वातरोगाभिभूते ।
वाताष्ठीलां गलहनुशिरो गृध्रसी पादशूलं पक्षाघातं श्रवणन-
यनभ्रूललाटेषु शूलम् ॥ ऊरुस्तंभार्दितबधिरतैकांगरोगापतानं
मन्यास्तंभं त्रिकहृदयरुङ् मूकताक्षेपखांज्यम् । जिह्वास्तंभं
गतिविकलतां कुब्जतां दंतशूलं स्तन्यो गुल्मद्वयं वा गुदक-
टिचरणभ्रंशगुल्फौ च सुप्तिम् ॥ विश्वाचीं वा वृषणपवनं धातु-
वातापतानं मूकं कंपं जयति सकलान् वातरोगानतुक्तान् । रेतो-
वृद्धिं जनयति नवं यौवनं पौंस्त्ववृद्धिं बुद्धिं प्राणं वितरति
तथा पुष्टिमायुष्यकारी॥ वंध्यायाः पुत्रदं स्यात् ज्वरविहिततनौ ।
शोषदौर्भाग्यहंतृ तैलं भूपोपयोग्यं विनिगादितामिदं नाम नारायणं च॥

अर्थ–शतावर, बेर, मालिका, चित्रक, नागबला, अंड, बबूर, धतूरा, भटेउर, कलि-
यारी, वनमाल्लिका, इंद्रजौ, हेदीवृक्ष, पाढ, खरासिंगा, मुलहठी, बिजोरा, चंपा, चमेली,
थूहर, खिरेटी, वायविडंग, पवांड, सोंफ, असगंध, वाराहीकंद, वासनी, लाल अंड, धामन,
पारस पीपल, पतंग, अतिबला, काली और सफेद वाघेटी, शाक, (?)अनार, ओंगा,
सेमल, निर्गुंडी, कडुई कंदूरी, नरसल, पांगली, कांस, कौंचके बीज, भारंगी, निसोथ,
दंती, अरनी, कुसरी, पिच्छालिका, (?) करंद, कसोंदी, कमरख, केवणी, आक, जवासा,
काला कूडा, बेर, वेत, साल, बडा साल, सपेद घूंघची, लाल घूंघची, कैथ, ढाक,
इन्द्रायन, मूर्वा, पीपल, कमलिनी, रुदंती, दशमूल इन सबको जड लेवे, अगस्तिया,
चंदन, भिलाए, ओंगा, कंजा, सिंघाडे, पवांड, चोक, करंज इनके बीज लेवे. आंवला,
सहजना, कंजा, बमूर, महुआ, गोंदी, नेपती, जलकंदब, अमलतास, सासों, बेर, विर-
फूर्जन,(?) धतूरा, इमली, गूलर, सपेद और लाल अगस्तिया, अंकाल, दोनों गय आ-
वले, खेर, बहेडा, भेंडी, सपेद खेर, पीपलवृक्ष और हरड इन सब ओषधोंके पंचांग
लेवे. भिलाए, पलास, मेढासिंगी, सपेद ओंगा, नकछिकनी, मैन फलका वृक्ष, कोशाम्र

(कोकम्), कोह, कडुआ नीम, थूहर, घीगुवार, विजयसार, गोमा, लाल चित्रक, वरना, अंड, मोखा वृक्ष इन वृक्षोंकी छाल लेवे. केरा, विदारीकंद, शतावर, आडू, क्षीरकंद, असगंध, ककोडा, वांझ ककोडा, खजूर, मूसलीकंद और जमीकंद इत्यादि कंद लेवे. गिलोय, अडूसा, बेलगिरी, माषपर्णी, कांगनी, मालकांगनी पित्तपापडा, मेढासिंगी, वासनवेल, घूंघची, भांगरा मुंडी, निर्गुंडी, काली निर्गुंडी, परवल, मीठा परवल, हुलहुल इनके पंचांग लेवे. चिरायता चित्रक, दवना, सपेद और काली कोयल, लजालू, खैर, भांग, घीगुवार, गंगावतीद्वय, वृद्धदारु, तेरडा, कडुई घीया, कांडवेल, सहदेई, सारिवा, कृष्णसारिवा, छोटी बडी हरनखुरी, हरनवेल, कांगनी. मूर्वा, नागदौन, महुआके फूल इनके भी पंचांग लेय. नागरमोथा, भद्रमोथा, आमकी गुठली, बांदा, वडकी कोंपल, सक्कर कंद, धायके फूल, अखरोट, मोरसिखा, सुवर्ण केवडाकी कोंपल, धतूरा, केतकी इनकी नई कोंपल, अनार, कौंचके पत्ते, कैथकी जड, लोहेकी कीटी ये प्रत्येक औषध चार २ तोले लेवे. इनको जौ कूट करके ३०७२ तोले जलमें डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेय. फिर इसमें १९२ तोले तिलोंका तेल डाल और जटामांसी मँजीठ, खस, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, दालचीनी, चंदन, लौंग, नागकेशर, गूगल, कायफल, पतंग, तगर, वच, काली अगर, असगंध, संचरनिमक, नखद्रव्य, गोरोचन, लाल चंदन, फिटकरी, कूठ, वायविडंग, मुलहठी, सैंधानिमक, तेलिया देवदारु, तालीसपत्र, जायफल, धनिया, चंदन, बच्छनाग, कमलाक्ष, जावित्री, नेत्रवाला, कमल, अजमायन, लवलीफलके बीज, फिटकरी, कमलकी केशर, चित्रक, रेणुकबीज, भद्रमोथा, चव्य, बावची, मुलहटी, जवाखार, सज्जीखार, सोंफ, चिरफल, पीपल, कुटकी, कचूर, कारुची, जीयापोता, भिलाए, धतूरेके बीज, भांगरा, निसोथ, इमली, गूगल, जीरा, रार, रास्ना, अकरकरा, अनारकी छाल, दाख, अखरोट, नीमकी छाल, धनिया, धमासा, ब्राह्मी, सोंठ, चिरायता, तालमखाने, गजपीपर. अजमायन, अजमोद, इन्द्रायन, लोध, कौंचकी जड, गूगल वनकरेला, मेथी, काकडासिंगी, गौका अथवा बकरीका दूध तेलसे दुगुना लेवे; तथा इतना ही शतावरका रस और इतना ही लाखका काढा, इन सबको एकत्र करके तामेके पात्रमें पचन करे औ उसमें सुगंध होनेके वास्ते कपूर, केशर, कचूर, प्रियंगु, कपूरकचरी, चमेली, सेवती, मल्लिका और चंपा इनके फूल डाले. फिर कांचेके पात्रमें लोहवानकी धूनी देकर भरके धर रखे. इसको पीनेके अर्थ, बस्ति, भोजन, नस्य, देहमें लगाना, हाथी अथवा मनुष्य इनके वातरोग होनेसे और वातष्ठीला, गलग्रह, शिरोग्रह, गृध्रसी, पादशूल, पक्षाघात, कान, नाक, भौंह और ललाट इनके शूलको ऊरुस्तंभ, अर्दित, बधिरता, एकांगरोग, अपतानक, मन्यास्तंभ त्रिक उर इनमें

दर्दका होना, गूंगापना, आक्षेपक, खंज, जिह्वास्तंभ, लंगडापना, कुबडा, दांतोंका दर्द, स्तनरोग, गोला, गुदा, कमर और पैर इनका भ्रष्ट होना, खल्ली, सुप्ति, विश्वाची, अंडकोशोंकी वात, धातुगत वादी, अपतानक, मूकता, कंप और संपूर्ण कहे अथवा नहीं कहे ऐसे वादीके रोगोंको जीते, वीर्य बढे, यौवन देवे, पुरुषार्थकी वृद्धि करे, प्राण, बल, पुष्टि और आयुष्य इनको करे, वंध्याको पुत्र देवे, ज्वर, क्षय और दुर्भगता इनको नाश करे. यह तेल राजाओंके योग्य है इसको महालक्ष्मीनारायण कहते हैं. (हमारी समझमें किसी मूर्ख वैद्यने इसके श्लोक गढे हैं सो इसपर वैद्य बनानेका साहस न करे)॥

रास्नाद्यघृत ।

रास्ना पौष्करशिग्रुमूलदहनं सिंधूत्थगोक्षूरकं पिष्ट्वा पिप्पलिसंयुतं चलगदे पेयं सदा सर्पिषा । संपाच्याथ चतुर्गुणेन पयसा वा वाजिगंधायुतं सर्पिः पेयमसाध्यवातगदखे शुक्रक्षये दारुणे ॥

अर्थ–रास्ना, पुहकरमूल, सहजनेकी जड, चित्रक, सैंधानिमक, गोखरू और पीपल इनका कल्क, घृत और चौगुना दूध डालके घृत सिद्ध करे और असगंध चूर्णके साथ असाध्य वायु और शुक्रक्षयपर खानेको देवे ॥

पंचतिक्तघृत ।

निंबामृतावृषपटोलनिदिग्धिकानां भागान्पृथग्दश पलानि पचेद्घटेऽपाम् । अष्टावशेषितरसेन पुनश्च तेन प्रस्थं घृतस्य विपचेत्पिचुतुल्यकल्कैः ॥ रास्नाविडंगसुरदारुगजोपकुल्याद्विक्षारनागरनिशामिशिचव्यकुष्ठैः । तेजोवती मरिचवत्सकदीप्यकाग्निरोहिण्यपुष्करवचाकणमूलयुक्तैः ॥ मंजिष्ठया तु विषया त्रिवृता यवान्या संशुद्धगुग्गुलुपलैरपि पंचसंख्यैः । तत्सेवितं घृतमतिप्रबलं समीरसंध्यस्थिमज्जगतमप्यथ कुष्ठमीदृक् ॥ नाडीव्रणार्बुदभगंदरगंडमालाजत्रूर्ध्ववातगदगुल्मगुदोत्थमेहान् । यक्ष्मारुजश्वनसपीनसकासशोफहृत्पांडुरोगमथ विद्रधिवातरक्तम् ॥

अर्थ–नीमकी छाल, गिलोय, अडूसा, पटोलपत्र और कटेरी ये प्रत्येक चालीस २ तोले लेवे सबको जौकूट करके १०२४ तोले जल डालके जब अष्टावशेष काढा हो जावे, तब उतारके छान लेय और इसमें ६४ तोले घी डालके उसमें रास्ना, वायवि-

डंग, देवदारु, गजपीपल, जवाखार, सुहागा, सोंठ, हलदी, सोंफ, चव्य, कूठ, मालकांगनी, काली मिरच, कूडेकी छाल, अजमायन, चित्रक, कुटकी, पुहकरमूल, वच, पीपरामूल, मँजीठ, अतीस, निसोथ और किरमानी अजमायन ये प्रत्येक एक २ तोला ले इनका कल्क कर उस घीमें मिलाय और गूगल, पांच तोले डालके घृतको सिद्ध करे इसके सेवन करनेसे अत्यंत बढा हुआ वायु, संधि, आस्थि, मज्जा इनका वायु, कुष्ठ, नाडीव्रण, अर्बुद, भगंदर, गंडमाला, हसलीके ऊपरके भागकी वादी, गोला, बवासीर, प्रमेह, क्षय, श्वास, खांसी, पीनस, सूजन, पांडुरोग, विद्रधि और वातरक्त इन रोगोंको नाश करे ॥

वातरोगपर पथ्यापथ्य ।

कुलित्था माषगोधूमा रक्ताभाः शालयो हिताः । पटोलं शिग्रु वार्ताकं दाडिमं च परूषकम् ॥ मत्स्यंडिका घृतं दुग्धं किलाटं दधिकूर्चिका । बदरं लशुनं द्राक्षा तांबूलं लवणं तथा ॥ चटकः कुक्कुटो बर्हिस्तित्तिरश्चेति जांगलाः । शिलींध्रः पर्वतो नक्रो गर्गरः खुडिशो झषः ॥ यथाश्रमं यथावश्यं यथाचरणमेव हि । वातव्याधौ समुत्पन्ने पथ्यमेतन्नृणां भवेत् ॥

अर्थ–कुलथी, उडद, गेहूं, लाल चावल, पटोल, सहजना, बैंगन, अनार, फालसा, खांड, घी, दधिकूर्चिका (दूध और दही इन दोनोंको समान लेके एकत्र पकाया हुआ पदार्थ), किलाट, बेर, लहसन, दाख, बिड निमक, चिडिया, मुरगा, मोर, तीतर, अरण्य, पशु, भूच्छत्र, चिरायता, सुसर, गर्गर, खुडिश, झष इन जातिके मत्स्य इतने पदार्थ-श्रम, आवश्यकता और आचारके अनुसार विचारपूर्वक वातव्याधि पर पथ्यमें देवे ॥

अपथ्य ।

चिंताप्रजागरणवेगविधारणानि छर्दिः श्रमोऽनशनता चणकाः कलायाः । श्यामाकचूर्णकुरविंदुनिवारकंगुमुस्तास्तडागतटिनीसलिलं करीरम् ॥ क्षौद्रं कषायकटुतिक्तरसा व्यवायो हस्त्यश्वयानमपि चंक्रमणं च खट्वा । आध्मानिनोर्दितवतोपि पुनर्विशेषात्स्नानं प्रदुष्टसलिलैर्द्विजघर्षणं च ॥ निःशेषतंत्रपरिकीर्तित एष वर्गो नृणां समीरणगदेषु मुदं न दत्ते॥ वातरोगस्त्वसाध्योऽयं दैवयोगात्सुसिध्यति । अनुमानेन कुर्वंति वैद्यकं न प्रतिज्ञया ॥

अर्थ-चिंता, जागर, वेगधारण, कैका दवा, श्रम, उपवास, चना, मटर, श्यामकका आटा, बडी शाली, नीवार, नागली, काङ्ग, मुस्ता, तालाव व नदीका पानी, वांसका अंकुर, सहत, कषैला, तीखा, कडुवा इतने रस, मैथुन, हाथी व घोडा इन पर बैठना, बहुत फिरना, खाट पर सोना ये सब वातव्याधि पर अपथ्य हैं और आध्मान व अर्दितरोग जिसके होय वह विशेषतः बूरे पानीका स्नान और दंतौन न करे. मैंने सर्व ग्रंथ देखकर ये अपथ्य पदार्थ निकाले हैं. वातरोग तो असाध्य है, परंतु दैवगतिसे साध्य होता है. अत एव वैद्योंको अ मानसे चिकित्सा करनी चाहिये प्रतिज्ञापूर्वक चिकित्सा सिद्ध नहीं होती ॥

वातरोग पर पथ्य ।

अभ्यंगो मर्दनं बस्तिः स्नेहं स्वेदोऽवगाहनम् । संवाहनं संशमनं प्रवृत्तिर्वातवर्जनम् ॥ अग्निकर्मोपनाहश्च भूशय्या स्नानमासनम् । तैलद्रोणी शिरोबस्तिः शमनं नस्यमातपः ॥ संतर्पणं बृंहणं च कीलाटं दधिकूर्चिका । सर्पिस्तैलं वसा मज्जा स्वाद्वम्ललवणा रसाः ॥ नवीनास्तिलगोधूममाषाः संवत्सरोषिताः । शालयः षष्टिकाश्चापि कुलित्थानां रसाः पुरः ॥ ग्राम्यानूपखरोष्ट्राश्च रासभच्छागलादयः ॥ आरूषाः कोलमहिषन्यंकुखड्गिगजादयः ॥ औदका हंसकादंबचक्रमर्दबकादयः । बिलेशया भेकगोधा नकुलश्च द्विजादयः ॥ चटकः कुक्कुटो बर्हिस्तित्तिरश्चेति जांगलाः । शिलींध्रः पर्वतो नक्रो गर्गरः कवयीलिशः ॥ एरंडचुलकी कर्माशिशुमारस्तिमिंगिलः । रोहितो मद्गुरः शृंगी वर्मी च खुडिशो झषः ॥ पटोलं शिग्रु वार्त्ताकं लशुनं दाडिमद्वयम् । पक्कं तालं रसालं च ललदंबु परूषकम् ॥ जंबीरं बदरं द्राक्षा नागरं गोमधूकजम् । प्रसारणी गोक्षुरकः शुक्लाक्षी पारिभद्रकः ॥ पयांसि च पयःपेटी रुबुतैलं गवां जलम् । मत्स्यंडिका च ताम्बूलं धान्याम्लं तिंतिडीफलम् ॥ स्निग्धोष्णानि च भोज्यानि स्निग्धोष्णं चानुलेपनम् । विशेषाद्वमनार्तानामामाशयमुपागते ॥ पक्वाशयस्थे मांसस्थे तथा स्निग्धं

विरेचनम् । प्रत्याध्मानाध्मानयोर्वावर्तिलंघनदीपनम् ॥ अ-ष्ठीलाख्ये मूत्रविधिः शुक्रस्थे क्षयजित् क्रिया । त्वङ्मांसासृक् शिराप्राप्ते हितं शोणितमोक्षणम् ॥ यथाश्रमं यथावस्थं यथाचरणमेव हि । वातव्याधौ समुत्पन्ने पथ्यमेतन्नृणां भवेत् ॥

अर्थ-उबटना, वातनाशक तेल आदिकी मालिस करना, बस्तिकर्म, स्नेहनकर्म, पसीने निकालना, गरम जलसे स्नान, मींडना, संशमन औषधोंमें प्रवृत्ति, वायुका त्याग, अग्निकर्म, उपनाह, धरतीमें सोना, स्नान, बैठना, तेलकी कुप्पी, शिरबस्ती, शमन, नस्य, धूप, संतर्पण, बृंहण, किलाट (छाछका भेद), दहीकी कूर्चिका, घृत, तैल, वसा, मज्जा, मीठे, खट्टे, निमकीन रस, नवीन तिल, गेहूं, उडद, वर्षदिनके पुराने चावल, सॉठी चावल, कुलथीका रस, गूगल, गामके अनूपके संचारी जीव, गधा, ऊंट और बकरी आदिका मांस, आरूष (सांपका भेद), सूअर, भैंसा. बारहसींगा, गेंडा और हाथी आदिका मांस, जलके जीव. हंसोंका समूह; चकवा, बगला आदि बिलमें रहनेवाले, मेंडका, गोह, नौला, पक्षी—चिडा, मुरगा, मोर, तीतर इत्यादि जांगलजीव. शिलींध्र, पर्वत, नक्र, गर्गर, कवयी और इल्लिश जातिकी, मछली, एरंड, चुलकीकर्म, सूस, बडी मछली, रोहू मच्छली, मद्गुर, शृंगी, वर्मी खुल्लिश आदि मछली, परवल, सहजना, बैंगन, लहसन, खट्टे, मिठे अनार, पका तालफल, आंब, स्वच्छ जल, फालसे, जंभीरी' बेर, दाख, सोंठ, महुआ, प्रसारणी, गोखरू, काकोली, नीम, दूध नारियलका जल, गोमूत्र, खांड, पान, धान्याम्ल, इमली, चिकने गरम भोजन, चिकने और गरम ही लेप जो वादीकी वमनसे पीडित हैं. आमाशयगत वात, पक्वाशयगत वात, मांसगत इनमें स्निग्ध विरेचन देवे. आध्मान और प्रत्याध्मान वातमें वर्ती करना लंघन और दीपनकर्त्ता विधि करे. अष्ठीलावातमें मूत्र कराना. शुक्रस्थ वातमें उसके नाशक क्रिया करे. त्वचा, मांस, रुधिर और शिरागत वातमें रुधिरमोक्षण कर्म करना हित है. जैसे उस रोगीको श्रम हो और जैसी उसकी अवस्था हो उसके अनुसार तथा उस रोगीके आचरणके अनुसार यह पथ्य कही है ॥

अपथ्य ।

चिंताप्रजागरणवेगविधारणानि छर्दिः श्रमोऽनशनता चणकाः कलायाः । नीवारकंगुशरवैणवकोरदूषश्यामाकचूर्णकुरुविंदमुखानि यानि ॥ धान्यानि तालतृणजानि च राजमाषा मुद्गा गुडा गरुनदीजलशीतलं च । जंबूकसेरुकमलं क्रमुकं मृणालं निष्पा-

वबीजमपि तालफलास्थिमज्जा ॥ शिंबी च पत्रभवशाकमुदुंबरं च शीताम्बु रासभपयोऽपि विरुद्धमन्नम् । क्षारोपि शुष्कपललं रुधिरस्रुतिश्च क्षौद्रं कषायकटुतिक्तरसा व्यवायो हस्त्यश्वयानमपि चंक्रमणं च खट्वा ॥ आध्मानिनोर्दितवतोपि पुनर्विशेषात्स्नानं प्रदुष्टसलिलं द्विजघर्षणं च । निःशेषतस्तु परिकीर्तित एष वर्गो नृणां समीरणगदेषु मुदं न दत्ते ॥

अर्थ—चिंता करना, जागना, मल, मूत्र आदि वेगोंको रोकना, वमन, परिश्रम, भोजन त्याग (उपवास), चने, मटर, सामखिया, कांगनी, सरपत्ते और बांसके चांवल, कोरदूष (कोदों), सामखिया, चूना, कुरुविंद (मोटे चावल) आदि धान्य, ताल, तृणजातिके अन्न, चौरा, मूंग, गुड, काली अगर, नदीका जल, जामन, कसेरू, कमलगट्टे, सुपारी, भसीडे (चौराके बीज), तालके फलकी गुठली, कमलकंद, तेंदू, करेले नवीन तालका फल, सेमके साग, पत्रशाक, गूलर, शीतल जल, गद्धीका दूध, विरुद्ध अन्न, क्षार, सूखा मांस, रुधिरका निकलना, सहत, कषेले, चरपरे और कडवे रस, मैथुन, हाथी, घोडेकी सवारी, डोलना, खरदरी खाट, दूषित जलसे दातोंका घिसना (मांजना) और अफरा रोग तथा लकवावालेको विशेषकरके स्नान इत्यादिक यह संपूर्ण वस्तु वातव्याधि रोगीको सुखकारी अर्थात् पथ्य नहीं है किंतु-अपथ्य हैं ॥

इति श्रीकृष्णलालमाथुरतनुजदत्तरामनिर्मिते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघण्टुरत्नाकरे वातव्याधिकर्मविपाकनिदानचिकित्सापथ्यापथ्य परिपूर्णतामगात् ।

वातरक्तकर्मविपाकः ।

वातरक्तका ज्योतिःशास्त्राभिप्राय ।

व्योमस्थाने महीपुत्रः शनिदृष्टो यदा भवेत् ।
जन्मकाले यस्य जंतोः स वातरुधिरार्दितः ॥

अर्थ—जिस प्राणीके जन्मसमय दशम स्थानमें मंगल बैठा होय और शनैश्वरकी उस पर दृष्टि होय तो वह पुरुष वातरक्त रोगी होवे ॥

शमन।

दशमस्थानस्थितशनिदृष्टभौमजनितरक्तदोषोपशांतये मंगल-प्रीतये पूर्वोक्तमेव जपादिकं कुर्यात् ॥

अर्थ-दशमस्थानस्थित और शनिदृष्ट मंगलका दोष नाश करनेको पूर्वोक्त जप-हवनादिक करे तो वातरक्तरोग दूर हो ॥

वातरक्तनिदान।

लवणाम्लकटुक्षारस्निग्धोष्णाजीर्णभोजनैः। क्लिन्नशुष्कांबुजानूपमांसपिण्याकमूलकैः ॥ कुलित्थमाषनिष्पावशाकादिलवलेक्षुभिः। दध्यारनालसौवीरसूक्ततक्रसुरासवैः ॥ विरुद्धाध्यशनक्रोधदिवास्वप्नप्रजागरैः। प्रायशः सुकुमाराणां मिथ्याहारविहारिणाम् ॥ स्थूलानां सुखिनां चाथ वातरक्तं प्रकुप्यति ॥

अर्थ-नोन, खटाई, कडवी, खारी, चिकना, गरम, कच्चा ऐसे भोजनसे सडे और सूखे ऐसे जलसंचारी जीवोंके और जलके समीप रहनेवाले जीवोंके मांससे, पिण्याक (खर), मूली, कुलथी, उडद, निष्पाव (सेम), शाक (तरकारी), पलल (तिलकी चटनी), ईख, दही, कांजी, सौवीर मद्य, सूक्त (सिरका आदि), छाछ, दारु, आसव (मद्यविशेष), विरुद्ध (जैसे दूध, मछली), अध्यशन (भोजनके ऊपर भोजन), क्रोध, दिनमें निद्रा, रातमें जागना इन कारणोंसे विशेषकरके सुकुमार पुरुषोंके और मिथ्या आहार विहार करनेवाले पुरुषोंके और जो मोटा होय तथा सूखा होय ऐसे मनुष्योंके वातरक्त रोग होय है ॥

वातरक्तरोगकी संप्राप्ति।

हस्त्यश्वोष्ट्रैर्गच्छतश्चाश्नतश्च विदाह्यन्नं सविदाहाशनस्य। कृत्स्नं रक्तं विदहत्याशु तच्च स्रस्तं दुष्टं पादयोश्चीयते तु ॥ तत्संयुक्तं वायुना दूषितेन तत्प्राबल्यादुच्यते वातरक्तम् ॥

अर्थ-हाथी, घोडा, ऊंट इन पर बैठकर जानेसे, (यह वायुके बढनेका और विशेषकरके रुधिरके उतरनेका कारण है) विदाहकारी अन्नके खानेवाले पुरुषके (इसीसे दग्धरुधिरकी वृद्धि होती है) गरमागरम अन्नके खानेवाले ऐसे पुरुषके सब शरीरका रुधिर दुष्ट होकर पैरोंमें इकट्ठा होय और वह दुष्ट वायुसे दूषित होकर मिले, इस रोगमें वायु प्रबल है. इसीसे इस रोगको वातरक्त ऐसे कहते हैं ॥

वातरक्तमें अन्यदोषसंबंधी लक्षण ।

तद्वत् पित्तं दूषितेनासृगाक्तं श्लेष्मा दुष्टो दूषितेनासृगाक्तः । स्पर्शोद्विग्नौ भेदतोदप्रशोषस्वापोपेतौ वातरक्तेन पादौ ॥ पित्तासृग्भ्यामुग्रदाहौ भवेतामत्यर्थोष्णौ रक्तशोफौ मृदू च । कंडूमंतौ स्वेदशीतौ सशोफौ पीनौ स्तब्धौ श्लेष्मदुष्टौ तु रक्ते ॥ सर्वैर्दुष्टैः शोणितैर्वापि दोषाः स्वं स्वं रूपं पादयोर्दर्शयंति ॥

अर्थ–वायुके योगसे पित्त और कफ दूषित होकर दुष्ट रक्तके साथ मिल जाते हैं तब पांव स्पर्श होते ही दुखते हैं और फूटन, वेदना, शुष्कता और भिरभिरीसे युक्त होते हैं. रक्तपित्तसे रक्त दूषित होनेसे पांव उग्रदाहसे युक्त और उष्ण स्पर्शसे युक्त होते हैं और उन पर लाल व मृदु सूजन होती है. कफसे रक्त दूषित होके, पांवमें जम जानेसे पांव कंडुयुक्त, जड, पसीनेसे युक्त, थंडे, मोटे और स्तब्ध होते हैं. त्रिदोषसे युक्त होनेसे वह वातरक्त सब दोषोंके लक्षणोंसे युक्त होता है ।

पूर्वरूप ।

स्वेदोऽत्यर्थं न वा कार्ष्ण्यं स्पर्शाज्ञत्वं क्षतेऽतिरुक् । संधिशैथिल्यमालस्यं सदनं पिटिकोद्गमः ॥ जानुजंघोरुकट्यंशहस्तपादांगसंधिषु । निस्तोदः स्फुरणं भेदो गुरुत्वं सुप्तिरेव च ॥ कंडुः संधिषु रुग्दाहो भूत्वा नश्यति चासकृत् । वैवर्ण्यं मंडलोत्पत्तिर्वातासृक्पूर्वलक्षणम् ॥

अर्थ–पसीना बहुत आवे, अथवा नहीं आवे, शरीर काला हो जाय, शरीरमें स्पर्शका ज्ञान जाता रहे और थोडीसी चोट लगनेसे पीडा अधिक होय संधि ढीली हो जाय, आलस्य आवे, ग्लानि हो, शरीरमें फुनसी उठें, घोंटू, जंघा, ऊरु, कमर, कंधा, हाथ, पैर, सन्धि और अंगोंमें सुईके चुभानेकीसी पीडा होय स्फुरण (फरकना), तोडनेकीसी पीडा, भारीपना, बधिरता ये लक्षण होते हैं और संधियोंमें खुजली चले और शूल होकर वारंवार नाश हो जाय, शरीरका विवर्ण हो जाय, रुधिरके चकत्ता देहमें पड जांय, ये वातरक्तके पूर्वरूप होते हैं ॥

वातरक्तमें अन्यसंसर्ग होनेसे उपद्रव ।

वाताधिकेऽधिकं तत्र शूलस्फुरणतोदनम् । शोथश्च रौक्ष्यं

कृष्णत्वं श्यावता वृद्धिहानयः ॥ धमन्यंगुलिसंधीनां संको-
चोंऽगग्रहोऽतिरुक् । शीतद्वेषानुपशयस्तंभवेपथुसुप्तयः ॥

अर्थ-वाताधिक वातरक्तमें शूल, अंगोंका फरकना, चोटनेकीसी पीडा ये अधिक होते हैं, सूजन, रूखापना, नीलापना अथवा श्यामवर्णता एवं वातरक्तके लक्षणोंकी वृद्धि होय और क्षणभरमें ह्रास (कम हो) धमनी और अंगुलियोंकी संधियोंमें संकोच होय. शरीर जकडबंध होय, अत्यंत पीडा होय सर्दी बुरी लगे और शीतके सेवन करनेसे दुःख होय, स्तंभ होय, कंप और शून्यता होय ये लक्षण होते हैं ॥

रक्ताधिक वातरक्त तथा पित्ताधिक वातरक्त ।

रक्ते शोफोऽतिरुक्क्लेदस्ताम्रश्चिमचिमायते ॥ स्निग्धरूक्षैः शमं
नैति कंडूक्लेदसमन्वितः ॥ पित्ते विदाहः संमोहः स्वेदो मूर्च्छा
मदः सतृट् । स्पर्शासहत्वं रुग्णांगः शोफः पाको भृशोष्णता ॥

अर्थ-रक्ताधिक वातरक्तमें सूजन, अत्यन्त पीडा और उसमेंसे तामेके रंगका क्लेद वहै, उस सूजनमें चिमचिम वेदना होय, स्निग्ध अथवा रूखे पदार्थसे शांति न होय. उस सूजनमें खुजली और पानी निकले पित्ताधिक वातरक्तमें अत्यन्त दाह, इन्द्रियोंको मोह, पसीना, मूर्च्छा, मस्तपना, प्यास, स्पर्श बुरा मालूम हो, पीडा, लाल रंग, सूजन, छोटे छोटे पीरे फोडे. अत्यन्त गरमी यह लक्षण होते हैं ॥

कफरक्तनिदान ।

कफे स्तैमित्यगुरुतासुप्तिस्निग्धत्वशीतता ।
कंडूर्मन्दा च रुग्द्वंद्वे सर्वलिङ्गं च संकरात् ॥

अर्थ-कफाधिक वातरक्तमें स्तैमित्य (गीले कपडेसे आच्छादित समान), भारीपना, शून्यता, चिकनापना, शीतलता, खुजली और मन्द पीडा ये लक्षण होते हैं. दो दोषोंके वातरक्तमें दो दोषोंके लक्षण और तीनों दोषोंके वातरक्तमें तीन दोषोंके लक्षण होते हैं. पैरोंमें वातरक्त हुआ होय उसकी अपेक्षा करनेसे हाथोंमें होय है उसको कहते हैं ॥

अंगोंमें प्रसरणत्वकथन ।

पादयोर्मूलमास्थाय कदाचिद्धस्तयोरपि ।
आखोर्विषमिव क्रुद्धं तद्देहमनुसर्पति ॥

अर्थ-वह वातरक्त पैरोंके मूलमें होकर कदाचित् हाथोंमें भी होय है. सो आखु (मूसे)के विषसदृश सर्वदेहमें मंद मंद फैल जाय यह वातरक्त चरकने

दो प्रकारका कहा है, एक उत्तान, दूसरा गंभीर, त्वचा और मांस इनमें होय सो उत्तान और गंभीर इसकी अपेक्षा भीतरी होय है ॥

वातरक्तके असाध्य लक्षण ।

आजानु स्फुटितं यच्च प्रभिन्नं प्रस्रुतं च यत् ।
उपद्रवैर्यच्च जुष्टं प्राणमांसक्षयादिभिः ॥
वातरक्तमसाध्यं स्याद्याप्यं संवत्सरोषितम् ॥

अर्थ-आजानु (जंघाके नीचेके भाग) पर्यन्त गया भया वातरक्त असाध्य है. जिसकी त्वचा फट गई होय, चिर गया होय और जो स्रावयुक्त होय ऐसा वातरक्त प्राण मांसक्षयादि उपद्रवयुक्त होय, आदिशब्दसे जो आगे (श्रम, अरोचक, श्वास) इत्यादिक कहेंगे वहभी लक्षण होय सो भी असाध्य है. वातरक्त प्रगट भये वर्षदिन व्यतीत हो गया होय सो याप्य होय है वर्षदिनके पहले साध्य होय है परंतु उसमें स्फुटितादि लक्षण न होय तौ साध्य है ॥

वातरक्तके उपद्रव ।

अस्वप्नारोचकश्वासमांसकोथशिरोग्रहाः । संमूर्च्छाऽमन्दरुक्तृष्णाज्वरमोहप्रवेपकाः ॥ हिक्कापांगुल्यवीसर्पपाकतोदभ्रमक्लमाः । अंगुलीवक्रतास्फोटदाहमर्मग्रहार्बुदाः ॥ एतैरुपद्रवैर्वर्ज्यं मोहेनैकेन चापि यत् ॥

अर्थ-निद्रानाश, अरुचि,श्वास, मांसका सडना, मस्तकका जकडना, मूर्च्छा,अत्यन्त पीडा, प्यास, ज्वर,मोह, कंप, हिचकी, पांगुरापना, विसर्परोग, पकना, नोचनेकीसी पीडा, भ्रम, अनायास, श्रम, उंगली टेढी हो जाय, फोडा, मर्मस्थानोंमें पीडा, अर्बुद (गांठ) हो इन उपद्रव युक्त वातरक्तवाला रोगी असाध्य है अथवा एक मोहयुक्त ही होय तौभी असाध्य जानना ॥

साध्यासाध्यत्व ।

अकृत्स्नोपद्रवं याप्यं साध्यं स्यान्निरुपद्रवम् ।
एकदोषानुगं साध्यं नवं याप्यं द्विदोषजम् ॥
त्रिदोषजमसाध्यं स्याद्यस्य च स्युरुपद्रवाः ॥

अर्थ-जिस वातरक्तमें सब उपद्रव होय नहीं वह याप्य है और निरुपद्रव साध्य है और जो एक दोषका होय वह साध्य है और द्विदोषज याप्य और त्रिदोषज तथा उपद्रवयुक्त होय तौ वातरक्त असाध्य है. यह श्लोक क्षेपक है माधवका नहीं है ॥

वातरक्त पर सामान्य चिकित्सा।

वातशोणितिनो रक्तं स्निग्धस्य बहुशो हरेत् ।
अल्पाल्पं रक्षयेद्वायुं यथादोषं यथाबलम् ॥

अर्थ-वातरक्त रोगीको प्रथम स्नेहपान कराकर वारंवार दोष, बलको विचार्थीमें [illegible] थोडा २ रुधिर निकाला करे और वादीसे रोगीकी रक्षा करता रहे तो यह रोग [illegible] होवे ॥

उग्रांगदाहतोदेषु जलौकाभिर्विनिर्हरेत् ।
शृंगतुंबैश्चिमिचिमाकंडूरुग्वेदनान्वितम् ॥
प्रच्छन्नेन शिराभिर्वा देशादेशांतरं व्रजेत् ॥

अर्थ-वातरक्तरोगमें देहमें घोर दाह और दर्द यदि होने लगे तो उसके रुधिरको जोंक लगायके निकाल डाले तथा उसमें चिमचिमाहट (चरचराने लगे), खुजली, पीडा और दुःख होता होय तो उसके तूंबी अथवा सिंगी लगाके रुधिरको निकाले. यदि ऐसे दुष्ट रुधिरको रोगीके देहसे न निकाला जावे तो वह गुप्तमार्गसे अथवा नाडियोंके मार्गसे इस जगेसे दूसरी जगे चला जाता है ॥

अंगे म्लाने तु न स्राव्यं रूक्षं वातोत्तरं च यत् ।
गंभीरश्वयथुस्तंभकंपग्लानिशिरामयान् ॥
रोगानन्यांश्च वातोत्थान् कुर्याद्वायुररक्षितः ॥

अर्थ-वातरक्तरोगीका अंग म्लान किंवा रूक्ष होनेसे किंवा वाताधिक रक्तपित्तका रुधिर न निकाले. यदि भूलसे ऐसे रोगीका रुधिर निकाल लिया जावे तो और वादीका संरक्षण न करे तो गंभीर सूजन, स्तंभ, कंप, ग्लानि, मस्तकरोग और अनेक प्रकारके वातरोगोंको उत्पन्न करे है ॥

पिंडतैलादिनाभ्यंगं पानं तिक्तादिसर्पिषा ।
सेकलेपाह्यसृङ्मुक्तिः शोधनं चोभयोर्हितम् ॥

अर्थ-रक्तबोल डालके तेल सिद्ध करे. उस तेलकी देहमें मालिस करे और कुटकी इत्यादिक योग्य पदार्थ और घी इनका पान, जलका छिडकना, लेप करना, रुधिर निकालना तथा दस्त कराना, वमन करना ये सब कर्म वातरक्तरोगवालेको हितकारी हैं ॥

विविधान्वातरोगान्वा मृत्युं वात्यवसेचितम्।
रक्तं कुर्य्यात्ततः स्निग्धात्तत्प्रमाणेन निर्हरेत् ॥

अर्थ–अत्यंत रुधिर निकालनेसे अनेक प्रकारके वातरोग अथवा मृत्यु होती है. इस वास्ते रोगीको स्निग्ध करके प्रमाणका ही रुधिर निकाले अधिक न निकाले ॥

विरेचयेच्च पित्तादौ स्नेहयुक्तैर्विरेचनैः।
बाह्यमालेपनाभ्यंगपरिषेकोपनाहनैः ॥
विरेकास्थापनस्नेहपानैर्गंभीरमाचरेत् ॥

अर्थ–पित्ताधिक वातरक्त पर स्नेहयुक्त विरेचन देवे. बाह्य वातरक्त पर लेप, अभ्यंग, जलका छिडकना तथा उपनाह ये उपचार करे और गंभीर वातरक्त पर विरेचन, निरूहबस्ती और स्नेहपान ये उपचार करे ॥

भोजन और रस।

पुराणयवगोधूमशालयः षष्टिकास्तथा।
भोजनार्थे रसार्थे तु विष्किराः प्रतुदा हिताः ॥

अर्थ–पुराने जौ, गेहूं, चावल, साठी चावल ये भोजनके वास्ते देवे तथा पक्षियोंके मांसमें चिडा, मुरगा आदि और तोता, मैना आदिका मांसरस देवे तो हितकारी होवे॥

यूष।

आढकाश्चणका मुद्गा मसूराः सकुलित्थकाः।
यूषार्थे बहुसर्पिष्काः प्रशस्ता वातशोणिते ॥

अर्थ–वातरक्त पर अरहर, चना, मूंग, मसूर, कुलथी इनके यूषमें अधिक घी डालके देवे ॥

शाक।

सुनिषण्णकवेत्राग्रं काकमाची शतावरी।
वास्तूकोपादिका शाकं शाकं सौवर्चलं तथा ॥
घृतमांसरसैर्भृष्टं शाकसात्म्याय दापयेत् ॥

अर्थ–चौपातिया, वेतकी कोंपल, मकोय, शतावर, बथुआ, पोई, दुरदुर, वरना, संचरानिमक, घीमें भुने मांस तथा मांसरस ये पदार्थ शाक खानेकी इच्छा होवे तो उन रोगियोंको देना चाहिये ॥

छिन्नोद्भवाकषायेण सेव्यं सिद्धं शिलाजतु ।
पंचकर्मविशुद्धेन वातरक्तप्रशांतये ॥

अर्थ-पहिले वमन रेचकादि पांचों कर्मसे शुद्ध करके फिर गिलोयके काढेमें शुद्ध शिलाजीत डालके पीवे तो वातरक्त शांत होय ॥

वासादि क्वाथ ।

वासागुडूचीचतुरंगुलानामेरंडतैलेन पिबेत्कषायम् ।
क्रमेण सर्वांगजमप्यशेषं जयेदसृग्वातभवं विकारम् ॥

अर्थ-अडूसा, गिलोय और अमलतास इनके काढेमें अंडीका तेल डालके पीवे तो वातरक्तका विकार यदि सर्व अंगमें होय तो उसको भी क्रम २ से दूर करे ॥

मंजिष्ठादि क्वाथ ।

मंजिष्ठा कुटजामृता घनवचा शुंठी हरिद्राद्वयं वासा पर्पटसारिवा प्रतिविषानंता विशालाजलम् । क्षुद्रारिष्टपटोलकोष्ठकटुका भार्ङ्गी विडंगाग्निकं मूर्वा दारुकलिंगभृंगमगधा त्रायंति पाठा वरी ॥ गायत्री त्रिफला किरातकमहानिंबासनारग्वधश्यामावल्गुज-चंदनं सवरुणं पूतीकशाकोटकम् । मंजिष्ठादिमसुं कषायविधिना नित्यं पुमान्यः पिबेत्त्वग्दोषा ह्यचिरेण यांति विलयं कुष्ठानि चाष्टादश ॥ वातरक्ते प्रसुप्ते च विसर्पे विद्रधौ तथा । सर्वेषु रक्त-दोषेषु मंजिष्ठादिः प्रशस्यते ॥

अर्थ-मंजीष्ठ, कुडेकी छाल, गिलोय, नागरमोथा, वच, सोंठ, हलदी, दारुहलदी, अडूसा, पित्तपापडा, सारिवा, अतीस, धमासा, इन्द्रायनकी जड, नेत्रवाला, कटेरी, नीमकी छाल, पटोलपत्र, कूठ, कुटकी, भारंगी, वायविडंग, चित्रक, मूर्वा, देवदारु, इन्द्रजौ, भांगरा, पीपल, त्रायंती, पाढ, सतावर, खैरसार, त्रिफला, चिरायता, बकायनकी छाल, विजेसार, अमलतासका गूदा, निसोथ, बावची, लाल चंदन, वरना, कंजा और सहोडा ये सब समानभाग औषध लेके २ तोलेका काढा करे इसको पीनेसे त्वचाके दोष, अठारह प्रकारके कोढ, वातरक्त, सुन्नवात, विसर्परोग, विद्रधि और संपूर्ण रुधिरके विकार तत्काल नाश करे ॥

लघुमंजिष्ठादि क्वाथ ।

मंजिष्ठा त्रिफला तिक्ता वचा दारु निशामृता । निंबश्चैषां कृतः

क्वाथो वातरक्तविनाशनः ॥ पामाकपालिकाकुष्ठरक्तमंडल-
जिन्मतः ॥

अर्थ-मंजीठ, हरड, बहेडा, आंवला, कुटकी, वच, दारुहलदी, गिलोय और नीमकी छाल इनका काढा वातरक्त, खाज, कापालिक, कुष्ठ और रुधिरके चकत्तोंको नाश करे ॥

पटोलादि क्वाथ।

पटोली त्रिफला तिक्ता गुडूची च शतावरी।
एष क्वाथो जयेत्पीतो वातास्रं दाहसंयुतम् ॥

अर्थ-पटोलपत्र, हरड, बहेडा, आंवला, कुटकी, गिलोय और शतावर इनका काढा पीवे तो दाहयुक्त वातरक्तको जीते ॥

वासादि क्वाथ।

क्वाथो वासामृतातिक्ताभवो वातास्रनोदनः ॥

अर्थ-अडूसा, गिलोय और कुटकी इनका काढा वातरक्तनाशक है ॥

एरंडतैलयोग।

एरंडतैलेन गुडूचिकायाः क्वाथोऽथ वा वर्धितपिप्पली वा।
गुडेन पथ्याखिलवातरक्तं विनाशयेत्पथ्ययुतस्य पुंसः ॥

अर्थ-गिलोयके काढेमें अंडीका तेल डालके पीवे अथवा वर्द्धमान पीपल देवे अथवा हरडके चूर्णको गुडमें मिलायके देवे और पथ्यसे रहे तो वातरक्त दूर होय ॥

दार्व्यादि क्वाथ।

दार्वीगुडूचीकुटकोग्रगंधामंजिष्ठनिंबत्रिफलाकषायः।
वातास्रमुच्चैर्नवकार्षिकाख्यो जयेच्च कुष्ठान्यखिलानि पुंसाम् ॥

अर्थ-दारुहलदी, गिलोय, कुटकी, वच, मंजीठ, नीम, हरड, बहेडा, आंवला इन नौ औषधोंको तोले २ लेवे सबका क्वाथ करके पीवे यह नवकार्षिकगूगल उग्र वातरक्त तथा संपूर्ण कुष्ठको नाश करे ॥

वत्सादिन्यादि क्वाथ।

वत्सादिन्युद्भवः क्वाथः पीतो गुग्गुलुमिश्रितः।
समीरेण समायुक्तं शोणितं संप्रणाशयेत् ॥

अर्थ-गिलोयके काढेमें गूगल डालके पीवे तो वातरक्तको नाशकरे ॥

पित्ताधिक वातरक्तपर।

पित्तोत्तरे तु काश्मर्यद्राक्षारग्वधचंदनैः । मधुरक्षीरकाकोली-युक्तैः क्वाथं सुशीतलम् ॥ शर्करामधुसंयुक्तं वातरक्ते पिबेन्नरः ॥

अर्थ-कंभारीकी छाल, दाख, अमलतास, लाल चंदन, काकोली और क्षीरकाकोली इनके काढेमें सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो वातरक्तको दूर करे ॥

काकोल्यादि क्वाथ।

काकोलाख्यामृताक्वाथं पिबेत्कोष्णं यथाबलम् ।
पथ्यभोजी त्रिसप्ताहान्मुच्यते वातशोणितात् ॥

अर्थ-काकोली और गिलोय इनका काढा बलाबल विचारके कुछ गरम करके पीवे और पथ्यसे रहे तो सात दिनमें यह प्राणी वातरक्तरहित होय ॥

समधूच्छिष्टमंजिष्ठससर्जरससाधितम् ।
पिंडतैलादिनाभ्यंगो वातरक्तरुजापहः ॥

अर्थ-मोम, मंजीठ, रार इनके तेलसे अथवा लाल बोलके तेलका मालिस करनेसे वातरक्तकी पीडा दूर होवे ॥

गुडूचीयोग।

गुडूच्याः स्वरसं कल्कं चूर्णं वा क्वाथमेव वा ।
सेवते यो नरो नित्यं वातरक्तात्स मुच्यते ॥

अर्थ-गिलोयका स्वरस, कल्क, चूर्ण अथवा काढा इनमें कोई वस्तुका सेवन करे तो वातरक्त नष्ट होय ॥

गुडूच्यादि क्वाथ।

गुडूची वाकुची चक्रमर्दश्च पिचुमंदकः । हरीतकी हरिद्रा च धात्री वासा शतावरी ॥ वालं नागबला यष्टी मधूकं क्षुरकोपि च । पटोलस्यलतोशीरं मंजिष्ठा रक्तचंदनम् ॥ गुडूच्यादिरयं क्वाथो वातरक्तांतकारकः । कुष्ठानामपि संहर्त्ता कंडूमंडलखं-डनः ॥ वातिकान् रौधिरान्सर्वान् विकारानाशु नाशयेत् । मुनिभिः करुणाकीर्णैः कषायोऽयं प्रकाशितः ॥

अर्थ-गिलोय, बावची, चकवड, नीमकी छाल, हरड, हलदी, आंवला, अडूसा, शतावर, नेत्रवाला, कंगही, मुलहठी, महुआके फूल, तालमखाने, पटोलपत्र, खस, मंजीठ और लाल चंदन इनका काढा करके पीवे तो वातरक्त, कुष्ठ, खुजली, चकत्ते, वातसंबंधी रोग, रुधिरके विकार इनको तत्काल दूर करे. यह गुडूच्यादिकाढा कृपालु मुनियोंने कहा है ॥

वृषादि क्वाथ ।

क्वाथो वृषारग्वधकुंडलीनामेरंडतैलेन समं निपीतः ।
जयेदसृग्वातभवं विकारं सर्वांगशोफप्रविदाहयुक्तम् ॥

अर्थ-अडूसा, अमलतासका गूदा और गिलोय इनका काढा करके उसमें अंडीका तेल डालके पीवे तो सर्वांगकी सूजन और दाह इन करके युक्त वातरक्तका नाश होय ॥

त्रिवृतादि क्वाथ ।

त्रिवृद्विदारीक्षुरजः कषायोऽथ वा गुडूच्याः स्वरसो हितश्च ॥

अर्थ-निसोथ, विदारीकंद और काला ईख (काला पौंडा) इनका काढा अथवा गिलोयका रस देवे तो हितकारी होय ॥

पथ्यायोग तथा गुडूच्यादि क्वाथ ।

तिस्रः पंचाथ वा पथ्याः पिष्ट्वा दग्धा गुडेन तु ।
पिबेच्छिन्नरुहाक्वाथं वातरक्तार्दितो नरः ॥

अर्थ-तीन अथवा पांच हरडोंको भूनके चूर्णकर गुडके साथ देवे अथवा गिलोयका काढा करके देवे तो वातरक्त दूर होय ॥

वातरक्त पर काढा ।

रतिकेलिकलाकुशले विलसद्वलये वलयेन समानकुचे ।
अमृतव्रतती रुबुतैलयुता, तथैरंडसिंहास्यवत्सादिनीनाम् ॥

अर्थ-गिलोयके काढेमें अंडीका तेल डालके देवे या अंडकी जड अडूसा और गिलोय इनका काढा देवे ॥

वातरक्त पर पिंडादि क्वाथ ।

मधूत्थारुणागोपिकादेवधूपैः शृतं वातरक्तापहं पिंडतैलम् ।
कषायः सहैरंडतैलेन युक्तस्तथैरंडसिंहास्यवत्सादनीनाम् ॥

अर्थ-मोम, मंजीठ, सारिवा और रार इनके काढेमें तेल डालके तैयार करे यह पिंडतैल वातरक्तनाशक है तथा अंडकी जड, अडूसा और गिलोय इनके काढेमें अंडीका तेल डालके देवे तो यहभी वातरक्तनाशक है ॥

मंजिष्ठादि क्वाथ ।

मंजिष्ठोग्रा वरा तिक्ता निशा निंबामृतामरैः ।
सत्रिवृत्खदिरैः क्वाथः सर्वकुष्ठानिलास्रजित् ॥

अर्थ-मंजीठ, वच, हरड, बहेडा, आंवला, कुटकी, हलदी, नीमकी छाल, गिलोय, देवदारु, निसोथ और कत्था इनका काढा करके देवे. यह कुष्ठ और वातरक्त इनका नाश करे ॥

द्वितीय मंजिष्ठादिक्वाथ ।

मंजिष्ठारिष्टवासात्रिफलदहनकं द्वे हरिद्रे गुडूची भूनिंबो रक्तसारः सखदिरकटुका बाकुची व्याधिघातैः । मूर्वानंता विशाला कृमिरिपुसहितैस्त्रायमाणैः सपाठैः पीतो हन्यात्समस्तान् सकलतनुगतान् वातरक्तप्रकोपान् ॥

अर्थ-मँजीठ, नीमकी छाल, अडूसा, हरड, बहेडा, आंवला, चित्रक, हलदी, दारुहलदी, गिलोय, चिरायता, लालचंदन, कत्था, कुटकी, बावची, अमलतासका गूदा, मूर्वा, धमासा, इन्द्रायण, वायविडंग, त्रायमाण और पाढ इनका काढा पीवे तो संपूर्ण वातरक्तविकारोंका नाश करे ॥

खदिरक्वाथ ।

देयं द्विकालमपि पथ्यघृतौदनं च निर्वातमंडलमकुष्टगदं निहंति ।
कुष्ठादिसर्वसकलामयमामवातकृच्छ्रादनेन विधिना खदिरोदकेन॥

अर्थ-खैरका काढा करके प्रातःकाल और सायंकाल दोनों बेर पीवे और ऊपरसे घी, भात भोजन करे तथा पवन न खाय तो यह काढा कुष्ठादि सर्व रोगोंका नाश करे ॥

मंजिष्ठादि काढा ।

मंजिष्ठा मुस्तकुटजो गुडूची कुष्ठनागरैः । भार्ङ्गी क्षुद्रा वचा निंबनिशाद्वयफलत्रिकैः ॥ पटोलकटुका मूर्वा विडंगासनाचित्रकैः । शतावरी त्रायमाणा कृष्णेंद्रे यववासकैः ॥भृंगराजमहा-

दारुपाठाखदिरचंदनैः। त्रिवृद्वरुणकैरातबाकुचीकृतमालकैः॥ शाखोटकमहानिंबकरंजातिविषाजलैः। इंद्रवारुणिकानंतासारिवापर्पटैः समैः॥ एभिः कृतं पिबेत्क्वाथं कणागुग्गुलुसंयुतम्। अष्टादशेषु कुष्ठेषु वातरक्तार्दिते तथा॥ उपदंशे श्लीपदे च प्रसुप्तौ पक्षघातके। मेदोदोषे नेत्ररोगे मंजिष्ठादिः प्रशस्यते॥

अर्थ-मंजीठ, नागरमोथा, कूडाकी छाल, गिलोय, कूठ, सोंठ, भारंगी, कटेरी, वच, नीमकी छाल, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आंवला, पटोलपत्र, कुटकी, मूर्वा, वायविडंग, बिजेसार, चीतेकी छाल, शतावर, त्रायमाण, पीपल, इन्द्रजौ, अडूसा, भांगरा, देवदारु, पाढ, खैरसार, लालचंदन, निसोथ, वरना, चिरायता, बावची, अमलतासका गूदा, सहोडा, बकायन, कंजा, अतीस, नेत्रवाला, इन्द्रायनकी जड, जवासा, सारिवा और पित्तपापडा इनको समानभाग ले २ तोलेका काढा करे. उसमें पीपलका चूर्ण डालके और गूगल डालके पीवे तो अठारह प्रकारके कुष्ठ, वातरक्त, उपदंश, श्लीपद, सुन्नवात, पक्षाघात, मेददोष और नेत्ररोग इनपर यह मंजिष्ठादिकाढा उत्तम है॥

अमृतादि कल्क।

अमृता कटुका शुंठी यष्टिकल्कं समाक्षिकम्।
गोमूत्रपीतं जयति सकफं वातशोणितम्॥

अर्थ-गिलोय, कुटकी, सोंठ और मुलहठी इनका चूर्ण सहत और गोमूत्रमें मिलायके पीवे तो कफयुक्त वातरक्तका पराजय करे॥

लांगल्यादि चूर्ण।

लांगल्याः कंदचूर्णं त्रिकटुकलवणो योगराजेभिमिश्रं गव्येनालिह्य चूर्णं मधुघृतसहितं चाक्षमात्रं हिताशी। नानारुक्पाददोषस्फुटनविमथनैर्मर्मजं तत्प्रकृष्टैर्दुःसाध्यं वातरक्तं जयति स नियतं कुष्ठमत्युग्ररूपम्॥

अर्थ-कलयारीका कंद, सोंठ, मिरच, पीपल और निमक इनका चूर्ण एकत्र करके इसमेंसे १० मासे चूर्ण सहत और गौके घीमें मिलायके देवे और पथ्यसे रहे तो अनेक रक्तविकार, पाददोष, पैरोंका फूटना, मर्मोका दूखना, असाध्य वातरक्त और कुष्ठ इनको नाश करे॥

मुंड्यादि चूर्ण।

लीढ्वा मुंडीतिक्ताचूर्णं मधुसर्पिःसमन्वितम् ॥

अर्थ-गोरखमुंडी और कुटकी इनका चूर्ण सहत और घी इनमें मिलायके देवे तो वातरक्त दूर होय ॥

पद्मकाद्य तैल।

पद्मकोशीरयष्ट्याह्व रजनीक्वाथसाधितम् ।
स्यात्पिष्टैः सर्जमंजिष्ठावीराकांकोलिचंनदम् ॥
पद्मकाद्यमिदं तैलं वातासृग्दाहनाशनम् ॥

अर्थ-पद्माख, खस, मुलहठी और हलदी इनका काढा और राल, मंजीठ, घीगुवार, कांकोली और सपेद चंदन इनका कल्क इन दोनोंमें तेल मिलायके सिद्ध करे तो यह तेल वातरक्त और दाह इनको दूर करे ॥

गुडूच्यादि तैल।

गुडूचीक्वाथकल्काभ्यां तैलं लाक्षारसेन वा ।
सिद्धं मधुककाश्मर्यसेवनाद्वातरक्तनुत ॥

अर्थ-गिलोयका काढा और कल्क इनमें तेल मिलायके तथा लाखका सीरा, मुलहठी, कंभारीका रस ये सब डालके तेल बनायले. यह तेल वारक्तरोगको नाश करे ॥

मरीचादि तैल।

मरिचालशिरार्कपयः फलिनी विषमुष्टिनिशामरनिंबघनैः ।
कुटजं रसचतुर्गुणगोंबुसृतं किल तैलमसृक्पवनापहरम् ॥

अर्थ-काली मिरच, हरताल नारियल, आकका दूध, कलयारी, कुचला, हलदी, नदीवड, नीमकी छाल, नागरमोथा और कूडाकी छाल इनका काढा और काढेसे चौगुना गोमूत्र इन सबकी बराबर तेल लेकर अग्निपर सिद्ध करे तो यह तेल वातरक्तको नाश करे ॥

बृहन्मारिच्यादि तैल।

मरिचं त्रिवृता दंतिक्षिरमार्कं शकृद्रसः । देवदारु हरिद्रे द्वे मांसिकुष्ठं सचंदनम्॥विशालं करवीरं च हरितालं मनःशिल ।मू

चित्रकं लांगलीं चापि विडंगं चक्रमर्दकम् ॥ शिरीषं कुटजो निंबः सप्तपर्णोमृता स्नुही। शम्याको नक्तमालश्च खदिरं पिप्पली वचा ॥ ज्योतिष्मती च पलिका विषस्य द्विपलं मतम्। आढकं कटुतैलस्य गोमूत्रं च चतुर्गुणम् ॥ मृत्पात्रे लोहपात्रे वा शनैर्मृद्वग्निना पचेत्। एतत्तैलं विशेषेण नाशयेत् कुष्ठजान् व्रणान् ॥ वातरक्तभवान् व्याधीन् पामाविस्फोटचर्चिकाः ॥

अर्थ–काली मिरच, निसोथ, दंती, आकका दूध, गोबरका पानी, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, जटामांसी, कूठ, चंदन, इंद्रायन, कनेरकी जड, हरताल, मनसिल, चित्रक, करियारी, वायविडंग, पमारके बीज, सिरसके बीज, कूडाकी छाल, नीमकी छाल, सतोना, गिलोय, थूहर, अमलतासका गूदा, कंजा, खैर, पीपल वच और मालकांगनी ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे और सिंगियाविष ८ तोले इस प्रकार लेकर २५६ तोले सरसोंके तेलमें चौगुना गोमूत्र मिलावे और पूर्वोक्त औषधोंका कल्क मिलायके एकत्र करे. इसको मिट्टीके बरतनमें अथवा लोहेके पात्रमें डालके मंदाग्निसे पचन करे. यह तेल विशेष करके कुष्ठके व्रण, वातरक्तकी व्याधी, खुजली, विस्फोटक, विचर्चिका इनको नाश करे ॥

पिंडतैल।

मंजिष्ठा सारिवा सर्ज यष्टिसिक्थपयोन्वितैः।
पिंडाख्यं साधयेत्तैलमभ्यंगाद्वातरक्तनुत् ॥

अर्थ–मंजीठ, सारिवा, राल, मुलहठी और मोम तथा दूध इनके योगसे बोलका तेल निकाले इस तेलकी मालिस करनेसे वातरक्त रोग दूर होय ॥

गुडूच्यादि तैल।

तुलां पचेद्गुडूच्यास्तु जलद्रोणचतुष्टये। पादशेषः कषायस्तु गोदुग्धं द्रोणसंमितम् ॥ तिलतैलाढकं ताभ्यां पचेन्मृद्वग्निना भिषक्। वक्ष्यमाणैस्ततो द्रव्यैः सम्यक्कल्कीकृतैः पचेत् ॥ मंजिष्ठा मधुकं कुष्ठं जीवनीयगणस्तथा। एला रुचकमृद्वीका मांसी व्याघ्रनखो नखी ॥ हरेणुः श्रावणी व्योषं स्थिरा तामलकी तथा। शृंगी श्यामा शताह्वा च विष्णुकांता च पत्रकम्॥

नागकेशरवालत्वक् पद्मकोत्पलचंदनम् । एतानि कल्कवस्तूनि कथितानीह कोविदैः ॥ पानेभ्यंगेनुवासे च तैलमेतन्निषेवितम् । वातरक्तं तदुद्भूतोपद्रवांश्चाशु नाशयेत् ॥ धन्यं पुंसवनं स्त्रीणां गर्भदं वातपित्तनुत् । स्वेदकंडुरुजापामाशिरःकंपार्दितामयान् ॥ हन्याद्व्रणकृतान् दोषान् गुडूचीतैलमुत्तमम् ॥

अर्थ–गिलोय चारसौ तोले ले उसको ४०९६ तोले जलमें डालके काढा करे जब जल चतुर्थांश रहे तब उसको उतारके छान लेय. उस काढेमें २०२४ तोले दूध और २५६ तोले तेल डालके औटावे और मंजीठ, मुलहठी, कूठ, जीवनीय गणकी औषधी, इलायची, बिजोरा, दाख, जटामांसी, थूहर, लघुनख और नखी, रेणुकबीज, मुंडी, त्रिकुटा, सालपर्णी, भुई आंवला, काकडासिंगी, पीपल, शतावर, कोयल, पत्रज, नागकेशर, नेत्रवाला, दालचीनी, कमल, पद्माख और चंदन इनका कल्क करके उस तेलमें मिलाय देवे. जब तेल सिद्ध होवे तब उतारके रख लेय. यह तेल पान, अभ्यंग, अनुवासन, बास्ति इनमें उपयुक्त करनेसे वातरक्त तथा उसके उपद्रव इनको तत्काल नाश करे. उत्तम पुत्र, स्त्रियोंको गर्भका देनेवाला तथा वात, पित्त, पसीना, खुजली, पामा, शिरः कंप, अर्दितवायु और व्रणदोष इनको नाश करे. इसको गुडूचीतैल कहते हैं॥

पद्मकादि तैल।

पद्मकोशीरयष्ट्याह्वरजनीक्वाथसाधितम् ।
स्यात्पिष्टैः सर्जमंजिष्ठा वीरा काकोलिचंदनैः ॥
पद्मकाद्यमिदं तैलं वातासृग्दाहनाशनम् ॥

अर्थ– पद्माख, खस, मुलहठी और हलदी इनका काढा और रार, मंजीठ, शतावर, काकोली और चंदन इनका कल्क इनके साथ सिद्ध करा हुआ तेल वातरक्तके दाहको नाश करे. इसको पद्मकाद्य तैल कहते हैं ॥

गुडूच्यादि तैल।

गुडूचीक्वाथसंयुक्तं तैलं लाक्षारसेन वा ।
सिद्धं मधुककाश्मर्यरसे वा वातरक्तनुत् ॥

अर्थ–गिलोयका काढा अथवा लाखका काढा अथवा मुलहठी और कंभारीके फल इनका काढा इनमेंसे किसी एकके साथ सिद्ध करा हुआ तेल वातरक्तनाशक है ॥

शताह्वादि तैल ।

शताह्वया च कुष्ठेन मधुकेन नवेन वा।
एकैकं साधितं तैलं वातरक्तरुजापहम् ॥

अर्थ-शतावर, कूठ, नवीन मुलहठी इनमेंसे किसी एकके साथ सिद्ध करा हुआ तेल वातरक्त नाश करे ॥

वातरक्त तैल ।

सारिवासर्जमंजिष्ठयष्टीपिंडपयोन्वितम् ।
तैलं पक्त्वा प्रयोक्तव्यं पिंडाख्यं वातशोणिते ॥

अर्थ-सारिवा, राल, मंजीठ, मुलहठी और लाल बोल इनके काढेके साथ सिद्ध करा हुआ तैल वातरक्तनाशक है. इसको पिंडाख्य तैल कहते हैं ॥

पिंडतैल ।

सारिवासर्ज्जयष्ट्याह्वमधूच्छिष्टैः पयोन्वितैः ।
सिद्धमेरंडजं तैलं वातरक्तरुजापहम् ॥

अर्थ-सारिवा, राल, मुलहठी, मोम और जल इसमें अंडीका तेल डालके तेल सिद्ध करे यह वातरक्तकी पीडाको नाश करनेवाला है ॥

दशपाक बलातैल ।

बलाकषायकल्काभ्यां तैलं क्षीरं चतुर्गुणम् । दशपाकं भवेदेत-
द्वातासृग्वातरक्तजित् ॥ धन्यं पुंसवनं चैव नराणां शुक्रवर्धनम् ।
रेतोयोनिविकारघ्नमेतद्वातविकारनुत् ॥

अर्थ-खिरेंटीका काढा और कल्क तेल और तेलसे चौगुना दूध इस प्रकार सबको एकत्र करके औटावे इसको दशपाक तेल कहते हैं. यह वातरक्तनाशक, उत्तम पुत्र देनेवाला, वीर्यवर्द्धक, शुक्रविकार, योनिविकार और वातविकार इनको दूर करे है ॥

बलातैल ।

कलाकषायकल्काभ्यां तैलं क्षीरसमं पचेत् । सहस्रशतपाकं च
वातरक्तहरं परम् ॥ रसायनमिदं श्रेष्ठमिंद्रियाणां प्रसाधनम् ।
जीवनं बृंहणं स्वर्यं शुक्रासृग्दोषनाशनम् ॥

अर्थ-खिरेटीके जडका काढा और कल्कमें तेल और दूध ये समानभाग डालके तेलको पचावे यह सहस्रपाक अथवा शतपाक वातरक्तका नाश करे. यह श्रेष्ठ रसायन है. तथा इन्द्रियोंको बल-देनेवाला; जीवन, पुष्टि करे तथा स्वरको सम्हारे और शुक्रके दोष तथा रुधिरके दोष इनको नाश करे ॥

नागबलातैल ।

सिद्धां पचेन्नागबलातुलां च जलार्मणे पादकषायशिष्टम् । पाच्यं तुलेलाजकमत्र शस्तमजापयस्तुल्यविमिश्रितं च ॥ न तस्य यष्टीमधुकस्य कल्कं दत्त्वा पृथक् पंचपलं विपक्वम् । तद्वातरक्तं शमयत्युदीर्णं बस्तिप्रदानेन हि सप्त रात्रात् ॥ दशाहयोगेन करोत्यरोगं पीतं च तैलोत्तममश्विजुष्टम् ॥

अर्थ-बलाकी जड ४०० तोले और जल १०२४ तोले लेकर चतुर्थांश काढा करे फिर उतारके छान लेय तथा इसमें इसके बराबर बकरीका दूध, नेत्रवाला, मुलहठी और महुआ इनका २० तोले कल्क डालके तेलको पचावे और इसकी बस्ती देवे तो सात दिनमें वातरक्तको नाश करे. दश दिन पीनेसे नैरोग्य होय ॥

आरनालतैल ।

आरनालाढके तैलं पादसर्जरसं शृतम् ।
प्रस्थस्थे निर्जिते तोये ज्वरदाहार्तिनुत्परम् ॥

अर्थ-कांजी २५६ तोले, तेल ६४ तोले तथा रालका काढा ६४ तोले डालके तेल सिद्ध करे यह ज्वर और दाह इनको नष्ट करे ॥

बलादि घृत ।

बलामतिबलां मेदीमात्मगुप्तां शतावरीम् । काकोलीं क्षीरकाकोलीं रास्नां मृद्वीं च पेषयेत् ॥ घृतं चतुर्गुणं क्षीरं तत्सिद्धं वातरक्तनुत् ॥

अर्थ-बला, अतिबला, मेहदी, कौंछ, शतावर, काकोली, क्षीरकाकोली रास्ना, दाख इनका कल्क और घी, घीसे चौगुना दूध डालके घृत सिद्ध करे यह वातरक्तनाशक है ॥

गुडूच्यादि घृत ।

गुडूचीक्वाथकल्काभ्यां सपयस्कं घृतं शृतम् ।
हंति वातं तथा रक्तं कुष्ठं जयति दुस्तरम् ॥

अर्थ-गिलोयका काढा तथा इसीका कल्क और दूध इनके साथ औटायकर सिद्ध करा हुआ घी वातरक्त और कोढ इनको नाश करे ॥

अमृतादि घृत ।

अमृतायाः कषायेण कल्केन च महौषधम् । मृद्वग्निना घृतं सिद्धं वातरक्तहरं परम् ॥ आमवाताढ्यवातादीन्कृमिकुष्ठव्रणानपि । अर्शांसि गुल्मांश्च तथा नाशयत्याशु योजितम् ॥

अर्थ-गिलोयका काढा और कल्क इनकी बराबर मंदाग्निसे सिद्ध करा हुआ घी वातरक्त नाश करनेमें बडी भारी औषध है, तथा यह आमवात, कृमि, कुष्ठ, व्रण, बवासीर और गोला इत्यादिकोंका नाश करे ॥

शतावरीघृत ।

शतावरीकल्कगर्भं रसे तस्याश्चतुर्गुणे ।
क्षीरतुल्यं घृतं सिद्धं वातरक्तहरं परम् ॥

अर्थ-शतावरका कल्क, घी, घीके बराबर दूध और घीसे चौगुना सतावरका रस इनके साथ सिद्ध करा हुआ घी वातरक्तनाशक है ॥

अमृतास्वरसात्रिपक्कं सर्पिस्तत्कल्कसाधितं पीतम् ।
अपहरति वातरक्तं उत्तानं चावगाढं च ॥

अर्थ-गिलोयके स्वरसमें सिद्ध करे हुए घीको गिलोयसत्वके साथ पीवे तो उत्तान तथा अवगाढ ऐसे वातर को नाश करे ॥

अमृतादिघृत ।

अमृतायाः पलशतं जलद्रोणे सुशोषितम् । घृतप्रस्थं विपक्तव्यं कल्कानष्टौ पलानि च ॥ चतुर्गुणेन पयसा वातासृक्कुष्ठनाशनम् । कामलापांडुरोगघ्नं प्लीहकासज्वरापहम् ॥

अर्थ-गिलोय ४०० तोलेको १०२४ तोले जलमें औटायके छान लेवे उसमें ६४ तोले घी और ३२ तोले गिलोयसत्त्व डालके फिर मंदाग्नि पर चौगुने दूधके साथ पक्व करे फिर इसको भक्षण करे तो वातरक्त, कुष्ठ, कामला, पांडुरोग, प्लीहा, खांसी, ज्वर इनको नाश करे ॥

अमृतादि घृत ।

अमृता मधुकं द्राक्षा त्रिफला नागरं बला । वासारग्वधवृश्ची-

वदेवदारु त्रिकंटकम् ॥ कटुका रोहिणी कृष्णा काश्मर्याश्च फलानि च । रास्ना क्षुरकगंधर्वदेवदारुबलोत्पलैः ॥ कल्कैरेभिः समैः कृत्वा सर्पिः प्रस्थं विपाचयेत् । धात्रीरसः समो देयो पयस्त्रिगुणसंयुतः ॥ सम्यक् सिद्धं तु विज्ञाय भोज्ये पाके च शस्यते । बहुदोषोत्थितं वातरक्तेन सह मूर्च्छितम् ॥ उत्तानं वापि गंभीरं त्रिकजंघोरुजानुजम् । क्रोष्टुशिर्षे महाशूले आमवाते सुदारुणे ॥ महारोगोपसृष्टस्य वेदना चातिदुस्तरा । मूत्रकृच्छ्रमुदावर्तं प्रमेहं विषमज्वरान् ॥ एतान् सर्वान्निहंत्याशु वातपित्तकफोत्थितान् । सर्वकालोपयोगेन वर्णायुर्बलवर्धनम् ॥ अश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं घृतमेतदनुत्तमम् ॥

अर्थ-गिलोय, मुलहठी, दाख, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, बला, अडूसा, अमलतास, पुनर्नवा, देवदारु, गोखरू, कुटकी, पीपल, कंभारीके फल, रास्ना, तालमखाने, अंड, दारुहलदी, अतिबला, कमल ये सब समान भाग लेवे इनका कल्क करे. इसमें ६४ तोले घी डालके और आंवलेका रस घीके बराबर डाले और दूध घीसे तिगुना मिलायके घृत सिद्ध करे. इसको भोजनमें अथवा पदार्थमें मिलायके भक्षण करे. यह अनेक दोषोंसे उत्पन्न हुई मूर्च्छा, रुधिर, उत्तान अथवा गंभीर, त्रिक, जंघा, ऊरु और जानु इनकी पीडा, क्रोष्टुशीर्ष, महाशूल, दारुण आमवात, महारोगकी दुस्तर पीडा, मूत्रकृच्छ्र, उदावर्त्त, प्रमेह, विषमज्वर इन सब रोगोंको दूर करे. तथा वातपित्त, कफ इनसे उत्पन्न हुए रोग इनको नष्ट करे यह सर्वकाल उपयोगमें लानेसे आयुष्य, बल इनको बढावे यह अत्युत्तम घृत अश्विनीकुमारने निर्माण करा है ॥

अश्वगंधापाक ।

पूर्वं कृत्वाश्वगंधायाश्चूर्णं दश पलानि च । तदर्धं नागरं चूर्णं तस्यार्धं पिप्पली शुभा ॥ मरिचानां पलं चैकं सूक्ष्मं चूर्णं तु कारयेत् । त्वगेलापत्रपुष्पाणि चैकैकं तु पलं पलम् ॥ तुलार्धं महिषीदुग्धं तस्यार्धस्य च माक्षिकम् । माक्षिकार्धं घृतं गव्यं खंडा त्रिंशत्पलानि च ॥ पयः खंडाज्यमाक्षिक्यं चत्वार्येकत्र कारयेत् । पूर्वं क्वथितदुग्धेन क्षिप्त्वा चूर्णं पचेद्भिषक् ॥ दर्वी-

प्रलेपे संजाते चातुर्जातं विमुंचयेत् । यज्जातं तंदुलाकारं ताव-
न्निष्पन्नमाचरेत् ॥ पयोमुक्तं घृतं दृष्ट्वा तावदुत्तारयेत्ततः ।
ग्रंथिकं जीरकं छिन्ना लवंगं तगरं तथा ॥ जातीफलमुशीरं च
वालकं मलयोद्भवम् । श्रीफलांभोरुहं धान्यं धातकी वंशलो-
चनम् ॥ धात्री खादिरसारं च घनसारं तथैव च । पुनर्नवाज-
गंधा च हुताशनशतावरी ॥ मात्रागद्याणकं चैव द्रव्याणामेक-
विंशतिः । सूक्ष्मं चूर्णं कृतं चैव योगो ह्यस्मिन्विनिर्दिशेत् ॥
पश्चात्सुशीतलं कृत्वा स्निग्धभांडे निधापयेत् । पलार्धमपि
भुंजीत यदृच्छाहारभोजनः ॥ कासं श्वासं तथा हन्यादजीर्णं
वातशोणितम् । प्लीहां मंदं च मेदं च आमवातं च दुर्जयम् ॥
शोफं शूलं च वातार्शः पांडुरोगं च कामलाः । ग्रहणीं गुल्म-
रोगं च अन्यं वातकफोद्भवम् ॥ विकारो विलयं याति यथा
सूर्योदये तमः । एकमासप्रयोगेण वृद्धः संजायते युवा ॥
मंदाग्नीनां हितं बल्यं बालानां चांगवर्धनम् । स्त्रीणां च कुरुते
पुष्टिं प्रसवे स्तन्यवर्धनम् ॥ यावत्स्तन्यं भवेत्स्तोकं तावद्दुग्ध-
युतं पिबेत् । क्षीणानां चाल्पवीर्याणां हितं कामाग्निदीपनम् ॥
सर्वव्याधिहरं श्रेष्ठं योगं सर्वोत्तमं विदुः ॥

अर्थ–असगंध ४० तोले, सोंठ २० तोले, पीपल १० तोले और काली मिरच, दालचीनी, इलायची, पत्रज और लवंग ये प्रत्येक चार २ तोले, भैंसका दूध २०० तोले, सहत १०० तोले, गौका घी ५० तोले और मिश्री १२० तोले इन सबको मिलाय प्रथम दूधको औटावे फिर इसमें ऊपर कही हुई सब औषधोंका चूर्ण डालके पचावे और उसमें दूसरा दूध, मिश्री, सहत और घी मिलायके फिर पचावे. जब गाढा होने पर आवे तब दालचीनी, इलायची, पत्रज और नागकेशर इनका चूर्ण डालके पचावे जब चावलके समान दाने पडने लगें और घी छूटने लगे तब उतारके उसमें पीपरामूल, जीरा, गिलोय, लौंग, तगर, जायफल, नेत्रवाला, खस, चंदन, श्री-फल, कमलगट्टा, धनिया, धायके फूल, वंशलोचन, आंवले, खैरसार कपूर, पुनर्नवा, असगंध, चित्रक और शतावर ये इक्कीस औषध आधे २ तोले लेवे. सबका चूर्ण करके उस चासनीमें डाल देवे जब शीतल हो जावे तब उतारके घीके चिकने बासनमें

भरके रख देवे. इसको अश्वगंधा पाक कहते हैं. इसमेंसे दो तोले नित्यप्रति एक महीनेपर्यंत भक्षण करे और ऊपरसे यथेच्छ भोजन करे तो खांसी, श्वास, अजीर्ण, वातरक्त, प्लीहा, उन्माद, मेहरोग, आमवात, सूजन, शूल, वातार्श, पांडुरोग, कामला, संग्रहणी, गुल्मरोग और वातकफजनित रोग इनको नाश करे. एक महीने सेवन करनेसे बुड्ढा भी जवान होय यह मंदाग्निवालोंको और बालक इनको हितकारी है. बलकारी तथा पौष्टिक ऐसा है तथा स्त्रियोंको पुष्ट करै है. प्रसूत होने पर यदि दूध न रहे तो जबतक दूध थोडा रहे तबतक इस पाकको प्रसूता स्त्री दूधके साथ पीवे तो स्तनोंमें अधिक दूध हो जावे. अल्पवीर्यवालोंको हितकारी और काम तथा अग्नि इनको बढावे. तथा संपूर्ण व्याधियोंको नाश करे. ऐसा यह सर्वोत्तम योग है ॥

प्रपौंडरीकादि लेप ।

प्रपौंडरीकं मंजिष्ठा दार्वी मधुकचंदनैः । सीतोपलैलासक्त्वाभिर्मसूरोशीरपद्मकैः ॥ लेपो रुग्दाहवीसर्परोगशोफनिवारणः ॥

अर्थ–पुंडरीक वृक्ष (कमलकी एकजाति), मंजीठ, दारुहलदी, मुलहठी, चंदन, मिश्री, इलायची, जौ, मसूर खस और पद्माख इनका लेप करे तो पीडा, दाह, विसर्प और सूजन इनको नाश करे ॥

लेप और अभ्यंग ।

लेपः पिष्टास्तिलास्तद्वत् भ्रष्टाः पयसि निर्वृताः । क्षीरपिष्टमुपालेपं एरंडस्य फलानि च ॥ कुर्याच्छूलनिवृत्त्यर्थं शताह्वां चाधिकेऽनिले । मूत्रक्षीरसुरासिद्धं घृतमभ्यंजने हितम् ॥ सिद्धं तु मधुसूक्तं तु सेकाभ्यंगः फलोत्तरे । गृहधूमं वचा कुष्ठं शताह्वा रजनीद्वयम् ॥ प्रलेपः शूलनुद्वातरक्ते वातकफोत्तरे । प्रभूतकालमासेव्यं मुच्यते वातशोणितात् ॥

अर्थ–तिलोंको बारीक पीसके भून लेवे. फिर उनको दूधमें औटावे इनका अथवा अंडीको पीसके भूनके दूधमें औटावे इनका अथवा इसी प्रकार शतावरकी जडका लेप करे तो वातादिक शूलको शमन करे. तथा गोमूत्र दूध और सहत इनमें सिद्ध करे हुए घृतकी मालिस करना हितकारी होती है तथा मधुसूक्तको सिद्ध करके उसका सेवन करे अथवा मालिस करे तो यह सन्निपाताधिक रक्तपित्त

पर उत्तम है अथवा घरका धूंआ, वच, कूट, शतावर, हलदी और दारुहलदी इनका लेप बहुत दिनपर्यंत कफादिक वातरक्त पर करे तो यह रोग दूर हो ॥

शताह्वादि लेप ।

उभे शताह्वे मधुकं विशाला बलाप्रियाले च कसेरुयुग्मम् ।
घृतं विदारीं च शिलोपलां च कुर्यात्प्रदेहं पवने सरक्ते ॥

अर्थ-कलौंजी, सोंफ, मुलहठी, इन्द्रायनकी जड, बला, चिरोंजी, कचूर, मोथा, घी, विदारीकंद और मिश्री इन सबको पीसके वातरक्त रोग पर लेप करे तो हितकारी होवे॥

सहस्रधौत घृत तथा राळयोग ।

सहस्रशतधौतेन घृतेन रुधिरोत्तरे ।
लेपनं चोष्णशीतेन घृतसर्जरसेन वा ॥

अर्थ-रक्ताधिक वातरक्तवालेके हजार वारका धुला हुआ घीका लेप करे अथवा रार और घीको औटायके लेप करे तो वातरक्त दूर होय ॥

नवनीतमर्दन ।

माहिषं नवनीतं तु गोमूत्रक्षीरसैंधवैः । खल्वेनैकत्र संलोड्य
वह्निना तापयेच्छनैः ॥ गात्रमुद्वर्तयेत्तेन देहस्फुटनशांतये ॥

अर्थ-भैंसका मक्खन, गोमूत्र, दूध और सैंधानिमक ये खरलमें पीसके एकत्र करे फिर इनको गरम करके देहमें मालिस करे तो अंगोंका फूटकर बहना बंद होय ॥

सर्षपादि और वरुणादि लेप ।

गौरसर्षपकल्केन प्रलेपो वातरक्तनुत् ।
लेपो वरुणशिग्रूत्थकांजिकेन रुजापहः ॥

अर्थ-सफेद सरसोंको पीसके इसका अथवा वरना तथा सहजना इनको कांजीमें पीसके लेप करे तो वातरक्तका नाश करे ॥

कनकादि लेप ।

कनकभुजगवल्लीमालतीपत्रमूर्वादनरसकुनटीभिर्मर्दितं तैलयो-
गात् । अपहरति रसेंद्रः कुष्ठकंडूविसर्पस्फुटितचरणवक्रं श्या-
मलत्वं नराणाम् ॥

अर्थ-धतूरेके पत्ते, नागरवेलके पान, मालतीके पत्ते, मुर्दासन और मनसिल इनके चूर्णको तेलमें घोटके इसका लेप कोढ, खुजली, विसर्प, पैरोंका फूटना और मुखके दांग इनका नाश करे ॥

पंचामृतरस ।

पारदं च क्रियाशुद्धं तुल्यं शुद्धं च गंधकम् । अभ्रकं तु द्वयोस्तुल्यं त्रिभिस्तुल्यस्तु गुग्गुलुः ॥ सर्वांशममृतासत्वं भावयेदौषधैः पृथक् । निर्गुंडी गोक्षुरच्छिन्ना कोकिलाख्यांघ्रिजै रसैः॥ सप्तवारं ततो युंज्याद्वातरक्ते त्रिवल्लकम् । कोकिलाख्यस्य मूलानां पानीयमनुपाययेत् ॥

अर्थ-शुद्ध पारा १, शुद्ध गंधक १, अभ्रकभस्म २, गूगल ४, गिलोयका सत्व८ भाग इस प्रकार सबको एकत्रकर उसमें निर्गुंडी, गोखरू, गिलोय और तालमखाने इन औषधोंकी पृथक् २ सात २ भावना देवे. फिर इसमेंसे ६ रत्तिके अनुमान नित्य देकर ऊपरसे तालमखानेकी जडका रस पीवे तो वातरक्त रोग दूर हो ॥

हरतालभस्म ।

तालं रसं तुवरिकां नयनेंदुबाणभागैर्विशुद्धवसुजातरसैर्विमर्द्य । दत्त्वा शरावयुगुले प्रविधाय मुद्रां दत्त्वा गजाह्वपुटमस्य भवेत्सुभस्म ॥ दृष्ट्वाकृतिंप्रकृतिमप्यखिलामवस्थां दृष्ट्वा पुनश्च बहुधा बहुधा विचार्य । दद्याच्च तंदुलमिता हरितालमात्रा प्राप्ता मया यतिवराद्धि महाप्रयत्नात् ॥

अर्थ-हरताल शुद्ध २, पारा १ और फिटकरी ५ भाग इस प्रकार लेकर इनको खरल करके इसमें सफेद पुनर्नवाके जडकी भावना देवे. फिर इसका गोला बनाय शरावसंपुटमें रखे ऊपरसे कपडमिट्टी करके गजपुटमें धरके फूंक देवे तो हरतालकी भस्म होय इसको रोगीकी आकृति, बल और काल इनको वारंवार विचार करके १ चावल भरकी मात्रा खानेको देवे तो वातरक्तको नष्ट करे. यह भस्म मुझको बडी भारी सेवा करनेसे योगिराजसे प्राप्त हुई है ॥

कैशोरगुग्गुल ।

नवमहिषलोचनोदरसन्निभवर्णस्य गुग्गुलोः प्रस्थम् । प्रक्षिप्य तोयराशौ त्रिफलाममृतां यथोक्तपरिमाणाम् ॥ संसाधयेत्प्रय-

त्नाद्दर्व्या संघट्टयेच्च तद्यावत् । अर्धक्षपितं जातं तोयं ज्वलनस्य संसर्गात् ॥ अवतार्य वस्त्रपूतं पुनरपि संसाधयेदापः । सांद्रीभूते तस्मिन्नवतार्य हिमोपस्पर्शे ॥ पथ्याचूर्णं द्विपलं त्रिकटुकचूर्णं षडक्षपरिमाणम् । कृमिरिपुचूर्णार्धपलं कर्षं कर्षं त्रिवृद्दंत्योः ॥ पलमेकं छिन्नरुहां दत्त्वा संचूर्ण्य यत्नेन । संस्थापयेच्च गुप्तं स्निग्धे भांडे घृतेन सुरभीणाम् ॥ आदाय तस्य मात्रां विहितातिथिदेवताप्रणतिः । खादेद्यथाग्नि मनुजो व्याधिबलापेक्षया सम्यक् ॥ इच्छाहारो भेषजकालश्च सर्व एवात्र । तनुरोधिवातशोणितमेकद्वित्र्युल्बणं चिरोत्थमपि ॥ भग्नस्रुतिपरिशुष्कं स्फुटितमपि निहंति यत्नेन । व्रणकासकुष्ठगुल्मश्वयथूदरपांडुरोगमेदांसि ॥ मंदाग्नित्वविबंधं प्रमेहदोषांश्च नाशयति । सततं निषेव्यमाणः कालेन निहंति रोगगणम् ॥ अभिभूय जरादोषं करोति कैशोरकं रूपम् ॥

अर्थ–नवीन उत्पन्न हुए भैंसेके नेत्रके पेटेके समान जिसका रंग ऐसा गूगल ६४ तोले लेवे. उसको गिलोय, हरड, बहेडा, आंवला लेवे. इन सबको जलमें डालके औटावे और कलछीसे चलाता रहे जब आधा जल रह जावे तब उतारके छान लेय और फिर इसको भट्टीपर रखके औटावे जब गाढा हो जावे तब उतारके शीतल होने पर आगे लिखी हुई औषधोंका चूर्ण डाले. जैसे–हरड ८, सोंठ २, काली मिरच २, पीपल २, वायविडंग ४, निसोथ और दंती ये एक २ तोला तथा गिलोय ८ तोले डाले और बहुत देरतक सबको एकजीव होय तबतक घोटे. फिर इसको गौके घीसे चिकने पात्रमें भरके उसका मुख बांधके धर देवे. फिर देवता, अतिथि इनका पूजन कर अपना अग्निबल और रोगका बल विचारके उसीके अनुसार मात्रा भक्षण करे तथा इच्छानुसार आहार करे और जो समय औषधका है उसी समय औषध खानेको देवे. यह औषध शरीरमें व्यापक ऐसे वातरक्त एकाधिक दोष अथवा दो तीन दोष जिसमें अधिक हों ऐसे बहुत दिनका स्राव जिसका बंद हो गया हो शुष्क तथा फूटनेवाले वातरक्तका नाश करे और व्रण, खांसी, गोला, कुष्ठ, सूजन, उदर, पांडुरोग, मेंद, मंदाग्नि, पेटका फूलना और प्रमेह इनका नाश करे. तथा निरंतर इसके सेवन करनेसे कालकरके सर्वरोगोंका नाश करे और वृद्धावस्था दूर कर तारुण्यता लाता है ॥

माहिषाख्य गुग्गुलु ।

प्रस्थमेकं गुडूच्याश्च सार्धप्रस्थं तु गुग्गुलुः। प्रत्येकं त्रिफलायाश्च तत्प्रमाणं विनिर्दिशेत् ॥ सर्वमेकत्र संक्षिप्य क्वथयेदुल्वणेंभसि। पादशेषं परिश्राप्य कषायं ग्राहयेद्भिषक् ॥ पुनः पचेत्कषायं वा यावत्सांद्रत्वमाप्नुयात् । दंतीव्योषविडंगानि गुडूचीत्रिफला-त्वचः ॥ ततश्चार्धपलं चूर्णं गृह्णीयाच्च प्रति प्रति । चूर्णं कर्षं त्रिवृत्तायाः सर्वं तत्र विनिःक्षिपेत् ॥ तस्मिन्सुसिद्धं विज्ञाय कोष्णं पात्रे विनिःक्षिपेत् । ततश्चाग्निबलं ज्ञात्वा तस्य मात्रां प्रयोजयेत् ॥ वातरक्तं तथा कुष्ठं गुदजानाग्निसादनम् । दुष्टव्रणं प्रमेहं च ह्यामवातं भगंदरम् ॥ नाड्याढ्यवातान् श्वयथून् सर्वान्वातामयान् जयेत् । अश्विभ्यां निर्मितः पूर्वं माहिषाख्यश्च गुग्गुलुः ॥

अर्थ—गिलोय, हरड, बहेडा और आंवला हर एक चौंसठ तोले लेवे और गूगल ७२तोले इनको एकत्र कर बहुतसे जलमें औटावे. जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इसको गाढा होने पर्यंत औटावे और इसमें दंती, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, गिलोय, हरड, बहेडा, आंवला और दालचीनी ये प्रत्येक दो दो तोले तथा निसोथ १ तोला ले सबका चूर्ण करके उस काढेमें डाल देवे और कलछीसे मिलाय देवे जब भले प्रकार सीज जावे तब कुछ २ गरमको ही चिकने बासनमें भर देवे फिर अग्नि बल विचारके मात्रा देवे तो वातरक्त, कुष्ठ, बवासीर, मंदाग्नि; दुष्टव्रण, प्रमेह, आमवात, भगंदर, नाडीवात, सूजन और संपूर्ण वातरोग इनको जीते इनको माहिषगूगल कहते हैं. यह अश्विनीकुमारने निर्माण करा है ॥

तालकेश्वर रस ।

तालकस्य तु यस्येह पत्राणि स्युः पृथक् पृथक् । अभ्रकस्येव तत् ग्राह्यं हरितालं विचक्षणैः ॥ पुनर्नवायाः स्वरसे तालकं तद्विमर्दयेत् । दिनमेकं ततस्तस्मिन् घनत्वं गमिते सति ॥ कुर्वीत चाक्रिकां तां तु शोषयेत्सम्यगातपे । पुनर्नवासमस्तांगक्षारैः स्थालीं गलावधि ॥ पूरयेच्च ततः क्षारं दृढयेत्पीडनेन

दि। क्षारस्योपरि तां सम्यक् दत्त्वा तत्तालचक्रिकाम् ॥ तत आच्छादनं दत्त्वा मुद्रां कृत्वा विशोषयेत् । स्थालीं चुल्ल्यां निधायाग्निममंदं ज्वालयेद्भिषक् ॥ निरंतरमहोरात्रपंचकं तेन सिध्यति। स्वांगशीतं समुत्तार्य गृह्णीयाद्रसमुत्तमम् ॥ तालकेश्वरनामायं रसो गुंजामितोऽशितः। गुडूच्यादिकषायेण गदानेतान्विनाशयेत् ॥ सोपद्रवं वातरक्तं कुष्ठान्यष्टादशापि च। फिरंगदेशजं जंतोर्हंति रोगं सुदुस्तरम् ॥ विसर्पं मंडलं कंडूं पामां विस्फोटकं तथा। वातरक्तकृतान् रोगानन्यानपि विनाशयेत् ॥ एतद्भेषजसेवी तु लवणाम्लौ विवर्जयेत्। तथा कटुरसं वह्निमातपं दूरतस्त्यजेत् ॥ लवणं यः परित्यक्तुं न शक्नोति कथंचन। स तु सैंधवमश्नीयान्मधुरोपरसो हितः ॥

अर्थ–जिस हरतालके अभ्रककेसे पत्ते अलग २ हो जावे उसको लेकर पुनर्नवाके स्वरसमें एक दिन खरल करे जब गाढी हो जावे तब उसकी छोटी २ टिकिया बनायके धूपमें सुखाय लेवे. फिर पुनर्नवाके पंचांगकी राखको एक मटकेमें भरके बीचमें उन टिकियाओंको रखके ऊपरसे उसी पुनर्नवाकी राखको खूब दाब २ के मुखपर्यंत भर देवे. फिर इसके ऊपर मुद्रा देकर सुखाय लेवे. इस मटकेको चूल्हे पर चढाय नीचे पांच दिनरात्रि तीव्राग्नि देवे तो यह तालकेश्वर रस सिद्ध होय इसको स्वांगशीतल होनेपर युक्तिपूर्वक उसमेंसे निकाल लेवे. यह रस गिलोयके काढेसे १ रत्ती भक्षण करे तो उपद्रवसहित वातरक्त, अठारह प्रकारके कुष्ठ तथा फिरंगोपदंश, विसर्प, मंडल, खुजली, पामा, विस्फोटक और वातरक्तसे उत्पन्न हुए उपद्रव इन सब रोगोंका नाश करे. यह तालकेश्वर भक्षण करनेवालोंको खारी, खट्टा, चरपरा, अग्निसे तापना, धूपमें डोलना इनको त्यागदे जिससे विना निमकके न रहा जाय वह थोडा सैंधानिमक खाय और मीठा रस सेवन करे ॥

अमृतभल्लातकावलेह।

निमज्जंति जले यास्तु भल्लातक्यश्च ता हिताः। ताश्च सर्वा विधातव्याः संछिन्नमुखमुद्रिकाः ॥ तासां प्रस्थद्वयं छित्त्वा जलद्रोणे परिक्षिपेत्। प्रस्थद्वयं गुडूच्याश्च क्षुण्णं तत्रांभसि क्षिपेत् ॥ चतुर्थांशावशेषं तु कषायमवतारयेत्। वस्त्रपूते

कषाये च वक्ष्यमाणानि निक्षिपेत् ॥ सर्वाण्येकत्र भांडे तु पचेन्मृद्वग्निना शनैः । सर्वद्रव्ये घनीभूते पावकादवतारयेत् ॥ तत्र क्षेप्याणि चूर्णानि ब्रूमो विश्वामृताऽमृता । बाकुची चक्रमर्दश्च पिचुमंदो हरीतकी ॥ धात्री रात्रिश्च मंजिष्ठा मरिचं नागरं कणा । यवानी सैंधवं मुस्तं त्वगेला नागकेशसरम् ॥ पर्पटः पत्रकं वालमुशीरं चंदनं तथा । गोक्षुरस्य च बीजानि कर्चूरो रक्तचंदनम् ॥ पृथक् पलार्धमानानामेषां चूर्णमिदं क्षिपेत् । सम्यक् संमिश्र्य तद्रक्षेद्भाजने मृन्मये नवे ॥ प्रभाते भक्षिते जीर्णेऽमृतभल्लातकाभिधम् । अवलेहं समश्नीयात्पलमात्रं जलेन हि ॥ प्रकृत्या देहिनो यस्य सहते रुष्करो न चेत् । सोरुष्करस्य संसर्गं सदा दूरात्परित्यजेत् ॥ भल्लातकावलेहोयं वातरक्तांतकृन्मतः । वातरक्तसमुद्भूतान् विकारानाशु नाशयेत् ॥ कुष्ठानि सकलान्येव दुर्नामानि हरेदरम् । विसर्पं मंडलं कंडूं शमयेदेष सेवितः ॥ विकारान्वातिकान्सर्वांस्तथा रुधिरसंभवान् । हरत्येव प्रयोगोयं यत्नतः सेवितः सदा ॥ व्यायाममातपं वह्निमम्लं मांसं दधि स्त्रियम् । तैलाभ्यंगं तथाध्यानं नरो भल्लातके त्यजेत् ॥

अर्थ—पानीमें डूब जावे ऐसे भिलाए ५१६ तोलेको दो दो टुकडे कर २०४८ तोले जलमें डाले और इतनीही गिलोयके टुकडे करके डाल देय फिर इसको अग्निपर चढायके काढा करे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इसमें सोंठ गिलोय, बावची, चकवड, नीमकी छाल, हरड, आंवले, हलदी, लालनिसोथ, मँजीठ, मिरच, सोंठ, पीपल, अजमायन, सेंधानिमक, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, नागकेशर, पित्तपापडा, तालीसपत्र, नेत्रवाला, खस, चंदन, गोखरू, कचूर और लालचंदन, इन सबके दो दो तोले चूर्ण डाले और गाढा होने पर्यंत उसको अग्निपर मंदाग्निसे पक्क करे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके नवीन मिट्टीके बरतनमें भरके धर रखे. यह अमृतभल्लातक अवलेह जलसे एक पल प्रमाण सेवन करे. जिनको भिलाए न हितकारी हों वह इस अवलेहको न खाय यह सविकारक वातरक्तको नाश करै तथा संपूर्ण कुष्ठ, बवासीर, विसर्प, मंडल, खुजली, संपूर्ण

वातविकार और रुधिरसे उत्पन्न वातके विकार इनको नाश करे. इसपर दंड कसरत, धूप, अग्नि, खटाई, मांस, दही, स्त्रीसंग, तैलकी मालिस और मार्गगमन इनको त्याग देवे ॥

योगसारामृत।

शतावरी नागबला उच्चटा वृद्धदारुकम्। पुनर्नवामृता कृष्णा वाजिगंधा त्रिकंटकम् ॥ पृथक् दश पलान्येषां श्लक्ष्मचूर्णानि कारयेत्। तदर्धं शर्करायुक्तं चूर्णं तन्मर्दयेद्बुधः॥ स्थापयेत्तु दृढे भांडे मध्वार्धाढकसंयुतम्। घृतप्रस्थेनावलोड्य त्रिसुगंधिपलेन च ॥ यः खादेन्नष्टचेष्टाग्नो यथा च विकलेंद्रियः। वातरक्तं क्षयं कुष्ठं पित्तं पित्तास्रसंभवम् ॥ वातपित्तकफोत्थांश्च रोगानन्यांश्च तद्विधान्। हत्वा करोति पुरुषं वलीपलितवर्जितम् ॥ योगसारामृतो नाम्ना लक्ष्मीकांतिविवर्धनः ॥

अर्थ–शतावर, नागबला, घूंघचीकी जड (अथवा उटंगणकी जड), विधायरो, पुनर्नवा, गिलोय, पीपल, असगंध और गोखरू ये प्रत्येक ४० तोले लेवे इनका बारीक चूर्ण करे और चूर्णसे आधी मिश्री और सहत १२८ तोले मिलावे. तथा घी ६४ तोले डालके सबको एकत्र करे सब दृढपात्रमें भरके रख देवे. यह नष्टेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय ऐसे रक्तपित्ताधिक वातरक्त पर देवे और वात, पित्त और कफ इनसे उत्पन्न हुई ऐसी अनेक व्याधियोंको अथवा वातरक्तके समान व्याधियोंको नाश कर रोगीको वलीपलित रहित करके शोभा और कांति इनको बढावे. इसको योगसाराम्रत कहते हैं. यह टोडरानंद ग्रंथमें लिखा है ॥

सर्वेश्वर रस।

रसहिंगुललोहानां त्रयः कर्षाः पलद्वयम्। ताम्रगंधकयोः सर्वं जंबीराद्भिर्विमर्दयेत् ॥ विषमुष्टयर्कहेमस्नुक्करवीरजलैः पुनः। सप्तधा गोलकं कृत्वा स्वेदयेद्दिवसद्वयम् ॥ वालुकायंत्रमध्यस्थं शीते निष्कं विषस्य च। कर्षं कणानां सूतः स्यात्सर्वेशो वातरक्तजित् ॥ गुंजामात्रास्य दातव्या द्वयं वा मत्तवारिणा। रक्तप्रकोपनं तीव्रं पित्तलं परिवर्जयेत् ॥

अर्थ--पारा, हींगलू, लोहेकी भस्म ये प्रत्येक तोले २ भर और ताम्रभस्म तथा गंधक ये आठ २ तोले इन सबको एकत्र करके नींबूके रसमें खरल करे और इसको कुचला, आक, धतूरा, थूहर और कनेर इनके रसकी सात २ भावना देवे फिर इसका गोला बनायके दो दिन वालुकायंत्रमें पुट देवे. जब शीतल हो जावे तब निकालके इसमें सिंगियाविष आधा तोला और पीपल १ तोला इनका चूर्ण मिलावे तो यह सर्वेश्वर रस तैयार होवे. इसके सेवन करनेकी मात्रा एक रत्तीसे लेकर दो रत्ती पर्यंतकी है. इसको धतूरेके रससे देवे तथा रुधिरको कुपित करनेवाले, दाहक, गरम और पित्त कुपित करता ऐसे पदार्थोंसे पथ्य करना चाहिये ॥

अर्केश्वर रस ।

पलानि रसचत्वारि बलेर्द्वादशतावती । ताम्रस्य चक्रिका देया रसस्यार्धशरावकम् ॥ दत्त्वा निरुद्धा तद्भांडे पूरयेद्भस्मना दृढम् । अग्निं प्रज्वालयेद्यामद्वयं शीतं विचूर्णयेत् ॥ पुटे द्वादशधा सूर्यदुग्धेनालोडितं पुनः । वरापावकशृंगाणां द्रवैस्त्रिस्त्रिश्च भावयेत् ॥ अयमर्केश्वरो वातरक्तमण्डलसुप्तिजित् । गुंजाद्वयं ददीतास्य लवणादि विवर्जयेत् ॥

अर्थ—पारा १६ तोले गंधक ४८ तोले और तांबेके पत्र १ तोला इस प्रकार लेकर प्रथम पारे गंधककी कजली करके फिर इनको एक पात्रमें भरके उसके ऊपर पत्रसे बंदकर फिर राखको खूब दाबके भर देवे. ऊपरसे पात्रके मुखपर ढकनादे कपड-मिट्टी कर देवे. इसको चूल्हे पर चढाय दो प्रहरकी अग्नि देवे जब शीतल हो जावे तब निकालके आकके दूधमें खरल करे और पुट देवे इस प्रकार बारह पुट देवे फिर त्रिफला, चीतेकी छाल, काकडासिंगी इनकी तीन २ पुट. देवे. यह अर्केश्वर रस दो रत्ती देवे तो वातरक्तसंबंधी चकत्ते और शून्यता इनको नाश करे इस पर लवणादिक वार्जित पथ्य देवे ॥

वातरक्तरोगमें पथ्य ।

उत्तानेऽभ्यंजनं सेकः सोपनाहः प्रलेपनम् । गंभीरे स्नेहपानं च स्थापनं च विरेचनम् ॥ सर्वत्रास्रस्रुतिः सूचीजलौकाशृंग्यलाबुभिः । शतधौतघृताभ्यंगो मेषीदुग्धावसेचनम् ॥ यवषाष्टिकनीवारकलमारुणशालयः । गोधूमाश्चणका मुद्गास्तुवर्योऽपि मकु-

ष्टकाः ॥ अजाव्यमहिषीणां च गवामपि पयांसि च । उपोदिका काकमाची वेत्राग्रं सुनिषण्णकम् ॥ वास्तुकं कारवेल्लं च तंदुलीयं पटोलकम् । धात्रीफलं शृंगबेरं सुरणं श्वेतशर्करा ॥ मृद्वीकावृद्धकूष्मांडं नवनीतं नवं घृतम् । लावतित्तिरवार्तीक-ताम्रचूडविविष्किराः ॥ प्रतुदाः शुकदात्यूहकपोतचटकादयः । शिंशपागरुदेवाह्वसरलस्नेहमर्दनम् ॥ तिक्तं च पथ्यमुद्दिष्टं वात-रक्तगदे नृणाम् ॥

अर्थ–चित्त सोना, उबटना, जलका तरडा देना, पसीने निकालना, लेप करना, गंभीर वातरक्तमें स्नेहपान, आस्थापन बस्ती, दस्त कराने, सुई, जोख, सिंगी आर तूंबी आदिसे रुधिरका निकालना, सौवार धुले हुए घीकी मालिस, भेडके दूधका सेचन, जौ, सांठी चावल, सामखिया, कलमी चँावल, लाल चावल, गेहूँ, चना, मूंग, अरहर, मोठ ये अन्न, भेड, बकरी, भैंस और गौका दूध, लवा, तीतर, बटेर, मुरगा और विष्कर (अन्नको विखेरके खानेवाले), प्रतुद, तोता, पपैया अथवा जलकाक, पिंडुकिया, चिडा आदिका मांस. पोईका साग, मकोय, वेतकी कोंपल और चौपतियेका साग, बथुआ, करेला, चौलाई, प्रसारणी, धतूरा, पुराना पेठा, घृत, अमलतासके पत्ते, पटोलपत्र, अंडीका तेल, दाख, सपेद खांड, मक्खन, सोमलता, कस्तूरी, सपेद चंदन, सीसा, अगर, देव-दार, तेलकी मालिस और कडवा रस ये सब वातरक्तरोगमें पथ्य कहे हैं ॥

अपथ्य ।

दिवास्वप्नाग्निसंतापव्यायामातपमैथुनम् । माषाः कुलित्था निष्पावाः कलायाः क्षारसेवनम् ॥ अण्डजानूपमांसानि विरुद्धा-नि दधीनि च । इक्षवो मूलकं मद्यं पिण्याकोऽम्लानि काञ्जि-कम् ॥ कटूष्णं गुर्वभिष्यंदि लवणानि च सक्तवः । एतानि वातरक्तेषु नैव युंज्याद्भिषग्वरः ॥

अर्थ–दिनमें सोना, अग्निसे तापना, दंड कसरत करना, धूममें डोलना, फिरना मैथुन करना, उडद, कुलथी, चौरा, मटर, जवाखार आदिका सेवन, अंडेसे होने-वाला जीव और अनूपदेशसंचारी जीवोंका मांस, विरुद्ध पदार्थ, दही, ईख, मूलीका सगे, मद्य, खल, खट्टे पदार्थ, कांजी, चरपरे, गरम, भारी, अभिष्यंदी पदार्थ, लवणके

पदार्थ, सत्तू, इन वस्तुओंको वैद्य वातरक्तरोग पर कदाचित् प्रयोग न करे अर्थात् न देवे यह वातरक्तमें अपथ्य है ॥

इति श्रीकृष्णलालमाथुरतनुजदत्तरामनिर्मिते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघण्टुरत्नाकरे वातरक्तकर्मविपाकनिदानचिकित्सापथ्यापथ्यं समाप्तम् ।

ऊरुस्तंभकर्मविपाकः ।

शीतोष्णद्रवसंशुष्कगुरुस्निग्धैर्निषेवितैः । जीर्णाजीर्णात्तथाया-
ससंक्षोभस्वप्नजागरैः ॥ सश्लेष्ममेदः पवनः साममत्यर्थसंचि-
तम् । आभिभूयेतरं दोषमूरू चेत्प्रतिपद्यते ॥ सक्थ्यस्थीनि
प्रपूर्यांतः श्लेष्मणा स्तिमितेन च । तदा स्तभ्नाति तेनोरूस्त-
ब्धौ शीतावचेतनौ ॥ परकीयाविव गुरू स्यातामतिभृशव्यथौ ।
ध्यानाङ्गमर्दस्तैमित्यतंद्राच्छर्द्यरुचिज्वरैः ॥ संयुतौ पादसदन-
कृच्छ्रोद्धरणसुप्तिभिः । तमूरुस्तंभमित्याहुराढ्यवातमथापरे ॥

अर्थ-शीतल, गरम, पतले, शुष्क, भारी, चिकने ऐसे परस्पर विरुद्ध भोजनसे, जीर्ण, अजर्णि, उसी प्रकार दंड कसरतके करनेसे, चित्तके क्षोभसे, दिनमें सोनेसे, रात्रिमें जागना, इन कारणोंसे कफ मेदयुक्त अत्यन्त संचित भया आमयुक्त वात इतर दोषोंको अर्थात् पित्तको आच्छादित कर ऊरूमें आयकर प्राप्त होय और ऊरूके हाडोंको आर्द्रकफसे परिपूर्ण करे, तब उसके ऊरू स्तंभित हो (जडक जाय) और शीतल तथा निर्जिव हो जाय और दूसरे पुरुषके ऊरूके समान उठरके चलना इस विषयमें असमर्थ होय और भारी अत्यन्त पीडायुक्त होय, चिंता, अंगोंका तोडना, आर्द्रता, (गीला), तन्द्रा, वमन, अरुचि और ज्वरसहित मनुष्यके दोनों ऊरू जकड जांय, बडे कष्टसे चले और शून्यता होय इस रोगको ऊरुस्तंभ ऐसे कहते हैं और कोई आढ्यावात कहते हैं ॥

ऊरुस्तंभके पूर्वरूप ।

प्राग्रूपं तस्य निद्राऽतिध्यानं स्तिमितता ज्वरः ।
लोमहर्षोऽरुचिश्छर्दिर्जंघोर्वोः सदनं तथा ॥

अर्थ-निद्रा बहुत आवे, अत्यन्त चिंता, मंदता, ज्वर, रोमांच, अरुचि, वमन, जंघा और ऊरू इनमें पीडा होय, यह ऊरुस्तंभके पूर्वरूप होते हैं ॥

ऊरुस्तंभके लक्षण ।

वातशंकिभिरज्ञानात्तस्य स्यात्स्नेहनात्पुनः । पादयोः सदनं सुप्तिः कृच्छ्रादुद्धरणं तथा ॥ जंघोरुग्लानिरत्यर्थं शश्वच्चानाहवेदना । पदं च व्यथतेऽत्यर्थं शीतस्पर्शं न वेत्ति च ॥ संस्थाने पीडने गत्यां चालने चाप्यनीश्वरः । अन्यस्येव हि संभग्नावूरू पादौ च मन्यते ॥

अर्थ-पैरोंका सोना, संकोच होना इत्यादिक वातरोगके समान चिह्न मिलनेसे उस मनुष्यको वातरोगकी शंका होय तब वह मनुष्य तैलादिक स्नेहन चिकित्सा करे तौ उसके दूना रोग बढे, पैरोंमें पीडा होय तथा पैर सोय जावें, बडे कष्टसे पैर उठाया और धरा जाय, जंघा और ऊरू इनमें अधिक पीडा होय और निरन्तर दाह तथा वेदना होय, पैरोंमें व्यथा होय, शीतल पदार्थका स्पर्श मालूम न होय तथा पैरके उठानेमें रगडनेमें अथवा चलनेमें अथवा हिलानेमें असमर्थ होय, पैर और ऊरू ये टूटेसे तथा अन्य मनुष्यकेसे मालूम हो ये लक्षण ऊरुस्तंभके हैं. व्याधिके स्वभावसे यह ऊरुस्तंभ त्रिदोषका एक ही है. वातादि भेदोंसे अनेक प्रकारका नहीं है ॥

ऊरुस्तंभके असाध्य लक्षण ।

यदा दाहार्तितोदार्तो वेपनः पुरुषो भवेत् ।
ऊरुस्तंभस्तदा हन्यात्साधयेदन्यथा नवम् ॥

अर्थ-जिस समय पुरुष दाह, शूल और तोद (नोचनेकीसी पीडा) इनसे पीडित होकर कंपयुक्त होय उस समय वह ऊरुस्तंभरोग उसका नाश करे है और ये लक्षण न होंय और रोग नया होय तौ यह रोग साध्य है ॥

ऊरुस्तंभकी सामान्य चिकित्सा ।

यत्स्यात्कफप्रशमनं न च मारुतकोपनम् ।
तत्सर्वं सर्वदा कार्यमूरुस्तंभस्य भेषजम् ॥

अर्थ-कफको शमनकर्त्ता और जो वादीको कुपित करे नहीं ऐसी औषध ऊरुस्तंभ रोग पर सदैव करनी चाहिये ॥

स्नेहासृक्स्राववमनं बस्तिकर्म विरेचनम् । वर्जयेदाढ्यवाते तु यतस्तैस्तस्य कोपनम् ॥ तस्मादत्र सदा कार्यं स्वेदलंघनरूक्षणम् । आममेदः कफाधिक्यात् मारुतं नयता समम् ॥

अर्थ-आढचवातमें स्नेह, रुधिरमोक्ष, स्नान, वमन, बास्तिकर्म और विरेचन ये क्रिया करना वर्जित है. क्योंकि ये स्नेहादिक कर्म करनेसे वात कुपित होती है परंतु उस वायुमें आम, मेद और कफ इनकी आधिक्यता रहती है इस वास्ते वादीके शमनकी इच्छा करनेवाले वैद्यको ऊरुस्तंभ पर सदैव स्वेद, लंघन और रूक्ष ये क्रिया करनी चाहिये ॥

सर्वो रूक्षः क्रमः कार्यस्तत्रादौ कफनाशनः ।
पश्चाद्वातविनाशाय विधातव्याखिला क्रिया ॥

अर्थ-ऊरुस्तंभ रोगमें प्रथम सर्व क्रम रूक्ष तथा कफनाशक करने चाहिये फिर वातनाशक संपूर्ण क्रिया करनी चाहिये ॥

अन्न ।

भोज्याः पुराणाः श्यामाककोद्रवोद्दालशालयः ।
जांगलैरघृतैर्मांसैः शाकैश्चालवणैर्हितैः ॥

अर्थ-पथ्यमें पुराने सामखिया, पुरानी कोदों, पुरानी वनकोदों, पुराने चावल, जंगली जीवोंका मांस और शाक ये पदार्थ निमक और घीके विना देवे ॥

दद्याद्वास्तुकशाकेन हीनेन लवणेन तु ।
जीर्णशाल्योदनं रूक्षमूरुस्तंभवते भिषक् ॥

अर्थ-निमकके विना बथुएका शाक, पुराने चावलोंका भात और रूक्ष ऐसे पदार्थ ऊरुस्तंभरोग पर देवे ॥

रूक्षणाद्वातकोपश्चेन्निद्रानाशादिसंभवः ।
स्नेहस्वेदक्रमस्तत्र कार्यो वातामयापहः ॥

अर्थ-रूक्ष क्रिया करके बादीका कोप होनेसे निद्रानाशादिकोंका संभव होता है. इसवास्ते उस पर स्नेह और स्वेद इत्यादि वातरोगनाशक उपचार करे ॥

प्रतारयेत्प्रतिस्रोतः सरितं शीतलोदकाम् ।
सरश्च विमलं शीतं स्थिरतोयं पुनः पुनः ॥

अर्थ–ऊरुस्तंभवाले रोगीको वहनेवाली नदीमें वेगके सामने चलावे अथवा जिसें तलाव पुष्करणीका जल स्थिर होवे उसमें अथवा शीतलजलमें चलना चाहिये ॥

भल्लातादि क्वाथ।

भल्लातकुल्यामगधाजटानां कृतः कषायो मधुसंप्रयुक्तः।
ऊरुग्रहं घोरमपि प्रवृद्धं निहंति गोमूत्रयुता कणा वा ॥

अर्थ–भिलाए, पीपल और पीपरामूल, इनका काढा करके उसमें सहत मिलायके देवे तो घोर कठिनभी यदि ऊरुस्तंभ रोग होवे तो उसको दूर करे अथवा गोमूत्रमें मिलायके पीपलका चूर्ण देना चाहिये ॥

ग्रंथिकादि क्वाथ।

ग्रंथिकारूक्षकृष्णानां क्वाथं क्षौद्रान्वितं पिबेत् ॥

अर्थ–पीपरामूल, धामन और पीपल इनका काढा देवे तो ऊरुस्तंभ रोगको नाश करे॥

भल्लातकादि क्वाथ।

भल्लातकामृता शुंठी दारु पथ्या पुनर्नवा।
पंचमूलीद्वयं मिश्रमूरुस्तंभनिबर्हणम् ॥

अर्थ–भिलाए, गिलोय, सोंठ, देवदारु, हरड, पुनर्नवा, दशमूल इनका काढा करके पीवे तो ऊरुस्तंभ रोगको नाश करे ॥

पुनर्नवादि क्वाथ।

पुनर्नवा नागरदारु पथ्या भल्लातकच्छिन्नरुहाकषायः।
दशांघ्रिमिश्रः परिपेय ऊरुस्तंभेथ वा मूत्रपुरःप्रयोगः ॥

अर्थ–पुनर्नवा, सोंठ, देवदारु, हरड, भिलाए, गिलोय और दशमूल इनका काढा करके ऊरुस्तंभ पर केवल काढा मात्र अथवा गोमूत्र डालके पीवे ॥

शेफालिकादि क्वाथ।

शेफालिकादलक्वाथं कणायुक्तं पिबेन्नरः।
कफघ्नं यच्च तत्सर्वमूरुस्तंभे प्रयोजयेत् ॥

अर्थ–ऊरुस्तंभ पर काली निर्गुंडीके पत्तोंका काढा करके उसमें पीपलका चूर्ण डालके देवे तथा जो कफनाशक उपचार हैं वे करने चाहिये ॥

वचादि क्काथ ।

वचा प्रतिविषा कुष्ठं चित्रकं देवदारु च । पाठा तेजोवती मुस्ता स्वर्णक्षीरी निदिग्धिका ॥ वत्सको नक्तमालश्च मूर्वा कटुकरोहिणी । तर्कारी प्रग्रहश्चैव पीलु निंबफलानि च ॥ आसनः सप्तपर्णश्च त्रिफलामारिचेन च । एतानि समभागानि कषायमुपसाधयेत् ॥ मधुयुक्तं कषायं च प्रयोगेण पिबेन्नरः । ऊरुस्तंभं जयेदेव वृक्षामिंद्राशानिर्यथा ॥ एतान्येव च चूर्णानि माक्षिकेण विलेहयेत् । अनेन च कषायेण भोजयेत्सिद्धमोदनम् ॥

अर्थ–वच, अतीस, कूठ, चित्रक, देवदारु, पाढ, मालकांगनी, नागरमोथा, चोक, कटेरी, इन्द्रजौ, कंजा, मूर्वा, कुटकी, अरनी, अमलतास, अखरोट, नीमके फल, खिरेटी, विजेसार, सतोना, हरड, बेहडा, आवला और काली मिरच ये औषध सम-भाग लेके काढा करे जब शीतल हो जावे तब सहत डालके पीवे अथवा इसी औषधोंके चूर्णको सहत मिलायके सेवन करे अथवा इसी काढेसे अन्न भक्षण करे तो जैसे वज्र वृक्षोंका नाश करे उसी प्रकार यह ऊरुस्तंभको नाश करे है ॥

त्रिफलादि चूर्ण ।

त्रिफला चव्यकटुका ग्रंथिकं मधुना लिहेत् ।
ऊरुस्तंभविनाशाय पुरं मूत्रेण वा पिबेत् ॥

अर्थ–त्रिफला, चव्य, कुटकी, पीपलामूल इनका चूर्ण सहतमें सानके चाटे तो ऊरुस्तंभका नाश होय अथवा गोमूत्रमें गूगल डालके पीवे तो ऊरुस्तंभरोगको दूर करे ॥

दूसरा प्रकार ।

त्रिफलाग्रंथिकव्योषचूर्णं लिह्यात्समाक्षिकम् ।
ऊरुस्तंभविनाशय पुरं मूत्रेण वा पिबेत् ॥

अर्थ–त्रिफला, पीपरामूल और त्रिकुटा इनके चूर्णको सहतके साथ चाटे तो ऊरुस्तंभका नाश होय अथवा गोमूत्र और गूगल मिलायके पीवे ॥

वृद्धयादि तैल ।

वृद्धिर्महौषधं दारु चूर्णमेषां समांशतः ।
पीतमुष्णांभसा शीघ्रमूरुस्तंभविनाशनम् ॥

अर्थ-वृद्धि, सोंठ और देवदारु इनका समानभाग चूर्ण एकत्र कर गरम जलसे देवे तो ऊरुस्तंभका शीघ नाश करे ॥

त्रिफलाचूर्ण ।

लिह्याद्वा त्रिफलाचूर्णं क्षौद्रेण कटुकायुतम् ।
सुखांबुना पिबेद्वापि चूर्णं षट्चरणं नरः ॥

अर्थ-त्रिफला, कुटकी, इनका चूर्ण सहतमें मिलायके खाय अथवा सुखोष्ण गरम जलसे षट्चरण चूर्ण देवे ॥

शिलाजतुयोग ।

शिलाजतुं गुग्गुलुं वा पिप्पलीमथ नागरम् ।
ऊरुस्तंभे पिबेन्मूत्रैर्दशमूलीजलेन वा ॥

अर्थ-शिलाजीत, गूगल, पीपल अथवा सोंठ इनमेंसे किसी एकको गोमूत्रके साथ अथवा दशमूलके काढेके साथ देवे तो ऊरुस्तंभका नाश होय ॥

ग्रंथिकादि कल्क ।

चव्याभयाग्निदारूणां कल्कं वा मधुसंयुतम् ॥

अर्थ-चव्य, हरड, चित्रक और देवदारु इनके कल्कमें सहत डालके देवे तो ऊरुस्तंभ नाश करे ॥

पिप्पल्यादि कल्क ।

पिप्पलीं पिप्पलीमूलं भल्लातकफलानि च ।
कल्कं मधुयुतं पीत्वा ऊरुस्तंभात्प्रमुच्यते ॥

अर्थ-पीपल, पीपरामूल, भिलाए इनको कूट पीस गोली बनावे फिर इसको सहतके साथ खाय तो ऊरुस्तंभसे मुक्त होवे ॥

पिप्पलीयोग ।

पिप्पलीं वर्धमानां वा माक्षिकेण गुडेन वा ।
ऊरुस्तंभे प्रशंसंति गंडिरारिष्टमेव च ॥

अर्थ-वर्धमान पीपल, सहत अथवा गुड इनके साथ देवे अथवा जमीकंदका आसव देवे तो ऊरुस्तंभ पर प्रशस्त है ॥

ऊरुस्तंभ पर योग ।

सक्षारमूत्रस्वेदांश्च रूक्षान्नस्वेदनानि च ।
कुर्याद्देहे च मूत्राद्यैः करंजफलसर्षपैः ॥

अर्थ-गोमूत्रमें जवाखार आदि खारोंको मिलायके उससे पसीने निकाले, रूक्षान्न देवे और देहमें कंजके वीज अथवा सब रसोंको गोमूत्रमें पीसके गरम करके लेप करे ॥

प्रकारांतर ।

मूलैर्वा ह्यश्वगंधाया मूलैरर्कस्य वा भिषक् । पिचुमंदस्य वा मूलैरथ वा देवदारुणा ॥ क्षौद्रसर्षपवल्मीकमृत्तिकासंयुतैर्भिषक् । गाढमूर्द्धंधनं कुर्यादूरुस्तंभप्रशांतये ॥

अर्थ-असगंध, आक, अथवा नीम इनकी जड, देवदारु, सहत और सरसों इनका चूर्ण और बांबीकी मिट्टी इन सबको एकत्र मिलाय गरम करे उसकी गाढी २ पिंडी बांधे तो ऊरुस्तंभकी शांति होय ॥

ऊरुस्तंभ पर लेप ।

क्षौद्रं सर्षपवल्मीकमृत्तिकासंयुतं भिषक् ।
गाढमुत्सादनं कुर्यादूरुस्तंभे प्रलेपनम् ॥

अर्थ-सहत, सरसों और बांबीकी मिट्टी इनको एकत्र जलसे पीस लेप करे. इसको उत्सादन कहते हैं, यह ऊरुस्तंभनाशक है ॥

कुष्ठादि तेल ।

कुष्ठं श्रीवेष्टकोदीच्यसरलं दारु केसरम् । अजगंधाश्वगंधा च तैलं तैः सार्षपं पचेत् ॥ सक्षौद्रं मात्रया तस्मादूरुस्तंभार्दितः पिबेत् ॥

अर्थ-कूठ, श्रीवेष्ट, खस, सरल, देवदार, नागकेशर, वनतुलसी और असगंध इनके काढेमें अथवा कल्कमें सरसोंका तेल डालके पचावे. इसको ऊरुस्तंभरोगवालेको सहत डालके प्रकृति अनुसार पिवावे तो यह रोग दूर होय ॥

सैंधवादि तैल ।

द्वे पले सैंधवाढ्यं च शुंठीग्रंथिकचित्रकान् । द्वे द्वे भल्लातकास्थीनि विंशतिर्द्वे तथाढके ॥ आरनाले पचेत्प्रस्थं तैलस्येत्थं पिबेत्पलम् । गृध्रस्योरुग्रहस्येति सर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ-सैंधा निमक, सोंठ, पीपरामूल और चित्रककी छाल ये प्रत्येक आठ २ तोले,

मिलाए ८८ तोले और कांजी २२६ तोले इसमें ६४ तोले तेल डालके पचन करे, सिद्ध होनेपर इसको पीवे तो गृध्रसी, ऊरुस्तंभ और संपूर्ण वातविकार इनको नाश करे ॥

कटुतिक्ततैल ।

बलाभ्यां पिप्पलीमूलं नागरो उष्ट्रकद्वराः । तैलप्रस्थे समो दध्ना गृध्रस्यूरुग्रहापहम् ॥ उष्ट्रकद्वरतैले तु तैलं सार्षपमुच्यते । पिप्पलीनागराद्याश्च प्रत्येकं द्विपलं स्मृतम् ॥

अर्थ-बला, नागबला, पीपरामूल और सोंठ ये प्रत्येक आठ २ तोले ले ऊटकरा, राल ३२ तोले इनका कल्क तथा दही सबके बराबर डालके तेल सिद्ध करे. यह गृध्रसी और ऊरुस्तंभ इनका नाश करे ॥

त्रिफलादि गुग्गुलु ।

त्रिफला त्रिवृता दंतीनीलिनीचतुरंगुलैः । पंचविंशतिसंख्यातैः प्रत्येकं पलमात्रया ॥ क्वथिते कुट्टिते चैभिश्चतुर्द्रोणे प्रमाणतः । पचेत्तत्सलिले तावद्यावद्द्रोणावशेषितम् ॥ पंचांशं तत्र निक्षिप्य गुग्गुलुस्तु पलान्यपि । क्वाथयेद्धि घनं यावत्तावत्तत्पूर्ववत्पचेत् ॥ तावत्तस्मिन्घनीभूते त्वगेला नागकेसरम् । त्रिकटु त्रिफला पत्रं यवानी जीरकाणि च ॥ पिप्पली दहनं चैव हपुषा कृष्णजीरकम् । बाष्पिका साजमोदा च तिंत्तिडी चाम्लवेतसो ॥ सौवर्चलयुता कृत्वा श्लक्ष्णचूर्णं विनिःक्षिपेत् । प्रत्येकमेकपालिकैर्भागैः सम्यक् विचक्षणैः ॥ ततोऽक्षमात्रा गुटिका भक्षयेत्तु दिने दिने । ऊरुस्तंभोरुग्रथितगंडमालोदरार्दितः ॥ अनेन चैव विधिना गिरिजं वा प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला, निसोथ, जमालगोटा, नीली और अमलतासका गूदा ये प्रत्येक सौ २ तोले ले सबको कूटके ४०९६ तोले जलमें डालके औटावे जब चतुर्थांश काढा रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इसमें २०० तोले गूगल डालके फिर पचावे जब गाढा हो जावे तब उसमें दालचीनी, इलायची, नागकेशर, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, पत्रज, अजमायन, जीरा, गजपीपल, चीतेकी छाल, होऊबेर, काला जीरा, कलौंजी, अजमोद, इमली, अमलवेत और संचरनिमक ये प्रत्येक औषधी चार २ तोले लेय सबका चूर्ण करके उसी पाकमें डालदेवे. सबको

मिलायके एक जीव करे फिर इसमेंसे १० मासेकी गोली बनायके नित्य प्रति एक २ देवे तो ऊरुस्तंभ, गांठ, गंडमाला और उदर इनपर उत्तम है तथा इसी विधिसे शिलाजीतको देना चाहिये ॥

गुंजागर्भरसायन ।

निष्कत्रयं शुद्धसूतं निष्कद्वादशगंधकम् । गुंजाबीजं विषं निष्कं निंबबीजं जया तथा ॥ प्रत्येकं निष्कमात्रं तु माषं जेपालबीजकम् । जातीजंबीरधत्तूरकाकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥ मर्द्यं सर्वं वटीं कुर्यात् घृतैर्गुंजाद्वयं पिबेत् । गुंजागर्भो रसो नाम हिंगुसैंधवसंयुतः ॥ समंडं दापयेत्पथ्यमूरुस्तंभप्रशांतये ॥

अर्थ-पारा १ तोला, गंधक ४ तोले और गुंजा (घूंगची), बच्छनाग विष, निबोरी और अरनी ये प्रत्येक चार २ मासे ले और जमालगोटा १ मासा इन सबको एकत्र करके चमेली,जंभीरी नींबू, धतूरा और मकोय इनके रसमें एक २ दिन खरल करे इसकी दो २ रत्तीकी गोली बनायले एक गोलीको घी, हींग और सैंधानिमक इनके साथ सेवन करे तो ऊरुस्तंभको शांत करे. इस पर मंड और भात ये पथ्यमें देवे ॥

लशुनयोग ।

पलमर्धपलं वापि रसोनस्य सुकुट्टितम् । हिंगुजीरकसिंधूत्थसौवर्चलकटुत्रिकम् ॥ एभिः संचूर्णितैः सर्वैस्तुल्यं तैलेन संयुतम् । यथाग्नि भक्षयेत्प्राज्ञो रुबुक्काथानुपानतः ॥ मासैकस्य प्रयोगेण सर्वान्वातामयान् जयेत् । एकांगसर्वांगगतमूरुस्तंभं च गृध्रसिम् ॥ कटिपृष्ठास्थिसंधिस्थमर्दितं चापतंत्रकम् । ज्वरं धातुगतं जीर्णं नित्यशैत्यं करांघ्रिजम् ॥

अर्थ-कूटी हुई लहसन, हींग, जीरा, सैंधानिमक, संचरनिमक, सोंठ, मिरच और पीपल इनका चूर्ण ४ तोले अथवा २ तोले लेकर उसकी बराबर अंडका तेल लेवे फिर अग्निबल विचारके खानेको देय और ऊपरसे अंडकी जडका काढा देवे इस प्रकार १ महीने पर्यंत करे तो संपूर्ण वातके रोग, एकांगवात, सर्वांगवात, ऊरुस्तंभ, गृध्रसी, कमर, पीठ, हड्डी और संधि इनकी वादी, अर्दित और अपतंत्रक वायु, धातुगत और जीर्णज्वर, हाथ पैरोंका शीत इन सबका नाश करे ॥

ऊरुस्तंभरोग पर पथ्य ।

रूक्षः सर्वो विधिः स्वेदः कोद्रवा रक्तशालयः । यवाः कुलित्थाः श्यामाका उद्दालाश्च पुरातनाः ॥ सोभांजनं कारवेल्लं पटोलं वास्तुकं तथा । सुनिषण्णं काकमाची वेत्राग्रं तप्तवारि च ॥ जांगलैरघृतैर्मांसैः शाकैश्चालवणैर्हितैः । एतत्पथ्यं समुद्दिष्टमूरुस्तंभविकारिणाम् ॥

अर्थ–सब रूक्षण कर्त्ता विधि, पसीने, निकालने, कोदों अन्न, लाल चावल, पुराने जौ, कुलथी, सामाखिया, वनकोदों, सहजना, करेला,परवल, लहसन, चोपतिया, मकोय वेतकी अग्रभाग, उष्ण जल, विना घी डाली हुई जंगलकी मछली, लवण विना साग ये पदार्थ पथ्य कहे हैं ॥

ऊरुस्तंभरोग पर अपथ्य ।

गुरुशीतद्रवस्निग्धविरुद्धासात्म्यभोजनम् । विरेचनं स्नेहनं च वमनं रक्तमोक्षणम् ॥ बस्तिं च न हितं प्राहुरूरुस्तंभविकारिणाम् ।

अर्थ–भारी, शीतल, पतले, चिकने, विरुद्ध और आत्माको अहित ऐसे पदार्थोंका सेवन, जुल्लाव, स्नेहनकर्म, वमन, रुधिरका निकालना, बस्तिकर्म ये सब ऊरुस्तंभ विकारवालोंको हित नहीं हैं ॥

इति श्रीकृष्णलालमाथुरतनुजदत्तरामनिर्मिते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघण्टुरत्नाकरे ऊरुस्तंभ कर्मविपाकनिदानचिकित्सापथ्यापथ्यं समाप्तम् ।

आमवातकर्मविपाकः ।

हुताग्निनिर्वापक आमवातवानिति वचनात् ।
तदुक्तदोषशांतये अयुतसंख्याको गायत्रीजपः ॥

अर्थ–जो प्राणी हवन करी हुई अग्निका विसर्जन करे विना शांति कर देता है वह आमवातरोगी होय है. उस प्राणिको उस दोषकी शांति करनेको दश हजार गायत्रीजप करना चाहिये ॥

आमवात पर वैदिककर्म ।

तिलैराज्ये च होमं सुवर्णान्नदानं यत्र असंकीर्णमात्मानं मन्यते द्विजः तत्र तिलैर्होमो गायत्र्या वा जपस्तथेति स्मरणात् ॥

अर्थ-तिलोंका अथवा घीका हवन करे और सुवर्ण तथा अन्न इनका दान करे. जिस जगह कर्त्ता अपना अपरिपूर्ण मनोरथ माने उस कालमें उसको तिलोंका होम अथवा गायत्रीका जप करे. इस प्रकार कहा है ॥

ज्योतिश्शास्त्राभिप्रायमाह ।

अष्टमो गुरुरामस्य कर्त्ता चेति वचनात् अष्टमस्थानस्थितगुरुजनितामवातरोगोपशांतये तत्प्रीतये पूर्वोक्तमेव जपहोमपूजादानादिकं कुर्यात् तेनोपशाम्यति ॥

अर्थ-जन्मकालमें यदि अष्टम स्थानमें गुरु बैठा होय तो वह प्राणी आमरोगी होय. इस वास्ते अष्टमस्थानस्थित बृहस्पतिके होनेसे उत्पन्न आमकी शांति करनेको तथा गुरुकी प्रसन्नताके वास्ते पूर्वोक्त कहा जप करे. होम, पूजा और दान इत्यादि करे तो आमरोग नष्ट होय ॥

आमवातनिदान ।

विरुद्धाहारचेष्टस्य मन्दाग्नेर्निश्चलस्य च । स्निग्धं भुक्तवतो ह्यन्नं व्यायामं कुर्वतस्तथा ॥ वायुना प्रेरितो ह्यामः श्लेष्मस्थानं प्रधावति । तेनात्यर्थं विदग्धोऽसौ धमनीः प्रतिपद्यते ॥ वातपित्तकफैर्भूयो दूषितः सोऽन्नजो रसः । स्रोतांस्यभिस्पंदयति नानावर्णोऽतिपिच्छिलः॥ युगपत्कुपितावेतौ त्रिकसंधिप्रवेशकौ । स्तब्धं च कुरुते गात्रमामवातः स उच्यते ॥

अर्थ-विरुद्ध आहार (क्षीर मत्स्यादि), और विरुद्ध विहार करनेवाले मनुष्यके, मंदाग्निवालेके, जो दंड कसरत न करे और चिकना अन्न खायकर दंड कसरत करनेवाले ऐसे पुरुषका आम वायुसे प्रेरित होकर कफके आमाशयादि स्थानके प्रति जायकर प्राप्त होय और उस कफसे अत्यन्त दूषित होकर वही आम धमनी नाडियोंमें प्राप्त होकर भीतर वह अन्नका रस (आम) वात और कफपित्तसे दूषित होकर नाडियोंके छिद्रोंमें भर जाय, वह अनेक प्रकारके रंगका अतिगाढा होय है. पीछे ये वात कफ एकही कालमें कुपित होकर त्रिकसंधियोंमें जायके प्रवेश करे, तब जकडीसी देह हो जाय, इस रोगको आमवात ऐसे कहते हैं ॥

आमवातके सामान्य लक्षण ।

अङ्गमर्दोऽरुचिस्तृष्णा आलस्यं गौरवं ज्वरः ।
अपाकः शून्यताऽङ्गानामामवातः स उच्यते ॥

अर्थ-अंगोंका टूटना, अरुचि, प्यास, आलकस, भारीपना, ज्वर, अन्नका न पचना और देहमें शून्यता हो जाय इस रोगको आमवात कहते हैं ॥

अत्यंत बढे हुए आमवातके सामान्य लक्षण ।

स कष्टः सर्वरोगाणां यदा प्रकुपितो भवेत् । हस्तपादशिरोगुल्फात्रिकजानूरुसंधिषु ॥ करोति सरुजं शोथं यत्र दोषः प्रपद्यते । स देशो रुजतेऽत्यर्थं व्याविद्ध इव वृश्चिकैः ॥ जनयेत्सोऽग्निदौर्बल्यं प्रसेकारुचिगौरवम् । उत्साहहानिर्वैरस्यं दाहं च बहुमूत्रताम् ॥ कुक्षौ कठिनतां शूलं तथा निद्राविपर्ययम् । तृट्छर्दिभ्रममूर्च्छाश्च हृद्ग्रहं विड्विबंधताम् ॥ जाड्यांत्रकूजमानाहं कष्टांश्चान्यानुपद्रवान् ॥

अर्थ-यह आमवात जिस समय बढे उस समय सब रोगोंमें कष्टकर्त्ता होती है, अर्थात् सब रोगोंसे बढकर कष्टदायक है । हाथ, पैर, मस्तक, घोंटू, त्रिकस्थान, जानू, जंघा इनकी संधियोंमें पीडायुक्त सूजन करे और जिस २ ठिकाने आम जाय उसी उसी ठिकाने बीछूके डंक मारनेकीसी पीडा करे. यह रोग मंदाग्नि, मुखसे पानीका गिरना, अरुचि, देह भारी, उत्साहका नाश, मुखमें विरसता, दाह, बहुत मूत्रका उतरना, कूखमें कठिनता, शूल, दिनमें निद्रा आवे, रातिमें जागे, प्यास, वमन, भ्रम, मूर्च्छा, हृदयमें दुःख, मलका अवरोध, जडता, आंतोंका गूंजना, अफरा तथा अत्यंत उपद्रव कहिये वातव्याधिमें कहे कलायखंजादिकोंको करे ॥

आमवातके विशेष लक्षण ।

पित्तात्सदाहरागं च सशूलं पवनानुगम् ।
स्तैमित्यं गुरुकंडूं च कफजुष्टं तमादिशेत् ॥

अर्थ-पित्तसे जो आमवात होय उसमें दाह और लाल रंग होय है. वादीके आमवतमें शूल होय है. कफसंबंधी आमवातमें देहमें आर्द्रता (गीला) और भारीपना तथा खुजली चले है ॥

आमवातमें साध्यासाध्य विचार।

एकदोषानुगः साध्यो द्विदोषो याप्य उच्यते।
सर्वदेहचरः शोथः स कृच्छ्रः सान्निपातिकः ॥

अर्थ-एक दोषका आमवातरोग साध्य है, दो दोषोंका याप्य है, और सर्व देहमें विचरनेवाली सूजन अथवा त्रिदोषसे प्रगट आमवातरोग कष्टसाध्य जानना ॥

आमवातकी सामान्य चिकित्सा।

लंघनं स्वेदनं तिक्तं दीपनानि कटूनि च। विरेचनं स्नेहपानं बस्तयश्चाममारुते ॥ रूक्षः स्वेदो विधातव्यो वालुकापोटलै-स्तथा। उपनाहाश्च कर्तव्यास्तेऽपि स्नेहविवर्जिताः ॥

अर्थ-लंघन, पसीने निकालना, कडवी, दीपन, तीक्ष्ण ऐसे पदार्थ, विरेचन स्नेहपान बस्ति, वालूकी पोटलीका रूक्ष सेंक तथा रूक्ष उपनाहविधि इत्यादि उपचार आमवात पर करने चाहिये ॥

रास्नादि क्वाथ।

रास्नामरदारुराजवृक्षत्रिकटैरंडपुनर्नवामृतानाम्।
कथितं जलमामवात एषां शमयेन्नागरकल्कमिश्रमाशु ॥

अर्थ-रास्ना, देवदारु, अमलतासका गूदा, सोंठ, मिरच, पीपल, अंडकी जड, पुनर्नवा और गिलोय इनके काढेमें सोंठका कल्क डालके देवे तो आमवातका नाश करे ॥

रास्नादि क्वाथ।

रास्नामृतानागरवातशत्रुकटंकटेरीजनितः कषायः।
एरंडतैलेन समन्वितोऽयं भेत्ता भवेदामसमीरणस्य॥

अर्थ-रास्ना, गिलोय, सोंठ, अंडकी जड और दारुहलदी इनका काढा कर उसमें अंडीका तेल डालके पीवे तो आमवातको नाश करे ॥

रास्नादि क्वाथ।

रास्नामृतारग्वधदेवदारुपंचांघ्रियुग्मेंद्रयवैः कषायः।
एरंडतैलेन समन्वितोऽयं भेत्ता भवेदामसमीरणस्य ॥

अर्थ-रास्ना, गिलोय, अमलतासका गूदा, देवदारु, दशमूल और इन्द्रजौ इनका काढा अंडीका तेल डालके पीवे तो आमवातका नाश होवे ॥

महौषधादि क्वाथ ।

महौषधामृताभवः कषायकश्च सेवितः ।
हिनस्ति चाममारुतं चिराय संधिसंश्रितम् ॥

अर्थ—सोंठ घाडकी और गिलोय इनका काढा करके सेवन करनेसे बहुत दिनके भी आमवातरोगका नाश होय ॥

महारास्नादि क्वाथ ।

रास्ना वातारिमूलं च वासकः सदुरालभः । शठी दारु बला मुस्तं नागरातिविषाभयाः ॥ श्वदंष्ट्रा व्याधिघातश्च मिशिधान्यं पुनर्नवा । अश्वगंधामृता कृष्णा वृद्धदारुः शतावरी ॥ वचा सहचरश्चैव चविका बृहतीद्वयम् । समभागानि सर्वाणि रास्ना तु त्रिगुणा मता ॥ पिबेत्कषायमेतेषामष्टभागावशेषितम् । क्षिप्त्वा नागरचूर्णं च प्रक्षेपोऽत्र यथाबलम् ॥ सर्वेषु वातरोगेषु सामेषु तु विशेषतः । पक्षाघातेऽर्दिते कंपे कुब्जे संधिगतेऽनिले॥ जानुजंघास्थिपीडासु गृध्रस्यां च हनुग्रहे । ऊरुस्तंभे वातरक्ते विश्वाच्यां क्रोष्टुशीर्षके ॥ हृदामये च दुर्नाम्नि योनिशुक्रामयेषु च । पुंसां मेढ्रगते वाते स्त्रीणां वंध्यामये तथा ॥ योषितां गर्भदं मुख्यं नास्त्यस्मादौषधं परम् । महारास्नादिकः क्वाथो वेधसायं विनिर्मितः ॥

अर्थ—रास्ना ३ भाग और अंडकी जड, अडूसा, धमासा, कचूर, दारुहलदी, खिरेटी, नागरमोथा, सोंठ, अतीस, हरड, गोखरू, अमलतास, सोंफ, धनिया, पुनर्नवा, असगंध, गिलोय, पीपल, विधायरा, शतावर, वच, पियावासा, चव्य, कटेरी और बडी कटेरी ये सब एक एक भाग लेवे. जलमें अष्टावशेष काढा करके पीवे. इसको पीनेके समय इसमें रोगीका बलाबल विचारके सोंठका चूर्ण डाल लेना चाहिये. यह सर्ववातके रोग, विशेषकरके आमवात, पक्षाघात, अर्दित, कंप, कुब्ज, संधिगत, जानु, जंघा और अस्थि इनमें रहनेवाला वायु, गृध्रसी, हनुग्रह, ऊरुस्तंभ, वातरक्त, विश्वाची, क्रोष्टुशीर्षक, हृद्रोग, बवासीर, योनिरोग, शुक्ररोग, मेढ्रगत वात तथा वंध्यापना इन पर हितकारी है. स्त्रियोंके गर्भ देनेवाली ऐसी दूसरी औषध नहीं है. यह महारास्नादिक क्वाथ प्रथम ब्रह्मदेवने निर्माण करा है ॥

रास्नादि क्वाथ ।

रास्नारग्वधदेवदारुऋतुभूच्छिन्नोद्भवागोक्षुरैरेरंडेन युतैः कषायकवरो विश्वारजोभिश्रितः । नानासंधिरुजान्वितं विजयते घोरामवातामयं स्वर्णांगीकुचपद्मकुड्मलरुचिर्दीपोंऽधकारं यथा ॥

अर्थ-रास्ना, अमलतासका गूदा, देवदारु, पुनर्नवा, गिलोय, गोखरू और अंडकी जड इन औषधोंका काढा करके उसमें सोंठका चूर्ण डालके पीवे तो अनेक संधियोंमें दर्द होय तोभी भयंकर आम दूर होवे. जैसे सुवर्णसमान देहवालीके कुचकमलकलीके समान देदीप्यमान जो दीपक वह जैसे अंधकारको दूर करता है उसी प्रकार यह औषध आमवातको नष्ट करे ॥

रास्नाद्वादशकाढा ।

रास्ना शतावरी वासा गुडूच्यतिविषाभया । शुंठी दुरालभैरंडदेवदारुवचाघनैः ॥ क्वाथः पीतो जयत्याशु आमवातं सुदारुणम् । कटयूरुत्रिकजंघांघ्रिगुल्फजानुसमाश्रितम् ॥

अर्थ-रास्ना, शतावर, अडूसा, गिलोय, अतीस, हरड, सोंठ, धमासा, अंडकी जड, देवदारु, वच और नागरमोथा इनका काढा कमर, ऊरु, त्रिक, जंघा, पैर, एडी और घोटू इन स्थानोंकी वादी और दारुण आमवातको नाश करे ॥

रास्नासप्तक क्वाथ ।

रास्नामृतारग्वधदेवदारुत्रिकंटकैरंडपुनर्नवानाम् ।
क्वाथं पिबन्नागरचूर्णमिश्रं जंघोरुपृष्ठत्रिकपार्श्वशूली ॥

अर्थ-रास्ना, गिलोय, अमलतास, देवदारु, गोखरू, अंडकी जड, पुनर्नवा इनका काढा सोंठका चूर्ण डालके पीवे तो जंघा, पीठ, पीठका हाड और कूख इन ठिकानेका शूल दूर होवे ॥

शुंठ्यादि क्वाथ ।

शुंठीगोक्षुरकक्वाथः प्रातः प्रातर्निषेवितः ।
आमवातं कटीशूलं पाचनो रुग्प्रणाशनः ॥

अर्थ-सोंठ और गोखरू इनका काढा नित्य सेवन करनेसे आमवात और कमरका शूल इनको नाश करे. पाचक है और पीडाको शमन करनेवाला है ॥

शठ्यादि क्वाथ ।

शठी शुंठ्यभया चोग्रा देवाह्वातिविषामृता ।
कषायमामवातस्य पाचनं रूक्षभोजनम् ॥

अर्थ-कचूर, सोंठ, हरड, वच, देवदारु, अतीस और गिलोय इनका काढा करके आमवात पर पाचन देवे और रूक्ष भोजन करे ॥

पिप्पल्यादि क्वाथ ।

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरम् ।
क्वथितं वारयत्येवमामवातं सुदारुणम् ॥

अर्थ-पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ इनका काढा दारुण आमवात रोगको दूर करे ॥

दशमूलादि काढा ।

दशमूलकषायमिश्रितं वा ललने विश्वकषायमिश्रितं वा ।
प्रपिबेत्कटिकुक्षिबस्तिशूले ध्रुवमेरंडजमेकमेव तैलम् ॥

अर्थ-दशमूलके काढेमें अथवा सोंठके काढेमें अंडीका तेल मिलायके पीवे तो कमर, कूख और बस्ति इन ठिकानेके शूलको नाश करे ॥

अजमोदादि चूर्ण ।

अजमोदा विडंगानि सैंधवं देवदारु च । चित्रकः पिप्पलीमूलं शतपुष्पा च पिप्पली ॥ मरिचं चेति कर्षांशं प्रत्येकं कारयेद्बुधः । कर्षास्तु पंच पथ्याया दश स्युर्वृद्धदारुकात्॥ नागराच्च दशैव स्युः सर्वाण्येकत्र कारयेत् । पिबेत्कोष्णजलेनैव चूर्णं श्वयथुनाशनम् ॥ आमवातरुजं हंति संधिपीडां च गृध्रसीम् । कटिपृष्ठगुदस्थां च जंघयोश्च रुजं जयेत् ॥ तूनीं प्रतूनीं विश्वाचीं कफवातामयान् जयेत् । समेन वा गुडेनास्य वटकान् कारयेत्सुधीः ॥

अर्थ-अजमोद, वायविडंग, सैंधानिमक, देवदारु, चीतेकी छाल, पीपरामूल, सोंफ, पीपल और काली मिरच ये नौ औषध एक २ कर्ष लेवे. तथा छोटी हरड ५ कर्ष विधायरा १० कर्ष, सोंठ १० कर्ष ले फिर सब औषधोंका चूर्ण कर गरम जलके

साथ पीवे तो सूजन, आमवायु, संधियोंका दूखना और गृध्रसी वायु (कमरसे लेकर पैरपर्यंत जो होता है) तथा कमर, पीठ, गुदा और जंघा इनका शूल होता है वह तथा तूनी वायु, प्रतूनी वायु, विश्वाची वायु तथा कफवायुके विकार ये सब रोग दूर होवें अथवा इस चूर्णके समान गुड डालके गोली बनायले. इन गोलियोंके सेवन करनेसे जो रोग चूर्णके खानेसे दूर होंय वेही इन गोलियोंके खानेसे दूर होते हैं ॥

पंचसमचूर्ण ।

शुंठी हरीतकी कृष्णा त्रिवृत्सौवर्चलं तथा । समभागानि सर्वाणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । ज्ञेयं पंचसमं चूर्णमेतच्छूलहरं परम् । आध्मानजठरार्शोघ्नमामवातहरं स्मृतम् ॥

अर्थ-सोंठ, हरड, पीपल, निसोथ, संचरनिमक इनको समान भाग लेकर चूर्ण करे इसको गरम जलके साथ पीवे तो शूल, अफरा, उदर, बवासीर और आमवात इनको नाश करे. इसको पंचसमचूर्ण कहते हैं ॥

पंचकोलचूर्ण ।

पंचकोलकचूर्णं च पिबेदुष्णेन वारिणा ।
मंदाग्निशूलगुल्मामकफारोचकनाशनम् ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य और चित्रककी छाल इनका चूर्ण गरम जलके साथ पीवे तो मंदाग्नि, शूल, गोला, आम, कफ और अरुचि इनका नाश करे ॥

त्रिफलादि चूर्ण ।

त्रिफला नागरं चैव सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । मस्त्वारनालतक्रेण पेया मांसरसेन वा ॥ आमवातं निहंत्याशु श्वयथुं संधिसंस्थितम् ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ इनका चूर्ण करके दहीके मंड (जल) से, कांजी, छाछ, पेया और मांसरस इनमेंसे किसी एकके साथ पीवे तो तत्काल आमवात और संधिगत सूजनको दूर करे ॥

आरग्वधपत्र चूर्ण ।

आरग्वधस्य पत्राणि भृष्टानि कटुतैलतः ।
आमवातप्रशांत्यर्थं खादेद्भक्तावृतानि च ॥

अर्थ-अमलतासके पत्तोंको सरसोंके तेलमें तलके आमवात दूर करनेके लिये इनको भातमें मिलायके भक्षण करे ॥

पुनर्नवादि चूर्ण ।

पुनर्नवा छिन्नरुहा शताह्वा मुंडी सठी दारुकनागराणाम् ।
चूर्णं हि हन्यात्किल कांजिकेन दुष्टामवातं चिरगृध्रसीं च ॥

अर्थ–पुनर्नवा, गिलोय, शतावर, गोरखमुंडी, कचूर, देवदारु और सोंठ इनका चूर्ण करके कांजीके साथ देवे तो दुष्ट आमवातका और बहुत दिनकी गृध्रसी वायु-का नाश करे ॥

त्रुट्यादि चूर्ण ।

त्रुटिलवंगविडंगकटुत्रिकं घनाशिवाशिवपत्रजकं समम् ।
त्रिगुणितं त्रिवृता च सिता समा अदत आम पतिष्यति कामतः ॥

अर्थ–बडी इलायची, लौंग, वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, हरड, गूगल और पत्रज ये समान भाग लेवे तथा निसोथ तिगुना ले एवं सब चूर्णके समान मिश्री मिलायके चूर्ण तैयार करे इसके सेवन करनेसे संपूर्ण आम गिर जावे ॥

अलंबुषादि चूर्ण ।

अलंबुषा गोक्षुरकास्त्रिफला नागरामृता ।
यथोत्तरं भागवृद्ध्या श्यामाचूर्णं च तत्समम् ॥
पिबेत्सुरा मस्तु तक्रं कांजिकोष्णोदकेन वा ।
आमवातं जयत्याशु सशोफं वातशोणितम् ॥

अर्थ–गोरखमुंडी १, गोखरू २, हरड ३, बहेडा ४, आवले ५, सोंठ ६ और गिलोय ७ भाग लेवे सबकी बराबर निसोथ लेवे और चूर्ण करके मद्य (दारु), दही-का तोड, छांछ, कांजी और गरम जल इनमेंसे किसी एकके साथ सेवन करे तो आम-वात, सूजन और वातरक्तरोग इनको शीघ्र नाश करे ॥

भल्लातादि चूर्ण ।

भल्लाततिलपथ्यानां चूर्णं गुडसमन्वितम् ।
आमवातं कटीशूलं हन्याद्वा गुडनागरम् ॥

अर्थ-भिलाए, तिल और हरड इनका चूर्ण गुडके साथ खाय अथवा सोंठ और गुड मिलायके खाय तो आमवात तथा कमरका शूल इनको नाश करे ॥

वैश्वानरचूर्ण ।

मणिमंथस्य भागौ द्वौ यवक्षारश्च तत्समः । तथाजमोदभागश्च

नागराद्भागपंचकम् ॥ दश चैव हरीतक्याः सूक्ष्मं चूर्णं कृतं शुभम् । मस्त्वारनालमूत्रैश्च सुरयोष्णोदकेन वा ॥ पीतं जयेदामवातं गुल्महृद्बस्तिजान् गदान् । प्लीहानमथ शूलादीनानाहं चार्शसां हितम् ॥ वातानुलोमनमिदं चूर्णं वैश्वानरं स्मृतम् ॥

अर्थ—सैंधानिमक २ भाग, जवाखार २ भाग, सोंठ ५ भाग और हरड १० भाग इनका बारीक चूर्ण कर दहीका तोर, कांजी, गोमूत्र, मद्य, गरम जल इनमेंसे किसी एकके साथ पीवे तो आमवात, गोला, हृदयरोग, बस्तीके रोग, प्लीहा, शूल, अफरा और बवासीर इनको नष्ट करे तथा वातको अनुलोमन करे. इसको वैश्वानर चूर्ण इस प्रकार कहते हैं ॥

हिंग्वादि चूर्ण ।

हिंगु चव्यं बिडं शुंठी कृष्णाजाजी सपुष्करम् ।
भागोत्तरमिदं चूर्णं पीतं वातामजिद्भवेत् ॥

अर्थ—हींग, चव्य, बिडनिमक, सोंठ, पीपल, जीरा और पुहकरमूल ये क्रमसे १-२-३-४-५-६-७ इस प्रकार भाग लेवे. इनका चूर्ण करके सेवन करे तो आमवातको दूर करे ॥

चित्रकादि चूर्ण ।

चित्रकं कटुका पाठा कलिंगातिवृषामृता ।
देवदारु वचा मुस्ता नागरातिविषाभया ॥
पिबेदुष्णांबुना नित्यं चूर्णमाममरुत्प्रणुत् ॥

अर्थ—चित्रक, कुटकी, पाढ, इन्द्रजौ, अतिस, गिलोय, देवदारु, वच, नागरमोथा, सोंठ, अतीस, हरड इनका चूर्ण कर गरम जलके साथ पीवे तो आमवातको नाश करे ॥

नागरचूर्ण ।

कर्षं नागरचूर्णस्य कांजिकेन पिबेत्सदा ।
आमवातप्रशमनं कफवातविनाशनम् ॥

अर्थ—दस मासे सोंठका चूर्ण नित्य कांजीके साथ पीवे तो आमवात, कफवात इनको नाश करे ॥

अजमोदादि गुटिका वा चूर्ण ।

अजमोदमरिचपिप्पलीविडंगसुरदारुचित्रकशताह्वाः । सैंधवमागधिमूलं भागा नवकस्य पलिकाः स्युः ॥ शुंठी दश पलिका स्यात्पलानि तावंति वृद्धदारस्य । अभयापलानि पंच श्लक्ष्णं चूर्णं विधाययेदेषाम् ॥ समगुडवटकानदतश्चूर्णं वा कोष्णवारिणा पिबतः । नश्यंत्यामानिलजाः सर्वे रोगाः सुदारुणाः शीघ्रम् ॥ आनाहशूलतूनीप्रतितूनीगृध्रसीगुल्माः । कटिपृष्ठपरिस्फुटनं स्फुटनं चैवास्थिजंघयोस्तीव्रम् ॥ श्वयथुस्तथांगसंधिषु ये चान्येऽप्यामवातजा रोगाः । सर्वे प्रयांति शांतिं तम इव सूर्यांशुविध्वस्तम् ॥

अर्थ–अजमोद, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु, चित्रक, शतावर, सैंधानिमक और पीपलामूल ये प्रत्येक चार २ तोले, सोंठ ४० तोले, विधायरा ४० तोले, हरड २० तोले इस प्रकार सबको लेकर बारीक चूर्ण करे फिर चूर्णके समान गुड मिलायके इसको अनुमान माफिक खाय अथवा इसको गरम जलके साथ पीवे तो आमवातसे उत्पन्न घोर भयंकर रोगोंका नाश होय तथा अफरा, शूल, तूणी, प्रतितूणी, गृध्रसी, गोला, कमर, पीठ, हाड और जंघा इनका फूटना, सूजन, अंग, संधि इनमें पीडा ये सब नाश होंय, जैसे सूर्योदय होनेसे अंधकार नष्ट होता है ॥

सिंहनादगूगल ।

पलत्रयं वा ताप्यस्य त्रिफलायाः सुचूर्णितम् । सौगंधिकं पलं चैव कौशिकस्य पलं तथा ॥ कुडवं चोरुबूकस्य तैलमादाय यत्नतः । पाचयेत्पाकविद्वैद्यः पात्रे लोहमये दृढे ॥ हंति वातं तथा पित्तं श्लेष्माणं खंजपंगुताम् । श्वासं सुदुर्जयं हंति कासं पंचविधं तथा ॥ कुष्ठानि वातरक्तं च गुल्मशूलोदराणि च । आमवातं जयेदेतदपि वैद्यैर्विवर्जितम् ॥ एतदभ्यासयोगेन जरापलितवर्जितम् । सर्पिस्तैलरसोपेतमश्नीयाच्छालिषष्टिकम् ॥ सिंहनाद इति ख्यातो रोगवारणदर्पहा । वह्नेर्वृद्धिकरः पुंसां भाषितो दंडपाणिना ॥

अर्थ-सुवर्णमाक्षिक १२ तोले, त्रिफलाका चूर्ण, गंधक ४ तोले, गूगल ४ तोले, अंडीका तेल १६ तोले इन सबको एकत्र कर लोहपात्रमें पाकके सदृश पचायके धर लेवे. फिर घी, तेल अथवा मांसरस इनके साथ शक्तिप्रमाण भक्षण करे तो वात, पित्त, कफ, लंगडापना, पांगुलापना, दुर्जय श्वास, पांच प्रकारकी खांसी, कोढ, वातरक्त, गोला, शूल, उदर, दुःसाध्य आमवात इनको नाश करे, यह अभ्यासके प्रतापसे बुढापेको दूर करे, इसको सिंहनाद गूगल कहते हैं यह रोगरूप हाथीके मारनेको सिंह स्वरूप है और अग्निको प्रदीप्त करे है. यह योग दंडपाणि भैरवने कहा है. इस पर पथ्य सांठी चावलका भात खाय ॥

हरीतकीगूगल ।

हरीतकी नागरं च वृद्धदारुसमं समम् । द्विगुणं गुग्गुलं दत्त्वा तैलमेरंडजं तथा ॥ मर्दयेद्दिनमेकं तु भक्षयेदामवातनुत् ॥

अर्थ-छोटी हरड, सोंठ, विधायरा ये समान भाग लेवे और गूगल सबसे दूनी डालके इसको अंडके तेलमें एक दिन खरल करे तो यह हरीतकी गूगल आमवातरोगका नाश करे इसमें संदेह नहीं है ॥

योगराजगूगल ।

चित्रकं पिप्पलीमूलं यवानी कारवी तथा । विडंगमजमोदा च जीरकं सुरदारु च ॥ चव्यैला सैंधवं कुष्ठं रास्ना गोक्षुरधान्यकम् । त्रिफला मुस्तकं व्योषं त्वगुशीरं यवाग्रजम् ॥ तालीसपत्रं पत्रं च सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । यावंत्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रं च गुग्गुलुः ॥ संमर्द्य सर्पिषा गाढं स्निग्धभांडे निधापयेत् । ततो मात्रां प्रयुंजीत यथेष्टाहारवानपि ॥ प्लीहगुल्मोदरानाहदुर्नामानि विनाशयेत् । अग्निं च कुरुते दीप्तं तेजोवृद्धिं बलं तथा ॥ मर्दयेद्दिनमेकं तु भक्षयेदामवातहा ॥

अर्थ-चित्रककी छाल, पीपरामूल, अजमायन, सोंफ, वायविडंग, अजमायन, जीरा देवदारु, चव्य, इलायची, सैंधानिमक, कूठ, रासना, गोखरू, धनिया, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा, सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, खस, जवाखार, तालीसपत्र और पत्रज इन सबका समानभाग चूर्ण करे तथा इस चूर्णके समान गूगल डालके और घी मिलायके एक दिन खूब कूट पीस एकजीव करके घीके चिकने बासनमें भरके रख देवे इसमेंसे अग्निबल विचारके मात्रा देवे और पथ्य जैसा

चाहिये ऐसे भोजन करे तो प्लीहा, गोला, उदर, अफरा और बवासीर इनको नाश करे और तेज तथा बल इनको बढावे, अग्निको प्रदीप्त करे ॥

सिंहनादगूगल ।

गुग्गुलोः पिंडितं प्रस्थं कटुतैलं पलं घृतम् । प्रत्येकं त्रिफलाप्रस्थे सार्धद्रोणे जले पचेत् ॥ पादावशेषं पूतं च पुनरग्नावधिश्रयेत् । त्रिकुटं त्रिफला मुस्तं विडंगामरदारु च ॥ गुडूच्यग्नित्रिवृद्दंती चव्यं सूरणमानकम् । पारदं गंधकं चैव प्रत्येकं शुक्तिसंमितम् ॥ पुनः सहस्रं प्रत्यग्रं जयपालफलं बुधः । त्वगंकुरविनिर्मुक्तं सिद्धं संचूर्ण्य निक्षिपेत् ॥ ततो माषद्वयं जग्ध्वा पिबेत्तप्तजलादिकम् । अग्निं च कुरुते दीप्तं वडवानलसन्निभम् ॥ धातुवृद्धिं बुद्धिवृद्धिं बलं च विपुलं तथा । आमवातं शिरोवातं ग्रंथिवातं भगंदरम् ॥ जानुजंघास्थिजं वातं सकटिग्रहमेव च । अश्मरीमूत्रकृच्छ्रं च भग्नं बस्तिमितोदरे ॥ आम्लपित्तं तथा कुष्ठं प्रस्वेदं स्वेदनिर्गमम् । कासं पंचविधं श्वासं क्षयं च विषमज्वरम् ॥ श्लीपदं पक्तिशूलं च पांडुरोगं सकामलम् । शोथांत्रवृद्धिशूलानि गुदजानि विनाशयेत् ॥ सिंहनाद इति ख्यातो योगोऽयममृतोपमः ॥

अर्थ—बारीक करा हुआ गूगल ६४ तोले, शिरसका तेल, घी ये चार २ तोले लेवे हरड, बहेडा, आंवला ये प्रत्येक ६४ तोले, सबको जौकूट करके १५३६ तोले जलमें डालके काढा करे जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे फिर इस काढेको चूल्हे पर चढाय उसमें सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा, वायविडंग, देवदारु, गिलोय, चित्रक, निसोथ, दंती, चव्य, जमीकंद, पारा २ और गंधक २ इनकी कजली करके इसको और जमालगोटा १००० ले उनकी भीतरकी जिह्वा निकालके लेवे. इन सबका चूर्ण करके उसमें डाल देवे. जब तैयार हो जावे तब २ मासेकी गोली बनायके देवे ऊपरसे गरम जल पीवे तो अग्निको प्रदीप्त करे, धातुवृद्धि और बल इनको बढावे. आमवात, शिरोवात, वातग्रंथि, वातभगंदर और कमर, जानु, जंघा और हड्डी इनकी वादी और पथरी, मूत्रकृच्छ्र, भग्नरोग, बस्तिवात, पेटकी जडता, अम्लपित्त, कुष्ठ, पसीनोंका आना, पांच प्रकारकी खांसी, श्वास, क्षय, विषमज्वर,

श्लीपद, पक्तिशूल, पांडुरोग, कामला, सूजन, अंत्रवृद्धि, शूल और बवासीर इनको नाश करे. यह सिंहनाद गुग्गुलयोग अमृतके समान है ॥

अभयादि गुटी ।

अभया सैंधवं शम्या विशालां विश्वभेषजम् । इंद्रवारुणिका-मज्जा तथा सर्वं विमर्दयेत् ॥ लोहभांडे विनिक्षिप्य दद्यादग्निं शनैः शनैः । बदराभाप्रमाणेन वटी कार्या भिषग्वरैः ॥ उष्णोदकानुपानेन भुक्त्वा दोषाद्यपेक्षया । पथ्यं दध्योदनं देयं आमरोगं विनाशयेत् ॥

अर्थ-हरड, सैंधानिमक, अमलतासका गूदा, इंद्रायनकी जड, सोंठ और इन्द्रायनका गूदा, इन सबको एकत्र कर मर्दन करे फिर लोहेके पात्रमें भरके चूल्हेपर चढा मंद २ अग्निसे पचावे गाढी होने पर बेरकी बराबर गोली बनावे. इसको गरम जलके साथ दोषानुसार देवे और और पथ्यमें दहीभात खानेको देय तो आमरोगका नाश करे ॥

एरंडादि गुटी ।

एरंडबीजमज्जा समविश्वशर्करासहिता ।
गुटी कृता प्रभाते भुक्ता सामानिलं जयति ॥

अर्थ-अंडी, सोंठ और मिश्री ये समान भाग लेवे, सबको कूट पीस गोली बनावे प्रातःकाल भक्षण करे तो आमवातको नष्ट करे ॥

आमवातारि गुटिका ।

रसगंधकलोहार्कतुत्थटंकणसैंधवान् । समभागान् विचूर्ण्याथ चूर्णाद्विगुणगुग्गुलुः ॥ गुग्गुलोः पादिकं ज्ञेयं त्रिफलाचूर्णमुत्तमम् । तत्समं चित्रकस्याथ घृतेन वटिकां कुरु ॥ खादेन्माषद्वयं चेदं त्रिफलाजलयोगतः । आमवातारिगुटिका पाचिका भेदिका तथा ॥ आमवातं निहंत्याशु गुल्मशूलोदराणि च । यकृत्प्लीहानमष्ठीलां कामलां पांडुकामलाम् ॥ हलीमकाम्लपित्ते च श्वयथुं श्लीपदार्बुदम् । ग्रंथिशूलं शिरः शूलं गृध्रसीवातरोगहा ॥ गलगंडं गंडमालां कृमीन्कुष्ठं विनाशयेत् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, लोहभस्म, ताम्रभस्म, लीलाथोथा, सैंधानिमक ये सब दवा समान भाग ले चूर्ण करे और चूर्णसे दूनी गूगल डाले गूगलकी चतुर्थांश त्रिफलेका चूर्ण मिलावे और इतनाही चित्रकका चूर्ण लेवे. इन सबको घीमें घोटके उडद्के समान गोली बनावें. दो गोली त्रिफलाके चूर्णमें मिलाय गरम जलके साथ सेवन करे. इसको आमवातारि गुटिका कहते हैं । यह पाचक है, भेदनी है और आमवातको शीघ्र दूर करे तथा शूल, गोला, उदर, यकृत, प्लीहा, अष्ठीला, कामला, पांडुकामला, हलीमक, अम्लपित, सूजन, श्लीपद, अर्बुद ग्रंथिशूल, शिरका दर्द, गृध्रसी, वातरोग, गलगंड, गंडमाला, कृमिरोग और कुष्ठ इन सब रोगोंको दूर करे ।

एरंडयोग ।

विशोध्येरंडबीजानि पिष्ट्वा तत्पायसं पिबेत् ।
आमवाते कटीशूले गृध्रस्यां चौषधं परम् ॥

अर्थ-अंडीको पीसके उसके दूधमें खीर बनावे इसके भक्षण करनेसे आमवात कमरका दर्द और गृध्रसी इनको दूर करे ॥

एरंडयोग ।

आमवातगजेन्द्रस्य शरीरवनचारिणः ।
एक एवाग्रणीर्हंता एरंडस्नेहकेसरी ॥

अर्थ-देहरूपी वनमें फिरनेवाले आमरूप हाथीको मारनेवाला एरंडतैलरूप सिंह बडा बलवान् कहा है ॥

हरीतकी योग ।

एरंडतैलयुक्तां हरीतकीं भक्षयेद्विधिवत् ।
आमानिलार्तियुक्तो युक्तो वृद्ध्या च गृध्रस्या ॥

अर्थ-अंडीके तेलमें हरडको भक्षण करे तो आमवात, अंत्रवृद्धि और गृध्रसीवात इनको सर्वथा दूर करे ॥

अहिंस्रादियोग ।

अहिंस्रा केमुकामूलं शिग्रु वल्मीकमृत्तिका ।
मूत्रपिष्टश्च कर्तव्यो उपनाहोऽनिलामजित् ॥

अर्थ-अहिंस्रा (थूहरका भेद), कोचीके बीज, सहजना और बमईकी मिट्टी इनको गोमूत्रमें पीसके इसकी पिंडी बांधे तो आमवात दूर होय ॥

जल ।

आमवाताभिभूताय पीडिताय पिपासया ।
पंचकोलेन संसिद्धं पानीयं हितमुच्यते ॥

अर्थ-आमवातसे तथा तृषासे पीडित मनुष्यको पंचकोलका काढा करके पिलावे तो हितकारी होय अर्थात् प्यास दूर करे ॥

एरंडमूलयोग ।

एरंडमूलं त्रिफला गोमूत्रं चित्रकं विषम् ।
गुंजैका घृतसंबद्धा आमवातान् विनाशयेत् ॥

अर्थ-अंडकी जड, त्रिफला, गोमूत्र, चित्रककी छाल और सिंगियाविष इनके एक रत्ती चूर्णको घीमें मिलायके खाय तो आमवातका नाश करे ॥

रसोनयोग ।

रसोनस्य पलं हिंगु व्योषसैंधवजीरकम् । सौवर्चलं विडंगं च पिष्ट्वा तैलेन मिश्रयेत् ॥ कर्षैकं भक्षयेत्प्रातरामवातार्दितो नरः॥

अर्थ-लहसन ४ तोले, हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधानिमक, जीरा, संचरनिमक और वायविडंग इनको एकत्र कर तेलमें मिलायके १ तोला प्रातःकाल नित्य भक्षण करे तो आमवातको हितकारी होय ॥

पारदभस्मप्रयोग ।

शरावनिहितं सूतं द्विघ्नवंगं मुहुर्मुहुः । दत्त्वाग्निं सूर्ययामांतं निंबकाष्ठेन घट्टयेत् ॥ एवं भवेत्पीतवर्णा रसराजस्य भूतिका । यथानुपानं रोगेषु प्रदद्यात् भिषगुत्तमः ॥ अर्जितं विविधोपायैर्जंगमाद्भिषजान्मया । इदं तत्त्वं प्रलब्धं तु पालनीयं चिकित्सकैः ॥

अर्थ-पारा १ भाग, रांगा २ भाग दोनोंको खिपडेमें डाल अग्नि पर रखके नीमकी लकडीसे वारंवार घोटे इस प्रकार १२ प्रहरकी अग्नि देवे इस प्रकार करनेसे पारदकी पीले रंगकी भस्म होय. इसको रोगोंमें अनुपान विचारके देवे. मैंने यह औषध एक बडे भारी वैद्यसे अनेक उपायसे प्राप्त करी है. यह वैद्योंको अपने संग्रहमें रखनी चाहिये ॥

आमवातविध्वंस रस ।

प्रक्षिप्य गंधं रसपादभागं कलाप्रमाणं च विषं समस्तात् । कृशानुतोयेन च भावयित्वा वल्लं ददीतास्य मरुत्प्रशांत्यै ॥ अपस्मारे तथोन्मादे सर्वांगव्यथनेऽपि च । एकांगवाते सामे वा दंष्ट्राबंधे हिमे तथा ॥ देयोऽयं वल्लमात्रं तु सर्ववातनिवृत्तये ॥

अर्थ–पारा ४ भाग, गंधक १ भाग और सबका षोडशांश सिंगियाविष ले चित्रकके काढेमें खरल करके २ रत्तीकी गोली वात दूर करनेको देवे. इसको वातविध्वंस रस कहते हैं. यह अपस्मार, उन्माद, सर्व अंगोंकी व्यथा, एकांगवात, आमवात, हनुस्तंभ और सरदी इत्यादिक संपूर्ण वायु दूर होनेके वास्ते वैद्य रोगीको देवे ॥

आमवातारिरस ।

रसो गंधो वरा वह्निर्गुग्गुलुः क्रमवर्धितः । एतदेरंडपत्रेण श्लक्ष्णचूर्णं विमर्दयेत् ॥ कर्षांशैरंडतैलेन हंत्युष्णजलपायिनः । आमवातवते देयं दुग्धमुद्गादि वर्जयेत् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, त्रिफला, चित्रककी छाल, गूगल ये औषध क्रमवृद्धिसे लेकर अंडके पत्तोंके रसमें खरल करके गोली बनाय लेवे. एक गोली अंडीके तेलसे आमवात-रोगीको देवे और ऊपर गरम जल पीवे तथा दूध और मूंगके पदार्थको त्यागके पथ्य देवे तो यह आमवात रोग दूर करे ॥

उदयभास्कर रस ।

पारदं गंधकं व्योषं द्वौ क्षारौ लवणानि च । टंकणं चेति तुल्यानि जेपालं सकलैः समम् ॥ भावना बीजपूरस्य शुष्कं सूक्ष्मं विचूर्णयेत् । संग्राह्यं रक्तिकायुग्ममामवातविनाशनम् ॥ गोदुग्धं केवलं पथ्यं देयं मुद्गपयोऽथवा । अन्नं च वर्जयेत्तावदामशोफं निवारयेत्॥

अर्थ–पारा, गंधक, सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जीखार, जवाखार, पांचों निमक, सुहागा, जमालगोटा ये सब समान भाग ले बिजोरेके रसकी भावना देवे और बारीक चूर्ण करके रख छोडे इसमेंसे दो रत्तीके अनुमान रोगीको देवे तो आमवातका नाश करे इस पर केवल पथ्यमें गौका दूध और मूंगकी दाल देवे तथा आमवातसंबंधी सूजन जाने पर्यंत अन्न खानेको न देवे ॥

शतपुष्पादि लेप ।

शतपुष्पा वचा विश्वा श्वदंष्ट्रा वरुणत्वचः । पुनर्नवा सदेवाह्वा शठी मुंडीतिकाः समाः ॥ प्रसारणी च तर्कारी फलं च मदनस्य च । सूक्तकांजिकपिष्टास्तु सुखोष्णालेपने हिताः ॥

अर्थ-सोंफ, वच, सोंठ, गोखरू, वरनाकी छाल, पुनर्नवा, देवदारु, कचूर, मुंडी, प्रसारणी, अरनी और मैनफल इनको समान भाग ले सूक्त अथवा कांजीमें पीस गरम करके उसको सुखोष्ण लेप करे तो आमवातकी सूजनवालेको हितकारी होवे ॥

रसोनाद्य तैल ।

दधि मस्तु गुडक्षीरपोतका माषपिष्टकम् । लशुनस्य तुलामेकां जलद्रोणे विपाचयेत् ॥ चतुर्भागावशेषं तु कर्षयेदवतारयेत् । ताकषायं परिश्राव्य विपचेत्ताम्रभाजने ॥ चित्रतैलाढकं दद्याद्भेषजानि प्रदापयेत् । त्रिफला त्र्यूषणं हिंगु सूक्ष्मैला चित्रकं बिडम् ॥ सौवर्चलं विडंगानि दीप्यकं ग्रंथिकं तथा ॥

अर्थ-दही, छाछका जल, गुड, दूध, पोई, उडदका चून और लहसन ये ४०० तोले लेवे. इनको ४०९६ तोले जलमें डालके चतुर्थांश रहने पर्यंत काढा करे जब तैयार हो जावे तब उतारके छान लेवे. फिर इसको तांबेके पांत्रमें भर इसमें २५६ तोले अंडीका तेल और हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, इलायची, चित्रककी छाल, संचरनिमक, बिडनिमक, वायविडंग, अजमायन और पीपरामूल इनका कल्क मिलायके तेल सिद्ध कर लेवे. इसका आमवातरोग पर उपयोग करे ॥

रसोनासव ।

पलं शतं रसोनस्य तिलं च कुडवं तथा । हिंगु त्रिकटुका क्षारौ द्वौ पंचलवणानि च ॥ शतपुष्पा तथा कुष्ठं पिप्पलीमूलचित्रकौ । अजमोदा यवानी च जीरकं चापि बुद्धिमान् ॥ प्रत्येकं च पलं तेषां सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । घृतभांडे दृढे धान्ये स्थापयेद्दिनषोडश ॥ प्रक्षिपेत्तैलमानेन प्रस्थार्धं कांजिकस्य च ।

खादेत्कर्षप्रमाणं तु तोयं मद्यं पिबेदनु ॥ आमवाते तथा वाते सर्वांगैकांगसंश्रिते । अपस्मोऽनले मांद्ये कासे श्वासे ज्वरेषु च ॥

अर्थ—लहसन ४०० तोले, तिल १६ तोले और हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, सैंधानिमक, पांचों निमक, कूठ, पीपलामूल, चित्रक, अजमोद, अजमायन और जीरा ये प्रत्येक ४ तोले ले सबका बारीक चूर्ण करे, इसको घीके बासनमें भरके इसमें अंडीका तेल ३२ तोले तथा कांजी ३२ तोले डालके उस पात्रका मुख बंद कर १६ दिन धानकी राशिमें गाड देवे. पश्चात् उसमेंसे निकालके इसमेंसे १ तोला औषध पीवे और इसके ऊपर मद्य अथवा जल पीवे तो एकांग आमवात अथवा सर्वांगकी आमवात, मृगी, मंदाग्नि, खांसी और ज्वर इनको नाश करे ॥

लशुनरस ।

रसो रसोनस्य पिचुप्रमाणः क्षिपेच्च तत्राक्षमितं घृतं गोः । पिबेदुभे तेन दहंत्यवश्यं शिखीव तूलं हिमहामवातम् ॥

अर्थ—लहसनका रस १ तोला, गौका घी १ तोला, दोनोंको मिलायके पीवे यह कपासको जैसे अग्नि भस्म कर देती है उसी प्रकार यह शीत और आमवातको जलाय देवे है॥

रसोनासव ।

तुला क्षुण्णा रसोनस्य तदर्धं लुंचितास्तिलाः । पात्रे तु गव्यतक्रस्य पिष्टद्रव्यैः समं क्षिपेत् ॥ त्र्यूषणं धान्यकं चव्यं चित्रकं गजपिप्पली । अजमोदा त्वगेला च ग्रंथिकं च पलांशकम् ॥ शर्करायाः पलान्यष्टौ पंचाजाज्याः पलानि च । कृष्णाजाज्याश्च चत्वारि राजिकायास्तथैव च ॥ पलप्रमाणं दातव्यं हिंगोर्लवणपंचकम् । आर्द्रकस्य च चत्वारि सर्पिश्चाष्टौ पलानि च ॥ तिलतैलस्य तावंति सूक्तस्यापि च विंशतिः । सिद्धार्थकस्य चत्वारि द्विगुणं मधुकस्य च ॥ एकीकृत्य दृढे भांडे धान्यराशौ निधापयेत् । द्वादशाहात्समुद्धृत्य प्रातः खादेद्यथाबलम् ॥ सुरां सौवीरकं चाथ मधु वापि पिबेन्नरः । जीर्णे यथेप्सितं भोज्यं दधिपिष्टकवर्जितम् ॥ एकमासोपयोगेन सर्वव्याधिहरो

भवेत् । अशीतिर्वातजा रोगाश्चत्वारिंशच्च पित्तजाः ॥ विंशतिश्लेष्मजास्तद्वत् नश्यन्ते तस्य सेवनात् । योनिशूलं प्रमेहांश्च कुष्ठोदरभगंदरान् ॥ अर्शोगुल्मक्षयांश्चापि जयेद्रुचिबलप्रदः ॥

अर्थ-लहसनका कल्क चार सौ तोले, तिलका कल्क दो सौ तोले, त्रिकुटा धनिया, चव्य, चित्रक, गजपीपल, अजमोद, दालचीनी, इलायची और पीपरामूल ये प्रत्येक चार २ तोले. पांचों निमक प्रत्येक ४ तोले, काला जीरा १६ तोले, राई १६ तोले, हींग ४ तोले, मिश्री ३२ तोले, जीरा २० तोले, अदरख १६ तोले और घी ३२ तोले, तिलोंका तेल ३२ तोले, कांजी ८० तोले, सपेद सरसों १६ तोले और मुलहठी ३२ तोले लेवे. इस प्रकार सब औषधोंको ले चूर्ण करे फिर एक पात्रमें गौकी छाछ डालके उसमें ये सब औषधी भरके उस घडेके मुखको बांध धानकी राशिमें गाड देवे. १२ दिन बीतनेके उपरांत उसको निकाल शक्तिके अनुसार प्रातःकाल पीवे. ऊपरसे मद्य कांजी अथवा सहत भक्षण करे. जब यह पच जावे. तब यथेष्ट भोजन करे और दही तथा चूनके पदार्थ अथवा पिट्ठीके पदार्थ खाना इस पर वर्जित है. यह एक महीने पर्यंत सेवनसे सर्वव्याधियोंको नाश करे. अस्सी प्रकारके वातरोग, चालिस प्रकारके पित्तरोग, बीस प्रकारके कफरोग, योनिशूल, प्रमेह, कुष्ठ, उदर, भगंदर, बवासीर, गोला और क्षय इन सब रोगोंका नाश करे. तथा रुचि और बलको करे है ॥

बृहत्सैंधवादि तैल।

सैंधवं श्रेयसी रास्ना शतपुष्पा यवानिका । स्वर्जिका मरिचं कुष्ठं शुंठी सौवर्चलं बिडम् ॥ वचाजमोदा जरणः पौष्करं मधुकं कणा । एतान्यर्धपलांशानि सूक्ष्मकल्कानि कारयेत् ॥ प्रस्थमेरंडतैलस्य प्रस्थोऽम्बु शतपुष्पजम् । कांजिकं द्विगुणं दत्त्वा मस्तु च द्विगुणं तथा ॥ एतत्संभृत्य संभारं शनैर्मृद्वग्निना पचेत् । सिद्धमेतत्प्रयोक्तव्यमामवातहरं परम् ॥ पात्रे चाभ्यंजने बस्तौ कुरुतेऽग्निबलं भृशम् । वातार्ते वंक्षणे शूले कटीजानूरुसंधिजे ॥ तथा हृत्पार्श्वजे शूले शस्तं श्लेष्मनिपीडिते । अन्यांश्चानिलजान्रोगान्नाशयत्याशु देहिनाम् ॥

अर्थ-सैंधानिमक, हरड, रास्ना, अजमायन; सज्जीखार, काली मिरच, कूठ, सोंठ, संचरनिमक, बिडनोन, वच, अजमोद, जीरा, पुहकरमूल, मुलहठी और पीपल

ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. सबका बारीक चूर्ण करे फिर इसमें ६४ तोले अंडीका तेल, सोंफका काढा ६४ तोले, कांजी १२८ तोले, दहीका जल १२८ तोले इस प्रकार लेकर सबको एकत्र कर मंदाग्निमें परिपक्व करे तो यह तेल सिद्ध होय इस तेल-को पान और अभ्यंग (उबटना) इस विषयमें योजना करनेसे अत्यंत वातनाशक और अग्निवर्धक है उसी प्रकार वंक्षण, कमर, जानु, संधी, हृदय और कूख इन स्थानों-की पीडा, कफरोग तथा अन्य वादीके रोग इन सबको शीघ्र नाश करे ॥

एरंडतैल ।

कटिशूले पिबेत्तैलमेरंडफलसंभवम् ॥

अर्थ–आमवातसे कमर रह जाती है उसको अच्छा करनेके लिये अंडीका तेल पीवे ॥

शुंठीघृत ।

पुष्टयर्थं पयसा साध्यं दध्ना विण्मूत्रसंग्रहे । दीपनार्थं मतिमता मस्तुना च प्रकीर्तितम् ॥ सर्पिर्नागरकल्केन सौवीरं च चतुर्गु-णम् । सिद्धमग्निकरं श्रेष्ठमामवातहरं परम् ॥

अर्थ–सोंठका चूर्ण और दूध इनके साथ सिद्ध करा हुआ घी पुष्टिकारी है और दही तथा सोंठ इनके साथ सिद्ध करा हुआ घी विण्मूत्र प्रतिबंधका नाशक और दहीके जलके साथ सोंठ डालके बनाया हुआ घी अग्निको दीपन करे है. उसी प्रकार कांजी और सोंठ इनके साथ सिद्ध करा हुआ घी अग्निदीपक और आमवातनाशक जानना ॥

शुंठीखंड ।

नागरस्य पलान्यष्टौ घृतस्य कुडवं तथा । क्षीराढकसमायुक्तं खंडस्यार्धशतं पलम् ॥ व्योषत्रिजातकद्रव्यात्प्रत्येकं च पलं पलम् । निःक्षिपेच्चूर्णितं तत्र खादेदग्निबलं तथा ॥ आमवा-तप्रशमनं धातुपुष्टिकरं परम् । बल्यमायुष्यमोजस्यं वली-पलितनाशनम् ॥

अर्थ–सोंठ ३२ तोले, घी १६ तोले, दूध २५६ तोले, मिश्री २०० तोले त्रि-कुटा, दालचीनी, इलायची और पत्रज ये प्रत्येक ४ तोले ले. सबका चूर्ण करके दूधमें डाल देवे और सबको मिलायके एकत्र कर लेवे. इसमेंसे शक्त्यनुसार सेवन करे तो यह आमवातको शमन करे. धातुकी पुष्टि करे. बल, आयुष्य और तेज इनको देवे और बुढापेको दूर करे ॥

प्रकारांतर।

नागरस्य तुलामेकां घृतस्य पलविंशतिः। क्षीरद्रोण्यर्धके पक्त्वा खंडस्यार्धं शतं क्षिपेत् ॥ व्योषं त्रिजातकं चैव केसरं पिप्पली जटा। जोंगकं जातिपत्रीकं जातिफलकचोरकम् ॥ अश्मभेदस्ताम्रभस्म वंगभस्म तथैव च। स्वर्णमाक्षिकमभ्रं च तथा लोहत्रयं क्षिपेत् ॥ एतान् पृथक् पलान् भागान् प्रत्येकं चूर्णितं क्षिपेत्। मंदानलविपक्कं तु लेहनं साधु साधयेत् ॥ बल्यं वर्ण्यं तथायुष्यं वलीपलितनाशनम्। आमवातप्रशमनं सौभाग्यकरमुत्तमम् ॥

अर्थ–सोंठ चार सौ तोले, घी ८० तोले, दूध ८१८२ तोले, मिश्री २०० तोले सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, पीपरामूल, काली अगर, जावित्री जायफल, कचूर, पाषाणभेद, तामेकी भस्म, वंगकी भस्म, सुवर्णमाक्षिककी भस्म, मंडुर, लोहा, कांतलोह प्रत्येक चार २ तोले लेवे. सबको मंदाग्नि पर रखके उत्तम अवलेह बनावे. यह बल, वर्ण, आयुष्य, वली (गुजलट), पलित (बालोंका सपेद होना) और आमवात इनको नाश करे तथा उत्तम सुंदरता देता है ॥

मेथीपाक।

मेथिकायाः पलान्यष्टौ शुंठ्या अष्टपलानि च। तयोश्चूर्णं पटे पूतं दुग्धे मृद्वग्निना पचेत् ॥ दुग्धाढकयुतं गव्यं घृतमष्टपलं क्षिपेत्। तत्तावत्सुपचेद्यावद्भवेदतिघनं पयः ॥ पुनः पचेच्छनैस्तत्र दत्त्वाढकामितां सिताम्। ततः पाके सुविज्ञाते ज्वलनादवतारयेत् ॥ मरिचं पिप्पली शुंठी कणामूलं सचित्रकम्। यवानी जीरको धान्यं कारवी शतपुष्पिका ॥ जातीफलं शठी त्वक्च पत्रकं भद्रमुस्तकम्। गृह्णीयात्पलमेतेषां सर्वेषां च पृथक् पृथक् ॥ षडक्षं नागरं तत्र मरिचं च षडक्षकम्। एषां चूर्णं परिक्षिप्य सर्वं संमिश्र्य रक्षयेत् ॥ एतत्तु भेषजं प्रोक्तं मेथिकापाकसंज्ञितम्। भक्षयेत्पलमात्रं तद्यथा चाग्निबलं तथा ॥

आमवातं निहंत्येतत् सर्वांश्च पवनामयान् । ज्वरांश्च विषमान् हंति पांडुरोगं सकामलम् । हंत्युन्मादमपस्मारं प्रमेहान्वात-शोणितम् । अम्लपित्तं शिरःपीडां नासारोगं दृगामयम् ॥ प्रदरं सूतिकारोगं हन्यादेतन्न संशयः । वपुषः पुष्टिकृद्बल्यं वीर्यवृ-द्धिकरं परम् ॥

अर्थ–दाना मेथी और सोंठ प्रत्येक बत्तीस २ तोले, दोनोंको कूट पीस कपडछान चूर्ण करे उसको २५६ तोले दूधमें ३२ तोले घी डालके पाक करे फिर २५६ तोले मिश्री डालके फिर मंदाग्निसे चासनी कर पूर्वोक्त ओषधोंका खोहा मिलायके सिद्ध होने पर उतार लेवे फिर काली मिरच, पीपल, सोंठ, पीपरामूल, चित्रक, अजमायन, जीरा, धनिया, कलौंजी, सोंफ, जायफल, कचूर, दालचीनी, तमालपत्र और नागरमोथा ये प्रत्येक चार २ तोले ले, सोंठ ६ तोले, मिरच ६ तोले इन सबका चूर्ण उस चासनीमें डाल सबको मिलायके थालमें कतरी जमाय लेवे इसको मेथीपाक कहते हैं यह ४ तोले अथवा शक्तिके अनुसार प्रातःकाल भक्षण करे तो यह आमवात और वातके रोग, विषमज्वर, पांडुरोग, कामला, उन्माद, अपस्मार, प्रमेह, वातरक्त, अम्लपित्त, मस्तकका दर्द, नासारोग, नेत्ररोग, प्रदर और प्रसूतिके रोग ये सब नाश होवें इसमें संशय नहीं है यह देहको पुष्ट करे, बल, वीर्यको बढावे है।

सौभाग्यशुंठी ।

विश्वौषधं पलान्यष्टौ सर्पिषः पलविंशतिः । प्रस्थद्वयं च गोक्षीरं शर्कराधतुला तथा ॥ त्रिकटु त्रिसुगंधी च प्रत्येकं च पलं पलम् । साधयेत्स्नेहविधिना सम्यक् शुंठीरसायनम् ॥ नाम्ना सौभाग्यशुंठीयं पुनः सौभाग्यदायकम् । आमवातं हरत्याशु त्वचि कांतिं प्रयच्छति ॥ धातुवृद्धिकरं वृद्धिमायुश्च कुरुते चिरम् । वलीपलितनाशं च कुर्याद्वंध्यत्वनाशनम् ॥

अर्थ–सोंठ ३२ तोले और घी ८० तोले इनको १२८ तोले गौके दूधमें डालके खोहा करे फिर मिश्री २०० तोलेकी चासनीमें पूर्वोक्त खोहा मिलाय फिर सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची और पत्रज ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. स्नेहविधिसे पाक तैयार करे. इसको शुंठीरसायन अथवा सौभाग्यशुंठी कहते हैं. यह आमवातका नाश करके उत्तम कांति करे है तथा धातुपुष्टि, बल और आयुष्यको बढावे तथा वली और पलित तथा वंध्यात्व इनको नाश करे है ॥

शुंठ्यादि पुटपाक।

शुंठीकल्कं विनिष्पिष्य रसैरेरंडमूलजैः। विपचेत्पुटपाकेन तद्रसः क्षौद्रसंयुतः॥ आमवातसमुद्भूतां पीडां जयति दुस्तरः॥

अर्थ-सोंठको अंडके रसमें पीस कल्क करे उसको पुटपाककी विधिसे पचायके रस निचोड लेवे. इसमें सहत डालके पीवे तो आमवातकी पीडाको नष्ट करे॥

आमवातरोग पर पथ्य।

रूक्षः स्वेदो लंघनं स्नेहपानं बस्तिर्लेपो रेचनं पायुवर्तिः। अब्दोत्पन्नाः शालयो ये कुलत्था जीर्णं मद्यं जांगलानां रसाश्च॥ वातश्लेष्मघ्नानि सर्वाणि तक्रं वर्षाभूश्चैरंडतैलं रसोनः। पटोलपत्तूरककारवेल्लवार्त्ताकुशिग्रूणि च तप्तनीरम्॥ मंदारगोकंटकवृद्धदारुं भल्लातकं गोजलमार्द्रकं च। कटूनि तिक्तानि च दीपनानि स्युरामवातामयिने हितानि॥

अर्थ-रूक्षणकर्म, लंघन, स्नेहपान, बस्तिकर्म, लेप, रेचन, गुदामें वत्ती डालना, एक वर्षके पुराने चावल, पुराने कुलथी, पुराना मद्य, जंगली जीवोंका मांसरस वातकफनाशक संपूर्ण पदार्थ, छांछ, सांठकी जड, अंडीका तेल, लहसन, परवल, पत्तोंका शाक, करेले, बैंगन, सहजना, गरम जल, आक, गोखरू, विधायरा, भिलाए, गोमूत्र, अदरख और जो पदार्थ चरपरे, कडवे, अग्निदीपनकर्त्ता हैं वे सब आमवातरोगीको हितकारक जानने॥

आमवातरोग पर अपथ्य।

दधि मत्स्या गुडक्षीरोपोदिकामाषपिष्टकम्। दुष्टनीरं पूर्ववातं विरुद्धान्यशनानि च॥ असात्म्यं वेगरोधं च जागरं विषमाशनम्। वर्जयेदामवातार्तो गुर्वभिष्यंदकारि च॥

अर्थ-दही, मछली, गुडके पदार्थ, दूध, पोईका साग, उडद, पिष्टपदार्थ, (चून मैदा आदि), दूषित (बिगडा हुआ) जल, पूर्वकी पवन, विरुद्ध और असात्म्य भोजन, मलमूत्रादि उपस्थित वेगोंका रोकना, जागरण करना, विषम भोजन और भारी तथा अभिष्यंदी पदार्थ ये आमवातवाले रोगीको त्याज्य कहे हैं॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे आमवातनिदानचिकित्सा समाप्ता।

अजीर्णशूलका कर्मविपाक ।

शुद्रस्यैव तु भुक्त्वान्नमव्रतस्य द्विजस्य च ।
शूलव्याधिर्भवेन्नित्यमजीर्णाच्चातिपीडितः ॥

अर्थ-जो ब्राह्मण शूद्रका अथवा पतित ब्राह्मणका अन्न भोजन करे है. उस प्राणीके नित्यप्रति शूल रोग और अजीर्णसे पीडित रहता है ॥

प्लीहशूल ।

विश्वस्तविषदाता च प्लीहवान् जायते नरः ॥

अर्थ-जो प्राणी अपने पर विश्वास करनेवालेको विष (जहर) देता है उसके प्लीहाका रोग होता है ॥

जठरशूल ।

श्रुताध्ययनसंपन्नं याचितारमकिंचनम् । ब्राह्मणं दांतमाहूय दानार्थं न ददाति यः ॥ स भवेज्जठरी शूली तथाध्मानी च कर्हिचित् ॥

अर्थ-पढा हुवा, बहुश्रुत और दरिद्री, भिखारी, शमदमादि साधनयुक्त ब्राह्मणको जो बुलाकरभी दान नहीं देता उसके उदरशूल तथा पेटका फूलना ये उपद्रव होते हैं ॥

शमन ।

कृच्छ्रातिकृच्छ्रचांद्राणि स कुर्याद्रोगमुक्तये ॥

अर्थ-ऐसे रोगीको कृच्छ्र अतिकृच्छ्र और चांद्रायण व्रत करने चाहिये ॥

अरुचिशूल ।

श्रद्धाहीनो धनवान् दानेष्वरतिस्तामसदानी वा यः ।
सोऽरुचिमान् शूली जायेतात्रैष निस्तारः ॥

अर्थ-जो कोई धनवान् होकर दानमें अश्रद्धा करे अथवा तामसी दान करे उसके अरुचि और शूल ये रोग होते हैं उसकी शांति कहते हैं ॥

शमन ।

चांद्रायणं चातिकृच्छ्रं प्राजापत्यमथापरम् ।
होमाद्यापि च कुर्वीत व्याध्यादेरनुरूपतः ॥

अर्थ-अरुचि और शूलरोगीको चांद्रायण, कृच्छ्रचांद्रायण और प्राजापत्य व्रत करने चाहिये अथवा व्याधिके तारतम्य अनुसार होम आदि करे तो यह रोग शांत हो ॥

साक्षाद्धंति गवादीनि यः पुनर्जननांतरे ।
शिरोरोगी श्रोत्ररोगी शूली वारुचिमान् भवेत् ॥

अर्थ-जो कोई गौ और ब्राह्मण इत्यादिकको जो पूर्व जन्ममें वध करता है वह मस्तकशूलरोगी होय है तथा कर्णशूल, उदरशूल अथवा अरुचिवाला होता है ॥

शमन ।

एतन्निवृत्तये वर्षं द्विवर्षं वा त्रिवर्षकम् ।
चरेद् घृतव्रतं चांते गोहिरण्यादिकं दिशेत् ॥

अर्थ-ब्रह्महत्यादि दोष दूर होनेके वास्ते एक, दो अथवा तीन वर्ष पर्यंत घृत पीकर रहे और पश्चात् ब्राह्मणको गौ और सुवर्णका दान देवे ॥

कटिशूलका कर्मविपाक ।

गोगामी कटिशूली स्यात् तस्य चांद्रायणं तथा ।
कृच्छ्रं चैवातिकृच्छ्रं च जपं सौरं च निर्दिशेत् ॥

अर्थ-जो प्राणी गौसे गमन करता है वह कमरके दर्दसे पीडित होता है उसको चांद्रायण, कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र अथवा सूर्यके मंत्र (गायत्री आदिका) जप करना चाहिये ॥

कर्णशूल ।

मैथुनं शृणुयात्पित्रोः कर्णशूली भवेत्तु सः ।
स्याच्चैव बधिरः किंचित्कपाले सह्यशब्दवान् ॥

अर्थ-जो प्राणी अपने मातापिताके मैथुनको सुनता है (अर्थात् अनुमान करता है) वह कर्णशूल (कानकी पीडा) वाला होता है अथवा बहरा होय अथवा उसके कपालमें असह्य शब्द होवे ॥

शमन ।

निष्कविंशतिकं दद्याद्ब्राह्मणाय कुटुंबिने ।
विष्णुप्रकाशकान् मंत्रान् जपेद्रोगोपशांतये ॥

अर्थ-ऊपर लिखे शूलकी शांति करनेको कुटुंबवाले ब्राह्मणको बीस तोले सुवर्णका दान करे अथवा विष्णु देवता जिसका ऐसे (द्वादशाक्षरी अष्टाक्षरी) मंत्रोंका जप करे ॥

हस्तशूल ।

पूर्वजन्मनि नास्तिक्यात्संध्यादिरहितो द्विजः ।
हस्तशूली संभवति निष्कद्वादशकं दिशेत् ॥

अर्थ-जो पूर्व जन्ममें नास्तिकपनेसे ब्राह्मण होकर भी संध्यावंदनादिक नहीं करे उसके हाथोंमें दर्द हुआ करे है वह बारह तोले सुवर्णका दान करे ॥

शमन।

भोजयेद्ब्राह्मणान् शक्त्या जपेत्सौरं हिरण्यदः ॥

अर्थ-हस्तशूलवाला रोगी यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करावे तथा सुवर्ण दान करके सौरमंत्रका जप करे ॥

नेत्रशूल ।

नग्नां परस्त्रियं दृष्ट्वा सूर्यं वास्तमयोदये ।
नेत्रशूली भवेत्सोऽपि नेक्षितुं क्षमते दिशः ॥

अर्थ-जो पुरुष परस्त्रीको नग्न देखता है अथवा उदय और अस्त होते हुए सूर्यको देखता है वह नेत्रशूलरोगी होता है. इसीसे उससे दिशाओंकी तरफ देखाभी नहीं जाय ॥

शमन ।

वर्चोमे देहि मंत्रेण जपः स्यादष्ट चायुतम् ।
वयः सुपर्णा इति च मंत्रैः सिंचेच्च वारिणा ॥

अर्थ-नेत्रशूली रोगीको 'वर्चोमे देहि' इस मंत्रका १०००८ जप करे अथवा 'वयः सुपर्णा' इत्यादि मंत्रसे अभिषेक करे ॥

शूलरोगमें कर्मविपाक ।

शूली परोपतापेन जायते वपुषा तनुः ।
सोऽन्नदानं प्रकुर्वीत तथा रुद्रं जपेद्बुधः ॥

अर्थ-जो प्राणी अन्यजीवोंको दुःख देता है इस पापसे वह शूलरोगी होता है तथा शरीरमें कृश होता है उसको अन्नदान अथवा रुद्रजप करना चाहिये ॥

शूलनिदान ।

दोषैः पृथक्समस्तामद्वंद्वैः शूलोऽष्टधा भवेत् ।
सर्वेष्वेतेषु शूलेषु प्रायेण पवनः प्रभुः ॥

अर्थ-वात, पित्त, कफ इनसे तीन प्रकारका, एक सन्निपातसे, एक आमसे और तीन द्वंद्वज ऐसे सब मिलाकर आठ प्रकारका शूलरोग है. इन सब शूलोंमें प्रायः वादी है. ज्वरके समान शूलरोगकी प्रथम उत्पत्ति हारीतमें कही है सो इस प्रकार कामदेवके नाश करनेके अर्थ शिवने क्रोधकरके त्रिशूलको फेंका, उस त्रिशूलको अपने सन्मुख आता हुआ देख कामदेव भयभीत होकर विष्णुभगवान्के देहमें प्रवेश कर गया. तदनंतर वह त्रिशूल विष्णुकी हुंकारसे मूर्च्छित होकर गिरा तो पृथ्वीमें शूल इस नामसे प्रसिद्ध भया, तबसे वह शूल पंचभूतात्मक देहधारी मनुष्यों-को पीडा करने लगा इस प्रकार इसकी उत्पत्ति है. शिवके त्रिशूलसे उत्पन्न भया तथा शूलके घावके समान पीडा करे है इसीसे इसको शूल ऐसे कहते हैं ॥

व्यायामयानादतिमैथुनाच्च प्रजागराच्छीतजलातिपानात् । कलायमुद्गाढकिकोरदूषादत्यर्थरूक्षाध्यशनाभिघातात् ॥ कषायतिक्तादिविरूढकान्नविरुद्धवल्लूरकशुष्कशाकात् विट्शुक्रमूत्रानिलवेगरोधाच्छोकोपवासादतिहास्यभाष्यात् ॥ वायुः प्रवृद्धो जनयेद्धि शूलं हृत्पार्श्वपृष्ठत्रिकबस्तिदेशे । जीर्णे प्रदोषे च घनागमे च शीते च कोपं समुपैति गाढम् ॥ मुहुर्मुहुश्चोपशमश्च कोपो विण्मूत्रसंस्तंभनतोदभेदैः । सस्वेदनाभ्यंजनमर्दनाद्यैः स्निग्धोष्णभोज्यैश्च शमं प्रयाति ॥

अर्थ-दंड, कसरत, बहुत चलना, अति मैथुन, अत्यंत जागना, बहुत शीतलजल पीना, कांगनी, मूंग, अरहर, कोदों, अत्यन्त रूखे पदार्थके सेवनसे और अध्यशन (भोजनके ऊपर भोजन), लकडी आदिके लगनेसे, कषेली, कडवी, भीजा अन्न, जिसमें अंकुर निकस आये हों, विरुद्ध क्षीर मछली आदि, सूखा मांस, सूखा शाक (कचरिया आदि) इनके सेवन करनेसे, मल, मूत्र, शुक्र और अधोवायु इनके वेगको रोकनेसे, शोकसे, उपवास (व्रत) के करनेसे, अत्यन्त हँसनेसे, बहुत बोलनेसे, कोपको प्राप्त भई जो वात सो बढकर हृदय, पसवाडा, पीठ, त्रिकस्थान, मूत्रस्थानमें शूलको करे और वह भोजन पचनेके पीछे प्रदोषकालमें, वर्षाकालमें, शीतकालमें इन दिनोंमें शूल अत्यंत

कोप करे और वारंवार कोप होय, मलमूत्रका अवरोध, पीडा और भेद ये लक्षण वात-शूलके हैं तथा स्वेदन और अभ्यंजन तथा मर्दन इत्यादिकसे और चिकने गरम अन्नसे यह शूल शांत होय है ॥

वातशूलकी चिकित्सा।

ज्ञात्वा तु वातजं शूलं स्नेहस्वेदैरुपाचरेत् ॥ पायसैः कृशरा-
पिंडैः स्निग्धैर्वा पिशितोत्कटैः ॥ आशुकारी हि पवनस्तस्मात्तं
त्वरया जयेत्। तस्य शूलाभिपन्नस्य स्वेद एव सुखावहः ॥

अर्थ-वादीसे उत्पन्न हुए शूलरोगमें स्नेहपान अथवा पसीने निकालने, खीर, खिचडी, स्निग्ध जिसमें मांसके पदार्थ अधिक हों ऐसा आहार करना इत्यादिक उपाय करे. तथा प्राणीको तत्काल वादी नष्ट करनेवाली है इस कारण इसको शीघ्र जीते बहुधा शूलसे दुखी मनुष्य पीसीने निकालनेसे सुखी होवे ॥

वातशूलमें यूष।

वातात्मकं हंत्यचिरेण शूलं स्नेहेन युक्तस्तु कुलित्थयूषः।
ससैंधवव्योषयुतः सलावः सहिंगुसौवर्चलदाडिमाढ्यः ॥

अर्थ-अंडके तेलसे युक्त कुलथीका मंड, त्रिकुटेका चूर्ण, सैंधानिमक, लवा पक्षीका मांस, हींग, संचरनिमक और अनारदाना इनको मिलायके पीवे तो वातात्मक शूल तत्काल नाश होय ॥

दशमूलादि क्वाथ।

तैलमेरंडजं वापि दशमूलस्य वारिणा।
पीतं निहन्ति साटोपं हिंगुसौवर्चलान्वितम् ॥

अर्थ-दशमूलके काढेमें अंडीका तेल, हींग और संचरनिमक डालके पीवे तो पेटका फूलना और शूल इनको नाश करे ॥

विश्वादि काढा।

विश्वमेरंडजं मूलं क्वाथयित्वा शृतं पिबेत्।
हिंगुसौवर्चलोपेतं सद्यः शूलनिवारणम् ॥

अर्थ-सोंठ और अंडकी जड इनके काढेमें हींग और संचरनिमक डालके देवे तो तत्काल शूलरोगको नाश करे ॥

बलादि क्काथ ।

बलापुनर्नवारंडबृहतीद्वयगोक्षुरैः ।
क्काथः सहिंगुलवणः पीतो वातरुजं जयेत् ॥

अर्थ-बला, पुनर्नवा, अंडी, कटेरी, बडी कटेरी और गोखरू इनके काढेमें हींग और निमक मिलायके पीवे तो वातशूलका नाश होय ॥

वातशूल पर कल्क ।

तुषवारिविनिष्पिष्टतिलकल्कस्य पोटली ।
भ्रामिता जठरोर्ध्वे चेन्मुहुः शूलं विनाशयेत् ॥

अर्थ-धानके तुष, जल और तिल इनको एकत्र पीसके पोटली बनाय लेवे फिर इसको पेटपर फेरे तो शूलको नाश करे ॥

बीजपूरस्वरस ।

सुपक्कबीजपूरस्य रसः सैंधवामिश्रितः ।
पीतः पथ्याशिनो हंति हृच्छूलमतिदारुणम् ॥

अर्थ-उत्तम पके हुए बिजोरेके रसमें सैंधानिमक डालके पीवे और पथ्य तथा योग्य अन्न भक्षण करे तो अतिदारुण हृदयका शूल नाश होय ॥

तुंबरुआदि चूर्ण ।

तुंबरूण्यभयाहिंगुपौष्करं लवणत्रयम् ।
पिबेद्यवांबुना वातशूलगुल्महरं परम् ॥

अर्थ-तुंबरु, हरड, हींग, पुहकरमूल, सैंधानिमक, बिडनिमक और कचियानिमक इनके चूर्णको जौंके काढेके साथ देवे तो वातशूल और गोला इनको नष्ट करे ॥

हरीतक्यादि चूर्ण ।

हरीतकी चातिविषा हिंगु सौवर्चलं वचा । गालितेंद्रयवास्तुल्या
भक्षयेदुष्णवारिणा ॥ कर्षैकमनुपानं स्याद्वातशूलहरं परम् ॥

अर्थ-हरड, अतीस, हींग, संचरनिमक, वच और इन्द्रजौ इनका समान भाग चूर्ण गरम जलके साथ १ तोला देवे तो उत्कृष्ट वातशूलको नाश करे ॥

सौवर्चलाद्य चूर्ण ।

सौवर्चलाम्लवेतसबिडलवणयुतससैंधवातिविषा ।
त्रिकटुकं बीजपुररसान्वितमशितं गुरुगुल्मशूलहरम् ॥

अर्थ–संचरनिमक, अमलवेत, बिडनिमक, सैंधानिमक अतीस और त्रिकुटा इनके चूर्णको बिजोरेके रससे देवे तो गोला और शूल इनका नाश करे ॥

उशीराद्य चूर्ण ।

उशीरं सैंधवं हिंगु मूलमेरंडजं समम् ।
वातशूलं निहन्त्येव भुक्तं तप्तेन वारिणा ॥

अर्थ–खस, सैंधानिमक, हींग और अंडकी जड इनको समानभाग ले चूर्ण करे. गरम जलके साथ पीवे तो वातशूलको नाश करे ॥

श्वेतएरंडादिचूर्ण ।

श्वेतैरंडशिफाहिंगुसैंधवं समचूर्णितम् ।
तप्तेन वारिणा भुक्तं वातशूलहरं परम् ॥

अर्थ–सपेद अंडकी जड, हींग ओर सैंधानिमक सब समानभाग ले चूर्ण करे. गरम जलसे पीवे तो वातके शूलको नाश करे ॥

मंदारमूलिकाद्य चूर्ण ।

मंदारमूलिकाचूर्णं भुक्तं दुग्धेन मिश्रितम् ।
वातशूलहरं देवीमूलं वा कर्णगोद्भवम् ॥

अर्थ–मंदारकी जडका चूर्ण दूधसे देवे तो वातशूलको नाश करे अथवा सहदेईकी जड अथवा गोकर्णीकी जड वातके शूलको नाश करे ॥

यवान्यादि चूर्ण ।

यवानी सैंधवं हिंगु क्षारः सौवर्चलाभया ।
पिबेत्कोष्णाम्बुना वातोद्भवशूलनिवृत्तये ॥

अर्थ–अजमायन, सैंधानिमक, सोरा, संचरनिमक और हरड इनका चूर्ण करके गरम जलके साथ पीवे तो वातशूलका नाश होवे ॥

कंजाद्य चूर्ण।

करंजसौवर्चलनागराणां सरामठानां समभागिकानाम्।
चूर्णं कदुष्णेन जलेन पीतं समीरशूलं विनिहंति सद्यः॥

अर्थ-कंजा, संचरनिमक, सोंठ, हींग इनको समानभाग ले चूर्ण करे इसको गुनगुने जलके साथ सेवन करे तो वातशूलको तत्काल नाश करे॥

गुडूच्यादि चूर्ण।

पीतमुष्णांभसा चूर्णं गुडूचीमरिचोद्भवम्।
हृच्छूलं वातशूलं च हंति पथ्याशनो नरः॥

अर्थ-गिलोय और काली मिरच इनके चूर्णको गरम जलके साथ पीवे और पथ्यसे रहे तो हृदयशूल तथा वातशूल इनको नाश करे॥

प्रकारांतर।

मातुलिंगरसं चूर्णं गुडूचीमरिचोद्भवम्।
हृच्छूलं हंति वेगेन पीतं शीतेन वारिणा॥

अर्थ-गिलोय और काली मिरच इनके चूर्णको बिजोरेके रससे अथवा शीतल जलसे देवे तो बहुत जल्दी हृदयका शूल नाश होय॥

उशीरादि चूर्ण।

उशीरं पिप्पलीमूलं चूर्णं कृत्वा समांशतः।
गोघृतेन समं पीतं हंति हृच्छूलमुल्बणम्॥

अर्थ-खस और पीपरामूल इनका समानभाग चूर्ण कर गौके घीमें मिलायके खाय तो अतिकठिन हृदयका शूल नाश होय॥

सुवर्चलादि चूर्ण।

सुवर्चलाभया हिंगुरजमोदा च सैंधवम्॥
स्वर्जी यवोद्भवः क्षारः पयोसूक्तं च शूलहृत्॥

अर्थ-संचरनिमक, हरड, हींग अजमोदा, सैंधानिमक, सज्जीखार और जवाखार इनका चूर्ण दूध और कांजीमें मिलायके पीवे तो शूलरोगको नाश करे॥

प्रकारांतर।

सुवर्चला जीरकमम्लवेतसं समं त्रयं दशमरीचचूर्णकम्।
सबीजपूरस्य रसेन भावितं जलेन पीतं खलु वातशूलनुत्॥

अर्थ-सोरा, जीरा और अमलवेत ये समानभाग ले तथा काली मिरचका चूर्ण दश-गुना इस प्रकार लेकर इसमें बिजोरेके रसकी भावना देकर जलके साथ खाय तो वात-शूलका नाश करे ॥

एरंडमूलादि चूर्ण ।

एरंडमूलं तुंबरुबिडलवणसुवर्चलाभया ।
हिंगुरेतैरंबुना पीतैर्न याति शूलं च गुरुगुल्मम् ॥

अर्थ-अंडकी जड, धनिया, बिडानिमक, सोरा, हरड और हींग इनके चूर्णको जलसे पीवे तो शूल और गोला इनका नाश करे ॥

सौवर्चलादि गुटिका ।

सौवर्चलाम्लिकाजाजिमरीचैर्द्विगुणोत्तरैः ।
मातुलिंगरसैर्बद्धा गुटिका वातशूलहृत् ॥

अर्थ-संचरनिमक,इमली, जीरा और काली मिरच ये प्रत्येक द्विगुणोत्तर वृद्धिके क्रम-से लेवे सबको बिजोरेके रसमें घोटके गोली बनाय लेवे यह वातशूलका नाश करे है ॥

बिल्वादि गुटिका ।

बिल्वैरंडतिलैः कृत्वा गुटिकाश्चाम्लपेषिताः ।
वातशूलोपशांत्यर्थं प्रयुंज्यादुष्ट्रया तथा ॥

अर्थ-बेल, अंडकी जड और तिल इनका चूर्ण नींबूके रसमें खरल करके गोली बनावे इसको लघु मेंढासिंगीके रसमें देवे. तो वातशूलको शांति करे ॥

सोमाग्निमुखरस गुटिका ।

समांशं पंचलवणं दत्वार्द्रकजले पचेत् ।
दिनं पक्षं ततः कुर्याद्वटिका चणमात्रका ॥
भक्षयेद्वातशूलार्तः सोमाग्निमुखनामकः ॥

अर्थ-पांचों निमक समान भाग लेवे सबको अदरखके रसमें पंद्रह दिन पचावे. फिर इसकी चनेके बराबर गोली करके वातशूलरोगीको देवे इसका सोमाग्निमुख यह नाम है॥

मृगशृंगोद्भव भस्म ।

बहुशाखं तु यत् शृंगं गृहीत्वा तन्मृगोद्भवम् ।

अंतर्धूमं विदग्धं तद्भस्म कर्षं घृतैर्लिहेत् ॥
वातशूलहरं सिद्धं जयंतीं वा गुडैर्लिहेत् ॥

अर्थ—सावरके सींगको अग्निमें भूनके भस्म करले यह भस्म१ तोलेको घीमें मिलाय अथवा अरनीके रस और घीके साथ अथवा गुडके साथ सेवन करे तो वातके शूल-को नाश करे ॥

अग्निमुख रस ।

रसबलिगगनार्कं वेतसाम्लं विषं स्यात्सवरमिति पृथक् तद्भावये द्वस्त्रमंतैः ॥ कनकभुजगवल्लीकंटकारीजयाद्भिः कनकशमिक-वासाऋद्धिरास्नांबुपूरैः॥अरुणदशशशांकैर्मातुलान्याथ योज्यैः पटुगण इह तुल्यो भावयेदार्द्रकाद्भिः ॥ दहनवदनसंज्ञो वल्ल-मात्रो निहंति प्रबलपवनशूलं तद्विकारानशेषान् ॥ शिवावचा-हिंगुविषाकलिंगरुचकं समम् ॥ कर्षमुष्णांबुना सेव्यमनुपानं हि शूलिभिः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, अभ्रक, ताम्र, अमलवेत, सिंगियाविष, हरड, बहेडा, आंवला और पांचों निमक ये समान भाग लेवे. इनको धतूरे, पान, कटेरी, भांग, पलास, छोकरा, अडूसा, ऋद्धि, रासना, लाल ओंगा, कपूर, भांग और अदरखका रस इनका नित्य एक एक भावना देवे तो यह अग्निमुख रस एक वल्ल देनेसे वातशूल और वातविकार इनको नाश करे इसका अनुपान हरड, वच, हींग, अतीस, कूडाकी छाल और निमक इन औषधोंको समान भाग चूर्ण करके यह १ तोले चूर्णसे देवे ॥

उदयभास्कर रस ।

भस्म सूतं मृतं चाभ्रं शिलागंधकतालकम् ॥ हिंगुकं कुष्ठमुस्तं च तुल्यं चूर्णं विभावयेत् ॥ शुद्धार्कमत्तनिर्गुंडीमहारास्नाद्रवैः पृथक् ॥ प्रातिदिनं द्रवैर्भाव्यं शुष्क तद्गोलकीकृतम् ॥ वस्त्रे बद्धा मृदा लेप्यं शुष्कं कृत्वा पुटे पचेत् ॥ चतुर्धा बस्तमूत्रेण समा-दाय विचूर्णयेत्॥ द्वौ गुंजे घृतशुंठीभ्यां लेह्यो ह्युदयभास्करः ॥

वातशूलप्रशांत्यर्थं तिलक्षारं सकुष्ठकम् ॥ मधुना लेहयेच्चानु-शूलं वा काकतुंडकम् ॥

अर्थ--पारदभस्म, अभ्रकभस्म, मनाशिल, गंधक, हरताल, हींग, मुरदासिंग और नागरमोथा ये समान भाग ले इनका चूर्ण करके इसमें थूहर, आक, धतूरा, निर्गुंडी और रासना इनके रसमें एक एक दिन खरल कर गोला बनायले उसको सुखायके फिर बकरीके मूत्रमें खरल करे और फिर प्रथम कही हुई औषधोंकी पुट देवे. इस प्रकार चार पुट देवे. फिर इसमेंसे २ रत्ती यह उदयभास्कर रस घी और सोंठके चूर्णसे देवे अथवा वातजन्य शूल पर तिलके खार कूठ और सहत इनके साथ देवे अथवा काक-डोडीके चूर्णके साथ देवे ॥

नाभिशूलपर लेप।

नाभिलेपाज्जयेच्छूलं मदनं कांजिकान्वितम्।
बिल्वैरंडतिलैर्वापि पिष्टैरम्लेन पोटली ॥

अर्थ–मैनफलको कांजीमें पीस उसका टुँडी पर लेप करे अथवा बेलगिरी अंडी इनको बिजोरेके रसमें खरल कर पोटली बनायले इससे सेंक करे तो शूल दूर होय ॥

वातशूलपर लेप।

राजिकाशिग्रुकल्कं च च गोतक्रेण च पेषितम्।
तेन लेपेन हंत्याशु शूलं वातसमुद्भवम् ॥

अर्थ–राई और सहजनेकी छाल इनको गौकी छाछमें पीसके लेप करे तो वातशूल-को नाश करे ॥

मृत्तिकासेक।

मृत्तिकां सजलां पाकाद्घनीभूतां पटे क्षिपेत्।
कृत्वा तत्पोटलीं शूली तया स्वेदं विधापयेत् ॥

अर्थ–मिट्टीको जलमें सानके औटावे. जब गाढी हो जावे तब इसकी कपडेमें पोटली बांधके पेटको सेकके पसीने निकाले तो शूल होना बंद होय ॥

नाभिलेप।

हिंगुतैलं सलवणं गोमूत्रेण विपाचितम्।
नाभिस्थाने प्रदातव्यं यस्य शूलं सवेदनम् ॥

अर्थ-हींग तेल और सैंधानिमक इनको गोमूत्रमें डालके पचावे फिर इसका नाभि- पर लेप करे तो पीडायुक्त शूलका नाश होय ॥

पैत्तिकशूलनिदान।

क्षारातितीक्ष्णोष्णविदाहितैलनिष्पावपिण्याककुलित्थयूषैः। कट्वम्लसौवीरसुराविकारैः क्रोधानलायासरविप्रतापैः ॥ ग्राम्यातियोगादशनैर्विदग्धैः पित्तं प्रकुप्यातिकरोति शूलम्। तृण्मोहदाहार्तिकरं हि नाभ्यां सस्वेदमूर्च्छाभ्रमचोषयुक्तम् ॥ मध्यंदिने कुप्यति चार्धरात्रे विदाहकाले जलदात्यये च। शीते च शीतैः समुपैति शांतिं सुस्वादुशीतैरपि भोजनैश्च ॥

अर्थ-यवक्षार आदि खार, मरिच आदि तीखी और गरम विदाहकारक बांस और करील आदि, तेल, सिंबी, खल, कुलथीके यूषसे, कडुवा, खट्टा, सौवीर (मद्यविशेष), सुराविकार (कांजी इत्यादिक), क्रोधसे, अग्निके समीप रहनेसे, परिश्रमसे, सूर्यकी तीव्र धूपमें डोलनेसे, अतिमैथुन करनेसे, विदाहकारक अन्न आदि इन कारणोंसे पित्त कुपित होकर नाभिस्थानमें शूल उत्पन्न करे वह शूल तृषा, मोह, दाह, पीडा इनको करे और पसीना, मूर्च्छा, भ्रम, शोष इनको करे, दुपहरके समय, मध्यरात्रिमें, अन्नके विदाहकालमें, शरत्कालमें शूल अधिक होय शीतकालमें शीतल पदार्थसे और अत्यंत मधुर (मीठा) शीतल अन्नसे यह शूल शांत होय ॥

सामान्यचिकित्सा।

वामयेत्पित्तशूलार्तं पटोलेक्षुरसादिभिः।
पश्चाद्विरेचयेत्सम्यक् पित्तगुल्मविरेचनैः ॥

अर्थ-पित्तशूलपीडित मनुष्यको पडवल, ईखका रस इत्यादिकों करके वमन करावे फिर पित्तगुल्मपर जो रेचन (दस्तपर औषधी) कही है उनसे जुलाव देके शुद्ध करे ॥

पित्ते प्रशस्ताः सलिलेऽवगाहा भांडानि कांस्यानि जलप्लुतानि। निधाय शूलोपरि शीतलानि प्रशामयेच्छूलमनेन तज्ज्ञः ॥

अर्थ--पित्तशूल होनेसे जलमें गोते लगावे, तथा कांसेके पात्रमें जल भरके शूल पर धारण करे तो इसकी शांति होय ॥

नाभीके ऊपर पात्र धरना ।

मणीरजतताम्राणां भाजनानि गुरूणि च ।
तोयेन परिपूर्णानि शूलस्योपरि धारयेत् ॥

अर्थ–स्फटिकादि पाषाणोंका वा रूपेका वा तांबेका पात्र लेकर उसमें जल भरके जिस स्थानमें शूल उत्पन्न होता है उस पर धारण करना. इससे शूल रोगका नाश होता है ॥

सामान्ययत्न ।

विरेचनं पित्तहरं प्रशस्तं रसाश्च शस्ताः शशलावकानाम् ॥

अर्थ–पित्तशूल पर पित्तनाशक रेचन और ससेके मांसका अथवा लवापक्षीके मांसका रस पीना उत्तम कहा है ॥

शतावर्यादिक्वाथ ।

शतावरीसयष्ट्याह्ववाट्यालकुशगोक्षुरैः । शृतशीतं पिबेत्तोयं सगुडक्षौद्रशर्करम् ॥ पित्तासृग्दाहशूलघ्नं सद्यो दाहरुजापहम् ॥

अर्थ–शतावर, मुलहठी, खिरेटी, डाभकी जड और गोखरू इनके काढेको शीतल होने पर उसमें गुड अथवा खांड अथवा सहत डालके पीवे तो पित्तरक्त, दाह, शूल इनको नाश करे. तथा दाहको तत्काल शमन करे ॥

बृहत्यादिक्वाथ ।

बृहतीगोक्षुरैरंडकुशकाशेक्षुवालिकाः ।
पीताः पित्तभवं शूलं सद्यो हन्युः सुदारुणम् ॥

अर्थ–कटेरी, गोखरू, अंडकी जड, कुश, कांस और कसोंदी इनका काढा पीवे तो तत्काल शूलरोगको नाश करे ॥

त्रिफलादिक्वाथ ।

त्रिफलारग्वधक्वाथः शर्कराक्षौद्रसंयुतः ।
रक्तपित्तहरो दाहपित्तशूलनिवारणः ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला प्रत्येक १-२-३ भाग ले और अमलतासका गूदा ४ भाग इन चारों औषधोंका काढा करके उसमें मिश्री और सहत डालके पीवे तो रक्तपित्त और दाह तथा पित्तशूलको दूर करे ॥

त्रिफलादिक्काथ ।

त्रिफलारिष्टयष्ट्याह्वकटुकारग्वधैः शृतम् ।
पाययेन्मधुसंमिश्रं दाहशूलोपशांतये ॥

अर्थ-त्रिफला, नीमकी छाल, मुलहटी, कुटकी और अमलतासका गूदा इनका काढा कर उसमें सहत डालके पीवे तो पित्तशूल नष्ट होय ॥

त्रायमाणादि क्काथ ।

त्रायमाणकणामूलं त्रिवृता मधुकं शिवा ।
गिरमाला शिवा द्राक्षा कुरंटः पित्तशूलहृत् ॥

अर्थ-त्रायमाण, पीपलामूल, निसोथ, मुलहठी, हरड, अमलतासका गूदा, आंवले, दाख और पियावांसा इनका काढा करके पीवे तो पित्तशूलको नाश करे ॥

शतावर्यादिरस ।

शतावरारसं क्षीरं क्षौद्रं प्रातः पिबेन्नरः ।
दाहशूलोपशांत्यर्थं सर्वं पित्तामयापहम् ॥

अर्थ-शतावरके काढेमें दूध और सहत डालके प्रातःकाल पीवे तो दाह और शूलरोगकी शांति होय । तथा यह सर्व पित्तके रोगोंका नाशक है ॥

धात्र्यादिचूर्ण ।

प्रलिह्यात्पित्तशूलघ्नं धात्रीचूर्णं समाक्षिकम् ।
सगुडं घृतसंयुक्तं भक्षयेद्वा हरीतकीम् ॥

अर्थ-आंवलेके चूर्णको सहतके साथ चाटे अथवा हरडका चूर्ण गुड और घी इनके साथ सेवन करे तो पित्तशूल नाश होय ॥

धात्र्यादिस्वरस ।

धात्र्या रसं विदार्या वा त्रायंत्या गोस्तनांबु वा ।
पिबेत्सशर्करं सद्यः पित्तशूलनिवारणम् ॥

अर्थ-आंवलेका अथवा विदारिकंदका कथवा मेंदीका अथवा दाखका रस मिश्री डालके पीवे तो तत्काल पित्तशूलका निवारण करे है ॥

कफजन्य शूलके लक्षण ।

आनूपवारिजकिलाटपयोविकारैर्मांसेक्षुपिष्टकृशरातिलशष्कु-

ष्ठीभिः। अन्यैर्बलासजनकैरपि हेतुभिश्च श्लेष्मा प्रकोपमुपगम्य करोति शूलम्॥ हृल्लासकाससदनाऽरुचिसंप्रसेकैरामाशये स्तिमितकोष्ठशिरोगुरुत्वैः। भुक्ते सदैव हि रुजं कुरुतेऽतिमात्रं सूर्योदये च शिशिरे कुसुमागमे च॥

अर्थ–जलके समीप रहनेवाले पाक्षियोंका मांस, मछली आदि मांस, दही, घृत, मक्खन आदि दूधके विकार, मांस, ईखका रस, पिसा अन्न, खिचडी, तिल, पुरी कचोडी आदि और कफकारक पदार्थ खानेसे कफ कुपित होकर आमाशयमें शूलरोगको प्रगट करे उसमें सूखी रद, खांसी, ग्लानि, अरुचि, मुखसे लार गिरे, बद्धकोष्ठता, मस्तक भारी हो ये लक्षण होय. भोजन करते समय पीडा होय, सूर्योदयके समय, शिशिरऋतुमें और वसंतकालमें शूल बहुत होय॥

कफशूलकी सामान्य चिकित्सा।

शाल्यन्नं जांगलं मांसमरिष्टं कटुकं रसम्।
मद्यानि जीर्णगोधूमं कफशूले प्रयोजयेत्॥

अर्थ–साली चावलोंका भात, जंगली जीवोंका मांस, लहसन, परवल, मांसद्रव, मद्य और पुराने गेहूं इनको कफशूल पर योजना करे॥

एरंडमूलादि क्काथ।

एरंडमूलं द्विपलं जलेऽष्टगुणिते पचेत्।
तत्काथो यावशूकाढ्यः पार्श्वहृत्कफशूलहा॥

अर्थ–अंडकी जड ८ तोलेको ले अठगुने जलमें डालके अष्टावशेष काढा करे फिर इसमें जवाखार डालके पीवे तो पसवाडोंका दर्द, छातीका दर्द और कफके शूलको नष्ट करे॥

बीजपूररस।

बीजपूररसोपेतो गुडः श्लेष्मसमुद्भवम्।
हृद्रोगं वातशूलं च गुल्मं वा हंति निश्चितम्॥

अर्थ–बिजोरेके रसमें गुड डालके देवे तो कफसे उत्पन्न हुआ शूल, हृदय रोग वातशूल और गोला इनको नाश करे॥

कट्फलादि चूर्ण।

कट्फलं पौष्करं शृंगी मुस्तकं कटुकं शठी। समस्तानेकशो

वापि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ आर्द्रकस्वरसक्षौद्रैर्लिह्यात्कफ-
विनाशनम् । शूलानिलारुचिच्छर्दिकासश्वासक्षयापहम् ॥

अर्थ-कायफल, पोहकरमूल, कांकडासिंगी, नागरमोथा, सोंठ, काली मिरच, पीपल' कचूर ये नौ औषधी पृथक् २ कूटे अथवा सबको एकत्र कूटके चूर्ण करे फिर अदरखके रससे अथवा सहतके साथ सेवन करे तो इस चूर्णके प्रभावसे कफ दूर होवे. शूल और वायु, अरुचि, वमनरोग, खांसी, श्वास, क्षयरोग ये दूर होवें ॥

बृहत्कट्फलादि चूर्ण ।

कट्फलं पौष्करं कृष्णा शृंगी च मधुना सह ।
श्वासकासज्वरहरः श्रेष्ठो लेहः कफांतकृत् ॥

अर्थ-कायफल, पोहकरमूल, पीपल, काकडासिंगी इन चारों औषधोंको चूर्ण करके सहतसे देवे तो श्वास, खांसी और ज्वर ये दूर होवे जिस किसीको कफ अत्यंत दुःख देता हो उसके वास्ते यह चूर्ण बहुत उत्तम है ॥

पथ्यादि चूर्ण ।

चूर्णं पथ्या वचा वह्नि कटुरोहिणिरुक्समम् ।
श्लेष्मशूलं हरत्याशु पीतं गोमूत्रसंयुतम् ॥

अर्थ-हरड, वच, चित्रककी छाल, कुटकी इन सबका चूर्ण करके १ तोलेके अनुमान ले गोमूत्रके साथ पीवे तो शीघ्र कफशूलको नाश करे ॥

मुस्तादि चूर्ण ।

मुस्तं वचा तिक्तकरोहिणी च तथाभया निर्दहनं च तुल्यम् ।
पिबेत्तु गोमूत्रयुतं कफोत्थे शूले तथा यस्य च पाचनार्थम् ॥

अर्थ-नागरमोथा, वच, कुटकी, हरड और भिलाए इनको समानभाग लेकर चूर्ण करे फिर इस गोमूत्रसे पीवे तो कफजन्य शूलका नाश करे तथा आमको पचावे ॥

लवणादि चूर्ण ।

कफप्रकोपशूलार्तमवश्यमुपवासयेत् । लवणत्रितयं हिंगु पंच-
कोलयुतं पिबेत् ॥ सुखोष्णेनांभसा पीतं कफशूलहरं परम् ॥

अर्थ-कफके कोपसे यादि शूल प्रगट होवे तो अवश्य उपवास करे और सेंधानिमक, बिडानिमक, संचरनिमक, हींग, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ इनके चूर्णको गरम २ जलके साथ देवे तो कफशूलको हरण करे ॥

सर्वांगसुंदर रस ।

मृतं सूतं मृतं ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम् । चूर्णयेल्लवणं पंच एतद्दशकतुल्यकम् ॥ मृतं स्वर्णं च निक्षिप्य सूतांतर्दशमांशकम् । सूततुल्यं वत्सनागं चूर्णं भाव्यं दिनावधि ॥ विषमुष्ट्या जया वासा विजया रक्तशाकिनी । बर्बरी च महाराष्ट्रिद्रवैर्धत्तूरजैस्तथा ॥ रुद्ध्वा तुषपुटे पाच्यं समुद्धृत्य विचूर्णयेत् । सर्वांगसुंदरो नाम रसो गुंजाचतुष्टयम् ॥ भक्षयेद्घृतशुंठीभ्यां हन्ति गुल्मं सशूलकम् ॥

अर्थ–पारेकी भस्म, तामेकी भस्म, मनसिल, सुवर्णमाक्षिक, हरताल, निमक, सुहागा, सेंधानिमक, बिडनिमक और संचरनिमक ये दश औषध समानभाग लेवे प्रथम पारेका दशांश स्वर्णभस्म पारेमें मिलायके घोटे तथा पारेकी समान सिंगियाविष लेवे. फिर इन सबको एकत्र करके उसमें कुचला, अरनी, अडूसा, भांग, लाल नौरोपेका साग, बनतुलसी, गजपीपल और धतूरा इन प्रत्येकके रसोंकी अथवा इनके काढोंकी नित्य प्रति भावना देवे फिर इनकी टिकिया बनाय शरावसंपुटमें करके तुषाग्नि देवे. जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल लेवे. फिर संपुटमेंसे युक्तिके साथ निकाल लेवे और खरल करे इसको सर्वांगसुंदर रस कहते हैं इस चार रत्ती रसको घी और सोंठ इनके संग देवे. तो कफशूल और गोलेका रोग इनको नाश करे ॥

आमशूल ।

आटोपहृल्लासवमीगुरुत्वं स्तैमित्यमानाहकफप्रसेकैः ।
कफस्य लिंगेन समानलिंगमामोद्भवं शूलमुदाहरंति ॥

अर्थ–पेटमें गुडगुडाहट शब्द होय, उबाकिओंका आना, रद्द, देह भारी, मंदता अफरा, मुखसे कफका स्राव इन लक्षणोंसे तथा कफशूललक्षणोंके समान ऐसे शूलको आमशूल कहते हैं ॥

आमशूलकी सामान्य चिकित्सा ।

आमशूले क्रिया कार्या कफशूलविनाशिनी ।
सेव्यमामहरं सर्वं यद्यदग्निविवर्धनम् ॥

अर्थ–आमशूल पर कफशूलनाशक संपूर्ण क्रिया करनी चाहिये तथा आमनाशक और अग्निको बढानेवाले उपचार करे ॥

चित्रकादि क्वाथ ।

चित्रकग्रंथिकैरंडशुंठीधान्यजलैः शृतम् ।
सहिंगु सैंधवविडमामशूलहरं परम् ॥

अर्थ--चित्रक, पीपरामूल, अंडकी जड, सोंठ और धनिया इनका काढा हींग और सैंधानिमक तथा बिडनिमक डालके पीवे तो अत्यंत शूलको नाश करे ॥

त्रिफलादिचूर्ण ।

तिक्ष्णायाश्चूर्णसंयुक्तं त्रिफलाचूर्णमुत्तमम् ।
प्रयोज्यं मधुसर्पिभ्यां सर्वशूलनिवारणम् ॥

अर्थ--राई और त्रिफला इनके चूर्णको सहत और घीमें मिलायके देवे तो सर्वप्रकारके शूल दूर होवें ॥

दीप्यादिचूर्ण ।

दीप्यकं सैंधवं पथ्या नागरं च चतुःपलम् ।
चूर्णं शूलं जयत्याशु मंदस्याग्नेश्च दीपनम् ॥

अर्थ--अजमायन, सैंधानिमक, हरड, सोंठ ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे इनका चूर्ण करके सेवन करे तो शूल और मंदाग्नि इनको नाश करे ॥

बिल्वमूलादि चूर्ण ।

मूलं बैल्वं तथैरंडं चित्रकं विश्वभेषजम् ।
हिंगुसैंधवसंयुक्तं सद्यः शूलनिवारणम् ।

अर्थ--बेलगिरी, अंडकी जड और चित्रककी जड, सोंठ, हींग, सैंधानिमक इनका चूर्ण करके सेवन करे तो तत्काल शूलको दूर करे ॥

दार्वादि लेप ।

दारुहैमवतीकुष्ठशताह्वाहिंगुसैंधवैः ।
आम्लपिष्टैः सुखोष्णैश्च लिंपेच्छूलयुतोदरम् ॥

अर्थ--दारुहलदी, हरड, कूठ, शतावर, हींग और सेंधानिमक इन सबको छाछमें पीस कुछ गरम करके पेट पर लेप करे तो शूलका नाश करे ॥

आमशूल पर ।

एरंडतैलं षड्भागं लशुनस्य तथाष्टकम् ।

एकं हिंगु त्रिसिंधूत्थं सर्वमेकत्र मर्दयेत्।
त्रिनिष्कं भक्षयेत्पश्चादामशूलप्रशांतये॥

अर्थ–अंडीका तेल ६ लहसन ८ हींग १ सैंधानिमक ३ इस प्रकार भाग लेकर सबको एकत्र मर्दन करके इसमेंसे १ तोला भक्षण करे तो आमशूल शांत होवे॥

हिंग्वादि योग।

हिंगुत्रिगुणसैंधवं तस्माच्च शुद्धतैलमैरंडम्।
तत्त्रिगुणरसोनरसं गुल्मोदावर्तशूलघ्नम्॥

अर्थ–हींग १ भाग, सैंधानिमक ३ भाग, अंडीका तैल ९ भाग, लहसनका रस २७ भाग, ये सब एकत्र करके चूर्ण करे यह गोला, उदावर्त्त इनको नाश करे॥

कूष्मांडक्षार।

कूष्मांडं तनु कृत्वा तु च्छित्वा घर्मे विशोषयेत्। स्थाल्यां निक्षिप्य तत्सर्वं पिधानेन पिधाय च॥ चुल्ल्यां निवेश्य वह्निं च ज्वालयेत्कुशलो जनः। यथा तत्र भवेद्भस्म किं त्वंगारो दृढो भवत्॥ तदा निर्वापयेच्छीतं चूर्णितं चूर्णयेत्तु तत्। माषद्वयमितं तावच्छुंठीचूर्णविमिश्रितम्॥ जलेन भक्षयेन्नित्यं महाशूलाकुलो नरः। असाध्यमपि यच्छूलं तदप्येतेन शाम्यति॥

अर्थ–पेठेको छील उसके बीजोंको निकाल छोटे २ टुकडे कतर लेवे उनको जलमें धोकर धूपमें सुखायले फिर उनको एक मिट्टीके पात्रमें भरके मुखको ढकनेसे ढक देवे इस पात्रको चूल्हे पर चढाय नीचे अग्नि जलावे उनको कुशल वैद्य इस प्रकार जलावे उत्तम कोले हो जावें किंतु वे जलके राख न हो जांय फिर उनको बुझायके शीतल होनेपर चूर्ण कर लेवे. इसमेंसे दो मासेके अनुमान ले और इतनीही सोंठ मिलावे. दोनोंको एक कर गरम जलके साथ नित्य भक्षण करे तो असाध्यभी शूलरोग इस खारसे नष्ट होय॥

द्वंद्वजशूललक्षण।

बस्तौ हृत्कंठपार्श्वेषु स शूलः कफवातिकः।
कुक्षौ हृन्नाभिमध्येषु स शूलः कफपैत्तिकः॥
दाहज्वरकरो घोरो विज्ञेयो वातपैत्तिकः।

अर्थ-बस्ति (मूत्रस्थान), हृदय, कंठ, पसवाडे इन ठिकाने शूल होय तो (कफवा· तिक) जानना, कूखमें हृदय नाभि और पसवाडे इनमें कफपित्तका शूल होय है, दाह ज्वर करनेवाला ऐसा भयंकर शूल होय वो वातपित्तका जानना ॥

द्वंद्वजशूलकी सामान्य चिकित्सा ।

द्वंद्वजं स्नेहयोगेन तत्रियोगेन सर्वजम् ॥

अर्थ-द्वंद्वज शूलपर स्नेहादिक दो योग योजना करे और त्रिदोषात्मक होय तो तीन योग योजना करे ॥

द्वंद्वजशूलपर क्काथ ।

निदिग्धिकाबृहत्यौ च कुशकाशेक्षुवालिकाः ।
श्वदंष्ट्रेरंडमूलं च वारिणा सह पाचयेत् ॥
पिबेत्सशर्करक्षौद्रं शूले पित्तानिलात्मिके ।

अर्थ-कटेरी, बडी कटेरी, डाभ, कांस, इक्षुवालिका कांसका भेद, गोखरू, अंडकी जड इनके काढेमें सहत डालके तथा मिश्री मिलायके पीवे तो पित्तवातात्मक शूलको नाश करे ॥

पटोलादि क्काथ ।

पटोलत्रिफलारिष्टैः शृतं क्षौद्रयुतं पिबेत् ।
पित्तश्लेष्मज्वरच्छर्दिदाहशूलोपशांतये ॥

अर्थ-पटोलपत्र, त्रिफला और नीमकी छाल इनके काढेमें सहत डालके पीवे तो पित्तश्लेष्म ज्वर, छर्दि, दाह और शूल इनको शांत करे ॥

द्राक्षादि क्काथ ।

द्राक्षाटरूषयोः क्काथः श्लेष्मपित्तरुजं जयेत् ।
पित्तश्लेष्मोद्भवं शूलं विरेकवमनैर्जयेत् ॥

अर्थ-दाख और अडूसा इनका काढा कफपित्त शूलको पराजय करे और पित्तश्लेष्मशूल रेचन तथा वमन कराने करके जीते ॥

एरंडमूलादि क्काथ ।

एरंडफलमूलानि बृहतीद्वयगोक्षुरैः । पर्णिन्यः सहदेवी च सिंहपुच्छी क्षुरालिका ॥ तुल्यैरेतैः शृतं तोयं यवक्षारयुतं पिबेत् । पृथग्दोषभवं शूलं हन्यात्सर्वभवं तथा ॥

अर्थ-अंडी, अंडकी जड, कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू, शालिपर्णी, पृष्ठपर्णी, महाबला, पिठवन और क्षुरालिका इन सब औषधोंको समान भाग लेकर काढा करे छानके जवाखार मिलायके देवे तो द्वंद्वज शूलका नाश करे ॥

लशुनकल्क ।

मद्येन नित्यं तु रसोनकल्कं प्रातः पिबेद्वातकफोत्थशूली ।
क्षारोदकं पिप्पलिसैंधवाक्तं पीतं जयेद्दुर्जयमुग्रशूलम् ॥

अर्थ-वातकफ शूल पर लहसनके कल्कको मद्यके साथ प्रातःकाल पीवे. अथवा खारी जलमें पीपल और सैंधानिमक इनका चूर्ण डालके देवे तो यह शूलका नाश करे ॥

सन्निपातशूलके लक्षण ।

सर्वेषु दोषेषु च सर्वलिंगं विद्याद्भिषक् सर्वभवं हि शूलम् ।
सकष्टमेनं विषवज्रतुल्यं विवर्ज्जनीयं प्रवदंति तज्ज्ञाः ॥

अर्थ-वातादि सर्व दोषोंके लक्षण हुए होंय तो उसको सन्निपातज शूल कहते हैं वह सन्निपातज शूल विष और वज्र इनके समान दुःसाध्य ऐसा वैद्यलोगोंने कहा है ॥

त्रिदोषशूलचिकित्सा ।

शंखचूर्णं सलवणं सहिंगुव्योषसंयुतम् ।
उष्णोदकेन तत्पीतं शूलं हंति त्रिदोषजम् ॥

अर्थ-शंखभस्म, सैंधानिमक, हींग और त्रिकुटा इनका चूर्ण गरम जलके साथ पीवे तो त्रिदोषके शूलको नाश करे ॥

विदारिरसयोग ।

विदारिदाडिमरसः सव्योषलवणान्वितः ।
क्षौद्रयुक्तो जयत्याशु शूलं दोषत्रयोद्भवम् ॥

अर्थ--विदारीकंद और अनारदाना इनके रसमें सोंठ, मिरच, पीपल और निमक इनका चूर्ण और सहत डालके पीवे तो त्रिदोषजन्य शूलको नाश करे ॥

अक्षादिस्वरस ।

अक्षामलकशिवानां स्वरसः सुपक्कलोहजं च रसः ।
सगुडं यद्यपि युक्तं मुंचति शूलं त्रिदोषोत्थम् ॥

अर्थ-बहेडा, आंवले और हरड इनका रस और लोहभस्म इनमें गुड डालके देवे तो त्रिदोषज शूल नाश होय ॥

वैश्वानरयोग।

भावितं मातुलिंगाम्ले ताम्रं च मरिचं दिनम् । आर्द्रकस्य रसे चैव विषं तुल्यं च चूर्णयेत् ॥ पिप्पली पिप्पलीमूलं युक्तं गुंजाद्वयं हितम् । हिंगू करंजबीजं च शुंठी लशुनमौषधम् ॥ एरंडतैलसंपिष्टं कर्षकं भक्षयेदनु । योगो वैश्वानरो नाम शूलं हंति त्रिदोषजम् ॥

अर्थ--तांबा, मिरच, सिंगिया विष, पीपल और पीपरामूल इनका समान चूर्ण एकत्र कर बिजोरेके रसमें तथा अदरखके रसमें एक दिन खरल करके दो रत्तीकी मात्रा रोगीको देवे. इसके ऊपर हींग, कंजाके बीज, सोंठ, लहसन इनको अंडके तेलमें पीसके इसको एक तोलेकी मात्रा देवे तो यह वैश्वानरयोग त्रिदोषजन्यशूलको नाश करे ॥

सर्वजशूलपर शास्त्रार्थ।

वमनं लंघनं स्वेदः पाचनं फलवर्तयः ।
क्षारश्चूर्णानि गुटिकाः शस्यंते शूलनाशनाः ॥

अर्थ--वमन, लंघन, पसीने निकालने, पाचन, फलवर्त्ती अर्थात् मलशोधन करनेके वास्ते गुदामें तेल लगाके वाती डालते हैं वह, क्षारचूर्ण, गोलियें सब शूलनाशक हैं ॥

वाते निरूहबस्तिश्च पित्ते क्षीरं विरेचनम् ।
कटुतिक्तकषायाश्च शूले वातकफोद्भवे ॥

अर्थ--वातशूल पर निरूहबस्ति, पित्तशूल पर दूधका जुलाब और वातकफोत्पन्न शूल पर कटु, तिक्त और कषेली औषध देवे ॥

शूले स्वरसमाह।

शतावर्याश्च मधुना युक्तः शूलहरो रसः ॥

अर्थ--शतावरीका स्वरस सहतके साथ पीवे तो शूलको हरण करे है ॥

बीजपूरादिस्वरस।

बीजपुररसपानान्मधुक्षीरयुतो जयेत् ।
पार्श्वहृद्बस्तिशूलानि कोष्ठवायुं च दारुणम् ॥

अर्थ-बिजोरेका रस, दूध और सहत इन सबको मिलायके पी जावे तो कूख, उर और बास्तिस्थानके शूलको तथा कोठेकी वायुको नाश करे ॥

मातुलुंगस्वरस ।

मातुलिंगरसं सर्पिः सहिंगु लवणान्वितम् । सुखोष्णं पाययेद्वेताद्वि- ङ्बिंधानुलोमनम् ॥ कुक्षिहृत्पार्श्वशूलेषु वेदना चोपशाम्यति ॥

अर्थ-बिजोरेका स्वरस, घी, हींग और सैंधानिमक इनको एकत्र करके कुछ गरम २ पीवे तो मलको अनुलोम करे (निकाले) और कूख, हृदय और पसवाडे इन ठिकानेकी शूलव्यथाको शांत करे ॥

बृहत्यादिक्काथ ।

रिंगणी दुल्लरी बिल्वं बीजपुरांघ्रयोऽश्मभित् ।
गोक्षीरेणान्वितैरेतैः कृतः काथोऽतिशीतलः ॥

अर्थ-कटेरी, दुल्लरी, बेल और बिजोरा इनकी जड और पाषाणभेद लेकर इनका काढा करे उसमें गौका घी डालके शीतल करे, इसके पीनेसे शूल नाश होवे ॥

एलादिक्काथ ।

एलाहिंगुयवक्षारसैंधवप्रतिवाषितः । पीत एरंडतैलेन कटि- हृद्भवमुद्धतम् ॥ जाठरं नाभिशूलं च पृष्ठकुक्षिगतं तथा । शिरःकर्णाक्षिशूलं च नाशयत्यातिवेगतः ॥

अर्थ-इलायची, हींग, जवाखार और सैंधानिमक इनके काढेमें अंडीका तेल डालके देवे तो कमर, हृदय, उदर, नाभि, पीठ, कूख, मस्तक, कान और नेत्र इन स्थानोंके शूलको बहुत जल्दी नाश करे ॥

मातुलुंगादिक्काथ ।

मातुलिंगरसो वापि शिग्रुकाथस्तथा परः ।
सक्षारो मधुना पीतः पार्श्वहृद्बस्तिशूलहा ॥

अर्थ-बिजोरेका रस अथवा सहजनेका काढा जवाखार और सहत इनके साथ पीवे तो कूख, उर और बस्ती इन स्थानके शूलको नाश करे ॥

अजमोदादि क्काथ ।

अजमोदा वचा हिंगु लवणं बिडपूर्वकम् । शुंठी सुवर्चला कृष्णा

दुह्लारी रिंगणी तथा ॥ बीजपूरस्य बीजानि तुंबरुं समभागतः ।
एतत्क्वाथस्य पानेन यांति शूलान्यनेकधा ॥

अर्थ-अजमायन, वच, हींग, बिडनिमक, सोंठ, सोरा, पीपल, दुह्लारी, कटेरी, बिजोरेके बीज, चिरफल ये समान भाग लेवे इनका काढा करके पीवे तो अनेक शूल दूर होवें ॥

एरंडादिक्वाथ ।

एरंडबिल्वबृहतीद्वयमातुलिंगपाषाणभित्त्रिकटुमूलकृतः कषायः ।
सक्षारहिंगुलवणोरुबुतैलमिश्रः श्रोण्यूरुमेढ्रहृदयस्तनरुक्षु पेयः ॥

अर्थ-अंड, बेल, बडी कटेरी, छोटी कटेरी, बिजोरा इनकी जड और पाषाणभेद, सोंठ, मिरच, पीपल इन सबका काढा जवाखार, हींग, सैंधानिमक, अंडीका तेल इनको मिलायके पीवे तो कमर, ऊरु, लिंगभंग, हृदय, स्तन इन स्थानोंमें होनेवाले शूलको नाश करे ॥

त्रिफलादिक्वाथ ।

त्रिफलाक्वाथगोमूत्रक्षौद्रक्षीररसैः पृथक् ।
एरंडतैलद्विगुणैर्हितः शूलनिवारणे ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला इनके काढेमें गोमूत्र, सहत, दूध और पाषाण भेद इनमेंसे किसी एक पदार्थको एक भाग और अंडीका तेल दो भाग एकत्र करके पीवे तो शूलरोगपर हित है. अर्थात् शूलरोगको दूर करे ॥

पथ्यादि क्वाथ ।

पथ्यासशक्रयवपुष्करमूलयुक्ता निःक्वाथ्य हिंगुजटिलातिविषासमेतम् । पीत्वा सुखोष्णमथवातकृतं हि शूलमामोद्भवं कफकृतं च निहंति तूर्णम् ॥

अर्थ-हरड, इन्द्रजौ, पुहकरमूल, हींग, जटामांसी और अतीस इनका काढा गरम सुहाता २ पीवे तो आमसे अथवा कफसे उत्पन्न शूल नाश होय ॥

शूलमात्रपर यवागू ।

भ्रष्टा दालीकृता मुद्गाः शालिलाजाश्च सैंधवम् । धान्यं जीरं जलं स्निग्धं यवागूरिति कथ्यते ॥ पाचिता क्षुत्करी शूलनाशिनी च त्रिदोषहृत् । गुर्विणी कृशवृद्धानां बालानां च हितावहा ॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः । यवागूः सेविता सिद्धा दीपनी पाचनी हिता ॥

अर्थ-भुनी हुई मूंगकी दाल, शाली चावलोंकी खील, सैंधानिमक, धनिया और जीरा ये डालके जलमें यवागू तैयार करे. यह क्षुधाकारक और शूल तथा त्रिदोषको नाश करे तथा गर्भिणी स्त्री, बालक और वृद्ध इनको हितकारी है पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ इनकी यवागू करे. इसको पीवे तो दीपन और पाचन करे ॥

रेचनके वास्ते बत्ती ।

अगारधूमविडरामठदंतिकृष्णाकंकुष्ठसैंधवगुडत्रिफलावृता च ।
वर्तिर्जलेन च गवां हि गुदे नियुक्ता विट्ग्रंथिजातविरुजं क्षिपति क्षणेन ॥

अर्थ-घरका धूँआ, बिडनिमक, हींग, दंती, पीपल, मुरदासिंग, सैंधानिमक, गुड और त्रिफला इनको पीसके बत्ती बनावे. इसको गोमूत्रमें डुबोयके गुदामें रक्खे तो मलकी गांठसे जो इस प्राणीको दुःख होता है उसको क्षणभरमें नाश करे ॥

अश्वीपुरीषरसयोग ।

तुरंगीपुरीषोदकं हिंगुयुक्तं महाशूलहारि प्रदिष्टं भिषग्भिः ।
तथा हिंगुविश्वाविडैर्वापितोऽसौ कुलित्थोद्भवोत्राकषायः प्रदिष्टः ॥

अर्थ-घोडीकी लीदको निचोडके रस निकाल लेवे उसमें हींग मिलायके पिवावे अथवा कुलथीके काढेमें हींग, सोंठ और बिडनिमक इनका चूर्ण डालके देवे तो महान् शूलरोगका नाश करे ॥

विश्वजलादिक्काथ ।

विश्वजलं रुबुतैलं विमिश्रं हिंगुयुतं रुचकेन च युक्तम् ।
पीतमपि त्वरितं निहंति शूलममूलमिदं हि मया न कथितम् ॥

अर्थ-सोंठके काढेमें अंडीका तेल, हींग और संचरनिमक डालके पीवे तो समूल शूलको नाश करे यह अमूल (अर्थात् अप्रमाण) मैंने नहीं कहा ॥

कुबेरादि चूर्ण ।

अक्षं नागररामठाभयसमं मज्जाकुबेराक्षजा तुल्या पुष्करतैलप-

क्मृदिता सेवेत्सदा यो नरः । नानास्थानविशालशूलशमनं ब्रह्मास्त्रमेतत्परं सत्यं श्रीजयदेवसूनुनृहरेर्वक्त्रांबुजान्निःसृतम् ॥

अर्थ-बहेडा १, सोंठ १, हींग १, हरड १ और लता करंजकी गोली ३ भाग ले इनका चूर्ण करके अंडीके तेलमें पचावे और घोटे फिर रोगीको देवे तो अनेक स्थानके घोर शूलको ब्रह्मास्त्रके समान नष्ट करे इस प्रकार नृहरिनामक जयदेवके पुत्रने कहा है ॥

हिंग्वादि चूर्ण ।

हिंग्वम्लात्रिपटूग्रषट्कटुशठीवृक्षाम्लदीप्यालकापाठाजाज्यजगंधमूलहपुषाद्विक्षारसाराभयम् ॥ हिक्काध्मानाविबंधवध्मकसनश्वासाग्निसादारुचिप्लीहार्शोऽखिलशूलगुल्मगलहृद्रोगाश्मपांडुप्रणुत् ॥

अर्थ-हींग, बिजोरा, तीनों निमक, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, कचूर, अमलवेत, अजमायन, कंकोल, पाढकी जड, जीरा, वनतुलसी, मूली, हाऊबेर, जवाखार, सुहागा, अनारदाना और हरड इनका चूर्ण विबंध, हिचकी, अफरा बद, खांसी, श्वास, मंदाग्नि, अरुचि, प्लीहा, बवासीर, सबप्रकारके शूल, गोलेका रोग, हृदयरोग, पथरी, पांडुरोग इनको नाश करे ॥

नाराचचूर्ण ।

कर्षमात्रा भवेत्कृष्णा त्रिवृतं स्यात्पलोन्मितम् । खंडात्पलं च विज्ञेयं चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ कर्षोन्मितं लिहेदेतत्क्षौद्रेणाध्माननाशनम् । गाढविट्कोदरकफपित्तशूलानि नाशयेत् ॥

अर्थ--पीपल १ तोला, निसोथ ४ तोले, बिडानिमक ४ तोले इन सबको एकत्र कूट चूर्ण करे फिर इसको सहतके साथ १ तोला नित्य भक्षण करे तो अफरा, मलका कठिनतासे उतरना, उदररोग, कफ, पित्त और शूल इनको नाश करे ॥

क्षारयोग ।

क्षाराः किंशुकमूलकार्जुनधवापामार्गरंभातिला जीवंतकिनकाह्वया सरजनी कूष्मांडवल्ली तथा । वासासूरणमेवतीव्रदहनैः प्रज्वाल्य भस्मीकृतं तोयेन प्रतिशोध्य निःसृतपयः पानं विधेयं

सकृत ॥ शूलानाहविबंधगुल्मकफजान् रोगान् जयेत्कामला-न्विद्रध्यो हृदिशूलपाण्डुग्रहणीशोफार्शसंपीनसान् । मंदाग्निं जठरस्य पीनसगुरुप्लीहातिमेहादिकान् पाषाणा ह्युदरे भवंति बहुधा भस्मीकृतास्तत्क्षणात् ॥

अर्थ–पलासपापडा, मूली,कोह, धोकी छाल, ओंगा, केलेकी जड, तिल, जीवंती, धतूरा, हलदी, कुह्मडेकी बेल, अडूसा और सूरण (जमीकंद) इनको एकत्र करके बडी भारी अग्निसे भस्म करे उस राखको जलमें घोटके उस नितरते २ जलको छान लेवे इस जलको पीवे तो अफरावायु, मलबंध, गोलेका रोग, कफसंबंधी संपूर्ण रोग, कामला, विद्रधि हृदयका शूल, पांडुरोग, संग्रहणी, सूजन, बवासीर, पीनस वा जुकाम, मंदाग्नि, उदररोग, सरेकमा, प्लीह और प्रमेह इत्यादिकोंका नाश करे और पत्थरभी यदि इस प्राणीने भक्षण करा होवे तो उसको भी यह क्षार भस्म कर देवे ॥

हिंग्वादिचूर्ण ।

हिंग्वक्षार्द्रकुबेराक्षा वृद्धाः शूलेंबुना सुखाः ।
गुडाभयं वा सघृतो रसोनः शूलनुत्परः ॥

अर्थ–हींग १, बहेडा २, सोंठ ३, लताकरंज ४ इस प्रकार भाग लेकर सबका चूर्ण करे गरम जलके साथ पीवे तो यह शूलको शमन करे तथा गुड, हरड और घी, लहसन ये दो योग शूलको नष्ट करते हैं ॥

तुंबरूआदि चूर्ण ।

तुंबरुणी त्रिलवणं यवानी पुष्कराह्वयम् । यवक्षाराभयाहिंगुविडंगानि समानि च ॥ त्रिवृत्त्रिभागा विज्ञेया सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । पिबेदुष्णेन तोयेन यवक्काथेन वा पिबेत् ॥ जयेत्सर्वाणि शूलानि गुल्माध्मानोदराणि च ॥

अर्थ–तुंबरू अथवा चिरफल, सैंधानिमक, संचरनिमक, बिडनिमक, अजमोदा, पुहकरमूल, जवाखार, छोटी हरड, भुनी हुई हींग और वायविडंग ये दश औषध समान भाग लेवे तथा निसोथ तीन भाग ले फिर सब औषधका बारीक चूर्ण कर गरम जलके साथ अथवा जौके काढेके संग पीवे तो संपूर्ण शूल और गोला, पेटका फूलना, उदररोग इन सबको दूर करे ॥

पंचसमचूर्ण ।

शुंठी हरीतकी कृष्णा त्रिवृत्सौवर्चलं तथा । समभागानि सर्वाणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ ज्ञेयं पंचसमं चूर्णमेतच्छूलहरं परम् । आध्मानजठरार्शोघ्नमामवातहरं स्मृतम् ॥

अर्थ-सोंठ, जंगी हरड, पीपल, निसोथ, संचरनिमक ये पांच औषध समान भाग लेवे. बारीक चूर्ण करे इसको पंचसमचूर्ण कहते हैं इस चूर्णके सेवन करनेसे शूल, पेटका फूलना, मंदाग्नि, बवासिर, आमवात इन रोगोंको दूर करे ॥

विश्वादिचूर्ण ।

विश्वोरुबूकदशमूयवांभसा तु द्विक्षारहिंगुलवणत्रयपौष्कराणाम् । चूर्णं पिबेद्धृदयपृष्ठकटिग्रहामपक्वाशयार्तिभृशरुग्ज्वरगुल्मशूली ॥

अर्थ-सोंठ, अंडकी जड, दशमूल और जौ इनके काढेके साथ जवाखार, सुहागा, हींग, सैंधानिमक, संचरनिमक, बिडनिमक और पुहकरमूल इनके चूर्णको पीवे तो उर, पीठ, कमर, आमाशय और पक्वाशय इन स्थानोंकी पीडा, शूल और गोला इनको नष्ट करे ॥

विश्वादिचूर्ण ।

शुंठी सुवर्चलं हिंगुपाठामूलोष्णकं जलम् ।
निपीतं नाशयत्येव सर्वशूलानि देहिनाम् ॥

अर्थ-सोंठ, सज्जीखार और हींग इनके चूर्णको गरम जलसे पीवे तो क्षणमात्रमें प्राणीमात्रके संपूर्ण शूलको नाश करे ॥

वचादिचूर्ण ।

वचा सुवर्चलं हिंगु कुष्ठमिंद्रयवा समाः ।
चूर्णमुष्णांभसा पीतं सर्वशूलनिकृंतनम् ॥

अर्थ-वच, सज्जीखार, हींग, कूठ, इन्द्रजौ ये समान भाग लेवे. इनका चूर्ण कर गरम जलसे पीवे तो संपूर्ण शूलोंका नाश करे ॥

अजमोदादिचूर्ण ।

अजमोदा वचा कुष्ठमम्लवेतससैंधवम् । सर्जिक्षारं तथा पथ्या त्रिकटु ब्रह्मदंडिका ॥ मुस्ता सुवर्चला विश्वा लवणं बिडपूर्वकम् । पीतं तक्रान्वितं चूर्णममीषां सर्वशूलहृत् ॥

अर्थ-अजमायन, वच, कूठ, अमलवेत, सैंधानिमक, सज्जीखार, हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, ब्रह्मदंडी, नागरमोथा, संचरनिमक, सोंठ, निमक और बिडनिमक इनके चूर्णको छाछके साथ पीवे तो संपूर्ण शूलोंका नाश करे ॥

वचादि चूर्ण ।

वचाबिडाभयाशुंठीहिंगुकुष्ठाग्निदीप्यकान् । द्वित्रिषट्चतुरावष्ट-सप्तपंचांशकाः क्रमात् ॥ चूर्णं मध्वादिभिः पीतं शूलानाहोदरा-पहम् । गुल्मार्शःश्वासकासघ्नं ग्रहणीपांडुरोगहृत् ॥

अर्थ-वच, बिडनिमक, हरड, सोंठ, हींग, कूठ, चित्रककी जड और अजमायन ये क्रमसे २-३-६-४-८-७ और ५ भाग लेवे. इनका चूर्ण कर सहत आदिके संग देवे तो शूल, अफरा, उदर, गोला, बवासीर, श्वास, खांसी, संग्रहणी और पांडुरोग इनको हितकारी है ॥

यवान्यादि चूर्ण ।

यवानी सैंधवं दारु यवक्षारं सुवर्चलम् । विश्वैरंडशिफाहिंगु-लवणं बिडपूर्वकम् ॥ एतच्चूर्णं समं श्लक्ष्णं गुडूचीक्राथपानतः । सर्वशूलानि नश्यंति महारोगान्न संशयः ॥

अर्थ-अजमायन, सैंधानिमक, देवदारु, जवाखार, सोरा, सोंठ, अंडकी जड, हींग और बिडनिमक इनको समान भाग ले चूर्ण करे. इसको गिलोयके काढेसे पीवे तो अत्यंत घोर शूलको नाश करे ॥

अजमोदादि चूर्ण ।

अजमोदाभया पाठा त्रिकटुः समचूर्णकम् । भुक्तमुष्णांभसाजीर्णं शूलनिर्मूलनं क्षणात् ॥

अर्थ-अजमायन, हरड, पाढ, सोंठ, मिरच और पीपल इनका समान भाग चूर्ण कर इसको गरम जलके साथ देवे तो अजीर्ण और शूल इनको क्षणमात्रमें निर्मूल करे ॥

रुचकादिचूर्ण ।

चूर्णं समं रुचकहिंगुमहौषधानामुष्णांबुना कफसमीरणसंभवासु । हृत्पार्श्वपृष्ठजठरार्तिविषूचिकासु पेयं तथा यवरसेन च विड्विबंधे ॥

अर्थ-संचरनिमक, हींग और सोंठ इनको समान भाग ले चूर्ण करके गरम जलसे

देवे तो कफवातसे हृदय, पसवाडा, पीठ और पेट इनके शूलको और विषूचिका इनको नाश करे. तथा मलबद्ध होनेपर जौके काढेसे इस चूर्णको देवे ॥

हिंग्वादि चूर्ण ।

हिंगु ग्रंथिकधान्यकाग्निकवचा चव्याग्निपाठा सठी वृक्षाम्लं लवणत्रयं त्रिकटुकं क्षारद्वयं दाडिमम् । पथ्यापुष्करवेतसा-म्लहपुषाजाजाज्यगंधैः कृतं चूर्णं भावितमेतदार्द्रकरसे स्याद्वीजपूरस्य वा ॥ आध्मानग्रहणीविकारगुदजान् गुल्मानुदावर्तकान् वाताध्मानगरोदराश्मरिरुजस्तूनीद्वयारोचकाम् । ऊरुस्तंभमतिभ्रमं च मनसो बाधिर्यमष्ठीलिकां प्रत्यष्ठीलिकश्वासकासमपहृत्तत्पीतमुष्णांबुना ॥ हृत्कुक्षिवंक्षणकटीजठरांतरेषु बस्तिस्तनांसफलकेषु च पार्श्वयोश्च ॥ शूलानि नाशयति वातबलासजानि हिंग्वाद्यमाद्यमिदमाश्विनिसंहितायाम् ॥

अर्थ–हींग, पीपरामूल, धनिया, चित्रक, वच, चव्य, भिलाये, पाढ, कचूर, चूका, सैंधानिमक, बिडानिमक, संचर नमक, सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जीखार, जवाखार, अनारकी छाल, हरड, पुहकरमूल, अमलवेत, हाऊवेर, जीरा, बनतुलसी इनके चूर्णको अदरखके रसकी अथवा बिजोरेके रसकी भावना देवे और इसको गरम जलके साथ सेवन करे तो, अफरा, संग्रहणी, बवासीर, गोला, उदावर्त्त, वाताध्मान, विष, उदररोग, मूत्रकृच्छ्र, तूनी, प्रतूनी, अरुचि, ऊरुस्तंभ, मतिभ्रम, अंतःकरणका भ्रम, बहरापना, अष्ठीलिका, श्वास, खांसी, हृदय, कूख, वंक्षण, कमर, पेट, बस्ती, स्तन, कंधे और पसवाडे इन स्थानोंके शूल, वायु अथवा कफका होय तो उसका नाश होय, इसको हिंग्वादिचूर्ण कहते हैं यह प्राचीन है अश्विनी कुमारोंने कहा है ॥

शंखवटी ।

चिंचाक्षारं पंचपलं लवणानि पलं पलम् । संचूर्ण्यानि क्षिपेत्प्रस्थद्वये जंबीरवारिणि ॥ शंखं दशपलं तप्त्वा निक्षिपेत्सप्तवारतः । तत्समस्तं विशोष्याथ हिंगुव्योषं चतुष्पलम् ॥ बलासूतविषान्भागैः पलार्धांश्च पृथक् पृथक् । एतत्समस्तं संमर्द्य

जंबीराम्ले दिनत्रयम् ॥ बदरास्थिप्रमाणेन वटिकां कारयेद्बुधः । एकैकां भक्षयेत्प्रातः कोष्णतोयं पिबेदनु ॥ सर्वशूलं हरेद्गुल्ममजीर्णं परिणामजम् । अतिसारगदं हन्याद् ग्रहणीं च विशेषतः ॥

अर्थ-इमलीका खार २० तोले निमक ४ तोले, सैंधानिमक ४ तोले, संचरनिमक ४ तोले, बिडनिमक ४ तोले, सुहागा ४ तोले इनके चूर्णको १२८ तोले नींबूके रसमें डालके फिर ४० तोले शंखको अग्निमें तपायके उस रसमें बुझाय देवे इस प्रकार सात वार करनेसे शंखकी भस्म हो जावे वह शंखकी भस्म और हींग ४ तोले, सोंठ ४ तोले, मिरच ४ तोले, पीपल ४ तोले, गंधक ४ तोले, पारा २ तोले, सिंगियाविष २ तोले इन सबको डालके सबको नीबूके रसमें तीन दिन खरल करे फिर बेरकी गुठलीके बराबर गोली बनाय लेवे इसमेंसे एक २ गोली प्रातःकाल भक्षण करे और ऊपरसे गरम जल पीवे तो सर्व प्रकारके शूल, गोलेका रोग, अजीर्णरोग, परिणामशूल, अतिसार, संग्रहणी इनको नाश करे ॥

गोमूत्रमंडूर ।

गोमूत्रसिद्धं मंडूरं त्रिफलाचूर्णसंयुतम् ।
विलिहन्मधुसर्पिर्भ्यां शूलं हंति त्रिदोषजम् ॥

अर्थ-गोमूत्रमें सिद्ध करा हुआ मंडूर, हरड, बहेडा, आंवला इनके चूर्णको मिलाय इसको सहत और घी इनके साथ सेवन करे तो त्रिदोषका शूल नाश होय ॥

सूर्यप्रभा वटी ।

व्योषग्रंथिवचा च हिंगु जरणद्वंद्वं विषं निंबुकद्रावैरार्द्रकजै रसैर्विमृदितं तुल्या मरीचोपमा । कर्तव्या वटिकाथ सा दिनमुखे भुक्ता कवोष्णांबुना शूलं त्वष्टविधं निहंति सहसा सूर्यप्रभानामतः ॥

अर्थ-त्रिकुटा, पीपरामूल, वच, हींग जीरा, काला जीरा, सिंगियाविष ये सब समान भाग लेवे इसको नींबूके रस और अदरखके रसमें खरल करके मिरचके बराबर गोली बनावे १ गोली प्रातः काल गरम जलके साथ भक्षण करे तो आठ प्रकारके शूलोंका नाश करे. इसको सूर्यप्रभा वटी कहते हैं ॥

शंखादि चूर्ण ।

दग्धशंखं करंजं च हिंगुत्र्यूषणसैंधवम् । एतच्चूर्णीकृतं सर्वं पिबेच्चोष्णेन वारिणा ॥ सर्वशूलहरं चूर्णं विख्यातो रविसागरः ॥

अर्थ-शंखकी भस्म, कंजेके बीज, हींग, सोंठ, काली मिरच, पीपल और सेंधा-निमक इनका समान भाग चूर्ण कर गरम जलसे पीवे तो संपूर्ण शूलोंका नाश करे इसको रविसागर कहते हैं ॥

क्षारयोग ।

आम्लवेतसनिर्यासः सैंधवं शुंठिरामठम् । सुवर्चलाजमोदा च देवदारुः समांशकम् ॥ स्थाल्यां प्रक्षिप्य तत्सर्वं वह्निमुद्दीपयेद्बुधः । क्षारः स्यादिष्टिकापिष्टः स पीतस्तीव्रशूलहृत् ॥

अर्थ-अमलवेतका गूदा सैंधानिमक, सोंठ, हींग, सोरा, अजमायन और देवदारु इनका समान भाग चूर्ण खिपडेमें डालके चूल्हेपर चढाय अग्नि देवे तो इन सबकी राख हो जावे इसको ईंटसे बारीक पीसके देवे तो तीव्रशूलको नाश करे ॥

चित्रकादि वटक ।

चित्रकं लवणं पाठा व्योषं लवणपंचकम् । अजाजी धान्यकं हिंस्रा दीप्यकं ग्रंथिकं तथा ॥ एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । जंबीरस्य रसेनैव वटकान् कारयेद्बुधः ॥ हृच्छूलं पार्श्वशूलं च आमशूलमरोचकम् । अशीतिं वातजान् रोगान् नाशयेच्चैव तत्क्षणात् ॥

अर्थ-चित्रककी छाल, निमक, पाढ, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधानिमक, साम्हर-निमक, खारीनिमक, कालानिमक, कचियानिमक, जीरा, धानिया, जटामांसी, अजमायन और पीपरामूल ये समान भाग लेके बारीक चूर्ण कर सबको एकत्र करके सबको नींबूके रसमें खरल करे फिर गाढा होने पर गोली बनाय ले. यह हृदयशूल, पार्श्वशूल, आमशूल, अरुचि, अस्सी प्रकारकी वातव्याधि इनको तत्काल नाश करे ॥

हरीतक्यादि वटी ।

हरीतकी त्रिकटुकं कुचिला गंधहिंगु च । सैंधवं च समं सर्वं वटीं कुर्यात्सुखावहाम् ॥ लघुकोलप्रमाणां तां भक्षयेत्प्रातरेव हि । एकैका वटिका भुक्ता जन्मशूलनिवारिणी ॥ ग्रहण्यामातिसारे वाजीर्णे मंदे च पावके । उष्णोदकानुपानेन सुखमाप्नोति नित्यशः ॥

अर्थ—हरड, सोंठ, मिरच, कुचलाके बीज, गंधक, हींग और सैंधानिमक ये सब समान भाग लेवे. सबका चूर्ण करके जलसे आधे २ तोलेकी गोली बनाय लेवे. प्रातः-काल १ गोली नित्य भक्षण करे तो यह एक ही गोली जन्मशूलको नाश करे. तथा संग्रहणी, अतीसार, अजीर्ण, मंदाग्नि इन पर गरम जलके संग देवे तो सुख प्राप्त होय॥

कुबेराक्षवटी ।

कर्षैकं च कुबेराक्षं कर्षैकं च महौषधम् । सौवर्चलं च कर्षार्धं कर्षार्धं भृष्टहिंगुकम् ॥ शिग्रुमूलरसेनैव रसोनस्य रसेन वा । पिष्ट्वा सर्वं प्रयत्नेन स्वच्छांगारे विपाचयेत् ॥ भुक्त्वा विनाश-येच्चैव शूलमष्टविधं तथा ॥

अर्थ—लताकरंज १ तोला, सोंठ १ तोला, संचरनिमक छः मासे, भूनी हुई हींग छः मासे सबका एकत्र चूर्ण कर सहजनेके जडके अथवा लहनके रसमें घोंट स्वच्छ अंगारों-पर पचन करके देवे तो आठ प्रकारके शूलोंका नाश करे ॥

अगस्तिवटी ।

दशाभ्रकं हैमवतीसमेतं स्विन्नं तुषोदे विषतिंदुबीजान् । कटु-त्रिकक्षारयुगं त्रिदीप्यं कृमिघ्नहिंगुत्रिपटुत्रिबिल्वम् ॥ पृथक् प्लुतं जंभजले वटीयमगस्त्यपूर्वा बदरप्रमाणा । शूलानि गुल्मकृमि-मंदवह्निप्लीहामवातान् जयति प्रसह्य ॥

अर्थ—हरड ४ तोलेको तुषोंके काढेमें सिजावे. तथा इसी प्रकार कुचलेके बीजोंको सिजवावे. इनको और सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, सुहागा, अजमायन, अजमोद, खुरासानी अजमायन, वायविडंग, हींग, सैंधानिमक, बिडानिमक, कचियानिमक ये प्रत्येक बारह २ तोले ले सबका चूर्ण एकत्र करके नींबूके रसमें उनको खरल कर बेरकी बराबर गोली बनावे और रोगीको देवे तो शूल, गोला, कृमिरोग, मंदाग्नि, प्लीहा और आमवातरोग इनको नाश करे ॥

गरलादि वटी ।

गरलहुतभुग्विश्वाजाजीवचोषणहिंगुभिर्विधिसुमृदितैर्भृंगद्रावे गु-टीमथ कृत्यच । हरति विविधं भुक्त्वा शूलं तथानिलमूढताम-नलविरतिं सौख्यं भास्वद्वटी भुवि विश्रुता ॥

अर्थ--अफीम, चित्रक, सोंठ, जीरा, वच, मिरच, हींग इनका चूर्ण भांगरेके रसमें खरल करके गोली बनाय लेवे. उसको भक्षण करनेसे शूल, मूढवात, मंदाग्नि, सुप्तिवात इनको नाश करे इसे भास्वद्वटी कहते हैं ॥

वचादिवटी ।

वचा विश्वाजीरोषणगरलबाल्हीकदहनत्वचा कार्या वट्यश्चणक-तुलिता मार्कवरसैः । यथा भानोर्भासस्तिमिरनिकरं कामि-नि तथा हरंत्येताः शूलान्यनिलमनलं ग्लानिमपि च ॥

अर्थ--वच, सोंठ, जीरा, मिरच, सिंगिया विष, हींग, चित्रककी छाल और दालचीनी इनका समान भाग चूर्ण करके भांगरेके रसमें चनेके बराबर गोली करके देवे तो शूल, वादी और मंदाग्नि इनको नाश करे. जैसे सूर्यकी किरण अंधकारको नाश करेहैं ॥

कुबेराक्षपाक ।

धान्याम्ले त्रिदिनं विलाप्य विपचत्यग्नौ कुबेराक्षकं पादांशं पटु संविधाय च पचेद्भित्त्वा च संपूरयेत् । सिंधूत्थं त्रिकटूद्भवेन रजसा संसिच्य बिंदुद्रवैः शुष्कास्ते रुचिरा भवंति च तथा निघ्नंति शूलान् बहून् ॥

अर्थ—लताकरंजको तीन दिन कांजीमें भिगो देवे, उनके चतुर्थांश निमक डालके अग्निपर चढायके पचन करे. फिर इनको फोडके भीतरकी मिंगी निकाल लेवे और सैंधानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल इनका चूर्ण डालके ऊपरसे थोडी २ बूंद २ टपका कांजीका डालके पचावे. जब सब कांजी सूख जाय तब उतारले. यह रुचिकारी तथा अनेक शूलोंको नाश करे ॥

सप्तविंशतिगुग्गुलु ।

क्षारद्वयं त्रिकटुकं त्रिफला हरिद्रा रुद्राक्षमुस्तलवणत्रयतुंबरू-णि । सग्रंथिकाग्नित्रुटिचित्रकचव्यकुष्ठमाक्षीकपुष्करविडंगवि-षायुतानि ॥ यावंत्यमूनि गजपिप्पलिसंयुतानि तावत्प्रमा-णामिति गुग्गुलसंयुतानि । कृत्वा घृतेन गुटिका मनुजैः प्र-योज्या वातं च दुग्धजलकांजिकमुद्गयूषैः ॥ हृत्पार्श्वपृष्ठकटि-

वंक्षणकुक्षिकक्षाशूलानि नाशयति कुष्ठकिलासरोगान् । पांड्वामयं क्षयमपस्मृतिमूर्ध्ववातमुन्मादमामपवनं श्वयथुं प्रमेहम् ॥

अर्थ—जवाखार, सुहागा, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, हलदी, रुद्राक्ष, नागरमोथा, सैंधानिमक, बिडनिमक, कचियानिमक, चिरफल, पीपरामूल, चित्रक, छोटी इलायची, चित्रककी छाल, चव्य, कूठ, सुवर्णमाक्षिककी भस्म, पुहकरमूल, वायविडंग, अतीस, गजपीपल ये सब समान भाग लेवे, तथा सबके बराबर गूगल लेय. सबको एकत्र कर घीमें सान कूटके गोली बनावे. इसको दूध, जल, कांजी, मूंगका यूष इनमेंसे किसी एकके साथ देवे तो वादी, हृदय, पसवाडा, पीठ, कमर, वंक्षण, कूख इनके शूलको नाश करे तथा कुष्ठ, किलासकुष्ठ, पांडुरोग, क्षय, अपस्मार, ऊर्ध्ववात, उन्माद, आमवायु, सूजन और प्रमेह इनकोभी नाश करे ॥

लोहभस्मयोग ।

मूत्रांतः पाचितां शुष्कां लोहचूर्णसमन्विताम् ।
सगुडामभयां दद्यात्सर्वशूलोपशांतये ॥

अर्थ—हरडोंको गोमूत्रमें पचायके सुखाय ले. फिर पीस इसमें लोहभस्म मिलायके गुडके साथ देवे तो संपूर्ण शूलोंका नाश होय ॥

गंधकरसायन ।

पलैकं त्रिफलाचूर्णं पलार्धं गंधकस्य तु । लोहभस्म तु कर्षैकं सर्वं संचूर्ण्य मिश्रयेत् ॥ कर्षार्धं मधुसर्पिर्भ्यां लेहयेत्सर्वशूलनुत् । वातविस्फोटकान्हंति सेवनात्तु त्रिमासतः ॥ गताः केशाः पुनर्यांति गंधकस्य रसायनात् ॥

अर्थ—त्रिफलेका चूर्ण ४ तोले, गंधक २ तोले, लोहभस्म १ तोला सबका चूर्ण एकत्र कर मिलाय लेय इसमेंसे आधा तोला सहत और घीके साथ देवे तो संपूर्ण शूल, वायु, विस्फोटक इनको तीन महीनोंमें नाश करे तथा गये हुए बाल फिर ऊग आवें. इसको गंधकरसायन कहते हैं ॥

शूलकुठाररस ।

टंकणं पारदं गंधं त्रिफला व्योषतालकम् । विषं ताम्रं च जेपालं भृंगस्वरसमर्दितम् ॥ द्विगुंजमात्रा वटिका मरिचेनार्द्रकेण वा । सर्वशूलकुठारोऽयं विष्णुचक्रमिवासुरान् ॥

अर्थ–सुहागा, पारा, गंधक, त्रिफला, सोंठ, मिरच, पीपल, हरताल, सिंगियाविष, ताम्रभस्म, जमालगोटा इन सबको एकत्र करके भांगरेके रसमें खरल करै. फिर इसमेंसे दो दो रत्तीकी गोली बनावे इन गोलियोंको मिरच अथवा अदरखके रससे देवे तो संपूर्ण शूलोंको नाश करे. इसको शूलकुठार रस कहते हैं ॥

अग्निकुमाररस ।

सूतेन गंधं सह टंकणेन समं विषं योज्यमिह त्रिभागम् । कपर्दशंखावपि तेऽत्र भागौ मरीचकैरष्टगुणैर्विमिश्रम् ॥ जंबीरनीरेण विमर्दनीयं सिद्धो भवेदग्निकुमार एषः । देयो हि गुंजाद्वितयं च शूले त्रिदोषजे योजय सानुपानम् ॥

अर्थ--पारा, गंधक, सुहागा ये समान भाग लेवे तथा सिंगिया विष तीन भाग ले और कौडियोंकी भस्म २ भाग, शंखभस्म २ भाग, काली मिरच ८ भाग सबका एकत्र चूर्ण कर नींबूके रससे खरल करे इसकी दो रत्तीकी गोली बनायके देवे तो शूलका नाश करे. इसको अग्निकुमार रस कहते हैं ॥

क्षारताम्ररस ।

पलमितमृतशुल्बं तन्मितं गंधचूर्णं वसुमितपरिमाणं चिंचिणिक्षारचूर्णम् । त्रयमिदमभिदिष्टं क्षारताम्राख्यमेतत् हरति सकलशूलं पीतमुष्णोदकेन ॥

अर्थ--तामेकी भस्म ४ तोले और इमलीका खार ८ तोले इन सबको एकत्र कर उत्तम रीतिसे खरल करे इसको क्षारताम्र कहते हैं. यह गरम जलके साथ पीवे तो संपूर्ण शूलोंको नाश करे ॥

सोमनाथीताम्र ।

शुल्बं तुल्येन सूतेन बलिना तत्समेन च । तदर्धांशेन तालेन शिलया च तदर्धया ॥ विधाय कज्जलीं श्लक्ष्णां भिन्नकज्जलसन्निभाम् । यंत्राध्यायविनिर्दिष्टगर्भयंत्रोदरे क्षिपेत् ॥ कज्जलीं ताम्रपत्राणि पर्यायेण विनिक्षिपेत् । रुद्ध्वा शरावकेणैव तदर्धं लवणं क्षिपेत् ॥ पंचत्रियामपर्यंतं स्वांगशीतं विचूर्णयेत् ॥ तत्तद्रोगहरानुपानसहितं ताम्रं द्विवल्लोन्मितं संलीढं परिणामशूलमुदरं

शूलं च पांडुज्वरम् । गुल्मं प्लीहयकृत्क्षयाग्निसदनं मेहं च शूलामयं दुष्टां च ग्रहणीं हरेत्ध्रुवमिदं तत्सोमनाथाभिधम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक दोनों समान भाग लेवे इन दोनोंसे आधी हरताल और चतुर्थांश मनसिल सबको एकत्र करके कजली करे. फिर इस कजलीका कंटकवेधी तामेके पत्रोंपरदो तीन बार लेप कर देवे फिर उन पत्रोंको शरावसंपुटमें बीचमें निमक बिछाय पत्रोंको रख ऊपरसे फिर निमक डालके दूसरे शरावसे बंद कर देवे और संधियोंको बंद कर गर्भयंत्रमें तीन प्रहर अग्नि देवे जब शीतल हो जावे तब निकालकर खरल कर लेवे. इसको सोमनाथीताम्र कहते हैं. यह ४ रत्ती रोगीको अनुपानके साथ संपूर्ण रोगों पर देवे तो परिणामशूल, उदरशूल, पांडु, ज्वर, गोला, प्लीहा, यकृत, क्षय, मंदाग्नि, प्रमेह, शूल, संग्रहणी इनको नाश करे ॥

गदमददहन ।

नागं वंगं सुताम्रं दरदमनशिला तुत्थताम्राभ्रगंधं भस्म स्यात्स्वर्णतुल्यं रसकमपि रविक्षारघृष्टं सुगोप्यम् । कृत्वा तत्कायंत्रे लवणविरचिते भावयेदार्द्रकाभिर्वासानिर्गुंडिकाद्भिः सुरसमगधया सेवनीयः क्रमेण ॥ पार्श्वे शूलाग्निमांद्ये त्वरुचिसमुदिते औषधं सन्निपाते हृद्रोगे गुल्ममेहे कफपवनजये सर्वरोगे ज्वरेपि । देयो भक्त्या रसेंद्रस्त्रिभुवनरचितो भोगिलोकप्रसिद्धो नागानां वल्लभोऽयं गदमददहनो रक्तपित्तप्रहंता ॥

अर्थ–शीशा, रांगा, तामा, हिंगुल, मनसिल, लीलाथोथा, अभ्रक, गंधक, सुवर्ण इनकी भस्म खपरिया इन सबको एकत्र करके आकके दूधमें खरल कर उसका गोला बनावे उस गोलेको शरावमें निमक भर बीचमें इस गोलेको रखे. ऊपर निमक डालके दूसरे सकोरेसे बंद कर कपडमिट्टी कर देवे इसको गजपुटमें रखके फूंक देवे. स्वांगशीतल होने पर निकाल लेवे. फिर इसको अदरख, अडूसा, निर्गुंडी इनके रसकी भावना देकर तुलसीका रस और पीपलके संग सेवन करे तो पार्श्वशूल, मंदाग्नि, अरुचि, संनिपात, हृदयरोग, गुल्म, प्रमेह, कफ वादीके सर्वरोग और ज्वर इनको गदमददहन नाम सबको प्रिय तथा लोकमें प्रसिद्ध रक्तपित्तनाशक है यह नागलोकमें प्रसिद्ध है ॥

शंखादि चूर्ण ।

शंखः पीतवराटकास्त्रिकटुकं क्षारत्रयं त्रैफलं संकोचीलवणानि

गंधकमथो जाजी यवानी पृथक् । कर्षद्वंद्वमितानि हिंगुसहिता-न्येलालवंगानले लोहं पारदभस्मकोऽमृतमथो ताम्रं च कर्षं पृथक् ॥ चूर्णं माषयुगं सुशीतलजलेनासेवितं शूलनुत् गु-ल्मप्लीहमजीर्णमग्निमृदुतामत्यम्लपित्तं जयेत् ॥

अर्थ–शंख, पीरी कौडी, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, हरड, बहेडा, आंवला, लजालू, निमक, सुहागा, सैंधानिमक, रेहका निमक, संचल निमक, गंधक, जीरा, अजमायन और हींग प्रत्येक दो २ तोले लेवे. तथा इलायची, लौंग, चित्रक, लोहभस्म, पारदभस्म, ताम्रभस्म ये प्रत्येक एक २ तोला लेवे. सबको एकत्र करे इस चूर्णमेंसे दो मासे शीतल जलके संग सेवन करे तो शूल, गोला, प्लीहा, अजीर्ण, मंदाग्नि और अम्लपित्त इनको नाश करे ॥

विद्याधराभ्रलोह ।

विडंगमुस्तात्रिफलागुडूचीदंतीत्रिवृच्चित्रकट्वात्रिकैव । प्रत्येकमेषां पिचुभागचूर्णं पलानि चत्वारि च सोमलस्य ॥ गोमूत्रसिद्धस्य पुरातनस्य किट्टस्य देयानि वराटिकायाः । कृष्णाभ्रचूर्णस्य पलं विशुद्धं निश्चंद्रिकं श्लक्ष्णमतीव सूतात् ॥ पादेन कर्षः स्वरसेन खल्वेशिलातले सप्तमुनीदलस्य । संशोष्य पश्चाद्-तिशुद्धगंधपाषाणचूर्णेन पिचून्मितेन ॥ युक्त्या ततः पूर्वरजांसि दत्त्वा सर्पिर्मधुभ्यामिव मर्द्य यत्नात् । निधापयेत्स्निग्धविशुद्ध-भांडे ततः प्रयोज्योस्य रसायनस्य ॥ प्राङ्माषकोवा द्व्यथवा त्रयो वा गव्यं पयो वा शिशिरं जलं वा । पिबेदमुं योग-वरं प्रभूतकालप्रनष्टानलदीपकोऽयम् ॥ योगो निहन्यात्परि-णामशूलं युक्तं तथान्नद्रवसंज्ञकं च । यक्ष्माम्लपित्तं ग्रहणीं प्रवृद्धां जीर्णज्वरं लोहितपित्तकुष्ठम् ॥ नश्यंति चानेन निहंति रोगान्योगोत्तमः सम्यगुपास्यमानः ॥

अर्थ–वायविडंग, नागरमोथा, हरड, बहेडा, आंवला, गिलोय, दंती, निसोथ, चित्रककी छाल, सोंठ मिरच, पीपल और संखियाविष ये प्रत्येक तोला २ लेवे तथा गोमूत्रकी भावना देकर सिद्ध करा हुआ पुराना मंडूर १६ तोले, कौडीकी भस्म

१६ तोले, कृष्णाभ्रकभस्म ४ तोले, पारा १ तोला ये सब पदार्थ शुद्ध करे हुए सबको एकत्र खरल कर अगस्तियाके पत्तोंके रसकी ७ भावना देवे जब सूख जावे तब इसमें १ तोला गंधकका चूर्ण मिलावे और सहत तथा घी इनमें घोटके तैयार कर चिकने पात्रमें भरके धर रखे इसको बलाबल विचारके १-२ अथवा तीन मासे पर्यंत गौके दूधके साथ अथवा शीतल जलसे देवे तो मंदाग्नि, परिणामशूल, अन्नशूल, क्षय, अम्लपित्त, संग्रहणी, जीर्णज्वर, रक्तपित्त, कुष्ठ इनको नाश करे तथा अन्य अनुपानोंके साथ यह योग सेवन करनेसे अनेक रोगोंको नाश करे ॥

पीडारिरस ।

व्योमपारदगंधाश्मजयपालकटंकणम् । वह्निचंडशशिद्वित्रिभागान् जंभांभसा त्र्यहम् ॥ पिष्ट्वा कोलमिता कृत्वा गुडकांजिकतो वटिः । वितरेदामशूलादौ कृमिशूले विशेषतः ॥ पथ्यं तक्रोदनं चात्र स्तंभार्थं शीतलक्रिया ॥

अर्थ—अभ्रकभस्म ३ तोले, पारा १ भाग, गंधक २ तोले, जमालगोटा ३ तोले सुहागा ३ भाग इस प्रकार सबको लेकर तीन दिन पर्यंत जंबीरी नींबूके रसमें खरल करे फिर आधे २ तोलेकी गोली बनावे इसको कांजीसे आमशूल, कृमिशूल इनपर विशेष करके देवे तथा छाछ भात पथ्यमें देवे तथा दस्त होनेके बंद करनेको शीतल क्रिया करनी चाहिये ॥

शुल्बसुंदररस ।

समं ताम्रदलं गृह्य रसेंद्रेण द्विगंधकम् । मृद्वस्त्रेण समावेष्ट्य पटुयंत्रैः पुटे पचेत् ॥ संचूर्ण्य हेमवातारिचित्रकव्योषजैर्द्रवैः । षोडशांशं विषं दत्त्वा चूर्णयित्वास्य वल्लकम् ॥ प्रागुक्तैरनुपानैश्च सद्योवातं च वातजम् । कफजं पक्तिशूलं च हन्याच्छ्रीशिवशासनात् ॥

अर्थ—तामेके कंटकवेधी पत्र १ तोला, पारा १ तोला, गंधक २ तोले ले प्रथम पारे गंधककी कजली करे उसको तामेके पत्रों पर लेप करे जब सूख जावे तब शरावमें निमक भरके बीचमें तामेके पत्र धर ऊपरसे फिर निमक डालके दूसरे सरावसे ढक बंदकर कपडमिट्टी कर देवे और गजपुटमें रखके फूंक देवे जब शीतल हो जावे तब निकालके खरल करे इसमें सब औषधोंका षोडशांश सिंगिया विष डालके धतूरेका

तेल, अंडीका तेल, चित्रकका तेल, सोंठ, मिरच, पीपल इनका काढा इनकी भावना देवे जब सूख जावे तब इसमेंसे २ रत्ती अनुपानके साथ देवे तो सद्योवात, कफरोग, पक्तिशूल इनको नाश करे ऐसी शिवकी आज्ञा है ॥

षण्मुखरस ।

सूतं गंधं समं शुद्धं सूतांशं मृतताम्रकम् । सुवर्चलं च सूतांशं जंबीरैर्दिनसप्तकम् ॥ मर्दयेदातपे तीव्रे रुद्धा लघुपुटत्रयम् । दत्त्वादाय तु तच्चूर्णं सूतांशं त्रिकटुं क्षिपेत् ॥ षण्मुखोऽयं रसो नाम त्रिगुंजः सर्वशूलजित् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, ताम्रभस्म, सज्जीखार ये समान भाग लेवे इनको नींबूके रसकी सात भावना देवे और तीव्र धूपमें रखकर खरल करे जब सूख जावे तब लघुपुट देवे इस प्रकार तीन पुट देवे पश्चात् जितना पारा होवे उतना ही त्रिकुटेका चूर्ण मिलावे इसको षण्मुखरस कहते हैं. यह तीन रत्ती रोगीको देवे तो सर्व शूलके रोगोंको नाश करे ॥

महाशूलहर रस ।

रसं गंधकं टंकणं श्वेतकाचं मलं भारशृंगं रविस्वं वराटम् । बिडं शंबुकं शृंगमेणस्य शंखं रविस्नुक्पयोभिर्दिनं संविमर्द्यम् ॥ शुष्कं तु पश्चाद्विषव्योषयुक्तं मरीचाज्ययुक्तं तु वल्लं ददीत । महा-शूलहर्ता क्षये दुर्निवारो ग्रहण्यां तथा पांडुरोगाग्निमांद्ये ॥

अर्थ-पारा, गंधक, सुहागा, सपेदकांच, कपूर, साबरका सींग, तामेकी भस्म, कौडी-की भस्म, बिडनिमक, छोटे शंखकी भस्म, हरणके सींगकी भस्म, शंखभस्म ये सब समान भाग ले एकत्र कर आकके दूध और थूहरका दूध इनसे एक २ दिन खरल करके सुखायले फिर इसमें सिंगिया विष, सोंठ, मिरच, पीपल इनका चूर्ण मिलायके घीके साथ १ वल्लकी मात्रा रोगीको देवे तो महाशूल, क्षय, संग्रहणी, पांडुरोग और मंदाग्नि इनको नाश करे ॥

त्रिनेत्ररस पक्तिशूलादिकों पर ।

टंकणं हारिणं शृंगं स्वर्णं शुल्बं मृतं रसम् । दिनैकमार्द्रकद्रा-वैर्मर्द्यं रुद्धा पुटे पचेत् ॥ त्रिनेत्राख्यरसस्यैकं माषं मध्वाज्य-कैर्लिहेत् । सैंधवं जीरकं हिंगु मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ॥ पक्ति-शूलहरः ख्यातो मासमात्रान्न संशयः ॥

अर्थ–सुहागा, हरिणके सींगकी भस्म, सोनेकी भस्म, तामेकी भस्म, पारेकी भस्म इन पांच औषधोंको अदरखके रससे एक दिन खरल करके मिट्टीके शरावसंपुटमें रख देवे और कपडमिट्टी करके खाडा खोद, उसमें आरने उपलोंकी सूक्ष्म अग्नि देना, स्वांगशीतल होनेपर बाहर निकाल लेवे. इसको त्रिनेत्ररस कहते हैं यह रस एक मासा प्रमाण सहत और घृत इनके साथ एकत्र करके रोगीको देवे, ऊपर सैंधानिमक, जीरा, भूनी हींग इन तीन औषधोंका चूर्ण घृत और सहतके साथ खरल करके देवे. इस माफ़िक करनेसे एक महीनेमें पक्तिशूल नष्ट होता है. इसमें कुछ संशय नहीं ॥

गजकेसरी ।

शुद्धसूतं द्विधा गंधं यामैकं मर्दयेत् दृढम् । द्वयोस्तुल्यं शुद्धताम्रसंपुटे तन्निरोधयेत् । ऊर्ध्वाधो लवणं दत्त्वा मृद्भांडे धारयेद्भिषक् । ततो गजपुटे पक्त्वा स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥ संपुटं चूर्णयेत्सूक्ष्मं पर्णखंडे द्विगुंजकम् । भक्षयेत्सर्वशूलार्तो हिंगुशुंठीसजीरकम् ॥ वचामरिचजं चूर्णं कर्षमुष्णजलैः पिबेत् । असाध्यं नाशयेत् शूलं रसोऽयं गजकेसरी ॥

अर्थ–शुद्ध करा हुआ पारा एक भाग और गंधक दो भाग दोनों एकत्र कर प्रहरतक खरल करके कजली करे फिर इस कजलीके बराबर शुद्ध कंटकवेधी तांबेके पत्र लेवे. उनका संपुट बनाय उसमें कजली रखकर संपुटको बंद करके एक मिट्टीके गगरेमें आधा निमक भरके बीचमें इस संपुटको रखे ऊपरसे फिर निमक भरके उस पात्रके मुखको दूसरे छोटेसे गगरेसे बंद कर उसकी संधियोंको कपडमिट्टीसे बंद कर गड्ढा खोद आरने उपलोंसे भरके बीचमें इस पात्रको रख देवे और गजपुटकी आंच देवे. जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल संपुटको निकाल बारीक पीस डाले इसको गजकेसरी रस कहते हैं. यह रस दो रत्ती जिस मनुष्यको सर्व प्रकारका शूल हो उसको पानके टुकडेमेंसे खानेको देवे और इसको खायकर उसी वखत इसके ऊपर भूनी हुई हींग १, सोंठ २, जीरा ३, वच ४, काली मिरच ५, इन पांच औषधोंका चूर्ण एक तोला खाय ऊपरसे गरम जल पीवे तो यह रस असाध्य शूलरोगकोभी नाश करे इसमें जो संपुट लिखाहै वह तामेकी डिबियाका नाम है अर्थात् तामेकी डिबियामें पूर्वोक्त कजली भरके इसको बनावे ॥

शूलगजकेसरी।

रसविषगंधकपर्दक्षाराश्च सिंधुपिप्पलीविश्वैः ।
अहिबल्यंबुविघृष्टाः शूलेभहरिर्द्विगुंजोयम् ॥

अर्थ--पारा, गंधक, सिंगियाविष, कौडीकी भस्म, सुहागा, सैंधानिमक, पीपल, सोंठ इनको नागबेलपानके रसमें खरल करे तो यह शूलगजकेसरी रस तैयार हो, इसकी दो रत्तीकी मात्रा रोगीको देवे ॥

गजकेसरी।

क्षारं कपर्द विषसैंधवं च व्योषान्वितं पर्णरसैर्विमर्द्यम् ।
गुंजैकमात्रोनिलजे विकारे पक्त्यामशूले गजकेसरी स्यात् ॥

अर्थ--कौडीकी खार, सिंगिया विष, सैंधानिमक, त्रिकुटा, इनको पानके रसमें खरल कर १ रत्ती रोगीको देवे तो वातशूल, परिणामशूल और आमशूल इनको सिंहके समान नष्ट करे ॥

पथ्यादि रस।

पथ्याटंकणविश्वहिंगुमरिचं वह्निर्बिडं गंधकं तुल्यं सैंधवसंयुतं तु कुचिलं सर्वैः समं संमतम् । शूलाध्मानविबंधगुल्मकसनश्लेष्मामवातापहा जीर्णाध्यास्युदरारुचिस्वरहरी शूलद्विपघ्नी वटी ॥

अर्थ--हरड, सुहागा, सोंठ, हींग, मिरच, चित्रक, बिडनिमक, गंधक और सैंधानिमक ये समान भाग लेवे. तथा सबके समान भाग कुचलाके बीज लेवे सबको एकत्र खरल करे फिर गोली बनायके रोगीको देवे तो शूल, पेटका फूलना, मलकी कठोरता, गोला, खांसी, कफ, आमवात, अजीर्ण, उदर, अरुचि, स्वरभंग और शूल इन सब रोगोंको नाश करनेमें हाथीको सिंहके समान है ॥

परिणामशूलनिदान।

भुक्ते जीर्यति यच्छूलं तदेव परिणामजम् । तस्य लक्षणमप्येतत्समासेनाभिधीयते ॥ बलासः प्रच्युतः स्थानाच्छीतेन सह मूर्च्छितः । वायुमादाय कुरुते शूलं जीर्यति भोजने ॥

अर्थ--आहार पचनेके समय जो शूल होय उसको परिणामशूल कहते हैं. उसका निदान संक्षेपसे कहता हूं, कफ अपना स्थान छोडकर शीतसे संयुक्त हो बढता है वह कफ वायुको साथ लेकर पचनेके समय शूल उत्पन्न करता है ॥

शूलके स्थान।

स कुक्षौ जठरे पार्श्वे नाभ्यां बस्तौ स्तनांतरे । पृष्ठमूलप्रदेशेषु सर्वेष्वेतेषु वा पुनः॥भुक्तमात्रे तथा वापि जीर्णेऽन्ने च प्रशाम्यति । षाष्टिकव्रीहिशालीनां भोजने च विवर्धते ॥ तत्परीणामजं शूलं दुर्विज्ञेयं महागदम् । आहाररसवाहीनां स्रोतसां दुष्टिहेतुकम् ॥

अर्थ–वह शूल कुक्षी, पार्श्व, जठर, नाभि, बस्ती, स्तनांतर, पृष्ठमूल इनमें पृथक् पृथक् उत्पन्न होता है, साठी चावलोंको भक्षण करनेसे वृद्धिगत होता है. यह परिणामशूल अन्नरसवाहिनी नाडियोंको विकार उत्पन्न करता है ॥

वातिकशूलके लक्षण ।

आध्मानाटोपविण्मूत्रनिबंधारतिवेपनैः ।
स्निग्धोष्णोपशमप्रायं वातिकं तद्वदेद्भिषक् ॥

अर्थ–पेटका फूलना तथा पेटमें गुडगुडशब्द, मलमूत्रका अवरोध, अराति (मनका न लगना), कंप यह लक्षण हों और चिकना, गरम, पदार्थसे शांति होय ऐसे शूलको वातिक कहते हैं ॥

पैत्तिकशूलके लक्षण ।

तृष्णादाहारतिस्वेदकट्वम्ललवणोत्तरम् ।
शूलं शीतशमप्रायं पैत्तिकं लक्षयेद्बुधः ॥

अर्थ–प्यास, दाह, चित्तका न लगना, पसीना यह लक्षण होंय तीखा, खट्टा, नोनका ऐसे पदार्थ खानेसे बढनेवाला और शीतपदार्थके सेवनसे शांति होय ऐसे शूल पित्तका जानना ॥

कफजन्य शूलके लक्षण ।

छर्दिहृल्लासंसंमोहं स्वल्परुग्दीर्घसंततिः ।
कटुतिक्तोपशांतं च तच्च ज्ञेयं कफात्मकम् ॥

अर्थ–वमन, ओकारी और संमोह (इन्द्री और मनको मोह) ये लक्षण जिसमें बहुत होंय, पीडा थोडी होय, शूल बहुत दिन रहे, कडुवे और तीखे पदार्थसे शांत होय उस शूलको कफात्मक जानना ॥

द्वंद्वजसान्निपातशूलके लक्षण ।

संसृष्टलक्षणं यच्च द्विदोषं परिकल्पयेत् ।
त्रिदोषजमसाध्यं तु क्षीणमांसबलानलम् ॥

अर्थ-जिसमें दो दोषोंके लक्षण मिले हों उसको द्वंद्वज कहते हैं और तीन दोषोंके लक्षणोंसे त्रिदोषज जानना, मांस बल और अग्नि ये जिसके क्षीण हो गये हों ऐसा शूलरोग असाध्य जानना ॥

शूलके उपद्रव ।

वेदना च तृषा मूर्च्छा आनाहो गौरवारुची ।
कासश्वासौ च हिक्का च शूलस्योपद्रवाः स्मृताः ॥

अर्थ-शूल, श्वास, मूर्च्छा, पेटका फुलना, अंगोंका जकड जाना, अरुचि, खांसी, श्वास, हिक्का ये शूलके उपद्रव जानना ॥

शूलके असाध्यलक्षण ।

एकदोषान्वितः साध्यः कृच्छ्रसाध्यो द्विदोषजः ।
सर्वदोषोत्थितो घोरस्त्वसाध्यो भूर्युपद्रवः ॥

अर्थ-एक दोषका शूलरोग साध्य है, दो दोषोंका कृच्छ्रसाध्य और तीनों दोषोंका भयंकर और बहुत उपद्रवयुक्त होय वह शूल जानना ॥

परिणामशूलकी सामान्यचिकित्सा ।

लंघनं प्रथमं कुर्याद्वमनं च विरेचनम् ।
बस्तिकर्म परं चात्र पक्तिशूलोपशांतये ॥

अर्थ-परिणामशूलके दूर करनेको प्रथम लंघन करे फिर वमन और विरेचन देवे. फिर बास्तिकर्म करे तो परिणामशूल दूर हो ॥

वातादिकों पर सामान्यचिकित्सा ।

वातजं स्नेहयोगेन पित्तजं रेचनादिना । कफजं वमनाद्यैश्च प-
क्तिशूलमुपाचरेत् ॥ द्वंद्वजं स्नेहयोगेन तत्रियोगेन सर्वजम् ॥

अर्थ-वातज परिणाम शूलपर स्नेहन देना, पित्तज शूलपर रेचन करना व कफज शूलपर वमन कराना. व द्वंद्वज शूलपर स्नेहन व सान्निपातशूलके ऊपर वमन व विरेचन और स्नेहन ये तीनों उपचार करावे ॥

त्रिफलादि क्वाथ।

त्रिफलाकृतमालभवं क्वथनं सितया मधुना मिलितं हराति।
तनुदाहयुतास्रकपित्तरुजः किल पित्तजशूलदरं प्रदरम्॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आंवला, अमलतासका गूदा इनके काढेमें सहत और मिश्री डालके देवे तो दाह, रक्तपित्त, पित्तशूल और प्रदर इनको नाश करे॥

वमन।

आकंठं पाययेन्मद्यं क्षीरमिक्षुरसं रसम्।
मदनारिष्टजं क्वाथं सम्यक् पश्चाच्च वामयेत्॥

अर्थ–वमन करानेवाली औषध देनेके प्रथम रोगीको आकंठ पर्यंत मद्य, ईखका रस अथवा दूसरे रसरूप पदार्थ भोजन करायके फिर मैनफल, नीमकी छाल इनका काढा देकर वमन करावे॥

परिणामशूल पर कल्क।

विष्णुक्रांताजटाकल्कः सिताक्षौद्रघृतैर्युतः।
परिणामभवं शूलं नाशयेत्सप्तभिर्दिनैः॥

अर्थ–विष्णुक्रांता (कोयल) की जडका कल्क करके उसमें मिश्री, सहत और घी मिलायके पीवे तो सात दिनमें परिणामशूलको नाश करे॥

शूंठीकल्क।

शूंठीतिलगुडैः कल्कं दुग्धेन सह योजयेत्।
परिणामभवं शूलमामवातं त्र्यहाज्जयेत्॥

अर्थ–सोंठ, तिल और गुड इनका दूधमें कल्क कर पीवे तो परिणामशूल और आमवात इनको नाश करे॥

विरेचन।

त्रिवृता च तथा दंत्या तैलेनैरंडजेन वा।
दत्तं विरेचनं सद्यः पक्तिशूलनिवारणम्॥

अर्थ–निसोथ, जमालगोटा अथवा अंडीका तेल इनसे कराया हुआ जुल्लाब तत्काल परिणामशूलका नाशक है॥

वमन।

पीत्वा तु क्षीरमाकंठं मदनक्वाथसंयुतम्। कांतारकस्य पौंड्र-

स्य कोशकारस्य वा रसम् ॥ कषायं वाथ निंबस्य कटुतुंबीरसं तथा । तथाविधि वमेद्धीमान् पक्तिशूलार्दितो जनः ।

अर्थ-दूधको मैनफलके काढेमें मिलायके कंठपर्यंत पीवे अथवा ईखके रसमें मैन-फलका काढा मिलायके पीवे अथवा नींबका रस अथवा कडुई तुंबीका रस पीके विधि-पूर्वक वमन करे तो परिणामशूल शांत होय ॥

गुडादिचूर्ण ।

पक्तिशूलं जयत्याशु गुडार्द्रतिलमोदकः । हिंग्वाभयं वचो वेल्लं पीतमुष्णांबुना जयेत् ॥ आनाहशूलहृद्रोगविषूचीगुल्ममारुतान् ॥

अर्थ-गुड, अदरख, नील इनका लड्डू परिणाम शूलका नाशक है. हींग, हरड, वच, वायविडंग इनका चूर्ण गरम जलके साथ पीवे तो अफरा, शूल, हृदयरोग, विषूचिका और वायगोला इनको नाश करे ॥

सामुद्रादिचूर्ण ।

सामुद्रं सैंधवं क्षारौ रुहकं रोमकं बिडम् । दंता लोहरजः किट्ट त्रिवृत्सूरणकं समम् ॥ वृद्धिगोमूत्रपयसा मंदपावकपाचितम् । तद्यथाग्निबलं चूर्णं पिबेदुष्णेन वारिणा ॥ जीर्णे जीर्णे च भुंजीत मांसादिघृतसाधितम् । नाभिशूलं च हृच्छूलं गुल्मं प्लीहकृतं जयेत् ॥ विद्रध्यष्ठीलजं हंति कफवातोद्भवं तथा । अन्नद्रवं जरयितुमजीर्णं ग्रहणीमपि ॥ शूलानामपि सर्वेषामौषधं ना-स्त्यतः परम् । परिणामसमुत्थस्य विशेषणांतकं मतम् ॥

अर्थ-समुद्रका निमक, सैंधानिमक, जवाखार, सुहागा, संचर निमक, रोमकनिमक, बिड निमक, दंती, लोहभस्म, मंडूरभस्म, निसोथ, जमीकंद, दही, गोमूत्र और दूध ये सब एकत्र कर मंदाग्निसे परिपक्व करे तैयार होने पर बलाबल विचार इसकी मात्रा गरम जलके साथ सेवन करे और भोजन करे हुएके उत्तम पचनेपर मांस, घी, दही इत्यादिक भक्षण करे तो नाभिशूल, हृदयशूल, गोला, प्लीहासे उत्पन्न हुआ शूल विद्रधि, अष्ठीला, कफवात, अन्नद्रव, जरत्पित्त, अजीर्णसे ग्रहणी इनसे उत्पन्न शूल इन सब शूलोंको नाश करे इसके सिवाय शूलनाशक दूसरी औषध नहीं है परिणाम-शूलको तो विशेष करके नाश करे है ॥

इंद्रवारुण्यादि चूर्ण ।

इंद्रवारुणिकामूलं कटुत्रयसमान्वितम् ।
नरोंऽबुना हरेत्पीतं शूलमत्यंतदुःसहम् ॥

अर्थ–इन्द्रायनकी जडको जलमें मिलाय और उसमें सोंठ, मिरच, पीपल इनका चूर्ण डाले फिर इसको पीवे तो अत्यंत दुःसह शूलको नाश करे ॥

एरंडादिभस्म योग ।

एरंडवह्निशंबूकवर्षाभूगोक्षुरं समम् ।
अंतर्दग्ध्वा पिबेदद्भिरुष्णाभिः शूलशांतये ॥

अर्थ–अंडकी जड, चित्रक, छोटा शंख, पुनर्नवा, गोखरू ये समान भाग लेवे इनको संपुटमें जलायके भस्म करले इस भस्मको गरम जलके साथ पीवे तो शूल दूर होय ॥

पिप्पल्यादि योग ।

समागधिगुडं सर्पिः प्रस्थं क्षीरं चतुर्गुणम् ।
पक्कं पीत्वा जयत्याशु पक्तिशूलं समुद्धतम् ॥

अर्थ–पीपल, गुड इनको डालके ६४ तोले घी, २५६ तोले दूधमें पक्क करे. जब सिद्ध हो जावे तब बलाबल विचारके देवे तो घोर उद्धत परिणामशूल तत्काल नाश होय ॥

त्रिपुरभैरवरस ।

भागो रसस्य भागश्च हेम्नः पिष्टं विधाय च । तथा द्वादश भागानि ताम्रपत्राणि लेपयेत् ॥ ऊर्ध्वाधो गंधकं दत्त्वा पलमात्रं समंततः । क्षारस्य मृगशृंगस्य चूर्णं योज्यं समंततः ॥ सिंचेन्मस्याक्षिनीरेण रुद्ध्वा यामचतुष्टयम् । पचेच्छूलहरः सूतो भवेत्रिपुरभैरवः ॥ माषो मध्वाज्यसंयुक्तो देयोऽस्य परिणामजे । अन्येष्वेरंडतैलेन कटुत्रययुतो हितः ॥

अर्थ–पारा २ भाग, सुवर्णका चूर्ण १ भाग दोनोंकी कजली करके बारह भाग तांबेके कंटकवेधी पत्रोंपर इस कजलीका लेप कर देवे. फिर ऊपर नीचे और चारों तरफ ४ तोले गंधकका चूर्ण बिछाय देवे, फिर जवाखार हिरणके सींग इनके

चूर्णको उसके ऊपर डालके फिर ब्राह्मीका रस अथवा मछेलीका रस उसके ऊपर छिडकके उस पात्रके मुखको बंद करके चार प्रहरकी प्रचंड अग्नि देवे तो यह शूलनाशक त्रिपुरभैरवरस सिद्ध होवे. यह उडदके बराबर सहत और घीके साथ देवे तो परिणामशूलको नाश करे अन्य शूलोंपर अंडीका तेल और त्रिकुटाके चूर्णके साथ देवे ॥

शूलदावानलरस ।

शुद्धसूतं विषं गंधं पलांशं मर्दयेत् दृढम् । मरीचं पिप्पली शुंठी हिंगु सौवर्चलद्वयम् ॥ पलाष्टकं पटूनां च चिंचाक्षारं पलाष्टकम् । सप्तवारं शङ्खभस्म जंबीराम्ले निषेचयेत् ॥ पलाष्टकं च संयोज्यं तत्सर्वं निंबुकद्रवैः । दिनं मर्द्यं कोलमात्रं भक्षयेत्सर्वशूलनुत् ॥ अजीर्णोदरमंदाग्निमसाध्यमपि साधयेत् । शूलदावानलाख्योयं रसोजीर्णादिरोगहा ॥

अर्थ—पारा, गंधक, सिंगियाविष प्रत्येक चार २ तोले और मिरच, पीपल, सोंठ हींग, संचर निमक प्रत्येक ८ तोले निमक ३२ तोले इमलीका खार ३२ तोले और शंखभस्म ३२ तोलेको गरम कर नींबूके रसमें बुझावे, फिर सब औषधोंको एकत्र कर नींबूके रसमें एक दिन खरल करके बेरके बराबर गोली बनाय भक्षण करे यह अजीर्ण, उदररोग, मंदाग्नि इन असाध्य रोगोंको भी दूर करे है इसे शूलदावानलरस कहते हैं ॥

परिणामशूलपर मंडूर ।

लोहकिट्टं पलान्यष्टौ गोमूत्राढकिके पचेत् ।
परिणामभवं शूलं सद्यो हंति न संशयः ॥

अर्थ—लोहेकी कीटीकी भस्म ३२ तोलेको २५६ तोले गोमूत्रमें औटावे फिर इसको बलाबल देखके देवे तो परिणामशूलको तत्काल नष्ट करे ॥

तारमंडूर ।

विडंगं चित्रकं चव्यं त्रिफला त्र्यूषणानि च । नवभागानि चैतानि लोहकिट्टसमानि च ॥ गोमूत्रं त्रिगुणं दत्त्वा मूत्रात् द्विगुणतो गुडः । शनैर्मृद्वग्निना पक्त्वा सुसिद्धं पिंडितां गतम् ॥ स्निग्धभांडे विनिक्षिप्य भक्षयेत्कोलमात्रया । प्राङ्मध्यांतक-

मेणैव भोजनस्य प्रयोजितः ॥ योगोऽयं शमयत्याशु पक्तिशूलं सुदारुणम् । कामलां पांडुरोगं च शोथं मेदोनिलार्शसी ॥ शूलार्तानां कृपाहेतोस्तारया प्रकटीकृतः ॥

अर्थ–वायविडंग, चित्रक, चव्य, त्रिफला, त्रिकुटा ये सब समान भाग लेवे और इन सबकी बराबर लोहकी कीटीकी भस्म लेवे और सबसे दुगुना गोमूत्र लेवे तथा गोमूत्रसे दुगुना गुड लेवे सबको एकत्र कर मंदाग्नि पर पचावे जब गोलासा बंधने लगे तब उतारके इसको किसी चिकने बासनमें भरके रख देवे इसमेंसे छः मासे भोजन करनेके प्रथम अथवा भोजन करनेके पश्चात् खावे तो घोर दारुण पक्तिशूल शांत करे. उसी प्रकार कामला, पांडुरोग, शोथ, मेद, बवासीर इनको नाश करे यह शूलार्त्त मनुष्योंपर कृपा करके ताराभगवतीने प्रगट करा है ॥

भीममंडूर ।

यवक्षारकणा शुंठी कोलग्रंथिकचित्रकौ । प्रत्येकं पलमादाय प्रस्थं लोहस्य किट्टतः ॥ शनैः पचेदयःपात्रे यावद्दर्वीप्रलेपनम् । दत्त्वाष्टगुणगोमूत्रं किट्टात् शुद्धाद्विचक्षणः ॥ ततोक्षमात्रान्वटकान् योजयेत्सप्तरात्रतः । आदिमध्यावसानेषु भोजनस्योचितस्य वै ॥ स भीमवटको ह्येष परिणामरुगंतकः ॥

अर्थ–जवाखार, पीपल, सोंठ, मिरच, पीपरामूल, चित्रक ये चार २ तोले लेवे मंडूरभस्म ६४ तोले सबको लोहपात्रमें ५९२ तोले गोमूत्र डालके पचावे जब कलछीसे चिमटने लगे तब उतारके एक २ तोलेकी गोली बनावे इसको भोजनके प्रथम अथवा मध्यमें किंवा अंतमें खाय इस प्रकार सात दिन सेवन करनेसे परिणामशूलको नाश करे इसको भीमवटक इस प्रकार कहते हैं ॥

लोहगुग्गुलु ।

त्रिफला मुस्तकं व्योषं विडंगं पौष्करं वचा । चित्रकं मधुकं चैव पलांशं श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ अयोभस्म पलान्यष्टौ गुग्गुलुस्तावदेव तु । सर्पिषा मेलयित्वाथ कर्षमात्रं वटीकृतम् ॥ अद्यादनुपिबेत्कोष्णं वारि शूलाद्विमुच्यते । जीर्णान्नसंभवात्पांडोः कामलाया हलीमकात् ॥

अर्थ-त्रिफला, नागरमोथा, त्रिकुटा, वायविडंग, पुहकरमूल, वच, चित्रक, मुलहठी इस प्रकार प्रत्येक चार २ तोले ले लोहभस्म ३२ तोले, गूगल ३२ तोले सबको घीमें मिलाय एक २ तोलेकी गोली बनावे गरम जलके साथ भक्षण करे तो परिणामशूल, पांडुरोग, कामला, हलीमक इन रोगोंसे छूट जावे ॥

नारिकेलक्षार ।

नारिकेलं सतोयं च लवणेन सुपूरितम् । मृदा च वेष्टितं शुष्कं पक्वं गोमयवह्निना ॥ पिप्पल्या भक्षितं हंति शूलं हि परिणामजम् । वातिकं पैत्तिकं वापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥

अर्थ-जलसमेत सब नारियल ले उसके मुखपर छिद्र करके उसमें निमक भर देवे फिर उसके मुखको बंद कर ऊपरसे मिट्टी लगायके सुखाय ले फिर आरने उपलोंकी अग्निमें पकाय लेवे जब परिपक्व हो जावे तब निकालके बारीक पीस डाले और पीपलके चूर्णके साथ यथाशक्ति इसको भक्षण करे तो परिणाम शूल, वात, पित्त, संनिपात इनसे उत्पन्न हुए शूलोंको नाश करे ॥

पथ्याद्य लोह ।

पथ्या लोहरजः शुंठी तच्चूर्णं मधुसर्पिषा ।
परिणामभवं हंति वातपित्तकफात्मकम् ॥

अर्थ-हरड और सोंठ इनके चूर्णमें लोहभस्म मिलायके सहतके साथ सेवन करे तो त्रिदोषजन्य परिणामशूलको नाश करे ॥

लोहादिलेह ।

लोहस्य रजसो भागास्त्रिफलायास्तथा त्रयः । गुडस्याष्टौ तथा भागा गुडान्मूत्रं चतुर्गुणम् ॥ एतत्सर्वं च विलिहेद्गुडपाकविधानतः । लिहेच्चैव यथाशक्ति क्षये शूले च पाकजे ॥

अर्थ-लोहभस्म १ भाग, त्रिफला ३ भाग, गुड ८ भाग और गोमूत्र गुडसे चौगुना लेवे इन सबको एकत्र करके गुडपाकके समान पाक करे जब इसकी अवलेह बन जावे तब रोगीका बलाबल विचारके देवे तो क्षय अपक्वशूल इनको नाश करे ॥

कृष्णाद्य लोह ।

कृष्णाभयालोहचूर्णं विलिहेन्मधुसर्पिषा ।
परिणामभवं शूलं सद्यो हंति सुदारुणम् ॥

अर्थ–पीपल, हरड, लोहभस्म इनका चूर्ण सहत और घीसे मिलायके देवे तो तत्काल दारुण परिणामशूलको नाश करे ॥

कृष्णादि लोह ।

कृष्णाभयालोहचूर्णं गुडेन सह भक्षयेत् ।
पक्तिशूलं निहंत्याशु जठराण्याग्निमंदताम् ॥

अर्थ–पीपल, हरड, लोहभस्म इनको समान भाग ले गुडमें मिलायके देवे तो पक्तिशूल, उदर और मंदाग्नि इनको नाश करे ॥

शंबूकादि गुटिका ।

शंबूकमूषणं चैव पंचैव लवणानि च । समांशैर्गुटिकां कृत्वा कलंबुकरसेन वा ॥ प्रातर्भोजनकाले वा भक्षयेत्तु यथाबलम् । शूलाद्विमुच्यते जंतुः सहसा परिणामजात् ॥

अर्थ–छोटे शंखकी भस्म, काली मिरच, निमक, सुहागा, सैंधा निमक, बिड निमक, संचर निमक ये समान भाग लेके कलंबूक नामकी औषधीके रसमें घोटके गोली बनाय लेवे. इसमेंसे प्रातःकाल अथवा भोजनके समय यथाशक्ति खाय तो परिणामशूलसे मुक्त होवे ॥

चतुःसमलोह ।

गंधं ताम्रं रसं लोहं प्रत्येकं मारितं पलम् । सर्वमेतत्समाहृत्य विपचेत् कुशलो भिषक् ॥ आज्ये पलद्वादशके दुग्धे शतपले वरे । पक्त्वा तच्च क्षिपेच्चूर्णं संपूतं घनतां व्रजेत् ॥ विडंगत्रिफलावह्नित्रिकटूनां तथैव च । क्षिप्त्वा पलोन्मितानेतान्यथा संमिश्रतां नयेत् ॥ ततः पिष्ट्वा शुभे भांडे स्थापयेच्च विचक्षणः । आत्मनः शोभने घस्रे पूजयित्वा रविं गुरुम् ॥ घृतेन मधुना मर्द्यं भक्षयेन्माषसंमितम् । अष्टौ माषक्रमाद्यावन्मात्रासंस्थं भवेत्ततः ॥ अन्नपानं च दुग्धेन नारिकेलोदकेन वा । जीर्णशाल्यन्नमुद्गाश्च सिता मांसरसादयः ॥ रसोनमविरुद्धानि पलान्नान्यपि भक्षयेत् । हृच्छूलं पार्श्वशूलं च सामवातं कटिग्रहम् ॥ गुल्मशूलं च सर्वं च यकृत्प्लीहान्विशेषतः ।

अग्निमांद्यं क्षयं कुष्ठं श्वासं कासं विचर्चिकाम् ॥ अश्मरी मूत्रकृच्छ्रं च योगेनानेन शाम्यति ॥

अर्थ-गंधक, तामेकी भस्म, पारेकी भस्म, लोहेकी भस्म प्रत्येक पल पल अर्थात् चार २ तोले लेय इन सबको एकत्र करके ४८ तोले घी और ४०० तोले दूधमें डालके औटावे फिर वायविडंग, त्रिफला, चित्रक, त्रिकुटा इन प्रत्येकका चार २ तोले चूर्ण उस पाकमें डालके मिलाय देवे. फिर पाक हो जावे तब उतारके उत्तम पात्रमें भरके धर देवे और शुभ लग्न मुहूर्त्तमें सूर्य, गुरुकी पूजा करके सहत घृत इनके साथ उडदके प्रमाण सेवन करे और नित्य एक २ उडद् बढावे इस प्रकार आठ उडद पर्यंत बढावे अनुपान दूधके साथ अथवा नारियलके जलके साथ सेवन करे, तथा पुराने चावलोंका भात, मूंग, सक्कर, मांसरस और दूसरे अविरुद्ध फल, अन्न, मंदाग्नि, क्षय, कुष्ठ, श्वास, खांसी, विचार्चिका, पथरी, मूत्रकृच्छ्र इतने रोग इस योगसे शांत होवें ॥

विडंगादि मोदक।

विडंगं तंडुलं व्योषं त्रिवृद्दंतिसचित्रकम् । सर्वाण्येतानि संहृत्य सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ गुडेन मोदकान्कृत्वा भक्षयेत्प्रातरुत्थितः । उष्णोदकानुपानेन दद्यादग्निविवर्धने ॥ जयेत्त्रिदोषजं शूलं परिणामसमुद्भवम् ॥

अर्थ-वायविडंग, चौलाई, त्रिकुटा, निसोथ, दंती, चित्रक इन सबका चूर्ण कर उसमें गुड डालके लड्डु बनाय लेवे प्रातःकाल खाय तो त्रिदोषशूल, परिणामशूल इनको नाश करे और अग्निको प्रदीप्त करनेके वास्ते इसे गरम जलके साथ सेवन करे ॥

तिलादिवटी।

तिलनागरपथ्यानां भागं शंबूकभस्मनाम् । द्विभागगुडसंयुक्तं वटीं कृत्वाक्षभागिकाम् ॥ शीतांबुना पिबेत् प्रातर्भक्षयेत् क्षीरभोजनम् । सायाह्ने रसकं पीत्वा नरो मुच्येत दुर्जरात् ॥ परिणामसमुत्थाच्च शूलाच्चिरभवादपि ॥

अर्थ-तिल, सोंठ, हरड, शंखकी भस्म सब समान भाग ले तथा गुड दो भाग डालके एक २ तोलेकी गोली बनावे इस गोलीको शीतल जलके साथ प्रातःकाग

में सेवन करे तथा दूधभात भोजन करे और सायंकालमें रस पीवे तो दुर्जर और बहुत दिनका परिणामशूल दूर होवे ॥

खंडामलकरस।

सुपीडितं च कूष्मांडं तुलार्धं भ्रष्टमाज्यतः। प्रस्थार्धं खंडतुल्यं तु पचेदामलकीरसम् ॥ प्रस्थं सुस्विन्नकूष्मांडरसं प्रस्थं पुटे पचेत्। दर्व्या लेपगते तस्मिन् चूर्णीकृत्य विनिक्षिपेत् ॥ द्वे द्वे पले कणालाजिशुंठीनां मरिचस्य च। पलं तालीसधान्याक-चातुर्जातकमुस्तकम् ॥ कर्षप्रमाणं प्रत्येकं प्रस्थार्धं माक्षिकस्य च। पक्तिशूलं निहंत्येतदोषत्रयभवं च यत् ॥ छर्द्यम्लपित्तं मूर्च्छां च कासश्वासावरोचकम्। हृच्छूलं रक्तपित्तं च पृष्ठशूलं च नाशयेत् ॥ रसायनमिदं श्रेष्ठं खंडामलकसंज्ञकम् ॥

अर्थ–२०० तोले पेठेके बारीक टुकडे कर और धोयके खूब दाबके निचोड डाले फिर उसको घीमें भून लेवे फिर आमलेका रस ३२ तोले, मिश्री ३२ तोले और पेठे-का रस ६४ तोले सबको एकत्र कर पचावे जब कलछीसे चिपटने लगे तब इसमें पीपल, जीरा, सोंठ ये आठ २ तोले, काली मिरच ४ तोले तथा तालीसपत्र, धनिया, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, नागरमोथा ये प्रत्येक एक २ तोला, सहत ३२ तोले सबको मिलायके सिद्ध कर लेवे, यह खंडामलकरस रसायन त्रिदोषज, पक्तिशूल, वांति, अम्लपित्त, मूर्च्छा, खांसी, श्वास, अरुचि, हृदयका शूल, रक्तपित्त इन सबको नाश करे ॥

जीर्णशूलपर गुड।

उटिंटीं शिग्रुमूलं च मयूरं सैंधवं समम्।
द्विगुडं जीर्णशूलं च यात्येतच्चूर्णभक्षणात् ॥

अर्थ–ऊटंकटेरी, सहजनेकी जड, सपेद ओंगा, सैंधानिमक ये समान भाग लेकर चूर्ण करे तथा चूर्णसे दुगुना गुड मिलावे इसको भक्षण करे तो अजीर्णसे उत्पन्न हुए शूलको नाश करे ॥

योगांतर।

भूमितर्वटमूलं च शूलजित्कोष्णवारिणा।
सद्योद्भवं हरेत् शूलं लवणं चारनालकम् ॥

घृतेन सैंधवं वाथ उष्णतोयैः सुवर्चलम् ॥

अर्थ-भूइतरवडकी जडके चूर्णको गरम जलके साथ देवे अथवा निमक कांजी अथवा घी, सैंधव अथवा गरम जलसे संचर निमक पीवे तो तत्काल शूलको नाश करे ॥

शंबूकभस्मयोग ।

शंबूकजं भस्म पीतं जलेनोष्णेन तत्क्षणात् ।
पक्तिजं विनिहंत्याशु शूलं विष्णुरिवासुरान् ॥

अर्थ-छोटे शंखकी भस्मको गरम जलके साथ पीवे तो तत्क्षण पक्तिशूलको नाश करे ॥

नाभि पर मदनादि लेप ।

मदनस्य फलं तिक्तां पिष्टं तिक्तं च वारिणा ।
कोष्णं कुर्यान्नाभिलेपं शूलशांतिर्भवेत्ततः ॥

अर्थ-मैनफल, कुटकी इनको जलमें पीसके कुछ गरम कर नाभिपर लेप करे तो शूलको दूर करे ॥

रसादि लेप ।

रसं गंधं विषं म्लेच्छं मणिमंथं च टंकणम् । सौराष्ट्रं मरिचं नागं हरितालं मनःशिलाम् ॥ जेपालं कौशिकं तुत्थं नवसारं पृथक् समम् । एतत्सर्वं क्षिपेत्खल्वे आरनालेन पेषयेत् ॥ उदरे लेपनं कुर्याच्छीघ्रतः सर्वशूलजित ॥

अर्थ-पारा, गंधक, सिंगिया विष, ताम्रभस्म, सैंधानिमक, सुहागा, फिटकरी, काली मिरच, शीशेकी भस्म, हरताल, मनसिल, जमालगोटा, गूगल, लीलाथोथा, नोसदर ये प्रत्येक समान भाग ले. खरलमें कांजीसे घोटे. फिर इसका पेटपर लेप करे तो सर्व शूलोंका नाश करे ॥

शतपुष्पादि लेप ।

शतपुष्पसुरद्रुदिनेशपयोगदरामठसिंधुभवं हरति ।
अपि लेपस्थितोऽस्थिगतं कटिशूलं संधिभवं त्रिदिनात्सततम् ॥

अर्थ-सौंफ, देवदारु, आकका दूध, कूठ, हींग और सैंधानिमक, इनका पेटपर लेप करे तो उदरशूल, कमरका शूल और संधिशूल इनको नाश करे ॥

कुबेराक्षयोग।

एक एव कुबेराक्षो हंति शूलशतत्रयम्।
किं पुनर्लशुनोपेतः सैंधवेन च हिंगुना॥

अर्थ–एक ही लताकरंज तीन सौ शूलोंका नाश करे यदि उसमें लहसन, सैंधानिमक और हींग मिलायके सेवन करे तो फिर क्याही कहना है॥

क्षारयोग।

वंध्या लांगलिकामूलं शेषं च द्विगुणं तयोः। त्रयाणां भावयेच्चूर्णं त्र्यहं जंबीरजद्रवैः॥ रुद्ध्वा गजपुटे पाच्यं तत्क्षारं मरिचैर्घृतैः। कर्षमात्रं पिबेच्छूलात्तत्क्षणान्मुक्तिमाप्नुयात्॥

अर्थ–वंध्याककोडा, कलयारी दोनों समान भागले सोंफ २ भाग इन तीनोंका चूर्ण कर उसको तीन दिन नींबूके रसकी भावना देवे, फिर इस क्षारको निकालके काली मिरच और घी इनसे १ तोला देवे तो तत्क्षण शूलसे मुक्त होवे॥

खंडपिप्पली।

कणाचूर्णं तु कुडवं षट्पलं हविषस्तथा। पलं षोडशकं खंडं शतावर्याः पलाष्टकम्॥ क्षीरप्रस्थद्वये सार्धं लेहीभूते तदुद्धरेत्। त्रिजातमुस्तधान्याकं शुंठी मांसी द्विजीरकम्॥ अभयामलकं चैव चूर्णं द्वादशकार्षिकम्। तदर्धं मरिचं भागं सारं खादिरमेव च॥ मधुत्रिफलसंयुक्तं खादेत्सिद्धं यथाबलम्। शूलारोचकहृल्लासच्छर्दिपित्ताम्लरोगनुत्॥ अग्निसंदीपनी हृद्या खंडपिप्पलिका मता॥

अर्थ–पीपलका चूर्ण ६४ तोले, घी २४ तोले, मिश्री ६४ तोले, शतावार ३२ तोले, दूध १६० तोले सबको एकत्र कर मंदाग्निपर पक्व करे जब गाढा हो जावे तब उतारके उसमें दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागरमोथा, धनिया, सोंठ, जटामांसी, कालाजीरा, सपेदजीरा, हरड, आंवला ये प्रत्येक १२ तोले चूर्ण ले और कालीमिरच, खैरसार, सहत, हरड, बहेडा, आंवला इन प्रत्येकका चूर्ण छः छः तोले ले इन सबको मिलायके सिद्ध करे यह सिद्ध हुई औषध बलाबल देखके भक्षण करे तो शूल, अरुचि, हल्लास, वमन, अम्लपित्त इनको नाश करे इस औषधको खंडपिप्पली कहते हैं. यह अग्निदीपक और हृद्य है॥

मातुलुंगादि घृत।

घृताच्चतुर्गुणो देयो मातुलिंगरसो दधि। शुष्कमूलककोलाम्लकषायो दाडिमांभसा ॥ विडंगं लवणं क्षारं पंचकोलयवानिभिः॥ पाठामूलककल्केन सिद्धं शूले घृतं मतम् ॥ हृत्पार्श्वशूलं वै श्वासं कासं हिक्कां तथैव च। वर्ध्मगुल्मप्रमेहार्शान्वातव्याधींश्च नाशयेत् ॥

अर्थ-घी १ भाग और बिजोरेका रस ४ भाग, दही १ भाग, सूखी मूली, बेर, बिजोरे इनका काढा एक भाग, अनारका रस १ भाग, वायविडंग, सैंधानिमक, सुहागा, सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, चित्रक, आजमायन, पाढ, मूली इनका चूर्ण १ भाग इस प्रकार लेकर सिद्ध करा हुआ घी हृदय, कूख इन स्थानका शूल, श्वास, खांसी, हिचकी, बद, गोला, प्रमेह, बवासीर, वातव्याधि, सामान्यशूल इनको नाश करे ॥

तैल।

नारायणेन तैलेन बस्तिकर्म हितं तथा ॥

अर्थ-संपूर्ण शूलोंपर नारायणतैलसे बस्तीकर्म करे तो शूल नष्ट होय ॥

अन्नद्रवशूलनिदान।

जीर्णे जीर्यत्यजीर्णे वा यच्छूलमुपजायते।
पथ्यापथ्यप्रयोगेण भोजनाभोजनेन वा ॥
न शमं याति नियमात्सोन्नद्रव उदाहृतः ॥

अर्थ-भक्षण करा हुआ अन्न जीर्ण होकर वा जीर्ण होनेके समय जो शूल उत्पन्न होता है वह पथ्य करनेसे वा पथ्य न करनेसे अथवा भोजन करनेसे वा भोजन न करनेसे जो शूल शांत नहीं होता उसको अन्नद्रवशूल कहते हैं ॥

अन्नद्रवशूलके लक्षण।

अन्नद्रवाख्ये शूले तु न तावत्स्वास्थ्यमश्नुते।
यावत्कटुकपीताम्लमन्नं न च्छर्दयेत् द्रवम् ॥

अर्थ-अन्नद्रवसे जो शूल उत्पन्न भया वह शूल जबतक कटु, पीत, अम्ल ऐसे पदार्थोंका वमन नहीं हुआ तबतक रोगीके चित्तको स्वस्थता नहीं देता॥

वमन-विरेचन ।

जातमात्रे जरत्पित्ते शूलमाशु विनाशयेत् ।
पित्तांतं वमनं कृत्वा कफांतं च विरेचनम् ॥

अर्थ–जीर्ण पित्तसे जो शूल होता है वह तत्काल नाश करे है इसवास्ते पित्त जब-तक गिरे तबतक वमन करावे और कफ निकले पर्यंत विरेचन कराना चाहिये ॥

सामान्ययत्न ।

अन्नद्रवे च तत्कार्यं जरत्पित्ते यदीरितम् ।
जरत्पित्ते तु तत्पथ्यं प्रोक्तमन्नद्रवे तु यत ॥
आमपक्काशये शुद्धे गच्छेदन्नद्रवः शमम् ॥

अर्थ–अन्नद्रवशूल पर वो उपचार करने चाहिये जो जरत्पित्त पर कहे और जरत्पित्त शूल पर वो पथ्य करे जो अन्नद्रवशूल पर कही है. आमाशय और पक्काशयके शुद्ध होनेसे अन्नद्रव शूल शांत होय ॥

माषेंडरी ।

माषेंडरीं सलवणां सुस्विन्नां तैलपाचिताम् ।
तादृशीं सर्पिषा खादेदन्नद्रवनिपीडितः ॥

अर्थ–उडदके बडे सैंधानिमक मिलायके नरम तेलपकोंको घीके साथ खाय तो अन्नद्रव शूल नाशक है ॥

धात्रीलोह ।

धात्रीफलभवं चूर्णमयश्चूर्णसमन्वितम् ।
यष्टीचूर्णेन वा युक्तं लिह्यात्क्षौद्रेण तद्गते ॥

अर्थ–आंवलेके चूर्णके साथ अथवा मुलहठीके चूर्णके साथ लोहभस्म सहतमें मिलायके खावे तो अन्नद्रवशूल शांत होय ॥

पायस ।

श्यामाकतंडुलैः सिद्धं सिद्धं कोद्रवतंडुलैः ।
प्रियंगुतंडुलैः सिद्धं पायसं सहितं हितम् ॥

अर्थ–सामाखिया या कोदों अथवा कांगनी इनके चावल डालके बनाइ हुई खीर अन्नद्रवशूल पर हितकारी है ॥

अन्न ।

गौडिकं सौरणं कंदं कूष्मांडमपि भक्षयेत् ।
कलाययवसक्तून्वा सक्तून्वा जलसंभवान् ॥

अर्थ-ईख, जमीकंद, पेठा, मटर, जौका सत्तू इनके चून अथवा खीलोंका चून इतने पदार्थ सेवन करनेसे हितकारी होवें ॥

अन्न ।

कुलित्थसक्तूनथवा दध्नाद्यादधिकं वचा ।
चणकानामथो सक्तून् कोद्रवस्यौदनं तथा ॥

अर्थ-कुलथीका चूर्ण अथवा वचका चूर्ण अथवा चनेके चूनको अथवा कोदोंका भात दहीके साथ खाय तो अन्नद्रवशूलको नाश करे ॥

अन्न ।

गोधूमं मंडलं तत्र सर्पिषा गुणसंयुतम् ॥
सक्षितं शीतदुग्धेन मृदितं क्वथितं हितम् ॥

अर्थ-गेहूंका चूर्ण घी, गुड डालके पकावे अथवा दूध और खांड डालके मसलकर पचावे. फिर इसको एक मंडल ४८ दिन पर्यंत सेवन करे तो अन्नद्रवशूलों पर हितकारी होय ॥

सामान्यचिकित्सा ।

अन्नद्रवो दुश्चिकित्स्यो दुर्विज्ञेयो महागदः ।
तस्मात्तस्य प्रशमने परं यत्नं समाचरेत् ॥

अर्थ-अन्नद्रवशूल घोर दुर्घट और परीक्षा करनाभी काठिन है. इसी कारण इसके शांति करनेके वास्ते बडा भारी यत्न करना चाहिये ॥

सामान्यचिकित्सा ।

अन्नद्रवे जरत्पित्ते वह्निर्मंदो भवेद्यतः ।
तस्मादत्रान्नपानानि मात्राहीनानि कारयेत् ॥

अर्थ-अन्नद्रव और जरत्पित्त इन दोनोंमें अग्नि मंद होती है इसीवास्ते इस रोगमें जहांतक रोगीसे हो सके तहांतक थोडा भोजन करावे ॥

भक्षण ।

कलाययवगोधूमाः श्यामाकाः कोरदूषकाः । राजमाषाश्च मा-

षाश्च कुलित्थाः कंगुशालयः ॥ दधि लुप्तरसं क्षीरं सर्पिर्गव्यं समाहिषम् । वास्तुकं कारवेल्लं च कर्कोटकफलानि च । बर्हिणो हरिणा मत्स्यरोहिताद्याः कपिंजलाः । एतस्मिन्नामये शस्ता मता मुनिचिकित्सकैः ॥

अर्थ-मटर, जौ, गेहूँ, सामखिया, कोदों, चौरा, उडद, कुलथी, कांगनी, साली चावल, दही, मथा हुआ दूध, गौका घी, भैंसका घी, बथुआ, करेला, ककोडा, मोर, हिरण, रोहितादिक मछली, सपेद तीतर ये पदार्थ अन्नद्रवशूल पर उत्तम मुनिवैद्योंके मान्य हैं ॥

गुडमंडूर ।

गुडामलकपथ्यानां चूर्णं प्रत्येकशः पलम् । त्रिपलं लोहकिट्टं स्यात्तत्सर्वं मधुसर्पिषा ॥ समालोडच समश्नीयादक्षमात्रं प्रमाणतः । आदिमध्यावसानेषु भोजनस्य निहंति तत् ॥ अन्नद्रवं जरत्पित्तमम्लपित्तं सुदारुणम् । परिणामसमुत्थं च शूलं संवत्सरोत्थितम् ॥

अर्थ-गुड, आंवले, हरड इनका चूर्ण प्रत्येक चार तोले, लोहकीटकी भस्म १२ तोले लेकर सहत और घीमें मिलायके उसमेंसे १ तोलेके अनुमान भोजनके प्रारंभमें, मध्य और अंतमें सेवन करे तो अन्नद्रव, जरत्पित्त, परिणामशूल इनसे उत्पन्न हुआ शूल एक वर्षका भी नष्ट होय ॥

शतावरीमंडूर ।

संशोध्य चूर्णितं कृत्वा मंडूरस्य पलाष्टकम् । शतावरीरसस्याष्टौ दध्नस्तु पयसस्तथा ॥ पलान्यादाय चत्वारि तथा गव्यस्य सर्पिषः । विपचेत्सर्वमेकत्र यावत्पिंडत्वमागतम् ॥ सिद्धं तु भक्षयेन्मध्ये भोजनस्याग्रतोपि वा । वातात्मकं पित्तभवं शूलं च परिणामजम्॥ निहंत्येव हि योगोऽयं मंडूरस्य न संशयः॥

अर्थ-मंडूर भस्म ३२ तोले, सतावरका रस, दही, दूध प्रत्येक ३२ तोले, गौका घी १६ तोले, सबको एकत्र करके पक्व करे. जब गोला बंधने लगे तब उतारके धर लेवे इसमेंसे यथाशक्ति भोजनके पूर्व अथवा मध्यमें खाय तो वातशूल, पित्तशूल, परिणामशूल इनको यह मंडूरका योग नाश करे, इसमें संशय नहीं है ॥

शूलरोगमें पथ्य।

छर्दिः स्वेदो लंघनं पायुवर्तिर्बस्तिर्निद्रा रेचनं पाचनं च। अब्दोत्पन्नाः शालयःषष्टिमंडस्ततं क्षीरं जांगलानां रसाश्च॥ पटोलसौभांजनकारवेल्लकं शालिं च पाक्यानि च वास्तुकानि। सामुद्रसौवर्चलहिंगुविश्वं बिडं शताह्वा लशुनं लवंगम्॥ एरंडतैलं सुरभीजलं च तथांबुजंबीररसोपि कुष्ठम्। लघूनि च क्षाररजांसि चेति वर्गौ हितौ शूलगदार्दितेभ्यः॥

अर्थ-वमन, स्वदन, लंघन, गुदामें बत्ती डालना, निद्रा, जुल्लाब, पाचन, एक वर्षके पुराने चावल, साटचमड, गरम दूध, जंगली जीवोंके मांसका रस, परवल, सहजना, करेले, बैंगन, पके हुए आम, दाख, कैथ, कालानिमक, चिरौंजी, शालिंच शाक, पत्तेके साग, वथुआ, समुद्रनिमक (पाँगा), संचरनिमक, हींग, सोंठ, वायविडंग, सतावर, लहसन, लौंग, अंडीका तेल, गौका मूत्र, गरम जल, जँभीरीका रस, कूठ और हलके और खारका चूर्ण ये संपूर्ण वस्तु शूलरोगीको हितकारी कही हैं॥

शूलरोगमें अपथ्य।

विरुद्धान्यन्नपानानि जागरं विषमाशनम्। रूक्षतिक्तकषायाणि शीतलानि गुरूणि च॥ व्यायामं मैथुनं मद्यं वैदलं कटुकानि च। वेगरोधं शुचं क्रोधं वर्जयेच्छूलवान्नरः॥

अर्थ-विरुद्ध अन्न पान, रात्रिमें जागना, विषम भोजन, रूखे, कडवे, कसेले, शीतल और भारी ऐसे पदार्थ, दंड कसरत, मैथुन और मद्य ये शूलरोगवालेको वर्जित कहे हैं॥

इति श्रीबृहन्नि० शूलरोगकर्मविपाक-निदान-चिकित्सा पथ्याऽपथ्य सहिता समाप्ता।

आनाहोदावर्त्तकर्मविपाकः।

देवद्विजक्षेत्रतडागवल्मीककूपादिनां यो भेदनं करोति तं वायसो नाम ग्रहो गृह्णाति तल्लक्षणमाध्मान उदावर्ती ज्वर अरुचिमान्पाददाही च जायते॥

अर्थ–देवता, ब्राह्मण इनकी पृथ्वीको हरण करे तथा, तालाव, बांबी, कूआ, बावडी आदिको जो बिगाड करे अर्थात् इनको तोडे उसको वायस नामक ग्रह ग्रहण करे उसके लक्षण ये हैं कि अफरा, उदावर्त्त, ज्वर, अरुचि और पैरोंमें दाहवान् होता है ॥

ज्योतिःशास्त्रका अभिप्राय ।

मध्ये पापग्रहयोश्चंद्रे मदने स्थितार्कजे जंतोः ।
श्वासक्षयविद्रधिगुल्मप्लीहादिपीडितः स नरः ॥

अर्थ–जन्मकालमें पाप ग्रहोंके मध्यमें चंद्रमा और सप्तम स्थानमें शनि होय तो श्वास, क्षय, विद्रधि, गोला, प्लीहा इत्यादिक रोगोंसे पीडित होता है ॥

उदावर्त्तनिदान ।

वातविण्मूत्रजंभास्त्रक्षवोद्गारवमींद्रियैः ।
क्षुत्तृष्णोच्छ्वासनिद्राणां धृत्योदावर्तसंभवः ॥

अर्थ–अधोवायु, विष्ठा, मूत्र, जंभाई, अश्रुपात, छींक, डकार, वमन, शुक्र, भूंख, श्वास और निद्रा इन तेरह वेगोंके रोकनेसे उदावर्त्तरोग उत्पन्न होय है. तेरहके नियमके करनेसे यह प्रयोजन है कि क्रोध, लोभ मन इत्यादि वेगोंके धारण करनेसे रोग उत्पन्न नहीं होय. क्योंकि इनके रोकनेमें तौ स्वस्थता प्राप्त होती है. सब उदावर्त्तोंमें मुख्य कारण वायु है, उदावर्त्तकी निरुक्ति इस प्रकार है. (उद्धूतेन वेगगिधारणेन आवृत्तस्य वायोरावर्त्तनमुदावर्त्तः) ॥

वातनिरोधजन्य उदावर्त ।

वातमूत्रपुरीषाणां संगाध्मानं क्लमो रुजः ।
जठरे वातजाश्चान्ये रोगाः स्युर्वातनिग्रहात् ॥

अर्थ–अधोवायुके रोकनेसे अधोवायु, मल, मूत्र ये बन्द हो जांय, पेट फूल जावे, अनायास श्रम और पेटमें वादीसे पीडा होय तथा और वातकृत (तोद शूलादि पीडा) होय ॥

मल रोकनेका उदावर्त्त ।

आटोपशूलौ परिकर्त्तिका च संगः पुरीषस्य तथोर्ध्ववातः ।
पुरीषमास्यादथ वा निरेति पुरीषवेगेऽभिहते नरस्य ॥

अर्थ–मलके वेग रोकनेसे पेटमें गुडगुडाहट होय, शूल होय, गुदामें कतरनेकीसी पीडा होय, मल उतरे नहीं, डकार आवे, अथवा मल मुँहके द्वारा निकले ॥

मूत्र रोकनेका उदावर्त्त।

बस्तिमेहनयोः शूलं मूत्रकृच्छ्रं शिरोरुजा।
विनामो वंक्षणानाहः स्याल्लिंगं मूत्रनिग्रहे॥

अर्थ-मूत्रके वेग रोकनेसे बस्ति (मूत्राशय) और शिश्न इंद्रिय इनमें पीडा होय, मूत्र कष्टसे उतरे, मस्तकमें पीडा, पीडासे शरीर सीधा होय नहीं, पेटमें अफरा होय॥

जंभाई रोकनेका उदावर्त्त।

मन्यागलस्तंभशिरोविकरा जंभोपरोधात्पवनात्मकाः स्युः।
तथाक्षिनासावदनामयाश्च भवंति तीव्राः सह कर्णरोगैः॥

अर्थ-जंभाई आती हुईके रोकनेसे मन्या कहिये नाडके पीछेकी नस और गला इनका स्तंभ होय और वातजन्य विकार मस्तकमें होय, उसी प्रकार नेत्ररोग, नासा-रोग, मुखरोग और कर्णरोग ये तीव्र होय हैं॥

अश्रुपात रोकनेका उदावर्त्त।

आनन्दजं वाप्यथ शोकजं वा नेत्रोदकं प्राप्तममुंचतो हि।
शिरोगुरुत्वं नयनामयाश्च भवंति तीव्राः सह पीनसेन॥

अर्थ-आनंदसे अथवा शोकसे प्रगट अश्रुपातोंको जो मनुष्य नहीं त्याग करे उसके इतने रोग प्रगट होंय. मस्तक भारी रहे, नेत्ररोग और पीनस ये प्रबल हों॥

छींक रोकनेका उदावर्त्त।

मन्यास्तंभशिरःशूलमर्दितार्धविभेदकौ।
इन्द्रियाणां च दौर्बल्यं क्षवथोः स्याद्विधारणात्॥

अर्थ-मन्या (कहिये नाडके पिछाडीकी नस) का स्तंभ (कहिये जकडजाना), शिरमें शूलका चलना, आधा मुख टेढा हो जाना, अर्धांगवात और सब इंद्रिय दुर्बल हो जाना इतने रोग आती हुई छींकके रोकनेसे होते हैं॥

डकार रोकनेका उदावर्त्त।

कंठास्यपूर्णत्वमतीव तोदः कूजंश्च वायोरथवाऽप्रवृत्तिः।
उद्गारवेगेऽभिहते भवंति जंतोर्विकाराः पवनप्रसूताः॥

अर्थ-आती हुई डकारके वेगके रोकनेसे वातजन्य इतने रोग होते हैं. कंठ और

मुख भारीसा मालूम होय, अत्यन्त नोचनेकीसी पीडा होय, अव्यक्तभाषण (अर्थात् जो समझमें न आवे) ॥

वमन रोकनेका उदावर्त्त ।

कंडुकोठारुचिव्यंगशोथपांड्वामयज्वराः ।
कुष्ठहृल्लासवीसर्पाश्छर्दिनिग्रहजा गदाः ॥

अर्थ–जो मनुष्य आती हुई वमनके वेगको रोके उसके अंगोंमें खुजली चले, देहमें चकत्ता हो जाय, अरुचि, मुख पर झाँईसी पडे, सूजन, पांडुरोग, ज्वर, कुष्ठ, खाली रद, विसर्परोग ये होंय ॥

वीर्य रोकनेका उदावर्त्त ।

मूत्राशये वै गुदमुष्कयोश्च शोथो रुजा मूत्रविनिग्रहश्च ।
शुक्राश्मरी तत्स्रवणं भवेच्च एते विकाराभिहते च शुक्रे ॥

अर्थ–मैथुन करते समय वीर्य निकलतेको जो मनुष्य रोके अथवा और प्रकारसे शुक्रके वेगको रोके उसके मूत्राशयमें सूजन होय तथा गुदामें और अंडकोशोंमें पीडा होय, मूत्र बडे कष्टसे उतरे, शुक्राश्मरी (पथरीके निदानमें आगे कहेंगे) होय, शुक्रका स्राव होने ऐसे अनेक प्रकारके रोग होंय ॥

भूँक रोकनेका उदावर्त्त ।

तन्द्रांगमर्दावरुचिः श्रमश्च क्षुधाभिघातात्कृशता च दृष्टेः ॥

अर्थ--भूखके रोकनेसे तन्द्रा, अंगोंका टूटना, अरुचि, श्रम और दृष्टिका मन्द होना ये रोग प्रगट होंय चकारसे कृशता और दुर्बलता होय ये अन्य ग्रन्थसे जानना ॥

प्यास रोकनेका उदावर्त्त ।

कंठास्यशोषः श्रवणावरोधस्तृषाभिघाता हृदयव्यथा वै ॥

अर्थ–प्यासके रोकनेसे कंठ और मुखका सूखना, कानोंसे मन्द सुनना और हृदयमें पीडा ये लक्षण होंय ॥

श्वासोच्छ्वास रोकनेका उदावर्त्त ।

श्रांतस्य निःश्वासविनिग्रहेण हृद्रोगमोहावथ वापि गुल्मः ॥

अर्थ–जो मनुष्य हार गया हो और वह श्वासको रोके उसके हृदयरोग, मोह और वायगोला इतने रोग होंय ॥

निद्राविघातजन्य ।

जृंभांगमर्दाक्षिशिरोतिजाड्यं निद्राभिघातादथवापि तंद्रा ॥

अर्थ-आती हुई निद्राके रोकनेसे जंभाई, अंगोंका टूटना, नेत्र और मस्तकका अत्यंत जड होना और तन्द्रा ये विकार होंय. अब कहते हैं कि वेग रोकनेसे प्रकट रोगोंको कहके अब रूक्षादि कारणोंसे कुपितवायुसे उत्पन्न होनेवाले उदावर्त्त रोगोंको कहते हैं ॥

रूक्षादि कुपितवातज उदावर्त्त ।

वायुः कोष्ठानुगे रूक्षैः कषायकटुतिक्तकैः । भोजनैः कुपितः सद्य उदावर्त्तं करोति च ॥ वातमूत्रपुरीषाश्रुकफमेदवहानि च । स्रोतांस्युदावर्तयाति पुरीषं चातिवर्त्तयेत् ॥ ततो हृद्बस्तिशूलार्तो हृल्लासारतिपीडितः । वातमूत्रपुरीषाणि कृच्छ्रेण लभते नरः ॥ श्वासकासप्रतिश्यायदाहमोहतृषाज्वरान् । वमीहिक्काशिरोरोगमनःश्रवणविभ्रमान् ॥ बहूनन्यांश्च लभते विकारान्वातकोपजान् ॥

अर्थ-रूखा, कसेला, तीखा और कडुआ ऐसे भाजन करनेसे कोष्ठगतवायु मलमूल अश्रुपात, कफ और मेद इनके वहनेवाली नाडियोंके मार्गको रोक दे और मलको सुखाय दे तब रोगी हृदय-मूत्रस्थानमें शूलके होनेसे बेकल हो, सूखी रद, अस्वस्थपना इनसे पीडित होय, मलमूत्र और वात ये कष्टसे उतरे और श्वास, खांसी, पीनस, दाह, मोह, प्यास, ज्वर, वमन, हिचकी, मस्तकरोग, मनकी भ्रांति, मंद सुने तथा वातकोपसे और भी बहुतसे विकार होंय ॥

अधोवातजन्य उदावर्त्तकी चिकित्सा ।

अधोवातनिरोधोत्थे ह्युदावर्ते हितं मतम् ।
स्नेहपानं तथा स्वेदोबस्तिर्यच्चानुलोमनम् ॥

अर्थ-जो प्राणी अधोवात (पाद) रोकनेसे उदावर्त्त करके पीडित होय उसको स्नेहपान, स्नेह, बास्ति और अनुलोमक औषध ये हितकारी हैं ॥

मलनिरोधज उदावर्त्तकी चिकित्सा ।

विड्विघातसमुत्थे तु विड्भेद्यन्नं तथौषधम् ।
वर्त्यभ्यंगावगाहाश्च स्वेदो बस्तिर्हितो मतः ॥

अर्थ-मलके रोकनेसे जो उदावर्त्त रोग होवे उस पर मलको निकालनेवाले अन्न, औषध और अभ्यंगस्नान, स्वेद, बस्ति ये हितकारी हैं ॥

मूत्रनिरोधज उदावर्त्तकी चिकित्सा ।

मूत्रावरोधजनिते क्षीरं वारि च ना पिबेत् ॥
दुस्पर्शास्वरसं चापि कषायं ककुभस्य च ॥

अर्थ-मूत्र रोकनेसे प्रगट हुए उदावर्त्त पर दूध, जल दोनोंको मिलायके पीवे अथवा कटेरीका स्वरस अथवा कोहवृक्षकी छालका काढा पीवे ॥

उर्वारुबीजं तोयेन पिबेद्वा लवणाकृतम् । सितामिक्षुरसं क्षीरं द्राक्षारसमथापि वा ॥ सर्वं चैव प्रकुर्वीत मूत्रकृच्छ्राश्मरीविधिम् ॥

अर्थ-खीराके बीजोंको जलमें पीस सैंधा निमक डालके पीवे अथवा मिश्री, ईखका रस, दूध अथवा दाखका रस पीवे तथा मूत्रकृच्छ्र और पथरीकी विधि करे तो मूत्रजन्य उदावर्त्त दूर होवे ॥

जंभाईनिरोधज उदावर्त्तकी चिकित्सा ।

जृंभानिरोधजे स्नेहं स्वेदं चापि प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-जंभाईके रोकनेसे जो उदावर्त्त होता है उस पर स्नेहपान, पसीने ये उपचार करे॥

बाष्पावरोधज व छींकके रोकनेके उदावर्त्तकी चिकित्सा ।

अन्यानपि प्रयुंजीत समीरणहरान्विधीन् । नेत्रनीरावरोधेत्थे । मुंचेदुच्चैर्दृशो जलम् ॥ स्वप्यात्सुखेन तस्याग्रे कथयेच्च शुभाः कथाः । शिक्काविघातजे तीक्ष्णघ्राणनस्यार्कदर्शनैः ॥ प्रवर्तयेत्क्षुतं सक्तां स्नेहस्वेदौ च शीलयेत् ॥

अर्थ-आये हुए अश्रुपातोंके रोकनेसे जो उदावर्त्त होवे उस पर अन्य दूसरे वातहरणकर्त्ता उपचार करे तथा इस अश्रुपात रोकनेसे प्रगट उदावर्त्त पर नेत्रोंसे बहुतसा पानी निकालना चाहिये, फिर स्वस्थतापूर्वक सुलावे, उत्तम वार्ता सुनावे. छींकके उदावर्त्त पर तीक्ष्ण पदार्थोंके वाससे अथवा नस्य, सूर्यके सामने देखना ऐसे उपाय करनेसे रुकी हुई छींक साफ होवे तथा पसीने निकालके स्नेह पान करे ॥

जँभाईजनित उदावर्त्तकी चिकित्सा ।

स्नेहस्वेदैरुदावर्तं जृंभजं समुपाचरेत् ।
अंसमोक्षजजे कार्याः स्वप्नो मद्यं प्रियाः कथाः ॥

अर्थ-जंभाईके रोकनेसे उत्पन्न उदावर्त्तवालेको स्नेहन तथा स्वेदन ये उपचार करे और अंस्रमोक्षज उदावर्त्त पर निद्रा लेना, मद्य पीना और कर्णप्रिय वार्त्ताओंका सुनना उपचार करे ॥

छींकजन्य उदावर्त्तकी चिकित्सा।

क्षवजे क्षवपत्रेण घ्राणस्थे नानयेत्क्षवम्।
तथोर्ध्वजत्रुकेभ्यंगः स्वेदो धूमः समाहृतः ॥

अर्थ-छींकके रोकनेसे उत्पन्न उदावर्त्त पर ईख इत्यादिकके पत्तेको नाकमें डालके छींक लावे तथा गरदन पर मालिस, पसीने निकालना, धूमपान इत्यादिका उपचार करे॥

उद्गारछर्दिनिरोधज उदावर्त्तकी चिकित्सा।

उद्गारस्यावरोधे तु स्नैहिकं धूममाचरेत्। छर्दिनिग्रहसंजाते वमनं लंघनं हितम् ॥ विरेचनं चात्र मतं तैलेनाभ्यंजनं हितम्। बस्तिशुद्धिकरैः स्निग्धं चतुर्गुणजलं पयः ॥

अर्थ-डकारके रोकनेसे उत्पन्न उदावर्त्त पर स्निग्ध पदार्थ अग्निमें डालके उसका धूंआ पीवे. आई हुई रद्दके वेगको रोकनेसे उत्पन्न उदावर्त्तपर वमन करावे तथा लंघन, विरेचन, तैलकी मालिस और बस्तिशुद्धकर्ता औषधोंका काढा चतुर्थांश दूधमें डालके पिलावे ॥

उद्गार (डकार) जन्य उदावर्त्त पर।

हितं वातघ्नमाज्यं च घृतं चोत्तरभक्तिकम्।
उद्गारजे क्रमोपेतं स्नैहिकं धूममाचरेत् ॥

अर्थ-डकार रोकनेसे उत्पन्न उदावर्त्त पर वातनाशक घृत देवे तथा देहके ऊपरके भाग पर उस घृतको लगावे और स्नेहयुक्त धूमपान करे ॥

छर्दिजन्य उदावर्त्त पर।

छर्द्याघातं यथादोषं नस्यस्नेहादिभिर्जयेत्।
भुक्त्वा प्रच्छर्दनं धूमो लंघनं रक्तमोक्षणम् ॥

अर्थ-वमन रोकनेसे उत्पन्न उदावर्त्तको नस्य और स्नेहन इत्यादिक कर्मोंसे जीते और भोजन करके रद्द करके निकाल देवे तथा धूमपान, लंघन और रुधिरका निकालना ये उपाय करे ॥

क्षुधातृषोत्थ उदावर्त्त पर ।

क्षुद्विघातसमुद्भूते स्निग्धमुष्णं तथा लघु । रुच्यमल्पहितं भक्ष्यं पुष्पं सेव्यं सुगंधि यत् ॥ तृषाविघातसंभूते शीतः सर्वो विधिर्हितः । कर्पूरशिशिरं स्वल्पं पिबेत्तोयं शनैः शनैः ॥

अर्थ–भूँखके रोकनेसे उत्पन्न उदावर्त्त पर स्निग्ध, गरम, हलके, रुचिकारी, थोडे, हितकारी ऐसे पदार्थ भक्षण करे. सुगंधि फूलोंको सूंघे और तृषा (प्यास) रोकनेके उदावर्त्त पर संपूर्ण शीतल उपचार करे तथा कपूर मिलायके शीतल करे, जलको धीरे २ पीवे ॥

श्रमनिद्रोत्थउदावर्त्त पर ।

श्रमश्वासकृते शस्तो विश्रामः सरसौदनः । निद्रावेगविघातोत्थे पिबेत्क्षीरं सितायुतम्॥संवाहनं सुशय्यात्र हितस्वप्नः प्रियाः कथाः॥

अर्थ–श्रमजन्य उदावर्त्त पर विश्राम लेवे (सस्ताना), मांसरसके साथ भात भोजन करे. निद्राके रोकनेसे उत्पन्न उदावर्त्त पर मिश्री मिलाय दूध पीवे और उत्तम शय्या, पैरोंको दाबना, प्यारी कहानियोंको सुनना, इस प्रकारसे निद्रा लानी चाहिये ॥

सामान्य चिकित्सा ।

रूक्षान्नपानं व्यायामो विरेकश्चात्र शस्यते ।
बस्तिशुद्धिकरं वापि चतुर्गुणजलं पयः ॥

अर्थ–उदावर्त्त व्याधिवालेको रूक्ष अन्न और पान, विरेचन, बस्तिशुद्धकारी औषध देवे और दूधमें चौगुना जल मिलायके पिलावे ॥

विधारादि लेप ।

उदावर्तविनाशाय ह्युदावर्तं प्रलेपनम् ।
विधारा मृत्तिका चैव करंजा सारिवा तथा ॥
गोमूत्रेण प्रलेपोयमुदावर्तं विनाशयेत् ॥

अर्थ–विधायरा, गोपीचंदन, कंजा, सारिवा इनको गोमूत्रमें पीस उदावर्त्त पर लेप करे तो उसको नाश करे ॥

रसोनादि प्राशन।

रसोनमद्यं संमिश्र्य पिबेत्प्रातः प्रकांक्षितम् ।
गुल्मोदावर्तशूलघ्नं दीपनं बलवर्धनम् ॥

अर्थ-लहसन और मद्य इन दोनोंको मिलाय प्रातःकाल पीवे तो गोला, उदावर्त्त और शूल इनको नाश करे ॥

कदलीफलयोग।

दुःस्पर्शस्वरसेर्वापि कषाये कुंकुमस्य च ।
और्वारुबीजं तोयेन पिबेद्वा लवलीफलम् ॥

अर्थ-धमासेका स्वरस केशरके काढेमें अथवा खीरेके बीजोंमें पीस उसको जलमें छान लेवे उसमें केला मिलायके पीवे तो उदावर्त्त रोग दूर होय ॥

पंचमूलक्षीर ।

पंचमूलीकृतं क्षीरं द्राक्षारसमथापि वा ।
सर्वथैव प्रयुंजीत मूत्रकृच्छ्राश्मरीविधौ ॥

अर्थ-पंचमूलका काढा अथवा दाखका काढा मूत्रकृच्छ्र और पथरी इनपर देवे ॥

सुवर्चलादि पेय ।

सुवर्चलाढ्यां मदिरां मूत्रेण च गवां पिबेत् ।
एलां वाप्यथ मद्येन क्षीरेण च पिबेन्नरः ॥

अर्थ-सोरेका चूर्ण डालके मद्य पीवे अथवा गोमूत्र देवे अथवा इलायची मद्यके साथ अथवा दूधके साथ पीवे ॥

धात्रीस्वरस ।

धात्रीफलानां स्वरसं जलं वापि पिबेत् त्र्यहम् ।
रसमश्वपुरीषस्य गर्दभस्याथवा पिबेत् ॥

अर्थ-आवलोंका स्वरस अथवा काढा तीन दिन पीवे अथवा घोडेकी या गधेकी लीदका रस पीवे तो उदावर्त्त दूर होय ॥

वट्यादि यूष ।

वट्यायूषेण पिप्पल्या मूलकानां रसेन च ।
भुक्त्वा स्निग्धमुदावर्ताद्वातगुल्माद्विमुच्यते ॥

अर्थ–पीपलका यूष अथवा पीपलके रसमें घी डालके पीवे तो उदावर्त्त और वात-गुल्म (वायगोला) दूर होवे ॥

शमादि क्वाथ।

शमा दंती द्रवंती स्नुक् महाशामामृता त्रिवृत्। सप्तला शंखिनी श्वेता राजवृक्षः सबिल्वकः ॥ कंपिल्लकं करंजश्च हेमक्षीरीत्ययं गणः। सर्पिस्तैलं रजः क्वाथः कल्कश्चान्यतमं तथा ॥ उदावर्तो-दरानाहविषगुल्मविनाशनम् ॥

अर्थ–हलदी, दंती, द्रवंती (रुदंती), थूहर, काला विधायरा, गिलोय, निसोथ, सातला (थूहरका भेद), संखाहूली, कटेरी, अमलतासका गूदा, बेलगिरी, कबीला, कंजा, गूलर इन सबका काढा अथवा कल्क, घी, तेल अथवा चूर्ण इनमेंसे किसी एकका उपयोग करनेसे उदावर्त्त उदर, अफरा, विष और गोला इनको नाश करे ॥

नाराचचूर्ण।

खंडं पलं त्रिवृत्ताक्षः कृष्णाकर्षद्वयं चूर्णम्। प्राग्भोजनस्य मधुना बिडालपदकं नरो लिह्यात् ॥ एतद्गाढपुरीषे ज्ञेयं विज्ञैरुदावर्ते। मधुरं नरपतियोग्यं चूर्णं नाराचकं नाम ॥

अर्थ–मिश्री ४ तोले, निसोथ १ तोला, पीपल २ तोले, इनका चूर्ण भोजनके प्रथम सहतके साथ १ तोला चाटे तो जिसका मल भीतर कठोर हो गया हो उसको यह दूर करे तथा उदावर्त्तको नाश करे यह मिष्ट है इसी कारण इसको राजा बाबू आदि सुकुमार मनुष्योंको देना चाहिये. इसको नाराचचूर्ण कहते हैं ॥

दंत्यादिक वर्ती।

विपाच्य मूत्राम्लरसेन दंती पिंडीतकृष्णाबिडकुष्ठधूमैः।
वर्तिं करांगुष्ठनिभां घृताक्तां गुदे रुजानाहहरीं विदध्यात् ॥

अर्थ–दंतीकी जड, मैनफल, पीपल, बिड निमक, कूठ, धूंआ इनके चूर्णको गोमूत्र, नींबूका रस इनमें औटायके कपडेमें लगाय उसकी हाथके अंगूठेके समान मोटी बत्ती बनावे उसको घीमें भिगोय लेवे फिर इसको गुदामें रखे तो पीडा और अफरा इनको नाश करे ॥

हिंग्वादिचूर्ण।

हिंगूग्रगंधाबिडशुंठ्यजाजी हरीतकी पुष्करमूलकुष्ठम्।
भागोत्तरं चूर्णितमेतदिष्टं गुल्मोदरानाहविषूचिकासु ॥

अर्थ-हींग १, वच २, बिड निमक ३, सोंठ ४, जीरा ५, हरड ६, पुहकरमूल ७, कूठ ८ इस प्रकार भाग लेकर इनका बारीक चूर्ण करके भक्षण करे तो गोला, उदर, अफरा, विषूचिका इनको नाश करे ॥

भद्रदार्वादि चूर्ण ।

भद्रदारु घनं मूर्वा हरिद्रा मधुकं तथा ।
कोलप्रमाणं तु पिबेदंतरिक्षेण वारिणा ॥

अर्थ-तेलिया देवदारु, नागरमोथा, मूर्वा, हलदी और मुलहठी इनका चूर्ण तोले भर वर्षाके जलके साथ पीवे तो उदावर्त्त दूर हो ॥

हरीतक्यादि चूर्ण ।

हरीतकी यवक्षारपीलुनी त्रिवृता तथा ।
घृते चूर्णमिदं पेयमुदावर्त्तं विनाशयेत् ॥

अर्थ-छोटी हरड, जवाखार, अखरोट, निसोथ इनका चूर्ण घीके साथ खाय तो उदावर्त्त नाश होय ॥

गुडाष्टक ।

सव्योषं पिप्पलीमूलं त्रिवृद्दंती च चित्रकम् । तच्चूर्णं गुंजसंयुक्तं भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ॥ एतद्गुडाष्टकं नाम्ना बलवर्णाग्निवर्धनम् । उदावर्तप्लीहगुल्मशोथपांड्वामयापहम् ॥

अर्थ-त्रिकुटा, पीपरामूल, निसोथ, दंती, चित्रक इनका चूर्ण कर गुड मिलाय ले फिर इसको प्रातःकाल भक्षण करे इसको गुडाष्टक कहते हैं यह बल, वर्ण, अग्नि इनको बढावे तथा उदावर्त्त, प्लीहा, गोला, सूजन, पांडु इन सब रोगोंको दूर करे ॥

शुष्कमूलादि घृत ।

मूलकं शुष्कमार्द्रं च वर्षाभूः पंचमूलकम् ।
कृतमालफलं चाशु पक्त्वा चैतद्घृतं पचेत् ॥
तत्पीतं शमयेत्क्षिप्रमुदावर्तमशेषतः ॥

अर्थ-सूखी हुई मूली, अदरख, पुनर्नवा, लघु पंचमूल, अमलतास इनके काढेमें घी डालके सिद्ध करे. इसके पीनेसे संपूर्ण उदावर्त्तोंका नाश होय ॥

त्रिकट्वाद्या वर्ति।

वर्तीस्त्रिकटुकसैंधवसर्षपगृहधूमकुष्ठमदनफलैः। मधुनि गुडे वा पक्वैर्निहिता सांगुष्ठपरिमाणा॥ वर्तिरियं दृष्टफलाशनैः प्रणिहिता गुदे घृताभ्यक्ता। आनाहोदावर्तौ शमयति जठरं तथा गुल्मम्॥

अर्थ-त्रिकुटा, सैंधानिमक, सरसों, घरका धूंआ, कूठ, मैनफल इनके चूर्णको सहत अथवा घीमें भिगोयके बत्ती बनायले इसको गुदामें रखे तो अफरा, उदावर्त्त, उदर, गोला इनको दूर करे. यह प्रयोग अनुभव करा (अजमाया हुआ) है॥

मदनफलादिक फलवर्ति।

मदनं पिप्पली कुष्ठं वचा गौराश्च सर्षपाः।
गुडक्षीरसमायुक्ता फलवर्तिरिहोदिता॥

अर्थ-मैनफल, पीपल, कूठ, वच, सफेद सरसों और गुड इनको दूधसे पीसके, कपडेपर लेप देवे फिर इसकी बत्ती बनायके गुदामें रखे तो उदावर्त्तनाशक होवे॥

हिंग्वादि वर्ति।

हिंगुमाक्षिकसिंधूत्थैः पक्त्वा वर्तिं सुवर्तिताम्।
घृताभ्यक्तां गुदे दद्यादुदावर्तविनाशिनीम्॥

अर्थ-हींग, सहत, सैंधानिमक इनको एकत्र खरल कर कपडेमें लगायके उसकी बत्ती बनाय लेवे. फिर इसको आंचपर सेंक लेवे. फिर घीमें भिगोकर गुदामें डाले तो उदावर्त्तको नाश करे॥

उदावर्त पर पथ्य।

उदावर्ते हितं सर्वं पाचनं लघुभोजनम्॥

अर्थ-उदावर्त्तरोग पर लघु पाचक ऐसे पदार्थ भोजन करना हितकारी है॥

उदावर्त पर अपथ्य।

विष्टंभीनि विरुद्धानि कषायाणि गुरूणि वा।
उदावर्ते प्रयत्नेन वर्जयेत्सततं नरः॥

अर्थ-विष्टंभकारी, भारी, विरुद्ध पदार्थ, कषैले इतने अन्न उदावर्त्त रोग पर मनुष्यको यत्नपूर्वक त्याग देने चाहिये॥

आनाहरोगनिदान ।

आमं शकृद्वा निचितं क्रमेण भूयो विबद्धं विगुणानिलेन ।
प्रवर्त्तमानं न यथास्वमेनं विकारमानाहमुदाहरंति ॥

अर्थ-आम अथवा पुरीष क्रमसे संचित हो विगुण वायुसे वारंवार विबद्ध होकर अपने मार्गसे अच्छी रीतिसे प्रवृत्त होय नहीं इस विकारको आनाह कहते हैं ॥

आमजन्य आनाह ।

तस्मिन् भवत्यामसमुद्भवे तु तृष्णाप्रतिश्यायशिरोविदाहाः ।
आमाशये शूलमथो गुरुत्वं हृत्स्तंभ उद्गारविघातनं च ॥
स्तंभः कटीपृष्ठपुरीषमूत्रे शूलेऽथ मूर्च्छा शकृतश्च छर्दिः ॥

अर्थ-आमसे प्रगट आनाहरोगमें प्यास, पीनस, मस्तकमें दाह, आमाशयमें शूल, देहमें भारीपना, हृदयका जकड जाना, शूल, मूर्च्छा, डकार, कमर, पीठ, मल, मूत्र इनका रुकना, शूल, मूर्च्छा और विष्ठा मिली हुई रद ॥

पक्वाशयज आनाह ।

श्वासाश्च पक्वाशयजे भवंति तथाऽलसोक्तानि च लक्षणानि ॥

अर्थ-श्वास, यह लक्षण होय ॥ पक्वाशयमें आनाहरोग होनेसे आलसरोगोक्त लक्षण (आध्मानवातरोधादिक) होते हैं ॥

उदावर्त्तके असाध्य लक्षण ।

तृष्णार्दितं परिक्लिष्टं क्षीणं शूलैरुपद्रुतम् ।
शकृद्वमंतं मतिमानुदावर्तिनमुत्सृजेत ॥

अर्थ-प्याससे पीडित, क्लेशयुक्त, क्षीण, शूलसे पीडित और मलकी रद करनेवाला ऐसे उदावर्त्त रोगीको वैद्य त्याग दे ॥

सामान्याविधि ।

आस्थापनं मारुतजे स्निग्धस्विन्ने विशेषतः ।
पुरीषजे तु कर्तव्यो विधिरानाहकोदितः ।

अर्थ-आमजनित आनाहरोगवाले रोगीको प्रथम स्नेहन और स्वेद निकालके निरूह-बस्ती देवे तथा मलजनित आनाहरोगीको आनाहरोग पर विधि कही जावेगी वह करे॥

आनाहे तु यथायोग्यं सेवयेन्मतिमान् नरः ॥

अर्थ-आनाहरोगमें यथायोग्य, अन्न, पान, औषधि आदि विचार कर देवे ॥

चिकित्सापरिभाषा ।

तुल्यकारणकार्यत्वादुदावर्तहरीं क्रियाम् ।
आनाहेति च कुर्वीत विशेषश्चाभिधीयते ॥

अर्थ-उदावर्त्त और आनाह इनमें कारण और कार्य ये दोनों समान हैं इस कारण आनाहरोग पर उदावर्त्तकी जो क्रिया लिखी है वह सब करनी चाहिये ॥

आनाह ।

अन्नाभ्यंगावगाहश्च मदिराश्चरणायुधः ।
शालिपेया निरूहाश्च हितं मैथुनमेव च ॥

अर्थ-उदावर्त्त रोगीको अभ्यंग, जलमें स्नान, मद्यपान, मुरगेका मांस, भातका मांड, निरूहबस्ती और मैथुन ये हितकारी है ॥

क्षुधाद्योतिहितं स्निग्धं बस्तपल्यं च भोजनम् ।
तृष्णाघाते पिबेन्मंथं यवागूं वापि शीतलाम् ॥

अर्थ-क्षुधा करनेवाले, हितकारी, चिकने तथा बकरेके मांसयुक्त भोजन देवे तथा तृषा बढनेसे मंथ अथवा शीतल यवागू देवे ॥

हिंग्वादि चूर्ण ।

द्विरुत्तरा हिंगु वचा सकुष्ठसुवर्चिका चेति विडंगचूर्णम् ।
सुखांबुनानाहविषूचिकार्तिहृद्रोगगुल्मार्धसमीरणघ्नम् ॥

अर्थ-हींग १, वच २, कूठ ५, सज्जीखार, ७, वायविडंग ९ भाग इस प्रकार सब औषध लेकर इनके चूर्णको सुखोष्ण जलसे देवे तो आनाह, विषूचिका, हृदयरोग, गोल । और अर्द्धांगवायु इनको नाश करे ॥

फलचूर्ण ।

फलं च मूलं च विरेचनोक्तं हिंग्वर्कमूलं दशमूलमग्र्यम् । स्नुक् चित्रकश्चेति पुनर्नवा च तुल्यानि सर्वैर्लवणानि पंच ॥ स्नेहैः समुद्रैः सह जर्जराणि सशंखसंधौ विपचेत्सालिते । पक्वं सुपिष्टं लवणं तदन्नैः पानैस्तथानाहरुजामयघ्नम् ॥

अर्थ-दस्त करानेवाले फल और मूल, हींग, आककी जड, दशमूल, त्रिफला, थूहर, चित्रक, पुनर्नवा ये सब समान भाग लेवे तथा पांचों निमक, सब औषधोंकी

बराबर घी और समुद्र निमक और खीलोंका चूर्ण करके उसको शंखमें भर उसकी संधियोंको लेप करके बंद कर देवे फिर पुटमें धरके फूंक देवे. जब शीतल होय तब निकाल खरल कर लेवे इसको अन्नमें मिलायके अथवा जलमें मिलायके देवे तो आनाह रोगको शांत करे ॥

तुंबुरुचूर्ण ।

तुंबुरुश्चाभया हिंगु पौष्करं लवणत्रयम् । यवानी च यव- क्षारं विडंगेन समानि च ॥ त्रिवृत्रिगुणितं चूर्णं पिबेदुष्णेन वारिणा । आनाहमुदराण्यष्टौ विट्बंधं चापि नाशयेत् ॥

अर्थ-धनिया, हरड, हींग, पुहकर मूल, सैंधानिमक, बिडनिमक, कचियानिमक, अजमायन, जवाखार, वायविडंग ये समान भाग ले निसोथ तीन भाग इन सबका चूर्ण गरम जलसे पीवे तो अफरा, आठ प्रकारके उदर और विट्बंध इनको नाश करे ॥

वचादि चूर्ण ।

वचाभयाचित्रकया च शूकान् सपिप्पलीकातिविषान्सकुष्ठान् ॥
उष्णांबुनानाहविमूढवातान्पीत्वा जलं वा स हि तोदनाशी ॥

अर्थ-वच, हरड, चित्रक, जवाखार, पीपल, अतीस, कूठ इनके चूर्णको गरम जलके साथ देवे और जलयुक्त उत्तम भोजन करे तो यह अफरा, मूढवात इनको नाश करे॥

त्रिवृतादि गुटिका ।

त्रिवृत्कृष्णाहरीतक्यो द्विचतुःपंचभागिकाः ।
गुडे तु तुल्या वटिका हरत्यानाहमुल्बणम् ॥

अर्थ--निसोथ, पीपल और हरड ये क्रमसे दो, चार और पांच भाग ले चूर्ण कर लेवे. इस चूर्णकी बराबर गुड डालके गोली बनाय ले. इसके खानेसे दारुण आनाह- रोग दूर होय ॥

स्नुह्यादि वटी ।

त्रिवृद्धरीतकी श्यामा स्नुहिक्षीरेण भावयेत् ॥
वटिका मूत्रपीतास्ताः श्रेष्ठास्त्वानाहनाशनाः ॥

अर्थ-निसोथ, हरड, पीपल इनके चूर्णमें थूहरके दूधकी भावना देवे फिर इसकी गोली करके गोमूत्रके साथ खाय तो यह अफरा नाश करनेमें श्रेष्ठ है ॥

दारुषट्कादि लेप ।

दारुषट्कादिलेपश्च सोष्णः कांजिकपेषितः ।
आनाहस्य प्रशमनः पूर्ववैद्यैः प्रकीर्तितः ॥

अर्थ—नीचे लिखा हुआ देवदारु षट्क औषधोंको कांजीमें पीस गरम २ लेप करे तो आनाह रोगको शमन करे. इस प्रकार पहले वैद्योंने कहा है ॥

दारुषट्कादि योग ।

देवदारु वचा कुष्ठं शताह्वा हिंगु सैंधवम् ।
प्रपिष्टा कांजिके लेपादानाहं नाशयत्यपि ॥

अर्थ—देवदारु, वच, कूठ, सतावर, हींग, सेंधानिमक इनका चूर्ण कांजीमें पीसके लेप करनेसे आनाहरोग नाश होय ॥

स्थिरादि घृत ।

स्थिरादिवर्गस्य पुनर्नवायाः शंपाकभूतीककरंजयोश्च ।
सिद्धः कषायो द्विपलांशिकानां प्रस्थो घृतं स्यात् परिवृद्धवाते ॥

अर्थ—सालपर्ण्यादि वर्ग, पुनर्नवा, अमलतासका गूदा, चिरायता, कंजा इनका काढा ८ तोले ले उसमें केलेका रस ६४ तोले और घी ६४ तोले डालके सिद्ध करे इस घृतको कुपित वातपर वैद्य देवे ॥

उदावर्त्त पर पथ्य ।

स्नेहस्वेदविरेकाश्च बस्तयः फलवर्त्तयः । अभ्यंगश्च यवाः सर्वसृष्टविण्मूत्रमारुतम् ॥ ग्राम्योदकानूपरसा रुबुतैलं च वारुणी । बालमूलकशम्याकत्रिवृत्तिलसुधादलम् ॥ शृंगवेरं मातुलुगं यवक्षारो हरीतकी । लवंगं रामठं द्राक्षा गोमूत्रं लवणानि च ॥ अधोवातसमुत्थे तु स्नेहस्वेदाश्च वर्त्तयः । बस्तयोऽन्नानि पानानि समीरणहराणि च ॥ पुरीषजे तथा बस्तिः स्वेदोऽभ्यंगोऽवगाहनम् । फलवर्तिश्च पानानि विड्भेदीन्यशनानि च ॥ मूत्रवेगसमुत्पन्ने त्रिविधं बस्तिकर्म च । स्वेदोऽभ्यंगोऽवगाहश्च सर्पिषश्चावपीडनम् ॥ उद्गारोत्थे तु हिक्काघ्नं कासजे कासजिद्विधिः । क्षवजे स्वेदनं धूमो घृतं चोत्तरबस्तिकम् ॥ क्षव-

प्रवर्त्तनं नस्यमभ्यंगश्चोर्ध्वजत्रुकः । शीतान्नपानं तृष्णोत्थे जम्भोत्थे वाताजित्क्रिया ॥ निद्रावेगोत्थिते क्षीरं स्वप्नं संवाहनानि च । बुभुक्षोत्थे स्निग्धमल्पमुष्णं च लघुभोजनम् ॥ बाष्पजे बाष्पसंमोक्षः स्वप्नो मद्यं प्रियाः कथाः । आमश्वाससमुत्पन्ने विश्रामो वातहारि च ॥ शुक्रोत्थे बस्तिरभ्यंगोऽवगाहश्चरणायुधः । शाल्यो मदिरा क्षीरं प्रिया यौवनगर्विताः ॥ छर्द्युत्थे लंघनं धूमो भुक्तप्रच्छर्दनं श्रमः । रूक्षाणि चान्नपानानि विरेको रक्तमोक्षणम् ॥ इति पथ्यमुदावर्ते नृणामुक्तं महर्षिभिः ॥

अर्थ–स्वेदन, स्नेहन, विरेक, वर्त्ती, फलवर्त्ती, मालिस, जो सर्व मलमूत्रादि और अधोवायुका त्यागना, ग्रामसंचारी जीव, जलसंचारी जीव और जलसमीपके जीवोंका मांसरस, अंडीका तेल, वारुणी (सराब), नविन मूल, अमलतास, निसोथ, तिल, चूना, नागरवेलके पान, अदरख, बिजोरा, जवाखार, हरड, लौंग, हींग, दाख, गोमूत्र और निमक. अधोवातके उदावर्त्तमें स्नेहन, स्वेदन, बत्ती, बास्तिकर्म और वातहरणकर्त्ता अन्न जल देवे. मलजन्य उदावर्त्तमें बास्तिकर्म, स्वेदन, मालिस और स्नान, फलवर्त्ती, दस्त लानेवाले अन्न पान देवे. मूत्रजन्य उदावर्त्तमें तीनों प्रकारकी बस्तिकर्म, स्वेदन कर्म, मालिस, स्नान, घृतपान, पीडन, डकारके उदावर्त्तमें हिचकीके नाशक कर्म करे. और खांसी रोकनेके उदावर्त्तमें खांसीके नाशके कर्म करे. छींक रोकनेके उदावर्त्तमें धूमपान, घृतपान, उत्तरबस्ती छींक लानेवाले कर्म करना, मालिस और हसलीके ऊपर शोधन करना. प्यास रोकनेके उदावर्त्तमें शीतल अन्न और जल देवे. जंभाई रोकनेके उदावर्त्तमें वादीनाशक कर्म करे. निद्रा वेगके उदावर्त्तमें दूध पीवे, सोवे और संवाहन बाष्पजन्य उदावर्त्तमें बाष्पनाशक क्रिया करे. सोवे, मद्यपान और उत्तम २ वार्त्ता कहे. श्रमकी श्वास रोकनेके उदावर्त्तमें विश्राम (तहदली लेना) और वातनाशक कर्म करे. शुक्रके वेग रोकनेके उदावर्त्तमें स्नान, मुरगेका मांस, शालीचावल, मद्यपान दूध और यौवनगर्वित स्त्रीका आलिंगन करे. वमनके उदावर्त्तमें लंघन, धूमपान, भात, बमन, परिश्रम तथा रूखे अन्न और पान, दस्तोंका कराना और रुधिरका निकालना यह महर्षियोंने उदावर्त्त रोगमें पथ्य कहा है ॥

उदावर्त्त पर अपथ्य ।

वमनं वेगरोधं च शमीधान्यानि कोद्रवान् । नीलीशाकं च

शालूकं जांबवं कर्कटीफलम् ॥ पिण्याकमालुकं सर्वं करीरं पिष्टवैकृतम् । विष्टंभीनि विरुद्धानि कषायाणि गुरूणि च ॥ उदावर्त्ती प्रयत्नेन वर्जयेत्सततं नरः ॥

अर्थ—वमन करना, मलमूत्रादिके उपस्थित वेगोंको रोकना, सेमके धान (मूंग मोठ आदि) वा (छोकरकी फली), कोदों, नाडीका साग, भसीडा, जामन, ककडी, खल, सब प्रकारके करीलफल, पिष्टपदार्थ (चून, मेदा, पिट्ठी), विष्टंभी विरुद्ध और भारी पदार्थ इन सबको उदावर्त्त रोगी त्याग देवे। उदावर्त्तरोगवालेको यावन् मात्र पदार्थ कहे हैं वे और पाचक तथा लंघन करना ये आनाह (अफरा) रोगमें वैद्य योजना करे तथा जो उदावर्त्तरोगीको अपथ्य कह आये हैं उन सबको आनाहरोगवाला यत्नपूर्वक त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे आनाहोदावर्तरोगस्य निदान-चिकित्सा पथ्याऽपथ्यसहिता समाप्ता ।

अथ गुल्मरोगकर्मविपाकः ।

गुरुं प्रत्यर्थितां यातो गुल्मवान् जायते नरः ।
आचरेत्तन्निवृत्त्यर्थं मासमेकं प्रयोव्रतम् ॥

अर्थ—जो अपने गुरुके पास भीख मांगे वह गुल्मरोगी होय इसके दूर करनेको एक महीने पयोव्रत करे तो गुल्मरोग दूर होय ॥

गुल्मरोगनिदान ।

दुष्टा वातादयोऽत्यर्थं मिथ्याहारविहारतः ।
कुर्वन्ति पञ्चधा गुल्मं कोष्ठांतर्ग्रंथिरूपिणम् ॥

अर्थ—मिथ्या आहार और मिथ्या विहार करनेसे अत्यन्त दुष्ट भये वातादि दोष कोष्ठ (पेट) में ग्रंथिरूप (गांठ) पांच प्रकारका गुल्मरोग उत्पन्न करे हैं ॥

गुल्मरोगके स्थान ।

तेषां पञ्चविधं स्थानं पार्श्वहृन्नाभिबस्तयः ॥

अर्थ—उस गुल्मरोगके पांच स्थान हैं दोनों पसवाडे, हृदय, नाभि और बस्ति ॥

गुल्मका रूप।

हृन्नाभ्योरन्तरे ग्रन्थिः संचारी यदि वाऽचलः।
वृत्तश्चयोपचयवान्स गुल्म इति कीर्तितः॥

अर्थ-हृदय और नाभि तथा बास्ति (मूत्रस्थान) इनमें चलायमान अथवा निश्चल गोल कभी घटे कभी बढे ऐसी ग्रन्थि (गांठ) होय उसको गुल्म गोलाका रोग कहते हैं इस श्लोकमें नाभि शब्दसे बस्तिका ग्रहण करा है॥

संप्राप्ति।

स व्यस्तैर्जायते दोषैः समस्तैरपि चोच्छ्रितैः।
पुरुषाणां तथा स्त्रीणां ज्ञेयो रक्तेन चापरः॥

अर्थ-कुपित भये दोषोंसे पृथक् २ और सब दोष मिलकर एक ये चार प्रकारके गुल्म पुरुषोंके होते हैं और स्त्रियोंके रक्त (रज) के दोषसे एक प्रकारका गुल्म होय है, परंतु प्रथम जो लिख आये हैं कि गुल्मरोग पांच प्रकारका है सो इसका निश्चय नहीं है, क्योंकि रक्तगुल्म स्त्रियोंके होय है, पुरुषोंके नहीं होय, धातुरूप रक्तजगुल्म जो है, सो स्त्री पुरुष दोनोंके होय है, यह क्षीरपाणिका मत है. पांच प्रकारका गुल्म है इस पर बहुत शास्त्रार्थ और मतमतांतर हैं, जिनको देखनेकी इच्छा हो सो मधुकोश और आतंकदर्पण टीकामें देख लेवें॥

पूर्वरूप।

उद्गारबाहुल्यपुरीषबंधस्तृप्त्यक्षमत्वांत्रविकूजनानि।
आटोपमाध्मानमपक्तिशक्तिरासन्नगुल्मस्य वदन्ति चिह्नम्॥

अर्थ-डकार बहुत आवें, मलका अवरोध होय, अन्नमें अरुचि होय, सामर्थ्यका नाश होना, आंत बोले, पेटमें पीडा होय और अफरा होय, तथा पेटका जकड जाना, मंदाग्नि होना यह लक्षण होय तो जानना कि गुल्म (गोला) रोग शीघ्र प्रगट होना चाहता है॥

गुल्मके साधारण रूप।

अरुचिः कृच्छ्रविण्मूत्रं वातेनांत्रविकूजनम्।
आनाहश्चोर्ध्ववातत्वं सर्वगुल्मेषु लक्षयेत्॥

अर्थ-अरुचि, मलमूत्र कष्टसे उतरे, वादीसे आंत बोले, पेट फूल आवे, ऊर्ध्ववात होय, यह लक्षण सब गुल्मोंमें होय हैं सब गुल्मरोगमें वात कारण है सो चरक और सुश्रुतमेंभी लिखा है॥

वातगुल्मके लक्षण ।

रूक्षान्नपानं विषमातिमात्रं विचेष्टनं वेदविनिग्रहश्च । शोकाभिघातोऽतिमलक्षयश्च निरन्नता चानिलगुल्महेतुः ॥ यः स्थानसंस्थानरुजो विकल्पं विड्वातसङ्गं गलवक्त्रशोषम् । श्यावारुणत्वं शिशिरज्वरं च हृत्कुक्षिपार्श्वांसशिरोरुजं च ॥ करोति जीर्णेऽप्यधिकं च कोपं भुक्ते मृदुत्वं समुपैति पश्चात् । वातात्स गुल्मो नच तत्र रूक्षं कषायतिक्तं कटु नोपसेवयेत् ॥

अर्थ--रूखा, विषम अतिमात्र ऐसे अन्नपान सेवन करनेसे, बलवान् पुरुषसे लडना मलमूत्र आदि वेगोंके धारण करनेसे, शोक और अभिघात (लकडी आदिकी चोट) विरेचन आदिसे मलका क्षय करना, उपवास ये सब वातगुल्मके कारण हैं. जो गुल्म कभी नाभी, कभी बस्ती, कभी पसवाडेमें चला जाय तथा कभी लंबा कभी मोटा गोल अथवा छोटा होय, तथा उसमें पीडा कभी थोडी, कभी बहुत होय, तोदभेद (सुई चुभानेकीसी पीडा) होय अथवा अनेक प्रकारकी पीडा होय, मलकी और अधोवायुकी अच्छी रीतिसे प्रवृत्ति होय नहीं, गला और मुख सूखे, शरीरका वर्ण नीला अथवा लाल होय, शीतज्वर, हृदय, कूख, पसवाडे, कंधा और मस्तक इनमें पीडा होय और गोला जीर्ण होने पर अधिक कोप करे और भोजन करनेके पिछाडी नरम हो जाय, वह गोला वादीसे होय है. उससे रूखा, कषेला, अडुआ, तीखा पदार्थ खानेसे सुख नहीं होय ॥

वातगुल्म पर साधारणक्रिया ।

प्रागेव वातजे गुल्मे सुस्निग्धं स्वेदितं नरम् । रेचितं स्नेहरेकैश्च निरूहैः सानुवासकैः ॥ उपाचरेद्भिषक् प्राज्ञो मात्रां काले विशेषतः ॥

अर्थ--वातगुल्मरोगीको प्रथम घृतपानादिकोंसे स्निग्ध करके पसीने निकाले स्निग्ध रेचन, निरूहबस्ति और अनुवासनबस्ति देकर फिर औषध करे ॥

सामान्य चिकित्सा ।

स्नेहस्वेदविरेकैस्तु गुल्मः शैथिल्यमाप्नुयात् ।
तस्मादनेन विधिना गुल्मरोगमुपाचरेत् ॥

अर्थ--स्नेह, पसीने, रेचन इत्यादि क्रियासे गुल्म शिथिल होता है इसीसे प्रथम उन क्रियाओंको करके फिर औषध करे ॥

सामान्य उपचार ।

वातगुल्मप्रतीकारे प्रकुप्यति यदा कफः । शस्तमुल्लेखनं तत्र-चूर्णाद्याश्च कफापहाः ॥ यदि कुप्यति वा पित्तं विरेकस्तत्र भेषजम् दोषघ्नैरप्यशांते च गुल्मे शोणितमोक्षणम् ॥

अर्थ–वातगुल्म पर उपचार करनेसे यदि कफ कुपित होवे तो लेखन और कफ नाशक चूर्णादिक औषध देवे और पित्त कुपित होय तो उसको रेचक औषध देवे यदि ऐसा करने पर दोषशांति नहीं होय तो उसका रुधिर निकाले ॥

मातुलुंगादि योग ।

मातुलुंगारसो हिंगु दाडिमं बिडसैंधवम् ।
सुरामंडेन पातव्यं वातगुल्मरुजापहम् ॥

अर्थ–बिजौरेका रस, हींग, अनारदाना, बिडनोन और सैंधानिमक इनको एकत्र कर सुरामंडके साथ सेवन करनेसे वातगुल्मको नाश करे ॥

शुन्यादि योग ।

नागरार्धपलं पिष्टं द्विपले लुंगकस्य च ।
तिलस्यैकं गुडपलं क्षीरेणोष्णेन पाययेत् ॥
वातगुल्ममुदावर्तं योनिशूलं च नाशयेत् ॥

अर्थ–सोंठका चूर्ण २ तोले, बिजोरेका चूर्ण ८ तोले, तिलोंका चूर्ण ४ तोले और गुड ४ तोले इन सबको एकत्र करके. चूर्ण करे. इसको गरम जलके साथ पीवे तो वातगुल्म, उदावर्त्त और योनिशूल इनको नाश करे ॥

केतकीक्षारयोग ।

स्वर्जिकाकुष्ठसहितः क्षारः केतकिसंभवः ।
पीतस्तैलेन शमयेद्वातगुल्मं सुदारुणम् ॥

अर्थ–सज्जीक्षार, कूठ और केतकीका क्षार ये समान भाग लेवे. सबका एकत्र चूर्ण कर तिलके तेलसे सेवन करे तो कठिनभी वातगुल्मको शमन करे ॥

वारुणीमंडयोग ।

पिबेदेरंडतैलं वा वारुणीमंडामिश्रितम् ।
तदेव तैलं पयसा वातगुल्मी पिबेन्नरः ।

अर्थ—वातगुल्मरोगवाला अंडीके तेलको सुरामंडसे अथवा दूधसे पीवे तो वातगुल्मको नाश करे ॥

वातगुल्मपर हपुषादि घृत ।

हपुषाजाजिपृथ्वीकापिप्पलीमूलचित्रकैः । क्षीरमूलककोलानां रसैश्च विपचेद्धृतम् ॥ वातगुल्मारुचिश्वासशूलानाहज्वरार्शसाम् । ग्रहणीयोनिदोषाणां घृतमेतन्निवारणम् ॥

अर्थ—हाऊबेर, जीरा, काला जीरा, पीपरामूल और चित्रक इनके काढे और विदारीकंद और बेर इनका रस इनमें घी मिलायके पचावे वह घी वातगुल्म, अरुचि, श्वास, शूल, पेटका फूलना, ज्वर, बवासीर, संग्रहणी और योनिदोष इन पर देवे ॥

चित्रकादि घृत ।

चित्रकं व्योषसिंधूत्थपृथ्वीकाचव्यदाडिमैः । दीप्यकग्रंथिकाजाजीहपुषाधान्यकैः समैः ॥ दध्यारनालबदरमूलकस्वरसैर्घृतम् । पक्त्वा पिबेद्वातगुल्मदौर्बल्याटोपशूलनुत ॥

अर्थ—चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधा निमक, विदारीकंद, चव्य, अनारदाना, अजमायन, पीपरामूल, जीरा, हौऊबेर और धनिया ये समान भाग ले काढा कर लेवे और इस काढेमें घी, दही, कांजी, बेर और मूली इनका रस ये सब पदार्थ मिलायके पचावे. इस घृतके सेवन करनेसे वायगोला, दुर्बलता, पेटमें गुडगुडाहट शब्द होना इनको नाश करे ॥

हिंग्वादि घृत ।

हिंगु सौवर्चलं त्र्यूषं सिंधुजं दाडिमाक्षकैः । पुष्कराजाजिधान्याकैरम्लवेतसचित्रकैः ॥ अश्वगंधा वचा चैव निर्गुंडी सकचूरकैः । प्रतिचूर्णैः कर्षमितैः प्रस्थं चैव घृतं ददेत ॥ पाच्यं घृतावशेषं च पलार्धमनुशीलयेत । वातगुल्मं च शूलं च आनाहं च विनाशयेत ॥

अर्थ—हींग, संचरनिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधा निमक, अनारदाना, बहेडा पुहकरमूल, जीरा, धनिया, अमलवेत, चित्रक, असगंध, वच, निर्गुंडी और कचूर ये प्रत्येक तोले २ भर लेवे. इनके काढेमें ६४ तोले घी डालके घृत शेष रहे इस प्रकार औटावे फिर इसको उतारके वह घी दो तोले लेके अनुपानके साथ देवे तो वायगोला, शूल और अफरा इनको नाश करे ॥

त्र्यूषणादि घृत ।

त्र्यूषणं त्रिफलाधान्यविडंगचव्यचित्रकैः ।
कल्कैरेतैर्घृतं सिद्धं सक्षीरं वातगुल्मनुत् ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच,पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, धनिया, वायविडंग, चव्य और चित्रक इनके कल्कमें घृत, दूध मिलायके सिद्ध करे यह घृत वायगोलेको नाश करे ॥

तैल।

राजवृक्षस्य तैलं च निष्कं पीतं तु गुल्माजित् ॥

अर्थ-अमलतासवृक्षका तेल आधा तोला पीवे तो संपूर्ण गुल्मोंको नाश करे ॥

कुष्ठादि तैल ।

श्वेतकुष्ठं तथा हिंगु प्रतिनिष्कद्वयं द्वयम् । क्षारं तत्रिफलाचूर्णं दशभागं सुचूर्णितम् ॥ कल्कं गोक्षीरतः पिष्ट्वा पूर्वं तैलं स्नुहिप्लुतम् । पचेत्तैलावशेषं तु पिबेन्निष्कद्वयं द्वयम् ॥ विरेकांते तु तक्रेण शाल्यन्नं भोजयेल्लघु । चतुर्दिनांते दातव्यमिदं तैलं न नित्यशः ॥ गुल्मं जलोदरं प्लीहां शूलं च श्वयथुप्रणुत् ॥

अर्थ-सपेद कुष्ठ १, हींग १, जवाखार १ और त्रिफलाका चूर्ण १० भाग इनको गोमूत्रमें कल्क करके उसमें तेल और थूहरका दूध मिलायके तेल शेष रहने पर्यंत पचावे जब तैयार हो जाय तब उतार लेय इसमेंसे १ तोला देवे जब दस्त हो जावे तब छाछभातका हलका भोजन देवे. इस प्रकार चार २ दिनमें दस्त करावे नित्य न करावे. यह कुष्ठा-दि तेल गोला, जलोदर, प्लीहा, शूल और सूजन इनको दूर करे ॥

विडंगादि कल्क ।

विडंगं दाडिमं हिंगु सैंधवैलासुवर्चलम् ।
मातुलिंगरसे पीत्वा कर्षैकं सुरया सह ॥
वातगुल्मं हरेत्पीत्वा प्राणनाथो रसोपि वा ॥

अर्थ-वायविडंग, अनारदाना, हींग, सैंधानिमक, इलायची और संचरनिमक इन सब-को बिजोरेके रसमें बारीक पीस यह कल्क एक तोलेको दारू मिलायके पीवे तो वादी-का गोला नाश करे अथवा प्राणनाथरस देय ॥

गुग्गुलयोग।

गुग्गुलं वा गवां मूत्रैः पिबेद्गुल्मार्तिशूलनुत् ॥

अर्थ—गूगलको गोमूत्रमें मिलायके देवे तो गोला और शूल इनको नाश करे ॥

कुलत्थादि क्वाथ।

कुलित्थं जांगली शाली क्षीरं वा तक्रमुस्तकम्।
तर्कारी च हितं पथ्या धान्यांबु क्वथितं पिबेत् ॥

अर्थ—कुलथी, कपूरकचरी, भात, दूध, छाछ, दहीका पानी, अरनी, हरड, धनिया और नेत्रवाला इनका काढा करके देवे ॥

हिंग्वादि चूर्ण।

हिंगुसैंधववृक्षाम्लराजिकानागरैः समैः।
चूर्णं गुल्मप्रशमनं स्यादेतद्धिंगुपंचकम् ॥

अर्थ—हींग, सैंधानिमक, तंतडीक, राई, सोंठ इन सबका समभाग चूर्ण करे यह हींगपंचक सेवन करनेसे वायुगोलेको शांत करे ॥

वातगुल्म पर विरेचन।

वातारितैलेन पयोयुतेन पथ्यासमेतेन विरेचनं हि।
संस्वेदनं स्निग्धमतिप्रशस्तं प्रभंजनक्रोधकृते तु गुल्मे ॥

अर्थ—अंडीके तेलमें दूध और छोटी हरडका चूर्ण डालके देवे और देहमें तैलादिक स्निग्ध पदार्थकी मालिस करके पसीने निकाले यह क्रिया वातगुल्म पर उत्तम है ॥

शिखिवाडवरस।

मारितं सूतताम्राभ्रं गंधकं माक्षिकं समम्। मर्दयेच्चित्रकद्रावैर्यवक्षारयुतं दिने ॥ त्रिगुंजं भक्षयेन्नित्यं नागवल्लीदलेन च।
वातगुल्महरः ख्यातो रसोयं शिखिवाडवः ॥

अर्थ—पारेकी भस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, गंधक, सुवर्णमाक्षिक, जवाखार ये एकत्र कर उसमें चित्रकके रसकी भावना देवे और इसमेंसे तीन रत्ती पानमें रखके खाय तौ यह शिखिवाडवरस सर्व वात गुल्मोंको नाश करे ॥

पथ्य ।

तित्तिरांश्च मयूरांश्च कुक्कुटान् क्रौंचवर्तिकान् ।
सर्पिश्शालिप्रसन्नाश्च वातगुल्मे च योजयेत् ॥

अर्थ--तीतर, मोर, मुरगा, क्रौंच और बटेर इन पक्षियोंका मांसरस, घी भात, मद्य अथवा सुरामंड ये वातगुल्म पर पथ्य देना चाहिये ॥

पित्तगुल्मके लक्षण ।

कट्वम्लतीक्ष्णोष्णविदाहिरूक्षक्रोधातिमद्यार्कहुताशसेवा । आमाभिघातो रुधिरं च दुष्टं पैत्तस्य गुल्मस्य निमित्तमुक्तम् ॥
ज्वरः पिपासा वदनाङ्गरागः शूलं महज्जीर्यति भोजने च । स्वेदो विदाहो व्रणवच्च गुल्मः स्पर्शासहः पैत्तिकगुल्मचिह्नम् ॥

अर्थ–कटु, खट्टा, तीक्ष्ण रस, दाहकारक (वंशकरीलादिक), रूखा ऐसे भोजन करनेसे, क्रोधसे, अति मद्यपान, सूर्यकी धूपमें डोलनेसे, अग्निके समीप रहनेसे, विदग्ध अजीर्णसे दुष्ट भया रस उससे अभिघात कहिये लकडी आदि लगनेसे, रुधिरका बिगडना ये पित्तगुल्मके कारण कहे हैं. ज्वर, प्यास, मुख और अंगोंमें लालपना, अन्न पचनेके समय अत्यन्त शूल होय, पसीना आवे, जलन होय कोडाके समान स्पर्श सहा न जाय ये पित्तगुल्मके लक्षण हैं ॥

द्राक्षादि चूर्ण ।

द्राक्षाभयासं गुल्मे पैत्तिके सगुडं पिबेत् ।
सशर्करं वा विलिहन् त्रिफलाचूर्णमुत्तमम् ।

अर्थ--पित्तगुल्म पर दाखके रससे छोटी हरडके चूर्णको गुड मिलायके देवे अथवा त्रिफलाके चूर्णमें खांड मिलायके देवे तो पित्तगुल्म दूर होवे ॥

पित्तगुल्मपर विरेचन ।

पित्तगुल्मे त्रिवृच्चूर्णं पातव्यं त्रिफलांबुना । विरेकाय सितायुक्तं कंपिल्लं वा समाक्षिकम् ॥ अभयां द्राक्षया खादेत् पित्तगुल्मी गुडेन वा ॥

अर्थ--पित्तगुल्मपर त्रिफलेके काढेमें निसोथका चूर्ण मिलायके देवे अथवा कपिल मधु (सहत) के साथ देवे अथवा छोटी हरडके चूर्णको दाख अथवा गुडके साथ सेवन करे ये योग दस्त करानेवाला है ॥

पित्तगुल्म पर पथ्य ।

शालिगोच्छागदुग्धं च पटोलं घृतमिश्रितम् । द्राक्षां परूषकं धात्रीं खर्जूरं दाडिमं सिताम् ॥ पथ्यार्थं पैत्तिके गुल्मे बलातोयं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-शालीचावलोंका भात, गौ अथवा बकरी इनका दूध, परवल, घी, दाख, फालसे, आंवले, खिजूर, अनार, मिश्री, खिरेटी ये पदार्थ पित्तगुल्म पर पथ्य हैं इस वास्ते देवे ॥

द्राक्षादि घृत ।

द्राक्षामधुकखर्जूरं विदारी च शतावरी । परूषकाणि त्रिफलां साधयेत्पलसंमिताम् ॥ जलाढके पादशेषे रसमामलकस्य च । घृतमिक्षुरसं क्षीरमभयाकल्कपादिकम् ॥ साधयेच्च घृतं सिद्धं शर्कराक्षौद्रपादिकम् । प्रयोगः पित्तगुल्मघ्नः सर्वगुल्मविकारनुत् ॥

अर्थ-दाख, मुलहठी, खजूर, विदारीकंद, सतावर, फालसे और त्रिफला ये प्रत्येक चार ४ तोले तथा जल २५६ तोलेमें डालके काढा करे जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेय और इसमें आमलेका रस, ईखका रस, हरडका कल्क, और घी ये काढेके चतुर्थांश डालके पचन करे तो घृत सिद्ध होय. इसमें चतुर्थांश मिश्री मिलायके तथा सहत डालके सेवन करनेको देवे यह योग पित्तगुल्म तथा संपूर्ण गुल्मविकारोंको नाश करे ॥

आमलक्यादि घृत ।

रसेनामलकेक्षूणां घृतपादं विपाचयेत् ।
पथ्यायाश्च पिबेत्सर्पिस्तत्सिद्धं पित्तगुल्मनुत् ॥

अर्थ-आंवलेका, ईखका और छोटी हरडके रसमें चतुर्थांश घी डाल पचावे तो घृत सिद्ध होय इसके पीनेसे पित्तगुल्मका नाश होय ॥

त्रायमाणादि घृत ।

जले दशगुणे साध्यं त्रायमाणचतुःपलम् । पंचभागान्वितं पूतं कल्के संयोज्य कार्षिकैः ॥ रोहिणी कटुका मुस्ता त्रायमाणा दुरालभा । द्राक्षा तामलकी वीरा जीवंती चंदनोत्पलम् ॥

रसस्यामलकानां च क्षीरस्य च घृतस्य च । पलानि पृथग-ष्टाष्टौ सम्यक् दत्त्वा विपाचयेत् ॥ पित्तगुल्मं रक्तगुल्मं विसर्पं पित्तजं ज्वरम् । हृद्रोगं कामलां कुष्ठं हन्यादेतद्घृतोत्तमम् ॥

अर्थ-त्रायमाण १६ तोलेको १६० तोले जलमें डालके औटावे जब पंचमांश जल रहे तब उतारके कपडेमें छान लेवे. फिर छोटी हरड, कुटकी, नागरमोथा, त्रायमाण, धमासा, दाख, भूयआवला, धीगुवार, गिलोय, चंदन और कमल इन औषधोंका एक २ तोला कल्क अदरखका रस, दूध और घी ये आठ २ पल ले उस काढेमें डालके पचावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतारके देवे तो पित्तगुल्म, रक्तगुल्म, विसर्प, पित्तज्वर, हृदयरोग, कामला और कुष्ठ इनको नाश करे ॥

कफगुल्मनिदान और लक्षण ।

शीतं गुरु स्निग्धमचेष्टनं च संपूरणं प्रस्वपनं दिवा च । गुल्मस्य हेतुः कफसंभवस्य सर्वस्तु दुष्टो निचयात्मकस्य ॥ स्तैमित्य-शीतज्वरगात्रसादहृल्लासकासारुचिगौरवाणि । शैत्यं रुगल्पा कठिनोन्नतत्वं गुल्मस्य रूपाणि कफात्मकस्य ॥

अर्थ-शीतल, भारी, चिकने ऐसे पदार्थके सेवनसे तृप्तिकी अपेक्षा, अधिक भोजन करना, दिनमें सोना ये कफोत्पन्न गुल्म होनेका कारण है. और जो वातजादि तीनों गुल्मोंके कारण कहे हैं वे सब सन्निपातगुल्मके कारण जानने. देहका गीलापना, शीतज्वर, शरीरकी ग्लानि, सूखी रद (उबाकी), खांसी, अरुचि, भारीपना, शीतका लगना, थोडी पीडा होय, गुल्म (गोला) कठिन होय और ऊंचा होय, इतने ये सब कफात्मकगुल्मके लक्षण हैं ॥

सामान्य चिकित्सा ।

योगैश्च वातगुल्मोक्तैः श्लेष्मगुल्ममुपाचरेत् ।
अपरैश्च बलासघ्नैर्युक्तियुक्तैः समं नयेत् ॥

अर्थ-कफगुल्म पर वातगुल्मोक्त योग देवे तथा औरभी कफनाशक योग युक्ति-पूर्वक योजना करके शमन करे ॥

यवानीचूर्ण ।

यवानीचूर्णितं तक्रे बिडेन लवणीकृतम् ।
श्लेष्मगुल्मे पिबेद्वा तन्मूत्रवर्चोनुलोमनम् ॥

अर्थ-अजमायनका चूर्ण और बिड निमक इनको छाछमें डालके कफगुल्ममें देवे तो मलमूत्रका अनुलोमन होकर मल और मूत्र साफ होय ॥

हिंग्वादि चूर्ण ।

हिंगुग्रंथिकधान्यजीरकवचा चव्याग्निपाठा शठी वृक्षाम्लं लवणत्रयं त्रिकटुकं क्षारद्वयं दाडिमम् । पथ्या पौष्करवेतसाम्लहपुषाजाज्यस्तदेभिः कृतं चूर्णं भावितमेतदार्द्रकरसैः स्याद्बीजपूरद्रवैः ॥ गुल्माध्मानगुदांकुरग्रहणिकोदावर्तसंज्ञौ गदौ प्रत्याध्मानगदोदराश्मरियुतास्तूनीद्वयारोचकान् । ऊरुस्तंभमतिभ्रमं च मनसो बाधिर्यमष्ठीलिकां प्रत्यष्ठीलिकया सहापहरते प्राक्पतिमुष्णांबुना ॥ हृत्कुक्षिवंक्षणकटीजठरांतरेषु बस्तिस्तनांसफलकेषु च पार्श्वयोश्च । शूलानि नाशयति वातबलासजानि हिंग्वाद्यमाद्यमिदमाश्विनसंहितोक्तम् ॥

अर्थ-हींग, पीपरामूल, धनिया, जीरा, वच, चव्य, चित्रक, पाढ, कचूर, अमलवेत, सैंधानिमक, बिड निमक, काचिया निमक, सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जीखार, जवाखार, हरड पोहकरमूल, इमली, हाऊबेर, काला जीरा इनको समान भाग ले चूर्ण करे फिर इसको अदरखके रसकी तथा बिजोरेके रसकी भावना देवे तो चूर्ण तैयार हो. इसको गरम जलके साथ सेवन करनेसे गोला, पेटका फूलना, बवासीर, संग्रहणी, उदावर्त्त, प्रत्याध्मान, उदर, पथरी, तूनी, प्रतूनी, अरुचि, ऊरुस्तंभ, मतिभ्रंश, बहरेपना, अष्ठीला, प्रत्यष्ठीला और हृदयका, कूखका, वंक्षण, कमर, पेट, बस्ति, कंधे, पसवाडे इनके शूल तथा वातकफ संबंधी शूल इनको नाश करे यह अश्विनीकुमारोंने कहा है ॥

पंचकोलादि घृत ।

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः । पलिकैः सयवक्षारैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ क्षीरप्रस्थेन तत्सर्पिर्हंति गुल्मं कफात्मकम् । ग्रहणीपांडुरोगघ्नं प्लीहकासज्वरापहम् ॥

अर्थ-पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ ये चार २ तोले लेवे इनका अष्टमांश क्राथ करे फिर इसमें १ शेर घृत, जवाखार ४ तोले और दूध सेरभर डालके पचावे

जब घृत मात्र शेष रहे तब उतार लेवे. यह घी कफगुल्म, संग्रहणी, पांडुरोग, प्लीहा, खांसी और ज्वर इनको नाश करे ॥

कफगुल्म पर पथ्य ।

कुलित्थाञ्जीर्णशालींश्च षष्टिकान्यवजांगलान् ।
मद्यं तैलं घृतं तक्रं कफगुल्मे प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-पुराने कुलथी, पुराने साठी चावल, जौ, जंगली जीवोंका मांस, मद्य, तेल, घृत और छाछ ये पदार्थ कफगुल्म पर पथ्यार्थ देवे ॥

तिलादि लेप और सेंक ।

तिलैरंडातसीबीजं सर्षपं च विपेषयेत् ।
तेन लिप्तोदरं स्वेद्यमर्कपत्रैः सुकल्पितैः ॥

अर्थ-तिल, अंड, और अलसी इनके बीज तथा सरसों इन सबको एकत्र पीसके इसका पेट पर लेप करे और आकके पत्तोंसे पेटको सेंके तो कफगुल्म नष्ट होय ॥

सेंक ।

एरंडार्कदलैर्वाथ सोष्णैः स्विद्यन्मुहुर्मुहुः ॥

अर्थ-अंड अथवा आक इनके गरम २ पत्तों करके वारंवार सेंके तो कफगुल्म दूर होय ॥

दशमूलादि तेल ।

दशमूलकणा द्राक्षा श्यामा धात्री पलं पलम् ।
प्रस्थमेरंडतैलस्य प्रस्थषट्कं गवां पयः ॥
पचेत्तैलावशेषं तु तत्तैलं कफगुल्मनुत् ॥

अर्थ-दशमूल, पीपल, दाख, हरड और आंवले ये चार २ तोले लेवे इनके करे काढे में ६४ तोले अंडीका तेल और गौका दूध ३८४ तोले सबको एकत्र कर तेल शेष रहने पर्यंत पचावे यह तेल कफगुल्मका नाश करे ॥

त्रिवृत्तादि घृत ।

त्रिवृत्ता त्रिफला दंती दशमूलं पलोन्मितम् । जले चतुर्गुणे पक्त्वा चतुर्भागावशेषिते ॥ सर्पिरेरंडतैलं च क्षीरं चैकत्र साधयेत् । संसिद्धो मिश्रकः स्नेहः सक्षौद्रं कफगुल्मनुत् ॥

अर्थ-निसोथ, हरड, बहेडा, आंवला, जमालगोटेकी जड (दंती) और दशमूल ये सब एक २ पल लेवे. चौगुने जलमें इसका काढा कर चतुर्थांश रहने पर उतार लेवे छानके इसमें घी, अंडीका तेल और दूध ये सब एकत्र करके अग्नि पर पचावे. जब तेल और घृत शेष रहे तब उतार ले यह मिश्रकघृत है. इसको सहतमें मिलायके खाय तो कफगुल्मको नाश करे ॥

विद्याधररस ।

गंधकं तालकं ताप्यं मृताभ्रं च मनः शिलाम् । शुद्धसूतं च तुल्यांशं मर्दयेद्भावयेद्दिनम् ॥ पिप्पल्यास्तु कषायेण वज्रीक्षीरेण भावयेत् । निष्कार्धं भक्षयेत्क्षौद्रैर्गुल्मप्लीहादिकं जयेत् ॥ रसो विद्याधरो नाम गोमूत्रं च पिबेदनु ॥

अर्थ-गंधक, हरताल, सुवर्णमाक्षिक, अभ्रकभस्म, मनसिल और शुद्धपारा ये समान भाग लेवे. इसको पीपलका काढा और थूहरके दूधकी एक एक दिन भावना देवे. यह विद्याधररस सहतके साथ तीन मासे देवे और ऊपरसे गोमूत्र पीवे तो गुल्म और प्लीहा इनको नाश करे ॥

नाराचरस ।

शुद्धसूतं समं गंधं जेपालं त्रिफलासमम् ।
त्रिकटुं पेषयेत्क्षौद्रैर्निष्कं गुल्महरं लिहेत् ॥
गुल्मोदरहरः ख्यातो नाराचोयं रसोत्तमः ॥

अर्थ-शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, जमालगोटा, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल इन सबको एकत्र खरल करे इसमेंसे छः मासे यह नाराचरस सहतके साथ देवे तो गोला और उदर इनको नाश करनेवाला प्रसिद्ध है ॥

द्वंद्वजगुल्मनिदान और लक्षण।

निमित्तलिङ्गान्युपलभ्य गुल्मे संसर्गजे दोषबलाबलं च ।
व्यामिश्रलिङ्गानपरांश्च गुल्मांस्त्रीनादिशेदौषधकल्पनार्थम् ॥

अर्थ-द्वंद्वज गुल्ममें कारण, लक्षण और दोषोंका बलाबल जानकर चिकित्सा करनेके वास्ते, मिश्र लक्षणके और तीन गुल्म समझने चाहिये अर्थात् एक दोष बलवान् होय तौ चिकित्सा करनी चाहिये और द्विदोष बलवान् वा त्रिदोष बलवान् होय तौ चिकित्सा न करे ॥

द्राक्षादि कल्क ।

द्राक्षाचंदनयष्ट्याह्वा पद्मकं तंदुलोदकैः ।
पिष्ट्वा क्षीरविदारीं च सक्षौद्रां पाययेदनु ॥
पंचवक्त्रो रसो देयो गुल्मे तु कफवातजे ॥

अर्थ-कफवातगुल्म पर दाख, चंदन, मुलहठी, पद्माख और दूध निकलनेवाला विदारीकंद इनको चांवलोंके धोवनके साथ पीसके इस कल्कको सहत डालके देवे और ऊपरसे पंचवक्त्र रस देवे ॥

सैंधवादि तैल ।

सैंधवं चित्रकं दंतिशक्राह्वं च पलं पलम् । द्वात्रिंशत्पलगोमूत्रैः पचेदष्टावशेषकैः ॥ कषायस्य समं तैलं पिष्ट्वा तं च विपाचयेत्। तैलावशेषमुत्तार्य अनुपानैः पिबेत्सदा ॥

अर्थ-सैंधानिमक, चित्रक, जमालगोटा और इन्द्रजौ ये प्रत्येक चार २ तोले लेय इनको १२८ तोले गोमूत्रमें अष्टमांश काढा करे. इसमें इन पूर्वोक्त औषधोंका कल्क और जितना काढा होवे उतना ही तैल मिलायके सिद्ध करे जब तेल मात्र शेष रहे तब उतारले छानके धर रखे फिर इसको गुल्मादिरोगों पर अनुपानके साथ देवे ॥

नाराच रस ।

पित्तश्लेष्मस्थिते गुल्मे देयो नाराचको रसः ॥

अर्थ-पित्तश्लेष्मज गुल्म पर नाराचरसको देवे ॥

करंजादि पुटपाक ।

करंजवटपत्राणि चव्यं वह्निः कटुत्रयम् । इंद्रवारुणिकामूलं पुटे पाच्यं ससैंधवम् ॥ तद्द्रावे वारिणा पीतं पलार्धं मधुनापि वा । हंति गुल्मोदरं पांडुं द्वंद्वजं श्वयथुं तथा ॥

अर्थ-चव्य, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल और इन्द्रायनकी जड और सैंधानिमक ये बारीक पीसके कंजा और बडके पत्तोंमें लपेट कर पुटपाककी विधिसे पाक करे फिर इसको जलसे पीस दो तोले सहत डालके देवे तो गोला, उदर पांडुरोग, द्वंद्वज व्याधि इन सबको नाश करे ॥

सन्निपातगुल्म ।

महारुजं दाहपरीतमश्मवद्धनोन्नतं शीघ्रविदाहदारुणम् ।
मनःशरीराग्निबलापहारिणं त्रिदोषजं गुल्ममसाध्यमादिशेत् ॥

अर्थ–भारी पीडा करनेवाला, दाह करके व्याप्त, पत्थरके समान कठिन तथा ऊंचा और शीघ्र दाह करके भयंकर, मन, शरीर, अग्नि और बल इनका नाश करनेवाला, (अर्थात् मनको विकल करनेवाला, शरीरको कृश करनेवाला और विवर्ण करनेवाला, अग्निवैषम्यादिकारक असामर्थ्य. करनेवाला) ऐसा त्रिदोषज गुल्म असाध्य जानना ॥

सामान्य ।

धीमानुपाचरेत् गुल्मं प्रत्याख्याय त्रिदोषजम् ।
सन्निपातोत्थिते गुल्मे त्रिदोषघ्नो विधिर्हितः ॥

अर्थ–बुद्धिमान् पुरुषको त्रिदोषजन्य गुल्मको असाध्य जानके उपचार करे. सन्निपात गुल्म पर त्रिदोषघ्न औषधि हितकारी है ॥

वरुणादि क्काथ ।

वरुणादिकषायस्तु गुल्मदोषत्रयोत्थितम् ।
हंति हृत्पार्श्वशूलाढ्यं सोपद्रवं न संशयः ॥

अर्थ–वरुणादिक औषधोंका काढा त्रिदोषजगुल्मका नाश करे और हृदय तथा पार्श्व इनके उपद्रवयुक्त शूलको नाश करे ॥

वरुणक्काथ मध्यविद्रधि पर ।

वरुणादिगणक्काथमपक्के मध्यविद्रधौ ।
रुषकादिरसैर्युक्तं पिबेच्छमनहेतवे ॥

अर्थ–वरुणादिक औषधोंका गण आगे कहा हुआ उसका काढा करके तथा रुषकादिक औषधका चूर्ण आगे कहा है उसको उस काढेमें डालके पीवे तो पक्व नहीं हुआ विद्रधि अर्थात् कुछ २ कचे विद्रधिरोगको दूर करे ॥

वारुणादि क्काथ ।

वरुणो बकपुष्पं च बिल्वापामार्गचित्रकाः । अग्निमंथद्वयं शिग्रुद्वयं च बृहतीद्वयम् ॥ सैरेयकत्रयं मूर्वा मेषशृंगी किरातकः ।

अजशृंगी च बिंबं च करंजश्च शतावरी ॥ वरुणादिगणक्काथः कफमेदोहरः स्मृतः । हंति गुल्मं शिरःशूलं तथाऽभ्यंतरविद्रधीन् ॥

अर्थ-वरना, बकपुष्प, बेलगिरी, ओंगा, चित्रक, दो प्रकारकी अरनी (छोटी, बडी), दो प्रकारका सहजना (मीठा और कडुआ), कटेरी और बडी कटेरी, तीन प्रकारकी कटसैरया (पीला, काला और सपेद), मूर्वा, काकडासिंगी, चिरायता, मेढासिंगी, कंदूरीकी जड, अथवा पत्ते, कंजा, सतावर इन सब औषधोंका काढा करके पीवे तो कफ, मेदरोग तथा मस्तकका शूल और गोला ये दूर होवें. अंतर्विद्रधि नाम करके जो रोग होता है वह दूर होवे मूलमें ' तथा विद्रधिपीनसान् ' ऐसा भी पाठ है इसका यह अर्थ है कि विद्रधि और पीनसरोगको दूर करे ॥

जयंत्यादि दो क्काथ ।

जयंत्या वा जयाया वा गुडैः सोष्णजलं पिबेत् ।
त्रिदोषोत्थं हरेद्गुल्मं रसो वानंदभैरवः ॥

अर्थ-जयंती या जया इनका गरम काढा गुड डालके देवे तो त्रिदोषोत्थगुल्म नष्ट होवे ॥

राजवृक्षादि पुटपाक ।

राजवृक्षस्नुही भानुकरंजांकुलजंबुकम् । पाटला रजनी चिंचा पिप्पली च पुनर्नवा ॥ अपामार्गस्य मूलानि समं रुद्ध्वा पुटे पचेत् । द्विनिष्कं पलगोमूत्रैर्जयेद्गुल्मं त्रिदोषजम् ॥

अर्थ-अमलतास, थूहर, आक, कंजा, अंकोल, पाढ, जामुन, हलदी, इमली, पीपल, पुनर्नवा और ओंगा इनकी समान भाग जड लेके पुटपाककी विधिसे पचावे इसमेंसे एक तोला लेके आठ तोले गोमूत्रसे देवे तो त्रिदोषगुल्मको नाश करे ॥

अभयादि योग ।

अभया सैंधवं तक्रं भोजनांते पिबेदनु । त्रिफलां सुवर्चला-क्षीरं तुल्यं गुंजैककं भक्षयेत् ॥ त्रिदोषोत्थं हरेद्गुल्मं त्रिफला-संचलं तथा । उष्णे तक्रे पिबेत्कर्षं मुंडीमूलं च वारिणा ॥

अर्थ-हरड, सैंधानिमक इनके चूर्णको छाछमें मिलाय भोजन करनेके पश्चात् पीवे तथा हरड, बहेडा, आंवला और संचर निमक इनका चूर्ण एक रत्ती भक्षण करे किंवा गोरखमुंडीकी जड जलमें पीस छाछमें मिलायके १ तोला पीवे तो त्रिदोषोत्पन्न गुल्मरोगका नाश होय ॥

संप्राप्तिपूर्वक स्त्रीगुल्म।

नवप्रसूताऽहितभोजना या या चामगर्भं विसृजेदृतौ वा । वायुर्हि तस्याः परिगृह्य रक्तं करोति गुल्मं सरुजं सदाहम् ॥ पित्तस्य लिङ्गेन समानलिङ्गं विशेषणं चाप्यपरं निबोध । यः स्पंदते पिंडित एव नाङ्गैश्चिरात्स शूलः समगर्भलिङ्गः ॥ स रौधिरः स्त्रीभव एव गुल्मो मासे व्यतीते दशमे चिकित्स्यः ॥

अर्थ–नई प्रसूत भई स्त्रीके अपथ्य सेवन करनेसे अथवा अपक्व गर्भपात होनेसे अथवा ऋतुकालके समय अपथ्य भोजन करनेसे, वायु कुपित होकर उस स्त्रीके रुधिर (जो ऋतुसमय निकले उसको) लेकर गुल्म करे वह गुल्म पीडायुक्त व दाहयुक्त होय है और पित्तगुल्मके जो लक्षण कहे हैं वे सब इसमें होंय, और इसमें दूसरे विशेष लक्षण होते हैं. उनको कहता हूं सुनो. यह गुल्म बहुत देरमें गोल गोल हिले, अवयव कहिये हाथ पैरके साथ नहीं हिले, शूलयुक्त होय, गर्भके समान सब लक्षण मिलें, (अर्थात् मुखसे पानी छूटे, मुख पीला पड जाय, स्तनका अग्रभाग काला हो जाय और दोहदादि लक्षण सब मिलें ये सब लक्षण व्याधिके प्रभावसे होते हैं जैसे खई रोगवालेको स्त्रीरमणकी इच्छा और काले नख तालवादिक होते हैं) यह रक्तजगुल्म स्त्रियोंके होय है, दश महीना व्यतीत हो जाय तब इस रक्तगुल्मकी चिकित्सा करनी चाहिये. कोई कहते हैं कि यह गर्भ है अथवा रक्तगुल्म है, यह शंका जानकर माधवाचार्यने (दश महीना व्यतीत होने पर) ऐसा कहा है. कारण इसका यह है कि नववां और दशवां महीना यह प्रसूत होनेका समय है * शंका–क्योंजी (यः स्पंदते पिंडित एव नांगैः) इत्यादिक विशेषणोंसे स्पष्ट प्रतीति होय है क्योंकि गर्भ तो निरंतर प्रत्येक अवयवके साथ शूलरहित फडकता है और रक्तगुल्मके इससे विपरीत लक्षण हैं, फिर दश महीने व्यतीत होने पर चिकित्सा करना चाहिये ये क्यों कहा ? * उत्तर–इसका कारण इस प्रकार है कि इस रोगमें जब तो दश महीना व्यतीत हो जाय जब चिकित्सा करे तो सुखसाध्य होय है, कुछ प्रसवके नियमसे नहीं कहा क्योंकि प्रसव ग्यारह बारह महीनोंमें भी होय है, सो चरकमें भी लिखा है " तं स्त्री प्रसूते सुचिरेण गर्भं स्पष्टो यदा वर्षगणैरपि स्यात् " जैसे जीर्णज्वर होने पर दूध पीना और दस्तका लेना हितकारक होय है । इसीसे ग्रन्थान्तरोंमें भी लिखा है "रक्तगुल्मे पुराणत्वं सुखसाध्यस्य लक्षणम् " इस रक्तगुल्मको दश महीने व्यतीत होने पर पुरानापना होय है और जेज्जटनेभी कहाहै कि

दश महीनोंके पहले मर्दनादि क्रिया करनेसे गर्भाशयको विकार होयहै क्योंकि रुधिर उस ठिकानेपर जमा होय है और ग्यारह महीनेमें गुल्मका गोला बहुत अच्छा जम जाता है इसीसे ग्यारहवें महीने स्नेहादिक करके सब शरीर मृदु (नरम) करनेसे भेदन क्रिया करे तो गर्भाशय भले प्रकार अच्छा रहे ॥

दंत्यादि वटी ।

दंतिहिंगुयवाक्षारालाबुबीजं कणा गुडः । स्नुहिक्षीरेण गुटिका सर्वेषां कर्षमात्रिका ॥ भक्षिता रक्तगुल्मघ्नी रुधिरस्रावकारिणी ॥

अर्थ-दंतीकी जड, हींग, जवाखार, कडुई घीयाके बीज, पीपल, गुड इनको थूहरके दूधमें खरल करके २ तोलेकी गोली बनावे एक गोली खाय तो रक्तगुल्मकी नाशक और रुधिरके स्राव करनेवाली है (परंतु बलाबल विचारके मात्रा देवे) ॥

पलाशघृत ।

पलाशक्षारयोगेन सर्पिः सिद्धं पिबेद्वधूः ॥

अर्थ-पलास (ढाक) के क्षारके योगसे घृतको सिद्ध करके यह स्त्रीको पीना चाहिये ॥

शताह्वादि कल्क ।

शताह्वाचिरबिल्वत्वग्दारुभार्ङ्गीकणोद्भवः ।
कल्कः पीतो हरेद्गुल्मं तिलक्काथेन रक्तजम् ॥

अर्थ-शतावर, कंजाकी छाल, दारुहलदी, भारंगी, पीपल इनके चूर्णको तिलके साथ पीवे तो रक्तगुल्मका नाश होय ॥

तिलक्काथ ।

तिलक्काथो गुडघृतव्योषभार्ङ्गीरजोन्वितः ।
पीतो रक्तभवे गुल्मे नष्टे शुक्रे च योषितः ॥

अर्थ--तिलके काढेमें गुड, घी और सोंठ, मिरच, पीपल, भारंगी इनका चूर्ण डालके पीवे तो रक्तगुल्म और स्त्रियोंका जो शुक्र नष्ट होता है उस पर परमोत्तम है ॥

भारंग्यादि चूर्ण ।

भार्ङ्गीकृष्णाकरंजत्वग्ग्रंथिकामरदारुजम् ।
चूर्णं तिलानां क्वाथेन रक्तगुल्मरुजापहम् ॥

अर्थ–भारंगी, पीपल, कंजेकी छाल, पीपरामूल, देवदारु इनके चूर्णको तिलके काढे- में मिलायके पीवे तो रक्तगुल्मका नाश करे ॥

तिलमूलादि चूर्ण ।

तिलमूलं च शिग्रुं च ब्रह्मदंडीयमूलकम् । मधुयष्टी त्रिकटुकै- र्युतं चूर्णमुपासते ॥ पुष्परोधे वातगुल्मे स्त्रीणां सद्यः सुखावहम्

अर्थ–तिलकी जड, सहजनेकी जड, ब्रह्मदंडीकी जड, मुलहठी, सोंठ, मिरच और पीपल इनका चूर्ण सेवन करनेसे स्त्रियोंका नष्टपुष्प, वायगोला इनको तत्काल सुख- दाई होय ॥

मुंड्यादि चूर्ण ।

मुंडीरोचनिकाचूर्णं शर्करामाक्षिकान्वितम् । विदधीतास्यगु- ल्मिन्यां मलसंरेचनाय च ॥ उष्णैर्वा भेदयेद्भिन्ने विधिर्वा- सृग्धरो हितः । अतिप्रवृत्तमस्रं तु भिन्ने गुल्मे निवारयेत् ॥

अर्थ–मुंडी और वंशलोचन इनका चूर्ण मिश्री और सहत इनसे रक्तगुल्म पर रेचन देवे. अथवा गरम औषधोंसे गुल्मको तोडे. जब गोला टूट जावे तब रक्तगुल्मके ऊपर जो यत्न लिखे हैं वे उपाय करे. यदि गोला टूटनेसे रुधिर आधिक निकलने लगे तो उसको उसी दम बंद करे ॥

गुल्मके असाध्यलक्षण ।

सञ्चितः क्रमशो गुल्मो महावास्तुपरिग्रहः । कृतशूलः शिरा नद्धो यदा कूर्म इवोन्नतः ॥ दौर्बल्यारुचिहृल्लासकासच्छर्द्य- रतिज्वरैः । तृष्णातंद्राप्रतिश्यायैर्युज्यते न स सिद्ध्यति ॥ गृहीत्वा सज्वरं श्वासं च्छर्द्यतीसारपीडितम् । हृन्नाभिबस्तिपा- देषु शोथः क्षिपति गुल्मिनम् ॥ श्वासः शूलं पिपासान्नविद्वेषो ग्रन्थिमूढता । जायते दुर्बलत्वं च गुल्मिनां मरणाय वै ॥

अर्थ–क्रमक्रमसे बढा गुल्म जब सब उदर (पेटमें) फैल जाय और धातुओंमें उसका मूल जाय पहुंचे, तथा उस पर नाडियोंका जाल लिपट जाय और कछुआकी पीठके समान गुल्म ऊंचा होय, तब इस रोगीके निःसत्वपना, अरुचि, सूखी रद, खांसी, वमन, अरति और ज्वर तथा प्यास, तन्द्रा और पीनस ये लक्षण होंय ऐसा रोगी असाध्य है वमन और अतिसार इनसे पीडित ऐसा गुल्मरोगीका हृदय, नाभी,

हाथ, पैर इन ठिकाने सूजन होय और ज्वर, दमा जिसके होय ऐसे लक्षण होनेसे रोगी बचे नहीं. श्वास, शूल, प्यास, अन्नमें अरुचि और गुल्मकी गांठका एकाएकी नष्टसा हो जाना और दुर्वलता ये लक्षण होनेसे जानना कि गुल्मरोगवालेकी मृत्यु समीप है. शंका-क्योंजी अंतार्विद्राधि और गुल्म रोग इनमें क्या भेद है इन दोनोंके स्थान और स्वरूप तो एकसे हैं फेर भेद क्या है ? उत्तर-तुमने कहा सो ठीक है अन्त विद्रधि पचता है और गुल्म नहीं पचे है इसका कारण यह है कि गुल्म तौ निराश्रय है सो सुश्रुतने कहाभी है ॥

दूसरे लक्षण ।

न निबंधोऽस्ति गुल्मस्य विद्रधिः सनिबंधनः । गुल्मस्तिष्ठति दोषे स्वे विद्रधिर्मांसशोणिते ॥ विद्राधिः पच्यते तस्माद्गुल्मश्चापि न पच्यते ॥

अर्थ-गुल्मका निर्बंध नहीं है और विद्रधिका निर्बंध है, गुल्म अपने दोषोंमें रहता है और विद्रधिका ठिकाना मांस रुधिरमें है, इसीसे विद्राधिका पाक होय है और गुल्मका पाक नहीं होय, गुल्म मुट्ठीके समान बडा है और विद्रधि इससे कुछ जीयादा बडा होय है ॥

तीसरालक्षण ।

ग्रंथिनाशः श्वासशूलतृष्णान्नद्वेषणादयः । गुल्मिनो दुर्बलत्वं च मरणाय विनिर्दिशेत् ॥ शिरावनद्धः सुकठोर उन्नतो व्याप्तोदरो भूरिफलोऽपि गुल्मः । हृल्लासकासारुचिकार्श्यतृष्णाच्छर्दिज्वरार्तश्च न सिद्धिमेति ॥ ज्वरः श्वासकासप्रतिश्यायतंद्रावमिभ्रांतियुक्तं त्यजेद्गुल्मिनं तम् । गुदे नाभिहृद्धस्तपादेषु शूनं कृशं सातिसारं तृषाशूलयुक्तम् ॥

अर्थ-जिस गुल्मरोगवालेके गुल्मग्रंथीका नाश, श्वास, शूल, प्यास, अन्नद्वेष और दुर्बलता ये लक्षण हों वह असाध्य है. जो गुल्म नसोंसे कठिन, ऊपर उठा हुआ, जिसने पेट व्यापा, वेगवान्, मुंहसे जल गिरे, खांसी, अरुचि, कृशता, प्यास, कै और ज्वर, श्वास इन लक्षणोंसे युक्त गुल्मरोगवाला अच्छा नहीं होता, ज्वर, श्वास, खांसी, प्रतिश्याय, तंद्रा, कै, भ्रांति और गुदा, नाभी, हृदय, हाथ, पांव इन पर अफरा होवे, कृशता, अतिसार, प्यास और शूल इन लक्षणोंवाले गुल्मरोगीको वैद्यको छोड देना चाहिये ॥

पुनर्नवादि कल्क ।

श्वेतं पुनर्नवामूलं तुल्यं सैंधवचूर्णितम् ।
सघृतं लेहयेद्गुल्मी क्षौद्रैर्वाथ जलोदरी ॥

अर्थ–सपेद पुनर्नवा (विषखपरा) की जडमें बराबरका सैंधा निमक पीसके कल्क करे. उसमें घी मिलायके गुल्म पर देवे. तथा सहत डालके जलोदर पर देवे ॥

चित्रकादि क्वाथ ।

चित्रकग्रंथिकैरंडशुंठीक्वाथः परं हितः ।
शूलानाहविबंधेषु सहिंगुबिडसैंधवः ॥

अर्थ–चित्रक, पीपरामूल, अंडकी जड और सोंठ इनका काढा हींग, बिडनिमक और सैंधानिमक डालके देवे तो गुल्म, शूल, अफरा और विबंध इन पर अत्यंत हितकारी है ॥

नादेयादिक्वाथ ।

नादेयीकुटजार्कशिग्रुबृहतीस्नुग्वेल्लभल्लातकव्याघ्रीकिंशुकपारिभद्रकुटजापामार्गनीपाग्निनाम् । वासामुष्ककपाटलां सलवणां दग्धां जले पाचितं हिंग्वादिप्रतिवापमेतदुदितं गुल्मोदराष्ठीलिषु ॥

अर्थ–भूंयजामुन, कुडेकी छाल, आक, सहजना, कटेरी, थूहर, काली मिरच, भिलाए, बडी कटेरी, पलास, नीम, इंद्रजौ, औंगा, कदंब, चित्रक, अडूसा, मोखावृक्षकी छाल, पाढ और भुना हुआ निमक इनका काढा कर उसमें हींग डालके गुल्म उदर और अष्ठीला इन पर देवे ॥

पारदादि वटी ।

पारदं शिखितुत्थं च जेपालं पिप्पलीसमम् ।
आरग्वधफलं मज्जां वज्रीक्षीरेण मर्दयेत् ॥
माषमात्रां वटीं खादेत्स्त्रीणां गुल्मोदरप्रणुत् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, लीलाथोथा, जमालगोटा, पीपल, अमलतासका गूदा ये समान भागले इनको थूहरके दूधमें खरल करे फिर एक २ मासेकी गोली बनावे वह सब स्त्रियोंके गोले तथा उदर इनको नाश करे ॥

मूलिकादि धारण ।

लांगल्या चापमार्गोत्थैरिंद्रवाणिकापि वा ।
शूलं योनिगतं स्त्रीणां धारणं पुष्परोधनुत् ॥

अर्थ--कलियारी, ओंगा अथवा इन्द्रायन इनकी जडको योनिमें धारण करे तो योनिशूल और पुष्पावरोध इनको नाश करे ॥

निंबादि वटी ।

निंबैरंडस्य बीजानि पिष्ट्वा निंबदलद्रवैः ।
गुटिकांतर्गता योनौ लेपोयं भगशूलनुत् ॥

अर्थ--नीमकी निबोरी और अंडी इनको पीस नीमके पत्तोंके रसमें गोली बनावे इस गोलीको योनिमें रखे तो अथवा इसका योनिमें लेप करे तो योनिशूलका नाश करे ॥

सव्यादि कांकायनवटी ।

सठी पुष्करमूलं च दंतिचित्रकमाढकम् । शृंगबेरंवचां चैव पलिकानि समाहरेत् ॥ त्रिवृतायाः पलं चैव कुर्यात्रीणि च हिंगुलुः । यवक्षारः पले द्वे च द्वे पले चाम्लवेतसम् ॥ यवान्यजाजिमरिचं धान्यकं चेति कार्षिकम् । उपकुल्याजमोदाभ्यां तथा चाष्टमिकामपि ॥ मातुलिंगरसोपेतां गुटिकां कारयेद्भिषक् । तासां त्वेका पिबेद्द्वे वा तिस्रो वाथ सुखांबुना ॥ अम्लैश्च मद्यैर्यूषैश्च घृतेन पयसाथवा । एषा कांकायनेनोक्ता गुटिका गुल्मनाशिनी ॥

अर्थ--कचूर, पुहकरमूल, दंती, चित्रक ये २५६ तोले और सोंठ, वच ये चार २ तोले, निसोथ ४ तोले और हींगलू ३ तोले, जवाखार ८ तोले, अमलवेत ८ तोले और अजमायन, जीरा, काली मिरच और धनिया ये एक २ तोला और पीपल, अजमोद ये ३२ तोले ले इस प्रकार सब औषध लेकर चूर्ण करे. इसको बिजोरेके रसमें खरल करके गोली बनायले इसमेंसे १ । २ अथवा ३ गोली गरम जलके साथ, खटाईसे, सहतसे, यूषसे, घृतसे, किंवा दूधके साथ देवे तो यह कांकायनोक्त गुटिका गुल्मरोगको नाश करे ॥

यवान्यादि गुटिका ।

यवानी जीरकं धान्यं मरिचं गिरिकर्णिका । अजमोदोपकुंची च

चतुःशाणः पृथक् पृथक् ॥ हिंगु षट्शाणकं कार्यं शाणो लवणपंचकम् । त्रिवृच्चाष्टमितैः शाणैः प्रत्येकं कल्पयेत्सुधीः ॥ दंती शठी पौष्करं च विडंगं दाडिमं शिवा । चित्राम्लवेतसः शुंठी शाणैः षोडशभिः पृथक् ॥ बीजपूररसेनैषां गुटिकां कारयेद्बुधः । घृतेन पयसा चाम्लरसैरुष्णोदकेन वा ॥ पिबेत्कांकायनप्रोक्ता गुटिका गुल्मनाशिनी । मद्येन वातिकं गुल्मं गोक्षुरेण च पैत्तिकम् ॥ मूत्रेण कफगुल्मं च दशमूलैस्त्रिदोषजम् । उष्ट्रीदुग्धेन नारीणां रक्तगुल्मं निवारयेत् ॥ हृद्रोगं ग्रहणीशूलं कृमीनर्शांसि नाशयेत् ॥

अर्थ–अजमायन; जीरा, धनिया, काली मिरच, सारिवा, अजमोद, कलौंजी ये प्रत्येक चार २ तोले, हींग ६ तोले, पांचों निमक एक २ तोला, निसोथ ८ तोले जमालगोटा, कचूर, पोहकरमूल, वायविडंग, अनारदाना, आंवला, पीपल, अमलवेत और सोंठ ये प्रत्येक सोलह २ तोले ले सबको एकत्र कर बिजोरेके रसमें उनको खरल करके गोली बनाय लेवे इनको घी, दूध, खट्टे रस अथवा गरम जलके साथ देवे तो गुल्मरोगनाश होय. वातजन्य गुल्म पर मद्यके साथ, पैत्तिक गुलममें गोखरूके साथ, कफगुल्म पर गोमूत्रसे, त्रिदोषगुल्म पर दशमूलके काढेके साथ, स्त्रियोंके रक्तगुल्म पर ऊंटनीके दूधसे, और हृदयरोग, संग्रहणी, शूल, कृमि और बवासीर इन पर अनुपानके साथ देवे इस प्रकार कांकायनऋषिने कहा है ॥

स्वर्जिकावटी।

स्वर्जिका शाणमाना स्यात्तावदेव गुडो भवेत् ।
उभयोर्वटिकां खादेद्गुल्मामयविनाशिनीम् ॥

अर्थ–सज्जीखार ३ मासे और गुड तीन मासे इनकी गोली बनायके सेवन करे तो रक्तगुल्मका नाश करे ॥

प्रवालपंचामृत ।

प्रवालमुक्ताफलशंखशुक्तिकपर्दिकानां च समांशभागम् । प्रवालमात्रं द्विगुणं प्रयोज्यं सर्वैः समांशं रविदुग्धमेव ॥ एकीकृतं तत्खलु भ ह्मध्ये क्षिप्त्वा मुखे बंधनमत्र योज्यम् । पुटं च दद्या-

दतिशीतले च उद्धृत्य तद्भस्म क्षिपेत्करंडे ॥ नित्यं हि वारं प्रतिपाकयुक्तं वल्लप्रमाणं हि नरेण सेव्यम् । आनाहगुल्मोदर- प्लीहकासश्वासाग्निमांद्यान् कफमारुतोत्थान् ॥ अजीर्णमुद्गारहृ- दामयघ्नं ग्रहण्यतीसारविकारनाशम् ॥ मेहामयं मूत्ररोगं मूत्र- कृच्छ्रं तथाश्मरीम् । नाशयेन्नात्र संदेहो सत्यं गुरुवचो यथा ॥ पथ्याश्रितं भोजनमादरेण समाचरेन्निर्मलचित्तवृत्त्या । प्रवाल- पंचामृतनामधेयो योगोत्तमः सर्वगदापहारी॥

अर्थ--मूंगा, मोती, शंख, मोतीकी सीप, कौडी ये सब समान भाग लेवे परंतु मूंगा की भस्म दूनी लेवे तथा सबकी बराबर आकका दूध डालके सबको एकत्र पीसके किसी पात्रमें भरके ऊपरसे ढके और कपडमिट्टी करके संपुटमें रखकै फूंक देवे जब शीतल हो जावे तब निकाल शीशीमें भरके रख देवे. यह भस्म १ वल्ल रोगीको खानेके वास्ते देवे तो पेटका फूलना, गोला, उदर, प्लीहा; खांसी, श्वास, मंदाग्नि, कफवातसंबंधी रोग, अजीर्ण, हृदयरोग, संग्रहणी, अतिसार, प्रमेह, मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, पथरी इनको नाश करे इस प्रकार गुरुने कहा है इसमें उत्तम पथ्य करे चित्तकी वृत्ति निर्मल रखे. इस योगको प्रवालपंचामृत कहते हैं. यह योग उत्तम होनेसे संपूर्ण रोगोंका नाश करे है ॥

हिंग्वादि घृत ।

हिंगुपुष्करमूलानि तुंबरूणि हरीतकी । श्यामा बिडं सैंधवं च यवक्षारं महौषधम् ॥ यवक्षारोदकेनैतद्घृतभ्रष्टं तु पाचयेत् । तेनास्य भिद्यते गुल्मः सशूलः सपरिग्रहः ॥

अर्थ–हींग, पुहकरमूल, तुंबरू, हरड, पीपल, बिड निमक, सैंधा निमक, जवाखार और सोंठ ये समान भाग ले चूर्ण करे, इसको जवाखारके जलमें मिलायके १ सेर घी मिलायके अग्नि पर पक करे, जब सिद्ध हो जावे तब उतारके छान ले इसको सेवन करे तो गुल्म फूटकर अच्छा होवे तथा शूलादिक रोग शांत होवे ।

धात्रीघृत ।

धात्रीफलानां स्वरसैर्विडंगं विपचेद्घृतम् ।
शर्करासैंधवोपेतं तत्सिद्धं सर्वगुल्मनुत्॥

अर्थ–आंवलोंके स्वरसमें वायविडंगका कल्क और घी डालके घृत सिद्ध करे इसमें मिश्री और सैंधा निमक डालके देवे तो संपूर्ण गुल्मोंका नाश होय ॥

षट्पलघृत ।

षड्भिः पलैर्मगधजाफलमूलचव्यं विश्वौषधज्वलनयावककल्कपक्वम् । प्रस्थं घृतस्य दशमूलयरुबूकभार्ङ्गी क्वाथोप्यथो पयसि वा दधिषट्पलाख्यम् ॥ गुल्मोदरारुचिभगंदरवह्निमांद्यकासज्वरक्षयशिरोग्रहनिर्विकारान् । सद्यः शमं नयति ये च कफानिलोत्था भार्ङ्ग्याख्यषट्पलमिदं प्रवदंति तज्ज्ञाः ॥

अर्थ–पीपल, पीपरामूल, चव्य, सोंठ, चित्रक और जवाखार ये बत्तीसे २ तोले लेवे. इनका कल्क कर घी ६४ तोले, दशमूल, अंडकी जड और भारंगी इनका काढा, दूध और दही ये २४ तोले ले सबको एकत्र करके घृतको पचावे. यह घृत गोला, उदर, अरुचि, भगंदर, मंदाग्नि, खांसी, ज्वर, क्षई, मस्तकशूल और कफवातोत्पन्न व्याधि इन सबको यह षट्पलनामक घृत दूर करे ॥

दधिकयोग ।

बिडदाडिमसिंधूत्थहुतभुग्व्योषजीरकैः । हिंगुसौवर्चलक्षारचुक्रवृक्षाम्लवेतसैः ॥ बीजपूररसोपेतैः सर्पिर्दधि चतुर्गुणम् । साधितं दाधिकं नाम्ना गुल्महृत्प्लीहनुत्परम् ॥

अर्थ–बिड निमक, अनारदाना, सैंधा निमक, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, हींग, संचरनिमक, चूका, इमली, अमलवेत और बिजोरेका रस ये प्रत्येक तोले २ भर लेवै और घी तथा दही चार २ तोले सबको एकत्र कर पचावे. इसको दधि नामक घृत कहते हैं. यह गोला और प्लीहा इनको नाश करे ॥

स्नुहिक्षीराद्य घृत ।

स्नुहिक्षीरं पले द्वे तु प्रस्थार्धं चैव सर्पिषः । कंपिल्लं पलमेकं तु पलार्धं सैंधवस्य च ॥ त्रिवृत्तायाः पलं चैकं धात्र्याः कुडवमेव च । तोयप्रस्थेन विपचेच्चैवं मृद्वग्निना भिषक् ॥ कर्षप्रमाणं दातव्यं जठरप्लीहगुल्मिने । तथा कच्छपरोगेषु युंजीत मतिमान् भिषक् ॥ एतद्गुल्मान् ससमीरान् निहंति सपरिग्रहान् ।

निहंत्येष प्रयोगो हि वायुर्जलधरानिव ॥ पंचगुल्मवधोपायं सर्पिरेतत्प्रकीर्तितम् । सर्वासुरवधार्थाय यथा वज्रं स्वयंभुवा ॥

अर्थ-थूहरका दूध ८ तोले, घी ३२ तोले, कवीला ४ तोले, सेंधानिमक २ तोले, निसोथ ४ तोले और आवला १६ तोले इस प्रकार सबको ले ६४ तोले जलमें डालके मंदाग्निसे पचावे. यह स्नुह्यादि घृत एक तोला देवे तो उदर, प्लीहा, कच्छपरोग, गोला, वायगोला और पांच प्रकारके गुल्म इनको नाश करे. जैसे संपूर्ण दैत्योंके वधके वास्ते वज्र रचा है उसी प्रकार संपूर्ण रोगोंके नाश करनेको ब्रह्मदेवने यह घृत उत्पन्न करा है॥

अग्निमुखचूर्ण ।

हिंगुभागो भवेदेको वचा च द्विगुणा भवेत् । पिप्पली त्रिगुणा ज्ञेया शृंगबेरं चतुर्गुणम् ॥ यवानिका पंचगुणा षड्गुणा च हरीतकी । चित्रकं सप्तगुणितं कुष्ठं चाष्टगुणं भवेत् ॥ एतद्वातहरं चूर्णं पीतमात्रं प्रसन्नया । पिबेद्दध्ना मस्तुना वा सुरया कोष्णवारिणा ॥ उदावर्तमजीर्णं च प्लीहानमुदरं तथा । अंगानि यस्य शीर्यंते विषं वा येन भक्षितम् ॥ अर्शोहरो दीपनं च शूलघ्नो गुल्मनाशनः । कासं श्वासं निहंत्याशु तथैव क्षयनाशनः ॥ चूर्णो ह्यग्निमुखो नाम्ना न क्वचित्प्रतिहन्यते ॥

अर्थ-हींग १, वच २, पीपल ३, सोंठ ४, अजमायन ५, हरड ६, चित्रक ७ और कूठ ८ इन भागोंको क्रम वृद्धिसे ले चूर्ण करे. यह वातहारक चूर्ण मद्य, दहीका जल, मद्य अथवा गरम जल इनके साथ पीवे. यह उदावर्त्त, अजीण, प्लाहा, उदर, अंगपाक, भोजन करा हुआ विष और बवासीर इन सबको नाश करे तथा यह दीपन, शूलनाशक और गुल्मनाशक है और खांसी, श्वास और क्षय इनको नाश करे यह अग्निमुखचूर्ण कदाचित् खाली नहीं जाता ॥

पिप्पल्यादि चूर्ण ।

पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रकाजाजिसैंधवम् ।
पीतं तु सुरया हंति गुल्ममाशु सुदुस्तरम् ॥

अर्थ-पीपल, पीपरामूल, चित्रक, जीरा और सैंधा निमक इनका चूर्ण करके सहतसे देवे तो तत्काल गुल्मरोगका नाश होय ॥

हिंग्वादि चूर्ण ।

हिंगूग्रगंधाबिडशुंठ्यजाजीहरीतकीपुष्करमूलकुष्ठम् ।
भागोत्तरं चूर्णितमेतदिष्टं गुल्मोदराजीर्णविषूचिकासु ॥

अर्थ–हींग, वच, बिडनिमक, सोंठ, जीरा, हरड, पुहकरमूल और कूठ ये सब औषध भागोत्तरवृद्धिसे लेकर चूर्ण करे. यह गोला, उदर, अजीर्णरोग और विषूचिका (हैजा) इनको दूर करे ॥

चित्रकादि चूर्ण ।

चित्रको नागरं हिंगु पिप्पली पिप्पलीजटा । चव्याजमोदा मरिचं प्रत्येकं कर्षसंमितम् ॥ स्वर्जिका च यवक्षारः सिंधु सौवर्चलं बिडम् ॥ सामुद्रक रोमकं च कोलमात्राणि कारयेत् ॥ एकीकृत्याखिलं चूर्णं भावयेन्मातुलिंगजैः । रसैर्दाडिमजैर्वापि शोषयेदातपेन च ॥ एतच्चूर्णं जयेद्गुल्मं ग्रहणीमामजां रुजम् । अग्निं च कुरुते दीप्तं रुचिकृत्कफनाशनम् ॥

अर्थ–चित्रक, सोंठ, भूनी हींग, पीपल, पीपरामूल, चव्य, अजमोद और मिरच ये आठ औषध एक २ कर्ष लेवे तथा सज्जीखार, जवाखार, सैंधानिमक, संचरनिमक, बिडनिमक, सामुद्रनिमक, पांगानिमक ये सातक्षार एक २ कोलप्रमाण लेवे फिर सब औषधोंका चूर्ण कर बिजोरेके रसकी पुट देवे अथवा अनारदानेके रसकी पुट देवे फिर इसको धूपमें सुखाय लेवे इस चूर्णके सेवन करनेसे गोला, संग्रहणी, आमवात दूर होवें तथा अग्नि प्रदीप्त हो, मुखमें रुचि आवे तथा कफ दूर होय ॥

त्रिफलादि चूर्ण ।

त्रिफला कांचनक्षीरी सप्तला नीलिनी वचा । त्रायंती हपुषा तिक्ता त्रिवृत्सैंधवपिप्पली ॥ पिबेद्धि चूर्णं कोष्णेन वारिमांसरसादिभिः । सर्वगुल्मोदरप्लीहकुष्ठार्शः शोथवारणम् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला, चोक, सातला (थूहरका भेद) नीली, वच, त्रायमाण हाऊबेर, कुटकी, निसोथ, सैंधानिमक और पीपल इनके चूर्णको गरम जलके साथ अथवा गरम मांसरसके साथ देवे तो, गोला, उदर, प्लीहा, कोढ, बवासीर और सूजन इनको नाश करे ॥

कुमारीयोग ।

गुल्मी कुमारिकामांसं कर्षार्धं गोघृतान्वितम् ।
गिलेद्व्योषाभयासिंधुसूक्ष्मचूर्णावधूलितम् ॥

अर्थ-घीगुवारका गूदा छः मासे, गौका घी, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड और सैंधा निमक इनको मिलायके सेवन करे तो गुल्मरोग शांत होय ॥

नाराचचूर्ण ।

शतपुष्पा वचा कुष्ठकारवीजाजिधान्यकम् । द्वौ क्षारौ पिप्पलीमूलं सठ्युग्रा चोपकुंचिका ॥ स्वर्णक्षीरीवाजिगंधाविशालाचित्रकाः समाः । त्रिवृद्दंती सप्तला च एषां द्वित्रिगुणानपि ॥ नाराचकमिदं ख्यातं चूर्णं श्रेष्ठं विरेचनम् ॥ गुल्मानाहविषाजीर्णश्वासकासगलग्रहम् ॥ शोफार्शोग्रहणीदोषं गुल्मान् पंचविधानपि ॥

अर्थ-सोंफ वच, कूठ, कलौंजी, जीरा धनिया, सुहागा, जवाखार, पीपरामूल, कचूर और बडा जीरा, चोक, असगंध, इंद्रायन और चित्रक ये समान भाग लेवे. और निसोथ २, जमालगोटा ३ और सातला ३ भाग इस प्रमाणसे लेकर चूर्ण कर लेवे इसको नाराचचूर्ण कहते हैं यह रेचनविषयमें उत्तम है तथा गोला, अफरा, विष, अजीर्ण, श्वास, खांसी, गलग्रह, सूजन, बवासीर, संग्रहणी और पांच प्रकारके गोला इनको नाश करे ॥

पूतिकादि चूर्ण ।

पूतीकपत्रगजचिर्भटचव्यवह्निव्योषं च युक्तरचितं लवणोपधानम् । दध्ना विचूर्ण्य दधिमस्तुयुतं प्रयोज्यं गुल्मोदरश्वयथुपांडुगदोद्भवेषु ॥

अर्थ-कंजेके पत्ते, कचरिया, चव्य, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल और निमक इनके चूर्णको दहीमें घोटे. फिर इसको दहीके जलमें मिलाय देवे तो गोला, उदर, सूजन और पांडुरोग इनको दूर करे ॥

हस्तिकर्णादि चूर्ण ।

तक्रैर्जलोदरहरी हस्तिकर्णी च कार्षिका । तिलमूलकषायेण ब्रह्मदंडयास्तु मूलकम् ॥ यष्टी त्रिकटुचूर्णं च युक्तं पानेऽथ गुल्मजित् ॥

अर्थ–हस्तिकर्णीके कंदको छाछमें पीसके १ तोला जलोदरवाले रोगीको देवे. तथा तिलकी जडका काढा करके उसमें ब्रह्मदंडीकी जड, मुलहठी, सोंठ, मिरच और पीपल इनका चूर्ण डालके खानेको देवे तो गुल्मका नाश करे ॥

हिंग्वादि चूर्ण ।

हिंगु त्रिकटुकं पाठा हपुषा चाभया शठी । अजगंधा यवानी च तिंतिडी फलवेतसम् ॥ सारिवा पौष्करं धान्यमजाजी चित्रको वचा । अभ्रकं तीक्ष्णकं ताप्यं लवंगं तुंबरूणि च ॥ द्वौ क्षारौ लवणे द्वे च चव्यमेकत्र चूर्णयेत् । चूर्णमेतत्प्रयोक्तव्यमन्नपानेषु प्रत्यहम् ॥ प्रातरद्याच्च चूर्णोऽयं मद्येनोष्णोदकेन वा । पार्श्वहृद्बस्तिशूलेषु गुल्मवातबलासके ॥ आनाहे मूत्रकृच्छ्रे च गुदे योनौ च पीडिते । ग्रहण्यर्शोविकारेषु प्लीहपांड्वामये रुचौ ॥ उरोविबंधे हिक्कायां कासे श्वासे गलग्रहे । भावितं मातुलिंगस्य दाडिमस्य रसेन च ॥ बहुशो गुटिका कार्या आर्द्रकस्य रसेन वा । नाम्ना हिंग्वादिकं चूर्णं शूलगुल्मविनाशनम् ॥

अर्थ–हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, पाढ, हाऊबेर, हरड, कचूर, वनतुलसी, अजमायन, तंतडीक, अमलवेत, सारिवा, पोहकरमूल, धनिया, जीरा, चित्रक, वच, अभ्रकभस्म, पोलादलोहकी भस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, लौंग, तुंबरू, सज्जीखार, जवाखार, सैंधा निमक, साम्भरनिमक और चव्य इनको समान भाग ले चूर्ण करे. इसको अन्नके साथ, जलके साथ अथवा प्रातःकाल मद्यके साथ अथवा गरम जलसे देवे तो पार्श्वशूल, हृदय, बस्ति इनका शूल, गोला, वातकफ, अफरा, मूत्रकृच्छ्र और गुदा, योनि इनका शूल, संग्रहणी, बवासीर, प्लीहा, पांडुरोग, अरुचि, छातीका भारी होना, हिचकी, खांसी, गलग्रह, इनको नाश करे. इस चूर्णको अनारदानेके अथवा अदरखके रसमें घोटके गोली बनाय लेवे और रोगीको देय यह हिंग्वादि चूर्ण शूल, गोला इनको नाश करे ॥

विद्याधररस ।

सूतो गंधस्तालकस्ताम्रताप्यं तुत्थं सर्वं खल्वमध्ये तु पिष्ट्वा ।
कृष्णाक्वाथैः स्नुहिक्षीरैर्भावितं वास्तैर्मूत्रैर्नाम विद्याधरः स्यात्॥

निष्कार्धोयं श्लेष्मगुल्मं निहन्यात्पथ्यं युक्तं सर्वरोगे प्रशस्तम् ।
आदौ गुल्मे रक्तमोक्षं विधाय प्रौढः कार्यो यो विधिः सर्वजे वा ॥

अर्थ-पारा, गंधक, हरताल, ताम्रभस्म, सुवर्णमाक्षिक और लीलाथोथा इन सबको खरल कर पीपलके काढेमें थूहरके दूध तथा बकरेके मूत्रमें इनको खरल करे. इसको विद्याधर रस कहते हैं. इसको तीन मासे कफगुल्म पर देवे और सर्व रोगोक्त पथ्य देवे तो उसका नाश करे. रक्तगुल्म पर प्रथम रुधिर निकाले तथा जीर्ण होने पर देवे और सन्निपातज गुल्मका प्रतिकार करे ॥

वडवानलरस ।

तिक्तकाथं पिबेदाज्यं भार्ङ्गीव्योषगुडान्वितम् ।
पुष्परोधे रक्तगुल्मे स्त्रीभिर्विद्याधरो रसः ।

अर्थ-स्त्रियोंके पुष्पावरोध (ऋतुधर्म न होने) पर भारंगी, सोंठ, मिरच, पीपल इनका काढा गुड डालके पीवे अथवा विद्याधर रस भक्षण करे ॥

गुल्मोदरगजारातिरस ।

सूतगंधकणापथ्यातुत्थारग्वधकान्हढम् । मर्दयेद्व्रिदुग्धेन मा-
षार्धं खादयेद्दिनम् ॥ गुल्मोदरगजारातिनाम्ना भैरवनिर्मितः ।
स्त्रीणां जलोदरं हंति पथ्यं शाल्योदनं दधि ॥ चिंचाफलरस-
स्यापि पानमस्मिन्प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, पीपल, हरड, नीलाथोथा, अमलतासका गूदा इनको समान भाग ले चूर्ण करे फिर थूहरके दूधसे खरल करे. इसमेंसे नित्य ४ रत्ती देवे. इसे गुल्म और उदररूप गजका शत्रु गुल्मोदरगजाराति इस नामसे भैरवने उत्पन्न करा है. यह स्त्रियोंके जलोदरका नाश करे इस पर दही भात पथ्यमें देवे और इमलीका रस पान करे ॥

उद्दामाख्य रस ।

सूतः कर्षः शांखवृक्षस्य नीरैः सर्पाक्ष्याद्भिः पेषयेद्धस्रमेकम् ।
भूमेः कुक्षौ पंचधेवं पुटित्वा गुंज्यत्तुल्यं चारुजेपालगर्भात् ॥
उद्दामाख्यः स्याद्रसः सर्पिषा यो गुंज्यायुग्मं पित्तगुल्मं निहंति ।
द्राक्षापथ्याक्काथ एवानुपानं वर्ज्यं सर्वं पित्तलं दाहकारि ॥

अर्थ—पारा १ तोला लेकर शंखपुष्पीके तथा सरफोकाके रसमें एक दिन खरल करे फिर इसको जमालगोटेकी लुगदीमें रखके अग्निकी पांच पुट देवे तो उद्दामनामक रस बने. यह दो रत्ती लेकर घीके साथ देवे तो गुल्मरोगका नाश करे. पित्तव्याधि पर दाख और हरड इनके काढेके अनुपानसे देवे तथा पथ्यमें संपूर्ण पित्तकारक और दाहकारक पदार्थ वर्जित है ॥

नाराच रस ।

शुद्धसूतसमं गंधं जेपालं त्रिफलासमम् ।
त्रिकटुं पेषयेत्क्षौद्रमिश्रं गुल्मं लिहन्हरेत् ॥
उष्णोदकं पिबेच्चानु नाराचोऽयं रसोत्तमः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, जमालगोटा, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल ये एकत्र खरल कर सहतमें मिलायके चाटे ऊपरसे गरम जल पीवे तो गोलेका नाश होय. इसका नाराचरस कहते हैं ॥

गुल्मकुठाररस ।

नागवंगाभ्रकं कांतं समं ताम्रं समांशकम् । जंबीरस्वरसैर्घृष्ट्वा वटी गुंजाप्रमाणिका ॥ मधुनार्द्रकनीरेण क्षारयुग्मेन सेविता । अजीर्णमम्लपित्तं च हृत्पार्श्वोदरशूलकम् ॥ नाम्ना गुल्मकुठारोऽयं सर्वान् गुल्मान्व्यपोहति ॥

अर्थ—शीशेकी भस्म, रांगेकी भस्म, अभ्रकभस्म, और कांतलोहकी भस्म ये समान भाग ले तथा सबकी बराबर ताम्रभस्म लेवे. सबको जंभीरीनींबूके रसमें १ रत्तीकी गोली करे. इसको सहत और अदरखके रसमें जवाखार और सुहागा डालके देवे तो अजीर्ण, अम्लपित्त और हृदय, पसवाडा और पेट इनके शूलको नाश करे. इसको गुल्मकुठाररस कहते हैं ॥

गुल्मभंदेभसिंहरस ।

रसगंधवराटताम्रशंखविषवंगाभ्रककांततीक्ष्णमुंडम् । अहिहिंगुलटंकणं समांशं सकलं तात्रिगुणं पुराणकिट्टम्॥ पशुमूत्रविशोधितं सुभृष्ट्वा त्रिफलाभृंगतथार्द्रकोत्थनीरैः । सुविशोष्य वरामृतालिवासास्वरसैरष्टगुणैः पुनर्नवोत्थैः ॥ पृथगग्निधृतं घनं विपाच्य गुटिका गुंजयुता निजानुपानैः । ज्वरपांडुतृषास्रपैत्य-

गुल्मक्षयकासस्वरमग्निमांद्यमूर्च्छाः ॥ पवनादिषु दुस्तराष्टरोगान् सकलान् पित्तहरं गदावृतं च । बहुना किमसौ यथार्थनामा सकलव्याधिहरो मदेभसिंहः ॥

अर्थ-पारा, गंधक, कौडी, ताम्रभस्म, शंख, वंगभस्म, अभ्रकभस्म, कांतलोहकी भस्म, तीक्ष्णलोह, शीशा इनकी भस्म, हिंगलू, सुहागा ये सब समान भाग लेवे. तथा सबसे तिगुनी त्रिफला और भांगरा इनकी भावना देकर तैयार करी हुई पुरानी कीटी सबको एकत्र करके त्रिफला, गिलोय, कमलकंद और सोंठ इन सबका अठ गुना स्वरस लेकर पृथक् २ अग्नि पर रखके भावना देवे. जब गाढी हो जावे तब इसकी एक एक रत्तीकी गोली बनावे. इस गोलीको रोगोक्त अनुपानके साथ देवे तो ज्वर, पांडु, प्यास, रक्तपित्त, गोला, क्षय, खांसी, स्वरभंग, मंदाग्नि, मूर्च्छा, वादीसे आदि ले घोर अष्ट महारोग और संपूर्ण पित्तके रोग इनको नाश करे. बहुधा करके यह संपूर्ण व्याधिको नाश करे. इसको सर्वव्याधिहर रस कहते हैं. जैसे सिंह मत्त हाथीका नाश करे है उसी प्रकार यह रस संपूर्ण व्याधियोंको नाश करे ॥

वज्रक्षार ।

सामुद्रं सैंधवं काचं यवक्षारं सुवर्चलम् । टंकणं सर्जिकाक्षारं तुल्यं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ अर्कक्षीरैः स्नुहिक्षीरैर्लोलितं च विभावयेत् । अर्कपत्रं लिपेत्तेन रुद्धा भांडे पुटे पचेत् ॥ तत्क्षारं चूर्णयित्वाथ त्र्यूषणं त्रिफलारजः । जीरकं रजनी वह्निर्नवकस्य च भागतः ॥ क्षारार्धं योजयेत्सम्यगेकीकृत्य विचूर्णयेत् । वज्रक्षारमिमं पूर्वं स्वयं प्रोक्तं पिनाकिना ॥ सर्वोदरेषु गुल्मेषु शूलशोफेषु योजयेत् । अग्निमांद्ये त्वजीर्णे च भक्ष्यं निष्कद्वयं तथा ॥ वाताधिके जले कोष्णे घृते पित्ताधिके हितः । कफे गोमूत्रसंयुक्त आरनाले त्रिदोषनुत् ॥

अर्थ-समुद्रनिमक, सैंधानिमक, कचियानिमक, जवाखार, सोरा, सुहागा. सज्जी ये सब बराबर लेवे. सबका चूर्ण करके आक और थूहरके दूधमें खरल कर फिर इस कजलीकी मिट्टीको आकके पत्तों पर लेप करके इनको एक हांडीमें भरके मुखको बंद कर देवे फिर इसको लघु पुट देकर निकाल लेवे बारीक पीसके

इसमें आधा सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, जीरा, हलदी, चित्रक इनका चूर्ण डालके फिर खरल करके धर रखे. इसको वज्रक्षार कहते हैं. यह प्रथम शिवने कहा है. यह सर्व उदर, गोला, शूल, सूजन और अग्निमांद्य, अजीर्ण इन पर आठ मासे खाय, वाताधिक्य होय तो गरम जलके साथ सेवन करे, पित्ताधिक्य होय तो घीके साथ और त्रिदोषाधिक्यमें कांजीके साथ सेवन करे ॥

गुल्मरोग पर क्षार ।

स्वर्जिका यावशूलश्च क्षारयुग्ममुदाहृतम् । ज्ञेयो वह्निसमौ क्षारौ स्वर्जिकायावशूलकौ॥ क्षाराश्चान्येऽपि गुल्मार्शोग्रहणीरुक्छिदः सराः । पाचनाः कृमिपुंस्त्वघ्नाः शर्कराश्मरिनाशनाः ॥

अर्थ-सज्जीखार और जवाखार ये दोनों क्षार अग्निके समान देदीप्यमान हैं तथा आक, इमली, ओंगा, थूहर, केला, सहजना इत्यादिक जो और औषधोंके क्षार वे सब गोला, बवासीर और संग्रहणीको दूर करते हैं. तथा दस्तावर होकर अग्निको प्रदीप्त करे तथा कृमिरोग और पुरुषत्व (पुरुषार्थ) और शर्करा तथा पथरी इनको नाश करे है ॥

बत्ती ।

वातवर्चोनिरोधेषु सामुद्रार्द्रार्कसर्षपैः ।
कृत्वा पायौ विधातव्या वर्तयो मरिचान्वितैः ॥

अर्थ-वायु और मल इनका रोध होनेसे समुद्रनिमक, अदरख, आकका दूध, सरसों और मिरच इनसे कपडेको भिगोय बत्ती बनायके गुदामें रखे तो मल और वायु निकले ॥

चविकासव ।

चविकायास्तुलार्धं तु तदर्धं चित्रकस्य च । बाष्पिका पौष्करं मूलं षड्ग्रंथा हपुषा सठी ॥ पटोलमूलं त्रिफला यवानी कुटजत्वचः । विशाला धान्यकं रास्ना दंती दशपलोन्मिता ॥ कृमिघ्नमुस्तमंजिष्ठा देवदारु कटुत्रिकम् । भागान्पंचपलानेतानष्टद्रोणेंभसः पचेत् ॥ द्रोणे शेषे रसे पूते देयं गुडशतत्रयम् । धातक्या विंशतिपलं चातुर्जातं पलाष्टकम् ॥ लवंगव्योषकंकोलं पादिकानि प्रकल्पयेत् । निदध्यान्मासमेकं तु घृत-

भांडे सुसंस्कृते॥चतुःपलां पिबेन्मात्रां प्रातः पीता नियच्छति। सर्वगुल्मविकारांश्च प्रमेहांश्चैव विंशतिम्॥प्रतिश्यायं क्षयं कास-मष्ठीलां वातशोणितम्। उदराण्यंत्रवृद्धिं च चविकाख्यो महासवः॥

अर्थ-चव्य २ तोले चित्रक१ तोला, रुदंती, पुहकरमूल, वच, हाऊबेर, कचूर, पटोलकी जड, त्रिफला, अजमायन, कूडाकी छाल, इन्द्रायन, धनिया, रास्ना और दंती ये प्रत्येक दश २ पल लेवे. वायविडंग, नागरमोथा, मंजीठ, देवदारु, सोंठ, मिरच, पीपल ये प्रत्येक पांच २ पल ले इसको जवकुट करके १४ मन २९ सेर जलमें औटावे जब एक द्रोण अर्थात् २०४८ तोले जल शेष रहे तब उतारके छान लेवे और इसमें ८० धायके फूल, ३२ तोले चातुर्जात, लौंग और कंकोल ये आठ २ तोले डाले फिर घीके चिकने बासनमें इन सबको भरके एक महीने पर्यंत धरा रहने देवे तो आसव सिद्ध होय इसकी मात्रा ४ तोलेकी है. प्रातःकाल इसको पीवे. तो संपूर्ण गुल्मके विकार, बीस प्रकारके प्रमेहरोग प्रतिश्याय (सरेकमा), क्षय, खांसी, अष्ठीला, वातरक्त, उदररोग, और अंत्रवृद्धि इन सबको यह चविकाख्य आसव दूर करे यह महाआसव है॥

कुमारीआसव।

कुमार्याश्च रसद्रोणे गुडं पलशतं तथा। तुलांघ्रिसंख्या विजया काथयेत जलार्मणे॥ चतुर्थांशावशेषे तु पूते तस्मिन्निधापयेत्। मधुनश्चाढकं दत्त्वा धातक्याः पलषोडशम्॥स्निग्धभांडे विनिक्षिप्य कल्कं चैव प्रदापयेत्। जातीफलं लवंगं च कंकोलं च कबाबकम्॥ जटिला चव्यचित्रं च जातीपत्री सकर्कटम्। अक्षं पुष्करमूलं च प्रत्येकं च पलं पलम्॥ मृतशुल्बं तथा लोहशुक्तिमात्रं प्रदापयेत्। भूम्यां वा धान्यराशौ वा स्थापयेद्दिनविंशतिः॥ ततोद्धृत्य पिबेन्मात्रां यथाचाग्निबलाबलम्। पंचकासं तथा श्वासं क्षयरोगं च दारुणम्॥ उदराणि तथाष्टौ च षडर्शांसि च नाशयेत। वातव्याधिमपस्मारमन्यान्‌ रोगान्सुदुस्तरान्॥ जाठरं कुरुते दीप्तं कोष्ठशूलं च नाशयेत्। गुल्माष्टकं नष्टपुष्पं नाशयेत्पक्षमेकतः॥ कुमारिकासवो ह्येष बृहस्पतिविनिर्मितः॥

अर्थ–घीगुवारका रस २०४८ तोले, गुड ४०० तोले, भांग १०० तोले और जल १०२४ तोले ले इनका काढा करे. जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे और इसमें २५६ तोले सहत, ६४ तोले धायके फूल डालके घीके चिकने बासनमें भरके उसके मुख पर जायफल, लाग, कंकोल, कबाबचीनी, जटामांसी, चव्य, चित्रक, जावित्री, कांकडासिंगी, बहेडा, पुहकरमूल इन प्रत्येकका कल्क चार २ तोले और तामेकी भस्म, लोहभस्म ये दो दो तोले डालके मुख बंद कर धरतीमें अथवा धानकी राशिमें २० दिन गाड देवे. फिर इसको निकाल लेवे. यह कुमार्यासव रोगीका बलाबल और अग्नि को विचारके देना चाहिये. यह ५ प्रकारकी खांसी, श्वास, असाध्य क्षयरोग, ८ प्रकारके उदर, ६ प्रकारकी बवासीर इनको नाश करे. यह वातव्याधि, अपस्मार (मृगी) और जो अन्य रोग इन पर देवे तो जठराग्निको प्रदीप्त करे, पेटके शूलको नष्ट करे, आठ प्रकारके गुल्म, नष्टपुष्प इन सब रोगोंको १५ दिनमें नाश करे. यह कुमारिकासव बृहस्पतिने कहा है ॥

दंतीहरीतकी लेह।

जलद्रोणे विपक्तव्या विंशतिः पंच चाभया । दंत्याः पलानि तावंति चित्रकस्य तथैव च ॥ तेनाष्टभागशेषेण पलैर्दंतीसमं गुडम् । ताश्चाभयास्त्रिवृच्चूर्णतैले चापि चतुःपले ॥ पलमेकं कणाशुंठ्योः सिद्धे लेहे सुशीतलम् । क्षौद्रे तैलसमं दद्याच्चातुर्जातपलं तथा ॥ ततो लेहः पलं लीढ्वा जग्ध्वा चैकां हरीतकीम् । सुखं विरिच्यते स्निग्धो दोषप्रस्थप्रनामयः ॥ प्लीहश्वयथुगुल्मार्शोहृत्पांडुग्रहणीगदाः । शाम्यंति क्लेशविषमज्वरकुष्ठान्यरोचकम् ॥

अर्थ–हरड १०० तोले, दंती १०० तोले, चित्रककी छाल १०० तोले इनका काढा करके उसमें गुड १०० तोले तथा उसी काढेमें हरड १६ तोले, निसोथका चूर्ण १६ तोले, तेल १६ तोले और पीपल, सोंठ ये चार २ तोले इस प्रमाण सबको एकत्र कर लेह सिद्ध करे. जब शीतल हो जावे. तब इसमें सहत १६ तोले और दालचीनी, इलायची, पत्रज और नागकेशर इन सबका चूर्ण चार २ तोले लेके डाले तो यह अवलेह तैयार हो. इसमेंसे चार तोले अवलेह सेवन करनेसे और एक हरड खाय तो स्निग्ध कोठा होकर सुखपूर्वक दस्त हों तथा प्लीहा, सूजन, गोला, बवासीर, हृद्रोग, पांडुरोग, संग्रहणी, विषमज्वर, कोढ, अरुचि ये शान्त हों ॥

चिंचाशंखवटी ।

चिंचाक्षारं स्नुहिक्षारमर्कक्षारं पलं पलम् । द्विपलं शंखभूतिं च रामठं च पलार्धकम् ॥ लवणानि च सर्वाणि पलमात्राणि योजयेत् । क्षारद्वयं पलार्धं च सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ जंबीरकरसैर्मर्द्यमनलस्य दिनत्रयम् । भृंगराजस्य निर्गुंडीमुंड्योश्चैव पृथग्द्रवैः ॥ आर्द्रकस्य रसेनैव प्रत्येकं मर्दयेद्दिनम् । बदरीबीजमात्रां तु वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ एकैकां भक्षयेत्प्रातः पंच गुल्मान्व्यपोहति । सर्वशूलं निहंत्याशु ह्यजीर्णं च विषूचिकाम् ॥ मंदाग्निं नाशयेच्छीघ्रं पथ्यं तैलाम्लवर्जितम् । चिंचाशंखवटीनामा ग्रहणीरोगहृत्परा ॥

अर्थ-इमली, थूहर, आक इनका खार चार २ तोले, शंखभस्म ८ तोले, हींग २ तोले, सैंधानिमक ४ तोले, कालानिमक, कचियानिमक, बिडनिमक, साह्मर निमक, खारीनिमक, सैंधानमक मट्टीका निमक, सूर्यखार, ये सब चार २ तोले, सज्जीखार, जवाखार दो दो तोले इस प्रमाणसे ले एकत्र चूर्णकरे और जंभीरीके रसमें खरल करे. फिर चित्रकके काढेमें तीन दिन खरल करे. फिर भांगरा, निर्गुंडी, गोरखमुंडी और अदरख इनके रसमें एक २ दिन पृथक् २ खरल करे. फिर बेरकी गुठलीके बराबर गोली बनावे. प्रातः काल एक एक भक्षण करे तो पांच प्रकारके गोले, सर्व शूल, अजीर्ण, विषूचिका, मंदाग्नि इनको शीघ्र नाश करे. इसका खानेवाला पथ्यमें तेल, खटाई न खाय. इसको चिंचा शंखवटी कहते हैं. यह संग्रहणीरोगका नाश करे ॥

क्षारादि चूर्ण ।

क्षारद्वयानलव्योषनीलीलवणपंचकम् ।
चूर्णितं सर्पिषा पेयं सर्वगुल्मोदरापहम् ॥

अर्थ-सुहागा, जवाखार, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, नील और पांचों निमक, इन सबका चूर्ण एकत्र करके घीके साथ सेवन करे तो संपूर्ण गुल्म और उदररोग इनको नष्ट करे ॥

सूर्यपुटसे शंखद्राव ।

प्रस्थं जंबीरनीरं पलसुपरिमितं काकतुंडस्य मूलं कर्षार्धं स्व-

जिकायास्त्रिपट्टपलयुतं नव्यसारं पलार्धम् । तत्सर्वं सूर्यतापे मुनिदिनयुगुलं काचकुप्यां निधाय हन्याद् गुल्मं सुतीव्रं जठरमलरुजं शंखकद्रावसंज्ञः ॥

अर्थ–जंभीरीनींबूका रस १ सेर, लाल काकडोडीकी जड ४ तोले, सज्जीखार छः मासे, हरड, बहडा, आंवला चार २ तोले, नोसद्दर २ तोले इन सबको एकत्र शीशीमें भर १४ दिन पर्यंत, धूपमें रक्खा रहने देवे. इसको शंखद्राव कहते हैं. यह घोर तीव्र गोला, उदर, मलकी कठोरता इन पर देवे ॥

द्वितीयशंखद्राव ।

फटकीपलमेकं च सैंधवं पलमेव च । द्विपलं यवजक्षारं द्विपलं नवसागरम् ॥ चतुःपलं सुराक्षारं पलार्धं कासिसं तथा । डमरूयंत्रयोगेन चूल्ल्यां वै बदरींधनैः ॥ साधयेल्लाघवाच्चूर्णं शंखद्रावरसः परः । गुल्मादिसर्वरोगेषु देयः सर्वसुखप्रदः ॥

अर्थ–फटकरी ४ तोले, सैंधानिमक ४ तोले, जवाखार ८ तोले, नोसद्दर ८ तोले, सोरा १६ तोले, हीराकसीस २ तोले इन सब क्षारोंको डमरूयंत्रमें भरके चूल्हेपर चढाय नीचे बेरकी लकडीकी अग्नि देवे और बडी होशयारीके साथ इसमेंसे तेजावको खींच लेवे. इसको शंखद्राव कहते हैं. यह द्राव उत्तम है. इसको गुल्मादिक सर्व रोग पर देवे तो सुख होय ॥

तीसरा शंखद्राव ।

सैंधवं च यवक्षारं नव्यसारं तथैव च । प्रत्येकं द्विपलं ग्राह्यं सुराक्षारं चतुःपलम् ॥ फटकीफलमेकं च पलार्धं कासिसं तथा । सर्वमेकत्र संयोज्यं डमरूयंत्रमध्यगे ॥ चूल्ल्यां प्ररोहयेत्तत्तु ज्वालयेत्खदिरेंधनैः द्रावितं तत्समादाय तेजोरूपं जलप्रभम् ॥ द्रावयेदखिलान् धातून् वराटांश्च न संशयः । शंखद्रावरसो नाम गुल्मोदरहरः परः ॥

अर्थ–सैंधानिमक, जवाखार, नौसद्दर ये प्रत्येक आठ २ तोले, सोरा१६ तोले, फटकरी ४ तोले, हीराकसीस २ तोले इन सबको एकत्र कर डमरूयंत्रमें भर ऊपरसे कपडमिट्टी करके चूल्हे पर चढावे नीचे खैरेकी लकडियोंकी आंच देवे. इसमेंसे जो द्रव

(तेजाब) खींचे उसको अलग धर देवे यह जलके समान स्वच्छ होता है. यह संपूर्ण धातुओंको द्राव करे है तथा कौडीको इसमें डाले तो कौडी गल जावे इसमें क्या संदेह है. इसको शंखद्राव कहते हैं. यह गुल्म और उदरको नाश करे ॥

क्षाराष्टक।

पलाशवज्रशिखरीचिंचार्कतिलनालजः। यावकः स्वर्जिका चेति क्षाराश्चाष्टौ प्रकीर्तिताः ॥ गुल्मशूलहराः क्षारा अजीर्णस्य च पाचनाः ॥

अर्थ-पलास (ढाक), थूहर, ओंगा, इमली, आक और तिलोंकी नाल इनकी राखसे निकाले हुए क्षार और जवाखार तथा सज्जीखार ये आठ क्षार गुल्म, शूल इनको नाश करे तथा अजीर्णको पचावे ॥

शरपुंखक्षार।

शरपुंखस्य लवणं पथ्याचूर्णं समं द्वयम्।
शाणप्रमाणमश्नीयाच्चूर्णं गुल्मगदापहम् ॥

अर्थ-सरफोकेका क्षार और हरडका चूर्ण ये दोनों चार २ मासे लेवे इनको भक्षण करे तो गुल्मरोगको नाश करे ॥

गुल्मरोग पर पथ्य।

स्नेहः स्वेदो विरेकश्च बस्तिर्बाहुशिराव्यधः। लंघनं वर्त्तिरभ्यंगः स्नेहः पक्के तु पाटनम् ॥ संवत्सरसमुत्पन्नाः कलमा रक्तशालयः। खंडः कुलत्थयूषश्च धन्वमांसरसः सुरा ॥ गवामजायाश्च पयो मृद्वीका च परूषकम्। खर्जूरं दाडिमं धात्री नागरं चाम्लवेतसम् ॥ तक्रमेरंडतैलं च लशुनं बालमूलकम्। पत्तूरो वास्तुकं शिग्रु यवक्षारो हरीतकी ॥ रामठं मातुलुंगं च त्र्यूषणं सुरभीजलम्। यदन्नं स्निग्धमुष्णं च बृंहणं लघु दीपनम् ॥ वातानुलोमनं चैव पथ्यं गुल्मे नृणां भवेत् ॥

अर्थ-स्नेहन, स्वेदन, विरेचन, बस्तिकर्म, बाहु (हाथ) की फस्त खोलना, लंघन, वर्त्ती, तेल आदिकी मालिस, पके गुल्मको उखाडना, एक वर्षके पुराने कलमी और लाल चावल, खांड, कुलथी, यूष, जंगली जीवोंका मांस रस, गौका और बकरीका दूध

दाख फालसे, खिजूर, अनार, आंवले, नारंगी, अमलवेत, छाछ, अंडीका तेल, लहसन, कच्ची मूलीका साग, पत्तोंका साग, बथुआ, सहजना, जवाखार, हरड, हींग, बिजोरा, त्रिकुटा, गोमूत्र और जो अन्न चिकना, गरम, बलकर्त्ता, हलका, दीपन, वातको अनुलोम करनेवाला है वह सब गुल्म (गोले) के रोगमें मनुष्योंको पथ्य होता है ॥

गुल्मरोग पर अपथ्य ।

माषादयः शमीधान्यं शूकधान्यं यवादयः । वातकारीणि सर्वाणि विरुद्धान्यशनानि च ॥ वल्लूरं मूलकं मत्स्यं मधुराणि फलानि च । शुष्कशाकं शमीधान्यं विष्टंभीनि गुरूणि च ॥ अधोवायुशकृन्मूत्रश्रमश्वासाश्रुधारणम् । वमनं लंघनं पानं गुल्मरोगे विवर्जयेत् ॥

अर्थ–उडद आदि फलीके धान और जौसे आदिले शूकधान्य, संपूर्ण वात करनेवाली वस्तु, विरुद्ध पदार्थका भोजन, सूखा हुआ मांस, मूली, मछली, मीठे २ फल, सूखे साग, फलीसे प्रगट होनेवाले धान, विष्टंभकारी, भारी पदार्थका सेवन, अधोवायु (पाद) मल, मूत्र, श्रमके श्वासको और आंसुओंको रोकना, वमन करना, लंघन करना और अधिक जलका पीना गुल्म (गोले) के रोगमें वर्जित है ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे गुल्मरोगस्य निदान- चिकित्सा समाप्ता ।

हृद्रोगकर्मविपाकः ।

उदक्या वीक्षितं भुक्त्वा जायते कृमिलोदरः ।
गोमूत्रयावकाहारः सप्तरात्रेण शुध्यति ॥

अर्थ–रजोदर्शनवाली स्त्रीके देखे हुए अन्नको जो प्राणी भोजन करता है उसके उदरमें कृमि उत्पन्न होती है. इसको सात दिन गोमूत्र और जौ इनका आहार करे तो शुद्धि होवे ॥

अभक्ष्यभक्षणे चैव जायंते कृमयो हृदि ।
अथवा तद्विशुद्ध्यर्थमुपोष्यं भीष्मपंचकम् ॥

अर्थ–जो प्राणी अभक्ष्य पदार्थको भक्षण करताहै उसके उदरमें कृमि उत्पन्न होता हैं वह प्राणी कार्तिकके महीनेमें भीष्मपंचकव्रत करे तो शुद्ध होय ॥

गजे च निहते वाश्वे कृमिकुक्षिस्तु जायते ॥

अर्थ-जो प्राणी हाथी अथवा घोडेको मारता है वह इस पापसे उदरमें कृमिरोग वाला होता है ॥

मृते भर्तरि या नारी नीलीवस्त्रं प्रधारयेत् ।
सा मृता नरकं याति कृमिकुक्षिस्ततः परम् ॥

अर्थ-पतिके मरने पर जो स्त्री नीले रंगके वस्त्रको धारण करे वह मरने पर नरकोंमें जाय और फिर दूसरे जन्ममें उसके पेटमें कृमि होवें ॥

ज्योतिःशास्त्रद्वारा निर्णय ।

पाटितहृदयाचिहिबुके निर्वाहनबांधवार्तिसतिसौख्यम् ।
बाल्यो व्याधितदेहो नखरोमधरो भवेत् शौरः ॥

अर्थ-जन्मकालमें चतुर्थस्थानमें जिसके पापग्रह होवें तो उसको उरःक्षत, बंधुपीडा, बाल्य अवस्थामें ही शरीरको व्याधि तथा नख केश इनका धारण करनेवाला होवे ॥

हृद्रोगनिदान ।

अत्युष्णगुर्वम्लकषायतिक्तैः श्रमाभिघाताध्ययनप्रसंगैः ।
संचिन्तनैर्वेगविधारणैश्च हृदामयः पंचविधः प्रदिष्टः ॥

अर्थ-अति गरम, अति भारी, अति खट्टा, अति कषेला, अति कडुवा ऐसे पदार्थ सेवन करनेसे श्रम (धनुष आदिका खैंचना), अभिघात (हृदयमें चोट लगना) और भोजनके ऊपर भोजन नित्य करनसे, संचिंतन (राजाके भयसे चिंता) मलमूत्र आदि वेगोंके रोकनेसे, वातादिकके क्षय और सन्निपात करके तथा कृमिसे हृदयका रोग होयहै वह पांचप्रकारका है ॥

संप्राप्ति ।

दूषयित्वा रसं दोषा विगुणा हृदयं गताः ।
हृदि बाधां प्रकुर्वन्ति हृद्रोगं तं प्रचक्षते ॥

अर्थ-कुपित भये दोष रसको (हृदयमें जो रहता है) दुष्ट करके हृदयमें अनेक प्रकारकी पीडा करे उसको हृदयरोग कहते हैं ॥

वातजन्य हृदयरोग ।

आयम्यते मारुतजे हृदयं तुद्यते तथा ।
निर्मथ्यते दीर्यते च स्फोट्यते पाट्यतेऽपि च ॥

अर्थ-वातज हृदयरोगमें हृदय ईचासरीखा, सुईसे चोटनेसरीखा, फोरनेसरीखा, दो टुकडा करनेके समान, मथनेके समान, कुहाडीसे फारनेके समान पीडा करे है ॥

पंचमूलक्काथ ।

वातोपसृष्टे हृदये वामयेत्स्निग्धमातुरम् ।
द्विपंचमूलिक्काथेन सस्नेहलवणेन वा ॥

अर्थ-वातजन्य हृदयरोग पर स्नेहपान करके वमन कर देवे अथवा दशमूलके काढेमें स्नेह और सैंधव डालके पीवे ॥

पिप्पल्यादि चूर्ण ।

पिप्पल्येला वचा हिंगु यवक्षारोऽथ सैंधवम् । सौवर्चलमथो शुंठी दीप्यश्चेति विचूर्णितम् ॥ पलं धान्याम्लकौलित्थदधिमद्यव-सादिभिः । पाययेच्छुद्धदेहस्य वातहृद्रोगशांतये ॥

अर्थ-पीपल, इलायची, वच, हींग, जवाखार, सैंधानिमक, संचरनिमक, सोंठ, अजमायन इनका चूर्ण तोले ४ भरले तथा कांजी, अथवा कुलथीका जल, अथवा दही, अथवा मद्य, अथवा मांस स्नेह इनमेंसे किसी एकके साथ वमन अथवा रेचनसे शुद्धि हुए मनुष्यको पिलावे तो वातहृदयरोग शांत होवे ॥

पुष्करादि कल्क ।

सुपुष्कराख्यं फलपूरमूलं महौषधं शट्यभया च कल्कः ।
क्षीराम्लसर्पिर्लवणैर्विमिश्रः स्याद्वातहृद्रोगहरो नराणाम् ॥

अर्थ-पुहकरमूल, बिजोरेकी जड, सोंठ, कचूर, हरड इनका कल्क दूध अथवा कांजी, अथवा घी, अथवा सैंधानिमक मिलायके खाय तो वातहृद्रोगनाश होय ॥

पुनर्नवादितैल ।

पुनर्नवादारुसपंचमूलरास्नायवाकोलकपित्थबिल्वम् ।
पक्त्वा जले तेन पचेच्च तैलमभ्यंगपानेऽनिलहृद्ग्रहघ्नम् ॥

अर्थ-पुनर्नवा, दारुहलदी, पंचमूल, रास्ना, यव, घी, बेर, कैथ, बेलफल इनके काढेके साथ सिद्ध करे हुए तेलको मालिस करे अथवा पीवे तो वातजन्य हृदयरोग नष्ट होय. इसको पुनर्नवादि तैल कहते हैं ॥

पित्तजन्यहृदयरोगनिदान ।

तृष्णोष्णदाहमोहाः स्युः पैत्तिके हृदयक्लमः ।

धूमपानं च मूर्च्छा च स्वेदः शोषो मुखस्य च॥

अर्थ-पित्तके हृदयरोगमें, प्यास, किंचित् दाह, मोह और हृदयकी ग्लानि, धूंआ निकलतासा मालूम होय, मूर्च्छा, पसीना और मुखका सूखना ये लक्षण होय हैं ॥

सामान्यचिकित्सा ।

शीताः प्रदेहाः परिषेचनं च तथा विरेको हृदि पित्तदुष्टे ॥

अर्थ-पित्तजन्य हृदयरोग पर शीतल लेप, जलका छिडकना, रेचन ये उपचार करे.

द्राक्षादि चूर्ण ।

द्राक्षासिताक्षौद्रपरूषकैः स्याच्छुद्धे च पित्तापहमन्नपानम् ॥

अर्थ-पित्तजन्य हृदयरोग पर जुलाब करायके शुद्ध होने पर दाख, मिश्री, सहत, फालसे इनको एकत्र करे हुए ऐसे अन्न और पान देने चाहिये ॥

श्रीपर्ण्यादि रेचन और वमन ।

श्रीपर्णी मधुकं क्षौद्रं सिता गुडजलैर्वमेत् ।
पित्तोपसृष्टे हृदये विरेकः प्रोक्तो हि हृद्रोगहरो नराणाम् ॥

अर्थ-कायफल, मुलहठी, सहत, मिश्री, गुड और जल इनका वमन देवे अथवा विरेचन देवे तो पित्तजन्य हृदयरोग शांत होय ॥

हारहूरादि चूर्ण ।

हारहूराहरीतक्योस्तुल्यं शर्करया रजः ।
पीतं हिमांबुना हंति पित्तहृद्रोगमंजसा ॥

अर्थ-काली दाख, हरड इनके चूर्णके साथ मिश्री लेकर एकत्र कर शीतल जलके साथ पीवे तो पित्तजन्य हृदयरोगको तत्काल नाश करे ॥

अर्जुनादि क्षीर ।

अर्जुनस्य त्वचा सिद्धं क्षीरं पित्तहृदर्तिजित् ।
सितया पंचमूल्या वा बालया मधुकेन वा ॥

अर्थ-अर्जुन (कोह) वृक्षकी छालके काढेके अथवा लघुपंचमूलके काढेके साथ, अथवा मुलहठी इनके साथ सिद्ध करा हुआ दूध पित्तहृदयरोगनाशक जानना ॥

कसेरुकादि क्वाथ ।

कसेरुकाशैवलशृंगवेरप्रपौंडरीकं मधुकं बिसं च ।
ग्रंथिश्च सर्पिः पयसा पचेत्तैः क्षौद्रान्वितं पित्तहृदामयघ्नम् ॥

अर्थ–कचूर, काई, सोंठ, पुंडरीकवृक्ष, मुलहठी, कमलकी डंडी, बांसकी गांठ इनके चूर्णको घृत, दूध इनको एकत्र औटायके सहत डालके पीवे तो पित्तहृदयरोगनाश करे ॥

कफजहृद्रोगनिदान ।

गौरवं कफसंस्रावोऽरुचिः स्तंभोग्निमार्दवम् ।
माधुर्यमपि चास्यस्य बलासा वर्त्तते हृदि ॥

अर्थ–कफसे हृदय व्याप्त होनेसे भारीपना, कफका गिरना, अरुचि, हृदय जकड जाय, मंदाग्नि, मुखमें मिठास ये लक्षण होते हैं ॥

कफजन्यहृद्रोग पर सामान्य चिकित्सा ।

हृद्रोगे कफजे स्विन्नं सुवातं लंघितं नरम् ।
कफघ्नैर्भेषजैर्युंज्याज्ज्ञात्वा दोषं बलाबलम् ॥

अर्थ–कफजन्य हृदयरोग पर पसीने निकाले, वमन कराय, लंघन करायके मनुष्यके दोषोंका बलाबल विचारके कफघ्न उपचार करे ॥

त्रिवृतादि चूर्ण ।

त्रिवृच्छठी बला रास्ना शुंठी पथ्या सपौष्करा ।
चूर्णिता वा शृता मूत्रे पातव्या कफहृद्गदे ॥

अर्थ–निसोथ, कचूर, खिरेटी, रास्ना, सोंठ, हरड और पुहकरमूल इनका काढा अथवा चूर्णको गोमूत्रके साथ पीवे तो हृदयरोगको नाश करे ॥

सूक्ष्मैलादि चूर्ण ।

सूक्ष्मैला मागधीमूलं प्रलीढं सर्पिषा सह ।
नाशयेदाशु हृद्रोगं कफजं सपरिग्रहम् ॥

अर्थ–छोटी इलायची, पीपरामूल इनका चूर्ण घीके साथ चाटे तो उपद्रवसहित कफजन्य हृदयरोगको नाश करे ॥

सन्निपातज हृदयरोगनिदान ।

विद्यात्त्रिदोषं त्वपि सर्वलिङ्गम् ॥

अर्थ-जिसमें सब लक्षण मिलते होंय वह त्रिदोषका हृद्रोग जानना, इसमें कुछभी अपथ्य होनेसे गांठ उत्पन्न होती है, उस गांठसे कृमि पैदा होय हैं, ऐसे चरकमें कहा है ॥

त्रिदोषजहृद्रोगकी चिकित्सा ।

त्रिदोषजे लंघनमादितः स्यादन्नं तु सर्वेषु हितं विधेयम् ।
चूर्णानि सर्पींषि च वक्ष्यमाणान्यत्र प्रयोज्यानि भिषग्भिराशु ॥

अर्थ-त्रिदोषजन्य हृदयरोग पर प्रथम लंघन करे तथा संपूर्ण हृदयरोगों पर हितकारी अन्न भोजन करे तथा आगे लिखे हुए चूर्णोंको घीमें मिलायके त्रिदोष जन्य हृदयरोग पर देवे ॥

कृमिजहृदयरोगनिदान ।

तीव्रार्तितोदं कृमिजं सकंडूं ॥ उत्क्लेदः ष्ठीवनं तोदः शूलं हृ-
ल्लासकस्तमः । अरुचिः श्यावनेत्रत्वं शोषश्च कृमिजे भवेत् ॥

अर्थ-तीव्र पीडा करके तथा नोचनेकीसी पीडा करके तथा खुजली करके युक्त ऐसा हृद्रोग कृमिजन्य जानना. उत्क्लेद (ओकारी आनेके समान मालूम हो), थूकना, तोद (सुई चुभानेकीसी पीडा), शूल, हल्लास, अंधेरा आवे, अरुचि, नेत्र काले पड जांय और मुखशोष यह लक्षण कृमिज हृदयरोगमें होते हैं, जैय्यटका यह मत है कि (उत्क्लेदसे लेकर तम पर्यंत) त्रिदोषके लक्षण कहे हैं जैसे तोद, शूल, ये वादीसे होंय. (उत्क्लेद, हल्लास और ष्ठीवन ये कफसे और तम ये पित्तसे लक्षण होते हैं और अरुचिसे लेकर शोषपर्यन्त कृमिज हृद्रोगके लक्षण जानने, इस विषयमें प्रत्येक आचार्योंके भिन्न भिन्न मत हैं ॥

हृदयरोगके उपद्रव ।

क्लोमसादो भ्रमः शोषो ज्ञेयास्तेषामुपद्रवाः । कृमिजे कृमिजा-
तीनां श्लेष्मकाणां च ये मताः ॥ संस्तंभः सज्वरं घोरं रूक्ष-
स्पर्शासहं गुरु । आध्मानकुक्षिहृत्कंठवातविण्मूत्ररोधता ॥
तंद्रारोचकशूलानि तस्य लिंगानि निर्दिशेत् ॥

अर्थ-क्लोम कहिये पिपासा (प्यास) स्थान उसमें ग्लानि होय, भ्रम, शोष ये सब उन हृद्रोगोंके उपद्रव जानने और कफका कृमिरोगके उपद्रव पिछाडी कह आये हैं सोही कृमिज हृद्रोगके लक्षण होते हैं. और स्तंभ, घोर ज्वर और हृदय रूक्ष, भारी होता है और उसका स्पर्श सहा नहीं जाता. आध्मान होता है, कुक्षी, हृदय, अपानवायु, विष्ठा, मूत्र इनका निरोध, तंद्रा, अरोचक, शूल ये लक्षण होते हैं ॥

कृमिहृद्रोगकी सामान्य चिकित्सा ।

हृद्रोगे कृमिजे कार्यं लंघनं चापतर्पणम् ।
पश्चात्कृमिहरं कर्म कृमिरोगोक्तमाचरेत् ॥

अर्थ-कृमिजन्य हृदयरोग पर लंघन, रेचन ये प्रथम करके पश्चात् कृमिरोग प्र कहे ऐसे कृमिनाशक उपचार करे ॥

गोमूत्रपान ।

कृमिजे च पिबेन्मूत्रं विडंगामयसंयुतम् ।
हृदि स्थिताः पतंत्येव ह्यसाध्याः कृमयो नृणाम् ॥

अर्थ-कृमिजहृदयरोग पर गोमूत्रमें वायविडंग और कूठका चूर्ण डालके पीवे तो पेटमेंसे असाध्यभी कृमि गिर जाँयगे ॥

दुग्धपान ।

चतुर्विंशतिपलं क्षीरं गवामथ पचेच्छनैः । द्विरष्टपलकं याव-त्तावत्कुर्यात्तु शीतलम् ॥ सिता क्षौद्रं घृतं तस्मिन् दुग्धे चार्ध-पलं क्षिपेत् । कर्षैकं पिप्पली चूर्णं क्षिप्त्वा पेयं हितं परम् ॥ स-र्वदोषोत्थहृद्रोगं ज्वरं कासं क्षयं जयेत् ॥

अर्थ-छियानवे ९६ तोले गौके दूधको मंदाग्नि पर धरके अधौटा करे फिर उतारके शीतल कर लेवे और इसमें मिश्री, सहत, घी ये दो दो तोले डालके तथा पीपलका चूर्ण एक तोला डालके पीवे तो सर्वदोषजन्य हृदयरोग, ज्वर, खांसी, क्षय इनको पराजय करे ॥

पौष्करादिक्काथ ।

क्काथः कृतः पौष्करमातुलिंगपलाशभूतीकसठीसुराह्वैः ॥
सनागराजाजिवचायवाह्वः सक्षार उष्णो लवणेन पेयः ॥

अर्थ-पुहकरमूल, बिजोरा,पलास, अजमायन, कचूर, देवदारु, सोंठ, जीरा और वच इनका काढा कर उसमें जवाखार. सज्जीखार, सैंधानिमक, संचरनिमक ये डालके गरम २ पीवे तौ हृदयरोग अच्छा होय ॥

दशमूलादि क्वाथ ।

दशमूलकृतः क्काथः सयवक्षारसैंधवः ।
हृद्रोगगुल्मशूलार्तिं कासं श्वासं च नाशयेत् ॥

अर्थ-शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेरी, बडी कटेरी गोखरू, बेलगिरी, अरनी, टेंटू, कंभारी, पाढ, इन दशोंकी जड लेवे इनका काढा करे उसमें जवाखार और सैंधानिमक डालके पीवे, तो इससे उरमें जो रोग होता है वह तथा गोलेका शूल तथा श्वास, खांसी इनका नाश करे ॥

एरंडादिक्काथ ।

पवनारिजटा द्विपलाष्टगुणे सलिले पचिता यवजेन युतम् ।
कथनं हृदयोद्भवपार्श्वकटीशूलविदारणसिंहनखम् ॥

अर्थ-अंडकी जड ८ तोलेको अठगुने जलमें डालके औटावे इसमें जवाखार डालके पीवे तो हृदयरोग, कूख, कमर इनके शूलको विदारण करनेमें सिंहके नखके समान है ॥

बाह्लीकादि क्काथ ।

बाह्लीकविश्वदहनायवयावशूकैः पथ्याभयाविडकणारुचकैर्नि-
हन्यात् । क्काथः सपुष्करजटाभववारि पीतो हृद्रोगमग्निवि-
कलत्वमतिप्रबद्धम् ॥

अर्थ-हींग, सोंठ, चित्रककी छाल, जवाखार, हरड, कूठ, बिडनिमक, पीपल, संचर निमक और पुहकरमूल इनका काढा पीवे तो हृदयरोग, मंदाग्नि और मलबद्धता इनको नाश करे ॥

नागरादिक्काथ ।

नागरस्य पिबेदुष्णं कषायं चाग्निवर्धनम् ।
कासश्वासानिलहरं शूलहृद्रोगनाशनम् ॥

अर्थ-सोंठका गरम २ काढा पीवे तो जठराग्नि बढे तथा श्वास, खांसी, वादी, शूल, हृदयरोग इनको नाश करे ॥

नागबलादि दुग्धपान ।

मूलं नागबलायास्तु गोदुग्धेन च पाचयेत् । हृद्रोगश्वासकासघ्नं
कुंकुमायाश्च वल्कलम् ॥ रसायनं परं बल्यं वातजिन्मासयो-
जितम् । संवत्सरप्रयोगेण जीवेद्वर्षशतं ध्रुवम् ॥

अर्थ-गंगेरनकी जडको गौके दूधमें औटावे इसको पीवे तो श्वास, खांसी, इनको नाश करे तथा सेमरकी छाल दूधमें सिजायके एक महीने पर्यंत पीवे.

यह रसायन अत्यंत बलकारक और वातनाशक है. इसीको एक वर्ष पर्यंत पीवे तो सौ वर्ष पर्यंत जीवे इसमें संदेह नहीं ॥

हिंगुपंचकचूर्ण ।

विश्वौषधेन रुचकेन सदाडिमेन स्याच्चाम्लवेतसयुतः कृतहिंगुभागः । तद्धिंगुपंचकमिदं हृदयामयघ्नं भेडाभिधानमुनिना गदितं मुनीनाम् ॥

अर्थ-सोंठ, संचरनिमक, अनारकी छाल, अमलवेत और भुनी हुई हींग इनका समान भाग चूर्ण करे यह हिंगुपंचक पहले रोगग्रस्त मुनियोंको देख हृद्रोगनाशनार्थ भेड मुनीश्वरने कहा है ॥

पुष्करचूर्ण ।

चूर्णं पुष्करजं लिह्यान्माक्षिकेण समायुतम् ।
हृद्रोगश्वासकासघ्नं क्षिप्रं हिक्कानिवारणम् ॥

अर्थ-पोहकरमूलके चूर्णको सहतके साथ चाटे तो हृदयरोग, श्वास, खांसी हिचकी इनको तत्काल दूर करे ॥

हरिणशृंगभस्म ।

शरावसंपुटे दग्ध्वा शृंगं हरिणजं पिबेत् ।
गव्येन सर्पिषा पिष्टं हृच्छूलं नाशयेद्ध्रुवम् ॥

अर्थ-हिरणके सींगोंके छोटे २ टुकडे सरवामें रख ऊपरसे दूसरे सरवाको ढक देवे और उसकी कपडमिट्टी करके संधियोंको लेप कर देवे. अग्निमें रखके फूंक देवे. जब भस्म हो जावे तब चूर्ण कर गौके घीमें मिलायके पीवे तो हृदयका शूल नष्ट होय ॥

हिंग्वादि चूर्ण ।

हिंगूग्रगंधाबिडविश्वकृष्णाकुष्ठाभयाचित्रकयावशूकम् ।
पिबेत्ससौवर्चलपुष्कराख्यं यवांभसा शूलहृदामयघ्नम् ॥

अर्थ-हींग, वच, बिडनिमक, सोंठ, पीपल, कूठ, हरड, चित्रक, जवाखार, संचरनिमक और पोहकरमूल इनका चूर्ण जौके काढेके साथ पीवे तो हृदयरोगको नाश करे ॥

ककुभत्वक्चूर्ण ।

घृतेन दुग्धेन गुडांभसा वा पिबंति चूर्णं ककुभत्वचोत्थम् ।
हृद्रोगजीर्णं ज्वररक्तपित्तं जित्वा भवेयुश्चिरजीविनस्ते ॥

अर्थ-घी, दूध, गुडका जल इनमेंसे किसी एकके साथ कोहवृक्षी छालका चूर्ण, जो पीते हैं वह हृदयरोग, जीर्णज्वर, रक्तपित्त इनको जीतकर चिरंजीव होते हैं ॥

कटुक्यादि चूर्ण ।

पिष्टा वा कटुका पेया समयष्टी वा सुखांबुना ।
जीर्णज्वरं रक्तपित्तं हृद्रोगं च व्यपोहति ॥

अर्थ-कुटकी और मुलहठी इनके चूर्णको गरम जलके साथ पीवे तो जीर्णज्वर रक्तपित्त, हृदयरोग इनको नाश करे ॥

हरीतक्यादि चूर्ण ।

हरीतकीवचारास्नापिप्पलीनागरोद्भवम् ।
शठीपुष्करमूलोत्थं चूर्णं हृद्रोगनाशनम् ॥

अर्थ-हरड, वच, रास्ना, पीपल, सोंठ, नागरमोथा और पुहकरमूल इनका चूर्ण हृदयरोगनाशक है ॥

पाठादि चूर्ण ।

पाठा वचा यवक्षारमभयासाम्लवेतसम् । दुरालभां चित्रकं च त्र्यूषणं च फलत्रिकम्॥ शुंठी पुष्करमूलं च तिंतिडीकं सदाडिमम् । मातुलिंगस्य मूलानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ उष्णोदकेन मद्यैर्वा ह्रतान्येतानि पाययेत् । आर्शं शूलं च हृद्रोगं गुल्मं चाशु व्यपोहति ॥

अर्थ-पाढकी जड, वच, जवाखार, हरड, अम्लवेत, धमासा, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, पुहकरमूल, इमली, अनारदाना, बीजोरेकी जड इन सबको समान भाग ले बारीक चूर्ण करे. फिर इसको गरम जलके साथ पीवे अथवा मद्यसे पीवे तो हृदयरोग, मूलव्याधि, शूल और गोला इनको नाश करे॥

गोधूमादि चूर्ण ।

गोधूमककुभचूर्णं पक्वमजाक्षीरगव्यसर्पिर्भ्याम् ।
मधुशर्करासमेतं शमयति हृद्रोगमुद्धतं पुंसाम् ॥

अर्थ-गेहूं, कोहवृक्षकी छाल इनके चूर्णको बकरीके दूधमें गौका घी डालके औटावे जब सीज जावे तब उतार सहत, मिश्री डालके पीवे तो मनुष्योंका घोर हृदयरोग शांत होवे ॥

वल्लभघृत ।

शतार्धमभयानां तु सौवर्चलपलद्वयम् । पचेत्कल्कैर्घृतप्रस्थं दत्त्वा क्षीरं चतुर्गुणम् ॥ घृतं वल्लभकं नाम्ना श्रेष्ठं हृद्रोगनाशनम् ॥

अर्थ-पचास हरड, संचरनिमक ८ तोले इनके चूर्णको ६४ तोले घी और घीसे चौगुना दूध एकत्र कर पक्व करे इसको वल्लभघृत कहते हैं, यह हृदयरोगनाशक है ॥

यष्ट्यादि घृत ।

यष्टीनागबलोदिच्यार्ज्जुनैः सर्पिः सुसाधितम् ।
हृद्रोगक्षयपित्तास्रश्वासकासज्वरार्तिजित् ॥

अर्थ-मुलहठी, नागबला, खस, कोहवृक्षकी छाल इनको डालके घृत सिद्ध करे. यह घृत हृदयरोग, क्षय, पित्तरक्त, श्वास, खांसी ज्वर इनकी पीडाको जीते ॥

बलादि घृत ।

घृतं बलानागबलार्जुनानां क्वाथेन कल्केन च यष्टिकायाः ।
सिद्धं निहन्याद्धृदयामयं हि सवातरक्तक्षतरक्तपित्तम् ॥

अर्थ-खिरेटी, नागबला और कोहवृक्षकी छाल इनके काढेके साथ और मुलहठीके चूर्णके साथ सिद्ध करा हुआ घृत हृदयरोग, वातरक्त, रक्तपित्त इनको नाश करे ॥

हृदयार्णवरस ।

सूतार्कगंधं क्वाथेन वराया मर्दयेद्दिनम् । काकमाच्या वटीं कृत्वा चणमात्रां तु भक्षयेत्॥ हृदयार्णवनामायं हृद्रोगदलनो रसः॥

अर्थ-पारा, गंधक, तामेकी भस्म, इनको हरड, बहेडा, आवला इनके काढेमें एक दिन खरल कर फिर काकमाची (मकोय) के काढेमें एक दिन खरल कर चनेके बराबर गोली बनायके खाय तो हृदयरोगका नाश होय. इसको हृदयार्णवरस कहते हैं ॥

रसायन ।

रसगंधाभ्रभस्मानि पार्थवृक्षत्वगंबुना । एकविंशतिधा घर्मे भावितानि विधानतः ॥ माषमात्रमिदं चूर्णं मधुना सह लेहयेत् । वातजं पित्तजं श्लेष्मसंभूतं वा त्रिदोषजम् ॥ कृमिजं चापि हृद्रोगं निहंत्येव न संशयः ॥

अर्थ-पारा, गंधक, अभ्रक इनकी भस्म समान भाग ले कोहवृक्षकी छालके रसमें अथवा प्याजके रसमें धूपमें रखके इसे भावना देवे. फिर इस चूर्णको सहतके साथ एक मास खाय तो वात, पित्त, कफ, त्रिदोष इनसे होनेवाले हृदयरोग अथवा कृमिजन्य हृदयरोग इन सबको नाश करे ॥

हृद्रोग पर पथ्य ।

स्वेदो विरेको वमनं च लंघनं बस्तिर्विलेपो चिररक्तशालयः । मृगद्विजाजांगलसंज्ञयान्विता यूषा रसा मुद्गकुलत्थसम्भवाः ॥ रागाः खडा कांबलिकाश्च खांडवा भव्यं पटोलं कदलीफलान्यपि । पुराणकूष्मांडरसालदाडिमं शम्याकशाकं नवमूलकान्यपि ॥ एरंडतैलं गगनाम्बु सैंधवं द्राक्षा च तक्रं च पुरातनो गुडः । शुंठी यवानी लशुनं हरीतकी कुष्ठं च कुस्तुंबुरुकृष्णमार्द्रकम् ॥ सौवीरशुक्तं मधुवारुणीरसः कस्तूरिका चंदनकं प्रपानकम् । तांबूलमप्येष गणः सखा भवेन्मर्त्यस्य हृद्रोगनिपीडितात्मनः ॥

अर्थ-स्वदन, वमन, विरेचन, लंघन, बास्तिकर्म, विलेपी, पुराने लाल चांवल, मृग (जंगली जीव हरिण आदि), पक्षी (तोता मैना आदि, यूष (सप्तमुष्टिक आदि), मूंग, कुलथी आदिके रस, राग (पीनेका पदार्थ), खांड, कांबलिक, खांडव, नागरमोथा, परवल, कलाकी गहर, पुराना पेठा, आम, अनार, अमलतासकी फलियोंका साग, नई मूली, अंडीका तेल, वर्षाका जल, सैंधानिमक, दाख, छाछ, पुराना गुड, सोंठ, अजमायन, लहसन, हरड, कूठ, धनिया, पीपल, अदरख, कांजी, सिर्का, सहत, मद्य, कस्तूरी चंदन, पने और पानके बीडा ये सब हृदय रोग पीडित प्राणीको हितकारी होते हैं ॥

हृद्रोग पर अपथ्य ।

तृट्छर्दिमूत्राऽनिलशुक्रकासोद्गारश्रमश्वासविडश्रुवेगान् ।
सह्याद्रिविंध्याद्रिनदीजलानि मेषीपयो दुष्टजलं कषायम् ॥

अर्थ-प्यास, वमन, मूत्र, अधोवायु, वीर्य, खांसी, डकार, श्रमजन्य श्वास, मल और आंसू इनके उपस्थित वेगोंको रोकना, सह्यपर्वत, विंध्याचल पर्वत इनके जल, भेडका दूध, दूषित (बिगडा हुआ) जल, कषेले रस, विरुद्ध पदार्थ, गरम

भारी, कडवा, खट्टा और पुराने पदार्थ एवं पत्तेका शाक, खार, महुआ, दांतन करना, फस्त खोलना इन सब कर्मोंको हृदयरोगवाला प्राणी त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे हृद्रोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

मूत्रकृच्छ्रकर्मविपाकः ।

गुरुजायाभिगमनान्मूत्रकृच्छ्रं प्रजायते ।
तेनापि निष्कृतिः कार्या शास्त्रदृष्टेन वर्त्मना ॥

अर्थ–गुरुस्त्रीके साथ गमन करनेसे मूत्रकृच्छ्रव्याधि उत्पन्न होती है. उसकी शांतिके अर्थ शास्त्रमें कहे प्रमाण उसकी निष्कृति (शांति) करे ॥

पशुयोनौ च गमनान्मूत्रकृच्छ्रं प्रजायते ।
तिलपात्रत्रयं चैव स दद्यादात्मशुद्धये ॥

अर्थ–जो प्राणी पशु (बकरी, घोडी, कुत्ती आदि) से मैथुन करता है उसके मूत्रकृच्छ्र रोग होता है उसको आत्मशुद्धिके वास्ते ३ तिलपात्र दान करना चाहिये ॥

तिलपूर्णं ताम्रपात्रं सहिरण्यं द्विजातये ।
प्रातर्दत्त्वा तु विधिवद्दुःस्वप्नं प्रतिहंति सः ॥

अर्थ–प्रातःकाल तिलोंसे भरे हुए तांबेके पात्रको दक्षिणासहित ब्राह्मणको देता है उसका दुःस्वप्नका नाश होय तथा मूत्रकृच्छ्ररोग शांत होय ॥

ज्योतिष ।

जन्मकाले यदा यस्य स्मरे भवति भास्करिः ।
राहुर्दुष्टः प्रकुरुते मूत्रकृच्छ्रादिकां रुजम् ॥

अर्थ–जिस प्राणीके जन्मसमय सप्तम स्थानमें शनैश्चर और राहु पडे होवें उसके मूत्रकृच्छ्रादिक रोग होते हैं ॥

मूत्रकृच्छ्रनिदान ।

व्यायामतीक्ष्णौषधरूक्षमद्यप्रसंगनित्यद्रुतपृष्ठयानात् ।
अनूपमत्स्याध्यशनादजीर्णात्स्युर्मूत्रकृच्छ्राणि नृणामिहाष्टौ ॥

अर्थ–व्यायाम (दंड कसरत आदि), तीक्ष्णौषध (राई आदि), रूखा पदार्थ और नित्यप्रति मद्यपान करन और निरंतर घोडे पर चढनेसे और जलसमीप रहने-

वाले पक्षी (हंस, सारस, चकवा आदि) का मांस खानेसे और मछली भोजनके ऊपर भोजन करनेसे और कच्चे पदार्थ इत्यादिकोंके खानेसे मनुष्योंके आठ प्रकारका मूत्रकृच्छ्ररोग होय है पृथक् दोषोंसे ३, सन्निपातसे १, चोट लगनेका १, मल रोकनेके २, वीर्य रोकनेका १ और पथरीका १, ये सब मिल करके आठ भये ॥

संप्राप्ति ।

पृथङ्मलाः स्वैः कुपिता निदानैः सर्वेऽथ वा कोपमुपेत्य बस्तौ ।
मूत्रस्य मार्गं परिपीडयंति यदा तदा मूत्रयतीह कृच्छ्रात् ॥

अर्थ-अपने कारणसे कुपित भये जो वातादिक दोष अथवा सब दोष बस्तिमें कुपित होकर मूत्रके मार्गको पीडित करें, तब मनुष्यका बडे कष्टसे मूत्र उतरे ॥

वातमूत्रकृच्छ्रनिदान ।

तीव्रार्तिरुग्वंक्षणबस्तिमेढ्रे स्वल्पं मुहुर्मूत्रयतीह वातात् ॥

अर्थ-वातके मूत्रकृच्छ्रसे वंक्षण (जांघ और ऊरु इनकी संधि) मूत्राशय और इन्द्रिय इनमें पीडा होय और मूत्र वारंवार थोडा थोडा उतरे ॥

वातमूत्रकृच्छ्र पर सामान्य यत्न ।

अभ्यंजनं स्नेहनिरूहबस्तिः स्वेदोपनाहोत्तरबस्तिसेकान् ।
स्थिरादिभिर्वातहरैश्च सिद्धान् दद्याद्रसांश्चानिलमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ-स्नेहकी मालिस, स्नेहपान, निरूहबस्ति, पसीने निकालना, उपनाह, उत्तरबस्ति, जलका छिडकना, स्थिरादि वातनाशक क्वाथ इत्यादि उपचार वातमूत्रकृच्छ्र पर करे ॥

क्वाथ ।

अमृता नागरं धात्री वाजिगंधा त्रिकंटकम् ।
निष्क्वाथ्य प्रपिबेत्क्वाथं मूत्रकृच्छ्रे समीरजे ॥

अर्थ--गिलोय, सोंठ, आंवला, असगंध, गोखरू इनका काढा करके वातमूत्रकृच्छ्रपर देवे ॥

त्रिकंटकादि क्वाथ ।

त्रिकंटकारग्वधदर्भकाशयवासधात्रीगिरिभेदपथ्याः ।
निघ्नंति पीता मधुनाश्मरीं च समीपमृत्योरपि मूत्रकृच्छ्रम् ॥

अर्थ-गोखरू,अमलतास, डाभ, कांस, धमासा, आंवला, पाषाणभेद और हरड इनका काढा सहत डालके पीवे तो आसन्नमृत्युभी हो तथापि उसकी पथरी और मूत्रकृच्छ्र नष्ट होय ॥

एलादि चूर्ण ।

एलाश्मभेदकशिलाजतुगोक्षुराणामेर्वारुबीजलवणोत्तमकुंकुमानाम् । चूर्णानि तंदुलजले लुलितानि पीत्वा प्रत्येक्षमृत्युरपि जीवति मूत्रकृच्छ्री ॥

अर्थ-इलायची, पाषाणभेद, शिलाजीत, गोखरू, काकडीके बीज, सैंधानिमक, केशर इनके चूर्णको चांवलोंके धोवनके साथ पीवे तो आसन्नमृत्युवालाभी मूत्रकृच्छ्री रोगी होय तोभी बच जावे ॥

पित्तमूत्रकृच्छ्रनिदान ।

पीतं सरक्तं सरुजं सदाहं कृच्छ्रं मुहुर्मूत्रयतीह पित्तात् ॥

अर्थ-पैत्तिक मूत्रकृच्छ्रसे पीला, कुछ लाल, पीडायुक्त, अग्निके समान वारंवार कष्टसे मूत्र उतरे ॥

कुशकासादि क्वाथ ।

कुशकाशं शरो दर्भ इक्षुश्चेति तृणोद्भवम् । पित्तकृच्छ्रहरं पंचमूलं बस्तिविशोधनम् ॥ एतैः सिद्धं पयः पीतं मेढ्रगं हंति शोणितम् ॥

अर्थ-कुश, कास, डाभ रामसर, (सरपता), ईख, इनकी जडका काढा पित्तमूत्रकृच्छ्रनाशक और बास्तिशोधक है तथा इस पंचमूलसे सिद्ध करा हुआ दूध पीवे तो शिश्न (लिंग) के नीचेको सूजन जो दुष्ट रुधिरसे हुई है उसका नाश हो ॥

शतावरीक्वाथ ।

शतावरीकासकुशश्वदंष्ट्राविदारिशालीक्षुकसेरुकाणाम् । क्वाथं सुशीतं मधुशर्कराभ्यां युक्तं पिबेत्पैत्तिकमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ-शतावर, कांस, कुश, गोखरू, विदारीकंद, शालीचावल, ईख, कसेरू इनकी जडका काढा शीतल होने पर सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो पित्तमूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

एर्वारुबीजपान ।

एर्वारुबीजं मधुकं सदार्वि पित्ते पिबेत्तंदुलधावनेन ।
दार्वीं तथैवामलकीरसेन समाक्षिकं पित्तकृतेऽथ कृच्छ्रे ॥

अर्थ-खीरेके बीज, मुलहठी, दारुहलदी इनका चूर्ण चांवलोंके धोवनके साथ मिलायके पीवे अथवा दारुहलदीका चूर्ण आंवलेके रसके साथ सहत डालके पीवे तो पित्तमूत्रकृच्छ्र नष्ट होय ॥

द्राक्षादि कल्क ।

द्राक्षासितोपलाकल्कं कृच्छ्रघ्नं मस्तुना युतम् ।
पिबेद्वा कामतः क्षीरमुष्णं गुडसमायुतम् ॥

अर्थ- दाख, मिश्री इनको एकत्र कूट दहीके जलके साथ पीवे अथवा दूधको गरम करके उसमें गुड, डालके यथेष्ट पीवे तो मूत्रकृच्छ्र नाश होय ॥

नारिकेलजलपान ।

नारिकेलजलं योज्यं गुडधान्यसमन्वितम् ।
सदाहमूत्रकृच्छ्रं च रक्तपित्तं निहंति च ॥

अर्थ-नारियलका जल, गुड, धनिया इनको मिलायके पीवे तो यह दाहसहित मूत्रकृच्छ्र, रक्तपित्त इनको नाश करे ॥

रक्तनारिकेलजलपान ।

रक्तस्य नारिकेलस्य जलं कतकसंयुतम् ।
शर्करैलासमायुक्तं मूत्रकृच्छ्रहरं विदुः ॥

अर्थ-लाल नारियलका जल, निर्मलीके बीज, मिश्री, इलायची इनको एकत्र पीसके पीवे तो मूत्रकृच्छ्रका नाश करे ॥

कफजन्य मूत्रकृच्छ्रनिदान ।

बस्तेः सलिंगस्य गुरुत्वशोथौ मूत्रं सपिच्छं कफमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ-कफके मूत्रकृच्छ्रमें लिंग और मूत्राशय भारी हो तथा सूजन होय और मूत्र चिकना होय ॥

कफजन्य मूत्रकृच्छ्रकी सामान्य चिकित्सा ।

क्षारोष्णतीक्ष्णौषधमन्नपानं स्वेदोपवासं वमनं निरूहः ।
तक्रं च तिक्तोषणसिद्धतैलं बस्तिश्च शस्ता कफमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ-खारा, तीखा, गरम ऐसे औषध, अन्न, पान तथा स्वेदन, लंघन, वमन, निरूहबस्ति, छाछ और कडुए, चरपरे, ऐसी औषधोंसे सिद्ध करे हुए तेलोंसे वस्तिकर्म इत्यादि कफमूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

एलादि चूर्ण ।

मूत्रेण सुरया वापि कदलीस्वरसेन वा ।
कफकृच्छ्रविनाशाय सूक्ष्मां कृत्वा त्रुटिं पिबेत् ॥

अर्थ-गोमूत्र, मद्य, केलेका रस इनमेंसे किसी एकके साथ इलायचीके चूर्णको पीवे यह कफमूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

सितदारुकादि चूर्ण ।

तक्रेण युक्तं सितवारुकस्य बीजं पिबेत्कृच्छ्रविघातहेतोः ।
पिबेत्तथा तंदुलधावनेन प्रवालचूर्णं कफमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ-छाछके साथ सपेद खीराके बीजोंको कूटकर पीवे अथवा चांवलोंके धोवनके साथ मूंगेकी भस्म पीवे तो कफमूत्रकृच्छ्र पर हितकारी है ॥

सन्निपातमूत्रकृच्छ्रनिदान ।

सर्वाणि रूपाणि तु सन्निपाताद्भवन्ति तत्कृच्छ्रतमं हि कृच्छ्रम् ॥

अर्थ-सन्निपातसे सर्व लक्षण होते हैं यह मूत्रकृच्छ्र कष्टसाध्य है ॥

सर्वं त्रिदोषप्रभवे तु कृच्छ्रे यथाबलं कर्म समीक्ष्य कार्यम् ।
तत्राधिके प्राग्वमनं कफे स्यात्पित्ते विरेकः पवने तु बस्तिः ॥

अर्थ-त्रिदोषजन्य मूत्रकृच्छ्रपर बलाबल विचार सर्व उपचार करे और विशेष इतना है की कफ अधिक होय तो प्रथम वमन देवे, पित्त अधिक होय तो जुल्लाब देवे और वात अधिक होय तो बस्तिकर्म करे इस प्रकार प्रथम करे ॥

बृहत्यादि क्वाथ ।

बृहतीधावनीपाठायष्टीमधुकलिंगकान् ।
पक्त्वा क्वाथं पिबेन्मर्त्यो कृच्छ्रे दोषत्रयोद्भवे ॥

अर्थ-त्रिदोषजन्य मूत्रकृच्छ्र पर कटेरी, बडी कटेरी, पाढकी जड, मुलहठी इन्द्रजौ इनका काढा करके पीवे ॥

शतावर्यादि क्काथ ।

शतावर्यास्तु मूलानां क्काथश्च ससितो मधुः ।
मूत्रदोषं निहंत्याशु वातपित्तकफोद्भवम् ॥

अर्थ-शतावरके काढेमें मिश्री और सहत डालके पीवे तो त्रिदोषज मूत्रकृच्छ्रको नाश करे

दुग्धयोग ।

गुडेन मिश्रितं दुग्धं कदुष्णं कामतः पिबेत् ॥
मूत्रकृच्छ्रेषु सर्वेषु शर्करावातरोगनुत् ॥

अर्थ--जिसमें गुड मिला हो और कुछ गरम ऐसा दूध पीवे तो सर्व मूत्रकृच्छ्र, शर्करा और वातरोग ये दूर होंय ॥

यवक्षार

सपादशाणतुलितो यवक्षारः सितायुतः ।
भक्षितो नाशयत्येव मूत्रकृच्छ्रं न संशयः ॥

अर्थ-जवाखार ९ मासेको मिश्री मिलायके खाय तो मूत्रकृच्छ्रको नष्ट करे ॥

गोकंटकादि लेह ।

गोकंटकं सदलमूलफलं गृहीत्वा संकुट्टितं पलशतं क्कथितं सुबोधैः । पादस्थितेन च जलेन पलानि दत्त्वा पंचाशते परिपचेदथ शर्करायाः ॥ तप्त्वा घृतत्वमुपगच्छाति चूर्णितानि दद्यात्पलद्वयमितानि सुभेषजानि । शुंठीकणात्रुटिजवाग्रजकेसराणि क्षंयातिकोशककुभत्रपुसीफलानि॥ वंशीपलाष्टकमिह प्रणिधाय नित्यं लिह्यात्सुसिद्धममृतं पलसंमितेन। हंत्याशु मूत्रपरिदग्धविबंधकृच्छ्रं मूत्राश्मरीरुधिरमेहमधुप्रमेहान् ।

अर्थ-गोखरूके पंचांगको जवकूट करके ४०० तोले जलमें डालके काढा करे जब जल चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इसमें २०० तोले मिश्री मिलाय घृतके समान होने पर्यंत पचावे. इसमें सोंठ, पीपल, छोटी इलायची, जवाखार, नागकेशर, जावित्री, कोहवृक्षकी छाल, खीरा और वंशलोचन ये प्रत्येक ३२ तोले लेवे.

सबका चूर्ण मिलाय ढांकके रख देवे. इसमेंसे नित्य चाटा करे तो मूत्रकृच्छ्र, दाह, मूत्रका न उतरना, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और रक्तप्रमेह इनको नाश करे ॥

शल्यज मूत्रकृच्छ्र ।

मूत्रवाहिषु शल्येन क्षतेष्वभिहतेषु च । मूत्रकृच्छ्रं तदाघाताज्जायते भृशदारुणम् ॥ वातकृच्छ्रेण तुल्यानि तस्य लिंगानि लक्षयेत् ॥

अर्थ—मूत्र वहनेवाले स्रोत (मार्ग) शल्य (तीर आदि) से विंध जाय अथवा पीडित होय तौ उस घातसे भयंकर मूत्रकृच्छ्र होय है इसके लक्षण वातमूत्रकृच्छ्रके समान होय ॥

सामान्यक्रम ।

मूत्रकृच्छ्रेभिघातोत्थे वातकृच्छ्रक्रिया हिता ।
पंचवल्कलकल्केलेपः कवोष्णोऽत्र प्रशस्यते ॥

अर्थ—चोट लगनेसे उत्पन्न हुए मूत्रकृच्छ्र पर वड, पीपल, पाखर, आंम, जामुन इनकी छालका कुछ २ गरम २ लेप करे तो उत्तम है ॥

लोहभस्मयोग ।

अयोभस्म श्लक्ष्णपिष्टं मधुना सह योजितम् ।
मूत्रकृच्छ्रं निहंत्याशु त्रिभिर्लेपैर्न संशयः ॥

अर्थ—लोहभस्मको बारीक पीसके सहतके साथ देवे तो तीन दिन सेवन करनेसे निःसंदेह मूत्रकृच्छ्र नाश होय ॥

रसपान ।

रसं वल्लं यवक्षारं सितातक्रयुतं पिबेत् ।
मूत्रकृच्छ्राण्यशेषाणि हन्यंते पानतो जवात् ॥

अर्थ—पारा २ रत्ती, जवाखार, मिश्री इनको एकत्र खरल कर छाछके साथ पीवे तो मूत्रकृच्छ्र नाश होय ॥

पुरीषज मूत्रकृच्छ्र ।

शकृतस्तु प्रतीघाताद्वायुर्विगुणतां गतः ।
आध्मानवातशूलौ च मूत्रकृच्छ्रं करोति च ॥

अर्थ—मलके (विष्ठाके) अवरोध होनेसे वायु विगुण (उलटा) होकर अफरा, वात, शूल और मूत्रनाश करे तब मूत्रकृच्छ्र प्रगट होय ॥

सामान्यचिकित्सा ।

स्वेदचूर्णक्रियाभ्यंगो बस्तयः स्युः पुरीषजे ।
कृच्छ्रे तत्र विधिः कार्यो सर्वशुक्रविबंधाजित् ॥

अर्थ-मलकी उपस्थित बाधाके रोकनेसे जो मूत्रकृच्छ्र होता है उस पर पसीने निकालने, चूर्णका खाना, अभ्यंग, बस्ति ये उपचार करे तथा शुक्रविबंधनाशक उपचार करे ॥

गोक्षुरक्काथ ।

क्काथो गोक्षुरबीजानां यवक्षारयुतः सदा ।
पीतः प्रशमत्येव मूत्रकृच्छ्रं चिरोत्थितम् ॥

अर्थ-गोखरूके काढेमें जवाखार डालके पीवे तो निश्चय बहुत दिनोंका मूत्रकृच्छ्र दूर होय ॥

आमलक्यादि क्काथ ।

गुडेनामलकीक्काथं श्रमघ्नं तर्पणं परम् ।
पित्तासृग्दाहशूलघ्नं मूत्रकृच्छ्रनिवारणम् ॥

अर्थ-आवलेंके काढेमें गुड मिलायके देवे तो रक्त, दाह और शूल इन करके युक्त मूत्रकृच्छ्रका नाश करे ॥

एलाचूर्ण ।

पिबेन्मद्येन सूक्ष्मेलां धात्रीफलरसेन वा ।
शितिवारकबीजं वा तक्रे श्लक्ष्णं च चूर्णितम्॥

अर्थ-मद्य अथवा आंवलेका रस इनके साथ छोटी इलायचीके चूर्णको पीवे अथवा सपेद खीराके बीजोंको बारीक पीसके छाछके साथ पीवे ॥

खर्जूरादि चूर्ण ।

खर्जूरामलबीजानि पिप्पली च शिलाजतु । एलामधु-कपाषाणं चंदनोर्वारुबीजकम् ॥ धान्याकं शर्करायुक्तं पातव्यं ज्येष्ठवारिणा । अंगदाहं लिंगदाहं गुदवंक्षणशुक्रजम् ॥ शर्करा-श्मरिशूलघ्नं बल्यं वृष्यकरं परम् ॥

अर्थ-खजूर, आंवला, पीपल, शिलाजीत, इलायची, मुलहठी, पाषाणभेद, चंदन, खीराके बीज और धनिया इनके चूर्णमें मिश्री मिलाय मुलहठीके काढेसे सेवन करे तो

अंग, गुदा, वंक्षण, शुक्र इन स्थानोंके दाहको, शर्करा, पथरीका शूल इनका नाश करे बल, वृष्यकर्त्ता है ॥

त्रिफलादि कल्क ।

त्रिफलायाः सुपिष्टायाः कल्कं कोलसमन्वितम् ।
वारुणी लवणीकृत्य पिबेन्मूत्ररुजापहम् ॥

अर्थ–त्रिफलेका चूर्ण कर उसमें वरनेका, कंकोलका और सैंधे निमकका चूर्ण मिलायके पीवे तो मूत्रकृच्छ्ररोगको नाश करे ॥

अश्मरीजन्य मूत्रकृच्छ्र ।

अश्मरीहेतुतत्पूर्वं मूत्रकृच्छ्रमुदाहरेत् ॥

अर्थ–पथरीके योगसे जो मूत्रच्छ्र होय उसको पथरीका मूत्रकृच्छ्र कहते हैं ॥

अश्मरीजन्य मूत्रकृच्छ्र ।

अश्मरीजे मूत्रकृच्छ्रे स्वेदाद्या वातजित्क्रिया ॥

अर्थ–पथरीके कारणसे हुए मूत्रकृच्छ्र पर स्वेदादिक वातनाशक क्रिया करे ॥

क्काथ ।

पाषाणभेदक्काथस्तु कृच्छ्रमश्ममरिजं जयेत् ॥

अर्थ–पथरीजन्य मूत्रकृच्छ्र पर पाषाण भेदका काढा करके देवे ॥

एलादि क्काथ ।

एलोपकुल्यामधुकाश्मभेदकौंतीश्वदंष्ट्रावृषकोरुबूकैः ।
शृतं पिबेदश्मजतुप्रगाढं सशर्करं साश्मरिमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ–इलायची, पीपल, मुलहठी, पाषाणभेद, रेणुकबीज, गोखरू, अडूसा, अंडकी जड इनके काढेमें पाषाणभेद अथवा मिश्री डालके पीवे तो पथरीमूत्रकृच्छ्रका नाश करे ॥

शुक्रज मूत्रकृच्छ्र ।

शुक्रं दोषैरुपहते मूत्रमार्गे विधारिते ।
सशुक्रं मूत्रयेत्कृच्छ्राद्वस्तिमेहनशूलवान् ॥

अर्थ–दोषोंके योगसे शुक्र (वीर्य) दुष्ट होकर मूत्रमार्गमें गमन करे तब उस मनुष्यके मूत्राशय और लिंग इनमें शूल हो और मूत्रके संग वीर्यपतन होय ॥

सामान्यचिकित्सा ।

कृच्छ्रे शुक्रविबंधोत्थे शिलाजतु समाक्षिकम् । सक्षीरं ससितं सर्पिः प्रभाते प्रपिबेन्नरः ॥ शुक्रदोषविशुद्ध्यर्थं समदां प्रमदां श्रयेत् ॥

अर्थ-वीर्य रोकनेसे उत्पन्न मूत्रकृच्छ्र पर सहतके साथ शिलाजीत अथवा दूध मिश्री और घृत इनको मिलायके पीवे और शुक्र दोष दूर होनेके वास्ते मदोन्मत्त स्त्रीका सेवन करे अर्थात् उसके साथ मैथुन करे ॥

तृणपंचमूलघृत ।

तृणपंचकमूलेन सिद्धं सर्पिः पिबेदपि ॥

अर्थ-ईख, डाभ, काश, सरपता, कुशा इनके काढेके साथ सिद्ध करे हुए घृतको पीवे,

बलादि क्षीर ।

बलाहिंगुयुतं क्षीरं सर्पिर्मिश्रं पिबेन्नरः ।
मूत्रदोषविशुद्ध्यर्थं शुक्रदोषहरं च यत् ॥

अर्थ-खिरेटी, हींग, दूध, घी इनको एकत्र करके पीवे तो मूत्रदोष और शुक्र दोष दूर होय ॥

पथरी और शर्कराका निदान ।

अश्मरी शर्करा चैव तुल्यसम्भवलक्षणे । विशेषणं शर्करायाः शृणु कीर्त्तयतो मम ॥ पच्यमानाऽश्मरी पित्ताच्छोष्यमाणा च वायुना । विमुक्तकफसंधाना क्षरंती शर्करा मता ॥ हृत्पीडा वेपथुः शूलं कुक्षावग्निश्च दुर्बलः । तथा भवति मूर्च्छा च मूत्रकृच्छ्रं च दारुणम् ॥

अर्थ-अश्मरी (पथरी) और शर्करा इन दोनोंकी संप्राप्ति और लक्षण समान हैं परंतु इनमें थोडासा भेद है उसको कहता हूं, पित्तसे पकनेवाली और वायुसे शुष्क होनेवाली ऐसी पथरी कफसे बंधी न होय, तब मूत्रके मार्गसे रेतके समान झरने लगे उसको शर्करा कहते हैं. उस शर्करायोगसे हृदयमें पीडा, कम्प, कूखमें शूल, मंदाग्नि, मूर्च्छा और भयंकर मूत्रकृच्छ्र ये रोग होंय ॥

मूलपंचकयोग ।

मूलानि कुशकाशेक्षुशराणां चेक्षुवालुका ।
मूत्राघाताश्मरीकृच्छ्रं पंचमूलीतृणात्मिका ॥

अर्थ-कुश, काश, ईख, सरपता, डाभ इन पांचोंके जडका काढा मूत्राघात, मूत्राश्मरी, इनको नाश करे ॥

शिलाजत्वश्मभित्कृष्णातृटीनां वा पिबेद्रजः ॥

अर्थ-शिलाजीत, पाषाणभद, पीपल, इलायची इनके चूर्णको जलके साथ पीवे तो मूत्रकृच्छ्रको दूर करे ॥

हरिद्रा मधुकं मूर्वा मुस्तकं देवदारु च ।
पिबेदक्षसमं कल्कं पयसा मूत्रपीडितः ॥

अर्थ-हलदी, मुलहठी, मूर्वा, नागरमोथा, देवदारु इनका चूर्ण एक तोलेको दूधके साथ मूत्रकृच्छ्ररोगीको पिलाना चाहिये ॥

एलाश्मभेदसशिलाजतुपिप्पलीनां चूर्णानि तंदुलजलैर्लुलितानि पीत्वा । यद्वा गुडेन सहितान्यवलेह्य धीमानासन्नमृत्युरपि जीवति मूत्रकृच्छ्री ॥

अर्थ-इलायची, पाषाणभेद, शिलाजीत, पीपल इनके चूर्णको चांवलोंके धोवनके साथ पीवे अथवा गुडमें मिलायके खाय तो मूत्रकृच्छ्री आसन्नमृत्यु भी होय तो भी बच जावे ॥

अंकोलतिलकाष्ठानां क्षारः क्षौद्रेण संयुतः ।
दधिवार्य्यनुपानेन मूत्ररोधं नियच्छति ॥

अर्थ-अंकोल, तिलकी लकडी इनका खार सहत और दहीके जलसे पीवे तो मूत्ररोधको नाश करे ॥

दाडिमादि रसपान ।

दाडिमाम्लयुतां तृट्या शंबूजीरकसंयुताम् ।
पीत्वा सुरां सलवणां मूत्रकृच्छ्रात्प्रमुच्यते ॥

अर्थ-खट्टे अनारका रस, इलायची, शंख, जीरा इनके चूर्णके साथ मद्य अथवा सैंधानिमक डालके पीवे तो मूत्रकृच्छ्रसे मुक्त होय ॥

निदग्धिकारसपान ।

सितातुल्यो यवक्षारः सर्वकृच्छ्रनिवारणः ॥

अर्थ-मिश्री और जवाखार समान भाग लेकर खाय तो मूत्रकृच्छको नष्ट करे ॥

निदग्धिकारसो वापि सक्षौद्रः कृच्छ्रनाशनः ॥

अर्थ-कटेरीका रस सहतके साथ सेवन करे तो मूत्रकृच्छ्र नष्ट करे ॥

यवक्षारपान ।

यवक्षारसमायुक्तं पिबेत्तक्रं च कामतः ।
मूत्रकृच्छ्रविनाशाय तथैवाश्मरिनाशनम् ॥

अर्थ-जवाखारको छाछमें मिलायके पीवे तो मूत्रकृच्छ, पथरी इनको नाश करे ॥

यवक्षारपान ।

माषमेकं यवक्षारं कूष्मांडस्वरसं पलम् ।
शर्कराकर्षसंयुक्तं मूत्रकृच्छ्रनिवारणम् ॥

अर्थ-जवाखार १ मासेको पेठेके ४ तोले रसमें १ तोला मिश्री मिलायके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र दूर होय ॥

पाषाणभेदक्काथ ।

पाषाणभेदस्त्रिवृता च पथ्या दुरालभा पुष्करगोक्षुरं च ॥
पलाशशृंगाटककर्कटीनां बीजं कषायः सनिरुद्धमूत्रे ॥

अर्थ-पाषाणभेद, निसोथ, हरड, धमासा, पुहकरमूल, गोखरू, पलासपापडा, सिंघाडे, ककडीके बीज इनका काढा मूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

हरीतक्यादि क्काथ ।

हरीतकीगोक्षुरराजवृक्षपाषाणभिद्धन्वयवासकानाम् ।
क्काथं पिबेन्माक्षिकसंप्रयुक्तं कृच्छ्रे सदाहे सरुजे विबंधे ॥

अर्थ-हरड, गोखरू, अमलतास, पाषाणभेद, धमासा इनके काढेमें सहत डालके पीवे तो दाह, पीडा इन करके युक्त मूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

पाषाणभेदादिक्काथ ।

पाषाणभेदकृतमालकधन्वयासपथ्यात्रिकंटककषायनिषेवणेन ।
मध्वन्वितेन सहसा विरहं प्रयाति रुग्दाहबंधसहितं किल मूत्रकृच्छ्रम् ॥

अर्थ-पाषाणभेद, अमलतासका गूदा, धमासा, छोटी हरड, गोखरू ये समान भाग लेकर काढा करे. उसमें सहत डालके पीवे तो पीडा, दाह, इन करके युक्त जो मूत्रकृच्छ्र अर्थात् पेसाबका पीडाके साथ उतरना दूर होय ॥

गोक्षुरादि क्काथ ।

समूलगोक्षुरक्काथः सितामाक्षिकसंयुतः ।
नाशयेन्मूत्रकृच्छ्राणि तथा चोष्णसमीरणम् ।

अर्थ-जड सहित गोखरूके वृक्षका काढा करके उसमें मिश्री और सहत डालके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र तथा उष्णवात (सोजाक) दूर होय ॥

हरीतक्यादि क्वाथ ।

हरीतकीदुरालभाकृतमालकगोक्षुरैः । पाषाणभेदसहितैः क्वाथो माक्षिकसंयुतः ॥ विबंधे मूत्रकृच्छ्रे च सदाहे सरुजे हितः ॥

अर्थ-छोटी हरड, धमासा, अमलतासका गूदा, गोखरू, पाषाणभेद इन पांच औषधोंका काढा करके उसमें सहत मिलायके पीवे तो दाह तथा पीडा एवं वायुका अवरोध ये उपद्रव हैं जिसमें ऐसा मूत्रकृच्छ्र दूर होय ॥

यवादि क्वाथ ।

यवोरुबूकं तृणपंचमूलीपाषाणभेदैः सशतावरीभिः ।
कृच्छ्रेषु गुल्मेष्वभयाविमिश्रैः कृतः कषायो गुडसंप्रयुक्तः ॥

अर्थ--जो अंडकी जड, डाभ, काश, सरपता, कुशा, ईख, पाषाणभेद, सतावर और हरड इनके काढेमें गुड डालके मूत्रकृच्छ्र और गुल्मरोग इन पर देवे ॥

कंटकादि घृत।

त्रिकंटकैरंडकुशाद्यभीरुकैरोर्वारुकेक्षुस्वरसेन सिद्धम् ।
सर्पिर्गुडार्धांशयुतंप्रपेयं कृच्छ्राश्मरीमूत्रविघातहारि ॥

अर्थ--गोखरू, अंडकी जड, कुश, काश, डाभ, सरपता, महाशतावर, खीरा, ईख इनके साथ सिद्ध करा हुआ घी उसमें गुड मिलायके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र, पथरी, मूत्राघात इनको नाश करे ॥

शतावर्यादि घृत ।

घृतप्रस्थं शतावर्य्या रसस्यार्धाढके पचेत् । अजाक्षीरेण संयुक्तं चतुः प्रस्थान्वितेन तु ॥ द्विगोक्षुरामृतानंताकाशकंटकनीरसान् । कुडवार्धं पृथक् दत्त्वा पिष्टैर्यष्टिकटुत्रयैः ॥ श्वदंष्ट्राफलनीदुग्धाशिलाजत्वश्मभेदकैः । त्रिसुगंधान्वितैरर्धपलांशैस्तद्घृतं पुनः ॥ शर्कराद्विपलोपेतं क्षौद्रं पादसमन्वितम् । हंति कृच्छ्राणि सर्वाणि मूत्रदोषाश्मशर्कराः ॥ शतावरीघृतं चैतत् प्रोक्तं प्राज्ञचिकित्सकैः ॥

अर्थ-घी ६४ तोले, शतावरका रस १२८ तोले बकरीका दूध १२८ तोले सबको एकत्र कर पचावे. फिर गोखरू, छोटे गोखरू, गिलोय, धमासा, काश, कटेरी इनको पृथक् २ आठ २ तोले लेके डाले तथा मुलहठी, त्रिकुटा, गोखरू, फलनी, दुद्धी, शिलाजीत, पाषाणभेद, दालचीनी, इलायची, पत्रज इनके चूर्ण प्रत्येक तीन तीन तोले ले मिश्री ८ तोले इन सब पदार्थोंको मिलायके एकत्र कर फिर पचावे यह घी संपूर्ण मूत्रकृच्छ्र, मूत्रदोष, शर्करा इनका नाशक है. इसको शतावरीघृत कहते हैं. यह बडे भारी बुद्धिमान् वैद्यका कहा हुआ है ॥

त्रिकंटकादि गुग्गुलु ।

त्रिकंटकानां क्वथितेष्टनिघ्ने पुरं पचेत्पाकविधानयुक्त्या । फलत्रिकव्योषपयोधराणां चूर्णं पुरेण प्रमितं विदध्यात् ॥ वटी प्रमेहं च समूत्रघातं सवातकृच्छ्रं च तथाश्मरीं च । शुक्रस्य दोषान् सकलांश्च वातान् निहंति मेघानिव वायुवेगः ॥

अर्थ-गोखरूके काढेमें गूगलपाककी विधिसे गूगल पचावे. फिर त्रिफला, त्रिकुटा नागरमोथा इनका चूर्ण गूगलके बराबर डाल गोली बनावे. फिर एक एक गोली सेवन करनेसे प्रमेह, मूत्राघात, वातकृच्छ्र, पथरी, शुक्रदोष, सर्व वातके रोग इन सबको नाश करे जैसे वायुका वेग मेघोंको नाश करे है ॥

गोक्षुरादि लेप ।

पिष्ट्वा श्वदंष्ट्राफलमूलिकाभिरुर्वारुबीजानि सकांजिकानि ।
आलिप्यमानानि समानि बस्तौ मूत्रस्य संशुद्धिकराणि सद्यः ।

अर्थ- गोखरूको जड सहित ले और गोखरूकी बराबर खीरेके बीज ले इनको कांजीमें पीस बस्ति पर लेप करे तो तत्काल मूत्रकी शुद्धि होय ॥

किंशुकस्वेद ।

बस्तावेरंडतैलेन स्निग्धायां किंशुकस्तरोः ।
स्विन्नपुष्पैर्ददेत्सेकं मूत्रकृच्छ्रोपशांतये ॥

अर्थ-मूत्रकृच्छ्रकी शांतिके वास्ते अंडीके तेलसे प्रथम बस्तिको शुद्ध करे फिर पलास (ढाक) के फूलोंको औटाकर वाफ देवे ॥

आखुविट्कल्क ।

कोष्णाखुविट्कल्कलेपो बस्तेरुपरि कृच्छ्रिणः ॥

अर्थ--मूत्रकृच्छ्री मनुष्यको बास्तिके ऊपर मूंसे (चूहे) की लेंडीको पीस मंदोष्ण लेप करे ॥

त्रपुसादि बीजपूररस ।

त्रपुसीबीजलेपो वा धारा वा किंशुकांभसः । ज्वलच्छिद्रे चेंदुदानं लेपो वा चटकाविशः ॥ मेघनादशिलालेपः स्वेदो वा कर्कटांभसा । पातो वा कोष्णतैलस्य धारा वा कोष्णवारिणा ॥ नवैते पादिका योगा मूत्रकृच्छ्रहरा मताः ॥

अर्थ--खीरेके बीजोंका लेप अथवा पलासके फूलोंके जलकी धारा अथवा छिद्रोंमें जलन होनेसे कपूरका लेप अथवा चिडियाके मैंगनीका लेप अथवा चौलाईका लेप अथवा शिलाजीतका लेप अथवा ककडीके जलसे स्वेद अथवा किंचित् गरम तेलकी धारा अथवा गरम जलकी धारा डालना इतने उपाय बस्ति पर करनेसे मूत्रकृच्छ्ररोगका नाश होता है ये नौ योग श्लोकके एक २ पादमें समाप्त हुए हैं ये सब मूत्रकृच्छ्रनाशक हैं ॥

मंथादि योगत्रय ।

मंथं पिबेद्वा ससितं च सर्पिः श्रितं पयो वार्द्धसितं प्रदेयम् । धात्रीरसे चेक्षुरसं पिबेद्वा कृच्छ्रे सदाहे मधुना विमिश्रम् ॥

अर्थ-दाहयुक्त मूत्रकृच्छ्र पर मिश्रीयुक्त मंथ अथवा औटाया हुआ दूध, घी करके युक्त बराबरकी मिश्री मिलाय अथवा आंवलेकी और ईखके रसको एकत्र कर उसमें सहत डालके पिलावे ॥

ओर्वारुबीजयष्ट्याह्वदार्वी वा तंदुलांभसा । तोयेन कल्कं द्राक्षायाः पिबेत्पर्युषितेन वा ॥ पिबेन्मद्येन सूक्ष्मैलां धात्रीफलरसेन वा ॥

अर्थ--खीरेके बीज, मुलहठी, दारुहलदी इन सबको चावलोंके धोवनमें पीसके पीवे अथवा बासी पानीमें दाखोंको पीसके पीवे अथवा इलायचीका चूर्ण मद्यके साथ अथवा आंवलेके रससे पीवे तो मूत्रकृच्छ्र दूर होय ॥

हरिद्रादि योग ।

हरिद्रागुडकर्षैकं चारनालेन वा पिबेत् । वंध्याकर्कोटकाकंदं भक्षेत्क्षौद्रसितायुतम् ॥ अश्मरीं हंति नो चित्रं रहस्यं हि शिवोदितम् ॥

अर्थ-हलदी, गुड इनको मिलायके एक तोला कांजीमें पिलावे अथवा बांझककोडे-का कंद १ तोला सहतमें मिलाय सहतके साथ खाय तो पथरीका नाश करे इसमें आश्चर्य नहीं है यह रहस्य शिवने कहा है॥

भृष्टेक्षुरसपान ।

भृष्टेक्षुस्वरसं ग्राह्यमाखुविड्विहितं पिबेत् ।
नाशयन्मूत्रकृच्छ्राणि सद्य एव न संशयः ॥

अर्थ-ईखको भूनके उसके रसको निकाल लेवे उसमें मूसेकी बीट (लेंडी) मिलायके पीवे तो तत्काल मूत्रकृच्छ्रका नाश करे इसमें संशय नहीं है ॥

कुटजयोग ।

पिष्ट्वा गोपयसा श्लक्ष्णं कुटजस्य त्वचं पिबेत् ।
तेनोपशाम्यते क्षिप्रं मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम् ॥

अर्थ-गौके दूधमें कूडाकी छालको बारीक पीस कल्क करे इनको पीवे तो भयंकर मूत्रकृच्छ्र तत्काल दूर होय ॥

लघुलोकेश्वर ।

रसभस्म च भागैकं चतुर्भागं तु गंधकम् । पिष्ट्वा वराटकान् पूर्याद्रसपादं च टंकणम् ॥ क्षीरेण पिष्ट्वा रुध्वास्यं भांडे रुध्वा पुटे पचेत् । स्वांगशीतं विचूर्ण्याथ लघुलोकेश्वरो रसः ॥ चतु-र्गुंजो घृते देयो मरीचैकोनविंशतिः॥ जातीमूलं पलैकं तु ह्यजा-क्षीरेण पाचयेत् ॥ शर्कराभावितं चानु पीतं कृच्छ्रहरं परम् ॥

अर्थ-पारदकी भस्म १, गंधक ४ भाग, दोनोंको एकत्र खरल कर कौडीमें भर देवे फिर कजलीसे चतुर्थांश सुहागा ले उसको दूधमें खरल कर उन कौडियोंके मुखको बंद कर देवे फिर इन कौडियोंको मटकेमें रख मुखको बंद करके संपुटमें रख फूंक देवे जब स्वांगशीतल हो जावे तब सावधानीसे निकाल ले खरल कर ४ रत्तीके अनुमान इसको घृ-तके साथ देवे इसे लघुलोकेश्वररस कहते हैं. फिर १९ मिरच और ४ तोले चमेलीकी ज-डको बकरीके दूधमें औटाय उसमें मिश्री मिलायके देवे तो अत्यंत मूत्रकृच्छ्रहारक है॥

चंद्रकलारस ।

प्रत्येकं कर्षमात्रं स्यात्सूतं ताम्रं तथाभ्रकम्॥ द्विगुणं गंधकं चैव

कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ॥ मुस्तादाडिमदूर्वोत्थैः केतकीस्तनजद्रवैः । सहदेव्या कुमार्याश्च पर्पटस्य च वारिणा ॥ रामशीतलिकातोयैः शतावर्या रसेन च । भावयित्वा प्रयत्नेन दिवसे दिवसे पृथक् ॥ तिक्ता गुडूचिकासत्वं पर्पटोशीरमाधवी । श्रीगंधं सारिवा चैषां समानं सूक्ष्मचूर्णितम् ॥ द्राक्षाफलकषायेण सप्तधा परिभावयेत् । ततः पात्राश्रयं कृत्वा वट्यः कार्याश्चणोपमाः ॥ अथ चंद्रकलानाम्ना रसेंद्रः परिकीर्तितः । सर्वपित्तगदध्वंसी वातपित्तगदापहः ॥ अंतर्बाह्यमहादाहविध्वंसनमहाघनः । ग्रीष्मकाले शरत्काले विशेषेण प्रशस्यते ॥ कुरुते नाग्निमांद्यं च महातापज्वरं हरेत् । भ्रमं मूर्च्छां निहंत्याशु स्त्रीणां रक्तं महास्रवम् ॥ ऊर्ध्वाधोरक्तपित्तं च रक्तवांतिं विशेषतः । मूत्रकृच्छ्राणि सर्वाणि नाशयेन्नात्र संशयः ॥

अर्थ--पारदभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, प्रत्येक एक २ तोला और गंधक २ तोले ले इनकी कजली करके नागरमोथा, अनार, दूब, केतकीकी कोंपल, सहदेई, घीगुवार, पित्तपापडा, आरामशीतला और शतावर इनके रसकी पृथक् २ भावना देकर फिर कुटकी, गिलोयरस, पित्तपापडा, खस, मधुमालती, बेलफल, चंदन, सारिवा इनका बारीक चूर्ण कर उसमें दाखके काढेकी सात भावना देवे फिर इसको पूर्वोक्त चूर्णमें मिलाय लेवे फिर किसी उत्तम चीनी वा शीशेके पात्रमें भरके सबको मिलाय चनेके बराबर गोली बनावे. इसको चंद्रकलारस कहते हैं. यह वातपित्तके रोग, भीतर और बाहरका दाह इनको नाश करनेवाला है. गरमीकी ऋतुमें और शरदऋतुमें विशेष करके प्रशस्त यह मंदाग्नि नहीं करे तथा संताप, ज्वर, भ्रम, मूर्च्छा स्त्रियोंके रुधिरका जाना ऊर्ध्वरक्तपित्त, रुधिरकी उलटी होना, अधोगत रक्तपित्त, सर्व प्रकारके मूत्रकृच्छ्र इनको नाश करे. इसमें संदेश नहीं है ॥

सूतं स्वर्णं च वैक्रांतं भृतं तुल्यं च मर्दयेत् । चांडालीराक्षसीद्रावैर्द्वियामांते च गोलकम् ॥ शुष्कं रुध्वा पुटेच्चानु करीषाग्नौ महापुटे ॥

अर्थ–पारेकी भस्म, सुवर्णभस्म, वैक्रांतभस्म ये समान भाग लेवे इनको शिवलिंगी और मोरमांसी इन दोनोंके रसमें दो प्रहर खरल कर गोली बनाय ले जब सूख ज

तब किसी मिट्टीके पात्रमें भर उसके मुखको बंद कर देवे फिर आरने उपलोंके संपुटमें रखके फूंक देवे तो यह औषधी सिद्ध होय इसको अनुपानके साथ बलाबल विचारके खाय तो मूत्रकृच्छ्रको नाश करे ॥

बृहद्गोक्षुराद्य लेह ।

गोकंटकं पलशतं कुशमूलं तथैव च । पाषाणभेदोऽष्टपलं गुडूचीपलपंचकम् ॥ एरंडो भीरुरष्टौ च मूलं दशपलं पृथक् । पद्ममूलं चाश्वगंधा प्रत्येकं पलविंशतिः ॥ सर्वमेकत्र संकुत्य जलद्रोणे विपाचयेत् । पादशेषं तु संग्राह्य वस्त्रपूतं समाक्षिपेत् ॥ गव्याज्यं प्रस्थमेकं तु शिलाजं च तथा स्मृतम् । घनीभूते तु संजाते द्रव्याणीमानि दापयेत् ॥ तालमूली शताह्वा च त्रिकटु त्रिफला तथा । सूक्ष्मैला भूतकेशी च ह्रीबेरं नागकेशरम् ॥ पद्मकं जातिपत्रत्वक्मधुयष्टिसरोचना । जातीफलमुशीरं च त्रिवृता रक्तचंदनम् ॥ धान्याकं कटुका क्षारौ नागवल्ली च शृंगिका । पुष्कराह्वं शठी दारु शीसं लोहं च वंगकम् ॥ द्रव्याणीमानि संगृह्य प्रत्येकं पलमात्रकम् । खादेद्बलाग्निं संप्रेक्ष्य पथ्यं सेवेत्तु मानवः ॥ स्निग्धभांडे निधायाथ नित्यं लिह्यात्पलोन्मितम् । अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रं च मूत्राघातं विबंधताम् ॥ प्रमेहं विंशतिं चैव शुक्रदोषं तथैव च । धातुक्षये चोष्णवाते वातकुंडलिकादयः ॥ ते सर्वे प्रशमं यांति भास्करेण तमो यथा । नातः परतरं किंचित्कृष्णात्रेयेण पूजितः ॥

अर्थ–गोखरू ४०० तोले, कुशाकी जड ४०० तोले, पाषाणभेद ३२ तोले, गिलोय २० तोले, अंडकी जड और शतावर ७२ तोले, कमलका कंद और असगंध ये ८० तोले लेवे सबको एकत्र कूट १०२४ तोले जलमें चढायके औटावे जब चतुर्थांश जल शेष रहे तब उतारके छान लेवे इस जलमें गौका घी ६४ तोले, शिलाजीत ६४ तोले, डालके पचावे जब गाढा हो जावे तब इसमें काली मूसली, शतावर, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, छोटी इलायची जटामांसी, खस, नागकेशर, पद्माख, जावित्री, दालचीनी, मुलहठी, वंशलोचन, जायफल नेत्र-

वाला, निसोथ, लाल चंदन, धनिया, कुटकी, जवाखार, सुहागा, नागरबेल, काकडासिंगी, पुहकरमूल, कचूर, दारुहलदी, शीशेकी भस्म, लोहभस्म, वंगभस्म ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. सबका चूर्ण करके उसमें मिलाय देवे जब गाढा हो जावे तब उतारके शीतल कर उत्तम चिकने बासनमें भरके धर रखे इसको बलाबल विचारके ४ तोलेके अनुमान खाय तथा पथ्यसे रहे तो पथरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, मूत्रबंध, २० प्रकारके प्रमेहरोग, शुक्रदोष, नष्टशुक्र, अम्लपित्त, धातुक्षय, उष्णवात (सुजाक), वातकुंडली ये सब सूर्योदय होनेसे जैसे अंधकार नष्ट होवे उसी प्रकार नष्ट हो इस गोकंटकादि लेहसे परे दूसरा लेह उत्तम नहीं है इस प्रकार कृष्णात्रेयने कहा है ॥

मूत्रकृच्छ्र पर पथ्य ।

वातोद्भवेऽभ्यंगनिरूहबस्तिः स्नेहावगाहोत्तरबस्तिसेकः । पैत्तेवगाहः शिशिरप्रदेहा ग्रैष्मो विधिर्बस्तिविधिर्विरेकः ॥ श्लेष्मोद्भवे स्वेदविरेकबस्तिः क्षारायवान्नानि च तीक्ष्णमुष्णम् । त्रिदोषजेऽभ्यंगपुरःसराणि सर्वाण्यमूनि विमलोदितानि ॥ मूत्राघातविकारोत्थे वातकृच्छ्रक्रिया मता । लेहः शुक्रविबंधोत्थे शिलाजतु समाक्षिकम् ॥ स्वेदचूर्णक्रियाभ्यंगबस्तयः स्युः पुरीषजे । अथो यथादोषमयं गणोऽपि पुरातना लोहितशालयश्च ॥ तक्रं पयो दध्यपि गोप्रभूतं धन्वामिषं मुद्गरसाः सिता च । पुराणकूष्मांडफलं पटोलं महार्द्रकं गोक्षुरकः कुमारी ॥ एर्वारुखर्जूरकनारिकेरं तालद्रुमाणां च शिरांसि पथ्या । तालास्थिमज्जात्रपुषं त्रुटिश्च शीतानि पानान्यशनानि चैव ॥ प्रतीरनीरं हिमवालुका च मित्रं नृणां स्यात्सति मूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ–वातजन्य मूत्रकृच्छ्ररोगमें मालिस करना, निरूहण बस्ति, स्नेहन कर्म उत्तर बस्ति, सेचनकर्म ये करें पित्तजन्य मूत्रकृच्छ्रमें जलमें धसके स्नान, शीतलप्रदेह तथा जे गरमियोंमें करना चाहिये वह विधि, दस्त कराने ये कर्म करें कफजन्यमूत्रकृच्छ्रमें स्वेदन, वमन, विरेचन, बस्तिकर्म, क्षार, यवके पदार्थ, तीक्ष्ण और गरम पदार्थ देने चाहिये. त्रिदोषजन्य मूत्रकृच्छ्रमें प्रथम मालिस करना और जो तीनों दोषों पर कर्म करने लिखे वह करे, मूत्राघातविकारमें वातजन्य मूत्रकृच्छ्र पर जो क्रिया लिखी है वह करे शुक्रके रुकनेसे प्रगट मूत्रकृच्छ्रमें शिलाजीत और सहत मिलायके

अवलेह देवे. पुरीष (मल) जन्य मूत्रकृच्छ्रमें स्वेदन कर्म, चूर्ण क्रिया मालिस और बस्तिकर्म करे ये, पूर्वोक्त गण यथारोगानुसार देवे तथा पुराने लाल चावल, गौकी छाछ, दूध, दही, जंगली जीवोंका मांस, मूंगका रस, खांड, पुराना पका पेठा, परवल, अदरख, गोखरू, घीगुवार, सुपारी, खिजूर,नारियल,ताडकी शिरा, हरड, ताडका गूदा, खीरा, इलायची छोटी, शीतल पीनेके पदार्थ और भोजन, नदीके कांठेका जल और शीतल वालू ये सब पदार्थ मूत्रकृच्छ्ररोगीको परम हितकारी हैं ॥

मूत्रकृच्छ्र पर अपथ्य ।

मद्यं श्रमं निधुवनं गजवाजियानं सर्वं विरुद्धमशनं विषमाशनं च । तांबूलमत्स्यलवणार्द्रकतैलभृष्टं पिण्याकहिंगुतिलसर्षप-मूत्रवेगान् ॥ माषान् करीरमपि तक्ष्णिविदाहि रूक्षमम्लं प्रमुं-चतु जनः सति मूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ–मद्यपान, परिश्रम, स्त्रीसंग, हाथी घोडेकी सवारी, संपूर्ण विरुद्ध भोजन और विषमाशन, तांबूल, निमक, अदरख और तेलकी भुनी मछली, खल, हींग, तिल, सरसों, मूत्रके वेगको रोकना, उडद, करील और तीक्ष्ण वस्तु तथा दाहकारी पदार्थ, रूक्ष पदार्थ और खटाई इनको मूत्रकृच्छ्र रोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे मूत्रकृच्छ्रनिदानचिकित्सा समाप्ता ।

मूत्राघातनिदानचिकित्सा ।

जायन्ते कुपितैर्दोषैर्मूत्राघातास्त्रयोदश ।
प्रायो मूत्रविघाताद्यैर्वातकुण्डलिकादयः ॥

अर्थ--मूत्रके वेग रोकनेसे (आदिशब्दसे मल शुक्रादि वेग रोकना और रुक्ष,भोजन आदि जानना)कुपित भये दोषोंसे वातकुण्डलिकादिक तेरह प्रकारके मूत्राघातरोगको करे।

मूत्राघात के १२ भेद ।

वातकुंडलिकाष्ठीला वातबस्तिस्तथैव च । मूत्रातीतः सजठरो

मूत्रोत्संगक्षयस्तथा ॥ मूत्रग्रंथिर्मूत्रशुक्रमुष्णवातस्तथैव च ।
मूत्रासादो विट्विघातो रोगा द्वादश कीर्तिताः ॥

अर्थ—वातकुंडलिका, अष्ठीला, वातबस्ति, मूत्रातीत,मूत्रजठर, मूत्रोत्संग, मूत्रक्षय, मूत्रग्रंथि,मूत्रशुक्र,उष्णवात मूत्रसाद और विड्घात ये बारह प्रकारके मूत्राघात कहे जाते हैं॥

वातकुंडलिकाके लक्षण ।

रौक्ष्याद्वेगविघाताद्वा वायुर्बस्तौ सवेदनः । मूत्रमाविश्य चरति विगुणः कुण्डलीकृतः ॥ मूत्रमल्पाल्पमथ वा सरुजं संप्रवर्त्तते ।
वातकुण्डलिकां तां तु व्याधिं विद्यात्सुदारुणाम् ॥

अर्थ—रूखे पदार्थ खानेसे अथवा मलमूत्रादि वेगोंके धारण करनेसे, कुपित भई जो वायु सो बस्ति (मूत्राशय)में प्राप्त हो पीडा करे और मूत्रसे मिलकर मूत्रके वेगको विगुण (उलटा) करके वहां आप कुण्डलके आकार (गोलाकार) मूत्राशयमें विचरे तब मनुष्य उस वातसे पीडित हो मूत्रको वारंवार थोडा थोडा पीडाके साथ त्याग करै इस दारुण व्याधिको वातकुण्डलिका रोग कहते हैं ॥

अष्ठीलाके लक्षण ।

आध्मापयन्बस्तिगुदं रुध्वा वायुश्चलोन्नतः ।
कुर्यात्तीव्रार्तिमष्ठीलां मूत्रमार्गावरोधिनीम् ॥

अर्थ—बस्ति (मूत्राशय) और गुदा इनमें यह वायु अफरा करे तथा गुदाकी वायुको रोककर चञ्चल और उन्नत (ऊंची) ऐसी अष्ठीला (पत्थरकी पिण्डीके सदृश) को प्रगट करे यह मूत्रके मार्गको रोकनेवाली और भयंकर पीडा करनेवाली है ॥

वातबस्तिके लक्षण ।

वेगं विधारयेद्यस्तु मूत्रस्याकुशलो नरः । निरुणद्धि मुखं तस्य बस्तेर्बस्तिगतोऽनिलः ॥ मूत्रसंगो भवेत्तेन बस्तिकुक्षिनिपीडितः । वातबस्तिः स विज्ञेयो व्याधिः कृच्छ्रप्रसाधनः ॥

अर्थ—जो मनुष्य अड (जिद) से मूत्र बाधाको रोके उसकी बस्ति (मूत्राशय) का वायु बस्तिके मुखको बन्द कर दे तब उसका मूत्र बंद हो जाय और वह वायु बस्तिमें और कूखमें पीडा करे उस व्याधीको वातबास्तिसे कहते हैं. यह बडे कष्टसे साध्य होय ॥

मूत्रातीतके लक्षण ।

चिरं धारयतो मूत्रं त्वरया न प्रवर्त्तते ।
मेहमानस्य मन्दं वा मूत्रातीतः स उच्यते ॥

अर्थ--मूत्रको बहुत देर रोकनेसे पीछे वह जल्दी नहीं उतरे और मूतते समय धीरे धीरे उतरे इस रोगको मूत्रातीत कहते हैं ॥

मूत्रजठरके लक्षण ।

मूत्रस्य वेगेऽभिहते तदुदावर्त्तहेतुकः । अपानः कुपितो वायु-रुदरं पूरयेद्भृशम् ॥ नाभेरधस्तादाध्मानं जनयेत्तीव्रवेदनम् । तन्मूत्रजठरं विद्यादधोबस्तिनिरोधजम् ॥

अर्थ--मूत्रके वेग रोकनेसे मूत्रवेगधारणजनित और उदावर्त्तका कारणभूत ऐसा अपानवायु कुपित होकर पेट बहुत फूल जाय और नाभिके नीचे तीव्र वेदना संयुक्त अफरा करे, अधोबस्तिका रोध करनेवाला ऐसे इस रोगको मूत्रजठर ऐसे कहते हैं ॥

मूत्रोत्संगके लक्षण ।

बस्तौ वाप्यथवा नाले मणौ वा यस्य देहिनः । मूत्रं प्रवृत्तं सज्जेत सरक्तं वा प्रवाहतः ॥ स्रवेच्छनैरल्पमल्पं सरुजं वाथ नीरुजम् । विगुणानिलजो व्याधिः स मूत्रोत्संगसंज्ञितः ॥

अर्थ--प्रवृत्त भया मूत्र बस्तिमें अथवा शिश्नमें (लिंगमें) अथवा शिश्नके अग्र भागमें अटक जाय और बलसे मूत्रको करे भी तो वादीसे बास्तिको फाडकर जो मूत्र निकसे वह मंद मंद थोडा थोडा पीडाके साथ अथवा पीडारहित रुधिर सहित निकले ऐसी विगुण वायुसे उत्पन्न हुई इस व्याधिको मूत्रोत्संग कहते हैं ॥

मूत्रक्षयके लक्षण ।

रूक्षस्य क्लांतदेहस्य वस्तिस्थौ पित्तमारुतौ ।
मूत्रक्षयं सरुग्दाहं जनयेतां तदाह्वयम् ॥

अर्थ--रूखा भया अथवा श्रांत (थक गया) देह जिसका ऐसे पुरुषके बास्ति (मूत्राशय) में रहे जो पित्त और वायु सो मूत्रका क्षय करे और पीडा तथा दाह होता है उसको मूत्रक्षय ऐसे कहते हैं ॥

मूत्रग्रंथीके लक्षण ।

अन्तर्बस्तिमुखे वृत्तः स्थिरोऽल्पः सहसा भवेत् ।
अश्मरीतुल्यरुग्ग्रन्थिर्मूत्रग्रन्थिः स उच्यते ॥

अर्थ-बस्तीके मुखमें गोल स्थिर छोटीसी गांठ अकस्मात् होय उसमें पथरीके समान पीडा होय इस रोगको मूत्रग्रन्थि ऐसे कहते हैं ॥

मूत्रशुक्रके लक्षण ।

मूत्रितस्य स्त्रियं यातो वायुना शुक्रमुद्धतम् । स्थानाच्युतं मूत्रयतः प्राक्पश्चाद्वा प्रवर्तते ॥ भस्मोदकप्रतीकाशं मूत्र-शुक्रं तदुच्यते ॥

अर्थ-मूत्रबाधाको रोकके जो मनुष्य स्त्रीसंग करे उसके वायु शुक्रको उडाय स्थान-से भ्रष्ट करे, तब मूतनेके पाहिले अथवा मूतनेके पीछे शुक्र गिरे और उसका वर्ण राख मिला पानीके समान होय, उसको मूत्रशुक्र ऐसे कहते हैं ॥

उष्णवातके लक्षण ।

व्यायामाध्वातपैः पित्तं बस्तिं प्राप्यानिलायुतम् । बस्तिं मेढ्रं गुदं चैव प्रदहेत्स्रावयेदधः ॥ मूत्रं हरिद्रमथवा सरक्तं रक्तमेव च । कृच्छ्रात्पुनः पुनर्जंतोरुष्णवातं वदंति तम् ॥

अर्थ-व्यायाम (दंड, कसरत), अति मार्गका चलना और धूपमें डोलना इन कारणोंसे कुपित भया जो पित्त सो बस्तीमें प्राप्त हो वायुसे मिल बस्ति अंडकोश और गुदा इनमें दाह करे और हलदीके समान अथवा कुछ रक्तसे युक्त वा लाल ऐसा मूत्रका स्राव वारंवार कष्टसे होय, उसको उष्णवात रोग कहते हैं ॥

मूत्रसादके लक्षण ।

पित्तं कफो वा द्वौ वापि संहन्येतेऽनिलेन चेत् । कृच्छ्रान्मूत्रं तदा पीतं रक्तं श्वेतं घनं स्रवेत् ॥ सदाहं रोचनाशंखचूर्णवर्णं भवेत्तु तत् । शुष्कं समस्तवर्णं वा मूत्रसादं वदंति तम् ॥

अर्थ-पित्त अथवा कफ वा दोनों वायु करके बिगडे हुए होंय तब मनुष्य पीला, लाल, सफेद, गाढा ऐसा कष्टसे मूते और मूतनेके समय दाह होय और जब वह मूत्र पृथ्वीमें सूख जाय तब गोरोचन, शंखके चूर्णकासा वर्ण होय अथवा सर्ववर्णका होय इस रोगको मूत्रसाद कहते हैं ॥

विड्विघातलक्षण ।

रूक्षदुर्बलयोर्वातेनोदावर्तं शकृद्यदा । मूत्रस्रोतोऽनुपद्येत वि-
ड्विसृष्टं तदा नरः ॥ विड्गंधं मूत्रयेत्कृच्छ्राद्विड्विघातं विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ-रुक्ष और दुर्बल पुरुषके शकृत् (मल) जब वायु करके प्रेरित उदावर्त्तको प्राप्त हो तब वह मल मूत्रके मार्गमें आवे उस समय मनुष्य मूतने लगे तौ बडे कष्टसे मूत्र उत्तरे और उसके मूत्रमें विष्ठाकीसी दुर्गंध आवे, उसको विड्विघात कहते हैं ॥

मूत्राघातके असाध्यलक्षण ।

मूत्राघातः कफोत्पन्नो न सिद्ध्यति कथंचन ।
शोषगौरवयुक्स्निग्धं श्वेतं मेहति यो घनम् ॥

अर्थ-जिसके कफसे उत्पन्न मूत्राघात हुआ है और रोगी यदि शोष और जडत्वसे युक्त हो और चिकना, सपेद और घन मूते तो असाध्य है ॥

बस्तिकुंडलिकाके लक्षण ।

द्रुताध्वलंघनायासैरभिघातात्प्रपीडनात् । स्वस्थानाद्बस्तिरुद्वृत्तः स्थूलस्तिष्ठति गर्भवत् ॥ शूलस्पन्दनदाहार्तो बिन्दुं बिन्दुं स्रवत्यपि । पीडितस्तु सृजेद्धारां संरंभोद्वेष्टनार्तिमान् ॥ बस्तिकुं-डलमाहुस्तं घोरं शस्त्रविषोपमम् । पवनप्रबलं प्रायो दुर्निवारम-बुद्धिभिः ॥ तस्मिन्पित्तान्विते दाहः शूलं मूत्रविवर्णता । श्ले-ष्मणा गौरवं शोथः स्निग्धं मूत्रं घनं सितम् ॥

अर्थ-जल्दी जल्दी चलनेसे, लंघन करनेसे, परिश्रमसे, लकडी आदिकी चोट लगनेसे, पीडासे, बस्ती अपने स्थानको छोड ऊपर जाय, मोटी होकर गर्भके समान कठिन रहे, उससे शूल, कम्प और दाह ये होंय. मूतकी एक एक बून्द गिरे, यदि बस्ती जोरसे पीडित होय तौ बडी धार पडे, बस्तीमें सूजन होय, पेटमें पीडा होय इस रोगको बस्ति-कुण्डल ऐसे कहते हैं, यह शस्त्रके समान जल्दी प्राणनाशक और विषके समान कालां-तरमें प्राणका नाश कर्त्ता भयंकर है. इसमें प्रायः वायु प्रबल है, मन्दबुद्धिवाले वैद्योंसे इसका निवारण (चिकित्सा) करना कठिन है. इसको अन्य दोषोंका सम्बन्ध होनेसे जो लक्षण होते हैं उनको कहताहूं वही बास्तिकुंडल पित्तयुक्त होनेसे दाह और मूत्रका बूरा रंग होय और कफयुक्त होनेसे जडत्व, सूजन, मूत्रचिकना, गाढा, सपेद ऐसा होय॥

साध्यासाध्यत्वकथन ।

श्लेष्मरुद्धगलो बास्तिः पित्तोदीर्णो न सिद्ध्यति । अविभ्रांत-बिलः साध्यो न च यः कुण्डलीकृतः ॥ स्याद्वस्तौ कुंडलीभूते तृण्मोहः श्वास एव च ॥

अर्थ–कफ करके जिसका मुख बन्द होय ऐसा और पित्त करके व्याप्त भई ऐसी बस्ती साध्य नहीं होय और जिस बस्तीका मुख खुला होय तथा जो कुण्डलीकृत होय नहीं सो साध्य है. बस्ती कुण्डलीभूत होनेसे प्यास, दाह और श्वास यह लक्षण होंय॥

मूत्राघातकी सामान्यचिकित्सा ।

स्नेहस्वेदोपपन्नस्य हितं स्नेहविरेचनम् ।
दद्यादुत्तरबस्तिं च मूत्राघाते सवेदने ॥

अर्थ–पीडायुक्त मूत्राघात पर स्नेहन, पसीने निकालना इत्यादि करके स्नेहयुक्त विरेचन देवे अथवा उत्तरबस्ती इत्यादिक उपचार करे॥

मूत्रकृच्छ्राश्मरीरोगे भेषजं यत्प्रकीर्तितम् ।
मूत्राघातेषु सर्वेषु तत्कुर्याद्देशकालवित् ॥

अर्थ–मूत्रकृच्छ्र, मूत्राश्मरी इन पर जो औषध कही है वह देश और काल जाननेवाले मनुष्योंको संपूर्ण मूत्राघात पर करना चाहिये ॥

गोक्षुरादि वटी।

त्रिकुटु त्रिफलातुल्यं गुग्गुलुं च समांशकम् । गोक्षुरक्वाथसंयुक्ता गुटिकाः कारयेद्भिषक् ॥ दोषकालबलापेक्षी भक्षयेच्चानुलोमिकाम् । न चात्र परिचारोऽस्ति कर्म कुर्याद्यथेप्सितम्॥ प्रमेहान् वातरोगांश्च वातशोणितमेव च । मूत्राघातं मूत्रदोषं प्रदरं चाशु नाशयेत् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला ये समान भागले तथा सबके बराबर गूगल ले. सबको गोखरूके काढेसे खरल कर गोली बनावे यह दोष, काल,बल इनको विचार कर देवे. इस पर किसी प्रकारके खाने पीने आदिका निषेध नहीं है यथेष्ट आचरण करे. यह प्रमेह, वातरोग, वातरक्त, मूत्राघात, मूत्रदोष, और प्रदर इन सबको नष्ट करे ॥

पयादि ।

शृतं शीतं पयो मांसी चंदनं तंदुलांबुना ।
पिबेत्सशर्करं श्रेष्ठमुष्णवाते सशोणिते ॥

अर्थ--औटायकर शीतल करा हुआ दूध, जटामांसी, चंदन, चांवलोंका धोवन मिश्री इनको एकत्र कर पीवे तौ रक्तसहित उष्णवात पर श्रेष्ठ है ॥

ऐर्वारुबीजादि कल्क ।

कल्कमेर्वारुबीजानामक्षमात्रं ससैंधवम् ।
धान्याम्लयुक्तं पीत्वैव मूत्राघाताद्विमुच्यते॥

अर्थ--खीरेके बीज १ तोला लेके पीसे फिर इस कल्कमें सैंधानिमक डालके कांजीमें मिलायके देवे तो मूत्राघातरोगसे छूट जावे ॥

सामान्ययत्न ।

दद्यादुत्तरबस्तिं वा मूत्राघाते सवेदने ।

अर्थ--वेदनायुक्त मूत्राघात पर उत्तरबस्ती देवे ॥

अतिमैथुन करनेसे रुधिर गिरे उस पर यत्न ।

स्त्रीणामतिप्रसंगेन शोणितं यस्य सिच्यते ।
मैथुनोपरमस्तस्य बृंहणीयो विधिर्हितः ॥

अर्थ--अतिमैथुनके योगसे जिसका रुधिर लिंगके द्वारा निकले उसको मैथुन न करना चाहिये और पौष्टिक औषधोंको सेवन करे ॥

देयः पाषाणभेदोत्रानुपानैः कृच्छ्रनाशनः ।
शीतोपचारं बहुलं कुर्याल्लिंगोद्भवे गदे ॥

अर्थ--पाषाणभेदको अनुपानके साथ देवे तो मूत्रकृच्छ्रको नाश करे और लिंगमें होनेवाले रोग पर अत्यंत शीतल उपचार करे ॥

पिबेच्छिलाजतुक्काथे गणे वीरतरादिके ।
रसं दुरालभाया वा कषायं वासकस्य वा ॥

अर्थ--वीरतर्वादिगणके काढेमें शिलाजीत मिलायके पीवे अथवा जवासा अथवा अडूसा इनके काढेको पीवे ॥

त्रिकंटकैरंडशतावरीभिः सिद्धं पयो वातमये सशूले ।
गुडप्रगाढं सघृतं पयो वा रोगेषु कृच्छ्रादिषु शस्तमेतत् ॥

अर्थ-गोखरू, अंडकी जड, शतावर इनका काढा वातजन्य शूलयुक्त मूत्राघात पर उत्तम है तथा गुड, घी, दूध इनको एकत्र कर मूत्रकृच्छ्रादिक रोगों पर प्रशस्त है ॥

वीरतर्वादि क्वाथ ।

वीरतरुर्वृक्षवंदाकाशः सहचरत्रयम् । कुशद्वयनलो गुंद्रा बकपुष्पोग्निमंथकः ॥ मूर्वा पाषाणभेदश्च स्योनाको गोक्षुरस्तथा । अपामार्गश्च कमलं ब्राह्मी चेति गणो वरः ॥ वीरतर्वादिरित्युक्तः शर्कराश्मरिकृच्छ्रहा । मूत्राघातं वायुरोगान्नाशयेन्निखिलानपि ॥

अर्थ-कोहवृक्षकी छाल १, बांदा २, कांस ३, सपेद पीयाबाँसा ४, पीला पीयावांसा ५, काला पीयावांसा ६, छोटी डाभ ७, बडी डाभ ८, नरसल ९, गुंद्रा (पटेरे) १०, बकपुष्प ११, अरनी १२, मूर्वा १३, पाषाणभेद १४, स्योनाक (टेंटू) १५, गोखरू १६, ओंगा १७, कमल १८, ब्राह्मीके पत्ते १९ इन उन्नीस औषधोंका काढा करके पीवे तो शर्करा, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात और वादीके रोग ये सब दूर हों॥

सशूलमूत्राघात पर ।

नलकुशकाशेक्षुशिफाक्वथितं प्रातः सुशीतलं ससितम् ।
पिबतः प्रयाति नियतं मूत्राघातः सवेदनः पुंसः ॥

अर्थ-नरसल, कुश, काश, ईख इनकी जडका काढा कर शीतल होने पर मिश्री मिलायके पीवे तो पीडायुक्त मूत्राघातको शमन करे ॥

त्रिफलादि क्वाथ ।

वरांबु लवणं चैव ससूतं यः पिबेन्नरः ।
तस्य नश्यंति वेगेन मूत्राघातास्त्रयोदश ॥

अर्थ-त्रिफलेके काढेमें निमक और पारा डालके जो पीवे उसके तेरह प्रकारके मूत्रकृच्छ्र नष्ट होवें ॥

गोधावन्यादि क्वाथ ।

गोधावन्यामूलं क्वथितं घृततैलगोरसोन्मिश्रम् ॥
पीतं विरुद्धमचिरात् भिनत्ति मूत्रस्य संघातम् ॥

अर्थ-ऋषभक, पिठवन इनकी जडका काढा घी, तेल, दूध डालके पीवे तो तत्काल मूत्रसंघातको फोडके निकालदे ॥

दशमूलादि क्वाथ ।

दशमूली शृतं पीत्वा सशिलाजतुशर्करम् ।
वातकुंडलिकाष्ठीलावातबस्तौ प्रयुज्यते ॥

अर्थ-दशमूलके काढेमें शिलाजीत और मिश्री डालके पीवे तो वातकुंडलिका, अष्ठीला, वातबस्ती ये नष्ट होवें ॥

गोक्षुरादि क्वाथ ।

पीतो गोकंटकक्वाथः सशिलाजतुकौशिकः ।
मूत्रक्षयान्मूत्रशुक्रान्मूत्रोत्संगाद्विमुच्यते ॥

अर्थ-गोखरूका काढा शिलाजीत और गूगल डालके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र, मूत्रशुक्र, मूत्रोत्संग इनसे छूट जावे ॥

प्रकारांतर ।

क्वाथं समूलपत्रस्य गोक्षुरोः सफलस्य च ।
पिबेन्मधुसितायुक्तं मूत्रकृच्छ्ररुजापहम् ॥

अर्थ-गोखरूके पंचांगका काढा करके उसमें सहत और मिश्री डालके पीवे तो मूत्रकृच्छ्रकी पीडा शांत होय ॥

वरुणादि क्वाथ ।

वरुणगोक्षुरविश्वभृतं जलं गुडयवाग्रजकल्कसमन्वितम् ।
जयति साश्मरिमूत्रविनिग्रहं विरजमप्यतिविस्तरसंचयम् ॥

अर्थ-वरना, गोखरू और सोंठ इनके काढेमें गुड और जवाखार मिलायके पीवे तो पथरी, मूत्रनिग्रह, मूत्रशर्करा इनको नाश करे ॥

शतावर्यादि स्वरस ।

वरीगोक्षुरभूधात्रीमूलानां स्वरसं पलम् । माषमेकं यवक्षारं सौरं माषद्वयं तथा ॥ द्विगुंजं टंकणक्षारं सर्वमेकत्र मेलयेत् । पिबेत्तत्तु विनाशाय मूत्राघाते सुदारुणे ॥

अर्थ-शतावर, गोखरू, भूय आवला इनकी जडका स्वरस चार ४ तोले, जवाखार १ मासा, सोरा २ मासे, सुहागा २ रत्ती ये सब एकत्र कर घोर दारुण मूत्राघातके नाश करनेके विषयमें देवे ॥

तिलक्षारयोग ।

दुग्धमाक्षिकयुता सखे यदा सेविता तु तिलकोलभूतिका ।
मूत्राघातजनितव्यथा तदा दाहवत्यपि नृणां न तिष्ठति ॥

अर्थ-तिलोंकी राखको दूधमें मिलायके उसमें थोडासा सहत मिलायके पीवे तो मूत्राघात अर्थात् मूतनेके समय दाह हो वह सब इसके पीनेसे शांत होकर मूत्र अत्यंत उतरे ॥

तालस्य मूलमपि तंदुलवारिपिष्टम् ।
मूत्रोष्णवारिशमनं सितया समेतम् ॥

अर्थ-ताडवृक्षकी जडको चावलोंके धोवनके जलमें पीस उसमें मिश्री मिलायके देवे तो मूत्रकी उष्णताको शमन करे ॥

कर्पूरवर्ती ।

कर्पूररजसा युक्ता वस्त्रवार्तिः शनैः शनैः ।
मेढ्रमार्गांतरे न्यस्ता मूत्राघातं व्यपोहति ॥

अर्थ-कपूरके चूर्णको कपडेमें मिलाय बत्ती बनाय लेवे फिर उसको धीरे २ शिश्न (लिंग) में प्रवेश करे तो मूत्राघात नष्ट होय ॥

निदग्धिकास्वरस ।

निदग्धिकायाः स्वरसं पिबेद्वा तक्रमिश्रितम् ।
जले कुंकुमकल्कं वा सक्षौद्रमुषितं निशि ॥

अर्थ-कटेरीका स्वरस छाछके साथ पीवे अथवा रात्रिके समय जलमें केशर भिगोय देवे प्रातःकाल उसमें सहत मिलायके पीवे तो मूत्राघात नष्ट होय ॥

शिलाजतुयोग ।

सशर्करं सशीतं च लीढं शुद्धं शिलाजतु ।
निहंति मूत्रजठरं मूत्रातीतं च देहिनाम् ॥

अर्थ-शुद्ध करा हुआ शिलाजीत, मिश्री, कपूर इनको एकत्र करके खाय तो मनुष्योंका मूत्रजठर और मूत्रातीत इनको नाश करे ॥

कर्कटीबीजादि चूर्ण ।

कर्कटीबीजसिंधूत्थात्रिफलासमभागिकम् ।
पीतमुष्णांभसा चूर्णं मूत्ररोधं निवारयेत् ॥

अर्थ-ककडीके बीज, सैंधानिमक, हरड, बहेडा, आंवला इनको समान भाग ले इनका किया हुआ चूर्ण गरम जलके साथ पीवे तो मूत्ररोगोंको नाश करे ॥

भद्रादि चूर्ण ।

सदाभद्राश्मभिन्मूलं शतावर्याश्च चित्रकम् । रोहिणीकोकिलाख्यौ च क्रौंचस्थूलत्रिकंटकम् ॥ श्लक्ष्णं पिष्टं सुरापीतं मूत्राघातनिषूदनम् ॥

अर्थ-लाल शिवनी, पाषाणभेद, शतावरकी जड, चित्रक, कुटकी, कांकोली, कमलाक्ष, बडे गोखरू इनका बारीक चूर्ण कर मद्यके साथ पीवे तो मूत्राघातको नाश करे॥

स्वगुप्तादि चूर्ण ।

स्वगुप्ताफलमृद्वीकाकृष्णेक्षुरसितारजः । समानमर्धभागानि क्षीरक्षौद्रघृतानि च ॥ सर्वं सम्यग्विमर्द्याक्षमात्रां लीढ्वा पयः पिबेत् । हंति शुक्रक्षयोत्थांश्च दोषान्वंध्यासुतप्रदम् ॥

अर्थ-सपेद लजालूके फल, मनुक्कादाख, काली ईख, नील इनके समभाग चूर्ण और दूध, सहत, घी ये आधे २ भाग लेवे. सबको एकत्र मर्दन करके १ तोला सेवन करे ऊपरसे दूध पीवे तो शुक्रक्षयमें उत्पन्न हुए दोषोंका नाश करे तथा वंध्यास्त्रियोंको पुत्र देवे ॥

उशीरादि चूर्ण ।

उशीरं वालकं पद्मं कुष्ठं धात्री च मोसली । एला हरेणुकं द्राक्षां कुंकुमं नागकेशरम् ॥ पद्मकेसरकं चैव कर्पूरं चंदनद्वयम् । व्योषं मधुकलाजाश्च अश्वगंधा शतावरी ॥ गोक्षुरं कर्कटाख्यं च जाती कंकोलचोरकम् । एतानि समभागानि द्विगुणामृतशर्करा ॥ मत्स्यंडिकामधुभ्यां च प्रातरेव बुभुक्षितः । क्षयं च रक्तपित्तं च पाददाहमसृग्दरम् ॥ मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं रक्तस्रावं च नाशयेत् । अशीतिर्वातजान् रोगान् विशेषान् मेहनुत्परम् ॥

अर्थ-खस, नेत्रवाला, कमलगट्टा, कूठ, आंवला, सपेद मूसली, इलायची, रेणुकाद्रव्य, दाख, केशर, नागकेशर, कमलकी केशर, कपूर, चंदन, लाल चंदन, त्रिकुटा, खील, असगंध, शतावर, गोखरू, कांकडासिंगी, चमेली, कंकोल, गठोना ये सब

औषध समान भाग लेवे सबका चूर्ण कर और एक भाग चूर्ण, दो भाग घी तथा मिश्री इस प्रकार मिलायके सेवन करे अथवा मिश्री और सहत इनके साथ प्रातःकाल सेवन करे तो क्षय, रक्तपित्त, पाददाह, असृग्दर, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, रक्तस्राव, अस्सी प्रकारका वायु, विशेष करके प्रमेह इनको नाश करे ॥

क्षौद्राद्यघृत ।

क्षौद्रार्धभागः कर्तव्यो भागः स्यात्क्षीरसर्पिषोः । शर्करायाश्च चूर्णं च द्राक्षाचूर्णं च तत्समम् ॥ स्वयंगुप्ताफलं चैव तथैवेक्षुरकस्य च । पिप्पलीनां तथा चूर्णं समभागं प्रदापयेत् ॥ तदैकस्थं मेलयित्वा खल्वेनोन्मथ्य च क्षणम् । तस्य पाणितलं चूर्णं लिहेत्क्षीरं ततः पिबेत् । एतत्सर्पिः प्रयुंजानः शुद्धदेहो नरः सदा ॥ शुक्रदोषाञ्जयेत्सर्वानेवातिभृशदुर्जयान् । जयेच्छोणितदोषांश्च वंध्या स्त्री गर्भमाप्नुयात् ॥

अर्थ–सहत आधा भाग, दूध, घी, एक २ भाग, मिश्रीका चूर्ण और दाख ये एक एक तोला, कौंचके बीज, तालमखाने, पीपलका चूर्ण ये समान भाग लेय. सबको एकत्र मिलाय खरलमें थोडी देर पीसके इसमेंसे १ तोला और घी इनको चाटके ऊपरसे दूध पीवे तो संपूर्ण शुक्रदोष, रक्तदोष इनका नाश होय. यदि स्त्री इसको सेवन करे तो गर्भ धारण करे ॥

धान्यकादिघृत ।

धान्यगोक्षुरकक्वाथं कल्कसिद्धं घृतं हितम् ।
मूत्राघातेषु कृच्छ्रेषु शुक्रदोषे च दारुणे ॥

अर्थ–धनिया, गोखरू इनके काढेमें अथवा कल्कमें सिद्ध करा हुआ घृत सेवन करे तो मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, दारुण शुक्रदोष इनको दूर करे ॥

चित्रकाद्यघृत ।

चित्रकं सारिवा चैव बला काला च सारिवा । द्राक्षा विशल्या पिप्पल्यस्तथा च त्रिफला भवेत् ॥ तथैव मधुकं दद्याद्यादामलकानि च । घृताढकं पचेदेतैः कल्कैरक्षसमन्वितैः ॥ क्षीरद्रोणे जलद्रोणे तत्सिद्धमवतारयेत् । शीतं परिस्रुतं चैव शर्कराप्रस्थसं-

युतम् ॥ तुगाक्षिर्या च तत्सर्वं मतिमान्परिमिश्रयेत् । ततो मितं पिबेत्काले यथादोषं यथाबलम् ॥ मूत्रग्रंथिं मूत्रसादमुष्ण-वातमसृग्दरम् । विड्विघातं निहंत्येतद्वस्तिकुंडलिमप्यलम् ॥ सर्पिरेतत्प्रयुंजाना स्त्री गर्भं लभतेऽचिरात् । असृग्दोषे योनिदोषे शुक्रदोषे तथैव च ॥ प्रयोक्तव्यमिदं सर्पिश्चित्रकाद्यं सदा बुधैः ॥

अर्थ-चित्रक, सारिवा, खिरेटी, नीली, छोटी सारिवा, दाख, गिलोय, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, मुलहठी, भूयआवला इन प्रत्येकको एक २ तोला ले सबका कल्क कर उसमें २५६ तोले घृत मिलाय १०२४ तोले जल तथा इतना ही दूध मिलायके घीको सिद्ध करे. जब यह शीतल हो जावे तब इसमें मिश्री २५६ तोले तथा इतना ही वंशलोचन डालके मिलाय देवे. फिर दोष और बल विचारके मात्रा देवे तो मूत्र-ग्रंथी, मूत्रसाद, उष्णवात (सोजाक), रक्तप्रदर, मूत्राघात, बास्तिकुंडली इनको नाश करे. इस घृतको भक्षण करनेवाली स्त्रीको गर्भ रहे और रुधिरका दोष, मूत्रदोष इन पर इस चित्रकादिघृतको बुद्धिमान् वैद्य देवे ॥

मूत्राघातपर पथ्य ।

अभ्यंजनं स्वेदविरकबस्ति स्वेदोवगाहोत्तरबस्तयश्च । पुरातना लोहितशालयश्च मांसानि धन्वप्रभवानि मद्यम् ॥ तक्रं पयो-दध्यतिमाषयूषः पुराणकूष्मांडफलं पटोलम् । उर्वारुखर्जूरक-नारिकेलतालद्रुमाणामपि मस्तकानि । यथाबलं सर्वमिदं च मूत्राघातातुराणां हितमादिशंति ॥

अर्थ-उबटना, स्नेहन, विरेचन, बास्तिकर्म, पसीने निकालना, जलमें प्रवेश कर न्हाना पुराने लाल चावल, सांठी चावल जंगली जीवोंका मांस मद्य छाछ दूध दही, उडदोंका यूष, पुराना पेठा, परवल, अदरख, तालकी डंडी और गूदा, हरड, नया नारियल, घीगुवार, खिजूर, तालवृक्षकी कोंपल ये सब यथा दोषानुसार मूत्राघात-रोगीको पथ्य कहे हैं ॥

मूत्राघातपर अपथ्य ।

विरुद्धान्नानि सर्वाणि व्यायामं मार्गशीलितम् ।
रूक्षं विदाहि विष्टंभि व्यवायं वेगधारणम् ॥
करीरं वमनं चापि मूत्राघाती विवर्जयेत् ॥

अर्थ-संपूर्ण विरुद्ध पदार्थ, दंड कसरतका करना, रस्तेका बहुत चलना, रूखे, दाह-कारी, विष्टंभी पदार्थोंका सेवन, मैथुन करना, मलमूत्रादि वेगोंका धारण करना, करील और वमन करना ये सब मूत्राघातवाले रोगीको वर्जित हैं ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे मूत्राघातस्य निदान-चिकित्सा समाप्ता ।

अश्मरीरोगकर्मविपाकः ।

परस्त्रीगामी अपस्मारी भवत्यश्मरीवान् ॥

अर्थ-परस्त्री गमन करनेवाला पुरुष अपस्मार (मृगी) अथवा अश्मरी मूत्रकृच्छ्र-वाला होय है ॥

शांति ।

स्वर्णदानं कार्यं तस्य सर्वरोगे दानमुक्तत्वात् ॥

अर्थ-सपूर्ण रोगोंमें सुवर्णदान कहा है इसी कारण पथरीरोगवाला सुवर्ण दान करे ॥

ज्योतिःशास्त्रका मत ।

शूलप्रमेहपीडितमश्मर्योपहतमानसं सितो जनयति रविणा दृष्टो जीवग्रहे चंद्रजः पुरुषम् । गुरुग्रहवर्तमानरविदृष्टबुधजनिताश्मरीरोगप्रतीकारपूर्वकं बुधप्रीतये पूर्वोक्तमेव जपादिकं कुर्यात् ॥

अर्थ-जिस प्राणीके जन्मके समय गुरुके घरमें बुध बैठा हो तथा सूर्य उसको देखता होय तो शूल, प्रमेह तथा पथरी रोग उत्पन्न होय वह प्राणी बुधके प्रसन्न करनेको पूर्वोक्त जपादिक करे ॥

अश्मरी (पथरी) निदान ।

वातपित्तकफैस्तिस्रश्चतुर्थी शुक्रजा मता ।
प्रायः श्लेष्माश्रयाः सर्वा अश्मर्यः स्युर्यमोपमाः ॥

अर्थ-वात, पित्त, कफ इनसे ३ चौथी शुक्रसे अश्मरीरोग (पथरी) होय है ये पथरी विशेष करके कफाश्रित हैं 'यमोपमाः' कहिये अच्छी चिकित्सा न होय तो यह अवश्य प्राणनाशक है ॥

संप्राप्ति ।

विशोषयेद्वस्तिगतं सशुक्रं मूत्रं सपित्तं पवनः कफं वा ।
यदा तदाश्मर्युपजायते तु क्रमेण पित्तेष्विव रोचना गोः ॥

अर्थ--वायु बस्तीमें प्राप्त होय, शुक्रयुक्त अथवा, पित्तयुक्त मूत्र अथवा कफको सुखावे तब उस स्थानमें पथरी प्रगट होती है. जैसे गऊके पित्तमें गोरोचनमें है उसी प्रकार बस्तीमें वीर्यसे पथरी होय है ॥

अश्मरीका पूर्वरूप ।

नैकदोषाश्रयाः सर्वा अश्मर्यः पूर्वलक्षणम् । बस्त्याध्मानं तदासन्नदेशेषु परितोऽतिरुक् ॥ मूत्रे बस्तसगंधत्वं मूत्रकृच्छ्र-ज्वरोऽरुचिः ॥

अर्थ--सब अश्मरी (पथरी) एक दोषके आश्रय नहीं हैं अर्थात् अनेक दोषाश्रित हैं, बस्तिका फूलना बस्तीके आसपास अत्यंत पीडा होनी, मूत्रमें बकरके पेशाबकीसी दुर्गंध आवे, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर, अरुचि ये पथरीके पूर्वरूप जानने ॥

अश्मरीके सामान्यलक्षण ।

सामान्यलिंगं रुङ् नाभिसेवनीबस्तिमूर्धसु । विशीर्णधारं मूत्रं स्यात्तया मार्गनिरोधनं ॥ तद्व्यपायात्सुखं मेहेदच्छं गोमेदको-पमम् । तत्संक्षोभात्क्षते सास्रमायासाच्चातिरुग्भवेत् ॥

अर्थ--नाभिसेवनी (अंडकोशके समीपका भाग) और बस्तीका अग्रभाग इनमें शूल होय, पथरीके योगसे, मूत्रमार्ग रुकनेसे, मूत्रकी धार फटी निकले, पथरी मूत्रमार्गके पाससे हट जाय तौ मूत्र अच्छी रीतिसे उतरे और स्वच्छ गोमेदमणीके समान होय, अश्मरी (पथरी) के योगसे बस्तीमें घाव होनेसे रुधिर मिला मूत्र उतरे और मूतते समय जोर करनेसे बडा क्लेश और पीडा होय ये सामान्य लक्षण जानना ॥

वाताश्मरीके लक्षण ।

तत्र वाताद्भृशं व्याप्तो दन्तान्खादति वेपते । मथ्नाति मेहनं नाभिं पीडयत्यनिशं कुणन् ॥ सानिलं मुंचति शकृन्मुहुर्मेहति बिन्दुशः । श्यावा रूक्षाश्मरा चास्य स्याच्चिता कंटकैरिव ॥

अर्थ--वायुकी पथरीसे रोग अत्यंत पीडा करके व्याप्त होय, दांतोंको चबावें,

कांपे, लिंगको हाथसे रगडे, नाभिको रगडे और रातदिन दुःखसे रोवे और मूत्र आनेके समय पीडा होनेके कारण अधोवायुका परित्याग करे, मूत्र वारंवार टपक टपक गिरे उसकी पथरीका रंग नीला और रूखा होय उसके ऊपर कांटे होंय ॥

अश्मरीकी सामान्यचिकित्सा ।

वाताश्मरीपूर्वरूपे स्नेहपानं प्रशस्यते ॥

अर्थ-वाताश्मरीके पूर्वरूप स्नेहपान करना उचित है ॥

शुंठ्यादिचूर्ण ।

शुंठ्यग्निमंथपाषाणभिद्गुग्वरुणगोक्षुरैः । अभयारग्वधफलैः क्काथं कृत्वा विचक्षणः ॥ रामठक्षारलवणैः चूर्णं दत्त्वा पिबेन्नरः । वाताश्मरीं हंति कृच्छ्रं मांद्यमग्नेश्च तद्रुजः ॥ कटयूरुगुदमेढ्रस्थं वृषणस्थं च मारुतम् ॥

अर्थ-सोंठ, अरनी, पाषाणभेद, कूठ, वरना, गोखरू, हरड और अमलतास इनके काढेमें हींग, जवाखार, सैंधानिमक इनका चूर्ण मिलायके पीवे तो वाताश्मरी, मूत्रकृच्छ्र मंदाग्नि इनके उपद्रव, कमर, ऊरु, गुदाद्वार, मे॒, वृषण इनकी वादीको नाश करे ॥

यवादिघृत ।

यवकोलकुलित्थानि कतकस्य फलानि च । चतुर्थांशकषायेण पाच्यमेतच्छृतं घृतम् ॥ शमयेद्वातसंभूतामश्मरीं क्षिप्रमेव च ॥

अर्थ-जौ, बेर, कुलथी और निर्मलीके बीज इनके चतुर्थांश काढेमें घृत डालके सिद्ध करे यह वातोत्पन्न पथरीको नाश करे ॥

वीरतर्वादिक्काथ ।

वीरतर्वादिकः क्काथः पूर्वोक्तो वातजाश्मरीम् ।
सद्यो हंति यवक्षारगुडयुक्तो न संशयः ॥

अर्थ-वीरतर्वादिकाढा, जवाखार, गुड इनको मिलायके पीवे तो तत्काल वात पथरीको नाश करे ॥

अन्न ।

क्षारान्यवागूं पेयांश्च कषायाणि पयांसि च ।
भोजनार्थं प्रयोज्यानि वाताश्मरिरुजां नृणाम् ॥

अर्थ-खार, कांजी, पेया, काढा, दूध ये वाताश्मरीवाले रोगियोंको भोजनमें देवे ॥

वरुणमूलक्काथ।

काथो वरुणमूलस्य तस्य कल्केन संयुतम् ।
शिग्रुमूलस्य च क्काथः कदुष्णश्चाश्मरीं जयेत् ॥

अर्थ-वरनाकी मूलका काढा तथा उसी जडका कल्क मिलायके पीवे अथवा अमलतासकी जडका काढा किंचिन्मात्र गरम करके पीवे तो पथरीको नष्ट करे ॥

पित्ताश्मरी ।

पित्तेन दह्यते बस्तिः पच्यमान इवोष्मवान् ।
भल्लातकास्थिसंस्थाना रक्ता पीता सिताश्मरी ॥

अर्थ-पित्तकी पथरीसे रोगीके बस्तीमें दाह होय और खारसे जैसा दाह होय ऐसी वेदना होय, बस्तीके ऊपर हाथ धरनेसे गरम मालूम होय और भिलाएकी मींगीके समान होय, लाल, पीली, काली होय ॥

पाषाणभेदिक्काथ ।

पीत्वा पाषाणभित्काथं सशिलाजतुशर्करम् ।
पित्ताश्मरीं निहंत्याशु वृक्षमिंद्राशनिर्यथा ॥

अर्थ-पाषाणभेदके काढेमें शिलाजीत, मिश्री मिलायके पीवे तो पित्ताश्मरीको दूर करे ॥

कफकी पथरीका लक्षण ।

बस्तिर्निस्तुद्यत इव श्लेष्मणा शीतलो गुरुः ।
अश्मरी महती श्लक्ष्णमधुवर्णाथवा सिता ॥

अर्थ-कफकी पथरीसे बस्तीमें नोचनेकीसी पीडा होय, शीतलपना होय और पथरी बडी मुरगीके अंडे समान, स्वच्छ और मद्य (दारू) के रंगकीसी अर्थात् कुछ पीरीसी होय. यह कफकी पथरी बहुधा बालकोंके होती है ॥

इसका बालकोंके होना ।

एता भवंति बालानां तेषामेव च भूयसा ।
आश्रयोपचयाल्पत्वाद्ग्रहणाहरणे सुखाः ॥

अर्थ-पूर्वोक्त त्रिदोषजा अश्मरी (पथरी) विशेष करके बालकोंके होय है कारण उनका भारी, मीठा, शीतल, चिकना आहार है और उनकी बस्ती छोटी,

तथा पुष्टता थोडी होय है इसीसे वैद्योंको उसका चीरना, फाडना, काटना, निकालना कठिन नहीं होय सो (सुश्रुत) ने भी कहा है ॥

शिग्रुक्काथ ।

क्काथो निपीतः सक्षारः शिग्रुत्वग्वरुणत्वचोः ।
कफजामश्मरीं हंति शक्राशनिरिव द्रुमम् ॥

अर्थ-सहजनेकी छाल और वरनाकी छाल इनके काढेमें जवाखार मिलायके पीवे तो कफकी पथरीको नाश करे जैसे इन्द्रकी अशनि (वज्र) वृक्षको नाश करे ॥

शुक्राश्मरीनिदान।

शुक्राश्मरी तु महतां जायते शुक्रधारणात् ।
स्थानाच्च्युतममुक्तं हि मुष्कयोरन्तरेऽनिलः ॥
शोषयत्युपसंहृत्य शुक्रं तच्छुष्कमश्मरी ॥

अर्थ-शुक्राश्मरी यह शुक्र (वीर्य) के रोकनेसे बडे मनुष्योंको ही होती है. मैथुन करनेके समय अपने स्थानसे चलायमान हो गया हुआ वीर्य उस समय मैथुन न करे तब शुक्र (वीर्य) बाहर नहीं निकले, भीतर ही रहे तब वायु उस शुक्रको उठाकर सुखा देता है उसीको शुक्राश्मरी कहते हैं ॥

शुक्राश्मरीके कार्य ।

बस्तिरुक्कृच्छ्रमूत्रत्वं मुष्कश्वयथुकारिणी ।
तस्यामुत्पन्नमात्रायां शुक्रमेति विलीयते

अर्थ-इस करके अंडकोषोंमें सूजन, बस्तिमें पीडा और मूत्रकृच्छ्रता होती है और शुक्राश्मरी होने पर उसकी जगह घसनेसे वह शुक्रमें ही मिल जाती है ॥

शुक्राश्मरीकी सामान्यचिकित्सा ।

शुक्राश्मर्यां तु सामान्यो विधिरश्मरिनाशनः ॥

अर्थ-शुक्राश्मरी पर अश्मरीनाशक सामान्य यत्न करने चाहिये ॥

यवक्षारयोग ।

यवक्षारगुडोन्मिश्रं पिबेत्पुष्पफलोद्भवम् ।
रसं मूत्रविबंधघ्नं शुक्राश्मरिविनाशनम् ॥

अर्थ-जवाखार, गुड इनको मिलाय मूत्ररोधनाशक पुष्पका अथवा फलका रस पीवे तो शुक्राश्मरी नष्ट होय ॥

कुटजयोग ।

पिबतः कुटजं दध्ना पथ्यमन्नं च खादतः ।
निपतत्यचिरादस्य निश्चितं मेढ्रशर्करा ॥

अर्थ-कूडेकी छालको दहीमें मिलायकर पीनेवाले और पथ्यके करनेवालेके मेढ्र (लिंग) से शर्करा निश्चय वहुत जल्दी गिर जावे ॥

शर्कराश्मरीनिदान।

पीडिते त्ववकाशेस्मिन्नश्मर्येव च शर्करा। अणुशो वायुना भिन्ना सा तस्मिन्ननुलोमगे ॥ निरेति सह मूत्रेण प्रतिलोमे विबध्यते । मूत्रस्रोतःप्रवृत्ता सा सक्ता कुर्यादुपद्रवान् ॥ दौर्बल्यं सदनं कार्श्यं कुक्षिशूलमथारुचिम् । पांडुत्वमुष्णवातं च तृष्णां हृत्पीडनं वमिम् ॥

अर्थ-शुक्राश्मरीकी आदिमें लिंग और अंडकोष पेडू इनमें पीडा होती है. वीर्यके नाश होनेके कारण पथरीकी नाई शर्करा उत्पन्न होती है. वायु बस्तीमें अनुलोम-गतिसे प्रवेश होय तौ वह शर्करा वायु कर छोटे छोटे इकट्ठी होकर मूत्रके साथ बाहर निकले और यदि वायु प्रतिलोम होय तौ मूत्रमार्गको रोकदे, यदि मूत्रमार्गमें प्राप्त होय तौ मूत्रके वहनेवाले छिद्रोंको रोक दे, फिर इतने उपद्रवोंको प्रगट करे दुर्बलता, ग्लानि, कृशता, कूखमें शूल, अरुचि, पाण्डुरोग, उष्णवात, प्यास, हृदयमें पीडा, वमन ये सब उपद्रव होंय ॥

शर्कराके असाध्य लक्षण ।

प्रशूननाभिवृषणं बद्धमूत्रं रुजान्वितम् ।
अश्मरी क्षपयत्याशु शर्करा सिकतान्विता ॥

अर्थ-जिसकी नाभि और वृषण सूज जांय, मूत्र उतरे नहीं, पीडा होय ऐसे पुरुषके शर्करा और सिकतायुक्त पथरी प्राणनाश करे ॥

पाषाणभेदरस ।

शुद्धसूतं द्विधा गंधं श्वेतपोनर्नवद्रवैः । मर्दयित्वा दिनं खल्वे रुद्ध्वाधो भूधरे पचेत्॥पाषाणभेदसंयुक्तं पिष्ट्वा चूर्णं प्रकल्पयेत् । भक्षयेदश्मरीं हंति रसः पाषाणभेदकः ॥

अर्थ-शुद्ध करा हुआ पारा १ भाग, गंधक २ भाग दोनोंको सपेद पुनर्नवाके रस में १ दिन खरल कर भूधरयंत्रमें पक्क करे फिर इसकी बराबर पाषाणभेदका चूर्ण मिलाय एकत्र खरल करे. फिर शक्तिप्रमाण भक्षण करे तो पथरीको नाश करे इसको पाषाणभेदी रस कहते हैं ॥

त्रिविक्रमरस ।

ताम्रभस्म त्वजाक्षीरे पाच्यं तुल्ये घृते पचेत् । तत्ताम्रं शुद्ध-सूतं च गंधकं च समं समम् ॥ निर्गुंडच्युत्थद्रवैर्मर्द्यं दिनं तद्गो-लमाहरेत् । यामैकं वालुकायंत्रे पाच्यं योज्यं द्विगुंजकम् ॥ बीजपूरस्य मूलं तु सजलं चानुपाययेत् । रसस्त्रिविक्रमो नाम्ना सिकता चाश्मरीप्रणुत् ॥

अर्थ-ताम्रभस्मको बकरीके दूधमें डालके और घी मिलायके पक्क करे. उस तामेकी बराबर गंधक और पारा ये निर्गुंडीके रसमें १ प्रहर खरल कर वालुकायंत्रमें पचावे फिर इसमेंसे २ रत्तीकी मात्रा देवे और बिजोरेकी जडका काढा अनुपानमें देवे तो यह त्रिविक्रमरस संपूर्ण शर्करा और पथरी इनका नाश करे ॥

रसभस्मयोग ।

विदारीगोक्षुरुर्याष्टिकेशरं च समं भवेत् । तं कषायं पिबे-त्क्षौद्रे रसभस्मयुतं पुनः ॥ मूत्रकृच्छ्राद्विमुच्येत साध्यासाध्यान्न संशयः ॥

अर्थ-विदारीकंद, गोखरू, मुलहठी, नागकेशर इनको समान भाग लेके काढा करे उसमें सहत तथा पारेकी भस्म मिलायके पीवे तो साध्य अथवा असाध्य ऐसा मूत्रकृच्छ्र दूर होय ॥

लघुलोकेश्वररस ।

मृतं रसस्य भागैकं चत्वारः शुद्धगंधकम् । पिष्ट्वा वराटिका तेन रसपादं च टंकणम् ॥ क्षीरे पिष्ट्वा मुखं लिप्त्वा तासां ताश्च धमेत्पुटे । स्वांगशीतं विचूर्ण्याथ लघुलोकेश्वरो रसः ॥ सिता-सह इदं खादेन्मूत्रकृच्छ्रहरं परम् ॥

अर्थ-पारेकी भस्म १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग इनको खरल कर उस कजलीको पीली कौडियोंमें भरे उनके मुखको तीन मासे सुहागेको दूधमें पीसके लगाय देवे. फिर इन कौडियोंको किसी मिट्टीकी हंडियामें बंद कर मुखको कपडमिट्टीसे बंद कर देवे. फिर इसको गजपुटमें रखके फूंक देय जब स्वांगशीतल होजावे तब निकालके कौडियों-को पीस लेय. इसको लघुलोकेश्वर रस कहते हैं, इसको खांडके साथ सेवन करे तो मूत्रकृच्छ्रको नष्ट करे ॥

गंधर्वादि कल्क ।

गंधर्वहस्तबृहतीव्याघ्रीगोक्षुरकेक्षुकात् ।
मूलकल्कं पिबेद्दध्ना मधुरेणाश्मभेदनम् ॥

अर्थ-सपेद अंड, कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू, काली ईख इनकी जडको मीठे दहीमें पीसके पीवे तो अश्मरीको तोड डाले ॥

तिलादिक्षार ।

तिलापामार्गकदलीपलाशयवसंभवः ।
क्षारः पेयो विमूत्रेण शर्करास्वश्मरीषु च ॥

अर्थ-तिल, ओंगा, केला, पलास (ढाक), जौ इनका खार भेडके मूत्रके साथ पीवे तो मूत्राश्मरी मूत्रशर्करा इन पर प्रशस्त है ॥

शिलाजतुयोग ।

अश्मर्यां चाश्मरीकृच्छ्रे शिलाजतु समाक्षिकम् ।
यवक्षारं गोक्षुरं च खादेद्वा चाश्मरीहरम् ॥

अर्थ-अश्मरी और अश्मरीयुक्त मूत्रकृच्छ्र इनमें सहत मिलायके शिलाजीत सेवन करे अथवा जवाखार और गोखरू खाय ॥

हिंग्वादि योग ।

हिंग्वेलाक्षीरसर्पिस्तु मूत्रशुक्रामयापहम् ॥

अर्थ-हींग, इलायची, दूध, घी इनको एकत्र करके पीवे तो मूत्ररोग, शुक्ररोग इनको नाश करे॥

शृंगबेरादि कल्क ।

शृंगबेरयवक्षारपथ्याकालीयकांजनम् ।
आजं दधि भिनत्त्युग्रामश्मरीमाशु पातनम् ।

अर्थ-अदरख, जवाखार, हरड, दारुहलदी, काला सहजना इनको बकरीके दूधमें पीसके पीवे तो शुक्राश्मरी फूटकर निकल जावे ॥

आनंदभैरवीवटी ।

तिलापामार्गकांडे च कारवल्ल्या यवस्य च । पलाशकाष्ठसंयुक्तं सर्वं तुल्यं दहेत्पुटे ॥ तन्निष्कैकमजामूत्रे वटीं चानंदभैरवीम् । पाययेदश्मरीं हंति सप्तवारान्न संशयः ॥

अर्थ-तिल, ओंगा, करेला, जौ इनकी डंडी, पलासकी लकडी ये सब समान भाग ले सबको मटकेमें भरके पुट देकर जलाय ले फिर इसमेंसे चार मासे राखको बकरीके मूत्रमें पीस गोली करके खाय इस प्रकार सात वार खाय तो पथरीका पाचन होकर नाश होय इसमें संदेह नहीं है ॥

मंजिष्ठादि चूर्ण ।

मंजिष्ठा त्रपुसं बीजं जीरकः शतपुष्पिका । धात्रीफलं बदरकं गंधकं च मनःशिला ॥ एतेषां समभागानां चूर्णं टंकमितं नरः ॥ भक्षयेन्मधुना सार्धं पतेत्तस्याश्मरी ध्रुवम् ॥

अर्थ-मंजीठ, खीराके बीज, जीरा, सोंफ, आंवला, बेर, गंधक, मनसिल ये समान भाग लेकर चूर्ण करे इसमेंसे १ तोलेके प्रमाण ले सहतमें मिलायके सेवन करे तो उसकी पथरी अवश्य गिर जावे ॥

त्रिकंटकादि चूर्ण ।

त्रिकंटकस्य बीजानां चूर्णं माक्षिकसंयुतम् ।
आविक्षीरेण सप्ताहं पिबेदश्मरिभेदनम् ॥

अर्थ-गोखरूके चूर्णको सहतयुक्त भेडके दूधमें मिलायके ७ दिन पीवे तो पथरीके टुकडे २ होकर गिर जावे ॥

केशरयोग ।

पुराणाज्येन संपिष्टं पीतं सम्यग्दिनत्रयम् ।
कुंकुमं नाशयत्याशु देहिनां मेढ्रशर्कराः ॥

अर्थ-पुराने घीमें केशरको खरल कर तीन दिन सेवन करे तो मेढ्रशर्करा नष्ट होय॥

पाषाणभेदीरस ।

आदौ व्यथा स्यात्कटिकुक्षिदेशे ततो निरोधाज्ज्वलितं च मूत्रम् ।
इत्यश्मरीलक्ष्मरसोऽत्र युक्तः पाषाणभेदी स निरूप्यतेऽथ ॥

अर्थ-प्रथम कमर, कूख इनमें पीडा, फिर रोध होय इस कारण मूत्र गरम होता है ये पथरीके चिह्न कहे. इस वास्ते पथरी पर योग्य पाषाणभेदी रसको पीछे लिख आये हैं वह देवे तो यह रोग दूर होय ॥

तिलपुष्पक्षारयोग ।

क्षारो निपीतस्तिलपुष्पजातः समाक्षिकः क्षीरयुतस्त्रिरात्रम् ।
इत्यश्मरीं सिंधुविमिश्रितं वा निपीयमानं रुचकं प्रयत्नात् ॥

अर्थ-तिलोंके फूलोंका क्षार, सहत, दूध इनको एकत्र कर तीन दिन पीवे अथवा सैंधानिमक और बिजोरेके रसका सेवन करे तो पथरी दूर होय ॥

गोपालकर्कटीमूलयोग ।

गोपालकर्कटीमूलं पिष्टं पर्युषितांभसा ।
पीयमानं त्रिरात्रेण पातयत्यश्मरीं हठात् ॥

अर्थ--कचरियाकी जडको बासी पानीमें पीसके पीवे तो तीनही दिनमें पथरी गिर जावे ॥

अर्कपुष्पीकल्क ।

गव्येन पिष्ट्वा पयसार्कपुष्पी निपीयमाना त्रिदिनं प्रभाते ।
विदार्य वीर्येण निजेन तीव्रामप्यश्मरीं या कुरुते च दाहम् ॥

अर्थ--अर्कपुष्पीको गौके दूधमें पीसके प्रातःकाल तीन दिन पीवे तो अपनी सामर्थ्यसे दाहयुक्त तीव्र पथरीके टुकडे २ करके नाश करे ॥

शतावरी मूलरस ।

शतावरीमूलरसो गव्येन पयसा समः ।
पीतो निपातयत्याशु ह्यश्मरीं चिरजामपि ॥

अर्थ--शतावरका रस और इसके बराबर गौका दूध इनको मिलायके पीवे तो बहुत दिनकीभी पथरीको तत्काल नाश करे ॥

वरुणादि क्वाथ ।

वरुणस्य त्वचं श्रेष्ठां शुंठीगोक्षुरसंयुताम् । यवक्षारगुडं दत्त्वा क्वाथं

कृत्वा पिबेद्धिमम् ॥ अश्मरीशर्करामूत्रकृच्छ्राघातरुजापहम् ॥

अर्थ-वरनाकी छाल, सोंठ, गोखरू, जवाखार, गुड इनके काढेको शीतल करके देवे तो मूत्राश्मरी, शर्करा, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात इन सब रोगोंको नाश करे ॥

एलामधुकगोकंटरेणुकैरंडवासकः । कृष्णाश्मभेदसहिताः क्वाथ एषां सुसाधितः ॥ शिलाजतुयुतः पेयः शर्कराश्मरिकृच्छ्रहा ॥

अर्थ-इलायची १, मुलहठी २, गोखरू ३, रेणुकबीज ४, अंडकी जड ५, अडूसा ६, पीपल ७, पाषाणभेद ८ इन आठ औषधोंका काढा करके उसमें शिलाजीत मिलायके पीवे तो शर्करा, पथरी और मूत्रकृच्छ्र इनको दूर करे ॥

क्वाथ ।

वरुणत्वक्कषायस्तु पीतो गुडसमन्वितः ।
अश्मरीं पातयत्याशु बस्तिशूलं च नाशयेत् ॥

अर्थ-वरनाकी छालके काढेमें गुड डालके पीवे तो अश्मरी (पथरी), बस्तिशूल (मसानेका दर्द) इनको नाश करे ॥

शिग्रुमूलक्काथ ।

क्वाथश्च शिग्रुमूलोत्थः कदूष्णोऽश्मरिपातनः ।
क्षीरान्नभुग्बर्हिशिखामूलं वा तंदुलांबुना ॥

अर्थ-सहजनेकी जडका काढा चरपरा उष्ण और पथरीको गेरनेवाला है इस वास्ते इसको पीवे अथवा गठोनाकी जड चांवलोंके धोवनमें पीसके पीवे और दूध भात भोजन करे तो पथरी नष्ट होय ॥

तुषकषाय ।

यः पिबेद्रजनीं सम्यक् सगुडां तुषवारिणा ।
तस्याशु चिररूढापि यात्यस्तं मेहशर्करा ॥

अर्थ-सोंठके काढेमें हलदी और गुड डालके पीवे तो उसकी बहुत दिनोंकी शर्करा लिंगसे गिर जावे ॥

शुंठ्यादि क्वाथ ।

शुंठ्यग्निमंथापामार्गशिग्रुवरुणगोक्षुरैः ।
अभयारग्वधफलैः क्वाथं कुर्याद्विचक्षणः ॥

रामठक्षारलवणं चूर्णं दत्वा पिबेन्नरः ।
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रघ्नं दीपनं पाचनं परम् ॥

अर्थ-सोंठ, अरनी, चिरचिरा, सहजना, बरना, गोखरू, हरड, अमलतासका गूदा इनका काढा कर बुद्धिमान् वैद्य मूत्राश्मरी मूत्रकृच्छ्र इन पर हींग, जवाखार, सैंधानिमक डालके पिलावे तो यह अत्यंत दीपन पाचन है ॥

आकल्लकादि क्वाथ ।

आकल्लगोक्षुरजटातुलसीशिलाभिरेरंडमूलमगधामधुकैः प्रयुक्तः । तक्राह्वमूलसुरसासुरपुष्पशुंठीक्वाथो निहंति बहुलाप्रतिवापितोयम् ॥ सप्ताहमेव पिबतां नियमेन पुंसां घोराश्मरीमतिरुजं सहशर्करां च । आवीपयो मधुविमिश्रितमाशु तद्वत् चूर्णं त्रिवृत्कुटजबीजभवं वदंति ॥

अर्थ-अकरकरा, गोखरूकी जड, तुलसीका रस, पाषाणभेद, अंडकी जड, पीपल, मुलहठी, कैथकी जड, निर्गुडी, लौंग, सोंठ इन औषधोंका काढा करके इसमें इलायचीका चूर्ण डालके पीवे इस प्रकार सात दिन करनेसे घोर पीडाकारक पथरी और मूत्रमें जो रेतीसी निकले वह दूर होवे उसी प्रकार भेडका दूध सहत मिलायके देवे अथवा निसोथ, इन्द्रजौ इनका चूर्ण करके दूध अथवा चावलोंके धोवनसे देवे ॥

पाषाणभेदादि क्वाथ ।

पाषाणभिद्वरुणगोक्षुरकोरुबूकक्षुद्राद्वयं क्षुरकमूलकृतः कषायः ।
दध्ना युतो जयति मूत्रविबंधशुक्रमुग्राश्मरीमपि च शर्करया समेतम् ॥

अर्थ-पाषाणभेद, वरना, गोखरू, अंड, कटेरी, बडी कटेरी, तालमखाने इनका काढा दही मिलायके पीवे तो मूत्रविबंध, शुक्राश्मरी, शर्करा, इनको नाश करे ॥

कुलित्थक्वाथ ।

पलद्वयमिते कोष्णे कुलित्थस्य शृते त्वपः । लवणं शरपुंखेन सार्धं माषद्वयोन्मितम् ॥ क्षिप्त्वा पिबेत्पतेत्तस्य मूत्रेण सममश्मरी । शर्करा सिकता चापि दृष्टमेतदनेकधा ॥

अर्थ-कुलथीका काढा ८ तोले, सरफोकेका चूर्ण और सैंधानिमक २ मासे डालके पीवे तो मूत्रके साथ गिरनेवाली पथरी शर्करा और सिकता निकल जावे ॥

कूष्मांडस्वरस ।

कूष्मांडकरसं हिंगुयवक्षारयुतं पिबेत् ।
बस्तौ मेढ्रे शूलयुक्ते चाश्मरीं शर्करां जयेत् ।

अर्थ-पेठेका रस, हींग, जवाखार इनको एकत्र करके पीवे तो बस्ति और शिश्न इनका शूल, पथरी, शर्करा इनको जीते ॥

वरुणादि घृत ।

वरुणस्य तुलां क्षुण्णां जलद्रोणे विपाचयेत् । पादशेषं परिश्राप्य घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ वारुणी कदली बिल्वं तृणजं पंचमूलकम् । अमृता त्वश्मजं देयं बीजं च त्रपुसस्य च ॥ शतपर्वा तिलक्षारः पलाशक्षार एव च । यूथिकायाश्च मूलानि कर्षकानि समर्पयेत् ॥ अस्य मात्रां पिबेज्जंतुर्देशकालाद्यपेक्षया । जीर्णे चानु पिबेत्सर्वमजीर्णे मस्तुमवं च ॥ अश्मरीं शर्करां चैव मूत्रकृच्छ्रं च नाशयेत् ॥

अर्थ-बरनाकी छाल ४०० तोलेको कूट १०२४ तोले जलमें औटावे. जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके जलको छान लेवे. इसमें ६४ तोले घी डालके औटावे जब घृतमात्र शेष रहे तब उतारके इसमें वारुणी, केला, बेल, कुश, काश, ईख, रामशर, मूंज, गिलोय, शिलाजीत, खीरेके बीज, काली दूब, तिलोंका खार, पलासका खार, जुही ये सब औषध एक २ तोले लेके उसमें डाल देवे. फिर देश कालको विचारके और बलाबल विचार इसकी मात्रा खाय जब औषध पच जावे तब जो इच्छा होय सो भोजन पान करे और न पचे तो दहीका जल पीवे यह औषध पथरी, मूत्रकृच्छ्र, शर्करा इनको नाश करे ॥

पाषाणभेदपाक ।

अश्मभेदाप्रस्थमेकं चूर्णितं वस्त्रगालितम् ॥ गव्ये दुग्धाढके क्षिप्त्वा पाचयेन्मृदुवह्निना ॥ दर्व्या संघट्टयेत्तावद्यावद्घनतरं भवेत् । एलालवंगमगधा यष्टीमध्वमृताभया ॥ कोन्ती श्वदंष्ट्रा वृषकं शरपुंखा पुनर्नवा । यावशूकोनिलघ्नश्च मांसिसप्तांगुलोत्पलम् ॥ वंगं लोहं तथाभ्रं च कर्पूरं पर्पटं सठी । पत्रेभ-

केशरं त्वक्च संशुद्धं च शिलाजतु ॥ पृथगर्धपलं चूर्णं चूर्णिता सितशर्करा । सार्धप्रस्थमिता ग्राह्या दुग्धे लेहत्वतां गते ॥ सर्वं तन्निक्षिपेत्तत्र स्वांगशीतलतां नयेत् । मधुनः प्रस्थकं दद्यात्स्निग्धभांडे विनिक्षिपेत् ॥ कर्षार्धं भक्षयेत्प्रातस्तीक्ष्णं तैलादिकं त्यजेत् । पंचाश्मरीभेदनं स्यान्मूत्रकृच्छ्रं खुडं तथा ॥ मूत्राघातान्प्रमेहांश्च नाशयेन्मधुमेहजान् । अधोगं रक्तपित्तं च बस्तिकुक्षिगदं तथा ॥ तीव्राश्मरीपरीतानां विशेषेण हितं हि तत् । यत् ब्रह्मणा विरचितं च्यवनाय निवेदितम् ॥

अर्थ--पाषाणभेद ६४ तोले लेकर कपडछान चूर्ण कर लेवे. फिर इसको २५६ तोले गौके दूधमें डाल मंदाग्निसे परिपक्क करे और कलछीसे टारता २ गाढा करे फिर इलायची, लौंग, पीपल, मुलहठी, गिलोय, हरड, रेणुकबीज, गोखरू, अडूसा, सरफोका, पुनर्नवा, जवाखार, बहेडा, जटामांसी, सप्तांगुल, कमल, वंगभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, कपूर, कचूर, पत्रज, नागकेशर, दालचीनी, शिलाजीत ये प्रत्येक औषध दो दो तोले, लेकर चूर्ण करे, मिश्री ९६ तोले, सबका चूर्ण कर दूधके गाढे होने पर सबको डालदे और मिलायके एक जीव कर देय. फिर उतार शीतल होनेपर ६४ तोले सहत चिकने बासनमें भरके धर रखे प्रातःकाल इनमेंसे आधा तोला नित्य सेवन करे. इस पर तीखे पदार्थ और तेल न खाय तो पांच प्रकारकी पथरी, मूत्रकृच्छ्र, खुड, मूत्राघात, प्रमेह, मधुमेह, अधोरक्त, बस्तिगत, कुक्षिगत पित्त इनका नाशक, अत्यंत तीव्र पथरी करके पीडित मनुष्योंको विशेष करके हितकारी है. जो ब्रह्मदेवने रची और च्यवन ऋषिको कही वही यह औषध है ॥

वरुणादि गुड ।

नो जग्धं कृमिभिर्घनं सुतरुणं स्निग्धं शुचिस्थानजं घस्रे पुण्यनिरीक्षिते वरुणकं छित्त्वा तुलां ग्राहयेत् । संग्राह्यासु चतुर्गुणासु विपचेत्पादावशेषं जलं तत्तुल्येन गुडेन वै दृढतरे भांडे पचेत्तत्पुनः ॥ ज्ञात्वैवं घनतां गुडे परिणते प्रत्येकमेषां पलं शुंठ्येर्वारुकबीजगोक्षुरकणापाषाणभिच्छीतला । कूष्मांडं खलु साक्षबीजकुनटीवास्तूकशोभांजनद्राक्षैलागिरिजाभयाकृमिहृतां चूर्णी-

कृतानां क्षिपेत् ॥ पथ्याशी प्रतिवासरं गुडममुं योग्यप्रमाणं नरः खादेत्तस्य समस्तदोषजनिताश्मर्यः पतंति द्रुतम् ॥

अर्थ-जो कीडोंने न खाया हो, नवीन, मोटा, रसयुक्त, पवित्रस्थानका, उत्तम दिन देखके लाया हुआ वरनाका काष्ठ अथवा जड ४०० तोले ले उसको चौगुने जलमें चढायके औटावे जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान ले फिर इस काढेके समान गुड डालके फिर पाक करे जब गाढा हो जावे तब सोंठ, खीरेके बीज, गोखरू, पीपल, पाषाणभेद, पद्माख, पेठा, बहेडा, मनसिल, बथुआ, सहजना, दाख, इलायची, छोटा पाषाणभेद, हरड, वायविडंग इनका चूर्ण प्रत्येक चार २ तोले उसमें डालके बलाबल विचारके नित्य भक्षण करे इस प्रकार करनेसे उस प्राणीकी सर्व दोषजन्य पथरी शीघ्र गिर जावे ॥

अश्मरी (पथरी) पर पथ्य ।

कुलित्था मुद्गगोधूमा जीर्णशालियवा हिताः । धन्वामिषं तंदुलीयं जीर्णं कूष्मांडकं फलम्॥ आर्द्रकं यावशूकश्च पथ्यमश्मरिरोगिणाम् ॥

अर्थ-कुलथी, मूंग, गेहूं, पुराने शाली चावल, सत्तु, निर्जल देशके जीवोंका मांस, तंदुलीय, पुराना पेठा, अदरख, जवाखार इतने पदार्थ अश्मरीरोगवालेको पथ्यकारक है॥

पथ्य ।

बस्तिर्विरेको वमनं च लंघनं स्वेदोऽवगाहोऽपि च वारिसेचनम्। यवा कुलित्थाश्च पुराणशालयो मद्यानि धन्वांडजसंभवा रसाः॥ पुराणकूष्मांडफलं कसेरुकं गोकंटको वारुणशाकमार्द्रकम् । पाषाणभेदो यवशूकरेणवश्छिन्ना समाकर्षणमश्मनामपि ॥ एतानि सर्वाणि भवंति सर्वदा मुदेऽश्मरीरोगनिपीडितात्मनाम् ॥

अर्थ-बस्तिकर्म, जुलाब, वमन, पसीने निकालना, जलमें धसके न्हाना, जल पीना, जौ, कुलथी, पुराने शाली चावल, मद्य, जंगली जीवोंके अंडोंका सोरुआ, पुराना पेठा, कसेरू, गोखरू, जलमें उत्पन्न होनेवाले साग, अदरख, पाषाणभेद, जौंके अगेके कांटे, रेणुका, गिलोय, पथरीको कृशकारी कर्म ये सब पदार्थ पथरीरोगपीडित मनुष्योंको सदैव आनंदके देनेवाले हैं ॥

अश्मरी पर अपथ्य ।

मूत्रस्य शुक्रस्य च वेगमम्लं विष्टंभि रूक्षं गुरु चान्नपानम् ।
विरुद्धपानाशनमश्मरीमान् विवर्जयेत्संततमप्रमत्तः ॥

अर्थ-मूत्र और शुक्रके उपस्थित वेगको रोकना, खटाई, विष्टंभी, रूखे और भारी ऐसे अन्न, जलका सेवन, विरुद्ध पान और भोजन इन सबको पथरीरोगवाला सावधानीके साथ परित्याग कर देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे अश्मरीरोगनिदानचिकित्सा समाप्ता ।

प्रमेहरोगकर्मविपाकः ।

चांडालीगमनात्सर्वप्रमेहव्याधिमान् भवेत् । क्षुत्पिपासातुरश्चैव जायते तस्य निष्कृतिः॥चांद्रायणत्रयं कुर्याद्यवमध्यं तथापरे । जुहुयात्सर्पिषा चैतान् जपेन्मंत्रान्समाहितः ॥ इदमापः प्रवहत इति द्वयोर्मेधातिथिर्ऋषिः ॥

अर्थ-चांडाली (भंगिन) के साथ गमन करनेसे प्रमेहका रोग होता है अथवा क्षुधा (भूंख), तृषा (प्यास) इनसे आतुर होवे. उसका प्रायश्चित कहते हैं. उसको यवमध्य चांद्रायण तीन करने तथा दूसरे दिन " इदमापः प्रवहत " इसका मेधातिथि ऋषि इत्यादि अंगन्यास करन्यास करके जप करे और इसी मंत्रसे घृतका होम करे ॥

सशूलप्रमेहका कर्मविपाक ।

तिर्यग्गामी सशूलेन प्रमेहेन युतो भवेत् ।
कुर्यात्सांतपनादीनि प्रायश्चित्तं यथाविधि ॥

अर्थ-तिर्यग्गामी अर्थात् गैया, बकरी, घोडी इत्यादिकसे जो मैथुन करता है उस पुरुषके पीडायुक्त प्रमेहका रोग होता है. उसको प्रायाश्चित्त यह है कि वह सांतापन व्रत करे ॥

वातप्रमेहकर्मविपाक ।

पर्वव्यवायो मनुजः कन्यागामी तथैव च ।
वातप्रमेहयुक्तः स्यात्कुर्याच्चांद्रायणव्रतम् ॥

अर्थ—अमावास्या, पूर्णमासी आदि पर्व तिथियोंमें जो स्त्रीगमन करता है अथवा कन्या गमन करे वह वातप्रमेहवाला होता है उसको चांद्रायणव्रत तीन करने चाहिये ॥

मधुमेहका कर्मविपाक ।

मधुमेही मातृगामी सततं जायते नरः । पितृभार्याभिगामी च जलमेही नराधमः ॥ यो गच्छेद्भगिनीं नित्यमिक्षुमेही भवेन्नरः । प्रायश्चित्तं क्रमादत्र षड्वर्षाण्यथ पंच च ॥ त्र्यब्दमित्याचरेत्सम्यक् ततो रोगात्प्रमुच्यते ॥

अर्थ—मातृगमन अथवा सौतेली मातासे गमन करे तो जलमेही होय. उसका क्रमसे प्रायश्चित्त कहते हैं. जो प्राणी भगिनी (बहन) से गमन करता है वह इक्षुप्रमेही होवे वह छः वर्ष अथवा पांच वर्ष अथवा तीन वर्ष चांद्रायणादि व्रत करे तो प्रमेहरोग दूर होय ॥

प्रमेहनिदान ।

आस्यासुखं स्वप्नसुखं दधीनि ग्राम्योदकानूपरसाः पयांसि ।
नवान्नपानं गुडवैकृतं च प्रमेहहेतुः कफकृच्च सर्वम् ॥

अर्थ—बैठनेके सुखसे, निद्राके सुखसे, अथवा स्वप्नसुख कहिये स्वप्नमें स्त्रीप्रसंग आदि सुखसे, दही, ग्रामके संचारी जीव भेड बकरी आदि, जलके संचारी जीव मच्छी, कछुआ आदि, अनूप (जलसमीप)के रहनेवाले जीव हंस चकवा आदि ऐसे प्राणियोंके मांसरस, दूध, नया अन्न और नया जल तथा शर्करा गुड आदिके पदार्थ अथवा गुडके विकार ये और जितने कफकारक पदार्थ हैं सो सब प्रमेह होनेके कारण हैं ॥

कफादि प्रमेहोंकी संप्राप्ति ।

मेदश्च मांसं च शरीरजं च क्लेदं कफो बस्तिगतः प्रदूष्य ।
करोति मेहान्समुदीर्णमुष्णैस्तानेव पित्तं परिदूष्य चापि ॥
क्षीणेषु दोषेष्ववकृष्य धातून्संदूष्य मेहान्कुरुतेऽनिलश्च ॥

अर्थ—बस्ति (मूत्रस्थान) गत कफ, मेद, मांस और शरीरके क्लेदको बिगाडकर प्रमेहको उत्पन्न करे है उसी प्रकार गरम पदार्थोंसे पित्त कुपित होकर पूर्वोक्त मेद मांसका बिगाडकर प्रमेहको उत्पन्न करे और वायु यह दोष क्षीण होनेसे धातु (वसा मज्जादिक) को ईंचकर (बस्तीके मुखपर लायकर) प्रमेहको प्रगट करे ॥

कफादिजन्य प्रमेहोंका साध्यासाध्यत्व ।

साध्याः कफोत्था दश पित्तजाः षट् याप्या न साध्या पवनाच्चतुष्काः । समक्रियत्वाद्विषमक्रियत्वान्महाक्रियत्वाच्च यथाक्रमं ते ॥

अर्थ-कफसे प्रगट दस प्रमेह साध्य हैं कारण इसका यह है कि कफदोष और मेदः-प्रभृति दूष्य इन पर कटुतिक्तादि क्रिया समान है इस रोगमें रोगका ही प्रभाव ऐसा है कि इसमें तुल्य दूष्यको साध्यत्व कहा है और प्रमेहके विना और रोगोंको अतुल्य (असमान) दूष्यत्व साध्यका हेतु होय है. पित्तकी छः प्रमेह विषम चिकित्सा करनेसे याप्य होयहै अर्थात् पित्त हरण करनेवाले जो शीत मधुर आदि द्रव्य वे मेदको बढानेवाले हैं और मेद हरणकर्त्ता उष्ण कटुकादि द्रव्य वे पित्तकर्त्ता हैं ऐसे क्रिया विषम है. वादीसे प्रगट चार प्रमेह मज्जादि गंभीर धातुके आकर्षण करनेसे अत्यंत पीडाकर्त्ता हैं और इनकी विषमही क्रिया है इसीसे ये चार असाध्य हैं ॥

प्रमेहोंमें दोष और दूष्य तथा संख्या ।

कफः सपित्तः पवनश्च दोषा मेदश्च शुक्रांबुवसालसीकाः ।
मज्जारसौजं पिशितं च दूष्याः प्रमेहिणीं विंशतिरेव मेहाः ॥

अर्थ-कफ, पित्त और वादी ये दोष और मेद, रुधिर, शुक्र, जल, मांस, स्नेह (चर्बी), लसिका (मांसका जल), मज्जारस, ओज और मांस ये दूष्य जानने इन दोष और दूष्य दोनोंसे बीस प्रकारके प्रमेह होते हैं ॥

पूर्वरूप ।

दंतादीनां मलाढ्यत्वं प्राग्रूपं पाणिपादयोः ।
दाहश्चिक्कणता देहे तृट् श्वासश्च प्रजायते ॥

अर्थ-दांतोंमें आदिशब्दसे जिह्वा तालु आदिका ग्रहण है, इनमें मैल बहुत रहे, हाथ पैरमें दाह, अंगका चिकनापना, प्यास, श्वास, चकारसे केशों (बालों) का आपसमें लिपट जाना और नखोंका बढाना ये प्रमेहके पूर्वरूप होते हैं ॥

प्रमेहके सामान्यलक्षण ।

सामान्यं लक्षणं तेषां प्रभूताविलमूत्रता । दोषदूष्याविशेषेपि तत्संयोगाविशेषतः ॥ मूत्रवर्णादिभेदेन भेदो मेहेषु कल्प्यते । सम्यक्चेदं परिज्ञाय क्रिया कार्या भिषग्वरैः ॥

अर्थ-बहुत और गाढा मूत्र उतरे ये प्रमेहके सामान्य लक्षण हैं. दोष और दूष्य इनके भेद होनेसे. परंतु दोष और दूष्य इनके संयोग भेदसे मूत्र वर्णादि भेद करके प्रमेहमें भेद होय है दस छः चार इत्यादिक दोष (वात पित्त कफ) दूष्य (मांस मेदा मज्जादि) जैसे सफेद पीला काला तामेके रंगका और श्याम इन पांच रंगोंके संयोग करनेसे पिंगल पाटलादि अनेक वर्णभेद होते हैं इसी प्रकार दोषादिकोंके संयोगसे नाना प्रकारके प्रमेह होते हैं संयोग भेदकी कैसे प्रतीति हो ऐसे कोई पूछे तो उसके वास्त कहते हैं मूत्रके वर्णादि भेदसे समान कारणोंके भेद कल्पना करने चाहिये. जैसे घट (घडा) बनानेके समय मृत्तिकादि कारण सामग्रीमें भेद नहीं है परंतु कुम्भकारादि (कुम्हारआदि) संयोग भेद करके घडा सरवा मटकना आदि अनेक जातिभेद हो जाते हैं इन भेदोंको अच्छी तरह जानके महावैद्यको इनकी चिकित्सा करनी चाहिये ॥

प्रमेहके बीस भेद ।

उदकश्चेक्षुसांद्रश्च सुराह्वो पिष्टकस्तथा । शुक्राह्वः सिकताह्वश्च शीतमेहः शनैस्तथा ॥ लालामेहस्तथा क्षारो नीलमेहोऽथ कालकः । हारिद्रमेहो मांजिष्ठो रक्तमेहस्तथापरः ॥ षोडशोऽथ वसामेहो मज्जामेहस्तु कीर्तितः । क्षौद्रमेहश्च हस्ती च मेहानां विंशतिः क्रमात् ॥

अर्थ-उदकमेह, इक्षुमेह, सुरामेह, सांद्रमेह, पिष्टकमेह, शुक्रमेह, सिकतामेह, शीतमेह, शनैर्मेह, लालामेह, क्षारमेह, नीलमेह, कालप्रमेह, हारिद्रमेह, मांजिष्ठमेह, रक्तमेह,वसामेह, मज्जामेह, क्षौद्रमेह, हस्तिमेह, ऐसे प्रमेह बीस प्रकारके हैं ॥

कफजन्य उदकादि दश प्रमेह ।

अच्छं बहुसितं शीतं निर्गंधमुदकोपमम् । मेहत्युदकमेहेन किंचिदाविलपिच्छिलम् ॥ इक्षो रसमिवात्यर्थं मधुरं चेक्षुमेहतः । सांद्रीभवेत्पर्युषितं सान्द्रमेहेन मेहति ॥ सुरामेही सुरातुल्यमुपर्यच्छमधोघनम् । संहृष्टरोमा पिष्टेन पिष्टवद्बहुलं सितम् ॥ शुक्राभं शुक्रमिश्रं वा शुक्रमेही प्रमेहति । मूत्राणून् सिकतामेही सिकतारूपिणो मलान् ॥ शीतमेही सुबहुशो मधुरं भृशशीतलम् । शनैः शनैः शनैर्मेही मन्दं मन्दं प्रमेहति ॥ लालातंतुयुतं मूत्रं लालामेहेन पिच्छिलम् ॥

अर्थ-१ उदकप्रमेह करके-स्वच्छ बहुत सपेद, शीतल, गंधरहित, पानीके समान कुछ गाढा और चिकना मूते है. २ इक्षुप्रमेहसे-ईखके रससमान अत्यंत मीठा ऐसा मूत्र होय. ३ सांद्रप्रमेहसे-रात्रिमें पात्रमें धरनेसे जैसा होवे ऐसा मूत्र होय. ४ सुराप्रमेहसे-दारूके समान ऊपर निर्मल और नीचे गाढा ऐसा मूते. ५ पिष्टप्रमेहसे-पीसे चावलोंके पानीसमान सपेद और बहुत मूते तथा मूतते समय रोमांच होय. ६ शुक्रप्रमेहसे-शुक्र (वीर्य) के समान अथवा शुक्रमिला मूत्र होय. ७ सिकतामेहसे-मूत्रके कण और वालू रेतके समान मलके रवा गिरें. ८ शीतमेहसे-मधुर तथा अत्यंत शीतल ऐसा वारंवार बहुत मूते. ९ शनैर्मेहसे-धीरे धीरे और मंद मंद मूते. १० लालाप्रमेहसे-लारके समान तारयुक्त और चिकना मूत्र होय है ॥

पित्तप्रमेहके छः भेद ।

क्षारमेही नीलमेही कालहारिद्रमेहनः ।
मांजिष्ठो रक्तमेहश्च मेहाः षट् पित्तजाः स्मृताः ॥

अर्थ-क्षारप्रमेह, नीलप्रमेह, कालप्रमेह, हारिद्रप्रमेह, मांजिष्ठप्रमेह, रक्तप्रमेह ऐसे छः प्रकारके प्रमेह पित्तसे उत्पन्न होते हैं ॥

क्षारादि प्रमेहोंके लक्षण ।

गंधवर्णरसस्पर्शैः क्षारेण क्षारतोयवत् । नीलमेहेन नीलाभं कालमेही मषीनिभम् ॥ हारिद्रमेही कटुकं हरिद्रासन्निभं दहेत् । विस्रं मांजिष्ठमेहेन मंजिष्ठासलिलोपमम् ॥ विस्रमुष्णं सलवणं रक्ताभं रक्तमेहतः ॥

अर्थ-११ क्षारप्रमेहसे-खारी जलके समान गंध वर्ण रस और स्पर्श ऐसा मूत्र होता है. १२ नीलप्रमेहसे--नीले रंगका अर्थात् पपैया पक्षीके पंखके सदृश मूते. १३ कालप्रमेहसे--स्याईके समान काला मूते. १४ हारिद्रप्रमेहसे-तीक्ष्ण हलदीके समान और दाहयुक्त मूते. १५ मांजिष्ठप्रमेहसे-आम दुर्गंध और मंजीठके समान मूते. १६ रक्तप्रमेहसे-दुर्गंधयुक्त गरम खारी और रुधिरके समान लाल मूत्र करे ॥

वातजन्यमेह ।

चत्वारस्तु वसामज्जाहस्तिमध्वनिलात्मजाः ॥

अर्थ-वसाप्रमेह, मज्जाप्रमेह, हस्तिप्रमेह, क्षौद्रप्रमेह ऐसे चार प्रकारके प्रमेह वायुसे उत्पन्न होते हैं ॥

वसादि मेहोंके लक्षण ।

वसामिश्रं वसामेही वसाभं मूत्रयेन्मुहुः । मज्जाभं मज्जमिश्रं वा मज्जामेही मुहुर्मुहुः ॥ कषायं मधुरं रूक्षं क्षौद्रमेहं वदेद्बुधः । हस्ती मत्त इवाजस्रं मूत्रं वेगाविवर्जितम् ॥ सालसीकं विबुद्धं च हस्तिमेहेन मेहति ॥

अर्थ–१७ वसाप्रमेही–वसा (चर्बी) युक्त अथवा वसाके समान मूते. १८ मज्जाप्रमेही–मज्जाके समान अथवा मज्जा मिला वारंवार मूते, १९ क्षौद्रप्रमेही–कषेला मीठा और चिकना ऐसा मूते. २० हस्तिप्रमेही–मस्त हाथीके समान निरंतर वेगरहित जिसमें तार निकलें और ठहर ठहरके मूते ॥

कफप्रमेहोंके उपद्रव ।

अविपाकोऽरुचिश्छर्दिर्ज्वरः कासः सपीनसः ।
उपद्रवाः प्रजायंते मेहानां कफजन्मनाम् ॥

अर्थ–अन्नका परिपाक न होय, अरुचि, वमन, ज्वर, खांसी, पीनस ये कफप्रमेहके उपद्रव हैं ॥

पित्तप्रमेहोंके उपद्रव ।

बस्तिमेहनयोः शूलं मुष्कावदरणं ज्वरः ।
दाहस्तृष्णाम्लिका मूर्च्छा विड्भेदः पित्तजन्मनाम् ॥

अर्थ–बस्ती और लिंग इनमें पीडा होय, अंडकोशोंका पककर फटना, ज्वर, प्यास, खट्टा डकार, मूर्च्छा और पतला दस्त होय ये पित्तप्रमेहके उपद्रव हैं ॥

वातप्रमेहोंके उपद्रव ।

वातजानामुदावर्तः कंठहृद्ग्रहलोलताः ।
शूलमुन्निद्रता शोषः कासः श्वासश्च जायते ॥

अर्थ–उदावर्त्त, गला, हृदय इनका रुकना, लोलता (सर्वरस भक्षणेच्छा), शूल, निद्रानाश, शोष, सूखी खांसी, श्वास ये वातप्रमेहके उपद्रव हैं ॥

असाध्यलक्षण ।

यथोक्तोपद्रवाविष्टमतिप्रस्रुतमेव च ।
पिडिकापीडितं गाढं प्रमेहो हन्ति मानवम् ॥

अर्थ—ऊपर कह आये जो अविपाकादि उपद्रव वे सब होंय जिसके मूत्रका स्राव बहुत हुआ होय, शराविका आदि जो पिडिका आगे कहेंगे वे होंय, रोग अंगमें प्रवेश हो गया हो ऐसे लक्षण होनेसे वह प्रमेह मनुष्यको मार डाले ॥

स्त्रियोंके प्रमेह न होनेमें कारण ।

रजः प्रवर्तते यस्मान्मासिमासि विशोधयन् ।
सर्वान् शरीरदोषांश्च न प्रमेहोस्त्यतः स्त्रियाः ॥

अर्थ—हर मासमें रजःप्रवृत्ति होनेसे स्त्रियोंके शरीरसंबंधी सब दोष शुद्ध होते हैं इसीसे स्त्रियोंके प्रमेह नहीं होता है ॥

प्रमेहके असाध्यलक्षण ।

जातः प्रमेही मधुमेहिना यो न साध्यरोगः स हि बीजदोषात् ।
ये चापि केचित्कुलजा विकारा भवंति तांश्च प्रवदन्त्यसाध्यान् ॥

अर्थ--मधुमेही पुरुषसे उत्पन्न भया जो प्रमेहवान् पुरुषका रोग बीजदोषके कारणसे साध्य नहीं होय इस जगह मधुमेहशब्दसे साधारण प्रमेह जानना. इस जगहभी मधुकोशटीकावालेने मधुमेहशब्दपर बहुतसा शास्त्रार्थ लिखा है जो कोई कुष्ठादिक कुलपरंपरागत विकार हैं वे सब असाध्य हैं अब कहते हैं कि सर्व प्रमेहोंकी उपेक्षा करनेसे मधुमेहत्वको प्राप्त होते हैं ॥

मधुमेहोत्पत्ति और कारण ।

सर्व एव प्रमेहास्तु कालेनाप्रतिकारिणः ।
मधुमेहत्वमायांति तदासाध्या भवंति हि ॥

अर्थ--सब प्रमेह औषधके विना काल करके मधुमेहको प्राप्त होते हैं तब वे असाध्य हो जाते हैं ॥

दो प्रकारके मधुमेहोंके कारण ।

मधुमेहे मधुसमं जायते स किल द्विधा ।
क्रुद्धे धातुक्षयाद्वायौ दोषावृतपथेऽथवा ॥

अर्थ—मधुमेहमें मूत्र मधु (सहत) के समान होय है सो दो प्रकारका है एक तो धातुक्षय होनेसे वायु कुपित होकर होय और दूसरा दोषों करके पवनका मार्ग आवृत (ढकने) करके होय है ॥

आवरणके लक्षण ।

आवृतो दोषलिंगैस्तु सोऽनिमित्तं प्रदर्शयन् ।
क्षीणः क्षणात्पुनः पूर्णो भजते कृच्छ्रसाध्यताम् ॥

अर्थ—आवृत वायुसे प्रगट मधुमेह जिस पित्तादि दोष करके आच्छादित होय उसके लक्षण अकस्मात् दीखें क्षणभरमें क्षीण होय क्षणमें पूर्ण होय वह कष्टसाध्य जानना ॥

मधुमेहप्रवृत्तिनिमित्त ।

मधुरं यच्च मेहेषु प्रायो माध्विव मेहति ।
सर्वेऽपि मधुमेहाख्यां माधुर्याच्च तनोरतः ॥

अर्थ—प्रमेहोंमें रोगी प्रायशः मधु (सहत)के समान मीठा मूते और सब शरीरको मीठा करदे इसीसे सर्व प्रमेहको मधुप्रमेहसंज्ञा दी है और अमृतसागरमें जो छः प्रमेह आत्रेयके मतसे लिखा है वह प्रमाणरहित है और प्रसिद्धमेंभी प्रमेह बीस प्रकारके हैं इसीसे हमने छोड दिये हैं ॥

लोध्रादि क्वाथ ।

लोध्राभयाकट्फलमुस्तकानां विडंगपाठार्जुनधन्वकानाम् ।
कदंबशाखार्जुनदीप्यकानां विडंगदार्वीघनशाल्मलीनाम् ॥
चत्वार एते मधुना कषायाः कफप्रमेहेषु निषेवणीय ः ॥

अर्थ—लोध, हरड, कायफल, नागरमोथा, वायविडंग, पाढ, कोहकी छाल, धमासा, कंदब, कोह, अजमायन, वायविडंग, दारुहलदी, नागरमोथा, सेमरका गोंद इन चार क्काथोंमेंसे किसी एकको सहत डालके कफप्रमेह पर देवे ॥

कफजन्यमेहों पर क्रमसे दश क्काथ ।

हरीतकीकट्फलमुस्तलोध्राः पाठाविडंगार्जुनधन्वयासाः । उभे हरिद्रे तगरं विडंगं कदंबशालार्जुनदीप्यकाश्च ॥ दार्वी विडंगं खदिरो धवश्च सुराह्वकुष्ठार्जुनचंदनानि । दार्व्यग्निमंथौ त्रिफला सपाठा पाठा च मूर्वा च तथा श्वदंष्ट्रा ॥ यवान्युशीराण्यभयागुडूचीजंबूशिवाचित्रकसप्तपर्णाः । पादैः कषायः कफमेहिनां ते दशोपदिष्टा मधुसंप्रयुक्ताः ॥ जलप्रमेहेक्षुरसप्रमेहे सांद्रप्रमेहे च

सुराप्रमेहे । पिष्टप्रमेहेऽपि च शुक्रमेहे क्रमादमी स्युः सिकताप्र-
मेहे ॥ शीतप्रमेहे च शनैःप्रमेहे लालाप्रमेहेऽपि सुखाय तेषाम् ॥

अर्थ-हरड, कायफल, नागरमोथा, लोध, इनका; पाढ, वायविडंग, कोह, धमासा इनका; दारुहलदी, हलदी, तगर, वायविडंग इनका; कदंब, शाल, कोह, अजमायन इनका; दारुहलदी, वायविडंग, खैर, धौ इनका; देवदारु, कूठ, चंदन, कोह इनका; दारुहलदी, अरनी, त्रिफला, पाढ इनका; पाढ, मूर्वा, गोखरू इनका; अजमायन, खस, हरड, गिलोय इनका; जामुन, आंवला, चित्रक, सतोना इनका क्वाथ ये दश काढे श्लोकके एक एक पादमें समाप्त हुए हैं इनसे एक २ को कफप्रमेह पर देवे. उनको क्रम करके कहते हैं जलप्रमेह, इक्षुप्रमेह, सांद्रप्रमेह, सुराप्रमेह, पिष्टप्रमेह, शुक्रप्रमेह, सिकताप्रमेह, शीतप्रमेह, शनैःप्रमेह, लालाप्रमेह इन प्रमेहों पर क्रमसे देवे तो रोगीको सुख होय ॥

शनैर्मेह ।

शनैर्मेहिनां त्रिफलागुडूचीकषायम् ॥

अर्थ-शनैःप्रमेह पर त्रिफला और गिलोयका काथ करके देवे ॥

पिष्टप्रमेह ।

पिष्टमेहिनां हरिद्राद्वितयकषायम् ॥

अर्थ-पिष्टप्रमेह पर हलदी, दारुहलदीका क्वाथ करके देवे ॥

सिकताप्रमेह ।

सिकतामेहिनां निंबकषायम् ॥

अर्थ-सिकताप्रमेह पर नीमकी छालका क्वाथ करके पीवे ॥

उदकप्रमेह ।

उदकमेहिनां पारिजातकषायं पाययेत् ॥

अर्थ--उदकप्रमेहीको पारिजात (हरसिंगार) का क्वाथ करके पिलावे

सांद्रप्रमेह ।

सांद्रमेहिनां सप्तपर्णकषायम् ॥

अर्थ--सांद्रप्रमेह पर सतोनाकी छालका काढा करके पीवे ॥

लालाप्रमेह ।

लालमेहिनां त्रिफलारग्वधमृद्वीकाकषायं पाययेत् ॥

अर्थ–लालप्रमेहवालेको त्रिफला, अमलतास और दाख इनका काढा करके पिलावे॥

शुक्रमेह ।

शुक्रमेहिनां दूर्वाशैवलप्लवकारंजकसेरुककषायम् ।
ककुभचंदनकषायं वा ॥

अर्थ–शुक्रप्रमेह पर दूब, काई, भद्रमोथा, कंजा, कसेरू इनका क्काथ करके देवे अथवा कोहकी छाल और चन्दन इनका काढा करके देवे ॥

शीतप्रमेह ।

शीतमेहिनां पाठागोक्षुरकषायम् ॥

अर्थ–शीतप्रमेह पर पाढ, गोखरू इनका काढा करके पीवे ॥

इक्षुप्रमेह ।

इक्षुमेहिनां निंबकषायम् ॥

अर्थ–इक्षुप्रमेही मनुष्यको नींबकी छालका काढा करके देवे ॥

सुराप्रमेह ।

सुरामेहिनां शाल्मलीकषायम् ॥

अर्थ–सुराप्रमेही पर सेमरका गोंद (मोचरस) का काढा करके देवे ॥

पित्तप्रमेहपर चार क्काथ ।

लोध्रार्जुनोशीरकुचंदनानामरिष्टसव्यामलकाभयानाम् । धात्र्यर्जुनारिष्टकवत्सकानां नीलोत्पलाजाजिनिशार्जुनानाम् ॥ चत्वार एते विहिताः कषायाः पित्तप्रमेहेषु मधुप्रयुक्ताः ॥

अर्थ–कोह, कोहकी छाल, खस, पतंग इनका; नींब, नेत्रवाला, आंवला और हरड इनका; आंवला, कोह, नीमकी छाल, कूडाकी छाल इनका; काला कमल, जीरा, हलदी और कोह इनका काढा ये चार काढे सहत डालके पित्तप्रमेहोंपर पृथक् २ देवे ॥

पित्तकी छः प्रमेहोंपर क्रमसे छः क्काथ ।

उशीरलोध्रासुरचंदनानां उशीरमुस्तामलकाभयानाम् । पटोलनिंबामलकामृतानां मुस्ताभयापुष्करवृक्षकानाम् ॥ लोध्रांबु-

कालीयकधातकीनां विश्वार्जुनानां मिशितोत्पलानां । मांजिष्ठहारिद्रकनीलक्षारं कृष्णाख्यरक्ते क्रमशः कषायाः॥

अर्थ-नेत्रवाला, लोध, असगंध, चंदन, इनका काढा; वाला, नागरमोथा, आंवला, हरड इनका; पटोलपत्र, नीमकी छाल, आंवला, गिलोय इनका; नागरमोथा, हरड, पुहकरमूल इनका; लोध, नेत्रवाला, दारुहलदी, धायके फूल इनका; सोंठ, कोहवृक्षकी छाल, सोंफ, कमल इनका काढा ये छः क्वाथ क्रम करके मांजिष्ठ, हारिद्र, नील, क्षार, काल, रक्त इन छः पित्तकी प्रमेहों पर देना उत्तम है ॥

क्षारप्रमेह ।

क्षारमेहिनां त्रिफलाकषायम् ॥

अर्थ-क्षारमेहवाले मनुष्यको त्रिफलेका काढा पिलावे ॥

हरिद्राप्रमेह ।

हरिद्रामेहिनां राजवृक्षकषायम् ॥

अर्थ-हरिद्राप्रमेहवालेको अमलतासके गूदेका काढा करके देवे ॥

मांजिष्ठप्रमेह ।

मांजिष्ठमेहिनां मंजिष्ठाचंदनकषायम् ॥

अर्थ-मांजिष्ठप्रमेहवालेको मंजीठ और लालचंदनका काढा करके देवे ॥

शोणितप्रमेह ।

शोणितमेहिनां गुडूचीतिंदुकास्थिकाश्मर्यखर्जूरकषायं मधुमिश्रं पाययेत् ॥

अर्थ-शोणीतप्रमेहवालेको गिलोय, तेंदूके बीज, कंभारीके फल, खजूर इनके काढेमें सहत मिलायके पिलावे ॥

दुष्टरक्तजप्रमेह ।

क्वाथः खर्जूरकाश्मर्यतिंदुकास्थ्यमृताकृताः ।
सुहिमः पीतमात्रस्तु सक्षौद्रो रक्तमेहहा ॥

अर्थ-खजूर, कंभारीके फल, तेंदूके फलके भीतरकी गिरी, गिलोय इनके काढेको शीतल करके पीवे तो रक्तप्रमेह दूर होय ॥

नीलप्रमेह ।

नीलमेहिनां सालसादिकषायं अश्वत्थकषायं वा ॥

अर्थ-नीलमेहवाले मनुष्यको सालकादि क्वाथ अथवा पीपलका काढा देवे ॥

सर्पिप्रमेह वातजन्य ।

सर्पिर्मेहिनां कुष्टकुटजपाठाहिंगुकटुरोहिणीकल्कम् ।
गुडूचीचित्रककषायं पाययेत् ॥

अर्थ-सर्पिप्रमेहवाले मनुष्यको कूठ, पाढ, हींग, कुटकी इनका चूर्ण अथवा गिलोय चित्रक इनका काढा देवे ॥

छिन्नादि क्वाथ ।

छिन्नावह्निकषायं वा पाठाकुटजरामठम् ।
तिक्ता कुष्टं च संपूर्णं सर्पिर्मेहे पिबेन्नरः ॥

अर्थ-गिलोय और चित्रक इनका अथवा पाढ, कूडेकी छाल, हींग, कुटकी, कूठ इन सबका काढा सर्पिप्रमेहनाशनार्थ पीवे ॥

हस्तिमेह ।

हस्तिमेहिनां तिंदुककपित्थकशिरीषपालाशपाठामूर्वा-
दुःस्पर्शकषायं मधुमिश्रम् ॥

अर्थ-हस्तिप्रमेह पर तेंदू, कैथ, सिरस, पलास, पाढ, मूर्वा और धमासा इनका काढा सहत मिलायके पीवे ॥

हस्तिमेह पर क्षार ।

हस्त्यश्वशूकरखरोष्ट्रास्थिक्षारं चेति ॥

अर्थ-हाथी, घोडा, वनका सूअर, गधा और ऊंट इनकी हड्डीका क्षार हस्तिमेहनाशक है ॥

वसामेह और हस्तिमेह पर क्वाथ ।

अग्निमंथकषायं तु वसामेहे प्रयोजयेत् । पाठाशिरीषदुस्पर्शमूर्वाकिंशुकतिंदुकैः ॥ कपित्थेन भिषक् कुर्यात् क्वाथं हस्तिप्रमेहके ॥

अर्थ-अरनीका काढा वसाप्रमेह पर देवे और पाढ, सिरस, धमासा, मूर्वा, पलास, तेंदू, कैथ इनका काढा करके वैद्य हस्तिप्रमेह पर देवे ॥

क्षौद्रमेह और सर्पिमेहपर क्वाथ ।

पूगारिमेदयोः क्वाथः सक्षौद्रः क्षौद्रमेहिनाम् । छिन्नावह्निकषा-

येण पाठाकुटजरामठम् ॥ तिक्ता कुष्ठं च संचूर्ण्य सर्पिर्मेहे पिबेन्नरः ॥

अर्थ-सुपारी, सपेद कत्या इनके काढेमें सहत डालके पीवे तो क्षौद्रप्रमेह दूर होय और गिलोय, चित्रक इनके काढेमें पाढ, कूडा, हींग, कुटकी, कूठ इनका चूर्ण मिलायके पीवे तो सर्पिप्रमेह दूर होय ॥

द्वितीययोग ।

चांगेरीमेदयोः क्राथः सक्षौद्रः क्षौद्रमेहिनाम् ॥

अर्थ-क्षौद्रप्रमेहवाले रोगीको चूका और मेदा इनके काढेमें सहत डालके पीना चाहिये॥

वसामेह ।

वसोमाहिनां अग्निमंथकषायं शिंशपाकषायं वा ॥

अर्थ--वसाप्रमेह पर अरनीका अथवा काली सीसोंका काढा करके देवे ॥

कफपित्तप्रमेह पर ।

कंपिल्लसप्तच्छदशालजानि बिभीतरोहीतककौटजानि । पुष्पाणि दध्रश्च विचूर्णितानि क्षौद्रेण लिह्यात्कफपित्तमेहे ॥

अर्थ कबीला, सतोना, कोहकी छाल, बेहडा, लाल रोहिडा, कूडा इनके फूलोंको दहीमें पीस सहत डालके चाटे तो कफपित्तप्रमेह पर उत्तम है ॥

कफवातजन्य प्रमेह पर ।

हरीतकीकट्फलमुस्तलोध्रकुचंदनोशीरकृतः कषायः ।
क्षौद्रेण युक्तः कफवातमेहं निहंति पीतारजसा च पीतः ॥

अर्थ--हरड, कायफल, नागरमोथा, लोध, लाल चंदन, खस इनके काढेमें सहत डालके अथवा हलदीके चूर्णके साथ पीवे तो कफवातप्रमेहको नाश करे ॥

पित्तवातज प्रमेह ।

विडंगरजनीद्वंद्वं खदिरोशीरपूगजः ।
क्राथः पीतः प्रगे हंति मेहं पित्तानिलोद्भवम् ॥

अर्थ--वायविडंग, दारुहलदी, हलदी, कत्था, खस, सुपारी इनका काढा प्रातःकाल पीवे तो पित्तवातसे प्रगट प्रमेहको नाश करे ॥

त्रिफलादि क्वाथ ।

त्रिफलादारुदार्व्यब्दक्वाथः क्षौद्रेण मेहहा ।
गुडूच्याः स्वरसः पीतो मधुना सर्वमेहजित् ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला, देवदारु, दारुहलदी, नागरमोथा इनका काढा सहत डालके अथवा गिलोयका स्वरस सहत डालके पीवे तो सर्व प्रमेहोंको नाश करें ॥

त्रिफलादि क्वाथ दूसरा ।

फलत्रिकं दारु निशा विशाला मुस्ता च निष्क्वाथ्य निशासमेतम् ।
पिबेत्कषायं मधुना प्रयुक्तं सर्वप्रमेहेषु समुत्थितेषु ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला, देवदारु, दारुहलदी, इन्द्रायन, नागरमोथा इनके काढेमें हलदी, सहत डालके सर्व प्रमेहोंपर देवे ॥

पलाशपुष्पक्वाथ ।

पलाशतरुपुष्पाणां क्वाथः शर्करया युतः ।
निषेवितः प्रमेहाणि हंति नानाविधान्यपि ॥

अर्थ-पलासपुष्प (केसूलाके फूलों) का काढा मिश्री मिलायके पीवे तो अनेक प्रकारके प्रमेह दूर हों ॥

प्रमेहनाशक योगत्रय ।

धात्र्याः कषायं मधुरात्रियुक्तं वटांकुराणां समधुं कषायम् ।
पाषाणभेदं मधुमिश्रमेतत्त्रयं प्रमेहापहमामनंति ॥

अर्थ--आवलोंका काढा करके उसमें सहत और हलदीका चूर्ण मिलायके देवे अथवा बडके अंकुरोंका काढा कर सहत डालके पीवे अथवा पाषाणभेदके चूर्णको सहतमें मिलाकर देवे ये तीन योगोंसे प्रमेह दूर होय ॥

विडंगादि क्वाथ ।

विडंगरजनीयष्टीनागरागोक्षुरैः कृतः ।
कषायो मधुना हंति प्रमेहान् दुस्तरानपि ॥

अर्थ-वायविडंग, हलदी, मुलहठी, सोंठ, गोखरू इनका काढा कर उसमें सहत डालके पीवे तो दुस्तर प्रमेहको नाश करे ॥

प्रकारांतर ।

कुटजासनदार्व्यब्दफलत्रयभवोऽथ वा ॥

अर्थ-कूडाकी छाल, विजेसार, नागरमोथा और त्रिफला इनका काढा सर्व प्रमेहोंको नाश करे ॥

चणकयोग ।

द्विनिशात्रिफलाकल्कमातपे धारयेत्त्र्यहम् । मृद्भांडे दोलिका-यंत्रे चणकान्मुष्टिमात्रकान् ॥ अहोरात्रोषितान्खादेद्वर्धमानं दिने दिने । असाध्यं साधयेन्मेहं सिद्धयोग उदाहृतः ॥

अर्थ-हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आंवला इनके कल्कको मिट्टीके बरतनमें भरके उसको दोलायंत्र करके तीन दिन धूपमें रखे फिर एक मुट्टी चनोंको एक दिन रात्र उसमें डालकर ढांक देवे फिर उनको भक्षण करे इस प्रकार नित्य बढावे अर्थात् पहिले दिन १ मुट्टी दूसरे दिन २ और तीसरे दिन ३ इस प्रकार बढाया करे तौ असाध्य प्रमेह-को भी नाश करे यह सिद्ध योग कहा है ॥

योगचतुष्टय ।

मधुना त्रिफलाचूर्णमथं वाश्मजतूद्भवम् ।
लोहजं वा मलोत्थं वा लिह्यान्मेहनिवृत्तये ॥

अर्थ--सहतमें मिलायके त्रिफलेका चूर्ण सेवन करे अथवा सहतके साथ शिलाजीत देवे अथवा लोहकी भस्म देवे अथवा मंडूर देवे तो प्रमेह नष्ट होय ॥

शालादि कल्क ।

शालमुस्तककंपिल्लकल्कमक्षसमं पिबेत् ।
धात्रीरसेन सक्षौद्रं सर्वमेहहरं परम् ॥

अर्थ-कोहकी छाल, नागरमोथा, कबीला इनका कल्क १ तोला आंवलेका रस और सहत इन सबको मिलायके देवे तो संपूर्ण प्रमेहोंको नाश करे ॥

वंग तथा नागभस्म ।

गुडूचीरसमधुना वंगभस्म प्रमेहनुत् ।
नागभस्म तथैवापि सर्वमेहनिवारणम् ॥

अर्थ--गिलोयके रसको सहतमें मिलायके और इसमें वंगभस्म मिलायके सेवन करे तो प्रमेह नष्ट होय उसी प्रकार नाग (शीशे) की भस्म सर्व प्रमेहोंको नाश करे ॥

द्विनिशादि हिम ।

द्विनिशा त्रिफलायुक्तं रात्रौ पर्युषितं जलम् ।
प्रभाते मधुना पीतं मेहशूलं निकृंतति ॥

अर्थ–दारुहलदी, हलदी, हरड, बहेडा, आंवला इनको जवकूट कर रात्रिके समय जलमें भिगोय देवे प्रातःकाल उसको मसलकर जलको कपडेसे छान लेवे इसमें सहत मिलायके पीवे तो प्रमेहकी जडको उखाडके पटक देवे ॥

गुडूची तथा धात्रीरसयोग ।

यथामृतारसः क्षौद्रयुक्तः सर्वप्रमेहजित् ।
हरिद्राचूर्णयुक्तो वा रसो धात्र्याः समाक्षिकः ।

अर्थ–जैसे गिलोयका स्वरस सहतयुक्त सर्व प्रमेहोंको जीतनेवाला है उसी प्रकार हलदीका चूर्ण और सहत मिलायके आंवलेका स्वरस सर्व मेहहारी जानना ॥

अंकोल्यादि योग ।

अंकोलीमुकुलं धात्री हरिद्रा मधुना लिहेत् ।
विंशतिं च प्रमेहानां हंति सत्यं न संशयः ॥

अर्थ–अंकोलकी कली, आंवले, हलदी इनके चूर्णको सहतके साथ चाटे तो बीः प्रकारके प्रमेहोंको नाश करे इसमें संदेह नहीं है ॥

भूधात्र्यादि योग ।

भूधात्रीपत्रिगंधानां मरीचानां च विंशतिः ।
असाध्यान्साधयेन्मेहान् सप्तरात्रान्न संशयः ॥

अर्थ–भूयआवला, दालचीनी, इलायची, पत्रज, बीस काली मिरच इन सबको एकत्र पीसके सेवन करे तो असाध्य प्रमेहभी सात दिनमें नष्ट होय इसमें संदेह नहीं ॥

कतकबीजयोग ।

कर्षप्रमाणं कतकस्य बीजं तक्रेण पिष्ट्वा सह माक्षिकेन ।
प्रमेहजालं विनिहंति सद्यो रामो यथा रावणमाजघान ॥

अर्थ–निर्मलीके बीज एक तोला छाछमें पीसके उसमें सहत डालके पीवे यह प्रमेहके समुदायको तत्काल नाश करे जैसे रामने रावणको मारा ॥

शाल्मलीस्वरस ।

शाल्मलीत्वग्रसोपेतं सक्षौद्रं रजनीरजः ।
वंगभस्म हरेन्मेहान् पंचानन इव द्विपान् ॥

अर्थ-सेमरकी छालका रस, सहत और हलदीका चूर्ण तथा वंगभस्म इन सबको मिलायके खाय तो जैसे सिंहको हाथी नाश करे इस प्रकार प्रमेहोंको नाश करे ॥

एलादि चूर्ण ।

एलाशिलाजतुकणापाषाणभेदनिर्मितं चूर्णम् ।
तंदुलजलेन पीतं प्रमेहरोगं हरत्याशु ॥

अर्थ-इलायची, शिलाजीत, पीपल, पाषाणभेद इनके चूर्णको चावलोंके धोवनके साथ पीवे तो प्रमेहको तत्काल नाश करे ॥

कर्कट्यादि चूर्ण ।

कर्कटीबीजसिंधूत्थत्रिफलासमभागिकम् ।
पीतमुष्णांभसा चूर्णं मूत्ररोधं निवारयेत् ॥

अर्थ--ककडीके बीज, हरड, बहेडा, आंवला इनका चूर्ण, सैंधानिमक ये सब समान भाग ले कूट गरम जलमें मिलायके पीवे तो मूत्ररोधको निवारण करे ॥

त्रिफलाचूर्ण ।

एका हरीतकी योज्या द्वौ च योज्यौ बिभीतकौ । चत्वार्यामलकान्येव त्रिफलैषा प्रकीर्तिता ॥ त्रिफला शोथमेहघ्नी नाशयेद्विषमज्वरान् । दीपनी श्लेष्मपित्तघ्नी कुष्ठहंत्री रसायनी ॥ सर्पिर्मधुभ्यां संयुक्ता सेव्या नेत्रामयाञ्जयेत् ॥

अर्थ-हरड, बेहडा, आंवला इन तीन औषधोंका चूर्ण करे तहां एक हरड, २ बहेडे और तीन आंवले मिलानेसे त्रिफला होता है इसके सेवन करनेसे प्रमेह और सूजन तथा विषमज्वर, कफ तथा पित्त और कुष्ठ ये दूर हों, अग्नि प्रदीप्त हो, यह त्रिफला रसायन है तथा घी और सहतको एकत्र कर उसमें त्रिफलेका चूर्ण मिलायके सेवन करे तो नेत्रके संपूर्ण रोग दूर होवें ॥

गुग्गुलु ।

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं गुग्गुलुं च समांशकम् । गोक्षुरक्वाथसंयुक्तां वटिकां कारयेद्बुधः ॥ देशकालबलापेक्षी भक्षयेच्चानुलोमिकाम् । न चात्र परिहारोऽस्ति कर्म कुर्याद्यथेप्सितम् ॥ प्रमेहा-

न्वातरोगांश्च वातशोणितमेव च । मूत्राघातं मूत्रदोषं प्रदरं चापि नाशयेत् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा और गूगल ये समान भाग ले गोखरूके काढेमें गोली बनाय देश, काल, बलको विचार भक्षण करे. यह अनुलोमक है, पर पथ्य नहीं है, यथेच्छ कर्म करे. प्रमेह, वातरोग, वातरक्त, मूत्राघात मूत्रदोष, प्रदर इनको नाश करे ॥

गोक्षुरादि गुग्गुल ।

अष्टाविंशतिसंख्यानि पलान्यानीय गोक्षुरान् । विपचेत्षड्गुणे नीरे क्वाथो ग्राह्योऽर्द्धशेषितः॥ ततः पुनः पचेत्तत्र पुरं सप्तपलं क्षिपेत् । गुडपाकसमाकारं ज्ञात्वा तत्र विनिक्षिपेत् ॥ त्रिकटु-त्रिफला मुस्तं चूर्णितं पलसप्तकम् । ततः पिंडीकृतं चास्य गुटि-कामुपयोजयेत् ॥ हन्यात्प्रमेहं कृच्छ्रं च प्रदरं मूत्रघातकम् । वातास्रं वातरोगांश्च शुक्रदोषं तथाश्मरीम् ॥

अर्थ—गोखरू २८ पलको जौकुट कर छः गुने जलमें डालके औटावे जब आधा जल शेष रहे तब उतारके छानले. फिर इसमें शुद्ध करी हुई गूगल ७ पल डालके औटावे जब गुडपाकके समान गाढी हो जावे तब इसमें सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला और नागरमोथा ये सात औषध एक २ पल ले. सबका चूर्ण करके उस पाकमें मिलाय देवे. फिर एक पिंड करके खरलमें कूट एक जीव करके गोली बनाय लेवे. इसको सेवन करे तो प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, प्रदररोग और मूत्राघात, वात-रक्त, वादीके रोग, धातुका विकार और पथरीरोग इन सबको दूर करे ॥

चंद्रकलावटी ।

एलासकर्पूरशिला सधात्री जातीफलं गोक्षुरशाल्मली च । सू-तेंद्रवंगायसभस्म सर्वमेतत्समानं परिभावयेच्च ॥ गुडूचिकाशा-ल्मलिकाकषायैर्निष्कार्धमाना मधुना ततश्च । बद्धा वटी चंद्र-कलेति संज्ञा सर्वप्रमेहेषु नियोजयेत्ताम् ॥

अर्थ—इलायची, भीमसेनी कपूर, शिलाजीत, आंवले, जायफल, गोखरू, मोच-रस, पारा, वंगभस्म और लोहेकी भस्म सब समान भाग लेवे. सबको गिलोय और

सेमरके काढेकी भावना देकर दो २ मासेकी गोली बनावे. इसको सहतके साथ सर्व प्रमेहों पर देवे, इसको चंद्रकलावटी कहते हैं ॥

चंद्रप्रभावटी ।

वेल्लव्योषफलत्रिकं त्रिलवणं द्विक्षारचव्यानलश्यामापिप्पलीमूलमुस्तकसठीमाक्षीकधातुत्वचः । षड्ग्रंथामरदारुवारणकणाभूनिंबदंतीनिशापत्रैलातिविषापिचुप्रतिमिता लोहस्य कर्षाष्टकम् ॥ त्वक्क्षीरीपलिकापुराद्दशपलान्यष्टौ शिलाजन्मनो मानात्कर्षसमाकृतेति गुटिका संयोज्य सर्वं भिषक् । तत्रैव प्रतिवासरे सहघृतं क्षौद्रेण लिह्यादिमां तक्रं मस्तु च गोघृतं मधुरसं पश्चात्पिबेन्मात्रया ॥ अर्शांसि प्रदरं ज्वरं च विषमं नाडीव्रणानश्मरीं कृच्छ्रं विद्रधिमग्निमांद्यमुदरं पांड्वामयं कामलाम् । यक्ष्माणं सभगंदरं सपिटिकां गुल्मप्रमेहारुची रेतोदोषमुरःक्षतं कफमरुत्पित्तार्तिमुग्रां जयेत् ॥ वृद्धं संजनयेयुवानमसमोजस्कं बलं वर्धयेदेतस्मान्न निषिद्धमन्नमसकृन्नाध्वागमो मैथुनम् । विख्याता गुटिकेयमंचतितरां चंद्रप्रभानामतो सांद्रानंदकरी तनोति च रुचिं चंद्रेण तुल्यां तनौ ॥

अर्थ—काली मिरच, त्रिकुटा, त्रिफला, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, सेंधानिमक, काला निमक और कचियानिमक, चव्य, चित्रक, सारिवा, पीपरामूल, नागरमोथा, कचूर, सुवर्णमाक्षिक, दालचीनी, वच, देवदारु, गजपीपल, चिरायता, दंती, हलदी, पत्रज, इलायची, अतीस ये सब एक एक तोला लेवे तथा लोहभस्म ८ तोले, वंशलोचन ४ ताल, गूगल शुद्ध ४० तोले, शिलाजीत ३२ तोले इन सबको एकत्र कर दश २ मासेकी गोली बनावे. इसको सहत और घी इनमें मिलायके नित्य सेवन करे. ऊपरसे छाछ, दहीका जल अथवा गौका घी सेवन करे तो बवासीर, प्रदर, ज्वर, विषमज्वर, नाडीव्रण, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, विद्रधि, मंदाग्नि, उदर, पांडुरोग, कामला क्षयरोग, भगंदर, पिडिका, गोला, प्रमेह, अरुचि, शुक्रदोष, उरःक्षत, कफ, वात, पित्त इनको नाश करे. तथा वृद्धको तरुण करे और बलवान् करे. इस पर अन्नका निषेध नहीं है तथा मार्ग चलना, मैथुन करना वर्जित है. यह चंद्रप्रभा गुटिका सर्वत्र प्रसिद्ध है तथा आनंद करनेवाली, कांति देनेवाली और चंद्रमाके समान तेज देनेवाली है ॥

सिंहामृतघृत।

कंटकार्या गुडूच्याश्च संहरेच्च शतं शतम्। संकुट्योलूखले विद्वांश्चतुर्द्रोणेंभसः पचेत्॥ तच्च पादावशेषेण घृतप्रस्थं विपाचयेत्। त्रिकटुत्रिफलारास्नाविडंगान्यथ चित्रकम्॥ काश्मर्याणां च मूलानि पूतिकस्य त्वगस्य च। कुट्टयेच्चापि सर्वाणि श्लक्ष्णपिष्टानि कारयेत॥ अस्य मात्रां पिबेत्प्राज्ञः शालिभिः पयसा प्लुतैः।प्रमेहं मधुमेहं च मूत्रकृच्छ्रं भगंदरम्॥आलस्यं चांत्रवृद्धिं च कुष्ठरोगं विशेषतः। क्षयं चापि निहंत्येतन्नामसिंहामृतं घृतम्॥

अर्थ–केटेरी १०० तोलेको जलमें डालके औटावे. जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे. उसमें ६४ तोले घी और त्रिकुटा, त्रिफला, रास्ना, वायविडंग, चित्रक, कंभारीकी जड, कंजेकी जड और छाल इनको बारीक कूटके चूर्ण करे. इसको उसी काढेके जलमें डाल देवे. फिर मंदाग्निसे घृत सिद्ध करे. फिर इसको बलाबल विचार दूध भातके साथ भोजन करे तो प्रमेह, मधुमेह, मूत्रकृच्छ्र, भगंदर, आलस्य, अंत्रवृद्धि, विशेष करके कुष्ठरोग, क्षय इनका नाश करे, इसको सिंहामृत घृत कहते हैं॥

हरिद्रादि तैल।

निशारसं चतुःप्रस्थं द्विप्रस्थक्षीरसंयुतम्। कुष्ठाश्वगंधालशुननिशापिप्पलिकल्कितम्॥ विपक्कं तिलजप्रस्थं मेहानां विंशतिं जयेत्। एतन्मध्ये कार्पासास्थिबीजमाकूलीमूलत्वक्॥ तत्पुष्पं केतकीबीजं हरीतकी एतेषां चतुर्गुणं जलं दत्त्वा पादांशं कषायं मेलयित्वा केतकीस्वरसे मेलयित्वा पाकं ज्ञात्वावतारयेत्॥ तस्य मात्रा कर्षप्रमाण॥

अर्थ–हलदीका काढा २५६ तोले, दूध १२८ तोले, कूठ, असगंध, लहसन, हलदी, पीपल इनका कल्क, तिलका तेल६४तोले सबको मिलायके मंदाग्निसे परिपक्क करे और इसमें कपासके बीज (बिनोले) की गिरि, अंकोलके जडकी छाल और आकुलीके फूल, निर्मलीके बीज, हरड इन सब औषधोंसे चौगुना जल डालके काढा करे फिर इस काढेको और निर्मलीके रसको उसमें मिलायके फिर उस तेलको पक्क करे. इसमेंसे १ तोलेको सेवन करे तो वीस प्रकारके प्रमेहोंको नाश करे॥

सुपारीपाक।

हेमांभोधरचंदनं त्रिकटुकं धात्री प्रियाला कुहूलज्जालुस्त्रिसुगंधि जीरकयुगं शृंगाटकं वंशजम् । जातीकोशलवंगधान्यबहुलां प्रत्येकमक्षोन्मितां पूगस्याष्टपलं विचूर्ण्य च पयःप्रस्थत्रये संपचेत् ॥ गोसर्पिः कुडवं सितार्धकतुला धात्रीवरीद्व्यंजली मंदाग्नौ विपचेद्भिषक् शुभदिने सुस्निग्धभांडे क्षिपेत् । तं खादेत्तु यथाग्नि वासरमुखे मेहांश्च जीर्णज्वरं पित्तं साम्लमसृक्स्रुतिं च गुदजान्वक्राक्षिनासासु च ॥ मंदाग्निं च विजित्य पुष्टिमतुलां कुर्याच्च शुक्रप्रदो योगो गर्भकरस्तथामहरणः स्त्रीणामसृग्दोषजित् ॥

अर्थ-नागकेशर, नागरमोथा चंदन, त्रिकुटा, आंवला, चिरोंजी, कोकिलाक्ष, लजालू, दालचीनी, इलायची, पत्रज, काला जीरा, सिंघाडे, वंशलोचन, जावित्री, लौंग, धनिया ये प्रत्येक एक २ तोला, दक्षिणी सुपारी ३२ तोले, इस प्रकार सबको लेकर चूर्ण कर लेवे फिर ९६ तोले दूधमें डालके औटावे और गौका घी १६ तोले डाल जब खोहा हो जावे तब २०० तोले मिश्रीकी चासनी करके उसमें खोहेको मिलाय दे और आंवले १६ तोले, शतावर १६ तोले ले चूर्ण करके उसमें डालके पाक बनाय ले फिर शुभ दिन देखके चिकने बासनमें भर देवे. शक्तिप्रमाण प्रातःकाल सेवन करे तो प्रमेह, जीर्णज्वर, अम्लपित्त, रक्तस्राव, बवासीर, मंदाग्नि इनको नाश करे और पुष्टि, वीर्य, गर्भ इनको देवे, मदनाशक स्त्रियोंके रक्तदोषको दूर करे है ॥

असगंधपाक।

पलान्यष्टावश्वगंधां विपाच्य गोदुग्धे षट्शेरके मंदवह्नौ । दर्वीलेपो यावदास्ते सुपक्वश्चातुर्जातं क्षिप्य कर्षप्रमाणम् ॥ जातीजातं केशरं वंशसत्वं मोचं मांसी चंदनं कृष्णसारम् । पत्री कृष्णापिप्पली मूलदेवपुष्पं कंकोल्लाविकाक्षोटसारम् ॥ भल्लीबीजं शृंगटं गोक्षुराख्यं सिंदूराभ्रं नागवंगं च लोहम् । कर्षार्धार्धं सर्वचूर्णं प्रकल्प्य संशोष्याथो शर्करापक्वपाके ॥ पक्त्वा शीतं कारयेदश्वगंधापाकश्चायं हंति मेहानशेषान् । ज्वरं जीर्णं शोषगुल्मान्वि-

कारात्पैत्तान्वातान् शुक्रवृद्धिं करोति ॥ पुष्टिं दद्यादग्निसंदीपनोयं कांतिं कुर्यात्सौमनस्यं नराणाम् ॥

अर्थ—असगंध ३२ तोले, गौका दूध ६ सेर, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, प्रत्येक तोला २ लेवे. जायफल, केशर, वंशलोचन, मोचरस, जटामांसी, चंदन, लाल चंदन, जावित्री, पीपल, पीपरामूल, लौंग, कंकोल, मेढासिंगी, अखरोटकी छाल, भिलाये, सिंघाडे, गोखरू, रससिंदूर, अभ्रकभस्म, वंगभस्म, लोहभस्म ये सब तीन २ मासे डालके मंदाग्निसे पक्क करके कजली जमायले. इसको बलाबल विचारके सेवन करे तो सर्व प्रमेह, जीर्णज्वर, शोष, गोला, पित्तरोग, वादीके रोग इनको नाश करे तथा शुक्रवृद्धि, पुष्टि, अग्निदीप्ति, कांति, अंतःकरणकी प्रसन्नता इनको करे ॥

शाल्मलीपाक ।

क्षीरद्रोणयुते सशाल्कुडवं मंदाग्निना पाचितं यावत्पाकमुपाव्रजेत्परिहितं प्रस्थं गुडं निक्षिपेत् । चातुर्जातलवंगजातिफलकैर्मुस्तातुगाधान्यकैः शुंठीमागधिकोषणाश्वमभयालोहैश्च मिश्रीकृतम् ॥ हृद्रोगक्षयशोषमारुतगदान्हिक्कामसृक्शोषणं विंशन्मेहशिरोविकारशमनो रोगानशेषाञ्जयेत् ॥

अर्थ—दूध १०२४ तोले, कोहवृक्षकी छालको चूर्ण १६ तोले दोनोंको एकत्र कर मंदाग्नि पर पक्क करे फिर उसमें ६४ तोले गुड और दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, लौंग, जायफल, नागरमोथा, वंशलोचन, धनियां, सोंठ, मिरच, पीपल, असगंध, हरड, लोहकी भस्म, ये सब उसमें मिलायके सेवन करे तो हृदयरोग, क्षय, शोष, वातरोग, हिचकी, रुधिरशोष, बीस प्रकारकी प्रमेह, शिरोविकार इत्यादि सर्व रोगोंको नष्ट करे ॥

द्राक्षापाक ।

द्राक्षा दुग्धसिता पृथक् परिमिता प्रस्थेन संपाचिता युक्त्या वैद्यवरेण चूर्णमधुना देयं पलार्धं पृथक् । चातुर्जातकटुत्रयं मृगमदं लोहाभ्रकं केशरं पत्री जातिफलं मृगांकरजतं कुस्तुंबरी चंदनम् ॥ सम्यक् जातरसं प्रभातसमये सेव्यं द्विकर्षोन्मितं स्निग्धं शुक्रकरं प्रमेहशमनं पित्तामयध्वंसनम् । मूत्राघातवि-

बंधकृच्छ्रशमनं रक्तार्तिनेत्रार्तिहृत्पादे पाणितले विदाहशमनं सौख्यप्रदं प्राणिनाम् ॥

अर्थ-दाख, दूध, मिश्री प्रत्येक ६४ तोले सबको एकत्र करके पक्व करे फिर इसमें दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, त्रिकुटा, कस्तूरी, लोहेकी भस्म, अभ्रकभस्म, केशर, जावित्री, जायफल, कपूर, रूपेकी भस्म, धनिया, चन्दन ये प्रत्येक दो २ तोले ले चूर्ण करके विधिपूर्वक पक्व करे जब तैयार हो जावे तब प्रातःकाल इसमेंसे २ तोले नित्य सेवन करे यह स्निग्ध, वीर्यका बढानेवाला, प्रमेहको नाश करे, पित्तरोगनाशक, मूत्राघात, विडबंध, मूत्रकृच्छ्र, रक्तपीडा, नेत्रपीडा, हृदय, पैर, हाथ इनका दाह इनको नाश करे तथा यह द्राक्षादि पाक प्राणियोंको सौख्यप्रद है ॥

अभ्रकयोग ।

निश्चंद्रमभ्रकं भस्म सवराजनीरजः ।
मधुना लीढमचिरात् प्रमेहान् विनिवर्तयेत् ॥

अर्थ-उत्तम निश्चन्द्र अभ्रककी भस्म, त्रिफला, हलदी इनके चूर्णको सहत मिलायके चाटे तौ तत्काल प्रमेहको दूर करे ॥

नागभस्मयोग ।

शुद्धस्य च मृतस्याहिरजो मल्लमितं लिहेत् ।
सनिशामलकाक्षौद्रं सर्वमेहप्रशांतये ॥

अर्थ-उत्तम शीशेकी भस्म दो रत्ती, हलदी, आंवले और सहत इनके साथ सेवन करे तौ सर्व प्रमेह शान्ति होवे ॥

गंधकयोग ।

गंधकं गुडसंयुक्तं कर्षं भुक्त्वा पयः पिबेत् ।
विंशतिस्तेन नश्यंति प्रमेहाः पिटिका अपि ॥

अर्थ-गंधकको गुडमें मिलायके १ तोला सेवन करे और ऊपरसे दूध पीवे तो बीस प्रकारके प्रमेह और पिटिका नाश होवें ॥

शिलाजतुयोग ।

शिलाजतुरजः पीत्वा प्रातः क्षीरसितायुतम् ।
मुच्यते सर्वमेहेभ्योस्त्रिःसप्तदिवसैर्नरः ॥

अर्थ-शीलाजीतके चूर्णको प्रातःकाल दूध और मिश्रीके साथ पीवे तो २१ दिनमें सर्व प्रमेह दूर हों ॥

स्वर्णमाक्षिकभस्मयोग ।

माक्षिकं मधुना लीढं मेहं हरति सर्वथा ।
गुडूचीसत्वसंयुक्तं पित्तमेहं व्यपोहति ॥

अर्थ—सुवर्णमाक्षिककी भस्म सहतके साथ चाटे तो संपूर्ण प्रमेहोंको हरण करे तथा गिलोयके सत्त्वके साथ माक्षिकभस्म खाय तो पित्तके प्रमेहोंको नाश करे ॥

बहुमूत्रमेहका निदान ।

कार्श्यं स्वेदोऽगगंधः करपदरसनानेत्रकर्णोपदाहः कासः शैथील्यमंगेऽरुचिरपि पिटका कंठताल्वोष्ठशोषः । दाहः शीतप्रियत्वं धवलिमतनुता श्रांतता पीतमूत्रं मूत्रस्था मक्षिकाद्याश्चिरमपि बहुमूत्राख्यरोगं प्रवृद्धे ॥

अर्थ—कृशता, पसीना, देहसे बदबू आना, हाथ, पांव, जीभ, आंख, कान इनका दाह होना, शरीर शिथिल होना, अरुचि, पिटिका, कंठ, तालु, ओंठ इनमें शोष और दाह, थंडे पदार्थकी इच्छा, पांडुरता, अतिकृशत्व, थक जाना, मूत पीला होना और जहां मूते वहां मक्खियों और चींटियोंका आजाना ये लक्षण बहुमूत्ररोगके बढने पर होते हैं ॥

दूसरा प्रकार ।

स्वेदोऽगगंधः शीथिलत्वमंगे शय्यासनस्वप्नसुखाभिलाषः । हृन्नेत्रजिह्वाश्रवणोपदाहो घनांगता केशनखातिवृद्धिः ॥ शीतप्रियत्वं गलतालुशोषो माधुर्यमास्ये करपाददाहः । भविष्यतो मेहगणस्य लिंगं मूत्रेभिधावन्ति पिपीलिकाश्च ॥ तृष्णा प्रमेहं मधुरं सपिच्छं मधूपमं स्याद्द्विविधो विकारः । संपूरणा वा कफसंभवा स्यात्क्षीणेषु दोषेष्वनिलात्मकेन ॥ संपूर्णरूपाः कफपित्त मेहाः क्रमेण ये वातकृताश्च मेहाः । साध्या न ते पित्तकृतास्तु याप्याः साध्यस्तु मेहो यदि नातिदुष्टः ॥

अर्थ—पसीना, अंगसे बदबू आना, शरीर शिथिल होना, सेज आसन और निद्राके सुखकी इच्छा, हृदय, नेत्र, जिह्वा, कान इनका दाह, अंग जड होना, केश और नखकी वृद्धि, थंडे पदार्थोंकी चाह, कंठ और तालुमें शोष, मुँह मीठा, हाथ और पांवका दाह मूतकी ओर चींटियां या मक्खियोंका आजाना, प्यास, मूत मीठा, चिकना और सहतकी

समान, अनेक प्रकारके उपद्रव, दोषके क्षीण होने पर कफकी प्राबल्य ये लक्षण होते हैं, न बढा हुआ कफमेह साध्य है, पित्तमेह याप्य है, वातमेह असाध्य है ॥

त्रिफलादियोग।

त्रिफलावेणुपत्राब्दपाठामधुयुतैः कृताः।
कुंभयोनिरिवांभोधिं बहुमूत्रं तु शोषयेत् ॥

अर्थ-त्रिफला, बांसके पत्ते, नागरमोथा, पाढकी जड इनके काढेमें सहत डालके पिलावे तो अगस्त्यऋषिने जैसे समुद्रको शोष लिया उसी प्रकार यह बहुमूत्रको शोष करे ॥

देवदार्व्यारिष्ट ।

तुलार्धं देवदारु स्याद्वासा च पलविंशतिः । मंजिष्ठेंद्रयवा दंती तगरं रजनीद्वयम् ॥ रास्ना क्रमिघ्नं मुस्तं च शिरीषं खदिरार्जुनौ । भागान्दशपलान् दद्याद्यवान्या वत्सकस्य च ॥ चंदनस्य गुडूच्याश्च रोहिण्याश्चित्रकस्य च । भागानष्टपलानेतानष्टद्रोणेऽम्भसः पचेत् ॥ द्रोणशेषे कषाये च पूते शीते प्रदापयेत् । धातक्याः षोडशपलं माक्षिकस्य तुलात्रयम् ॥ व्योषस्य द्विपलं दद्यात् त्रिजातं च चतुःपलम् । चतुःपलं प्रियंगुश्च द्विपलं नागकेशरम् ॥ सर्वाण्येतानि संचूर्ण्य घृतभांडे विधारयेत् । मासादूर्द्ध्वं पिबेदेनं प्रमेहं हंति दुर्जयम् ॥ वातरोगान् ग्रहण्यर्शो मूत्रकृच्छ्राणि नाशयेत् । देवदार्व्यादिकोऽरिष्टः कंडूकुष्ठविनाशनः ॥

अर्थ-देवदारु आधे तुलाप्रमाण, अडूसा २० पल, मँजीठ, इन्द्रजौ, दंतीकी जड, तगर, हलदी, दारुहलदी, रास्ना, वायविडंग, नागरमोथा, शिरस, कत्थेकी छाल, कोह वृक्षकी छाल ये बारह औषध दश २ पल लेवे. अजमोद, कूडाकी छाल, सफेद चंदन, गिलोय, कुटकी, चित्रक ये छः औषध आठ २ पल लेवे. फिर इन सब औषधोंको थोडी कूट आठ द्रोण जलमें डालके औटावे. जब १ द्रोण जल शेष रहे तब उतारके छान लेवे जब शीतल हो जावे तब इतनी औषधी और डाले. धायके फूल १६ पल और सहत ३ तुला तथा सोंठ, मिरच, पीपल इन तीनोंको २ पल मिलायके और दालचीनी, इलायची, पत्रज ये तीन औषध चार पल

लेय, फूल प्रियंगु ४ पल तथा नागकेशर दो पल इन सब औषधोंको चूर्ण करके उस काढेके जलमें डाल देवे तथा सहत कहे हुए प्रमाणसे डाल सबको एकत्र करे और घीके चिकने बासनमें भरके उसके मुख पर मुद्रा देकर एक महीने पर्यंत धरा रहने दे. फिर मुद्राको दूर करके इसको निकाले इसे देवदार्व्यारिष्ट कहते हैं. यह अरिष्ट पीवे तो घोर दुर्घट प्रमेह दूर हो तथा वादीका रोग, बवासीर, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, खुजली, कोढ ये सब रोग दूर हों ॥

लोध्रासव ।

लोध्रं शठी पुष्करमूलमेलां मूर्वा विडंगं त्रिफला यवानि । चव्यं प्रियंगुं क्रमुकं विशालां किराततिक्तं कटुरोहिणीं च ॥ भंडीनतं चित्रकपिप्पलीनां मूलं सकुष्ठातिविषां सपाठाम् । कालिंगकाके सरमिंद्रसाह्वं नखं सपत्रं मरिचं प्लवं च ॥ द्रोणेऽम्भसः कर्षसमानि पक्त्वा पूते चतुर्भागजलावशेषे । रसेन भागो मधुनः प्रदाय पक्षं विधेयो घृतभाजनेऽच्छे ॥ लोध्रासवोयं कफपित्तमेहान्क्षिप्रं निहन्याद्द्विपलप्रयोगात् पांड्वामयार्शांस्यरुचिं ग्रहण्यां शेषं किलासं विविधं च कुष्ठम् ॥

अर्थ–लोध, कचूर, पुहकरमूल, इलायची, मूर्वा, वायविडंग, त्रिफला, अजमायन, चव्य, प्रियंगु, सुपारी, इन्द्रायनकी जड, चिरायता, कुटकी, निसोथ, तगर, चित्रक, पीपरामूल, कूठ, अतीस, पाढ, काकडासिंगी, नागकेशर, इन्द्रजौ, नख (सुगंधद्रव्य), पत्रज, मिरच, भद्रमोथा ये प्रत्येक एक २ तोला लेवे सबको कूट १०२४ तोले जलमें डालके औटावे जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे फिर इस काढेके बराबर सहत डालके चिकने बासनमें भरके १५ दिनतक मुख मूंदकर धर देवे पश्चात् इसमेंसे निकाल ६ तोलेके प्रमाण सेवन करे तो कफ, पित्त, प्रमेह, पांडु, बवासीर, संग्रहणी, अरुचि, किलास, कुष्ठ, अन्यकुष्ठ इनको शीघ्र नाश करे. इसको लोध्रासव कहते हैं ॥

तालकेश्वररस ।

मृतं सूतं मृतं वंगं मृतं लोहाभ्रकं समम् । मर्दयेन्मधुना सार्धं रसोयं तालकेश्वरः ॥ माषैकं भक्षयेत्क्षौद्रे बहुमूत्रापनुत्तये ॥

अर्थ–पारेकी भस्म, वंगभस्म, लोहभस्म अभ्रकभस्म ये समान ले सहतसे खरल करे इसको तालकेश्वररस कहते हैं. इसको बहुमूत्रके नाश करनेके वास्ते १ मासे भर सहतमें मिलायके खाय ॥

वंगेश्वररस।

शुद्धसूतं समं गंधं वंगं च द्विगुणं भवेत् । एकत्र मर्दयेत्सर्वं व-ल्लमेकं प्रमेहिणाम् ॥ शर्करामधुसंयुक्तं पथ्यं च क्षारवर्जितम् । एष वंगेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृंतनः ॥

अर्थ-पारा १, गंधक १, वंगभस्म २ भाग इस प्रकार लेकर एकत्र खरल कर १ वल्ल सहत और मिश्रीके साथ प्रमेहवाला खाय इस पर खारी पदार्थ खाना निषेध है, इसको वंगेश्वररस कहते हैं यह सर्व प्रमेहोंको नष्ट करता है ॥

आनंदभैरवरस ।

विषोषणकणाटंकहिंगुलैः समचूर्णिकः ।
आनंदभैरवस्यास्य गुंजातीसारमेहनुत् ॥

अर्थ-विषसिंगिया, काली मिरच, पीपल, सुहागा, हिंगूल ये समान भाग ले एकत्र चूर्ण करे इसको आनंदभैरवरस कहते हैं. १ रत्ती सेवन करनेसे प्रमेह और अतिसारको नाश करे ॥

प्रमेहबद्धरस ।

भस्मसूतं मृतं कांतं मुंडभस्म शिलाजतु । तुथ्यं ताप्यं शिला व्योषं त्रिफलां कोलबीजकम् ॥ कपित्थं रजनीचूर्णं भृंगराजेन भावयेत् । विंशद्वारं विशोष्याथ मधुयुक्तं लिहेत्सदा ॥ निष्क-मात्रं हरेन्मेहान्मेहबद्धरसो महान् । महानिंबस्य बीजानि पिष्ट्वा षट्संमितानि च ॥ पलं तंदुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च । एकी-कृत्य पिबेच्चानुहंति मेहं चिरंतनम् ॥

अर्थ-पारेकी भस्म, कांतलोहकी भस्म, लोह भस्म, शुद्ध शिलाजीत, सुवर्णमाक्षिक भस्म, मनशिल, सोंठ मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, कंकोलके बीज, कैथका फल और हलदी ये पंदरह औषध समान भाग ले भस्मसे पृथक् जो औषध हैं उनका चूर्ण करके भस्म और चूर्णको एकत्र मिलाय लेवे. फिर भांगरेके रसकी बीस पुट देवे. इसको प्रमेहबद्धरस कहते हैं. यह रस १ निष्क ले सहतमें मिलाय सेवन करे तो घोर प्रमेहोंको दूर करे तथा बकायनके बीज नग ६ का चूर्ण करके और चावलोंका धोवन १ पल लेवे. इसमें पूर्वोक्त चूर्ण और दो निष्क घी मिलाय इसमें यह मेहबद्धरसायन मिलायके सेवन करे तो बहुत दिनकीभी प्रमेह दूर होय ॥

हरिशंकररस ।

सूताभ्रमामलजलैः सप्तवारं विभावयेत् ।
हरिशंकरसंज्ञः स्याद्रसः सर्वप्रमेहनुत् ॥

अर्थ–पारेकी भस्म, अभ्रकभस्म इन दोनोंको आवलेंके रसमें खरल करके सात भावना देवे तो यह हरिशंकररस सिद्ध होय. यह सर्व प्रमेहनाशक है ॥

मेघनादरस ।

सूतं कांतं गंधतीक्ष्णं ताप्यं व्योषं फलत्रिकम् । शिलाजतु शिलां कोलबीजं रात्रि कपित्थकम् ॥ त्रिःसप्तकृत्वा भृंगाद्रि-र्भावयेन्निष्कमानकम् । मधुना मेघनादोऽयं सर्वमेहान्विनाशयेत् ॥

अर्थ–पारेकी भस्म, कांतलोहकी भस्म, गंधक, तीक्ष्णलोहकी भस्म, सुवर्ण माक्षि-कभस्म, त्रिकुटा, त्रिफला, शिलाजीत, मंनसिल, अंकोलके बीज, हलदी, कैथ ये औषध समान भाग ले चूर्ण करे फिर भांगके काढेकी २१ वार खरल कर भावना देवे, फिर तीन मासे इस रसको सहतमें मिलायके सेवन करे तो यह मेघनादरस संपूर्ण प्रमेहोंको नाश करे ॥

निंबबीजकल्क ।

महानिंबस्य बीजानि पेषयेत्तंदुलांबुना ।
सघृतान्यचिराद्धन्युः पानान्मेहांश्चिरोत्थितान् ॥

अर्थ--वकायनके फलोंको चावलोंके धोवनसे पीस घी मिलाय सेवन करे तो तत्काल ।चिरकालके प्रमेहोंको नाश करे ॥

मेहारिरस ।

वंगभस्म मृतं सूतं तुल्यं क्षौद्रे विमर्दयेत् ।
द्विगुंजं लेहयेन्नित्यं हंति मेहान् चिरंतनान् ॥

अर्थ--वंगभस्म, पारेकी भस्म समान भाग लेवे सहतमें खरल कर नित्य दो रत्ती चाटा करे तो बहुत दिनकी प्रमेह नष्ट होय ॥

चंद्रोदयरस ।

अभ्रकं गंधकं सूतं वंगभस्म समांशकम् । एलां शिलाजतुं चैव रंभासारेण मर्दयेत् ॥ प्रमेहान् विंशतिं हन्यात् कामलापित्तनाशनः ॥

अर्थ-अभ्रकभस्म, गंधक, पारा, वंगभस्म, इलायची, शिलाजीत ये समान भाग ले इनको केलेके सारके साथ खरल कर खावे तो बीस प्रकारके प्रमेह, कामला, पित्त इनको नाश करे ॥

वंगेश्वररस ।

रसमेकं त्रयो वंगं वंगसाम्यं तु गंधकम् । मर्दयेद्दिनमेकं तु कुमार्याः स्वरसे बुधः ॥ संस्थाप्य गोळकं भांडे रोधयेत्तु दृढं सुखम् । पाचयेद्वालुकायंत्रे दिनमेकं दृढाग्निना ॥ स्वांगशीतलमादाय संपूज्य द्विजदेवताः। पिप्पलीमधुना युक्तं सर्वमेहेषु योजयेत् ॥ क्षीरान्नं योजयेत्पथ्यमनल्पक्षारवर्जितम् । रसो वंगेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृंतनः ॥

अर्थ-पारा १ भाग, वंग ३ भाग, गंधक ३ भाग इनको घीगुवारके रसमें खरल करके किसी हांडीमें अथवा शीशीमें भर मुखको बंद कर वालुकायंत्रमें एक दिन उत्तम अग्नि देवे. जब परिपक्व हो जावे तब शीतल होने पर रसको निकाल ले और देव ब्राह्मणका पूजन कर सहत पीपलके साथ सर्व प्रमेहों पर देवे. दूधभातका पथ्य है, खटाई और निमक न खाय, इसको वंगेश्वररस कहते हैं यह सर्व प्रमेह नाशक है ॥

मेहकुंजरकेसरी रस ।

रसगंधायसाभ्राणि नागवंगौ सुवर्णकम् । वज्रकं मौक्तिकं सर्वमेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥ शतावरीरसेनैव गोलकं शुष्कमातपे । बद्धा शुष्कं तमुद्धृत्य शरावे सुदृढे क्षिपेत् ॥ संधिलेपं मृदा कुर्याद्गर्तायां गोमयाग्निना । पुटेद्यावच्चतुर्यामिमुद्धृत्य स्वांगशीतलम् ॥ श्लक्ष्णं खल्वे विनिःक्षिप्य गोलं तं मर्दयेद्दृढम् । देवब्राह्मणपूजां च कृत्वा धृत्वा च कूपिकाम् ॥ खादेद्वल्लद्वयं प्रातः शीतं चानुपिबेज्जलम् ॥ अष्टादशप्रमेहांश्च जयेन्मासप्रयोगतः ॥ तुष्टिं तेजो बलं वर्णं शुक्रवृद्धिं च दारुणम् । अग्नेर्बलं वितनुते मेहकुंजरकेसरी ॥ दिव्यं रसायनं श्रेष्ठं नात्र कार्या विचारणा ॥

अर्थ–पारा, गंधक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, शीशेकी भस्म, वंगभस्म, सुवर्णभस्म, हीरेकी भस्म, मोतीकी भस्म सबको एकत्र कर शतावरके रसमें खरल करे फिर धूपमें सुखाय सरावमें रख दूसरे सरावसे ढक कपडमिट्टी कर देवे. फिर एक गढ्ढेमें आरने उपलोंको भर बीचमें इस संपुटको रख देवे. इसमें चार प्रहरकी अग्नि देवे, जब शीतल हो जावे तब निकाल खरल करके बारीक छान लेवे देव, ब्राह्मण, अतिथी इनको पूजन कर शीशीमें भरके रख देवे. इसमेंसे नित्य प्रातःकाल ४ रत्ती खाय ऊपरसे शीतल जल पीवे. इस प्रकार एक महीना भर करे तो अठारह प्रकारके प्रमेहोंको जीते तथा तुष्टि, तेज बल, वर्ण, शुक्रवृद्धि, अग्निवृद्धिको करे, इसको मेहकुंजर केसरीरस कहते हैं. यह बडी भारी रसायन है इसमें संदेह नहीं ॥

पंचलोहरसायन ।

मृताभ्रं कांतलोहं च नागवंगौ विशोधितौ । यथोत्तरं भागवृद्ध्या खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥ तलपोटेन वाराह्या शतावर्या हिमांबुना । भावनात्र प्रकर्तव्या यामं यामं पृथक् पृथक् ॥ चणमात्रां वटीं कृत्वा नवनीतेन सेवयेत् । प्रातरुत्थाय विधिना सर्वमेहकुलांतकः ॥ शाल्यन्नं सपटोलं च तंदुलीयकवास्तुकम् । मत्स्याक्षीमुद्गयूषं च अपक्कं कदलीफलम् ॥ अर्शांसि ग्रहणीदोषमूत्रकृच्छ्राश्मरीप्रणुत् । कामलापांडुशोफं च अपस्मारं क्षतक्षयान् ॥ रक्तकासविनाशाय पंचलोहरसायनम् ॥

अर्थ–अभ्रकभस्म, कांतलोहकी भस्म, शीशेकी भस्म, वंगभस्म ये सब भस्म १-२-३-४ भाग क्रमसे लेवे फिर ताड, नरसल, वाराहीकंद, शतावर, लाल चंदन इनका काढा करके पृथक् २ भावना एक २ प्रहर देवे और खरल करे फिर चनेके बराबर गोली बनाय लेवे. १ गोलीको मक्खनके साथ भक्षण करे तो प्रमेहको नाश करे तथा शालीका भात, परवल, चौलाई, बथुआ, मछेछी, मूंगका मंड, हरे केले ये पथ्यमें देवे तो बवासीर, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, कामला, पांडुरोग, सूजन, मृगी, क्षतक्षय, रुधिरविकार और खांसी इनके नाश करनेको यह पंचलोहरसायन उत्तम है ॥

महावंगेश्वररस ।

वंगं कांतं च गगनं हेमपुष्पं समं समम् ॥ कुमारीरसतो भाव्यं सप्तवारं भिषग्वरैः ॥ एष वंगेश्वरो नाम प्रमेहान्विंशतिं जयेत् ॥

मूत्रकृच्छ्रं सोमरोगं पांडुरोगं महाश्मरीम् ॥ रसायनवरश्रेष्ठो नागार्जुनविनिर्मितः ॥

अर्थ–वंगभस्म, कांतलोहकी भस्म, अभ्रक भस्म, पीले जपाके फूल ये सब समान भाग ले घीगुवारके रसकी सात भावना देवे तो यह वंगेश्वर नामक रस बीस प्रकारकी प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, सोमरोग, पांडुरोग, पथरी इनको नाश करे यह रसायन श्रेष्ठ नागार्जुनने कही है ॥

वंगभस्म ।

वंगं शिलाजतुयुतं तु मतं प्रमेहे धातुक्षये दुर्बलनष्टशुक्रयोः ।
अभ्रेण युक्तं तु सुतप्रदं स्याज्जातीफलार्ककरहाटलवंगयुक्तम् ॥

अर्थ–वंगभस्म और शिलाजीत इनको एकत्र करके खाय तो प्रमेह, धातुक्षय, दुर्बलता, नष्टशुक्र इनको नाश करे और अभ्रककी भस्म, जायफल, अर्कपुष्पी, पद्मकंद, लौंग इनके साथ सेवन करे तो पुत्र होय ॥

वसंतकुसुमाकररस ।

पृथक् द्वौ हाटकं चंद्रं त्रयो वंगा हि कांतजम्। चत्वारः सूतमभ्रं च प्रवालं मौक्तिकं तथा ॥ भावना गव्यदुग्धेक्षुवासाश्रीह्रिजलैर्निशा । मोचाकंदरसैः सप्त क्रमाद्भाव्यं पृथक् पृथक्॥ शतपत्ररसेनैव मालत्याः कुसुमैस्तथा । पश्चान्मृगमदैर्भाव्यः सुसिद्धो रसराट् भवेत् ॥ कुसुमाकरविख्यातो वसंतपदपूर्वकः । वल्लद्वयमितः सेव्यः सिताज्यमधुसंयुतः ॥ वलीपलितहृन्मेध्यः कामदः सुखदः सदा । मेहघ्नः पुष्टिदः श्रेष्ठः परं वृष्यो रसायनः ॥ अयुर्वृद्धिकरं पुंसां प्रजाजननमुत्तमम् । क्षयकासतृषोन्मादश्वासरक्तविषार्तिजित् ॥ सिताचंदनसंयुक्तमम्लपित्तादिरोगजित् । हंति पांड्वामयान् शूलान्मूत्रघाताश्मरीं हरेत् ॥ योगवाहि त्विदं सेव्यं कांतिश्रीबलवर्धनम् । सुसात्म्यमिष्टभोजी च रमयेत्प्रमदाशतम् ॥ मदनं मदयन्मदमुज्ज्वलयन्प्रमदानिवहानतिविह्वलयन् । सुरतैः सुखदैर्गतिविच्यवनैर्भवसारजुपामयमेव सुहृत् ॥

अर्थ–सुवर्णभस्म २ भाग, रौप्यभस्म २ भाग, वंगभस्म ३ भाग, शीशेकी भस्म ३ भाग, कांतलोहकी भस्म ३ भाग, पारा ४ भाग, अभ्रकभस्म ४ भाग, मूंगाकी भस्म ४ भाग, मोतीकी भस्म ४ भाग इस क्रमसे सब वस्तु लेके उसको गौका दूध, ईखका रस, अडूसेका रस, चंदन, खस, नेत्रवाला, हलदी, केलेका कंद इनके काढे की, कमलका रस, चमेलीकी कलियोंका रस इनकी पृथक् २ सात २ भावना देवे फिर कस्तूरीके कल्ककी भावना देवे तो यह वसंतकुसुमाकर संपूर्ण रसोंका राजा बनके तैयार होवे. इसमेंसे ४ रत्ती रस सहत, घी, मिश्री इनमें मिलायके सेवन करे तो बुढापेको दूर करे. पवित्र, कामसुख इनको देवे तथा प्रमेहनाशक, पुष्टिकारक, वृष्य, रसायन, आयुष्य और प्रजा इनको देवे तथा क्षय, खांसी, तृषा, उन्माद, श्वास, रुधिरविकार, विष, पांडुरोग, शूल, मूत्राघात, पथरी इनको नष्ट करे तथा मिश्री, चंदन इनके साथ सेवन करनेसे अम्लपित्तादि रोगोंको जीते. यह योगवाही है. कांति, श्री, बलवर्द्धक ऐसा है. इसका सेवन करनेके उपरांत यथेष्ट भक्षण करे पथ्यकी कुछ जरूरत नहीं है. इसका सेवन करनेवाले मनुष्यको सौ स्त्रियोंसे रमण करनेकी शक्ति होवे, कामदेवको भी लज्जित करे और मदोन्मत्त होकर स्त्रियोंको विह्वल करे. संसारी मनुष्योंको यह परम सुहृत् है ॥

जलजामृतरस ।

तवक्षीरं शिलाधातुर्वंगं कुंडलिसत्वकम् । मेहारिबीजसंयुक्तं विदारीजीवनीरसैः ॥ भावयेत्त्रिवारं तु सितोपलसमन्वितम् । जलजामृतविख्यातो रसोयं मेहकृच्छ्रनुत ॥

अर्थ–तवाखीर, शिलाजीत, गिलोयका सत्त्व, वंगभस्म, सपेद सारिवाके बीज और मिश्री इन सबको एकत्र कर विदारीकंदके रसकी तीन भावना देवे तो यह जलजामृत रस मेहकृच्छ्रको नाश करे ॥

प्रमेहकी उपेक्षासे प्रमेह पिटिकाओंका होना ।

प्रमेहाणां प्रजायंते पिटिकाः सर्वसंधिषु । शराविका कच्छपिका जालनी विनताऽलजी ॥ मसूरिका सर्षपिका पुत्रिणी सविदारिका । विद्रधिश्चेति पिटिकाः प्रमेहापेक्षया दश ॥ संधिमर्मसु जायन्ते मांसलेषु च धामसु ॥

अर्थ–प्रमेहसंबंधी दश प्रकारकी पिटिकायें सब संधियोंमें होती हैं. १ शराविका,

२ कच्छपिका, ३ जालिनी, ४ विनता, ५ अलजी, ६ मसूरिका, ७ सर्षपिका, ८ पुत्रिणी, ९ विदारिका, १० विद्रधी ये इनके नाम हैं. प्रमेहकी उपेक्षा करनेसे ये शराविकादि दश पिटिका संधिमर्म और मांसल ठिकानेमें होती हैं ॥

पिटिकाके कारण ।

ये यन्मयाः स्मृता मेहास्तेषामेतास्तु तन्मयाः । विना प्रमेहमप्येता जायन्ते दुष्टमेदसः ॥ तावच्चैता न लक्ष्यन्ते यावद्वास्तु परिग्रहः ॥

अर्थ-जो प्रमेह जिस दोष करके उल्बण होय है तिस करके तिसी दोषके उल्बण करके पिटिका होय है ये पिटिका प्रमेहके विना दुष्टमेदके होनेसे प्रगट होती हैं जबतक इनकी गांठ नहीं बँधे तबतक नहीं दीखे (ये यन्मयाः स्मृता मेहाः) इस पदके ऊपर मधुकोशवालेने शास्त्रार्थ लिखा है ग्रन्थ बढनेके भयसे हमने नहीं लिखा ॥

दश पिटिकाओंके लक्षण ।

अंतोन्नता च तद्रूपा निम्नमध्या शराविका । सदाहा कूर्मसंस्थाना ज्ञेया कच्छपिका बुधैः ॥ जालनी तीव्रदाहा तु मांसजालसमावृता । अवगाढरुजोत्क्लेदा पृष्ठे वाप्युदरेपि वा ॥ महती पिटिका नीला सा बुधैर्विनता स्मृता । रक्ता सिता स्फोटवती दारुणा त्वलजी भवेत् ॥ मसूरदलसंस्थाना विज्ञेया तु मसूरिका । गौरसर्षपसंस्थाना तत्प्रमाणा च सर्षपी ॥ महत्यल्पचिता ज्ञेया पिडिका चापि पुत्रिणी । विदारीकंदवद्वृत्ता कठिना च विदारिका ॥ विद्रधेर्लक्षणैर्युक्ता ज्ञेया विद्रधिका तु सा ॥

अर्थ-१ शराविका ये पिटिका ऊपरके भागमें ऊंची और मध्यमें बैठीसी होय जैसा मट्टीका शराव होय है ऐसी होय है. २ कच्छपिका-ये कछुएके पीठके समान कुछ दाहयुक्त ऐसी होय है. ३ जालनी-ये तीव्र दाह करके संयुत और मांसके जालसे व्याप्त होय है. ४ विनता ये फुन्सी पीठमें अथवा पेटमें होय है इसकी पीडा बहुत होय, ठंडी होय तथा बडी और नीले रंग की होय है. ५ अलजी-लाल काली बारीक फोडों करके व्याप्त भयंकर होय है. ६ मसूरिका-मसूरकी दालके समान बडी होय है. ७ सर्षपिका-सफेद सरसोंके समान बडी होय हैं. ८ पुत्रिणी-ये बीचमें

एक बडी फुन्सी होय उसके चारों ओर छोटी छोटी फुन्सी और होंय उसको पुत्रि-णी कहते हैं ९ विदारिका-ये विदारीकंदके समान गोल और करडी होय हैं. १० विद्राधिका-ये विद्राधिके लक्षण करके युक्त होय हैं. भोज और सुश्रुतके मतसे नौ पिटिका हैं चरकके मतसे सात ही हैं ॥

असाध्य पिटिका ।

गुदे हृदि शिरस्यंसे पृष्ठे मर्मसु चोत्थिताः ।
सोपद्रवा दुर्बलाग्नेः पिडिका परिवर्जयेत् ॥

अर्थ-गुदामें, हृदयमें, शिरमें, पीठमें और मर्मस्थानमें उठी पिटिका और उपद्रव युक्त हो तथा दुर्बलाग्नि पुरुषकी पिटिका त्याज्य है ॥

प्रमेहके साध्य लक्षण ।

प्रमेहिणो यदा मूत्रमनाविलमपिच्छिलम् ।
विशदं तिक्तकटुकं तदारोग्यं विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ-जब प्रमेहरोगवालेका मूत न मैला और न चिकना होय किंतु स्वच्छ तीखा और कडुवा हो तब रोगी आरोग्य होवेगा ऐसा कहना ॥

पिडिकाके उपद्रव ।

तृट्श्वासमांससंकोचमोहहिक्कामदज्वराः ।
विसर्पमर्मसंरोधाः पिटिकानामुपद्रवाः ॥

अर्थ-प्यास, श्वास, मांसका सकोडना, मोह, हिक्का, मद, विसर्प, ममस्थानमें पीड ये पिटिकाके उपद्रव हैं ॥

पिडिकाकी सामान्यचिकित्सा ।

प्रमेहपिटिकानां तु प्राक्कार्यं रक्तमोक्षणम् ।
पाटनं तु विपक्वानां तासां पानं प्रशस्यते ॥

अर्थ-प्रमेहपिटकाओंका प्रथम रुधिर निकाले और जब पक जावे तब पाटन करे तथा इन पर कषाय इत्यादिक सेवन करना उत्तम है ॥

क्वाथो व्रणघ्नोऽत्र बस्तिर्मूत्रलो रक्तमोक्षणम् ।
व्रणस्य प्रक्रिया सर्वा कार्यात्रापि भिषग्वरैः ॥

अर्थ-व्रणनाशक, क्वाथ, वस्तिकर्म, मूत्र लानेवाले उपचार, फस्त खोलना और संपूर्ण व्रणरोगमें जो क्रिया कही है वह इस जगह करनी चाहिये ॥

न्यग्रोधादि चूर्ण ।

न्यग्रोधोदुंबराश्वत्थस्योनाकारग्वधासनम् । आम्रं कपित्थं जंबू च प्रियालं ककुभं धवम् ॥ मधूकं मधुकं लोध्रं वरुणं पारिभद्रकम् । पटोलं मेषशृंगी च दंती चित्रकमाटकी ॥ करंजात्रिफलाशक्रभल्लातकफलानि च । एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ न्यग्रोधाद्यमिदं चूर्णं मधुना सह योजयेत् । फलत्रयरसं चानुपिबेन्मूत्रविशुद्धये ॥ एतेन विंशतिर्मेहा मूत्रकृच्छ्राणि यानि वा । प्रशमं यांति वेगेन पिटिकासु च योजयेत् ॥

अर्थ-वड, गूलर, पीपर, टेंटू, अमलतास, विजेसार, आम, कैथ, जामुन, चिरौंजी, कोह, धौ, महुआ, मुलहठी, लोध, वरना, नीम, पटोलपत्र, मेढासिंगी, दंती, चित्रक, अरहर, कंजा, हरड, बहेडा, आंवला, कूडा और भिलाए ये सब समान भाग लेके बारीक चूर्ण करे इसको न्यग्रोधादि चूर्ण कहते हैं. इसको सहतमें मिलायके चाटे ऊपरसे हरड, बहेडा, आंवला इनका काढा मूत्र शुद्ध होनेको पीवे तो बीस प्रकारके प्रमेह मूत्रकृच्छ्र ये तत्काल शांत होवे तथा इसको पिटिकारोग पर देवे ॥

पिटिकाओं पर लेप ।

क्षीरिमौदुंबरं यत्नाद्वाकुचं वा प्रयोजयेत् ।
पिटिकासु समस्तासु लेपनं संप्रशांतये ॥

अर्थ—गूलरका दूध अथवा बावचीका दूध संपूर्ण पिटिकाओंपर लेप करे तो सब पिटिका दूर हों ॥

प्रमेह पर पथ्य ।

प्राग्लंघनानि वमनानि विरेचनानि प्रोद्वर्त्तनानि शमनानि च दीपनानि । नीवारकंगुयववैणवकोरदूषश्यामाकचूर्णकुरुविंदककुष्ठकाश्च ॥ गोधूमशालिकलमाश्चिरजाः कुलित्था मुद्गाढकीचणकयूषरसास्तिलाश्च । लाजा पुरातनसुरा मधु वाट्यमंडस्तक्रं च रासभजलं माहिषीजलं च ॥ लट्वाकपोतशशतित्तिरलावबर्हिव्याघ्रैणवर्त्तकशुकादिकजांगलाश्च । सोभांजनं च कुलकं च

कठिल्लकं च कर्कोटकं तलकमप्यथवार्हतं च॥ औदुंबराणि लशु-
नानि नवीनमोचं पत्तूरगोक्षुरकमूषकपर्णशाकम् । मंदारपत्रम-
मृता त्रिफला कपित्थं जंबूकसेरुकमलोत्पलकंदबीजम्॥ खर्जूर-
लांगलिकतालतरूत्तमांगं व्योषं च तिंदुकफलं खदिरं कलिं-
गम् । तिक्तानि चापि सकलानि कषायकाणि हस्त्यश्ववाहन-
मतिभ्रमणं रवित्विट् ॥ व्यायाम इत्यपि गणो भवति प्रकामं
मित्रं प्रमेहगदपीडितमानवानाम् ॥

अर्थ-प्रथम लंघन, वमन, विरेचन, उबटना तथा प्रमेह शमन करते और दीपन करते पदार्थोंको सेवन करे, पुराने तृणधान्य, कांगनी, जौ, बांसके चावल, कोदों, समखिया, ज्वार, नागरमोथा, मोठ, गेहूं, शालीचावल, कलमीचावल, पुराने कुलथी, मूंग, अरहर, चना इनके यूषरस और तिल, खील, पुरानी दारू, सहत, वाटचमंड, छाछ, गधेका और भैंसका मूत्र, लट्वा (कबूतरकी जाति), पिंडुकिया, शशे, तीतर, लवा, बघेरा, काला हिरण, बटेर, तोता आदि जंगली जीव, सहजना, परवल, करेला, ककोडा, तिलक, कटेरी, गूलर, लहसन, नवीन केलाकी फली, पत्तूर, गोखरू, मूषाकर्णीका साग (पत्तोंका साग), आकके पत्ते, गिलोय, त्रिफला (हरड, बहेडा, आंवला), कैथ, जामुन, कसेरू, कमल, भसीडा, कमलगट्टा, खिजूर, कलियारी, तालफल, सोंठ, मिरच, पीपल, तेंदू, खैर, इन्द्रजौ (तरबूज), संपूर्ण कडवे पदार्थ और कषेले पदार्थ, हाथी, घोडेकी सवारी अत्यंत डोलना, सूरजकी धूप और दंड कसरत करना ये संपूर्ण पदार्थ प्रमेहरोगपीडित मनुष्योंको हितकारी जानने ॥

प्रमेहरोगमें अपथ्य ।

वेगरोधं धूमपानं स्वेदं शोणितमोक्षणम् । सदासनं दिवानिद्रां
नवान्नानि दधीनि च ॥ आनूपमांसं निष्पावं पिष्टान्नानि च मै-
थुनम् । सौवीरकं सुरासूक्तं तैलं क्षीरं गुडं घृतम् ॥ तुंबी ता-
लास्थिमज्जां च विरुद्धान्यशनानि च । कूष्मांडमिक्षुदुष्टांबु
स्वाद्वम्ललवणानि च॥ अभिष्यंदि च यत्नेन प्रमेही परिवर्जयेत्॥

अर्थ-मलमूत्रादि वेगोंका रोकना, धूमपान, पसीने निकालना, रुधिर निकलना, अष्टप्रहर भोजन, दिनमें सोना, नये अन्न और दही, अनूपदेशके जीवोंका मांस

चौरा, पीसे हुए अन्न, मैथुन, कांजी, दारु, सिर्का, तेल, दूध, गुड, घी, तूंबा, तालके भीतरका गूदा, विरुद्ध भोजन, नवीन पेठेका फल, ईख (गंडे), दुष्टजल, स्वादु, खट्टे, निमकीन पदार्थ और अभिष्यंदी पदार्थ ये सब प्रमेहरोगवालेको यत्नपूर्वक त्याग देने चाहिये ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे प्रमेहपिटिकानिदानचिकित्सा समाप्ता ।

मेदोरोगनिदानचिकित्सा ।

मेदरोगनिदान ।

अव्यायामदिवास्वप्नश्लेष्मलाहारसेविनः ।
मधुरोऽन्नरसः प्रायः स्नेहान्मेदो विवर्द्धते ॥

अर्थ-दंड कसरतके न करनेसे, दिनमें सोनेसे और कफकारी पदार्थके सेवन करनेसे ऐसी रीतिसे वर्त्तनेवाले पुरुषका अन्नरस केवल मधुर कहिये आमरूप हो स्नेह करके मेदको बढावे ॥

संप्राप्ति ।

मेदसावृतमार्गत्वात्पुष्यंत्यन्येन धातवः ।
मेदस्तु चीयते यस्मादशक्तः सर्वकर्मसु ॥

अर्थ-मेद करके मार्ग बंद होनेसे अन्य धातु हाड, मज्जा, वीर्य आदि पुष्ट नहीं होय और मेद बढे तब वह पुरुष सर्व कर्म करनेको अशक्त होय ॥

बढी हुई मेदके उपद्रव ।

क्षुद्रश्वासतृषामोहस्वप्नक्रथनसादनैः ।
युक्तः क्षुत्स्वेददौर्गंध्यैरल्पप्राणोल्पमैथुनः ॥

अर्थ-क्षुद्रश्वासः रूक्षायासोद्भव इत्यादिक पिछाडी कह आये सो तृषा, मोह, निद्रा, अकस्मात श्वासका रोकना, अंगग्लानि, भूँख, पसीना और दुर्गंधि इन लक्षणों करके वह पुरुष युक्त होय उसकी शक्ति घट जाय और मैथुन करनेमें उत्साह न होय ॥

मेद रहनेके स्थान ।

मेदस्तु सर्वभूतानामुदरेष्वस्थिषु स्थितम् ।
अत एवोदरे वृद्धिः प्रायो मेदस्विनो भवेत् ॥

अर्थ-मेद यह सब प्राणिमात्रोंके उदर और हड्डियोंमें रहे है इसीसे मेदवाले पुरुषका पेट बढा करता है ॥

मेदरोगमें जठराग्नि प्रदीप्त होनेमें कारण ।

मेदसावृतमार्गत्वाद्वायुः कोष्ठे विशेषतः । चरन्संधुक्षयत्यग्नि-माहारं शोषयत्यपि ॥ तस्मात्स शीघ्रं जरयत्याहारं चापिकांक्षति । विकारांश्चाश्नुते घोरान्कांश्चित्कालव्यतिक्रमात् ॥

अर्थ-मेदसे मार्ग रुक जानेसे कोठेमें पवनका संचार विशेष होय तब अग्निको यह पवन बढावे. भोजन करे आहारको तुरन्त शोषण करे तब वह आहार शीघ्र पचकर फेर जेमनेकी इच्छाको प्रगट करे और भोजन करनेमें कालका व्यतिक्रम होनसे भयंकर वातके रोग उत्पन्न होंय ॥

बढीमेद नाशका कारण होती है यह कथन ।

एतावुपद्रवकरौ विशेषादग्निमारुतौ ।
देहं हि दहतः स्थूलं वनं दावानलो यथा ॥

अर्थ-यह अग्नि और वायु बडा उपद्रव करे है जैसे दावानल (अग्नि) वनको जरावे है उसी प्रकार ये दोनों उस स्थूल (मोटे) पुरुषको जराते हैं ॥

अत्यंत मेद बढनेका परिणाम ।

मेदस्यतीव संवृद्धे सहसैवानिलादयः ।
विकारान् दारुणान् कृत्वा नाशयंत्याशु जीवितम् ॥

अर्थ-मेद अत्यन्त बढनेसे वायु आदि अकस्मात् भयंकर प्रमेहपिटिका, ज्वर, भगंदर, विद्रधि, वातरोग इत्यादि उत्पन्न करके शीघ्र ही जीवका नाश करे ॥

स्थूललक्षण ।

मेदोमांसातिवृद्धत्वाच्चलस्फिगुदरस्तनः ।
अयथोपचयोत्साहो नरोऽतिस्थूल उच्यते ॥

अर्थ-मेद और मांस ये अत्यंत बढनेसे जिस पुरुषके कूले, पेट और स्तन ये थल थल हलें और उसके शरीरकी स्थूलता बडी होय अर्थात् जैसी चाहिये तैसी न होय तथा उत्साह (हुशयारी) न रहे ऐसे मनुष्यको अति स्थूल कहते हैं ॥

उवटना ।

हरीतकीलोध्रमरिष्टपत्रपूतत्वचो दाडिमवल्कलं च ।
एषोंगरागः कथितोंगनानां जंब्वाः कषायश्च नराधिपानाम् ॥

अर्थ–हरड, पठानी लोध, नीमके पत्ते, कंजाकी छाल, अनारका वक्कल इनको पीसके उवटना करे और जामुनका काढा पीवे यह स्त्रियोंको और राजाओंको उत्तम है ॥

सामान्ययोग ।

गुडूचीभद्रमुस्तानां प्रयोगस्त्रैफलस्तथा ।
तक्रारिष्टप्रयोगश्च प्रयोगो माक्षिकस्य च ॥

अर्थ–गिलोय, भद्रमोथा, त्रिफला, छाछ, नीमके पत्ते ये सब योग दुर्गंधिनाशक हैं उसी प्रकार सहत दुर्गंधिनाशक है ॥

चव्यादि चूर्ण ।

सचव्यजीरकव्योषहिंगुसौवर्चलानलाः ।
मधुना सक्तवः पीता मेदोघ्ना वह्निदीपनाः ॥

अर्थ–चव्य, जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, संचरनिमक और चित्रक इनका चूर्ण सहतमें मिलाके चाटे तो मेदरोग नष्ट होय ॥

फलत्रिकादि चूर्ण ।

फलत्रयं त्रिकटुकं सतैलं लवणान्वितम् ।
षण्मासमुपभुक्तं चेत्कफमेदोऽनिलापहम् ॥

अर्थ--हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ,मिरच, पीपल, तेल, सैंधानिमक ये सब औषध एकत्र करके छः महीने पर्यंत सेवन करे तो कफ, मेद और वादी इनको नाश करे ॥

मेद पर सामान्यचिकित्सा ।

अस्वप्नं च व्यवायं च व्यायामं चिंतनानि च ।
स्थौल्यमिच्छन् परित्यक्तुं क्रमेणातिप्रवर्तयेत् ॥

अर्थ–अल्प सोना, मैथुन करना, दंड कसरत, चिंता ये जिसको स्थूलता दूर करनेका इच्छा होय उसको क्रम करके ये बढाने चाहिये ॥

नवकगुग्गुलु ।

व्योषाग्निमुस्तात्रिफलाविडंगं गुग्गुलुः समम् । खादन्सर्वान् जये-द्व्याधीनामवातभवान् गदान् ॥ क्षौद्रेण त्रिफलाक्काथः पीतो मेदोहरः स्मृतः ।

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक, नागरमोथा, हरड, बहेडा, आंवला, वायविडंग, गूगल ये समान भाग ले एकत्र चूर्ण करके खाय तो संपूर्ण रोगोंकी जय होय और आमसे उत्पन्न हुए रोगोंका पराजय होय. सहतके साथ हरड, बहेडा और आंवला इनका काढा करके पीवे तो मेदकों हरण करे ॥

मेदपर उपचार ।

शीतीभूतं तथोष्णांबु मेदोहृत्क्षौद्रसंयुतम् ।
उष्णं भक्तस्य मंडं वा पिबन्कृशतनुर्भवेत् ॥

अर्थ—गरम जलको शीतल करके उसमें सहत डालके पीवे तो मेदरोगको नाश करे उसी प्रकार चावलोंका मांड गरमागरम पीवे तो देह कृश होय ॥

तालपत्रका क्षार ।

क्षारं वा तालपत्रस्य हिंगुयुक्तं पिबेन्नरः ।
मेदोवृद्धिविनाशाय भक्तमंडसमन्वितम् ।

अर्थ—ताडके पत्तोंका क्षार, हींग इनको भातके मांडसे पीवे तो उस प्राणीकी मेद-वृद्धि नाश होय ॥

मोचरसादि लेप ।

हितो मोचरसो युक्तश्चूर्णैरुदधिफेनजैः ।
प्रलेपेन निहंत्याशु देहदुर्गंधमुत्कटम् ॥

अर्थ—मोचरस और समुद्रफेन इनको एकत्र खरल कर लेप करे तो अत्यंत देहकी दुर्गंधको नष्ट करे ॥

हरीतक्यादि उद्वर्तन ।

हरीतकीं तु संपिष्य गात्रमुद्वर्त्तयेन्नरः ॥
पश्चात्स्नानं प्रकुर्वीत देहस्वेदप्रशांतये ॥

अर्थ—हरडको पीसके देहमें उवटना करके स्नान कर डाले तो देहसे पसीने निकलना बंद होवे ॥

चंद्रांशु शीतलं लोध्रं शिरीषोशीरकेशरैः ।
उद्वर्त्तनं भवेद्ग्रीष्मे स्वेदोद्गमनिवारणम् ॥

अर्थ–कंकोल, लोध, शिरस, वाला, कमलके केशर इनका उबटना करना यह पसीनेको निवारण करता है ॥

उबटना ।

शिरीषलामज्जकहेमलोध्रैस्त्वग्दोषसंस्वेदहरः प्रघर्षः ।
प्रियंगुलोध्राभयचंदनानि शरीरदौर्गंध्यहरः प्रदिष्टः ॥

अर्थ–सिरस, पीला रोहिषतृण, नागकेशर और लोध इनका कल्क करके देहमें मालिस करे अथवा फूलप्रियंगू, लोध, खस, चंदन इनका कल्क देहमें मालिस करे तो त्वचाके दोष, पसीने, शरीरकी दुर्गंधी इनको नाश करे ॥

क्वाथ ।

क्षौद्रेण त्रिफलाक्वाथः पीतो मेदोहरः स्मृतः ॥

अर्थ–त्रिफलाके काढेमें सहत डालके पीवे तो मेदरोग दूर होय ॥

त्र्यूषणाद्य लेह ।

त्र्यूषणं त्रिफला चव्यं चित्रकं बिडमौद्भिदम् । बाकुची सैंधवं चैव सौवर्चलमयोरजः ॥ माषमात्रमतश्चूर्णं लिह्यादाज्यमधुप्लुतम् । अतिस्थौल्यमिदं चूर्णं निहंत्यग्निविवर्धनम् ॥ मेदोघ्नं मेहकुष्ठघ्नं श्लेष्मव्याधिनिबर्हणम् । नाहारे नियमश्चात्र विहारे वा विधीयते ॥ त्र्यूषणाद्यमिदं चूर्णं रसायनमनुत्तमम् ।

अर्थ–त्रिकुटा, त्रिफला, चव्य, चित्रक, बिडनिमक, सोरा, बावची, सैंधानिमक, संचरनिमक, लोहभस्म इन सबका चूर्ण एक मासेको घी और सहतके साथ सेवन करे तो अतिस्थूलता नाश होय. अग्निवृद्धि, मेद, प्रमेह, कुष्ठ, कफरोग इनको नाश करे. इस पर किसी प्रकारका परहेज नहीं है. इसको त्र्यूषणाद्य चूर्ण कहते हैं ॥

उबटना ।

प्रियंगुलोध्राभयचंदनानि शरीरदौर्गंध्यहरं प्रदिष्टम् ॥

अर्थ–फूलप्रियंगू, लोध, हरड और चंदन इनका उबटना करे तो देहकी संपूर्ण दुर्गंधी नाश होय ॥

बब्बूलादि उद्वर्तन ।

बब्बूलस्य दलैः सम्यक्वारिणा परिपेषितैः । गात्रमुद्वर्तयेत्पश्चाद्धरीतक्या सुपिष्टया ॥ भूय उद्वर्तनं कृत्वा पश्चात्स्नानं समाचरेत् । प्रस्वेदान्मुच्यते क्षिप्रं ततस्त्वेवं समाचरेत् ॥ जंबूदलार्जुनतरुप्रसवैः सकुष्ठैरुद्वर्तनं प्रकुरुते प्रतिवासरं यः । प्रस्वेदबिंदुकणिकानिकराणि पंगोर्दुर्गंधिता वपुषि तस्य पदं दधाति ॥

अर्थ-बबूरके पत्तोंको जलमें पीस अंगमें मालिस करे फिर हरडको पीसके लगावे पश्चात् गरम जलसे स्नान करे तो पसीनोंका आना दूर होय, फिर इस प्रकार करे जामूनके पत्ते और कोहवृक्षके पत्ते, कूठ इनके चूर्णको जलमें पीस जो नित्यप्रति देहमें मालिस करता है उसके देहमें पसीने और दुर्गंध नहीं रहे ॥

वासादि लेप ।

वाशादलरसैर्लेपः शंखचूर्णावचूर्णितः ।
बिल्वपत्ररसो वापि गात्रदौर्गंध्यनाशनः ॥

अर्थ-अडूसेके पत्तोंका रस, शंखचूर्ण इनको पीसके लेप अथवा बेलके पत्तोंके रसका लेप देहकी दुर्गंधको नाश करे ॥

त्रिफलादि तैल ।

त्रिफलातिविषामूर्वात्रिवृच्चित्रकवासकैः । निंबारग्वधषड्ग्रंथासप्तपर्णनिशाह्वयैः ॥ गुडूचींद्रयवाकृष्णाकुष्ठसर्षपनागरैः । तैलमेभिः समं पक्कं सुरसादिरसप्लुतम् ॥ पानाभ्यंजनगंडूषनस्यबास्तिषु योजितम् । स्थूलतालस्यकंड्वादि जयेत्कफकृतान्गदान् ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला, अतीस, मूर्वा, निसोथ, चित्रक, अडूसा, नीमकी छाल, अमलतास, वच, सतोना, हलदी, गिलोय, इन्द्रजौ, पीपल, कूठ, शिरस और सोंठ ये औषध और निर्गुंडी, इत्यादिकोंके कफघ्न रस इन करके युक्त तेलको पकावे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके धर रखे. इसको पीना, अंजन करना, कुरला करना, नस्य, वस्ति, मालिस इन ठिकाने उपयुक्त करनेसे स्थूलता, आलस्य, खुजली इत्यादि कफके रोगोंको जीते ॥

महासुगंधितैल ।

चंदनं कुंकुमोशीरं प्रियंगुशठिरोचनम् । तुरुष्कागरुकस्तूरी क-
पूरो जातिपत्रिका ॥ जातीकंकोलपूगानां लवंगस्य फलानि च ।
नलिका नलदं कुष्ठं हरेणुतगरं प्लवम् ॥ नखं व्याघ्रं नखं स्पृक्का
वालो दमनकं तथा । प्रपौंडरीकं कर्चूरं समांशैः शाणमात्रकैः॥
महासुगंधमित्येतत्तैलं प्रस्थेन साधयेत् । प्रस्वेदमलदौर्गंध्यकंडू-
कुष्ठहरं परम् ॥ अनेनाभ्यक्तगात्रस्तु वृद्धः सप्ततिकोऽपि वा ।
युवा भवति शुक्राढ्यः स्त्रीणामत्यंतवल्लभः॥ सुभगो दर्शनीयश्च
गच्छेद्वै प्रमदाशतम् । वंध्यापि लभते गर्भं षंढोऽपि पुरुषायते॥
अपुत्रः पुत्रमाप्नोति जीवेच्च शरदां शतम् ॥

अर्थ-चंदन, केशर, खस, प्रियंगु, कचूर, गोरोचन,शिलारस, अगर, कस्तूरी, कपूर, जावित्री, जायफल, कंकोल, सुपारी, लौंग, गुलछबू, नेत्रवाला, कूठ, रेणुकबीज, तगर, भद्रमोथा, नखद्रव्य, व्याघ्रनख, स्पृक्का, पीला नेत्रवाला, दौना, मरुआ, पुंडरीकवृक्ष और कपूरकचरी ये प्रत्येक चार २ मासे लेवे इनका ६४ तोले तेलमें डालके तेल सिद्ध करे यह पसीने, दुर्गंध, खुजली, कोढ इनको नाश करे. इस तेलका जो मालिस करे तो सत्तर वर्षकाभी बुड्ढा होय तो भी तरुण, अतिवीर्यवान्, स्त्रियोंको प्रिय ऐसा होय और उत्तम पुष्ट, देखने योग्य, सौ स्त्रियोंसे गमन करनेवाला ऐसा होवे और वंध्यास्त्रीके पुत्र होय, नपुंसक पुरुषको पुरुषार्थ प्राप्ति होय, जिसके पुत्र न होय उसके पुत्रप्राप्ति होय, सौ वर्ष पर्यंत जीवे इतने गुण इस महासुगंधितैलमें हैं ॥

वडवाग्निरस ।

शुद्धसूतं मृतं ताम्रं तालं बोलं समं समम् । अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं
क्षौद्रैर्लेह्यं द्विगुंजकम् ॥ वडवाग्निरसो नाम स्थौल्यवृंदं निय-
च्छति । पलं क्षौद्रं पलं तोयमनुपानं पिबेत्सदा ॥

अर्थ-पारा, गंधक, ताम्रभस्म, हरतालभस्म, लाल बोल ये सब समान भाग लेवे इनको आकके दूधमें एक दिन खरल करे फिर सहतके साथ दो रत्ती चाटे. इसको वडवाग्निरस कहते हैं यह स्थूलताको नाश करे इसके ऊपर चार तोले सहत मिलायके पीवे ॥

रसभस्मयोग ।

रसभस्म वल्लमात्रं लीढ्वा मधुना पिबदनु क्षौद्रम् ।
कोष्णांबुना समेतं तत्स्थौल्यं मेदकृतं जयति ॥

अर्थ–पारेकी भस्म दो रत्ती सहतमें मिलायके चाटे ऊपरसे सहतको गरम जलमें मिलायके पीवे तो मेदसे प्रगट स्थूलताको दूर करे ॥

त्रिमूर्तिरस ।

सूतं गंधमयोभस्म समं संमेल्य भावयेत् । निर्गुंडीपत्रतोयेन मुसलीकंदवारिणा ॥ ततः सिद्धममुं माषमात्रं रसमनुत्तमम् । लोध्रक्षौद्रेण चाश्नीयाच्चूर्णं माषोन्मितं हितम् ॥ षट्कटु त्रिफला पंच लवणा वल्गुजस्य तत् । मेदशोथाग्निमांद्यामवातश्लेष्मगदप्रणुत् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, लोहभस्म सब समान भाग लेय. फिर निर्गुंडीके रसमें तथा मूसलीके कंदके रसकी एक २ भावना देवे, तो यह रस सिद्ध होय यह रस १ मासा और लोधका चूर्ण १ मासा तथा सहत १ मासा सबको मिलायके खाय. ऊपरसे सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक त्रिफला, पांचों निमक, बावची इनका चूर्ण खाय तो मेद, सूजन, मंदाग्नि, आमवात, कफरोग इनको नष्ट करे ॥

मेदपर सामान्य उपचार ।

श्रमचिंताव्यवायाध्वक्षौद्रजागरणस्त्रियः ।
हंत्यवश्यमतिस्थौल्यं यवश्यामाकभोजनम् ॥

अर्थ–परिश्रम, चिंता, मैथुन, मार्ग चलना, सहत पीना, स्त्रीसेवन, जौ, सामखियाका भोजन ये कर्म स्थूलनाशक हैं ॥

मेदरोगपर पथ्य ।

चिंता श्रमं जागरणं व्यवायं प्रोद्वर्तनं लंघनमातपश्च । हस्त्यश्वयानं भ्रमणं विरेकः प्रच्छर्दनं चाप्यपतर्पणं च ॥ पुरातना वैणवकोरदूषश्यामाकनीवारप्रियंगुजूर्णाः । यवाः कुलत्थाश्चणका मसूरा मुद्गास्तुवर्यश्च मधूनि लाजाः ॥ कटूनि तिक्तानि कषायकाणि तक्रं सुरा पिंगलमत्स्य एव । दग्धानि वार्ताकफलानि चापि फलत्रयं गुग्गुलुरायसं च ॥ शिरीषलोध्रद्रुहरीतकीनां

चूर्णेन गात्रस्य विलेपनं च। कटुत्रयं सर्षपतैलमेला रूक्षाणि सर्वाणि च मुख्यतैलम् ॥ पत्रोत्थशाको गुरुलेपनानि प्रतप्तनीराणि शिलाजतूनि। एतानि सर्वाणि निषेवितानि मेदोगदं सत्वरमुत्क्षिपंति॥

अर्थ-चिंता करना, परिश्रम, जागना, मैथुन करना, उबटना, लंघन, धूपमें डोलना, हाथी घोडेकी सवारी, डोलना, जुल्लाब, वमन, अपतर्पण (कृशकर्त्ता पदार्थोंका सेवन), पुराने बांसके चावल, कोदों, सामखिया, पसाई, प्रियंगु, ज्वार, जौ, कुलथी, चना, मसूर, मूंग, अरहरकी दाल, सहत, खील, कडवे, चरपरे, कषेले पदार्थ, छाछ, मद्य, चिंगल जातिकी मछली, बैंगनका भुरता, हरड, बहेडा, आंवला, गूगल, लोहभस्म, शिरस, लोध और हरड इनके चूर्णको देहमें मालिस करना, सोंठ, मिरच, पीपल, सरसोंका तेल, इलायची, संपूर्ण रूखे पदार्थ, तिलीका तेल, पत्तेके साग, अगरका लेप, गरम जल और शिलाजीत ये संपूर्ण पदार्थोंका सेवन करना मेदरोगको तत्काल दूर करते हैं ॥

मेदरोगपर अपथ्य।

स्नानं रसायनं शालीन् गोधूमान् सुखशीतलान्। क्षीरेक्षुविकृतीन् माषान्सौहित्यं स्वेदनानि च॥मत्स्यं मांसं दिवा निद्रा स्रग्गंधान्मधुराणि च। सर्वस्य भोजनस्यांते जलपानं विशेषतः॥ अतिमात्रं तूपचितो विशेषाद्वमनक्रियाम्। स्वभावस्थत्वमन्विच्छन्मेदस्वी वर्जयेदिमान् ॥

अर्थ-स्नान करना, रसायन पदार्थोंका सेवन, गेहूं, सुखसे रहना, दूधके पदार्थ, ईखके पदार्थ, उडद, सौहित्य (पेट भरके भोजन करना), मछली, मांस, दिनमें सोना, फूलमाला, चंदनका धारण, मीठे पदार्थ, सब भोजनोंके अंतमें जलका पीना, अत्यंत देहको पुष्टकारी पदार्थ और वमन करना, जो मनुष्य मुटापेको दूर कर देहको ठीक रखना चाहे वह इन सबको त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे मेदरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता।

उदररोगकर्मविपाकः ।

योो ब्रह्मविष्णुरुद्राणां मध्ये चैकं विभावयेत् ।
साधयेदुदरं व्याधिं युक्तो भवति मानवः ॥

अर्थ-जो पुरुष ब्रह्मा, विष्णु, शिव इनमेंसे एकको विशेष माने वह अपने वास्ते उदररोगका साधन करे है अर्थात् वह उदररोगी होय ॥

शांति ।

कुर्यात्कृच्छ्रं चातिकृच्छ्रं चांद्रायणमथापरम् ।
सहस्रकलशस्नानमीश्वरस्य तु कारयेत् ॥

अर्थ-उस प्राणीको कृच्छ्र अतिकृच्छ्र, चांद्रायणव्रत करने चाहिये और शिवको सहस्र कलश स्नान करवे ॥

जलोदरका कर्मविपाक ।

राज्ञा वा तु नियुक्तेन नियुक्तो धर्मनिश्चये । पुरोहितः प्राड्विवाकः सचिवो वान्यथाचरेत् ॥ जलोदरत्वं प्राप्नोति तस्य वक्ष्यामि निष्कृतिम् ॥

अर्थ-धर्मनिश्चय करनेको राजा अथवा राजाने मुकरीर करा पुरोहित अथवा पुरोहितने किसी दूसरेको निश्चय करा होय यदि वह धर्मके कार्यको विपरीत करे तो उसके जलोदर व्याधि होती है उसके प्रायश्चित्तके वास्ते शांति कहता हूं ॥

शांति ।

पयसा वर्तयेन्मासात्रितयं व्रतमुत्तमम् । सहस्रकलशस्नानं महादेवस्य चैव हि ॥ भोजयेच्च शतं विप्रान्मुच्यते किल्बिषात्ततः॥

अर्थ-उस जलोदरव्याधिकी शांति करनेको तीन महीने पर्यंत पयोव्रत करे और महादेवको सहस्र कलश स्नान करावे तथा सौ ब्राह्मणभोजन करावे तो वह पुरुष उस पापसे छूट जाय ॥

प्रकारांतर ।

गर्भपातनजा रोगा यकृत्प्लीहजलोदराः ।
तेषां प्रशमनार्थाय प्रायश्चित्तमिदं स्मृतम् ॥

अर्थ-ग्रंथांतरमें लिखा है कि जो गर्भपात करता है वह यकृत, प्लीहा, जलोदर, रोगी होय है इसके दूर करनेको प्रायश्चित्त कहते हैं ॥

शांति।

एतेषु दद्याद्विप्राय जलधेनुं विधानतः।
सुवर्णरौप्यताम्राणां पलत्रयसमन्विताम् ॥

अर्थ-ऊपर कहे हुए रोगोंके शमन करनेको ब्राह्मणको विधिपूर्वक सुवर्ण, चांदी अथवा ताम्र ये प्रत्येक चार २ तोले लेकर जलधेनु दान करे ॥

प्लीहोदरकर्मविपाक।

भृतकाध्यापको यस्तु कन्यादूषणतत्परः।
प्लीहावान् संभवेद्विप्रो जपेच्छ्रीसूक्तमेव हि ॥

अर्थ-जो प्राणी वेतन (तनखा) लेकर पढाता है अथवा कन्याको दूषित करता है वह प्लीहरोगी होय है उसको इस पापके दूर करनेको श्रीसूक्तका जप करना चाहिये ॥

शांति।

अयुतत्रयसंख्याकं प्लीहोदरविमुक्तये।
प्रत्यृचं च भवेद्धोमश्चरूणां सर्पिषा पृथक् ॥

अर्थ-जिसके प्लीहोदर हुआ हो उसको ३० हजार श्रीसूक्तका पाठ करना और प्रतिऋचाके साथ चरु और घीका हवन पृथक् पृथक् करे ॥

उदरनिदान।

रोगाः सर्वेऽपि मंदेऽग्नौ सुतरामुदराणि च।
अजीर्णान्मलिनैश्चान्नैर्जायंते मलसंचयात् ॥

अर्थ--अग्नि मन्द होनेसे सब रोग होते हैं और उदरतौ विशेष करके होय है कारण यह है कि अग्निमांद्य यह त्रिदोषजनक है और अजीर्णसे,मलिन अन्नसे, (विरुद्ध अध्यशनादिक) और मल (दोष तथा पुरीषादिक) इनके संचयसे उदररोग होय है. इस जगह उदरशब्द करके उदरस्थित रोग जानने सो ग्रंथान्तरमें लिखाहै ॥

उदररोगकी संप्राप्ति।

रुध्वा स्वेदांबुवाहीनि दोषाः स्रोतांसि संचिताः।
प्राणाग्न्यपानान् संदूष्य जनयंत्युदरं नृणाम् ॥

अर्थ-वातादिदोष स्वेद (पसीना) वहनेवाली और जलको वहनेवाली नाडियोंके मार्गको रुद्ध (रोक) कर और वे दोष बढकर प्राणवायु अग्नि और अपानवायु इनको अत्यन्त दुष्ट कर मनुष्योंके उदररोग उत्पन्न करे है. उदररोगका पूर्वरूप सुश्रुतमें लिखा है-तत्पूर्वरूपं बलवर्णकांक्षा वलीविनाशो जठरे तु राज्यः । जीर्णापरिज्ञानविदाहवत्यो बस्तौ रुजः पादगतश्च शोथः ॥

उदररोगोंका सामान्य लक्षण ।

आध्मानं गमनेऽशक्तिर्दौर्बल्यं दुर्बलाग्निता । शोफः सदनमंगानां संगो वातपुरीषयोः॥दाहस्तंद्रा च सर्वेषु जठरेषु भवंति हि॥

अर्थ-अफरा, चलनेकी शक्तिका नाश, दुर्बलता, मंदाग्नि, सूजन अंगग्लानि, वायुका तथा मलका रुकना, दाह, तन्द्रा ये लक्षण सब उदरमें होते हैं ॥

उदरकी संख्या ।

पृथक् दोषैः समस्तैश्च प्लीहबद्धक्षतोदकैः ।
संभवंत्युदराण्यष्टौ तेषां लिंगं पृथक् शृणु ॥

अर्थ-पृथक् दोषोंसे (अर्थात् वात, पित्त, कफ,) सन्निपातसे (सन्निपातोदर) प्लीहोदर १, बद्धोदर १, क्षतोदर १ और जलोदर १ सब मिलायकर ८ भये उनके लक्षण पृथक् पृथक् कहते हैं ॥

वातोदरके लक्षण ।

तत्र वातोदरे शोथः पाणिपन्नाभिकुक्षिषु । कुक्षिपार्श्वोदरकटीपृष्ठरुक्पर्वभेदनम् ॥ शुष्ककासोऽगमर्दोऽधो गुरुता मलसंग्रहः । श्यावारुणत्वगादित्वमकस्माद्वृद्धिह्रासवत् ॥ सतोदभेदमुदरं तनुकृष्णशिराततम् । आध्मातदृतिवच्छब्दमाहतं प्रकरोति च ॥ वायुश्चात्र सरुक्छब्दो विचरेत्सर्वतोगतिः ॥

अर्थ-वातोदरमें हाथ, पैर, नाभि और कूख इनमें सूजन होय, संधियोंका टूटना, तथा कूख, पसवाडे, पेट, कमर, पीठ इनमें पीडा, सूखी खांसी, अंगोंका टूटना, कमरसे नीचे भागमें भारीपना, मलका संग्रह होना त्वचा, नख, नेत्रादिकका काला लल होना, पेट अकस्मात् (निमित्तके बिना) बडा हो जाय, छोटा हो जाय, सुई चुभानेकीसी तथा नोचनेकीसी पीडा होय, पेटमें चारों तरफ बारीक काली

शिरा (नाडियों) से व्याप्त होय, चुटकी मारनेसे फूली पखालके समान शब्द होय इस उदरमें वायु चारों तरफ डोलकर शूल करे तथा गूंजे ॥

वातोदरका सामान्य यत्न ।

उपक्रमेद्भिषग्दोषबलकालविशेषवित् । स्थिरादिसर्पिषः पानं स्नेहं स्वेदं विरेचनम् ॥ वेष्टनं वाससा ग्लानौ शाल्वलं चोपनाहनम् । पेया यूषरसान्नं च योज्यं वातोदरे क्रमात् ॥

अर्थ-बल और कालको भले प्रकार जाननेवाला वैद्य वातोदरपर स्थिरादि घृतका पान करे, तथा स्वेदन, स्नेहन और विरेचन इत्यादिक उपचार करे. इन उपचारोंके करनेसे यदि ग्लानि उत्पन्न हुई होय तो उसको कपडोंसे लपेट देवे अथवा कोमल, हरे तृण पीडित स्थान पर धरे, उपनाहकर्म, पेया, यूष और रस ये भोजनको देवे ॥

तक्रपान ।

वातोदरी पिबेत्तक्रं पिप्पलीलवणान्वितम् । शर्करामरिचोपेतं स्वादु पित्तोदरी पिबेत्॥यवानीसैंधवाजाजीव्योषयुक्तं कफोदरी । सन्निपातोदरी तक्रं त्रिकटुक्षारसैंधवैः ।

अर्थ-वातोदरी होवे तो उसको पीपल, सैंधानिमक मिलायके छाछ पिलावे, और पित्तोदरवालेको मिश्री और काली मिरचयुक्त मीठी छाछ पिलावे. उसी प्रकार अजमायन, सेंधानिमक, जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल इन करके युक्त; कफोदरवाले रोगीको छाछ पिलावे. तथा सन्निपातोदरी होवे तो उसको सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, सैंधानिमक इनका चूर्ण मिलायके छाछ पीनी चाहिये ॥

चूर्णकषाय ।

एरंडतैलं दशमूलमिश्रं गोमूत्रयुक्तं त्रिफलारजो वा । निहंति वातोदरशोथशूलं क्वाथः समूत्रो दशमूलजश्च ॥

अर्थ-अंडीका तेल दशमूलके चूर्णमें मिलायके खाय अथवा गोमूत्रमें हरड, बहेडा, आंवला इनका चूर्ण मिलायके खावे अथवा दशमूलका काढा गोमूत्रमें मिलायके पीवे तो वातोदर, सूजन, शूल इनको नाश करे ॥

शिलाजतुचूर्ण ।

दशमूलकषायेण क्षीरयुक्तं शिलाजतु । सद्यो वातोदरी क्षीरमश्नीयात्र च केवलम् ॥

अर्थ-वातोदर पर दशमूलके काढेमें दूध और शिलाजीत डालके पीवे अथवा ऊंटका अथवा बकरीका केवल दूध पीवे ॥

कुष्ठादि चूर्ण।

कुष्ठं दंती यवक्षारं व्योषं त्रिलवणं वचा। अजाजी दीप्यकं हिंगुस्व-र्जिकाचव्याचित्रकैः॥ शुंठीं चोष्णांभसा पीत्वा वातोदररुजापहाम् ॥

अर्थ-कूठ, जमालगोटा, जवाखार, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधानिमक, बिडनिमक, कचिया निमक, वच, जीरा, अजमायन, हींग, सुहागा, चव्य, चित्रक और सोंठ इनके चूर्णको गरम जलके साथ पीवे तो वातोदरको नाश करे ॥

समुद्रादि चूर्ण।

सामुद्रसौवर्चलसैंधवानां क्षारो यवानामजमोदभागः। सपिप्प-लीचित्रकशृंगबेरं हिंगूविडंगं च समानि कुर्यात् ॥ एतानि चू-र्णानि घृतप्लुतानि भुंजीत पूर्वं कवलैः प्रशस्तम्। वातोदरं गु-ल्ममजीर्णभुक्तं वातप्रकोपग्रहणीं च दुष्टाम् ॥ अर्शांसि दुष्टानि च पांडुरोगं भगंदरं चापि निहंति सद्यः ॥

अर्थ-समुद्रनिमक, संचरनिमक, सैंधानिमक, जवाखार, अजमायन, पीपल, चित्रककी छाल, सोंठ, हींग और वायविडंग ये समान भाग लेकर चूर्ण करे. इसको घी भातके साथ भक्षण करे तो वातोदर, गोला, अजीर्ण पर भोजन, वादीका प्रकोप, संग्रहणी, बवासीर, पांडुरोग और भगंदर इनको शीघ्र नाश करे ॥

वातोदरपर घृत।

दशमूलकषायेण रास्नानागरदारुभिः।
पुनर्नवाभ्यां च घृतं सिद्धं वातोदरापहम् ॥

अर्थ-दशमूल, रास्ना, सोंठ, देवदारु और लाल तथा सपेद पुनर्नवा इनके काढेमें घृत सिद्ध करे यह वातोदरको नाश करे ॥

पित्तोदरके लक्षण।

पित्तोदरे ज्वरो मूर्च्छा दाहस्तृट्कटुतास्यता। भ्रमोऽतिसारः पीतत्वं त्वगादावुदरं हरित् ॥ पीतताम्रशिरानद्धं सस्वेदं सोष्म दह्यते। धूमायते मृदुस्पर्शं क्षिप्रपाकं प्रदूयते ॥

अर्थ-पित्तके उदररोगमें ज्वर, मूर्च्छा, दाह, प्यास, मुखमें कडुआसा, भ्रम, अतिसार, त्वगादिक (नख नेत्र) इनमें पीलापना, पेट हरा होय, पीली तामेके रंगकी नाडियोंसे उदर व्याप्त हो, पसीना आवे, गरमीसे सब देहमें दाह होय, आंतोंसे धूंआसा निकलता दीखे, हाथके स्पर्श करनेसे नरम मालूम हो शीघ्र पाक होय अर्थात् जलोदरत्वको प्राप्त होय और उसमें घोर पीडा होय ॥

पित्तोदरका सामान्य यत्न ।

पित्तोदरे च बलिनं पूर्वमेव विरेचयेत् ।
पयसा त्रिवृताकल्केनोरुबूकश्रृतेन वा ॥

अर्थ-पित्तोदरवाला रोगी बलवान् होवे तो प्रथम उसको दूधमें निसोथका कल्क अथवा अंडकी जडका काढा देकर दस्त करावे ॥

सातलादि घृत ।

सातलात्रायमाणाभ्यां तातेनारग्वधेन च ।
घृतं पित्तोदरे पेयं मधुरौषधसाधितम् ॥

अर्थ-सातला (थूहर), त्रायमाण, अमलतासका गूदा इनका काढा और मधुर औषध इनसे सिद्ध करा हुआ घृत पित्तोदर पर प्राशनार्थ देवे ॥

त्रिवृतादि घृत ।

स्यात्त्रिवृत्रिफलासिद्धं सर्पिःपानं विशुद्धये । पृश्निपर्णीबलाव्याघ्रीलाक्षानागरसाधितम् ॥ क्षीरं पित्तोदरं हंति जठरं कतिभिर्दिनैः ॥

अर्थ-निसोथ, हरड, बहेडा और आंवला इनके काढेमें सिद्ध करा हुआ घृत अथवा पिठवन, खिरेटी, कटेरी, लाख और सोंठ इनसे सिद्ध करा हुआ दूध देवे तो कुछ दिनमें पित्तोदरका नाश करे ॥

कफोदरके लक्षण ।

श्लेष्मोदरेऽगसदनं स्वापः श्वयथुगौरवम् । निद्रोत्क्लेदोऽरुचिः श्वासः कासशुक्लत्वगादिता ॥ उदरं स्तिमितं स्निग्धं शुक्लराजीततं महत् । चिराभिवृद्धिकठिनं शीतस्पर्शं गुरु स्थिरम् ॥

अर्थ-कफके उदररोगमें हाथ, पैर आदि अंगोंमें शून्यता हो और जिकड जाय, सूजन होय, अंग भारी हो जाय, निद्रा आवे, वमन होयगी ऐसा मालूम होय

अरुचि होय, श्वास, खांसी होय, त्वचा, नख, नेत्रादिक सपेद हों, पेट निश्चल चिकना सपेद नाडियोंसे व्याप्त होय, इनकी वृद्धि बहुत कालमें होय, पेट करडा और शीतल मालूम होय तथा भारी और स्थिर होय ॥

कफोदरका यत्न ।

श्लेष्मोदरिणं सुपिप्पल्या सिद्धेन सर्पिषा स्नेहं नीत्वा स्नुहिक्षीरेणानुलोम्य त्रिकटुकमूत्रतैलमुस्तादिक्काथेनास्थापयेदनुवासयेत् किट्टसर्षपामलकबीजैश्चोपनाहयेदुदरम् । भोजयेच्चैनं त्रिकटुकप्रगाढेन कुलित्थयूषेण पयसा वा स्वेदयेच्चाभीक्ष्णम् ॥ व्योषयुक्तकुलित्थांबु पयो वा भोजने हितम् । गोमूत्रारिष्टपानैश्च चूर्णायस्कृतिभिस्तथा ॥ सक्षीरतैलपानैश्च समये तु कफोदरम् ॥

अर्थ–कफोदरी रोगीको पीपलके कल्कसे सिद्ध करा हुआ घी पिलायके फिर थूहरके दूधसे दस्त करावे फिर सोंठ, मिरच, पीपल, गोमूत्र, अंडका तेल और नागरमोथा इनके काढेसे अनुवासनबस्ति करे तथा लोहकी कीटी, सरसों, आंवलेके बीज, इनको पीसके उदर पर लेप करे तथा कुलथीके काढेमें सोंठ, मिरच,पीपल डालके उसके साथ भोजन देवे तथा जलसे बारंवार पेटको सेंके तथा कुलथीके काढेसे त्रिकुटाका चूर्ण डालके अथवा कुलथीकी दाल भोजनमें देवे तो हितकारी होय अथवा पीनेके वास्ते गोमूत्रका कांढा, आयसादि चूर्ण अथवा दूधमें अंडीका तेल डालके पीवे इन सब उपायोंके करनेसे कफोदर शांत होता है ॥

सन्निपातोदरका निदान ।

स्त्रियोऽन्नपानं नखरोममूत्रविडार्तवैर्युक्तमसाधुवृत्ताः । यस्मै प्रयच्छंत्यरयो गरांश्च दुष्टांबुदूषीविषसेवनाद्वा ॥ तेनाशु रक्तं कुपिताश्च दोषाः कुर्युः सुघोरं जठरं त्रिलिंगम् ॥

अर्थ–खोटे आचरणवाली स्त्री जिस पुरुषको नख केश (बार) मल मूत्र आर्त्तव (रजोदर्शका रुधिर) मिला अन्नपान देय अथवा जिसका शत्रु विष देवे, अथवा दुष्टांबु (जहर मिला मछली तिनका पत्ता आदि औटा हुआ ऐसा जल) और दूषीविष (मन्दविष) इनके सेवन करनेसे रुधिर और वातादिक दोष शीघ्र कुपित होकर अत्यन्त भयंकर त्रिदोषात्मक उदररोग उत्पन्न करे हैं ॥

सन्निपातोदर ।

सन्निपातोदरे कार्य एष एव क्रियाविधिः । हरीतक्यभयाकल्को गोमूत्रेण विभावितः ॥ पीतः सर्वोदरप्लीहमेहार्शःकृमिगुल्मनुत् ॥

अर्थ-सन्निपातोदरपर यही क्रिया करे कि हरड और थूहर इनका कल्क करके गोमूत्रसे देवे तो संपूर्ण उदर, प्लीहा,प्रमेह, बवासीर, कृमिरोग और गोला इनको नाश करे॥

नागरादि तैल ।

नागरत्रिफलाप्रस्थं घृतं तैलं तथाढकम् । मस्तुना साधयित्वा तु पिबेत्सर्वोदरापहम् ॥ कफमारुतसंभूतं गुल्मं चैव विनाशयेत्॥

अर्थ-सोंठ, हरड, बहेडा, आंवला ये प्रत्येक ६४ तोले लेवे काढा करके इस काढेमें तेल २५६ तोले तथा छाछका जल ये पदार्थ एकत्र कर तेल सिद्ध करे इसके सेवन करनेसे संपूर्ण उदर, कफ, वादी इनसे उत्पन्न हुआ गुल्म इनको नाश करे ॥

दूष्योदरसंज्ञा ।

तच्छीतवाते भृशदुर्दिने वा विशेषतः कुप्यति दह्यते च । स चातुरो मूर्च्छति हि प्रसक्तं पांडुः कृशः शुष्यति सेवया च ॥ दूष्योदरं कीर्तितमेतदेव ॥

अर्थ- वे शीतकालमें अथवा शीतल पवन चले उस समय अथवा जिस दिन वर्षाका झड लगे उस दिन विशेष करके कोपको प्राप्त हो और दाह होय (इसका कारण ये है कि उस समय दूषीविषका कोप होय है) वह रोगी निरन्तर विषके संयोगसे मूर्च्छित होय, देहका पीला वर्ण तथा कृश होय और परिश्रम करनेसे शोष होय तो इसको दूष्योदर ऐसे कहते हैं ॥

शंखिनीघृत ।

समूलशंखिनीसिद्धं घृतं चात्र विशोधनम् ।
दंतिद्रवंतिफलजं तैलं दुष्योदरी पिबेत् ॥

अर्थ-संनिपातोदरीको जडसहित संखाहूलीके रसमें सिद्ध करा हुआ घृत पीन यह रेचक है अथवा दंती, द्रवंती इनके फलके काढेमें अथवा कल्कमें सिद्ध करा हुआ चाहिये तेल पीना चाहिये ॥

प्लीहोदर ।

प्लीहोदरं कीर्तयतो निबोध ॥ विदाह्यभिष्यंदिरतस्य जंतोः प्रदुष्टमत्यर्थमसृक्कफश्च । प्लीहाभिवृद्धिं कुरुतः प्रवृद्धौ प्लीहोत्थमेतज्जठरं वदन्ति ॥ तद्वामपार्श्वे परिवृद्धिमेति विशेषतः सीदति चातुरोऽत्र । मन्दज्वराग्निः कफपित्तलिंगैरुपद्रुतः क्षीणबलोऽतिपांडुः ॥

अर्थ–अब प्लीहोदरके लक्षण कहता हूं तू सुन. विदाही (वंश करीरादि) अर्थात् दाह करनेवाली और अभिष्यंदी (दध्यादि) अर्थात् स्रोत (छिद्र रोकनेवाली) ऐसे अन्न निरंतर सेवन करनेवाले पुरुषके अत्यंत दुष्ट भये जे रुधिर और कफ बढकर प्लीहा (तापतिल्ली) को बढावे इस उदरको प्लीहोत्थ उदर कहते हैं, ये बाईं तरफ बढता है इस अवस्थामें रोगी बहुत दुःख पाता है, देहमें मंदज्वर होय, मंदाग्नि होय तथा कफपित्तोदरके लक्षण इसमें मिलते हों, बल क्षीण होय, अत्यंत पीला वर्ण हो ॥

प्लीहोदरपर सामान्य यत्न ।

स्नेहस्वेदविकारादि विधेयं प्लीहरोगिणाम् । वामबाहौ च मोक्तव्या कूर्पराभ्यंतरे शिरा ॥ विध्येत्प्लीहविनाशाय यकृन्नाशाय दक्षिणे । मणिबंधे समुत्पन्नं वाममंगुष्ठमीरितम् ॥ दहेच्छिरां शरेणाशु वैद्यः प्लीहप्रशांतये ॥

अर्थ–प्लीह (पिल्ही) रोगीको स्नेहन, स्वेदन, रेचन इत्यादि उपचार करे और बायें हाथके कूर्परके भीतरकी नाडीको वेधन करे और यकृत्के नाश करनेके वास्ते दहने हाथके कूर्परके भीतरकी नसका वेध करे अथवा पहुँचेमें बायें अंगूठेकी शिराको वेध करे ॥

शरपुंखामूलकल्क ।

शरपुंखमूलकल्कः पीतस्तक्रेण नाशयत्यचिरात् ।
बहुतरकालसमुत्थं प्लीहानं रूढमवगाढम् ॥

अर्थ–सरफोकाके मूलका कल्क छाछके साथ पीनेको देवे तो बहुत जल्दी बहुत दिनका बढा हुआ प्लीहाका नाश करे ॥

तक्र ।

पिबेत्प्लीहोदरी तक्रं पिप्पलीक्षौद्रसंयुतम् ।

अर्थ-प्लीहोदररोगीको पीपल और सहत डालके छाछ पिलावे ॥

रोहितादि कल्क ।

रोहीतकाभयाकल्को गोमूत्रेण विभावितः ।
पीतः सर्वोदरप्लीहमेहार्शःकृमिगुल्मनुत् ॥

अर्थ-लालरोहितक और हरड इनका कल्क गोमूत्रमें मिलायके पीवे तो सर्व उदर, प्लीहा, प्रमेह, बवासीर, कृमिरोग, गोला इनको नाश करे ॥

पिप्पल्यादि क्काथ ।

शोफं प्लीहोदरं हंति पिप्पलीमरिचान्वितः ।
आम्लवेतससंयुक्तः शिग्रुक्काथः ससैंधवः ॥

अर्थ-सहजनेकी छाल, पीपल, काली मिरच और अमलवेत इनका काढा करके उसमें सैंधानिमक मिलायके देवे तो सूजन, प्लीहोदर इनको नाश करे ॥

शाल्मलीपुष्पपाक ।

सुस्विन्नं शाल्मलीपुष्पं निशापर्युषितं नरः ।
राजिकाचूर्णसंयुक्तं ह्यद्यात्प्लीहोपशांतये ॥

अर्थ-प्लीहोदरके नाश करनेको सेमरके फूलको औटायके रात्रिमें ओसमें रख देवे प्रातःकाल इस बासे फूलमें राईका चूर्ण मिलायके पीवे ॥

लवणादि तक्र ।

लवणं रजनी राजी प्रत्येकं पलपंचकम् । चूर्णितं निक्षिपेद्भांडे तक्रं शतपलोन्मितम् ॥ त्रिदिनं मुद्रितं रक्षेत् पश्चात्पंचपलं सदा । पीत्वा विनाशयेत्प्लीहं त्रिःसप्ताहं न संशयः ॥

अर्थ-सैंधानिमक २० तोले, हलदी २० तोले, राई २० तोले इनके चूर्णको छाछ ४०० तोले बासनमें भरके मुख बांधके तीन दिन धरा रहने दे. फिर २० तोले प्रमाण नित्य पीवे तो इकीस दिनमें प्लीहोदरका नाश होय इसमें संदेह नहीं है ॥

शुक्तिक्षारयोग ।

पातव्यो शुक्तितः क्षारः क्षीरेणोदधिशुक्तिजः ।
पयसा वा प्रयोक्तव्याः पिप्पल्यः प्लीहनाशनाः ॥

अर्थ-समुद्रकी सीपोंके खारको दूधके साथ युक्तिसे पीवे अथवा दूधके साथ पीपल खाय तो प्लीहको नाश करे ॥

एरंडभस्मयोग ।

समूलपत्रमेरंडं रुद्धा भांडे पुटे पचेत् ।
तत्कर्षं पलगोमूत्रं पीतं प्लीहविनाशनम् ॥

अर्थ-जड और पत्ते सहित अंडके दरखतको टुकडे करके किसी पात्रमें धरे, फिर उसका मुख बंद करके संपुटमें रखके फूंक देवे. फिर उसको कूट १ तोलेको चार तोले गोमूत्रके साथ पीवे तो प्लीहोदर नष्ट होय ॥

भल्लातकादिमोदक ।

भल्लातकाभयाजाजीगुडैश्च कृतमोदकः ।
सप्तरात्रान्निहंत्येष प्लीहानमतिदारुणम् ॥

अर्थ-भिलाए, हरड, जीरा, गुड इन सबको कूट पीस लड्डू बनावे, १ लड्डू नित्य सेवन करे तो सात दिनमें अतिदारुण प्लीहा नष्ट होय ॥

लशुनादि ।

लशुनपिप्पलीमूलमभयां चैव भक्षयेत् ।
पिबेद्गोमूत्रगंडूषं प्लीहरोगविमुक्तये ॥

अर्थ-लहसन, पीपरामूल, हरड इनको एकत्र कूटके खाय ऊपरसे गोमूत्रको १ घूंट पीवे तो प्लीहरोग दूर होय ॥

सौभांजनकयोग ।

सौभांजनकनिर्यूहं सैंधवाग्निकणाचितम् ।
पलाशक्षारयुक्तं वा यवक्षारं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-सहजनेके रसमें सैंधानिमक, चित्रककी छाल, पीपल, पलासका खार और जवाखार इनका चूर्ण डालके पीवे ॥

रक्तस्राव और दाग ।

रक्तस्रावेऽर्कदुग्धं च सैंधवं लेपयेत्तथा ।
अग्निदाहं च कुर्याद्वा प्लीहोदरहरं परम् ॥

अर्थ-रुधिरको निकालके उस पर आकका दूध और सैंधानिमकका लेप करे अथवा अग्निदाह अर्थात् दाग देवे तो प्लीहोदर नष्ट करे ॥

प्लीहोदरपर शंखनाभिचूर्ण।

सुपक्वजंबीररसेन शंखनाभीरजः पीतमवश्यमेव ।
कर्षप्रमाणं शमयेदवश्यं प्लीहामयं कूर्मसमानमाशु ॥

अर्थ-उत्तम पके हुए नींबूके रसमें शंखकी भस्म नौ दश मासे डालके पीवे तो निश्चय कछुएके समान बढा हुई प्लीहारोग नष्ट होय ॥

कुष्ठादि चूर्ण ।

कुष्ठं वचा शृंगबेरं चित्रकं च यवानिकम् । पाठा चैवाजमोदा च पिप्पल्यः समचूर्णिताः । ततो बिडालपदकं पिबेदुष्णेन वारिणा । प्लीहोदरमुदावर्तं सर्वमेतेन शाम्यति ॥

अर्थ-कूठ, वच, सोंठ, चित्रककी छाल, अजमायन, पाढ, अजमोद और पीपल इनका समान भाग चूर्ण एकत्र कर दश २ मासे गरम जलके साथ देवे तो प्लीहोदर, उदावर्त्तके संपूर्ण विकार दूर होवें ॥

लघुहिंग्वादि चूर्ण ।

हिंगु त्रिकटुकं कुष्ठं यवक्षारोऽथ सैंधवम् । मातुलुंगरसेनैव प्लीहशूलहरं परम् ॥ वायुः प्लीहानमुद्धूय कुपितो यस्य तिष्ठति ॥

अर्थ-भूनी हुई हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, कूठ, जवाखार, सैंधानिमक इनके चूर्णको बिजोरेके रससे देवे तो प्लीह, शूल इनको नाश करे ॥

सिंध्वादि चूर्ण ।

सिंधुमगधाग्निचूर्णं शिग्रुशिलाजाजिकरसनिपीतम् ।
प्रबलमपि योगराजः प्लीहानं नाशयत्याशु ॥

अर्थ-सैंधानिमक, पीपल, चित्रक, शिलाजीत, जीरा इनके चूर्णको सहजनेके रससे खाय तो यह योगराज उग्र प्लीहाको शीघ्र नाश करे ॥

नागवटी ।

तिलैरंडद्रवस्तस्य क्षारो भल्लातकं कणा । एषां भागं समं कृत्वा तत्तुल्यस्तु गुडो मतः ॥ खादेदग्निबलं मत्वा पावकस्य विवृद्धये । जयेत्प्लीहानमत्युग्रं यकृद्गुल्मं तथैव च ॥

अर्थ-तिलोंकी डंडी, अंडकी जड इनकी भस्मका जल निकालके खार बनाय ले यह खार और भिलाए, पीपल ये समान भाग तथा सबकी बराबर गुड

डालके उसकी गोली बनाय लेवे. इसको अग्निबल विचारके देवे तो अग्निवृद्धि करे तथा बढी हुई प्लीहा, यकृत्, गोला इनको नाश करे ॥

विडंगादि चूर्ण ।

विडंगानि यवानी च चित्रकश्चेति तत्समम् । द्विगुणं देवदारुं च नागरं सपुनर्नवम् ॥ त्रिवृद्भागाश्च चत्वारि तत्सर्वं कल्कपेषितम् । क्षीरेणोष्णेन पातव्यं श्रेष्ठं प्लीहविनाशनम्॥ अथ चैतानि चूर्णानि गवां मूत्रेण पाययेत् । उदरीभूतमप्येवं प्लीहानं संप्रनाशयेत् ॥

अर्थ–वायविडंग, अजमायन, चित्रककी छाल ये समान भाग लेवे तथा इनसे दुगुनी देवदार, सोंठ, पुनर्नवा और निसोथ ४ भाग ले इन सब औषधोंको कूठ पीस, कल्क करके गरम जलसे देवे तो प्लीहनाश करनेमें श्रेष्ठ है अथवा इनके चूर्णको गोमूत्रके साथ देवे तो उदरके समान बढे हुए प्लीहाको नाश करे ॥

यवान्यादि चूर्ण ।

यवानिकाचित्रकयावशूकषड्ग्रंथदंतीमगधोद्भवानाम् ।
प्लीहानमेताद्विनिहंति चूर्णमुष्णांबुना मस्तुसुरासवैर्वा ॥

अर्थ–अजमायन, चित्रककी छाल, जवाखार, वच, जमालगोटा और पीपल इनका चूर्ण गरम जलसे, छाछके जलसे, मद्य अथवा आसव इनके साथ देवे तो प्लीहाको नाश करे ॥

वज्रक्षार ।

सौवर्चलं यवक्षारं सामुद्रं काचसैंधवम् । टंकणं स्वर्जिकाक्षारं तुल्यमेकत्र चूर्णयेत् ॥ अर्कदुग्धैः स्नुहीदुग्धैर्भावयेदातपे त्र्यहम् । ऊर्ध्वाधस्थैः क्रमात्तस्य तत्तुल्यैरर्कपल्लवैः ॥ भांडे संस्थाप्य मृल्लिप्ते रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् । स्वांगशीतं तु संचूर्ण्य चूर्णमेषां तु मेलयेत् ॥ त्र्यूषणं च विडंगं च राजिकां त्रिफलामपि । चव्यं च हिंगु संभृष्टं तक्रेणाद्याद्यथाबलं ॥ वज्रक्षाराभिधं चूर्णमुदराणि विनाशयेत् । शोथं गुल्मं तथाष्ठिलां मंदाग्निमरुचिं तथा ॥ प्लीहानं यकृदाल्याख्यमुदरं च विशेषतः ॥

अर्थ-संचरनिमक, जवाखार, समुद्रनिमक, कचियानिमक, सैंधानिमक, सुहागा, सज्जी ये सब समान भाग लेवे. सबको एकत्र कर आकके दूध और थूहरके दूधमें भिगोय तीन दिन धूपमें रखा रहने देवे. फिर एक मिट्टीके पात्रमें ऊपर नीचे आकके पत्ते बिछायके पूर्वोक्त औषधको भर देवे और पात्रको ढक संधियोंको बंद कर गजपुटमें रखके फूंक देवे. शीतल होने पर निकाल चूर्ण करले फिर इसमें सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, राई, हरड, बहेडा, आंवला, चव्य, भूनी हींग. इनका चूर्ण मिलाय देवे. इसको वज्रक्षार कहते हैं इसको अग्निबल विचारके छाछसे देवे तो सर्व उदर सूजन, गोला, अष्ठीला, मंदाग्नि, अरुचि, प्लीहा, यकृत् इनका नाश करे ॥

क्षारादि योग।

क्षारं वा बिडकृष्णाभ्यां पूतिकस्यांबुमिश्रितम्।
यकृत्प्लीहप्रशांत्यर्थं पिबेत्प्रातर्यथाबलम् ॥

अर्थ-कंजेकी राखका खार, बिडनिमक और पीपल इनका चूर्ण बलाबल विचारके प्रातःकाल देवे तो यकृत् और प्लीह इनको शांत करे ॥

क्षारभावितपिप्पली।

पलाशक्षारतोयेन पिप्पली परिभाविता।
गुल्मप्लीहार्तिशमनी वह्निदीप्तिकरी मता ॥

अर्थ-पलासके क्षारके पानीमें पीपलको डालके देवे तो गोला, प्लीहा इनको शांत करे तथा विशेष करके अग्निको प्रदीप्त करे ॥

अर्कपत्रक्षार।

अर्कपत्रं सलवणमंतर्धूमं विपाचयेत्।
मस्तुना तं पिबेत्क्षारं प्लीहोदरहरं परम् ॥

अर्थ-आंकके पत्ते, सैंधानिमक इनको हांडीमें भर मुख बंद कर जलाय देवे. उस खारको दहीके जलके साथ सेवन करे तो अत्यन्त प्लीहानाशक है ॥

अग्निमुखलवण।

चित्रकं त्रिवृता दंती त्रिफलारुचकैः समैः। यावंत्येतानि चूर्णानि चूर्णमात्रं तु सैंधवम् ॥ भावयित्वा स्नुहिक्षीरैः स्नुक्कांडे प्रक्षिपेत्ततः। मृत्पंकेनानुलिप्याथ प्रक्षिपेज्जातवेदसि ॥ सुदग्धं

च ततो ज्ञात्वा शनैर्वैद्यः समुद्धरेत् । तक्रेण पीतं तच्चूर्णं यकृत्प्लीहोदरापहम् ॥ एतदग्निमुखं नाम्ना लवणं वह्निवर्धनम् ॥

अर्थ—चित्रककी छाल, निसोथ, दंती, हरड, बहेडा, आंवला और संचरनिमक ये सब समान भाग लेवे तथा सब चूर्णके बराबर सैंधानिमक डालके एकत्र करे. इस थूहरके दूधमें भिगोयके थूहरकी पोली लकडीमें भरे. ऊपरसे कपडमिट्टी कर देवे. फिर अग्निमें फूंक देवे. जब राख हो जावे तब निकाल उसके भीतरसे युक्ति पूर्वक राखको निकास ले. यह, भस्म छाछके साथ देवे तो यकृत, प्लीहा इनको नाश करे तथा अग्निको बढावे, इसको अग्निमुखनाम लवण कहते हैं ॥

रोहितकघृत ।

रोहीतकात्पलशतं संक्षुद्य बदराढकम् । साधयित्वा जलद्रोणे चतुर्भागावशेषिते ॥ घृतप्रस्थं समावाप्य छागक्षीरं चतुर्गणम् । तस्मिन्द्रव्याणि सर्वाणि प्रदद्यात्कार्षिकाणि च ॥ व्योषं फलत्रिकं हिंगु यवानी तुंबरुं बिडम् । विडंगं चित्रकं चैव हपुषा चविकं वचा ॥ अजाजिकृष्णलवणं दाडिमं देवदारु च । पुनर्नवा विशाला च यवक्षारं सपौष्करम् ॥ एतैर्घृतं विपक्कं तु विदध्याद्दृढभाजने । पाययेच्च पलं मात्रां रसयूषपयोंबुभिः ॥ यकृत्प्लीहोदरं शूलमग्निमांद्यं च नाशयेत् । कुक्षिशूलं पार्श्वशूलं कटिशूलमरोचकम् ॥ विड्बंधशूलं शमयेत्पांडुरोगं सकामलम् । छर्द्यतीसारशमनं तंद्राज्वरनिवारणम् ॥ महारोहितकं नाम्ना प्लीहघ्नं तु विशेषतः ॥

अर्थ—लाल रोहिडा ४०० तोले और बेर २५६ तोले इन दोनोंको १०२४ तोले जलमें चढाय काढा करे जब चतुर्थांश जल रहे तब उसमें ६४ तोले घी, २५६ तोले बकरीका दूध और सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, हींग, अजमायन, धनियां बिडनिमक, वायविडंग, चित्रक, हाऊबेर, चव्य, वच, जीरा, सांभरनिमक, अनारदाना, देवदारु, पुनर्नवा, इन्द्रायन, जवाखार, पुहकरमूल ये प्रत्येक तोला २ भर लेवे. इनका कल्क करके उस काढेमें मिलाय देवे और मंदाग्निसे पचावे. जब तैयार हो जावे तब उत्तम चिकने बासनमें भरके रखे. इसको ४ तोले पर्यंत रस, यूष, दूध अथवा मूत्र इनके साथ देवे तो यकृत, प्लीह, उदर, शूल, मंदाग्नि, कूखका दर्द, पसु-

बाडेका दर्द, कमरका दर्द, अरुचि, मलबद्धता, शूल, पांडुरोग, कामला, वमन, अतिसार, तंद्रा और ज्वर इनको नाश करे यह महारोहितक नाम घृत प्लीहा और कृमि इनको नाश करे ॥

चित्रकाद्य घृत।

चित्रकस्य तुलाक्वाथे घृतप्रस्थं विपाचयेत् । आरनालं च द्विगुणं दधिमंडं चतुर्गुणम् ॥ पंचकोलकतालीसं क्षारौ च पटुपंचकम् । यवान्यौ द्वे च जरणे मरिचं चाक्षसंमितम् ॥ एतैर्युक्त्या घृतं सिद्धं मात्रया च पिबेत्प्रगे । प्लीहशोफोदरार्शोघ्नं विशेषादग्निदीपनम् ॥

अर्थ-चित्रककी जडका काढा ४०० तोलेमें ६४ तोले घी, १२८ तोले कांजी और दहीका तोड २५६ तोले, तथा पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, तालीसपत्र, जवाखार, सुहागा, समुद्रनिमक, संचरनिमक, सैंधानिमक, कचियानिमक और खारीनिमक, अजमायन, अजमोद, जीरा, काला जीरा, मिरच ये प्रत्येक तोला२ डालके युक्तिसे पचावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतारके प्रातःकाल भक्षण करे तो प्लीहा, सूजन, उदर, बवासीर इनको नाश करे तथा विशेष करके अग्निको दीपन करे ॥

रक्तस्राव।

प्लीहिनः पृष्ठदेशे तु रक्तस्रावं तु कारयेत् ॥

अर्थ-प्लीहवाले रोगीके पीठका रुधिर निकलवाना चाहिये ॥

शिरावेध।

वामबाहौ च मोक्तव्या कूर्पराभ्यंतरे शिरा ॥

अर्थ-प्लीहनाश करनेको बायें हाथके कूर्पर भागके भीतरकी नस तोडे ॥

यकृतोदर।

सव्यान्यपार्श्वे यकृति प्रदुष्टे ज्ञेयं यकृद्दाल्युदरं तदेव ॥

अर्थ-दहने तरफ जो यकृत् कहिये कलेजा है वह दुष्ट कहिये रोगयुक्त होनेसे प्लीहोदरके समान उदर होय उसको यकृद्दाल्युदर कहते हैं दोषों करके यकृतका भेद होय है इसीसे यकृद्दालिउदर कहते हैं ॥

दोषसंबंध।

उदावर्त्तरुजानाहैर्मोहतृड्दहनज्वरैः ।
गौरवारुचिकाठिन्यैर्विद्यात्तत्र मलान्क्रमात् ॥

अर्थ-उदावर्त्त, शूल, अफरा इनसे वायु, मोह, प्यास, ज्वर इनस पित्त और भारी-पना, अरुचि, कठिनता इनसे कफ ऐसे क्रमपूर्वक दोषोंका संबंध जानना ॥

यकृद्दाल्युदर ।

लवणं राजिकाचूर्णं समं गोमूत्रमिश्रितम् ।
त्रिशाणं हंति पीतं चेद्यकृत्प्लीहोदराण्यपि ॥

अर्थ-सैंधानिमक, राई ये समान भाग लेवे सबको एकत्र कूटकर गोमूत्रके साथ १ तोला पीवे तो यकृत, प्लीहा, उदर इनको नाश करे ॥

पिप्पलीकल्क ।

पिप्पलीकल्कसंयुक्तं घृतं क्षीरं चतुर्गुणम् ।
पक्त्वा पिबेद्यथावह्नि यकृद्दाल्युदरापहम् ॥

अर्थ-पीपलका कल्क, घी और चौगुना दूध डालके औटावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतारले. इसको अग्निबल विचारके देवे तो यकृद्दाल्युदरको नाश करे ॥

सामान्ययकृतोपचार ।

प्लीहोदिष्टाः क्रियाः सर्वा यकृतः संप्रकल्पयेत् ।
कार्यं च दक्षिणे बाहौ तत्र शोणितमोक्षणम् ॥

अर्थ-जो क्रिया प्लीहरोग पर कही है वह सब यकृत् रोगपर करे तथा दहने हाथकी नस वेध करके रुधिर निकाले ॥

बद्धगुदोदर ।

यस्यांत्रमन्नैरुपलेपिभिर्वा बालाश्मभिर्वा पिहितं यथावत् । सं-
चीयते यस्य मलः सदोषः ॥ शनैः शनैः संकरवच्च नाड्याम्॥
निरुध्यते तस्य गुदे पुरीषं निरेति कृच्छ्रादति चाल्पमल्पम् ।
हन्नाभिमध्ये परिवृद्धिमेति तस्योदरं बद्धगुदं वदन्ति ॥

अर्थ-जिस पुरुषकी आंत उपलेपे कहिये गाढे अन्न करके (शाकादिक) अथवा वाल तथा बारीक पत्थरके टुकडे करके बद्ध हो जाय उस पुरुषका दोषयुक्त मल धीरे २ आंतडीके नलीमें होकर जैसे बुहारीसे झारा तृण धूर आदि क्रमसे बढे है, उसी प्रकार बढे और वह मल बडे कष्टसे गुदद्वारा थोडा थोडा निकले, जब मलका निकलना बंद हो जाय तब मल दोषों करके गुदासे ऊपर आवे इसीसे उदर बढे है अर्थात् हृदय

और नाभिके मध्य अन्नपाकस्थानकी वृद्धि होय इसीसे इस उदरको बद्धगुदोदर कहते हैं अथवा गुदाके ऊपर आंतोंको बद्ध होनेसे बद्धगुद कहते हैं यह चरकका मत है ॥

हपुषादि चूर्ण ।

बद्धोदरी तु हपुषादीप्यकाजाजिसैंधवम् ॥

अर्थ-बद्धगुदोदरीसे हाऊबेर, अजमायन, जीरा और सैंधानिमक इनका चूर्ण सेवन करे ॥

बस्तिप्रकार ।

स्विन्ने बद्धोदरे योग्यो बस्तिस्तीक्ष्णैस्तु भेषजैः ।
सतैललवणश्चापि निरूहश्चानुवासनम् ॥

अर्थ-बद्धगुदोदरवाले रोगीके प्रथम सेंक देकर तीक्ष्ण औषध अथवा तेल, निमक इनसे निरूहबस्ती और अनुवासनबस्ती करे ॥

उत्तरबस्ति ।

उदावर्तहरं सर्वं प्रकर्तव्यं चिकित्सितम् ।
वर्तयो विविधाश्चात्र पायौ शस्ताः प्रकीर्तिताः॥

अर्थ-बद्धगुदोदरवाले रोगीके संपूर्ण उदावर्त्तनाशक क्रिया करे और गुदामें अनेक प्रकारकी बत्ती बनायके डाले ये उपचार उत्तम कहे हैं ॥

तीक्ष्णैर्विरेचनं चात्र शस्यते तु विशेषतः ।
वातहंता विधिः सर्वो विधातव्यो विजानता ॥

अर्थ-बद्धगुदोदर पर तीक्ष्ण औषधसे जुल्लाब करावे और संपूर्ण वातनाशक क्रिया करे ये उत्तम हैं ॥

क्षतोदर ।

शल्यं तथान्नोपहितं यदंत्रं भुक्तं भिनत्त्यागतमन्यथा वा ।
तस्मात्स्रुतोऽन्त्रात्सलिलप्रकाशः स्रावः स्रवेद्वै गुदतस्तु भूयः ॥
नाभेरधश्चोदरमेति वृद्धिं निस्तुद्यते दाल्यति चातिमात्रम् ।
एतत्परिस्राव्युदरं प्रदिष्टम् ।

अर्थ-कांटा धूल आदि अन्नके साथ मिलकर पेटमें चला जाय अर्थात् पक्काशयमें विलोम (टेढा तिरछा) चला जाय तब आंतोंको काटे और सीधा जाय तो नहीं काटे अथवा जंभाई अति अशन करनेसे अर्थात् रोकनेसे आंत फट जाय

सो चरकमें लिखा भी है उन फटे आंतोंसे गलित पानीके समान स्राव पुनः २ गुदाके मार्ग होकर झरे, नाभिके नीचेका भाग बढे, नोचनेकीसी तथा भेद (चीरने) कीसी पीडासे अत्यंत व्यथित होय इस क्षतोदरको ग्रन्थांतरमें परिस्रावि उदर कहते हैं और इसीको छिद्रोदर कहते हैं यह गयदासका मत है ॥

वेधक्रिया तथा पाटनक्रिया।

छिद्रांत्रबद्धसंज्ञेषु जठरेषु प्रयोगावित्।
लब्धानुज्ञो भिषक् कुर्यात्पाटनव्यधनाक्रियाम् ॥

अर्थ-क्षतोदर तथा बद्धगुद संज्ञक उदरोंपर प्रयोग जाननेवाला वैद्य रोगीके संबंधियोंकी आज्ञा लेकर पाटन (चीरना) और वेधक्रिया करे ॥

तथा जातोदकं सर्वमुदरं व्यधयेद्भिषक्।
पृष्ट्वा ज्ञातींश्च सुहृदो दारांश्च नृपतिं गुरुम् ॥

अर्थ-संपूर्ण जातोदक उदररोगीको, वैद्य रोगी, जातिके सुहृद, स्त्रीजन, राजा और गुरु इनकी आज्ञा लेकर फिर शस्त्रकर्म करे अर्थात् चीरना फाडना करे ॥

वेधस्थान।

अनुज्ञाप्य भिषक् कर्म विदध्यात्संशयं ध्रुवम्।
सुवेष्टितं त्वधो नाभेर्वामतश्चतुरंगुलात् ॥

अर्थ-वैद्य रोगीसे प्रथम कह देवे कि वेध करनेसे कि तो तू अच्छा हो जावेगा अथवा तू मर जावेगा यदि इस कहने पर रोगी आज्ञा देवे तो उदरको ढकके और लपेटके नाभीके नीचे चार अंगुल पर बाईं तरफ वेध करे ॥

वेध करनेका प्रकार।

अंगुलयोदरमात्रं तु व्रीहिवक्त्रेण भेदयेत्।
नाडीमुभयतोद्वारां संयोज्यापहरेज्जलम् ॥

अर्थ-ऊंगलीमें धानके कांटेके समान मुखवाले शस्त्रको लेकर उससे छेद करे उस छिद्रमें द्विमुख नली डालके उसमेंसे पानीको निकाले ॥

जल निकालनेमें नियम।

न चैकस्मिन्दिने सर्वदोषं त्वपहरेत्तथा। कासश्वासज्वरस्तृष्णा
गात्रभंगश्च वेपथुः। अतिसारश्च सुतरां पूर्यते जठरं तथा।
तृतीयपंचमाद्येषु दिवसेष्वल्पशः पुनः ॥

अथ-एक ही दिनमें संपूर्ण दोषोंको न निकाले. एकही दम निकालनेसे खांसी, श्वास, ज्वर, प्यास, गात्रभंग, कंप, अतिसार, और प्रथमके समान फिर पेटका भर जाना ये विकार होते हैं इस वास्ते तीसरे अथवा पाचवें दिन फिर वारंवार निकाले ॥

जल निकालने पर व्रणपर लेप।

स्रावयेदुदकं तैललवणाभ्यां दृढव्रणम् । बध्नीयाद्विषतो दोषे रक्तं प्राक् प्रतिपूर्य च ॥ संवेष्टयेद्गाढतरं कौशेयादिकचर्मणा ॥

अथ-उदरका जल निकालनेके पश्चात् व्रणमें दोषप्रवेश होनेके प्रथम ही तेल और निमक रुधिरके साथ रेसमी अथवा चमडा इनसे दृढ बांधे ॥

जलोदर लक्षण।

जलोदरं कीर्तयतो निबोध ॥ यः स्नेहपीतोप्यनुवासितो वा वांतो विरक्तोऽप्यथवा निरूढः । पिबेज्जलं शीतलमाशु तस्य स्रोतांसि दुष्यान्ति हि तद्वहानि ॥ स्नेहोपालिप्तेष्वथवापि तेषु जलोदरं पूर्ववदभ्युपैति । स्निग्धं महत्तत्परिवृद्धनाभि भृशोन्नतं पूर्णमिवांबुपानात् ॥ यथादृतिः क्षुभ्यति कंपते च शब्दायते चाप्युदकोदरं तत् ॥

अर्थ-अब जलोदर कैसे होय है उसको कहते हैं. जिसने स्नेह (घृत तैलादि) पान करा होय, अथवा अनुवासनबास्ति करी हो, वमन करा हो अथवा दस्त करे हों अथवा निरूह बास्ति करा होय ऐसा पुरुष शीतल जल पीवे तब उसकी जल वहनेवाली नसोंके मार्ग तत्काल दुष्ट होय हैं, वे उदक वहनेवाले स्रोत (मार्ग) स्नेहसे उपलिप्त (चीकने) होनेस पूर्ववत् (अर्थात् अन्नरस उपस्नेह न्याय करके अर्थात् इनको बाहर लायकर उदरको उत्पन्न करे) जलोदर होय है उसमें चिकनापन दीखे, ऊंचा होय, नाभिके पास बहुत ऊचा होय, चारों ओर तनासा मालूम होय; पानीकी पोट भरीसी होय, जैसी पानीसे भरी पखालमें जल हले है उसी प्रकार हले, गुडगुड शब्द करे, कांपे, इनको जलोदर अर्थात् जलंधर कहते हैं ॥

छाछ।

त्र्यूषणक्षारलवणैर्युक्तं तु सलिलोदरी ॥

अर्थ–जलोदरवालेको सोंठ, मिरच, पीपल और निमकका चूर्ण डालके छाछ पिलावे ॥

जलोदरारिरस।

पिप्पली मरिचं ताम्रं कांचनीचूर्णसंयुतम् । स्नुहिक्षीरैर्दिनं मर्द्यं तुल्यं जैपालबीजकम्॥ निष्कयुक्तं विरेकेण सत्यं हंति जलोदरम्॥

अर्थ–पीपल, काली मिरच, तामेकी भस्म, हलदी ये समान भाग लेवे इन सबके बराबर जमालगोटा लेवे. सबको थूहरके दूधमें खरल कर इसमेंसे छः २ मासे खानेको देवे तो दस्त कर जलोदरको नाश करे यह सत्य कहता हूं ॥

जलोदर पर रेचन।

जलोदरेषु विश्राव्यं जातं जातं विरेचनैः ॥

अर्थ–जलंधरमें भीतर जल होनेसे जुलाब देकर जलको निकाल डाले ॥

पेट फूलने पर यत्न।

विरक्तजठराध्मानं स्नेहाद्यैर्बस्तिभिर्जयेत् ।
निःश्रुतो लंघितो पेयामस्नेहलवणां पिबेत् ॥

अर्थ–जल निकलनेके उपरान्त पेट फूला होय तो स्नेहविधि, बस्तिकर्म इन करके उपचार करे तथा जल निकलनेके पीछे लंघन करायके घृत और निमकके विना पेया देवे ॥

छः महीनेतक नियम।

अतः परं तु षण्मासं क्षीरवर्ती भवेन्नरः ।
त्रीन्मासान्पयसा पेयं पिबेत्त्रींश्चापि योजयेत् ॥

अर्थ–इस प्रकार उदरमें जलकी कमी होनेसे छः महीने पर्यंत दूध पीवे, अन्न न देय, फिर तीन महीने दूधमें पेया करके देवे. इसी प्रकार आगे भी तीन महीने पर्यंत उसी प्रकार उपचार करे ॥

अन्न।

सकोरदूष्यश्यामाकपयसा लवणं लघु ।
नरः संवत्सरेणैव जयेदाशु जलोदरम् ॥

अर्थ–कोदों, सामखिया, दूध, निमक, हलके अन्न इस प्रकार उपचार करनेसे एक वर्षमें जलोदरको जीते ॥

साध्यासाध्यविचार ।

जन्मनैवोदरं सर्वं प्रायः कृच्छ्रतमं विदुः ।
बलिनस्तदजातांबु यत्नसाध्यं नवोत्थितम् ॥

अर्थ-सर्व प्रकारके उदर जन्मसे ही प्रायः अत्यन्त कष्टसाध्य होते हैं, बलवान् पुरुषके नवीन प्रगट भया हो और उसमें पानी नहीं प्रगट भया हो ऐसा बडे यत्नसे साध्य होय, पानी नहीं प्रगट भया हो ऐसे उदरके लक्षण चरकमें कहे हैं ॥

पक्षाद्बद्धगुदं तूर्ध्वं सर्वं जातोदकं तथा ।
प्रायो भवत्यभावाय छिद्रांत्रं चोदरं नृणाम् ॥

अर्थ-बद्धगुदोदर १५ दिवसके पिछाडी असाध्य होय है, उसी प्रकार सब प्रकारके उदक (पानी) उत्पन्न होनेसे नाशकारक होय है, और छिद्रांत्रोदर ये प्रायः नाशक होय है. कदाचित् शल्य अथवा शस्त्रचिकित्सा जैसी होनी चाहिये ऐसी होय तो उदक (पानी) प्रगट भया उदररोग छिद्रांत्र अथवा बद्धगुद साध्य होय है ये 'प्रायः' इस पदसे सूचना करी ॥

असाध्यलक्षण ।

शूनाक्षं कुटिलोपस्थमुपक्लिन्नतनुत्वचम् ।
बलशोणितमांसाग्निपरिक्षीणं च वर्जयेत् ॥

अर्थ-जिस उदररोगीके नेत्रों पर सूजन होय, लिंग टेढा हो गया हो, पेटकी त्वचा गीली तथा पतली हो गयी होय, बल, रुधिर, मांस और अग्नि ये जिसके क्षीण हो गये हों ऐसा रोगी त्याज्य है ॥

यः क्लिन्नत्वक्तनूभूतनेत्रः कुटिलभ्रूकर्णः । बलशोणितमांसाग्निक्षीणकोष्ठामयी स्मृतः ॥ शोफातिसारपार्श्वार्तिभक्तद्वेषनिपीडितम् । विरेचितं चोदरिणं पूर्यमाणं विरेचयेत् ॥

अर्थ-जिसकी त्वचा गीली, आंखें छोटी, भौं और कान टेढे, बल, रक्त, मांस, अग्नि और कोठा क्षीण, अतिसार, अफरा, पार्श्वशूल और अन्नद्वेष इनसे युक्त और रेचकादिकोंसे पेट खाली करने पर भी फिर भर जावे ऐसे लक्षणोंवाले उदररोगीको छोड देवे॥

असाध्यलक्षण ।

पार्श्वभंगान्नविद्वेषशोथातीसारपीडितम् ।
विरक्तं चाप्युदरिणं पूर्यमाणं विवर्जयेत् ॥

अर्थ-पार्श्वभंग (पसरियोमें पीडा), अन्नमें अरुचि, शोथ, अतिसार इनसे पीडित और दस्त करानेसे जिसका पेट फेर पानीसे भर जाय, ऐसे उदररोगीको वैद्य त्याग देय ॥

यत्न ।

रेचनं वमनं कुर्यात्सर्वत्र पाचनानि च ॥

अर्थ-संपूर्ण उदरोंमें रेचन (जुल्लाब), वमन और पाचन कर्म करे ॥

रेचन ।

उदराणां मलाढ्यत्वाद्बहुशः शोधनं हितम् ।
क्षीरेणैरंडजं तैलं पिबेन्मूत्रेण वासकृत् ॥

अर्थ-संपूर्ण उदर प्रायःकरके मलसे परिपूरित होते हैं, इस वास्ते उनको शोधन करना हितकारक है उसको दूधके साथ अथवा गोमूत्रके साथ वारंवार अंडका तेल पिलावे ॥

ज्योतिष्मतीतैल ।

ज्योतिष्मत्याः पिबेत्तैलं पयसा वा दिने दिने ॥

अर्थ-उदररोगीको मालकांगनीका तेल प्रतिदिन दूधमें मिलायके पिलावे ॥

गोमूत्रयोग ।

मूत्राण्युदरिणां सेके पाने चैव प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-गोमूत्रादिक मूत्र उदररोगीको सेचन विषयमें और पीनेमें देने चाहिये ॥

उदरपर यत्नांतर ।

हरीतकीसहस्रं वा गोमूत्रेण यथा जुषः । सहस्रं पिप्पलीनां वा स्नुक्क्षीरेण सुभावितम् ॥ पिप्पलीवर्धमानं वा क्षाराशी वा शिलाजतु । तद्वद्वा गुग्गुलं क्षीरतुल्यार्द्रकरसस्तथा ॥ चित्रकामरदारुभ्यां कल्कं क्षीरेण वा पिबेत् ॥

अर्थ-उदररोगीको गोमूत्रके साथ हजार पीपल देवे अथवा थूहरके दूधकी भावना दी हुई हजार पीपल देवे अथवा वर्द्धमान पीपल देवे अथवा दूधके साथ शिलाजीत दे कर दूधको ही अन्नकी ऐवज देवे अथवा दूध और दूधकी बराबर अदरखका रस इनमें गूगल मिलायके देवे अथवा चित्रक, देवदारु इनका कल्क दूधसे देवे ॥

वर्द्धमानपीपल ।

त्रिभिरथ परिवृद्धं पंचभिः सप्तभिर्वा दशभिरथ विवृद्धं पिप्पली-

वर्धमानम् । इति पिबति युवा यस्तस्य न श्वासकासज्वरजठरगुदार्शोवातरक्तक्षयाः स्युः ॥

अर्थ-तीन, पांच, सात अथवा दश इस वृद्धिसे जो पीपलोंको सेवन करता है, उसके श्वास, खांसी, ज्वर, उदर, बवासीर, वातरक्त, क्षय ये रोग कदाचित् नहीं हों ॥

मूत्राण्यष्टावुदरिणां पानसेके प्रयोजयेत् ।
पिप्पली वर्धमानं वा पयसैव प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-आठ प्रकारके गोमूत्रादिक मूत्रोंके पीनेकी, बफारा देनेकी, उदररोगमें योजना करे, अथवा वर्द्धमानपीपल दूधके साथ देवे ॥

उष्ट्रीक्षीरं पिबेज्जीर्णे निरन्नो जठरामयी ।
पक्षं मासमृतुं वापि नच पानीयमाचरेत् ॥

अर्थ--ऊंटनीका दूध पचे तो उदररोगवाला इसको पंद्रह दिन अथवा, महीने अथवा छः महीने पर्यंत जल पीनेको त्यागके सेवन करे ॥

सामुद्रशुक्तिकाक्षारो यवक्षारः ससैंधवः ।
गोदध्ना संप्रयुज्येत सर्वोदरविनाशनः ॥

अर्थ--समुद्रकी सीपियोंका खार, जवाखार, सैंधानिमक इनको गौके दूधके साथ सेवन करे. यह सर्व उदररोगोंका नाशक है ॥

विशाला शंखिनी दंती त्रिवृन्नीली फलत्रयम् ।
निशा विडंगकंपिल्लं मूत्रेणोदरनुत्पिबेत् ॥

अर्थ-इन्द्रायन, संखाहुली, दंती, निसोथ, नील, हरड, बहेडा, आंवला हल्दी, वायविडंग और कबीला इन सबको कूट पीस गोमूत्रके साथ उदरनाशनार्थ पीवे ॥

जलोदर पर योग ।

पयो वा चव्यदंत्यग्निविडंगं व्योषकल्कितम् । पेयं वा शृंगवेरांबु कषायो दारुवह्निजः ॥ चव्यविश्वसमुत्थो वा पेयो जठरशांतये॥

अर्थ--चव्य, जमालगोटा, चित्रक, वायविडंग, सोंठ, मिरच और पीपल इनका कल्क दूधसे अथवा अदरखके रस अथवा देवदारु, चित्रककी छाल इनका काढा अथवा चव्य, सोंठ इनके काढेको उदररोगशांतिके अर्थ देवे ॥

देवदार्व्यादि लेप ।

देवदारुपलाशार्कहस्तिपिप्पलिशिग्रुकैः ।
साश्वगंधैः सगोमूत्रैः प्रलिंपेदुदरं शनैः ॥

अर्थ—देवदारु, केसूलाके फूल, आककी जड, गजपीपल, सहजना, असगंध इनको गोमूत्रमें पीसके पेट पर लेप करे ॥

प्रयोगांतर ।

पयसा शृंगबेरांबुकषायो दारुवह्निजः ।
चव्यमुस्तासमुत्थो वा पेयो जठरशांतये ॥

अर्थ—जलके साथ अदरखका रस अथवा देवदारु, चित्रक इनका काढा अथवा चव्य, नागरमोथा इनका काढा उदरनिवृत्तिके वास्ते पीवे ॥

चव्यादि क्वाथ ।

चव्यचित्रकविश्वानां साधितो देवदारुणा ।
क्वाथस्त्रिवृचूर्णयुतो गोमूत्रेणोदरं जयेत् ॥

अर्थ—१ चव्य, २ चित्रक, ३ सोंठ, ४ देवदारु इन चार औषधोंका काढा करके उसमें निसोथका चूर्ण डालके और गोमूत्रमें मिलायके पीवे तो संपूर्ण उदररोग दूर होंय ॥

यः सप्तरात्रं विलिपेत्सुधायाः क्षीरेण चूर्णं मृदितं कणायाः ।
लिह्यात्प्रकामं मधुरं च भुंक्ते तस्योदरव्याधिरुपैति शांतिम् ॥

अर्थ—थूहरके दूधमें पीपलका चूर्ण खरल कर उसका सात दिन लेप करे और खाय ऊपरसे मिष्ट आहार करे तो उसका उदररोग शांत होय ॥

देवद्रुमादि ।

देवद्रुमं शिग्रु मसूरकं च गोमूत्रपिष्टामथ वाश्वगंधाम् ।
पीत्वाशु हन्यादुदरं प्रवृद्धं कृमीन्सशोफानुदरं च दुष्यन् ॥

अर्थ—देवदारु, सहजना, मसूर और असगंध इनको गोमूत्रमें पीस खानेको देवे तो घोर,बढा हुआ उदररोग, कृमिरोग, सूजन और दूष्योदर इनको शीघ्र नाश करे ॥

नारायणचूर्ण ।

चित्रकत्रिफलाव्योषं जीरकं हपुषा वचा । यवानीपिप्पलीमूलं शतपुष्पाजगंधिका ॥ अजमोदा शठी धान्यं विडंगं स्थूलजीरकम् । हेमाह्वा पौष्करं मूलं क्षारौ लक्षणपंचकम् ॥ कुष्ठं चेति समांशानि विशाला स्याद्विभागिका । त्रिवृत्त्रिभागा विज्ञेया दंत्या भागत्रयं भवेत् ॥ चतुर्भागा सातला स्यात्सर्वाण्येकत्र चूर्णयेत् । पाचनस्नेहनाद्यैश्च स्निग्धकोष्ठस्य रोगिणः ॥ दद्याचूर्णं

विरेकाय सर्वरोगप्रणाशनम् । हृद्रोगे पांडुरोगे च कासे श्वासे भगंदरे॥ मंदेऽग्नौ च ज्वरे कुष्ठे ग्रहण्यां च गलग्रहे । दद्याद्युक्तानुपानेन तथाध्माने सुरादिभिः ॥ गुल्मे बदरनीरेण विट्संगे दधिमस्तुना । उष्णांबुभिरजीर्णे च वृक्षाम्लैः परिकीर्तिषु ॥ उष्ट्रीदुग्धेनोदरेषु तथा तक्रेण वा गवाम् । प्रसन्नया वातरोगे दाडिमांभोभिरर्शसि ॥ द्विविधे च विषे दद्याद्घृतेन विषनाशनम् ॥

अर्थ–चित्रककी छाल, त्रिफला, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, हाऊबेर, वच, अजमायन, पीपरामूल, सोंफ, वनतुलसी, अजमोद, कचूर, धनिया, वायविडंग, कलौंजी, चोक, पुहकरमूल, सज्जीखार, जवाखार, पांचों निमक (सैंधा, कचिया, काला, समुद्र, बिड) और कूठ ये सब समान भाग लेवे और इन्द्रायनकी जड और औषधोंसे दूनी ले निसोथ तिगुनी, दंतीके तीन भाग, थूहर ४ भाग ले सबको एकत्र करके चूर्ण करे. प्रथम पाचन और स्नेहादिक करके जिसका कोठा चिकना होगया हो उसको दस्त होनेके वास्ते यह चूर्ण देवे. यह सब रोगोंको नष्ट करे हृदयरोग, पांडुरोग, खांसी, श्वास, भगंदर, मंदाग्नि, ज्वर, कोढ, संग्रहणी, गलग्रह इन रोगोंमें पृथक् २ अनुपानोंके साथ देवे. अफरा रोगमें मद्यके सात देवे, गुल्मरोगमें बेरके काढेके साथ देवे और मल रुक रहा होवे तो इस चूणको दहीके जलके साथ देवे, अजीर्णरोगमें गरम जलके संग देवे, गुदामें कतरनेकीसी पीडा होती होय तो उसको इमलीके छालके काढेमें देवे, उदररोगवालेको ऊँटनीके दूधके संग देवे अथवा गौकी छाछके साथ देवे तो इससे संपूर्ण रोग दूर होवें वादीके रोगमें इस चूर्णको प्रसन्ना जो मद्यका भेद है उसके साथ देवे, बवासीर रोगमें अनारके जलके साथ देना चाहिये, यह चूर्ण घीमें मिलाय खाय तो स्थावरविष (पुष्पपत्रादिक) और जंगमविष (सर्पादिकका) ये दोनों प्रकारके विष दूर होवे इस चूर्णको नारायणचूर्ण कहते हैं. इस चूर्णसे संपूर्ण दुष्टरोग दूर हों ॥

हपुषादि चूर्ण ।

हपुषा त्रिफला चैव त्रायमाणा च पिप्पली । हेमक्षीरी त्रिवृच्चैव सातला कटुका वचा ॥ नीलिनी सैन्धवं कृष्णलवणं चेति चूर्णयेत् । उष्णोदकेन मूत्रेण दाडिमत्रिफलारसः ॥ तथा मांसरसेनापि यथायोग्यं पिबेन्नरः । अजीर्णे प्लीह्नि गुल्मेषु शोफार्शोविषमाग्निषु ॥ हलीमकामलापांडुकुष्ठाध्मानोदरेष्वपि ॥

अर्थ–हाऊबेर, हरड, बहेडा, आंवला, त्रायमाण, पीपल, चोक, निसोथ, सातला (पीली थूहर यह न मिले तो इसकी प्रतिनिधिमें थूहर डाले), कुटकी, वच, नील, सैंधानिमक, काला निमक इन चौदह औषधोंका चूर्ण करके गरम जल अथवा गोमूत्रमें अथवा अनारके रसमें अथवा त्रिफलाके काढेसे अथवा जंगली जीवोंके मांसरसके साथ सेवन करे परंतु जिस रोगीको जो अनुपान हितकारी होवे उसीके साथ देवे तो अजीर्ण और प्लीहा, गोला, सूजन, बवासीर, मंदाग्नि, हलीमकरोग, कामला, पांडुरोग, कोढ, पेटका फूलना, उदररोग ये संपूर्ण रोग दूर होवें ॥

उदररोग पर चूर्ण ।

क्षारद्वयानलव्योषनीलीलवणपंचकम् ।
चूर्णितं सर्पिषा पेयं सर्वगुल्मोदरापहम् ॥

अर्थ–जवाखार, सुहागा, चित्रककी छाल, सोंठ, मिरच, पीपल, गजपीपल, पांचों निमक इनके चूर्णको सेवन करे तो सर्व गुल्मरोग तथा उदररोग इनको नाश करे ॥

पटोलादि चूर्ण ।

पटोलमूलं रजनी विडंगं त्रिफलात्वचः । कंपिल्लकं नालिनी च त्रिवृता चेति चूर्णयेत् ॥ षडाद्यान्कार्षिकानंत्यांस्त्रींश्च द्वित्रिचतुर्गुणान् । कृत्वा चूर्णं ततो मुष्टिं गवां मूत्रेण वा पिबेत् ॥ विरिक्तो मृदु भुंजीत भोजनं जांगलै रसैः । मंडं पेयां च पीत्वा वा सव्योषं षडहं पयः ॥ शृतं पिबेत्ततश्चूर्णं पिबेदेवं पुनः पुनः । हंति सर्वोदराण्येतच्चूर्णं जातोदकान्यपि ॥ कामलां पांडुरोगं च श्वयथुं चापकर्षति ॥

अर्थ–कडुए पडवलकी जड, हलदी, वायविडंग, हरड, बहेडा, आंवला ये सब एक २ तोला, दालचीनी २ तोले, कबीला, नीलनी और निसोथ ये क्रमसे ३–४–५ भाग लेवे इन सबका चूर्ण करके चार तोलेकी मात्रा गोमूत्रसे देवे. जब दस्त हो चुके जंगली जीवोंके मांसके रसोंसे नरम ऐसे भोजन करावे अथवा मंड, पेया किंवा छः दिन सोंठ, मिरच, पीपल इनके चूर्णको डाल औटा हुआ दूध देवे फिर दूसरे दिन चूर्ण डालके उसी क्रमसे दूध पिलावे. इस प्रकार वारंवार करे तो यह चूर्ण संपूर्ण उदर, जातोदक होय तो उसकोभी नष्ट करे तथा कामला, पांडुरोग और सूजन इनको दूर करे ॥

उदरपर बिंदु घृत ।

अर्कक्षीरं पले द्वे तु स्नुहिक्षीरपलानि षट् । पथ्या कंपिल्लकं

श्यामा शम्याकं गिरिकर्णिका ॥ नीलिनी त्रिवृता दंती शंखिनी चित्रकं तथा । एषां च पलिकैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ अथास्य मलिने कोष्ठे बिंदुमात्रं प्रदापयेत् । यावदस्य पिबेद्बिंदूंस्तावद्वेगान्विरिच्यते ॥ कुष्ठं गुल्ममुदावर्तं श्वयथुं सभगंदरम् । शमयत्युदराण्यष्टौ वृक्षमिंद्राशनिर्यथा ॥ एतद्बिंदुघृतं नाम येनाभ्यक्तो विरिच्यते ॥

अर्थ–आकका दूध ८ तोले, थूहरका दूध २४ तोले और हरड, सपेद निसोथ, पीपल, अमलतासका गूदा, सपेद सारिवा, लघुनीली, निसोथ, जमालगोटेके बीज, शंखपुष्पी और चित्रक ये सब चार २ तोले ले. इनके काढे तथा कल्कमें ६४ तोले घी डालके पचावे यह बिंदुघृत मलिन कोठेवालेको १ बूंद डालनेसे दस्त कराता है. इसकी जितनी बूंद डाले उतनेही दस्त होवें यह कुष्ठरोग, गोला, उदावर्त, सूजन, भगंदर और आठ प्रकारके उदररोग इनको शमन करे इस घृतको देहमें लगानेसेभी दस्त कराता है ॥

पंचमूलघृत ।

द्वे पंचमूल्यौ त्रिवृतानिकुंभे ससतलं चित्रकशिग्रुमूलम् । कुरंटबीजं त्रिफलां गुडूचीमेरंडमूलं मदयंतिकां च ॥ पाठां सभार्ङ्गीं सुपवीं सुनीलां सरोहिषायासकुचेलिकां च । पृथक् समाहृत्य पलं जलस्य द्रोणे पचेत्तच्चरणांशशेषम् ॥ घृतं हि पक्वं सकषाययुक्तं निहंति पीतं सकलोदराणि ॥

अर्थ–दशमूल, निसोथ, जमालगोटा, सातला थूहरका भेद, चित्रक, सहजनेकी जड, सपेद पीयावांसेके बीज, हरड, बहेडा, आंवला, गिलोय, अंडकी जड, मदयंतिका, पाढ, भारंगी, कलौंजी, नीली, रोहिषतृण, धमासा, ये औषध चार २ तोले लेवे, १०२४ तोले जलमें औटावे जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे इसमें घी डालके फिर पक्व करे जब जल जरके घृत मात्र शेष रहे तब उतारले इसे पीवे तो संपूर्ण उदरोंका नाश करे ॥

नाराचघृत ।

त्रिफला चित्रको दंती बृहती कंटकारिका । स्नुहिसार्कविडंगानि घृतस्य कुडवं पचेत् ॥ तस्य मृद्वग्निसिद्धस्य कर्षार्धं पाययेन्नरम् ।

शोफगुल्मोदरानाहप्लीहोदरजलोदरान् ॥ नाशयत्युल्बणानेतान् सर्पिर्नाराचसंज्ञितम् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आंवला, चित्रक, जमालगोटा, कटेरी, थूहर, आक, वायविडंग इनके काढेमें १६ ताले घृत डालके मंदाग्नि पर सिद्ध करे. इसमेंसे छः मासे मनुष्य भक्षण करे तो सूजन, गोला, उदर, अफरा, प्लीहोदर, जलोदर इनको नाश करे. इसको नाराचघृत कहते हैं ॥

बिंदुघृत ।

चित्रकः शंखिनी पथ्या कंपिल्लस्त्रिवृतायुगम् । वृद्धदारुश्च शम्याको दंती दंतीफलं तथा ॥ काशातकी देवदाली नीली च गिरिकर्णिका । सातला पिप्पलीमूलं विडंगं कटुकी तथा ॥ हेमक्षीरी च विपचेत्कल्कैरेतैः पिचून्मितैः । घृतप्रस्थं स्नुहीक्षीरे षट्पले तु पलद्वये ॥ अर्कक्षीरस्य मतिमान् तत्सिद्धं गुल्मकुष्ठनुत् । हंति शूलमुदावर्तं शोथाध्मानं भगंदरम् ॥ शमयत्युदाराण्यष्टौ निपीत बिंदुसंख्यया । गोदुग्धेनोष्ट्रदुग्धेन कौलत्थेन शृतेन वा ॥ उष्णोदकेन वा पीत्वा बिंदुवेगैर्विरिच्यते । एतद्बिंदुघृतं नाम नाभिलेपाद्विरेचयेत् ॥

अर्थ—चित्रक, शंखपुष्पी, कबीला, निसोथ, काली निसोथ, विधायरा, अमलतासका गूदा, दंती, जमालगोटा, कडुई तोरई, बंदाल, नील, कोयल, सातला, (पीली थूहर), पीपरामूल, वायविडंग, कुटकी, चौक इन सब औषधोंको एक २ तोला ले कल्क करे, फिर एक सेर घृत इसमें डाल कल्कको मिलायके फिर थूहरका दूध २४ तोले डाले और कल्कका पाक उत्तम होनेके वास्ते उसमें घीसे चौगुना जल डालके घृत शेष रहे तबतक पाक करे. फिर घीको छान लेय इसे बिंदुघृत कहते हैं इस घृतको पीवे तो गुल्म, कुष्ठ, शूल, उदावर्त्त, सूजन, अफरा, भगंदर, आठ प्रकारके उदर रोग ये सब दूर हों. इसका अनुपान गौका दूध अथवा ऊंटनीका दूध अथवा कुलथीका काढा अथवा गरम जल इनमेंसे किसी अनुपानके साथ रोगका तारतम्य देखके देवे. जितनी बूंद डालके पीवे उतनेही दस्त होवें तथा इस घृतका नाभिपर लेप करे तो दस्त होवें ॥

त्रिवृतादि घृत ।

पयस्यष्टगुणे सर्पिः प्रस्थं स्नुक्पयसः पलम् ।
त्रिवृतापलकल्केन सिद्धं जठरगुल्मनुत् ॥

अर्थ-घी ६४ तोले, दूध ५१२ तोले, थूहरका दुध ४ तोले और निसोथ ४ तोले इनके कल्कमें घृतको सिद्ध करे तो उदर और गोला इनको नाश करे ॥

हिंग्वादि घृत ।

हिंग्वारसोनार्द्रकशिग्रुपथ्याषड्ग्रंथिदंतीदशमूलतोयैः ।
द्विक्षारपंचोषणकल्कपादैः सिद्धं घृतं तज्जठरे प्रशस्तम् ॥

अर्थ-हींग, लहसन, अदरख, सहजनेकी छाल, हरडका वक्कल, पीपरामूल, दंती, दशमूल इनके काढेमें सुहागा, जवाखार, पंचोषण इनका चतुर्थांश कल्क एकत्र करके इसमें सिद्ध करा हुआ घृत उदररोग पर उत्तम है ॥

उदरपर वंगेश्वररस

सूतभस्म वंगभस्म पलैकैकं प्रयोजयेत् । मृतं ताम्रं गंधकं च प्रत्येकं च पलं पलम् ॥ अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं सर्वं तद्गोलकीकृतम् । रुद्ध्वा तद्भूधरे पक्त्वा पुटैकेनसमुद्धरेत् ॥ एष वंगेश्वरोनाम प्लीहगुल्मोदरं जयेत् । घृते गुंजाद्वयो लेह्यो निष्कश्वेतपुनर्नवैः ॥

अर्थ-पारेकी भस्म ४ तोले, वंगभस्म ४ तोले, तामेकी भस्म ४ तोले और गंधक ४ तोले लेकर आकके दूधमें खरल कर गोला बनावे. फिर भूधरयंत्रमें पक्व करके निकालले इसको वंगेश्वररस कहते हैं यह प्लीहा, गोला, उदर इनको जीते, सपेद पुनर्नवा ४ मासे और घी इन दोनोंके साथ इस रसका दो रत्ती चाटे ॥

त्रैलोक्यडंबर ।

रसगंधकताम्राणि लोहमभ्रं विषं तथा । टंकणं सर्जिकाक्षारं दरदं च कपर्दिकम् ॥ अर्कक्षीरेण खल्वे च वज्रिक्षीरेण भावयेत् । निर्गुंडीभृंगराजेन चार्द्रद्रावेण भावयेत् ॥ गुल्मे जलोदरे रोगे शोथे पांडौ क्षये तथा । शूले विषूचिकायां च ह्यनुपानैः प्रयोजयेत् ॥ त्रैलोक्यडंबरो नाम कथितो रोगशांतये । वल्लमात्रप्रमाणेन त्रिःसप्ताहं प्रदापयेत् ॥ अत्रोदयाख्यमार्तंडो देय इत्येव ते जगुः ॥

अर्थ-पारा, गंधक, तामेकी भस्म, अभ्रकभस्म, सिंगियाविष, सुहागा, सज्जी, हींगलू, कौडीकी भस्म ये समान भाग लेवे इनको आक, थूहर इनका दूध, निर्गुंडी, भांगरा और अदरख इनके रसकी पृथक् २ भावना देवे तौ त्रैलोक्यडंबररस बने. यह गोला, जलोदर, सूजन, पांडुरोग, क्षय, शूल, विषूचिका इनमें अनुपानके

साथ देवे. दो दो रत्ती इकीस दिन देवे अथवा रोग होय तबतक देवे तथा इस रोगपर उदरमार्त्तंडरसभी देय ॥

रेचन ।

भ्रष्टटंकणतुल्यं तु मरिचं च रस समम् । गंधकं पिप्पली शुंठी द्वौ द्वौ भागो विचूर्णयेत् ॥ सर्वतुल्यं क्षिपेद्दंतीबीजं सर्वमकल्मषम् । द्विगुंजं रेचनं चैतदुदराणि व्यपोहति ॥

अर्थ–भूने सुहागेका चूर्ण, काली मिरच, पारा ये समान भाग ले और गंधक, पीपल, सोंठ ये दो दो भाग ले तथा सबके बराबर जमालगोटेके बीज लेवे सबको खरल करे इसमेंसे दो रत्ती देवे तो दस्त करायके उदररोगको दूर करे ॥

इच्छाभेदीरस ।

शुंठी मरिचसंयुक्ता रसगंधकटंकणा । जेपालो त्रिगुणः प्रोक्तो सर्वमेकत्र मर्दितम् ॥ इच्छाभेदी रसो ह्यस्य द्विगुंजं सासितं पिबेत् । यावच्च चूलकाः पीतास्तावद्वेगैर्विरिच्यते ॥ तक्रौदनं च दातव्यं पथ्यमत्र विजानता ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पारा, गंधक, सुहागा ये समान भाग ले और जमालगोटा तीन भाग सबको एकत्र कर खरल करे यह इच्छाभेदीरस दो रत्ती लेकर मिश्रीके साथ खाय इसके ऊपर जलके जितने चुल्लू पीवे उतने ही दस्त होंय इस पर छाछ भात पथ्य है ॥

शोफोदर ।

पुनर्नवानिंबपटोलशुंठीतिक्तामृतादार्व्यभयाकषायः ।
सर्वांगशोथोदरकासशूलश्वासान्वितं पांडुगदं निहंति ॥

अर्थ–पुनर्नवा, नीमकी छाल, पटोलपत्र, सोंठ, चिरायता, गिलोय, दारुहलदी, हरड इनके काढेको पीवे तो सर्वांगसूजन, उदर, खांसी, शूल, श्वास, पांडुरोग इनको नाश करे ॥

हरीतक्यादि क्वाथ ।

हरीतकीनागरदेवदारुपुनर्नवाछिन्नरुहाकषायः ।
सगुग्गुलुर्मूत्रयुतश्च पेयः शोफोदराणां प्रवरः प्रयोगः ॥

अर्थ–हरड, सोंठ, देवदारु, पुनर्नवा, गिलोय इनके काढेमें गूगल और गोमूत्र डालके पीवे, यह शोथोदर पर उत्तम प्रयोग है ॥

पुनर्नवादि योग ।

पुनर्नवादार्व्यभयागुडूचीं पिबेत्समूत्रां महिषाक्षयुक्ताम् ।
त्वग्दोषशोथोदरपांडुरोगस्थौल्यप्रसेकोर्ध्वकफामयेषु ॥

अर्थ-पुनर्नवा, दारुहलदी, हरड, गिलोय इनके काढेमें गोमूत्र डालके तथा गूगल डालके देवे तो त्वचाके दोष, सूजन, उदर, पांडुरोग, स्थूलता, लालास्राव, ऊपरके कफरोग इन सबको नाश करे ॥

पुनर्वादि क्वाथ ।

पुनर्नवामृतादारुपथ्यानागरसाधितः ।
गोमूत्रगुग्गुलुयुतः क्वाथः शोथोदरापहः ॥

अर्थ-पुनर्नवा, गिलोय, देवदारु, छोटी हरड और सोंठ इन पांच औषधोंका काढा करके उसमें गूगल और गोमूत्र मिलायके पीवे तो सूजन जिस उदररोगमें होय वह इस क्वाथके पीनेसे दूर होय ॥

शोथोदरचिकित्सा ।

पुनर्नवा दारुमहौषधांबु गोमूत्रसिद्धः श्वयथुं निहंति । तथा कणाशुंठिगुडोत्थचूर्णं शोफामशूलघ्नमजीर्णहारि ॥ गवां क्षीरं वरामिश्रं शोफोदरविनाशनम् । गोमूत्रेण समायुक्तं महिषीणां पयोऽथ वा ॥

अर्थ-सपेद पुनर्नवा, देवदारु, सोंठ इन औषधोंको कूट गोमूत्र मिलायके काढा करे. इसके पीनेसे सूजन दूर होय. उसी प्रकार पीपल और सोंठ इनके चूर्णमें गुड मिलायके भक्षण करे तो सूजन, आमशूल, अजीर्ण ये दूर हो. एवं त्रिफलेके चूर्णको गौके मूत्रके साथ पीवे तो शोफोदर दूर होय अथवा भैंसके मूत्रसे त्रिफलाको पीवे ॥

गोमूत्रयुक्तं माहिषीपयो वा क्षीरं गवां वा त्रिफलाविमिश्रम् ।
क्षीरान्नभुक्त्वलमेव गव्यं मूत्रं पिबेद्वा श्वयथूदरेषु ॥

अर्थ-शोफोदररोगवालेको गोमूत्रके साथ अथवा त्रिफलाके साथ गौका अथवा भैंसका दूध पिलावे. अथवा गोमूत्र पीकर ऊपरसे दूधभातका भोजन करे ॥

माहिषमूत्रपान ।

सप्ताहं माहिषं मूत्रं पयसा चांबुवाजतम् ।
पिबन्नोष्ट्रं पयो मासं श्वयथूदरनाशनम् ॥

अर्थ–शोथरोगवाला रोगी सात दिन पर्यंत दूधके साथ भैंसका मूत्र पीवे अथवा ऊंटनीका दूध एक महीने पर्यंत पीवे परंतु इसके ऊपर अन्न जलको त्याग देवे ॥

बिल्वादि क्काथ ।

बिल्वाग्निचव्यार्द्रकशृंगवेरक्काथेन कल्केन च सिद्धमाज्यम् । सच्छागदुग्धं ग्रहणीगदोत्थशोफाग्निसादारुचिहं वरिष्ठम् ॥

अर्थ–बेलकी जड, चित्रककी छाल, अदरख और सोंठ इनके काढेमें और कल्कमें सिद्ध करे हुए घृतको बकरीके दूधसे पीवे तो संग्रहणीका विकार, सूजन, मंदाग्नि, अरुचि इनके नाश करनेमें श्रेष्ठ है ॥

उदररोग पर पथ्य ।

विरेचनं लंघनमब्दसंभवाः कुलत्थमुद्गारुणशालयो यवाः । मृग-द्विजा जांगलसंज्ञयान्विताः सितासुरामाक्षिकसीधुमाध्विकाः ॥ तक्रं रसोनो रुबुतैलमार्द्रकं शालिंचशाकं कुलकं कठिल्लकम् । पुनर्नवा शिग्रुफलं हरीतकी तांबूलमेलायवशूकमायसम् ॥ अजा-गवोष्ट्रीमहिषीपयो जलं लघूनि तीक्ष्णानि च दीपनानि । वस्त्रेण संवेष्टनमग्निकर्म विषप्रयोगोऽत्र युतो यथायथम् ॥ विशेषतः प्लीहसमुद्भवे गदे वामेऽग्रबाहौ धमनीव्यधः परम् । बद्धाह्वये चोदरजे क्षतोत्थिते नाभेरधः शस्त्रविधिर्यथाविधिः ॥ समीरणोत्थे घृत-पानमादितः साभ्यंजनं चाप्यनुवासनं तथा । यथामलं पथ्यग-णोयमाश्रितो सखा नृणां स्यादुदरामये सति ॥

अर्थ–जुलाब, लंघन, वर्षादिनके पुराने कुलथी, मूंग, लाल चावल, जौ, मूँग, पक्षी, जंगली जीवोंका मांस, मिश्री, खांड, दारु, सहत, सीधु (मद्यका भेद), माध्विक (सहत महुएकी बनी दारु), छाछ, लहसन, अंडीका तेल, अदरख, शालिंच शाक, परवल, करेले, सांठ (विसखपरेका भेद), सहजनेकी फली, हरड, पान, इलायची, जौ, लोहभस्म (कीटी), बकरी, गौ, ऊंटनी और भैंस इनका दूध और मूत्र, हलके पदार्थ, चरपरे, दीपनकारी पदार्थ, कपडेसे लपेटना, दागना, विषभक्षण ये यथायोग्य करे विशेष करके प्लीहोदरमें वाँई भुजाके अग्रभागमें धमनी नाडीकी फस्त खोले बद्धोदरमें, क्षतोदरमें, नाभिके नीचे यथाविधि शस्त्रकर्म (चीरा आदि देना) करे. वादीके उदररोगमें प्रथम घी पिलावे, उवटना, अनुवासनबस्ती ये सब दोषोंके अनुसार करे. ये उदर (जलंधर) रोगवालेको कल्याणकारी जानने ॥

दोषाः कुक्षौ हि संपूर्णे वह्निर्मंदत्वमृच्छति ।
तस्मात्सर्वप्रभोज्यानि दीपनानि लघूनि च ॥

अर्थ-कूखमें दोषोंके पूर्ण होने पर अग्नि मंद होता है इसलिये बहुत प्रयत्नसे दीपन, हलके अन्न रोगीको खिलावे ॥

शालिषष्टिकगोधूमयवनीवारभोजनम् ।
विरेकास्थापनं श्रेष्ठं सर्वेषु जठरेषु च ॥

अर्थ-शाली चावल, गेहूं, जौ, नीवार इनका भोजन, रेचक औषधि और निरूह-बास्ति ये उपचार सब उदररोगोंमें उत्तम हैं ॥

उदररोग पर अपथ्य ।

अंबुपानं दिवा स्वापं गुर्वभिष्यंदि भोजनम् ॥ संस्नेहनं धूमपानं जलपानं शिराव्यधः । छर्दियानं दिवास्वप्नं व्यायामं पिष्टवैकृतम् ॥ औदकानूपमांसानि पत्रशाकास्तिला-नपि । उष्णानि च विदाहीनि लवणान्यशनानि च ॥ महेन्द्र-गिरिजातानां सरितां सलिलानि च । शमीधान्यं विरुद्धान्नं दु-ष्टनीरं गुरूणि च ॥ विष्टंभीनि विशेषात्तु स्वेदं विष्टंभसंभवे ! वर्जयेदुदरव्याधौ वैद्यो रक्षन्निजं यशः ॥

अर्थ-जल पीना, दिनमें सोना, भारी पौष्टिक अन्न खाना, व्यायाम और रास्ता चलना, इनको उदररोगवालेको त्यागना चाहिये, स्नेहनकर्म, धूमपान, जलपान, फस्त खोलनावमन, रास्ता चलना, दिनमें सोना, दंड कसरत, पीसे अन्नके पदार्थ (मैदा, चून आदि), जल और जलकिनारे रहनेवाले जीवोंका मांस, पत्तेके साग, तिल, गरम और दाहकर्त्ता, निमकके पदार्थ भक्षण, महेन्द्रपर्वतसे निकली नदियोंका जल, फलीके धान्य (उडद मूंग आदि) विरुद्ध पदार्थ, दुष्ट जल, भारी पदार्थ, विष्टभकारी पदार्थ, और विष्टंभसे हुए उदररोगमें पसीने निकालना ये सब कर्म उदररोगमें अपने यशकी रक्षा करनेवाले वैद्यको त्याग देना चाहिये ॥ इति उदररोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे पंचमो भागः समाप्तः ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापाखाना, कल्याण-मुंबई.